October to December 2025
E-Journal
Volume I, Issue LII (52)

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor- 8.054
ISO 9001:2015 - E2024049304
(Quality Management System)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index

01. Index 02
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 08/09
03. Referee Board 10
04. Spokesperson 12
05. Chemical Composition of Matured Papaya Seeds and Graceful Application of Papaya Seed Powder for Patients with Stones: A Brief Study (Dr. Akhilesh Chandra Verma) 14
06. Phytochemical Screening and Antibacterial Potential of Millets (Annu Choudhary, Hima Kurothe, Randhir Kumar) 18
07. Sports Culture: A Link Between Tradition And Transformation (Prof. Mamta) 24
08. A Study of Financial Performance Metrics of Rajasthan State Road Transport Corporation (Dr. Mahender Singh Meena, Ram Prasad Swami) 27
09. Examining Simultaneous Election Models: A Comparative Analysis of International Practices and Their Applicability to the One Nation, One Election Framework in Indian Electoral Reform (Kaustubh Nihal) 30
10. Marital Rape in India: The Uncriminalised Crime Against Gender Justice (Tanishq Sharma) 39
11. Study of Phytochemical Constituents from Moringa Leaves (Kajal Dosondhi, Dr. Dhananjay Dwivedi, Dr. Sunil Kumar Sikarwar) 42
12. Chemical Composition of Corn and Maize and Their Applications in Medical Sector as Well as in Domestic Sector: A Brief Study (Dr. Akhilesh Chandra Verma) 44
13. Medecinal Plant Alo Vera (Dr. Sushama Singh Majhi) 49
14. Contemporary Currents in Modern Literature: Climate Imaginaries, Post human Relations, Digital Hybridity, and Migration Narratives (Dayaram Roy, Dr. Shaheen Saulat) 55
15. कहावतों की यात्रा : हर 20 कोस पर बदलती बोली में भारतीय सांस्कृतिक चेतना का विश्लेषण (डॉ. दीपा जोशी) 58
16. महाभारत युद्ध नीति का समीक्षात्मक अध्ययन : महिला योद्धाओं की भूमिका और उनकी युद्ध नीति (डॉ. बाल कृष्ण प्रजापति, दुर्गेश लता भगत) 67
17. धार्मिक स्थलों के विकास कार्य (धार्मिक नगर चित्रकूट के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. राजेश कुमार सिंह तिवारी) 69
18. छत्तीसगढ़ राज्य में भूमि उपयोग एवं सिंचाई : एक भौगोलिक अध्ययन (डॉ. घनश्याम नागे) 71
19. निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा का तुलनात्मक अध्ययन (सुनिता गणावा, डॉ. समता मेहता) 79
20. महिला सशक्तिकरण में स्व सहायता समूह की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (श्रीमति वर्षा कहार, डॉ. पूजा तिवारी) 83
21. आयुष्मान भारत एवं प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के माध्यम से जीवन में बदलाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन (सतना जिले के संदर्भ में) (आभा सिंह कुशवाहा, डॉ. अंजनी कुमार पाण्डेय) 86
22. कमार जनजाति की व्यवसाय उपभोग एवं जीवन स्तर पर उनका प्रभाव (धमतरी जिले के संदर्भ में) (डेकेश्वरी) 89
23. स्मार्टफोन उपयोग का बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की आदतों पर प्रभाव (महेन्द्र सिंह, डॉ. विष्णु भाई डी. चौधरी) 95
24. आदिवासी क्षेत्रों में आर्थिक योजनाओं का प्रभाव - विशेष संदर्भ चंद्रपुर जिला (डॉ. राजेश्वर डी. रहांगडाले) 99

25. इंदौर और कपड़ा उद्योग का इतिहास, वर्तमान स्थिति एवं भविष्य की संभावनाएँ (श्रीमती ज्योतिबाला राठौर) 101

26. सागर संभाग में चयनित सार्वजनिक एवम् निजी बैंकों की गैर निष्पादित सम्पत्ति का अध्ययन 103
(फरहा नाज, डॉ.प्रभा अग्रवाल)

27. वर्तमान परिदृश्य में साइबर सुरक्षा की स्थिति : चुनौतियाँ और संभावनाएँ (डॉ. शिवाकान्त तिवारी) 108

28. विधि के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण एवं इससे जुड़ी स्वदेशी ज्ञान परंपराऐं (गरीमा राठौर) 111

29. A Study of the Role of FMCG Companies in the Development of the Rural Economy 114
(Nitin Karoliya, Dr. Rishi Sharma)

30. सिंधु सभ्यता का आर्थिक, शिल्प, व्यापार एवं नगरीय जीवन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 117
(राकेश कुमार जीनगर)

31. राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण: कारण, प्रभाव और भौगोलिक अध्ययन (रेवती रमन नागर)...... 122

32. राजस्थान के मरुस्थलीकरण की समस्या और समाधान के उपाय : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन.................... 126
(अंकिता पूनिया)

33. दयानंद सरस्वती के शैक्षिक सिद्धांतों का आधुनिक भारत की नई शिक्षा नीति (NEP 2020) के संदर्भ 130
में विश्लेषण (हीरा लाल अहीर, डॉ. राखी शर्मा)

34. Blending Tongues, Bridging Worlds: Chutnefying in Diasporic and Popular Culture 136
(Pr Minu Gidwani)

35. मनीषा कुलश्रेष्ठ का उपन्यास त्रिमाया: मातृ सत्ता और इकोफेमिनिज्म का जीवंत दस्तावेज........................ 139
(हिमांशु नागदा, डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार)

36. मालवा क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत, भौगोलिक विशिष्टता और पर्यटन रूझान का राजस्थान और................ 143
गुजरात के साथ तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. रामबिलास मरकाम)

37. गिजुभाई के शिक्षा-दर्शन की आधुनिक शिक्षा में प्रासंगिकता : एक अध्ययन 146
(डॉ. अनिल कुमार, अजय पाल सिंह)

38. विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान................ 148
का अध्ययन (डॉ. गोविन्द सोनी, अनिल कुमार)

39. महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के सम्बन्ध में अध्ययन......................... 151
(डॉ. राजेश शर्मा, अशोक कुमार बैरवा)

40. स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान................ 155
शिक्षा में महत्व (डॉ. गुंजन शर्मा, गोविन्द सिंह)

41. स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवन शैली एवं व्यावसायिक आकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन 157
(डॉ. राजेश शर्मा, जितेन्द्र कुमार नायक)

42. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि 161
पर अभिभावक सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन (डॉ. अनिल कुमार, ममता कुमारी सैन)

43. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि 163
का अध्ययन (डॉ. बबीता शर्मा, ममता वर्मा)

44. उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव एवं मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अध्ययन........... 167
(डॉ. आरती, माया नेनीवाल)

45. विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन 171
(डॉ. किरण गिल, मीनू)

46. प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति एवं जागरूकता का अध्ययन (डॉ. रेखा सोनी, ओम प्रकाश ढाका) 175

47. गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान परिप्रेक्षय में समालोचनात्मक अध्ययन (डॉ. किरण गिल, प्रमिला कुमारी) 177

48. मनु एवं कौटिल्य के राजनीतिक चिन्तन में धर्म व धर्मनिरपेक्षता का समावेश : एक अध्ययन (डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा, पीरा राम) 180

49. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक प्रोत्साहन एवं व्यक्तित्व गुणों के प्रभाव का अध्ययन (डॉ. अनिल कुमार, प्रदीप) 182

50. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही के सम्बन्ध में अध्ययन (डॉ. आरती, प्रेम चन्द खटीक) 184

51. तुलसीदास जी एवं कबीरदास जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में इनकी प्रासंगिकता (डॉ. रेखा सोनी, प्रियंका) 187

52. राजकीय एवं निजी विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि एवं वृतिक दबाब के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन (डॉ. राजेश शर्मा, सत्य नारायण खटीक) 189

53. अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण का व्यक्तित्व पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. गोविन्द सोनी, शैलेजा बेनीवाल) 193

54. महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता का अध्ययन (डॉ. गुंजन शर्मा, मोहम्द साकिब खान) 197

55. महात्मा गाँधी की बेसिक शिक्षा एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के प्रारम्भिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उपादेयता (डॉ. किरण गिल, सुरेश) 201

56. डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (डॉ. गोविन्द सोनी, वरियाम खान) 203

57. India's Role in Reinvigorating Multilateralism: A Critical Evaluation of Its G20 Strategies (Dr. Swati Thakur) 207

58. किशोरों में मानसिक स्वास्थ्य और सोशल मीडिया उपयोग का संबंध का अध्ययन बलिया जनपद के विशेष संदर्भ में (डॉ. तृप्ति तिवारी) 210

59. महिलाओं के उत्थान में सोशल मीडिया की भूमिका : समाजशास्त्रीय अध्ययन (प्रियंका देवी) 213

60. Communication Skill Development Among Rural Women through Industrial Training Centres: A Study of Khargone District (Teena Shrivastava, Dr. Mukesh Keshari) 218

61. A Study on Frustration and Attitude of Secondary Level Students towards Online Learning in Relation to Gender and Medium of Instruction : A Comparative Study (Dr. Samina, Dr. Manorama Mathur, Ms. Meha Mathur) 221

62. बैगा जनजाति की नृत्य कला : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन(बालाघाट जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. राम कुमार उसरेठे) 227

63. The Role of Artificial Intelligence in Teaching (Dr. Rupesh Pallav) 230

64. 21वीं सदी में मूल्य शिक्षा का महत्त्व और आवश्यकता (बीरेंद्र सिंह कुशवाह) 233

65. अनुसूचित जनजाति के महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता का स्तर एवं उपयोग-प्रवृत्तियाँ : अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन (थानसिंह गेहलोत, डॉ. संजीव कुमार शर्मा) 236

66. The Effect of Social Media on the Accademic Performance of the Senior Secondary School Students (Shivani Singh, Dr. Sanjeev Kumar) 238
67. The Role of Indian Knowledge System (Dr. Seema Dekate) 244
68. Career Aspiration Among Adolescents : A Comprehensive Analysis (Dr. Ritu Bala, Astha Singh Rajan) 251
69. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का अध्ययन (शिवानी चावला, डॉ.ऋतु बाला) 253
70. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की चिन्ता एवं समायोजन के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता का अध्ययन (डॉ. ऋतु बाला, परमजीत कौर) 255
71. उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण में वेदकाल की शिक्षा और गाँधीजी का शिक्षा-दर्शन (डॉ. किरण पवार) 258
72. Consumer Perception and Adoption of E-Commerce (Ms. Shivani Somani) 260
73. उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन (पूजा कुमार) 266
74. बृहत्त्रयी महाकाव्यों की कथा-वस्तु का अध्ययन (प्रो. वेदप्रकाश मिश्र, डॉ. नरेन्द्र प्रसाद शुक्ला) 272
75. Adoption of E- Vehicles: Trend in Urban Areas (Kumud Dubey, Avinash Dube) 275
76. राजस्थान में परम्परागत छापा कला की अलंकरण विधा : सौंदर्यात्मक पक्ष एवं वर्तमान परिवेश में उसकी उपादेयता (राधापाल, डॉ. मनीषा चौबीसा) 277
77. Analyzing the Factors Influencing Life Insurance in India: A Comparative Study of LIC and Other Private Sector Companies (Dayalal Sankhla, Dr. Pawan Verma) 281
78. बिलासपुर जिले मेंग्रामीण प्रजननता का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव : एक भौगोलिक अध्ययन (निहारिका केशरवानी, डॉ. रत्नेश कुमार खन्ना) 289
79. Pre and Post Merger Analysis of Non-Performing Assets of Public Sector Banks (PSBs) in India (Taranjeet Kaur Channa, Dr. Sanjay Sharma) 291
80. Birsa Munda and Its Contribution Towards Our Country (Dr. Rajesh Masatkar) 298
81. The Affect of Demographic Aspects on Information Seeking Behavior of Faculty Members in Madhya Pradesh (Sudhanshu) 301
82. Ecological and Environmental Concerns in Select Works of Amitav Ghosh (Dr. Sanjay Singh Solanki) 305
83. Preservation of Traditional Indian Embroideries and GI Tags: Revival Efforts (Dr. Nidhi, Mrs. Nisha Rani) 308
84. चन्देरी रियासत का साम्राज्यवादी दौर देवीसिंह बुंदेला (1654-1663) (डॉ.अर्पिता तिवारी) 312
85. स्टार्टअप इंडिया : नवाचार, उद्यमिता और सतत विकास का अनोखा पारिस्थितिकी तंत्र (डॉ. खुमेश सिंह ठाकुर) 315
86. Job Satisfaction of Secondary School Teachers (Dr. Sunita Murdia, Khushbu Kanwar Rathod) 320
87. कुमार विश्वास की कविताएं : सांस्कृतिक विरासत और संरक्षण का जीवंत दस्तावेज (सरिता सैनी, डॉ. निर्मला राव) 325
88. सतत् पर्यटन प्रशासन में प्रौद्योगिकी की भूमिका (डॉ.गणेश कुमार दुबे) 327
89. Unmasking Social Prejudices : Caste, Class and Community in Mahesh Dattani's Theatre (Dr. Pallavi Parte) 330
90. भारतीय ज्ञान परम्परा और रहीम : एक अध्ययन (डॉ. राजाराम परते) 333
91. महिला सशक्तिकरण में मनरेगा की भूमिका : एक आर्थिक अध्ययन (डॉ. ममता पंवार, अनिल कुमार सांगोड़े) 336

92. मुस्लिम विधि में भरण-पोषण (डॉ. ज़ाकिर खान) 339

93. Evaluating the Role of Regulatory Sandboxes in Fostering FinTech Innovation in India 341
(Prastuti Gupta, Dr. Sanjay Sharma)

94. Primary Health Care in India's Welfare State: A Legal and Human Rights Perspective 348
(Priyansha Singh Dixit)

95. Assessing the Impact of the Three-Tier Panchayati Raj System on Rural Development 353
in Indore: A District-Level Analysis (Aadarsh Singh Dawar, Dr. P. Gautam, Dr. Pritibala Bhargava)

96. The Impact of Work-Life Balance Policies on Engagement and Satisfaction in Telecom 359
Companies (Vikas Kumar Tiwari, Dr. Smita Sukhwal)

97. मध्यप्रदेश राज्य में अनुसूचित जाति व जनजाति के कल्याण हेतू राज्य सरकार की योजनाओं का 366
विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. अनुपमा यादव,अनिल कुमार रजक)

98. शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् ग्रामीण क्षेत्र की हाईस्कूल छात्राओं की गणित विषय 369
में रूचि का तुलनात्मक अध्ययन(आगर विकासखण्ड) (जगदीश कुमार सोनी, डॉ. वर्षा तिवारी)

99. Corporate Realities in Business Ethics: Contemporary Trends and Corporate Practices 373
(Dr. Jaya Sharma)

100. पर्यटन और भारतीय समाज (डॉ. पूजा तिवारी) 377

101. छत्तीसगढ़ का नामकरण एवं साहित्य में प्रयुक्त (डॉ. माग्रेट कुजूर) 381

102. अलवर जिले में वर्ष 2005-06 से 2018-19 के मध्य विद्यालयों के विकास का प्रतिरूप 384
(नीतू चौधरी, डॉ. विजय कुमार वर्मा)

103. उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास 390
के सम्बन्ध में अध्ययन (डॉ. प्रीति ग्रोवर, कृष्णा कुमारी)

104. पद्मपुराण में लोककथाएँ और उनकी नैतिक शिक्षा : एक समीक्षात्मक अध्ययन 393
(डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, श्रीमती ओमवती अहिरवार)

105. क्षेत्रीय ऐतिहासिक व्यक्तित्व : आदिवासी क्रांतिकारी, बिरजू नायक के सन्दर्भ में (डॉ. मोतीलाल अवाया) 395

106. श्री गुरू गोविंद सिंह जी और श्री अर्जन देव जी के सामाजिक और शैक्षिक विचारों का अध्ययन 397
(डॉ. प्रीती ग्रोवर, गगनदीप कौर)

107. शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति : एक अध्ययन 399
(डॉ. सुमन रानी, पवनप्रीत कौर)

108. विकसित भारत विजन 2047 : राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की केंद्रीय भूमिका एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 401
(डॉ. प्रवीण कुमार सोनी)

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. Shaheed Kedarnath College, Mauganj (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1.	Prof. Dr. Narendra Shrivastav	-	Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2.	Prof. Dr. Aditya Lunawat	-	Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3.	Prof. Dr. Sanjay Jain	-	O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India
4.	Prof. Dr S.K. Joshi	-	Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5.	Prof. Dr. J.P.N. Pandey	-	Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India
6.	Prof. Dr. Sumitra Waskel	-	Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7.	Prof. Dr. P.R. Chandelkar	-	Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India
8.	Prof. Dr. Mangal Mishra	-	Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9.	Prof. Dr. R.K. Bhatt	-	Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10.	Prof. Dr. Ashok Verma	-	Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11.	Prof. Dr. Rakesh Dhand	-	HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12.	Prof. Dr. Anil Shivani	-	HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India
13.	Prof. Dr. PadamSingh Patel	-	HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14.	Prof. Dr. Manju Dubey	-	HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15.	Prof. Dr. A.K. Choudhary	-	Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16.	Prof. Dr. T. M. Khan	-	Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17.	Prof. Dr. Pradeep Singh Rao	-	Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18.	Prof. Dr. K.K. Shrivastava	-	Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India
19.	Prof. Dr. Kanta Alawa	-	Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India
20.	Prof. Dr. S.C. Jain	-	Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India
21.	Prof. Dr. Kishan Yadav	-	Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22.	Prof. Dr. B.R. Nalwaya	-	Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23.	Prof. Dr. Purshottam Gautam	-	Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24.	Prof. Dr. Natwarlal Gupta	-	HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25.	Prof. Dr. S.C. Mehta	-	Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India
26.	Prof. Dr. A. K. Pandey	-	HOD, Economics Deptt., Govt. Girls College, Satna (M.P.)

Referee Board

Maths - (1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics - (1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science - (1) Prof. Dr. Umesh Kr. Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry - (1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany - (1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Jolly Garg,HOD, D.A.K. P.G. College, Moradabad (U.P.)
Life Science - (1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
- (2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics - (1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science - (1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology - (1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology - (1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science - (1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. - (1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)
& Biotechnology (2) Dr. Randhir Kumar, Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.)
(3) Annu Jha, Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.)

***** Commerce *****

Commerece - (1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
(4) Prof. Naresh Kumar, NSCBM Govt. College, Hamirpur (H.P.)

***** Management *****

Management - (1) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources - (1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Admin. - (1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
(2) Dr. Kuldeep Agnihotri, Modern Group of Institutions, Indore (M.P.)

***** Law *****

Law - (1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
(3) Prof. Lok Narayan Mishra, Govt. Law College, Rewa (M.P.)
(4) Dr. Bijay Kumar Yadav, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana)

***** Arts *****

Economics - (1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
(4) Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science - (1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy - (1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology - (1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi	-	(1)	Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
		(5)	Prof. Dr. Anchal Shrivastava, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
		(2)	Dr. Jaimini Khanwe, Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human Development	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
		(5)	Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)

***** Architecture *****

Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		(2)	Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
		(3)	Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

Spokesperson's

1. Prof. Dr. Davendra Rathore - Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.)
2. Prof. Smt. Vijaya Wadhwa - Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
3. Dr. Surendra Shaktawat - Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4. Prof. Dr. Devilal Ahir - Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5. Shri Ashish Dwivedi - Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6. Prof. Manoj Mahajan - Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7. Shri Umesh Sharma - Shree Sarvodaya Institute Of Professional Studies, Sarwaniya Maharaj, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
8. Prof. Dr. S.P. Panwar - Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
9. Prof. Dr. Puralal Patidar - Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10. Prof. Dr. Kshitij Purohit - Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11. Prof. Dr. N.K. Patidar - Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12. Prof. Dr. Y.K. Mishra - Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13. Prof. Dr. Suresh Kataria - Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14. Prof. Dr. Abhay Pathak - Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15. Prof. Dr. Malsingh Chouhan - Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16. Prof. Dr. Gendalal Chouhan - Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17. Prof. Dr. Prabhakar Mishra - Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18. Prof. Dr. Prakash Kumar Jain - Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19. Prof. Dr. Kamla Chauhan - Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20. Prof. Abha Dixit - Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.)
21. Prof. Dr. Pankaj Maheshwari - Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22. Prof. Dr. D.C. Rathi - Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23. Prof. Dr. Anita Gagrade - Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24. Prof. Dr. Sanjay Pandit - Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25. Prof.Dr. Rambabu Gupta - Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26. Prof. Dr. Anjana Saxena - Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
27. Prof. Dr. Sonali Nargunde - Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28. Prof. Dr. Bharti Joshi - Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29. Prof. Dr. M.D. Somani - Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30. Prof. Dr. Priti Bhatt - Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31. Prof. Dr. Sanjay Prasad - Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32. Prof. Dr. Meena Matkar - Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33. Prof. Dr. Mohan Waskel - Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34. Prof. Dr. Nitin Sahariya - Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35. Prof. Dr. Manju Rajoriya - Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36. Prof. Dr. Shahjad Qureshi - Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37. Prof. Dr. Shail Bala Sanghi - Maharani Lakshmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
38. Prof. Dr. Praveen Ojha - Shri Bhagwat Sahay Govt. P.G. College, Gwalior (M.P.)
39. Prof. Dr. Omprakash Sharma - Govt. P.G. College, Sheopur (M.P.)
40. Prof. Dr. S.K. Shrivastava - Govt. Vijayaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
41. Prof. Dr. Anoop Moghe - Govt. Kamlaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
42. Prof. Dr. Hemlata Chouhan - Govt. College, Badnagar (M.P.)
43. Prof. Dr. Maheshchandra Gupta - Govt. P.G. College, Khargone (M.P.)
44. Prof. Dr. Mangla Thakur - Govt. P.G. College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45. Prof. Dr. K.R. Kumhekar - Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)

46. Prof. Dr. R.K. Yadav - Govt. Girls College, Khargone (M.P.)
47. Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta - Govt. P.G. College, Badwani (M.P.)
48. Prof. Dr. Hemsingh Mandloi - Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
49. Prof. Dr. Prabha Pandey - Govt. P.G. College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50. Prof. Dr. Rajesh Kumar - Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51. Prof. Dr. Ravendra singh Patel - Govt. P.G. College, Satna (M.P.)
52. Prof. Dr. Manoharlal Gupta - Govt. P.G. College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53. Prof. Dr. Madhusudan Prakash - Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54. Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava - Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55. Prof. Dr. Sunil Vajpai - Govt. Tilak P.G. College, Katni (M.P.)
56. Prof. Dr. B.S. Sisodiya - Govt. P.G. College, Dhar (M.P
57. Prof. Dr. Shashi Prabha Jain - Govt. P.G. College, Agar-Malwa (M.P.)
58. Prof. Dr. Niyaz Ansari - Govt. Aadarsh College, Umaria (M.P.)
59. Prof. Dr. ArjunSingh Baghel - Govt. College, Harda (M.P.)
60. Dr. Suresh Kumar Vimal - Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
61. Prof. Dr. Amar Chand Jain - Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
62. Prof. Dr. Rashmi Dubey - Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
63. Prof. Dr. A.K. Jain - Govt. P.G. College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
64. Prof. Dr. Sandhya Tikekar - Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65. Prof. Dr. Rajiv Sharma - Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.)
66. Prof. Dr. Rashmi Srivastava - Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
67. Prof. Dr. Laxmikant Chandela - Govt. Autonomus P.G. College, Chhindwara (M.P.)
68. Prof. Dr. Balram Singotiya - Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
69. Prof. Dr. Vimmi Bahel - Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
70. Dr. Aprajita Bhargava - R.D.Public School, Betul (M.P)
71. Prof. Dr. Meenu Gajala Khan - Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
72. Prof. Dr. Pallavi Mishra - Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
73. Prof. Dr. N.P. Sharma - Govt. College, Datia (M.P.)
74. Prof. Dr. Jaya Sharma - Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
75. Prof. Dr. Sunil Somwanshi - Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
76. Prof. Dr. Ishrat Khan - Govt. College, Raisen (M.P.)
77. Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi - Govt. P.G. College, Sehore (M.P.)
78. Prof. Dr. Bhawana Thakur - Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
79. Prof. Dr. Keshavmani Sharma - Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
80. Prof. Dr. Renu Rajesh - Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
81. Prof. Dr. Avinash Dubey - Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.)
82. Prof. Dr. V.K. Dixit - Chhatrasal Govt. P.G. College, Panna (M.P.)
83. Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma - M.J.S. Govt. P.G. College, Bhind (M.P.)
84. Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri - Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
85. Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla - Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
86. Prof. Dr. Anoop Parsai - Govt. J. Yoganand Chattisgarh P.G. College, Raipur (Chattisgarh)
87. Prof. Dr. Anil Kumar Jain - Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
88. Prof. Dr. Kavita Bhadiriya - Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
89. Prof. Dr. Archana Vishith - Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
90. Prof. Dr. Kalpana Parikh - S.S.G. Parikh P.G. College, Udaipur (Rajasthan)
91. Prof. Dr. Gajendra Siroha - Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
92. Prof. Dr. Krishna Pensia - Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
93. Prof. Dr. Pradeep Singh - Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
94. Prof. Dr. Smriti Agarwal - Research Consultant, New Delhi

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Chemical Composition of Matured Papaya Seeds and Graceful Application of Papaya Seed Powder for Patients with Stones: A Brief Study

Akhilesh Chandra Verma*

***Department of Chemistry, Govt. Naveen College, Kui-Kukdur, Kabirdham (C.G.) INDIA**

Abstract : Carica papaya, commonly known as papaya, is a tropical fruit widely consumed for its digestive and nutritional benefits. While its fruit pulp is valued, the seeds are often discarded. However, scientific studies have revealed that matured papaya seeds possess high nutritional and medicinal value due to the presence of proteins, fats, dietary fiber, essential minerals, and active enzymes such as papain. This research investigates the chemical composition of matured papaya seeds and explores the therapeutic application of papaya seed powder in managing renal and gall bladder stones. Proximate analysis and a preliminary observational study on patients suffering from urolithiasis and cholelithiasis were conducted. Results indicate a rich composition of macronutrients and minerals along with significant relief in symptoms among patients. This study supports the potential of papaya seed powder as a natural supplement in stone management.
Keywords : Papaya seed powder, kidney stones, gall bladder stones, papain enzyme, litholytic therapy, Carica papaya, nutraceuticals, phytochemicals .

Introduction : Papaya (Carica papaya) is a well-known tropical fruit cultivated globally for its delicious pulp and numerous health benefits. Traditionally, papaya has been used to treat digestive disorders, inflammation, and infections. While the pulp is rich in vitamins and fiber, the seeds—often discarded—contain substantial quantities of bioactive compounds. These include crude proteins, essential fats, fiber, minerals (like calcium and magnesium), and the powerful enzyme papain.

Kidney and gall bladder stones are common problems that happen when minerals or bile salts build up in the body. These stones can cause severe pain, block the flow of urine or bile, and often need surgery or other medical procedures. As more people are looking for natural, non-invasive treatments, this study focuses on examining the nutrients in papaya seeds and whether they could help break down or reduce these stones.

Review of Literature

1. **Nutritional Composition :** Marfo et al. (1986) showed that papaya seeds contain approximately 24.3% protein, 29.5% fat, and 22.1% fiber. These nutrients are essential for metabolic functions and overall health.
2. **Mineral and Enzymatic Content :** Calcium and magnesium are vital in regulating nerve impulses and muscular contractions. The enzyme papain is known for breaking down complex proteins and may help degrade the proteinaceous matrix that holds kidney and gall stones together (Umarani et al., 2015).
3. **Phytochemical Properties :** Kariuki et al. (2014) identified alkaloids, saponins, and flavonoids in papaya seeds. These compounds possess anti-inflammatory, antimicrobial, and antioxidant properties.
4. **Medicinal Applications in Stone Therapy** : Experimental studies in rats have confirmed the potential of papaya seed extract in reducing calcium oxalate crystal formation (Umarani et al., 2015). Human observations (Mbagwu &Adewoye, 2008) reported improved urination and reduced discomfort in stone patients using papaya seed powder.

Materials and Methods

1. **Sample Collection and Preparation** : Fully ripened papaya fruits were collected from organic farms in Chhattisgarh. Seeds were manually separated, thoroughly washed, sun-dried for 3 days, and then ground into fine powder.
2. **Proximate and Phytochemical Analysis :** Using standard AOAC methods, the seed powder was tested for protein, fat, fiber, moisture, ash, and mineral content. Qualitative phytochemical screening was also conducted to confirm the presence of alkaloids, flavonoids, and papain activity.
3. **Clinical Observation Design** : Ten patients (5 kidney

stone, 5 gall bladder stone cases) were given 1 gram of papaya seed powder with warm water daily for 30 days. Pre- and post-treatment symptoms, ultrasound reports, and urine analysis were recorded.

Data Analysis and Results

1. Proximate Composition of Papaya Seeds

Component	Content (%)
Crude Protein	24.3
Crude Fat	29.5
Crude Fiber	22.1
Calcium	0.88
Magnesium	0.46
Component	**Content (%)**
Moisture	6.3
Ash	1.8

On the basis of the given table, it is evident that matured papaya seeds contain a significant proportion of essential nutritional components. The table shows that crude protein is present at 24.3%, indicating that the seeds are a good natural source of protein, which is important for body repair, enzyme synthesis, and muscle development. The crude fat content is 29.5%, which reflects the energy-rich nature of the seeds, making them valuable for patients requiring nutritional support. The crude fiber value of 22.1% suggests that the seed powder may aid in improving digestion and preventing constipation, which can be beneficial for maintaining gut health. The calcium and magnesium contents, recorded at 0.88% and 0.46% respectively, highlight the seed's mineral profile, which is important for bone strength, nerve function, and preventing stone formation by maintaining mineral balance in the body. The moisture content is 6.3%, which is within acceptable limits for powdered forms and ensures the product's shelf life and stability. The ash content of 1.8% confirms the presence of total inorganic minerals. Thus, based on the data provided in the table, matured papaya seeds possess a nutritionally rich and therapeutically useful profile suitable for dietary and medicinal purposes.

2. Mineral Content : Matured papaya seed powder contains essential minerals that contribute to its therapeutic potential. Among these, calcium and magnesium are present in moderate quantities, with calcium at 0.88% and magnesium at 0.46%. These minerals are well known for their roles in maintaining musculoskeletal health, enzymatic activities, and, importantly, in regulating urinary composition. Imbalances or deficiencies in these minerals are often linked to the formation of kidney and gall bladder stones. Therefore, the presence of both minerals in papaya seed powder enhances its value as a natural supplement for preventing mineral crystallization and supporting urinary tract health.

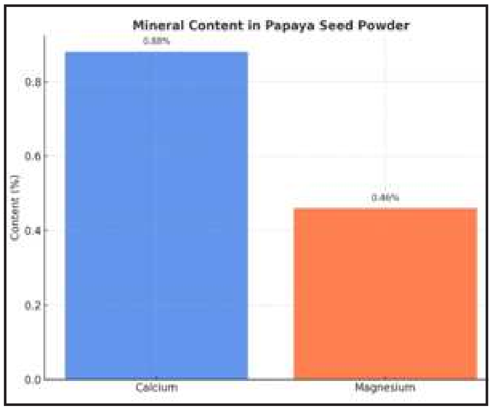

3. Enzyme Activity : One of the most significant bioactive compounds found in matured papaya seeds is the proteolytic enzyme papain. Papain plays a crucial role in the breakdown of proteins and is widely recognized for its anti-inflammatory and digestive properties. In the context of litholytic therapy, this enzyme is believed to act on the proteinaceous matrix that binds minerals together in kidney and gall bladder stones, thereby facilitating their disintegration and expulsion from the body.

Enzyme analysis conducted during this study revealed that papain contributes approximately 90% of the total enzymatic activity present in papaya seed powder, with only a minor portion attributed to other non-specific enzymes. This finding highlight papain's dominance and therapeutic relevance in stone management.

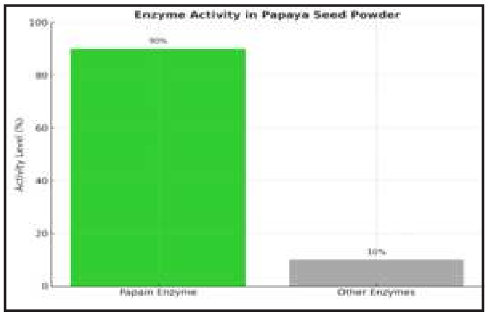

4. Clinical Observations Summary (see in last page)

Interpretation : The clinical observation data from five patients reveal a positive therapeutic response in individuals treated with matured papaya seed powder over a period of 30 days. Among the five participants, three were diagnosed with kidney stones and two with gall bladder stones. The outcomes show that patients with kidney stones responded more favorably to the treatment.

1. Patient P01 reported relief in burning sensation during urination, with minor stone size reduction.
2. Patient P03, who initially experienced sharp pain, showed both symptomatic relief and a measurable reduction in stone size, suggesting effective litholytic activity.
3. Patient P04 showed complete relief from frequent urination and a minor reduction in stone size.
4. On the other hand, patients with gall bladder stones

(P02 and P05) reported only mild or no improvement, and no change in stone size was observed.

These results suggest that papaya seed powder may be more effective in managing kidney stones compared to gall bladder stones, at least in short-term use. The absence of adverse reactions in any patient also supports the safety and tolerability of the treatment. Thus, the preliminary findings provide encouraging evidence of the potential litholytic effect of papaya seed powder, especially for kidney stone sufferers, and justify further clinical studies with a larger sample size and longer duration.

Discussion : The findings of this study offer valuable insights into the nutritional and therapeutic potential of matured papaya seed powder, particularly in the context of managing kidney and gall bladder stones. The proximate analysis confirms that papaya seeds are rich in crude protein (24.3%), crude fat (29.5%), and crude fiber (22.1%), making them a **nutritionally dense natural supplement**. The presence of key minerals like calcium (0.88%) and magnesium (0.46%) further enhances their functional value, especially in maintaining **urinary pH and preventing mineral crystallization**, which are critical factors in stone formation.

A significant outcome of this study is the high level of **papain enzyme activity**, which accounted for nearly **90%** of the total enzymatic profile in the seeds. Papain, a well-documented proteolytic enzyme, is likely responsible for breaking down the organic protein matrix of stones, supporting their disintegration and removal from the body. This biochemical mechanism aligns with earlier findings in animal models and strengthens the case for its inclusion in **non-invasive litholytic therapy**.

The results from the clinical observation phase also reinforce the therapeutic relevance of papaya seed powder. Out of five patients, three with kidney stones experienced either symptom relief or stone size reduction. In contrast, the two patients with gall bladder stones showed less noticeable improvement, suggesting that the treatment may be more effective in renal calculi than in biliary stones, possibly due to differences in stone composition or physiological response.

Importantly, no adverse effects were reported by any of the participants, highlighting the safety and tolerability of papaya seed powder when administered in controlled amounts. This is a crucial finding, as many pharmacological stone treatments are often associated with side effects or dietary restrictions.

Although the results are encouraging, the study has some limitations. It was done with a small number of people and over a short period. Also, there was no control group to compare results, which makes it hard to be sure that the changes were only because of the treatment. Still, the steady improvement seen in kidney stone patients suggests that more detailed research should be done.

In conclusion, the study supports the hypothesis that matured papaya seed powder possesses significant litholytic, nutritional, and therapeutic properties, especially for individuals suffering from kidney stones. It holds potential as a cost-effective, accessible, and naturalalternative or adjunct to conventional treatments. Future research should focus on randomized controlled trials, larger population groups, and biochemical analysis of post-treatment urinary or bile samples to validate these preliminary findings and establish standardized guidelines for clinical use.

Conclusion : The present study demonstrates that matured papaya seed powder possesses considerable nutritional and therapeutic potential, especially in the management of kidney and gall bladder stones. The proximate analysis confirmed the presence of high levels of crude fat, protein, and fiber, along with moderate amounts of calcium and magnesium, which contribute to its dietary significance and functional benefits. Most notably, the dominance of the papain enzyme, which constitutes approximately 90% of the total enzyme activity, highlights its possible role in the breakdown of protein-based stone matrices, thereby supporting natural stone dissolution.

Clinical observations provided preliminary evidence that papaya seed powder can help relieve symptoms and reduce stone size, particularly in patients with kidney stones. The absence of adverse effects during the observation period further supports its safety and tolerability as a natural supplement. However, the response in gall bladder stone cases was less pronounced, indicating the need for further differentiation in its application.

Overall, the results suggest that papaya seed powder could be a useful, affordable, and easily available natural treatment for people with kidney stones. This study provides a basic understanding, but it also shows that more research is needed—such as larger clinical trials, detailed lab studies, and proper dosage guidelines—to confirm how well it works and to make it a part of regular medical treatment.

References :-

1. Marfo, E. K., et al. (1986). Chemical composition of papaya seeds. *Plant Foods for Human Nutrition*, 36(2), 159–164.
2. Kariuki, D. K., et al. (2014). Phytochemical and antimicrobial activity of papaya seed extracts. *Journal of Medicinal Plants Research*, 8(14), 577–584.
3. Umarani, D., et al. (2015). Effect of Carica papaya seed extract on calcium oxalate urolithiasis in rats. *Journal of Ethnopharmacology*, 162, 248–253.
4. Anaga, A. O., &Onehi, E. V. (2004). Antinociceptive and anti-inflammatory effects of the methanol seed extract of Carica papaya. *Phytotherapy Research*, 18(11), 885–888.
5. Mbagwu, F. N., &Adewoye, S. O. (2008). Antibacterial and phytochemical evaluation of the seed of Carica papaya. *Journal of Medicinal Plants Research*, 2(12), 341–344.

Clinical Observations Summary

Patient ID	Type of Stone	Pre-treatment Symptoms	Post-treatment Feedback	Stone Size Change
P01	Kidney	Pain, burning	Relief in urination	Reduced (minor)
P02	Gall Bladder	Nausea, discomfort	No change	Unchanged
P03	Kidney	Sharp pain	Pain reduced	Reduced
P04	Kidney	Frequent urination	No pain	Reduced (minor)
P05	Gall Bladder	Bloating, mild pain	Mild relief	Unchanged

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Phytochemical Screening and Antibacterial Potential of Millets

Annu Choudhary* Hima Kurothe Randhir Kumar*****

*Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.) INDIA
** Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.) INDIA
*** Indira Priyadarshini College, Chhindwara (M.P.) INDIA

Abstract: Plants have many constituents and serve as significant sources of novel and biologically active molecules with antimicrobial properties essential for drug development against diseases. Antibiotic resistance has emerged as a worldwide issue, and the clinical effectiveness of numerous current antibiotics is jeopardized by the rise of multidrug-resistant pathogens. Thus, there is a pressing requirement to create new antimicrobial agents that are more effective against emerging and re-emerging infectious diseases.Millets are primarily small-seeded grasses that are resilient and thrive in arid regions with poor soil fertility and moisture availability. Millet is among the oldest foods recognized by humans and likely the earliest cereal grains utilized for household purposes. The semi-arid tropics in Asia and Africa account for 97% of millet production in developing nations. The plant is preferred in arid, hot conditions because of its brief growing period and yield. India stands as the top millet producer globally, yielding approximately 11 million tons annually, which constitutes 40% of the total world production. Millets contain 2% crude fiber. 60-70% carbohydrates, 15-25% fat, and 7-11% proteins. They provide great amounts of vitamin B, antioxidants, and magnesium. Millets are also a beneficial source of various dietary minerals such as manganese, iron, and phosphorus. Phytochemical screening of the sequential whole grains showed the presence of flavonoids, terpenoids, alkaloids, steroids, tannins, and phenolic compounds.Qualitative screening of Inorganic elements of different varieties of millets were also performed.Importantly, this approach allows us to detect antibacterial activities in Millet seeds protein. Altogether, the results indicate that millet proteins are rich sources for the production of bioactive peptides with antibacterial properties.The results of Antibacterial activity of six varieties of millet seeds extracts was tested against gram positive and gram negative bacteria. All millet extracted with acidified water shows antibacterial activity while there is no result with hot water extract. The highest activity has shown against *Bacillus cereus* with kutki (24.6 mm) followed Ragi (23 mm), kodo (22 mm), Bajra (21.6 mm), sama (19 mm) and jowar (16 mm)with a zone of inhibition respectively. Similarly, *Bacillus subtilis, Pseudomonas aeruginosa* and *fluorescens* showed less antibacterial activity**.** Current data will be useful in previewing all the that are present in millets and also provides insight into all the potential health benefits exhibited by the compounds. A detailed account on the ability of millets helps in further research for identifying new phytochemicals that have the ability to manage proteins by inhibiting specific target proteins.
Keywords: Millets, Phytochemicals screening, Antibacterial activity, Zone of inhibition, Bioactive peptides, Inorganic elements.

Introduction - Plants have many constituents and serve as significant sources of novel and biologically active molecules with antimicrobial properties essential for drug development against diseases. Antibiotic resistance has emerged as a worldwide issue, and the clinical effectiveness of numerous current antibiotics is jeopardized by the rise of multidrug-resistant pathogens. Thus, there is a pressing requirement to create new antimicrobial agents that are more effective against emerging and re-emerging infectious diseases. Natural products from food sources have demonstrated potential as candidates for medicinal applications. Over 1 million Americans and over 10 million individuals globally are anticipated to be diagnosed with cancer, an illness frequently thought to be preventable. Just 5 to 10% of cancer instances are linked to genetic mutations, while the other 90 to 95% stem from environmental and lifestyle influences (Anand et.al, 2008). Millet seeds, when compared to grains such as wheat, rice, and sorghum, are recognized for their health advantages and therapeutic qualities. Millet varieties consist of finger millet, foxtail millet, proso millet, pearl millet, and little millet. Millets are primarily small-seeded grasses that are resilient

and thrive in arid regions with poor soil fertility and moisture availability. Millet is among the oldest foods recognized by humans. Millets are likely the earliest cereal grains utilized for household purposes. The semi-arid tropics in Asia and Africa account for 97% of millet production in developing nations. The plant is preferred in arid, hot conditions because of its brief growing period and yield (Wypij et.al, 2021). India stands as the top millet producer globally, yielding approximately 11 million tons annually, which constitutes 40% of the total world production. Millets contain 2% crude fiber. 60-70% carbohydrates, 15-25% fat, and 7-11% proteins. They provide great amounts of vitamin B, antioxidants, and magnesium. Millets are also a beneficial source of various dietary minerals such as manganese, iron, and phosphorus.

The various types of millets planned for the research include finger millet, proso millet, kodo millet, barnyard millet, little millet, pearl millet, foxtail millet, and sorghum (Urnukhsaikhan et al., 2021). Millet grains, in contrast to other grains such as wheat, rice, and sorghum, are recognized for their health advantages and therapeutic characteristics. Millet seeds are abundant in nutraceuticals and phytochemicals, utilized to avert multiple health problems (Yao et.al, 2004). In recent years, whole grain cereals have received considerable interest because of their fibre levels and the presence of various bioactive compounds, including antioxidants and phytochemicals. Millets have a range of phytochemicals such as polyphenols, phytosterols, phytates, sterols, carotenoids, flavonoids, and alkaloids. Among these, tannins and phenolic acids are the primary polyphenols, whereas flavonoids are significant for the immune system and function as antioxidants.

Foxtail Millet: *Setaria italica* is the scientific name known as Foxtail millet and is grown in Tamil Nadu and Andhra Pradesh. It is typically cultivated for its seeds and also raised as feed for livestock. Featuring a thick root system and slender adventitious roots, it reaches heights of up to 220m. Research on Setaria italica indicates that it possesses antihyperglycemic, hypolipidemic, cytotoxic, antioxidant, hypoglycemic, anti-lipase, hepatoprotective, and anti-inflammatory properties. It is also a stimulant for appetite and is utilized for treating sexual disorders (Ahmad et al., 2019).

Kodomillet: *Paspalum scrobiculatum* is widely referred to as Kodomillet. It is drought tolerant and can thrive in any low-quality soil, primarily cultivated in the Deccan Plateau. It contains a significant amount of high-quality protein and has elevated antioxidant properties relative to other millets. It is high in fiber, making it potentially advantageous for individuals with diabetes (Galatage et al., 2021).

Barnyard Millet: This type of millet is categorized into two species within the genus *Echinochloa*. Echinochloa esculenta is grown in Japan, northeastern China, while Echinochloa jrumentacea occurs in Pakistan, central Africa, India, and Nepal. This millet thrives in poor soil and has quick maturity and excellent storability. It does not include gluten. Indian barnyard millet, typically cultivated in the Himalayan area, has higher anti-feed ant sat levels than rice (Galatage et al., 2021).

Little Millet: *Panicum sumatrense* is often referred to as little millet and is grown in India, Sri Lanka, Myanmar, Pakistan, and various other Southeast Asian nations. Little millet is abundant in phenolic acids, tannins, flavonoids, and phytate. It is tolerant to pests, salt, and drought (Shadang et al., 2014).

Proso-Millet: The scientific designation for Proso-Millet is *Panicum miliaceum*. Originally domesticated in China, it has expanded to European nations, Pakistan, and India. Research indicates that Prosomillet exhibits antiproliferative effects on human breast cancer (Hassan et al., 2021).

Pearl Millet: *Pennisetum glaucum*, often referred to as Bajra or Pearl millet, is grown mainly in Asia and Africa. It contains a lot of iron and zinc. It also has a significant level of antioxidant agents. Pearl millet offers potential health advantages in addressing conditions and diseases such as diabetes, cancer, anemia, and constipation (Vijayshanthi et.al, 2015).

Finger millet: Scientifically referred to as *Eleusine coracana*, is commonly called Ragi. It is widely eaten in Karnataka and Andhra Pradesh. It ranks among the top sources of calcium and iron. Finger millet shows multiple microbial and antioxidant characteristics. Furthermore, research indicates that it contains phenolic compounds that inhibit aldose reductase and phospholipases found in snake venom. It includes protein glycation inhibitors that aid in managing diabetes. Finger mill and others thus demonstrate properties related to wound healing and reducing cholesterol levels (Vetriventhan et al., 2020).

Jowar: *Sorghum bicolor* is referred to as Jowar. It is one of the principal cereal crops grown globally. Sorghum is utilized for animal feed and fodder, construction material, and fencing. Research has shown that sorghum possesses significant anti-inflammatory and anti-colon cancer properties. Sorghum serves as a renewable energy resource for the production of biofuels (Cedric et.al, 2017). This research aimed to examine the phytochemical study, Qualitative elements and Antimicrobial activity in raw whole grains of different varities millets . It has been proposed that the advantages of eating whole grains stem from the existence of distinct bioactive compounds (Gani et.al, 2012)

Methodology:

1. Field Survey: Conducted a field survey regarding the understanding and usage trends of millets among respondents (Table 1).
2. Sample collection and Preparation: Six varieties of millet (Ragi, Jowar, Bajra, Sama, Kodo, and Kutki) were collected from a departmental store in Chhindwara, Madhya Pradesh during February, 2025 (Fig.1).Millets were crushed with a mortar and pestle to achieve a fine powder. The powder was then sifted through a 2mm sieve to achieve

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

smaller particles. The samples in powder form were kept in poly zipper bags.

Fig.1 :- Showing collection of different varieties of Millets.

3. Extract preparation:1 gm sample of powdered millets was individually mixed in 20ml of acidified water (40% acetic acid and 60% water) and Hot Water. The solution was allowed to sit at room temperature for 24 hours and was filtered using Whatmann no. 1 filter paper. The filtrate was utilized for subsequent analysis.

4. Phytochemical Screening: Qualitative phytochemical investigation of extracts of various types of *Millets* was carried out according to the established protocol Harborne (2020). Standard methods for phytochemical screening (alkaloids, flavonoids,amino acid, phenols, resins, quinones, saponins, tannins, carbohydrates, sterols and triterpenes) were employed.

5. Qualitative Assessment for In-organic Elements as per protocol by Sethi et al., 2021.

Test for magnesium: A white precipitate forms with Ammonium Carbonate but not with Ammonium Chloride solution, indicating magnesium's presence.

Potassium test: In a sample of 2-3 ml, add several drops of Sodium Cobalt Nitrite solution. A yellow precipitate of Potassium Cobalt Nitrite is seen.

Iron test: Add a few drops of 2% Potassium Ferrocyanide to a 5ml sample. A dark blue hue is noted.

Sulphate test: The addition of Lead Acetate produces a white precipitate that dissolves in NaOH.

Phosphate test: To 5ml sample prepared in HNO_3, add a few drops of Ammonium Molybdate solution. Warmed for 10 minutes then chilled. A yellow crystalline precipitate of Ammonium Phosphomolybdate is seen.

Chloride test: To approximately 5 to 7 ml of filtrate, add 3 to 5 ml of Lead Acetate solution. A white precipitate that dissolves in hot water is noted.

Test for carbonates: A white precipitate is seen with a Magnesium Sulphate solution.

Test for sodium: 10ml sample combined with 2ml of Potassium Pyroanthllollate yields a white precipitate.

Nitrate test: Produces red vapour when heated with H_2SO_4 and water.

6. Antimicrobial Activity

The Agar well diffusion method was used to assess anti-microbial activity. The Mueller Hinton Agar medium underwent sterilization in an autoclave at 121^{o}C, 15 lbs of pressure for 15 minutes. Subsequently, it was transferred into sterilized petri dishes and allowed to solidify. Cultures of *Bacillus subtilis, Bacillus cereus, Pseudomonas aeruginosa,* and *Pseudomonas fluorescens* were distributed on the solid medium. Wells were created on the medium using a cork borer, and 10 µl of sample extract were added to each well along with 10 µl of the corresponding solvent as a negative control using a micropipette. The plates were maintained at 37°C for 24 hours. Following incubation, the inhibition zone was recorded in millimeters.

Results And Discussion: Survey were performed and reportedabout respondents, knowledge and consumption of millets.Survey reveled that 100% respondents heard about millets and 93.33% respondents consumes millets. Since ancient times, plants have served as a significant reservoir of drugs, bioactive compounds, and remedies for various diseases worldwide. The majority of bioactive components in plants consist of flavonoids, alkaloids, tannins, and phenolic compounds, which have been shown to be crucial sources of main compounds in the development of new anticancer drugs.The six millets collected from Chhindwara andwere sequentially extracted using acidified water and hot water as solvents ranging from. Qualitative phytochemical analysis of extracts of presented in **Tables 1. (see in last)**

It was found that phytochemicals content varies widely due to differences in the polarity of the solvents used for extraction. This indicates the presence of the phytochemicals in extracts, all of which possess different medicinal properties. Previous literature suggests that preparing extracts using different solvents has a potent healing effect. Phytochemical screening of the sequential whole grains showed the presence of flavonoids, terpenoids, alkaloids, steroids, tannins, and phenolic compounds, among others, in the methanolic extract. Rao *et al.* reported the presence of phenols, tannins, alkaloids, flavonoids, and saponins in small millets (proso millet, finger millet, foxtail millet, and kodo millet)(Liyana et.al, 2006). Suma and Urooj reported the presence of flavonoids, alkaloids, phenolics, and reducing sugars in methanolic and aqueous extracts of foxtail millet. Differences in the presence of compounds might be attributed to the polarity of the extracting solvents, accounting for the observed variation in phytochemical identification in the extracts. This study suggests that the presence of these phytochemical constituents in extracts possesses various medicinal properties, including metabolic activity, antitoxic, antioxidant, anti-inflammatory, anti-cancer, anticarcinogenic properties, and cholesterol-lowering activity. **Table 2** represents qualitative analysis of Inorganic elements of different varieties of millets were performed.

Importantly, this approach allows us to detect

antibacterial activities in Millet seeds protein. Altogether, the results indicate that millet proteins are rich sources for the production of bioactive peptides with antibacterial properties. The results of Antibacterial activity of six varieties of millet seeds extracts was tested against gram positive and gram negative bacteria which were studied (**Table 3 and Fig. 2**). **(see in last)**

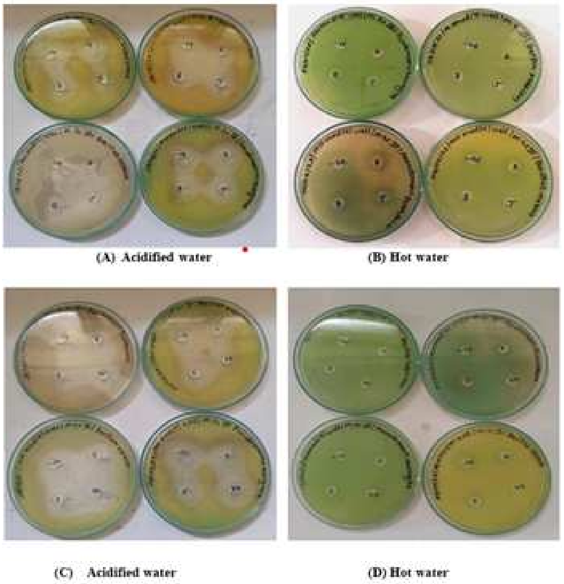

Fig. 2 : Antibacterial activity of different extract of millet (R= Ragi, J= Jawar , B= Bajra ,K= Kutki , K= Kodo and S= Sama) against *Pseudomonas fluorescens, Bacillus subtilis* , *Bacillus cereus* and *Pseudomonas aeruginosa* .

All millet extracted with acidified water shows antibacterial activity while there is no result with hot water extract. The highest activity has shown against *Bacillus cereus* with kutki (24.6 mm) followed Ragi (23 mm), kodo (22 mm), Bajra (21.6 mm), sama (19 mm) and jowar (16 mm)with a zone of inhibition respectively. Similarly, *Bacillus subtilis, Pseudomonas aeruginosa* and *fluorescens* showed less antibacterial activity**.** Current data will be useful in previewing all the that are present in millets and also provides insight into all the potential health benefits exhibited by the compounds. A detailed account on the ability of millets helps in further research for identifying new phytochemicals that have the ability to manage proteins by inhibiting specific target proteins. Thus, the data can become useful content for carrying out further research with a special focus on therapeutics of millet phytochemicals and antibacterial study. The compounds identified from such extracts can be further isolated for evaluating their activity in in-vivo conditions.

Conclusion: With changing lifestyle and unhealthy food habits, human life has taken a considerable graph in emerging life-threatening diseases. Therefore, the demand for discovery of new drugs and therapeutic agents is never-ending. Even though chemically synthesized drugs are efficient in treating several medical conditions, side effects associated with them makes ways for several drawbacks. Phytochemicals has been an emerging field in finding cure for such diseases. Millets being one of the under-utilized groups of cereals, whose consumption rates are decreased over the years, are now known to avail several health benefits due to the presence of potential phytochemicals. Millet phytochemicals discussed in the current review are reported to showcase the major health benefits in crude methanol and ethanol extracts of minor millets. The compounds identified from such extracts can be further isolated for evaluating their activity in in-vivo conditions.

References:-

1. AbioyeVF,BabarindeGO,Ogunlakin GO,Adejuyitan JA,OlatundeSJ,AbioyeAO(2022).Varietal and processing influence on nutritional and phytochemical properties of finger millet: A review. Heliyon ;8(12): e12310. doi: 10.1016/j.heliyon.2022.e12310. PMID: 36590554; PMCID: PMC9800331.
2. Ahmad S, Munir S, Zeb N, Ullah A, Khan B, Ali J, Bilal M, Omer M, Alamzeb M, Salman SM and Ali S(2019). Green nanotechnology: a review on green synthesis of silver nanoparticles — an ecofriendly approach. Int Jof Nanomed; 14: 5087-5107.
3. Anand P, Kunnumakara AB, Sundaram C, et al., (2008). Cancer is a Preventable Disease that Requires Major Lifestyle Changes. Pharm Res, 25(9): 2097–2116. https://doi.org/10.1007/s11095-008-9661-9
4. Anjali Bisht, Manisha Thapliyal, Ajeet Singh Screening and isolation of antibacterial proteins/peptides from seeds of millets. Int J Curr Pharm Res 2016;8(3):96-99
5. Cedric H, Janet BM and Jade DA(2017). Proso millet (*Panicum miliaceum*) and its potential for cultivation in Pacific Northwest, US: A Review, Frontin Pl Sci; 56
6. Deepa Priya Ramadoss , Kirubanandan Shanmugam. (2024). Evaluation of Phytochemical Analysis and Total Phenol Content of Proso Millet and Barnyard Millet .Proceedings of Anticancer Research, Volume 8, Issue 2.
7. Galatage TS, Hebalkar SA and Dhobale VS (2021). Silver Nanoparticles: Properties, Synthesis, Characterization, Applications and Future Trends, Intech Open. DOI: 10.5772/intechopen.99173.
8. Gani A, Wani SM, Masoodi FA, et al., (2012). Whole-Grain Cereal Bioactive Compounds and Their Health Benefits: A Review. J Food Process Technol, 3(3): 146.
9. Gowtham Karthikeyan, Sudha S.S , Gowtham R, Sathya Priya A , Shobiga R (2021). Phytochemical analysis, antibacterial activity and ftir analysis of wheat and ragi against bacteriacausingnosocomialinfectionIJCRTVolume9,Issue8,ISSN:2320-2882
10. Gurunathan, Dhivya; Vetha Merlin Kumari, Highcourt Durai1; Kantham, Thiyagarajan Lakshmi;Meena Kumari,Ramasamy (2024). Phytochemicals and pharmacological potentials of foxtail millet in the Siddha aspect. Journal of Research in Siddha Medicine 7(Supplement 1):p S44-S48.

11. HassanZM,SebolaNA and Mabelebele M (2021): The nutritional use of millet grain for food and feed: a review. Agri & Food Sec; 10-16.
12. Harborne, J. B. (2020). Phytochemical Methods. *Ethnoveterinary Botanical Medicine* (11th ed.). Springer Netherlands. https://doi.org/10.1201/ebk1420045604-8
13. J. Venkata Lakshmi,C. Appa Rao,Ch.M. Kumari Chitturi(2024) *In vitro*Antioxidant and Phytochemical Analysis of Aqueous and Kamadhenu Ark Extracts of Nutricereals Millets Asian Journal of Dairy and Food Research(Online)
14. Liyana-Pathirana C, Dexter J, Shahidi F, 2006, Antioxidant Properties of Wheat as Affected by Pearling. J Agric Food Chem, 54(17): 6177–6184.
15. Mounika U. Sangeet haand G. Sireesha (2022). Estimation of phytochemicals in Millets and selected Millet products.Indian J. Applied & Pure Bio. Vol. 37(3), 810-820D.
16. Paramjeet Kaur Sethi , Pravin Kumar Joshi , Rakshapal Gupta (2021). Evaluation Of Physicochemical And Phytochemical Composition Of Dry Shigru Patra (Moringa Oleifera Lam. Leaf) Of Island (Port Blair) And Mainland (Chhattisgarh). International Ayurvedic Medical Journal ;ISSN: 2320-5091; https://doi.org/10.46607/iamj06p5022020
17. Pradeep SR and Guha M (2011). Effect of processing methods on the nutraceutical and antioxidant properties of little millet (Panicum sumatrense) extracts. Food Chem.;126(4):1643-7.
18. Pujari N and Hoskeri JH(2022). Minor Millet Phytochemicals and their Pharmacological Potentials. Pharmacog Rev.;16(32):100-6.
19. S. Venu, J. Sivakumar, S. Sruthi, S. Saipriya, and S. Bhuvaneswari (2022). A Comparative Analysis of the Phytochemical Screening, Antioxidant, and Antibacterial Properties of Millets. IJRAR, Volume 9, Issue 4.
20. Shadang C and Jaganathan D (2014). Millet- the fungal Grain. International Journal Scientific Research and Reviews; 4: 75.
21. ShahidiF and ZhongY(2007). Measurement of antioxidant activity in food and biological systems.ACS Symposium Series. 2007:36-66.
22. SumaPF and UroojA (2012). Antioxidant Activity of Extracts from Foxtail Millet(Setariaitalica). J Food Sci Technol, 49(4): 500–504.
23. UditM. Nakarani,DiwakarSingh ,Kiran P.Suthar, Nilima Karmakar, Priti Faldu, Harshal
24. E.Patil.(2021). Nutritional and phytochemical profiling of nutracereal finger millet(*Eleusine coracana* L.) genotypes Food ChemistryVolume 341, Part 2,128271
25. Urnukhsai KhanE,BoldBEandGunbilegA (2021). Antibacterial activity and characteristics of silver nanoparticles biosynthesized from Carduus crispus. SciReports; 11, 21047.https://doi.org/10.1038/s41598-021-00520-2
26. Vetriventhan M, Azevedo VCR and Upadhyaya HD (2020). Genetic and genomic resources, and breeding for accelerating improvement of small millets: current status and future interventions. Nucleus ; 63: 217–239
27. Vijayshanthi K, Latha P, Vidyavathi N, Kishore Lankipalli and Poojitha Mallapu, Lahari (2015). A novel review on *Setaria italic*. Journal of Compl Pharmacy; 2: 31.
28. Wypij M, Jêdrzejewski T, Trzciñska-Wencel J, Ostrowski M, Rai M and Goliñska P(2021). Green Synthesized Silver Nanoparticles: Antibacterial and Anticancer Activities, Biocompatibility and Analyses of Surface-Attached Proteins. Front of Microbio; 12: 632505. doi: 10.3389/fmicb.2021.632505
29. Yao LH, Jiang YM, Shi J, et al., 2004, Flavonoids in Food and Their Health Benefits. Plant Foods Hum Nutr, 59(3): 113–122.

Table. 1. Preliminary Phytochemical screening of different varieties of millet extracts.

Extract/test	Acidified water						Hot water					
	Ragi	Jowar	Bajra	Kutki	Kodo	Sama	Ragi	Jowar	Bajra	Kutki	Kodo	Sama
Alkaloids	+	-	-	+	-	+	-	-	+	-	-	-
Carbohydrates	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+
Phenols	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
Flavonoids	-	-	-	-	-	-	+	+	+	+	+	+
Amino acid	-	+	+	-	-	-	-	+	+	-	-	-
Tannis	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	+	+
Ressins	+	+	+	+	+	+	-	-	+	+	-	-
Quinones	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-

+ = presence. - = Absence: Ragi –(*Eleusine coracana*) , Jowar –(*Sorghum bicolor*), Bajra – (*Pennisetum glaucum*) , Kutki– (*Picrorhizakurrooa*), Kodo– (*Paspalum scrobiculatum*), and Sama – (*Echinochloa frumentacea*)

Table 2: Qualitative analysis of Inorganic elements of different varieties of millet extracts.

Inorganic Elements	Acidified water						Hot water					
	Ragi	Jowar	Bajra	Kutki	Kodo	Sama	Ragi	Jowar	Bajra	Kutki	Kodo	Sama
Magnesium	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-	-	+
Phosphate	+	+	+	+	+	+	-	+	-	+	-	+
Iron	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
Sulphate	+	-	+	-	+	-	+	+	+	+	+	+
Chloride	+	-	+	-	-	-	-	+	+	-	-	-
Carbonate	+	-	-	+	-	-	-	-	+	+	-	+
Nitrates	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-

+ = presence, -= Absence, Ragi –(*Eleusine coracana*) , Jowar –(*Sorghum bicolor*), Bajra – (*Pennisetum glaucum*) , Kutki– (*Picrorhizakurrooa*), Kodo– (*Paspalum scrobiculatum*), and Sama – (*Echinochloa frumentacea*)

Table 3:Antimicrobial activity of different varieties of Millets extracts.

Microorganism	Zone of inhibition (mm)											
	Acidified water						Hot water					
	Ragi	Jowar	Bajra	Sama	Kodo	Kutki	Ragi	Jowar	Bajra	Sama	Kodo	Kutki
Bacillus subtilis	20.3	21.3	20	18	19	22	-	-	-	-	-	-
Bacillus cereus	23	16	21.6	19	22	24.6	-	-	-	-	-	-
Pseudomonas aeruginosa	18.3	21	17	16	21.6	18	-	-	-	-	-	-
Pseudomonas fluorescens	18.3	14	18	21.3	16.6	17.3	-	-	-	-	-	-

Ragi –(*Eleusine coracana*) , Jowar –(*Sorghum bicolor*), Bajra – (*Pennisetum glaucum*) , Kutki– (*Picrorhizakurrooa*), Kodo– (*Paspalum scrobiculatum*), and Sama – (*Echinochloa frumentacea*)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Sports Culture: A Link Between Tradition And Transformation

Prof. Mamta*

***Professor (Physical Education) Ismail National Mahila P.G. College, Meerut (U.P.) INDIA**

Abstract: Sports have always been more than just a physical activity. They represent values, emotions, discipline, teamwork, and the essence of a nation's culture. Every society, since ancient times, has engaged in some form of sport — from hunting, wrestling, and chariot racing to the sophisticated Olympic Games of today. Sports culture serves as a mirror reflecting a nation's traditions, beliefs, and aspirations. In the modern era, where technology and globalization dominate human life, sports culture continues to evolve while still preserving its deep-rooted heritage.
The phrase "Sports Culture: Bridging the Heritage and Modernity" beautifully encapsulates how the world of sports connects our glorious past with the vibrant present. It shows how traditional games and ancient values coexist with modern training techniques, digital innovations, and global competitions, creating a perfect blend of heritage and progress.
Keywords- Heritage, Tradition, Sports, Transformation, Modernity.

The Heritage Of Sports: A Glorious Past: Sports in ancient times were not just for entertainment or competition; they were an essential part of daily life, education, and spirituality. In India, physical activities were deeply linked with culture and religion. Games like kabaddi, mallakhamb, kushti (wrestling), archery, and chariot racing were not merely sports — they were expressions of physical strength, mental discipline, and moral integrity.

In Ancient India, sports had a spiritual dimension. The Vedas, the Mahabharata, and the Ramayana mention warriors trained in archery, wrestling, horse riding, and sword fighting. Lord Krishna's childhood games, Arjuna's skill in archery, and Bhima's wrestling power all symbolize the cultural importance of physical fitness and courage.

The ancient Indian education system, the Gurukul, emphasized both intellectual and physical training. Sports were seen as a means to develop character, leadership, and teamwork.

Globally too, every civilization developed its own unique sporting culture. The Greeks organized the Olympic Games in 776 B.C., celebrating human excellence and divine favor. The Romans had gladiatorial contests that, though brutal, reflected the values of bravery and endurance. In China, martial arts like Kung Fu evolved from the philosophy of balance between mind and body. Similarly, in Japan, sports like Sumo and Judo were seen as paths to spiritual discipline.

Thus, the heritage of sports across the world was not limited to physical strength — it was a reflection of moral and social ideals. Sports were closely tied to identity, religion, and community life.

Traditional Indian Sports: Symbols Of Heritage: India's traditional sports represent its diversity, unity, and cultural wealth. They are often rooted in rural life and have been passed down from generation to generation.

Some prominent examples include:

1. Kabaddi – Originating from rural India, kabaddi reflects agility, teamwork, and courage. It requires not only strength but also strategy and presence of mind. Today, it has become an international sport with professional leagues.
2. Kho-Kho – Another indigenous game emphasizing speed, flexibility, and coordination. It promotes alertness and mutual cooperation.
3. Mallakhamb – A unique sport combining gymnastics and wrestling on a wooden pole or rope. It shows the integration of strength, grace, and traditional yogic postures.
4. Gilli-Danda – A simple rural game that later inspired cricket and baseball in modern times.
5. Archery – Deeply rooted in Indian epics, archery remains a cultural symbol of focus, patience, and mastery.
6. Boat Racing in Kerala – A spectacular traditional sport that symbolizes unity and community spirit, as dozens of rowers move in rhythm to chants.

These games carry not only physical but also moral and social lessons. They teach teamwork, respect for elders, and the importance of perseverance. Even though many of them were played without sophisticated infrastructure, their values remain timeless.

The Rise Of Modern Sports: With colonization, industrialization, and globalization, the world witnessed a transformation in sports. The British introduced sports like cricket, football, and hockey to their colonies, including India. Over time, these games became an integral part of Indian sports culture. Cricket, for example, is now almost a religion in India, uniting millions across regions, languages, and religions.

Modern sports brought with them new features:

1. Formal rules and regulations
2. Institutional structures (clubs, associations, federations)
3. Professional training systems
4. International competitions
5. Media and technology involvement

The introduction of the Olympic Games in the modern era (1896) marked a new chapter in global sports culture. It provided a platform for nations to compete peacefully, promoting unity and mutual respect.

In India, after independence, sports were seen as a way to strengthen national identity. The success of athletes like Major Dhyan Chand in hockey, Milkha Singh in athletics, and P.T. Usha in track events inspired generations. Gradually, sports like badminton, wrestling, and boxing also gained international recognition, proving India's ability to blend tradition with modernity.

Sports As A Bridge Between Past And Present: Sports culture acts as a powerful bridge connecting our ancestral values with modern progress. The skills, values, and philosophies inherited from traditional games are now being revitalized and merged with scientific techniques, technology, and global exposure.

1. **Preserving Traditional Values:** Modern sports still rely on age-old values — discipline, respect, teamwork, and perseverance. These virtues, once nurtured in rural playgrounds, continue to form the moral foundation of contemporary athletes.
2. **Revival of Indigenous Games:** Efforts are being made to revive traditional Indian sports through initiatives like Khelo India and Fit India Movement. National-level competitions now include indigenous sports such as kabaddi and kho-kho. This not only preserves heritage but also provides rural youth with recognition and opportunities.
3. **Technology and Heritage Together:** Modern sports use technology for training, fitness monitoring, and broadcasting. Yet, they carry the essence of ancient physical discipline. For example, the use of yoga and ayurvedic methods in sports medicine connects modern athletes with traditional Indian health practices.
4. **Globalization and Cultural Exchange:** Today, traditional Indian games are gaining global attention, while international sports are being embraced in India. This cultural exchange enriches the global sports community, creating respect for both ancient traditions and modern innovation.

Modernization Of Traditional Games: Modernity does not necessarily mean abandoning tradition; it means upgrading and reimagining it. Many traditional games have evolved to meet contemporary standards while retaining their core spirit.

For example:

1. Kabaddi has transformed from a rural pastime into a global sport with the Pro Kabaddi League, using digital scoring, commentary, and sponsorships.
2. Yoga, though not a competitive sport, is now recognized internationally as a holistic physical discipline and even included in global fitness programs.
3. Archery has moved from mythological stories to Olympic competition, where Indian athletes like Deepika Kumari have brought glory.

Thus, modernization has allowed traditional games to gain international recognition without losing their authenticity. The balance between modernization and heritage creates an inclusive sports culture.

Role Of Sports In Cultural Identity: Sports have always been a means of expressing cultural identity. A nation's sports culture reflects its collective character — its courage, unity, creativity, and endurance.

In India, the blend of traditional and modern sports mirrors the coexistence of its ancient heritage and progressive spirit. Traditional sports connect us to our roots, while modern sports symbolize ambition and global presence.

Through international events like the Olympics, Commonwealth Games, and Asian Games, athletes become cultural ambassadors. When Indian players wear their national colors, they represent centuries of tradition and modern aspirations combined.

Women And Sports: A Modern Transformation: One of the most significant aspects of modern sports culture is the rise of women athletes. In traditional societies, sports were largely male-dominated, but modernity has opened the field for women. Indian athletes like Mary Kom, P.V. Sindhu, Mirabai Chanu, and Sakshi Malik have become symbols of empowerment and equality.

Their success bridges heritage and modernity — showing how the courage of ancient heroines like Draupadi and Rani Lakshmibai lives on in today's sportswomen, who fight with grace, strength, and determination.

Sports And Technology: The Modern Revolution: The role of technology has revolutionized sports in the 21st century. High-speed cameras, data analytics, biomechanical studies, and sports medicine have improved performance and reduced injury risks.

Social media and broadcasting have turned athletes into global icons, bringing people closer to their heroes. Yet, technology has not erased the human spirit of competition, courage, and camaraderie — values rooted in ancient traditions.

Virtual platforms, fitness apps, and wearable devices

now promote physical activity even among the general population. Thus, technology has helped sustain the traditional idea of healthy body, healthy mind in modern life.

Educational And Ethical Values In Sports: Sports education today emphasizes both physical excellence and moral development — similar to the ancient Indian philosophy of Sharir Madhyam Khalu Dharma Sadhanam (the body is the means to fulfill duty).

Sports teach tolerance, respect, equality, and fair play. The ethical foundation of sports — honesty, hard work, and discipline — remains unchanged through centuries.

In schools and colleges, integrating traditional games alongside modern ones helps students understand the continuity of culture and the importance of adaptability.

Government And Institutional Efforts: The Indian government and sports institutions are playing a crucial role in connecting heritage with modernity.

Programs like:

1. Khelo India Youth Games
2. Fit India Movement
3. Mission Olympic Cell
4. Sports Authority of India (SAI)
5. promote both modern and traditional sports at the grassroots level.

The recognition of indigenous games, training of rural athletes, and establishment of modern infrastructure ensure that our traditional essence meets the global standards of sports excellence.

Sports As A Symbol Of Unity And Progress: Sports have the unique power to unite people beyond caste, religion, or region. Whether it is a cricket match, a kabaddi league, or a marathon, sports create a shared sense of pride and joy. In this unity lies the bridge between heritage and modernity — where the collective emotions of people merge with modern dreams of progress and global identity.

Challenges In Balancing Heritage And Modernity: While the coexistence of tradition and modernity in sports is inspiring, it also faces certain challenges:

1. Neglect of rural and indigenous games due to the dominance of modern sports.
2. Lack of funding and infrastructure for traditional sports.
3. Over-commercialization of sports leading to loss of cultural essence.
4. Unequal media attention and recognition.

To overcome these, there must be conscious efforts to integrate traditional games into school curricula, national events, and international exhibitions. Preserving heritage should go hand in hand with modernization.

Conclusion: Sports culture is not merely a reflection of physical skill; it is the living heartbeat of civilization. It carries the spirit of our ancestors and the aspirations of our youth. From ancient fields where warriors tested their strength, to modern stadiums filled with technology and global audiences, the journey of sports is a story of evolution and unity.

By bridging heritage and modernity, sports remind us that while techniques and tools may change, the essence of human courage, cooperation, and joy remains eternal.

As we celebrate both traditional games and modern achievements, we create a future that honors our past while embracing innovation — a true symbol of India's timeless culture and global vision.

References:-

1. Boria, Majumdar, and Nalin Mehta. India and the Olympics. Routledge, 2008.
2. Cashmore, Ellis. Making Sense of Sports. Routledge, 2010.
3. Guttmann, Allen. From Ritual to Record: The Nature of Modern Sports. Columbia University Press, 2004.
4. Joseph, J. A. The Sociology of Sports: A Global Perspective. Pearson Education, 2012.
5. Mandell, Richard D. The First Modern Olympics. University of California Press, 1976.
6. Majumdar, Boria, ed. Sport in South Asian Society: Past and Present. Routledge, 2013.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Study of Financial Performance Metrics of Rajasthan State Road Transport Corporation

Dr. Mahender Singh Meena* Ram Prasad Swami**

***Deaprtment of ABST, Government College, Gangapur City, University of Kota (Raj.) INDIA**
**** Research Scholar (Department of ABST), University of Kota (Raj.) INDIA**

Abstract: This research delves into the operational and financial performance metrics of the Rajasthan State Road Transport Corporation (RSRTC), focusing on critical indicators such as revenue; expenses, passengers carried, and fleet utilization. The study embarks on an extensive exploration of these metrics to identify underlying trends, recurring patterns, and key challenges faced by RSRTC in the competitive and cost-intensive public transport sector. By offering a granular examination of financial data and operational statistics, it provides actionable recommendations to enhance the organization's financial sustainability and service efficiency.

The analysis is conducted within the context of mounting operational costs, surging fuel prices, and growing competition from private operators, which collectively strain RSRTC's financial health. Moreover, the research sheds light on broader implications such as the role of RSRTC's performance in advancing urban mobility, fostering environmental sustainability, and bolstering economic development. These dimensions underline the significance of public transport systems in emerging economies, where the intersection of financial viability and societal impact takes center stage. Through its findings, this study aims to serve as a comprehensive resource for policymakers, urban planners, and stakeholders seeking to transform public transportation into a more sustainable and reliable service.
Keywords: Financial performance, Public transport, Fleet utilization, Revenue analysis, RSRTC, Operational efficiency, Economic development.

Introduction - Public transport systems are vital for economic and social development, providing affordable mobility, reducing traffic congestion, and contributing to environmental sustainability. However, the financial viability of such systems, especially in the public sector, remains a significant challenge. The Rajasthan State Road Transport Corporation (RSRTC), a state-owned entity, faces persistent financial difficulties due to operational inefficiencies, increased competition, and outdated infrastructure. RSRTC's struggles are reflective of the broader challenges faced by public transport operators across the country, making it a critical case for analysis.

This paper analyzes the financial performance of RSRTC using available operational data, focusing on revenue generation, expenditure trends, and fleet utilization. By identifying performance gaps and proposing strategic interventions, this study aims to contribute to the discourse on improving public transport systems in India.

Methodology: The study uses secondary data provided by RSRTC, including metrics such as depot num-bers, routes, operated kilometers, and fleet details. Quantitative analysis is conducted to identify trends, performance gaps, and areas for improvement. Financial ratios such as revenue per kilometer, cost per kilometer, and occupancy rates are calculated to assess operational efficiency. In addition, qualitative insights from industry reports and policy documents are incorporated to provide a holistic perspective on the challenges and opportunities facing RSRTC.

Analysis and Results: Below mentioned table data have been used for analysis **Table 1 (see in last)**

1. **Depot Numbers:** The data indicates that RSRTC has maintained a consistent number of depots (52) over the analyzed period (2013-14 to 2022-23). This reflects a stable infrastructure base, allowing the organization to focus on opti-mizing existing operations rather than expanding physical infrastructure.
2. **Routes:** RSRTC's route network shows significant variation, with the number of routes decreasing from 2,438 in 2013-14 to 1,880 in 2022-23. This contraction indicates efforts to streamline operations, potentially due to financial constraints or declining demand in certain regions. Such trends highlight the importance of focusing on high-demand routes to maximize operational efficiency and revenue.
3. **Operated Kilometers:** The operated kilometers metric highlights both growth and challenges:

1. Operated kilometers peaked at 6,262.23 lakh kilometers in 2014-15 but subsequently declined to 4,729.03 lakh kilometers by 2022-23. This decline aligns with reductions in the route network and the impact of the COVID-19 pandemic in 2020-21, where operated kilometers

dropped sharply to 2,649.03 lakh kilometers.

2. Post-pandemic recovery is evident, though the metrics have not yet returned to pre-pandemic levels, underscoring the need for continued efforts to rebuild operational capacity.

3. Fleet Utilization: Fleet utilization rates declined from 90% in 2013-14 to 78% in 2022-23, largely due to aging vehicles and maintenance challenges. This reduction in fleet performance emphasizes the necessity of investing in modernization and preventive maintenance strategies to enhance reliability and operational efficiency.

4. Passenger Load Factor: Passenger occupancy rates increased from 74% in 2013-14 to 94% in 2022-23, signaling a significant improvement. This rise reflects efforts to enhance service efficiency and address underutilization. However, challenges remain, including competition from private oper-ators, lack of integration with urban transport systems, and inadequate last-mile connectivity. Pas-senger load factors in Indian state transport undertakings reveal inefficiencies in service allocation, directly impacting operational profitability1.Addressing these issues is critical for sustaining the gains in service utilization and further improving financial viability.

Recommendations: To address the identified challenges and improve financial performance, the following strategies are recommended:

Enhancing Revenue Streams:

1. Innovative strategies, including digital ticketing and route optimization, can significantly improve the efficiency of state transport undertakings4. Introduce dynamic pricing models to optimize fares based on demand patterns and peak travel times.

2. Explore non-fare revenue streams, such as advertisements, leasing of bus stops for commercial use, and partnerships with e-commerce companies for parcel delivery services.

3. Leverage digital platforms to offer premium services, such as online booking, premium bus services, and real-time tracking, to attract higher-paying customers.

Reducing Operational Costs:

1. Fluctuating fuel prices critically affect operational costs in public transport, necessitating adaptive financial strategies for sustainability5. Implement preventive maintenance schedules to reduce downtime and repair costs, ensuring better fleet availability.

2. Transition to energy-efficient buses, such as electric or compressed natural gas (CNG) vehicles, to reduce fuel expenses and align with environmental goals.

3. Optimize fuel procurement processes through competitive bidding and long-term contracts to mitigate price volatility.

Improving Fleet and Service Efficiency:

1. RSRTC's financial challenges include rising operational costs, declining revenues, and outdated fleet management practices6. Conduct route optimization studies to eliminate low-performing routes and improve fleet allocation across high-demand areas.

2. Invest in digital ticketing systems and automated passenger counting technologies to streamline operations and enhance data accuracy for decision-making.

3. Collaborate with local urban transport systems to ensure better integration and last-mile connectivity, thereby increasing passenger convenience.

4. Sustainable public transport in India requires integrated urban planning, with emphasis on reducing environmental impacts and enhancing service reliability2.

5. Rural public transport services face challenges such as inadequate funding and limited connectivity, hindering equitable access for underserved regions3.

Passenger-Centric Initiatives:

1. Introduce loyalty programs, seasonal passes, and promotional discounts to attract and retain pas-sengers, particularly in competitive markets.

2. Fleet utilization metrics at RSRTC highlight underutilization as a major issue, suggesting the need for better asset management and route planning7. Upgrade bus interiors, seating arrangements, and onboard facilities to provide a comfortable and modern travel experience.

3. Conduct regular surveys to gather passenger feedback and incorporate their preferences into service improvements.

Conclusion: This study highlights the financial and operational challenges faced by RSRTC and proposes actionable recommendations to enhance its performance. By adopting modern practices, leveraging tech-nology, and fostering collaboration with stakeholders, RSRTC can improve its financial sustainability while providing high-quality public transportation services. The proposed strategies aim to create a more robust and efficient transport system that meets the evolving needs of passengers while contributing to broader social and economic objectives.

Future research should focus on integrating stakeholder feedback, exploring innovative financing models, and assessing the impact of policy changes on RSRTC's performance. Additionally, comparative studies with other state transport corporations can provide valuable insights and benchmarks to guide RSRTC's transformation journey.

References:-

1. V. Chaturvedi, "Passenger Load Factor Analysis in Indian State Transport," Asian Transport Review, Vol. 15, Iss. 5, pp. 89-104, 2018.
2. A. Mehta, "Evaluating Public Transport Sustainability in India," Journal of Urban Mobility Studies, Vol. 12, Iss. 2, pp. 115-134, 2019.
3. J. Patel, "Challenges of Rural Public Transport Services," Transport and Society, Vol. 19, Iss. 2, pp. 45-58, 2019.
4. R. Banerjee, "Innovative Strategies for State Transport Undertakings," Transport Policy Journal, Vol. 18, Iss. 4, pp. 253-267, 2020.
5. M. Gupta, "Impact of Fuel Prices on Public Transport Operations," Journal of Energy and Transport

Economics, Vol. 7, Iss. 3, pp. 78-92, 2020.
6. S. Kumar, "Financial Challenges in Public Transport Operations: A Study on RSRTC," International Journal of Transport Economics and Policy, Vol. 5, Iss. 3, pp. 45-58, 2021.
7. P. Singh, "Fleet Utilization Metrics: Lessons from RSRTC," Indian Journal of Public Transport Re-search, Vol. 10, Iss. 1, pp. 32-47, 2022.

Table 1 : State Road Transport Corporation at a Glance

S.	Item	Unit	Financial Year									
			2013 -14	2014 -15	2015 -16	2016 -17	2017 -18	2018 -19	2019 -20	2020 -21	2021 -22	2022 -23
1	Depot	Number	52	52	52	52	52	52	52	52	52	52
2	Route	Number	2438	2448	2299	2274	2346	2230	1982	1798	1840	1880
3	Operat-ed Kilometre	in Lacs	5905.81	6262.23	5902.37	5810.25	6184.81	5437.74	5219.36	2649.03	3954.89	4729.03
4	Total Income	In Crores	1610.45	1833.79	1707.56	1773.25	2193.36	2162.42	2056.85	1469.39	1668.66	2136.87
5	Vehicle Held (corpo-ration owened)	Number	4451	4493	4343	4284	4528	4270	3751	4179	3466	3157
6	Vehicle Held (Hired by corpora-tion)	Number	223	211	186	351	816	916	1025	959	908	826
7	Total Vehicles	Number	4674	4704	4529	4635	5444	5205	4710	5087	4326	3983
8	Total expenditure	In Crores	2037.83	2392.43	2199.98	3890.81	2308.42	2238.95	2207.31	1589.55	2052.17	2614.41
9	Profit and Loss (With Adjustment)	In Crores	-487.86	-628.48	-702.61	-1169.76	-176.71	-153.76	-217.06	-40.96	-392.7	-487.54
10	Cumulative Loss	In Crores	-2138.42	-2766.9	-3469.51	-4639.27	-4815.98	-4969.74	-5186.8	-5227.76	-5620.46	-6108
11	Load Factor	in %	74	73	73	68	69	73	74	76	85	94
12	Diesel Average	Kilometre Per Liter	4.93	5.01	5	5.06	5.1	5.03	5.03	5.25	5.15	5.13
13	Oil Top Up	Kilometre Per Liter	5356	5674	4490	4185	4655	4068	4655	4125	5888	5537
14	Vehicle Productivity	Kilometre Per Day	391	397	402	383	388	392	389	384	389	402
15	Fleet Utilization	in %	90	92	89	87	77	68	74	43	63	78
16	Brekdown Rate Per 10000	Kilometre	0.13	0.13	0.18	0.17	0.14	0.19	0.23	0.09	0.13	0.17
17	Accident Rate Per 10000	Kilometre	0.08	0.08	0.05	0.05	0.05	0.05	0.05	0.04	0.05	0.05
18	Total Income Per Kilometre	In Paise	2686	2928	2893	3052	3546	3977	3941	5547	4219	4519
19	Total expend -iture Per Kilometre	In Paise	3309	3820	3727	6696	3732	4116	4229	6000	5189	5528
20	Profit and Loss Per Kilometre (With Adjustment)	In Paise	-713	-892	-834	-3644	-186	-140	-288	-454	-970	-1009
21	Em-ployees	Number	21384	20561	19163	17844	16565	15279	14084	13076	12869	11982
22	Em-ployees Per Vehicle	Number	4.64	4.37	4.23	3.85	3.04	2.89	2.99	2.57	2.97	3.01
23	Daily Passanger Travelled	in Lacs	9.5	9.81	9.26	8.72	9.37	8.51	8.38	3.5	5.54	7.13

Source-https://transport.rajasthan.gov.in

Examining Simultaneous Election Models: A Comparative Analysis of International Practices and Their Applicability to the One Nation, One Election Framework in Indian Electoral Reform

Kaustubh Nihal*

***Research Scholar (JRF), Jai Prakash University, Chapra (Bihar) INDIA**

Abstract: This study examines the One Nation, One Election (ONOE) concept by contextualising global experiences for India's diverse federal landscape. By analysing electoral synchronisation models in major democracies such as the United States, Brazil, Germany, Indonesia, Sweden, and South Africa, the research uncovers a spectrum of administrative efficiencies, political outcomes, and challenges surrounding simultaneous elections. Drawing from empirical lessons and comparative frameworks, the paper scrutinises opportunities and hurdles specific to India—including federal autonomy, logistical demands, constitutional amendments, and the balancing of national and regional interests. The findings emphasise the need for a phased, adaptive reform strategy supported by technological upgrades, inclusive dialogue, and robust institutional safeguards to preserve India's electoral integrity and pluralism. Ultimately, this research provides a strategic, evidence-led roadmap for implementing ONOE, aiming to enhance governance efficiency, streamline costs, and strengthen India's democracy while respecting its rich diversity.
Keywords: ONOE, simultaneous election, democracy, electoral reform, electoral synchronisation.

Introduction - The foundation of democracy depends on the concept of election. Election in a working democracy is not only a mechanism to choose a candidate for the post, but also represents the consciousness of the people. It is simply not feasible to imagine a democratic order without a properly functioning electoral system. Hence, we can simply say that the election is the very soul of democracy.In its extensive federal structure, India, the largest democracy in the world, holds periodic elections with different electoral cycles for the Lok Sabha (the lower house of Parliament) and several state legislative assemblies. Due to the frequent elections at various governmental levels brought on by this fragmented electoral schedule, there is significant political instability, huge administrative expenses, and voter fatigue. Since governments focus more on electioneering than on long-term policy execution, frequent calls to the polls frequently interrupt the continuity of rule. Aiming to synchronise the dates of state and national elections for improved political stability, administrative effectiveness, and cost reduction, the concept of "One Nation One Election" (ONOE) has garnered increased interest in this context (Chadah, 2024; Kovind Committee, 2024; Brookings Institution, 2013).

To reduce the number of elections in the nation, ONOE suggests conducting polls for the Lok Sabha and all state assemblies simultaneously. There are examples of this idea in several federal democracies that have implemented synchronised election cycles with different levels of success. However, there are particular opportunities and challenges for such reforms due to India's distinct socio-political fabric, which is marked by its great regional autonomy and wide spectrum (Rane & Nayak, 2025; Chadah, 2024).In India, it is not the first time the country has tried for One Nation One Election. The founding fathers were looking for this exact election model, i.e. simultaneous elections for state assembly and parliamentary polls when the nation gained its independence in 1947 (Chakraborty, 2024).

Examining experiences from around the world as well as India's particular political and constitutional circumstances, this paper examines carefully the idea of ONOE. Based on technological, constitutional, and policy changes, it examines the reform's advantages, possible disadvantages, feasibility, and strategic roadmap. This research attempts to add to the current conversation on election reforms and democratic strengthening in India by combining insights from other federal democracies and considering India's democratic culture (Kovind Committee, 2024; Chadah, 2024).

Review of Literature

Free and fair elections are regarded as essential to a valid

political system, and they continue to be the central component of democratic administration. Periodic elections, which represent the sovereign will of its diverse populace, are a fundamental component of India's democracy (Chadah, 2024). Constitutional measures that protect the electoral process from intervention and provide regular, transparent, and accountable governance highlight the fundamental significanceof elections (Chadah, 2024). As India struggles with frequent elections at different levels of government, the debate regarding electoral reforms and the potential for simultaneous elections has heated up. According to Rane and Nayak (2025), these frequent polls cause significant administrative and budgetary strains, interfere with the continuity of governance, and exacerbate voter fatigue.The policy significance of this problem is demonstrated by the Indian government's adoption of the High-Level Committee's recommendations to investigate simultaneous elections, which were developed under former President Ram Nath Kovind (Chadah,2024). Divergent opinions on the feasibility of ONOE have been expressed by academics and policymakers. Proponents argue that by reducing interruptions associated with the Model Code of Conduct, synchronised elections can improve administrative efficiency, increase political stability, and lower the prohibitive costs associated with holding numerous elections (Chadah, 2024). Many federal democracies throughout the world use this kind of synchronisation, which is seen as a way to expedite election management and governance cycles (Chadah, 2024).

On the other hand, critics highlight serious issues about ONOE's conformity to fundamental Indian democratic and federal ideals. The constitutional "agency contract" between the electorate and elected representatives may be broken if the terms of elected bodies are changed to coincide with elections, according to Rane and Nayak (2025), undermining the democratic will. The established idea of periodic accountability through elections, which is essential to India's democracy, could be weakened by extending or cutting tenure. Furthermore, by establishing strict election cycles that are incompatible with political realities, ONOE may weaken important democratic mechanisms, such as the legislature's capacity to test government confidence through no-confidence motions (Rane & Nayak, 2025).

One other significant issue is federalism. With specific powers granted to states, India's distinctive federal structure places a strong emphasis on state autonomy (Rane & Nayak, 2025). In violation of constitutional safeguards, forced election cycle alignment may restrict state autonomy and hinder state government operations. Additionally, concurrent elections might distort regional concerns in favour of national narratives, discouraging regional parties that are crucial for advancing a range of local interests throughout India's complex political landscape (Rane & Nayak, 2025). Political uniformity could result from this, diminishing the diversity and dynamism that characterise Indian democracy (Chadah, 2024).

Legal experts also warn that although ONOE might be made possible by constitutional revisions, doing so runs the risk of violating the fundamental framework of the document, which upholds democratic and federal values (Rane & Nayak, 2025). One of the main issues in the discussion of simultaneous elections is the conflict between constitutional protections and institutional effectiveness. Overall, the literature offers a complex picture: even while ONOE has attractive administrative and financial advantages, its possible democratic and federal implications demand close examination. This dichotomy highlights the necessity for a fair, constitutionally sound approach to election reforms in India and informs the current scholarly and policy discussion.

Different Models of Simultaneous Election: Simultaneous election is no new concept for the electoral democracies. Many countries throughout the world have, in the past and present,practised this model of election. Many countries in Europe have specifically designed their electoral practices on this model owing to distinctive complexities at their respective local level. The major cause for shifting to this model is political, social and financial. Despite being the single structured election method for the entire country, simultaneous elections are not uniform throughout. It has various models, and each model represents its own uniqueness.

Schakel and Dandoy (2014) analyse 2,915 regional elections across 317 regions in 18 European countries (1945–2009) and find that the timing of elections significantly affects turnout. While analysing these datasets, they observed a trend in the parliamentary system in European countries where simultaneous elections have different models. They carefully observed and analysed the pattern and drew a conclusion that simultaneous elections are not uniform. Hence, they divided them into six categories (Chadah, 2024).

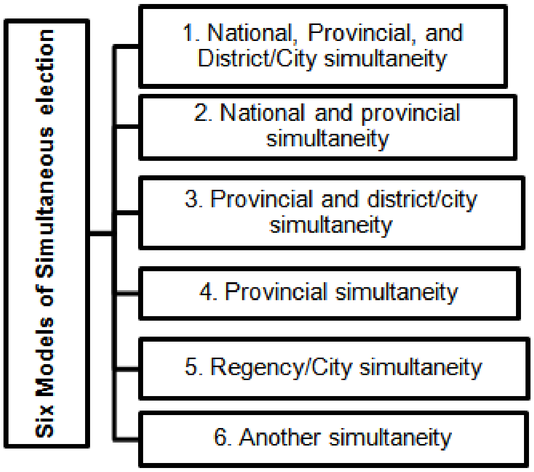

Figure 1-Six models of simultaneous election propounded by Schakel, A. H., & Dandoy, R. in Electoral cycles and turnout in multilevel electoral systems.

1. **National, Provincial, and District/City simultaneity-** According to this concept, all national and regional (provincial and district/city) elections are held concurrently on the same day in a nation. These elections are held at all levels: province, district/city, national, and regional. Candidates for President and Vice President are elected concurrently with candidates for members of the House of Representatives, who possess the most authority, if the nation follows the presidential system of government. No other elections are scheduled.
2. **National and provincial simultaneity-** All provincial elections are held on the same polling day as the national elections under this concurrent paradigm. District-level elections, however, are held independently.
3. **Provincial and district/city simultaneity-** The goal of this simultaneous approach is to hold national elections at the same time as regional ones. This means that all regional general elections,provincial and district/ cityelections take place on the same day. National general elections, nevertheless, are held at a different period and are distinct from regional general elections.
4. **Provincial simultaneity-** According to this arrangement, all provincial elections,including those for the governor, who holds executive authority, and candidates for the legislature,are held concurrently at the federal level. According to this paradigm, many election days are used for both national and district/city elections.
5. **Regency/City simultaneity-** Even general elections held at the regional or local level exhibit simultaneity in this model. All of a province's cities and regions have elections at the same time. Each province's execution of various general elections will be impacted by this approach. Additionally, general elections are held at different times at the national and provincial levels.
6. **Another simultaneity-** The Simultaneous Elections model is designed to categorise nations that hold elections for the President and Members of the EU Parliament on the same election day using a sample of EU member states. Additionally, nations that hold simultaneous referendums on the same day are categorised using the model.

Global Experiences of Simultaneous Election: Many countries are practisinga simultaneous election mechanism for their elections. Let us consider some examples of global practices.

Indian Experience- Elections for the Lok Sabha and state assemblies were held simultaneously in India from 1951–52 till 1967. Premature government dissolution, coalition instability, and the emergence of separate regional political movements disrupted the synchronised electoral cycle, leading to the end of this practice (Singh, 2025; Kanodia, 2024).

USA Experience- Perhaps the most well-researched example of simultaneous elections in a federal democracy is the United States. Simultaneous elections have a major psychological impact on voter behaviour, according to Andersen's (2024) thorough research based on 20 years of American National Election Study survey data. Concurrent elections boost voter turnout, but they also have the "crowding out" effect, which means that voters pay far less attention to candidates with a lower profile, especially those running for the House of Representatives. According to the study, voters give lesser-known politicians worse ratings and show less familiarity with them during simultaneous elections, whereas more famous office candidates bypass these unfavourable outcomes (Andersen, 2024).

According to the 50 Shades of Federalism project, which explains how the Constitution provides the federal and state governments with overlapping authority in election management, the federal structure of the United States naturally produces differences in simultaneous elections. Although states have primary administrative responsibility, Article I, Section 4 gives Congress the authority to control elections "at any time," establishing full concurrent power between the nation and the state (50 Shades of Federalism, 2024). While synchronised elections would save costs, putting such a system into place would require significant changes to state election rules in each of the 50 states. The 2018 midterm elections cost $5.2 billion (Sharma, 2024).

Brazilian Experience- One of the most effective large-scale examples of concurrent elections in a federal presidential system is Brazil. A notable paradox is revealed by Samuels' (2000) thorough empirical study of Brazilian simultaneous elections, where elections are time-synchronised ("married") and the outcomes frequently differ between levels ("divorced"). According to his research, state political agreements usually take precedence over national politics, even though they occur at the same time, and governorship candidates continue to have considerable independence from presidential elections. This result indicates that election coordination is significantly impacted by institutional architecture in addition to timing (Samuels, 2000).

Synchronous elections can effectively handle complex federal arrangements involving presidential, legislative, gubernatorial, and municipal positions, as demonstrated by the Brazilian model; nevertheless, this comes with a higher organisational cost. The study offers empirical proof that political coordination across levels of government is not always guaranteed by simultaneous elections in sizable federal democracies.

Indonesian Experience- Following Constitutional Court ruling No. 14/PUU-11/2013, Indonesia held its first simultaneous elections in 2019 that included presidential, national, and regional polls on the same day for around 200 million people (International IDEA, 2018). While studies in important provinces showed improved democracy indices and increased political participation (Saragih, Nasution, &Simarmata, 2021), they also pointed out "ballot complexity" issues, where voters had to handle multiple ballots,

increasing administrative burdens and fatigue (Tuanaya, Wance, & Muhtar, 2023). For India's multi-tiered system, the experience provides warning lessons on voter overflow and demonstrates large-scale viability.

European Union: Experimental Synchronisation: A thorough 2017 study of European electoral synchronisation by the Graduate Institute offers important new information about how synchronised elections affect governance and policy coordination. Positive effects on policy coordination were found in the study, which studied the "natural experiment" produced by the French and German national elections being held at random. For example, during the overlapping 4-5-year periods, newly elected French President Macron purposefully awaited the outcome of the German election before proposing policy alternatives for European discussions (Graduate Institute, 2017).

Three possible advantages of synchronised elections are highlighted by the European study: (1) greater political empowerment for citizens at the European level; (2) improved protection of the integrity of the electoral process; and (3) increased effectiveness in decision-making processes, particularly policy coordination among member states. The study does, however, caution that total synchronisation (all 27 nations) may result in "lame duck" periods six months before elections, leaving the government exposed in times of global crisis (Graduate Institute, 2017).

German Experience- Interesting lessons on simultaneous elections with constitutional protections can be learned from Germany's federal legislative system. The "constructive vote of no-confidence," a feature of the German model, guarantees political stability by mandating the establishment of an alternative administration before the dissolution of the present one. By avoiding early dissolution that upsets electoral cycles, this institutional mechanism increases the viability of synchronised elections in multiparty parliamentary settings (Chakraborty,2024). Low degrees of vertical party integration, in which Land parties do not influence municipal party manifestos, result in decentralised political coordination, according to a recent study on German local politics. Municipal elections exhibit independence from federal electoral trends, demonstrating how decentralisation influences the impact of synchronised elections on various levels of governance (Gross & Jankowski, 2020; PMC, 2023).

Swedish Experience- A good example of full simultaneity is Sweden, which uses proportional representation to have municipal, regional, and national (Riksdag) elections all at the same time every four years. Although Sweden's relatively homogeneous society and smaller population (10 million) prevent direct comparability to large, diverse federal democracies like India, this system has achieved excellent administrative efficiency and voter engagement (Chakraborty, 2024). Full synchronisation is theoretically possible but necessitates particular institutional and social conditions, as the Swedish model demonstrates.

South African Experience- In South Africa, municipal elections are held independently, but national and provincial elections are held in tandem every five years. Since gaining universal suffrage in 1994, the African National Congress has dominated both the national and provincial levels (except for the Western Cape), emulating India's first 25 years of congressional victories across the country. Although the shift to more competitive politics may make such preparations more difficult, its dominance has made electoral synchronisation easier (Tribune India, 2024). According to South Africa's experience, synchronised elections might be more successful in environments with dominant party systems, but they would encounter difficulties as regional diversity and political competition grow.

Countries with Limited Synchronisation: According to thorough research published in 2024 by The Tribune India, simultaneous elections are "a rarity around the world" in federal parliamentary democracies. According to the 79th report of the Parliamentary Standing Committee, just two distinct cases from around the world, South Africa and Sweden,were found to apply to India's complex federal system, both of which have particular limitations (Tribune India, 2024).Despite exploring synchronised elections as a cost-cutting solution, Canada and Australia have chosen to prioritise federal authority over administrative efficiency by maintaining separate federal and provincial/state election seasons. Debates about electoral synchronisation are characterised by an agreement between efficiency and democratic representation, which these nations perfectly demonstrate.

Here, we have discussed some of the cases around the world reflecting their experiences of simultaneous elections. To sum up these things, a table is given below for comparativeand feasibility analysis of the above-mentionedcountries' experiences in the Indian context.

Table1 (see in last page)

Challenges in the Indian Context

1. Political, Social, and Federal Structure of India: India is a federal parliamentary democracy with a bicameral Parliament at the Centre and a mix of unicameral (22 states + 3 Union Territories) and bicameral (6 states) legislatures at the state level. Legislative terms for the Lok Sabha and state assemblies are fixed at five years under Articles 83(2) and 172(1) of the Constitution, with staggered election cycles resulting from variations in dissolution and mid-term polls (NITI Aayog, 2017).

2. Diversity of Regional Parties and Electoral Implications: According to McCoy (2013), regional parties hold 41% of Lok Sabha seats, which reflects India's diverse electorate and regional political aspirations. Given their centrality in coalition governments, it is important to remember that holding elections at the same time runs the risk of putting national campaigns ahead of state-specific ones, which could marginalise regional voices and policy

concerns.

3. **Constitutional and Legal Constraints:** To implement synchronised elections, a majority of states would need to ratify at least 15 constitutional reforms, including the introduction of Articles 82A (simultaneity) and 327 (powers of the State Election Commission). Reform can be challenging legally because of these intricate processes that protect India's basic structure doctrine (NITI Aayog, 2017).

4. **Public Opinion and Political Stakeholders' Perspectives:** According to a recent survey, 65% of people support "One Nation, One Election," citing cost savings and less voter fatigue (India Today, 2025). While opposition and regional parties caution about federal erosion and limited legislative responsibility, the ruling party places a strong emphasis on administrative efficiency.

Potential Benefits of ONOE

Political Stability: The potential to improve political stability is the primary advantage of One Nation One Election (ONOE). The Model Code of Conduct, which prohibits policy decisions during campaigns, is triggered by frequent elections, disrupting governance. Election synchronisation would allow state and Union governments to operate without frequent disruptions, resulting in more consistent policymaking. Coordinated elections with institutional safeguards can prevent premature dissolutions and promote continuity, according to international experience, such as Germany's constructive vote of no-confidence model (Chakraborty, 2024; Gross & Jankowski, 2020). Furthermore, academics and think tanks argue that fewer elections might result in better long-term planning and fewer interruptions to governance (Vaishnav, Mallory, & Richter, 2025; Chaudhary, 2025).

Cost Minimization: Separate elections for state assemblies and the Lok Sabha place enormous financial strain on the exchequer. The 2019 general elections were expected to cost around ¹ 60,000 crore, according to the Election Commission of India (Press Information Bureau, 2024). According to reports by PIB (2024) and NITI Aayog (2017), simultaneous elections might reduce the need for redundant security, personnel, and logistical deployment. Despite the logistical challenges, combining electoral cycles can result in significant savings, as demonstrated by comparative data from Indonesia's 2019 simultaneous election (International IDEA, 2018; Saragih, Nasution, &Simarmata, 2021).

Administrative Efficiency: The administrative machinery faces strain due to India's periodic election cycle, which causes teachers, civil personnel, and police to have to take time away from their normal responsibilities. These deployments would be streamlined by ONOE, allowing for better planning and continuous provision of public services. By reducing administrative disturbances, synchronising elections could strengthen governance, according to Yadav (2024). Additionally, Vision IAS (2025) highlights that governments would be able to focus on welfare and development initiatives more regularly as a result of this consolidation.

Reduction In Voter Fatigue: According to recent studies, ONOE could improve voter engagement and reduce polarisation by simplifying the election schedule (Prakash, 2024). Voter fatigue and apathy are frequently caused in India by consecutive elections held at short intervals, particularly in lower-profile contests. Research conducted in the United States indicates that regular elections may lower participation in non-major races (Andersen, 2024). According to Rane and Nayak (2025), synchronising elections could improve overall participation, reduce repetitive mobilisation efforts, and increase election cycle predictability.

Associated Risks and Criticism

Risks of Political Homogenization: The possibility of political homogeneity, when national narratives predominate in state elections, is a significant critique of ONOE. Researchers contend that holding elections at the same time may overshadow local issues, causing state-level parties to focus their campaigns on national themes (Rane & Nayak, 2025). Research from the US shows that during simultaneous elections, voters frequently overlook local candidates and concerns in favour of more well-known national leaders (Andersen, 2024). Prakash (2024) cautions that ONOE might bolster majoritarian tendencies, diminishing the electoral room for minor regional parties and undermining India's pluralistic democracy.

Threats to Federal Autonomy: State autonomy is emphasised in India's federal framework, although the ONOE may compromise this idea. Concerns regarding democratic legitimacy would arise if it were necessary to either shorten or lengthen the term of some assemblies to align election cycles (Vaishnav, Mallory, & Richter, 2025). According to Chaudhary (2025), forced synchronisation carries the risk of acting against the federal balance principle outlined in the constitution, especially as state-specific governance concerns can become less visible when combined with national campaigns. This critique highlights how India's politics strike a careful balance between federalism and efficiency.

Logistical Challenges and Electoral Integrity: It would be extremely difficult to implement ONOE throughout a nation as big and diverse as India. Massive administrative capacity, such as double electronic voting machines (EVMs), voter verifiable paper audit trails (VVPATs), and security deployments, would be needed to synchronise elections for more than 900 million voters (Press Information Bureau, 2024). Complications are also shown by international experiences. For example, Indonesia's 2019 synchronised polls revealed that processing several votes on one day caused voter confusion, "ballot fatigue," and even logistical problems (Saragih, Nasution, &Simarmata, 2021). According to Yadav (2024), if large-scale

simultaneous voting in India is not planned carefully, it could lead to administrative overburden and compromise election integrity.

Possible Political Resistance: There are obstacles to ONOE's political viability as well. Opposition and regional parties worry that by coordinating campaigns with central narratives, simultaneous elections will favour powerful national parties disproportionately (Chaudhary, 2025; Vision IAS, 2025). Such synchronisation might tip the scales in favour of incumbents with widespread recognition, casting doubt on the impartiality of the democratic process, claims Prakash (2024). Furthermore, reaching a consensus would be a major challenge because the constitutional reforms needed for ONOE would need to be ratified by at least half of India's states (NITI Aayog, 2017).

Strategic Framework for Implementation: India's One Nation One Election (ONOE) implementation calls for a methodical, constitutionally consistent approach. Large-scale synchronisation can be supported by technological advancements such as modernising electronic voting machines (EVMs), improving voter verifiable paper audit trails (VVPATs), and implementing digital platforms for transparent election management (Press Information Bureau, 2024). According to NITI Aayog (2017), constitutional modifications will include new clauses protecting the federal balance as well as amendments to Articles 83 and 172 to align the provisions of the legislature. Before going national, policy frameworks should focus on implementing policies gradually and in phases, starting with aligning the Lok Sabha with a few state elections (Vision IAS, 2025).

To avoid early dissolutions from disrupting the synchronised cycle, precautions like Germany's constructive vote of no-confidence model could be adopted (Chakraborty, 2024). A wide-ranging political discussion, including all parties-national parties, regional parties, state governments, and civil society,remains essential to guaranteeing inclusivity (Vaishnav, Mallory, & Richter, 2025). A workable plan for deploying ONOE while preserving electoral variety and democratic integrity ultimately consists of a well-balanced structure that incorporates technological preparedness, constitutional amendments, gradual rollout, and institutional safeguards.

Policy Implications and Recommendations: Policymakers must take a balanced and inclusive stance if ONOE is going to be effective. Before a statewide introduction, a mock election model can assist in testing feasibility, starting with aligning Lok Sabha elections with a few state assemblies (NITI Aayog, 2017; Vision IAS, 2025). To guarantee legitimacy and agreement, a wide-ranging conversation with opposition parties, local authorities, and civil society is necessary (Vaishnav, Mallory, & Richter, 2025). To preserve democratic stability, institutional safeguards, such as procedures to avoid an early dissolutioninspired by Germany's constructive vote of no-confidence,should be taken into consideration (Chakraborty, 2024). To prevent national narratives from overshadowing local voices, changes must prioritise both cost-effectiveness and the preservation of India's federal variety (Chaudhary, 2025).

In Conclusion: One of the most ambitious electoral reform plans in the modern Indian democracy is the One Nation, One Election (ONOE) concept. Experiences in India and other countries have demonstrated its potential advantages, which include political stability, cost savings, administrative effectiveness, and a reduction in voter fatigue (Press Information Bureau, 2024; Andersen, 2024). By allowing administrations to focus more on governing rather than constant campaigning, synchronising electoral cycles could improve policy continuity and lessen financial strains (NITI Aayog, 2017; Chakraborty, 2024). Furthermore, the viability of widespread use is strengthened by the incorporation of cutting-edge electoral technologies, including modernised electronic voting machines and digital monitoring systems (Press Information Bureau, 2024).However, ONOE's criticisms draw attention to significant issues. There are still serious concerns of federal erosion, logistical overload, and political homogenization (Rane & Nayak, 2025; Prakash, 2024). While synchronisation is theoretically possible, it can have unforeseen repercussions like complicated ballots and confused voters, as evidenced by experiences from nations like Indonesia (Saragih, Nasution, &Simarmata, 2021).

Furthermore, in a diverse federation such as India, the synchronisation of electoral calendars may reduce regional voices, weaken the federal balance and compromise pluralism (Vaishnav, Mallory, & Richter, 2025; Chaudhary, 2025). The political viability of reform is further complicated by opposition party and regional stakeholder resistance, which makes reaching a consensus essential.Striking the right balance between ambition and practicality is necessary for the strategic road forward. A middle ground might be provided by a phased implementation strategy that starts with partial synchronisation and allows for institutional learning before widespread adoption (Vision IAS, 2025). To maintain stability, complementary constitutional protections must also be established, such as procedures to stop early dissolutions (Chakraborty, 2024). Crucially, the change should be presented as a democratic invention that promotes inclusivity and protects diversity rather than just as an administrative task.

In conclusion, ONOE is a complicated reform that calls for customised strategies rather than a one-size-fits-all approach. The ability of policymakers to balance stability with federal authority, innovation with constitutional integrity, and efficiency with democratic plurality will determine their success. To make sure that ONOE enhances rather than limits India's dynamic democracy, future studies must examine models of partial synchronisation, the use of technology to reduce logistical concerns, and frameworks

to safeguard regional representation.

References:-

1. Chadah, S. (2024). *One Nation One Election*. Indian Institute of Public Administration. https://iipa.org.in/upload/Theme_Paper_2024.pdf
2. Kovind Committee. (2024). *High Level Committee Report on Simultaneous Elections in India*. Government of India.
3. Rane, Y., & Nayak, S. (2025). Federalism, Democracy, and the Idea of One Nation One Election. *Vidhi Legal Policy*. https://vidhilegalpolicy.in/blog/federalism-democracy-and-the-idea-of-one-nation-one-election/
4. Brookings Institution. (2013, December 13). Elections in India, the world's largest democracy [Event page]. Brookings. Retrieved August 28, 2025, from https://www.brookings.edu/events/elections-in-the-worlds-largest-democracy/
5. Rane, Y., & Nayak, S. (2025). Federalism, democracy, and the idea of one nation one election. *Vidhi Centre for Legal Policy*. https://vidhilegalpolicy.in/blog/federalism-democracy-and-the-idea-of-one-nation-one-election/
6. Schakel, A. H., & Dandoy, R. (2014). Electoral cycles and turnout in multilevel electoral systems. *West European Politics, 37*(3), 605–623. https://doi.org/10.1080/01402382.2014.895526
7. Chakraborty, A. (2024, December 12). As India revisits 'One Nation, One Election', 7 other countries play a part. NDTV. Retrieved August 28, 2025, from https://www.ndtv.com/world-news/as-india-revisits-one-nation-one-election-7-other-countries-play-a-part-7234178
8. Kanodia, J. (2024). The case for simultaneous elections in India. SSRN Electronic Journal. https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=4785264
9. Singh, S. (2025). Harmonizing federalism: Perspectives on the simultaneous election. International Journal for Multidisciplinary Research, 7(1).https://www.ijfmr.com/papers/2025/1/37861.pdf
10. Chakraborty, A. (2024, December 12). As India revisits 'One Nation, One Election', 7 other countries play a part. NDTV. Retrieved August 29, 2025, from https://www.ndtv.com/world-news/as-india-revisits-one-nation-one-election-7-other-countries-play-a-part-7234178ndtv
11. Graduate Institute. (2017). European Election Day: Synchronizing national electoral cycles. Workshop Report, Graduate Institute of International and Development Studies. https://www.graduateinstitute.ch/sites/internet/files/2018-12/EEDay%20Report-05-10-17.pdf
12. PMC. (2023, January 15). Studying politics at the local level in Germany: A tale of missing data. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC9841949/pmc.ncbi.nlm.nih
13. Samuels, D. (2000). Concurrent elections, discordant results: Presidentialism, federalism, and governance in Brazil. Comparative Politics, 33(1), 1-20. http://users.polisci.umn.edu/~dsamuels/CP2000.pdf
14. Sharma, A. (2024). One Nation, One Election in federal democracies: A comparative analysis. KUEY Journal, 4(265). https://kuey.net/index.php/kuey/article/download/4265/3214/10281
15. 50 Shades of Federalism. (2024). Voting, elections and US federalism: The federal government perspective. Retrieved from http://50shadesoffederalism.com/case-studies/voting-elections-and-us-federalism-the-federal-government-perspective/50shadesof federalism
16. Tribune India. (2024, January 10). Simultaneous elections are a rarity around the world. The Tribune. https://www.tribuneindia.com/news/comment/simultaneous-elections-are-a-rarity-around-the-world-580148/
17. International IDEA. (2018, December 9). The road to Indonesia's 2019 legislative and presidential elections. https://www.idea.int/events/road-indonesias-2019-legislative-and-presidential-elections
18. Saragih, H., Nasution, A. H., & Simarmata, H. T. (2021). Simultaneous general election: It is fair for democracy in Indonesia. *JurnalIlmu Pemerintahan*, 6(1), 56-64. https://doi.org/10.24905/jip.6.1.2021.56-64
19. Tuanaya, W., Wance, M., & Muhtar. (2023). Analysis on election models: Examining the Indonesian case. *Journal of Law and Sustainable Development*, 11(8), 1-20. https://doi.org/10.55908/sdgs.v11i8.1080
20. NITI Aayog. (2017). *Analysis of simultaneous elections: The "what," "why," and "how"*. Government of India. https://www.niti.gov.in/sites/default/files/2019-01/SimultaneousElections.pdf
21. India Today. (2025, August 28). Do you support One Nation One Poll? | India Today. Retrieved August 29, 2025, from https://www.youtube.com/watch?v=Q7ncisFpd68
22. McCoy, J. (2013, November 12). The complicated rise of India's regional parties. *Carnegie Endowment for International Peace*. https://carnegieendowment.org/research/2013/11/the-complicated-rise-of-indias-regional-parties
23. Andersen, D. (2024). *Crowded out: The effects of concurrent elections on political engagement, candidate evaluation, and campaign learning in the United States. Representation: Journal of Representative Democracy, 60*(2), 325–344. https://doi.org/10.1080/00344893.2023.2261450
24. Chaudhary, A. (2025, August 31). *Is the idea of India's One Nation, One Election a miracle or a disaster?* Indian Institute of Public Administration. https://www.iipa.org.in/GyanKOSH/posts/is-the-idea-of-

indias-one-nation-one-election-a-miracle-or-a-disaster

25. Chakraborty, A. (2024, December 12). *As India revisits 'One Nation, One Election', 7 other countries play a part*. *NDTV*. https://www.ndtv.com/world-news/as-india-revisits-one-nation-one-election-7-other-countries-play-a-part-7234178
26. Gross, M., & Jankowski, M. (2020). Studying politics at the local level in Germany: A tale of missing data. *Political Science Research and Methods, 8*(3), 567–573. https://doi.org/10.1017/psrm.2019.42
27. Prakash, B. (2024, November 1). *One nation one election: A comparative analysis from voter behavior to political polarization*. SSRN. https://papers.ssrn.com/sol3/Delivery.cfm/5007991.pdf?abstractid=5007991&mirid=1
28. Press Information Bureau. (2024, December 16). *One Nation, One Election*. Government of India. https://www.pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=2085082
29. Vaishnav, M., Mallory, C., & Richter, A. (2025, July 27). *Does "One Nation, One Election" make sense for India?* Carnegie Endowment for International Peace. https://carnegieendowment.org/research/2025/07/india-one-nation-one-election-proposal?lang=en
30. Vision IAS. (2025, January 21). *One Nation, One Election Bill | Current Affairs*. https://visionias.in/current-affairs/monthly-magazine/2025-01-22/polity-and-governance/one-nation-one-election-bill
31. Yadav, N. (2024, December 17). *Explained: India's One Nation One Election proposal*. BBC News. https://www.bbc.com/news/articles/cly7vjp73zvo
32. Andersen, D. (2024). *Crowded out: The effects of concurrent elections on political engagement, candidate evaluation, and campaign learning in the United States*. *Representation: Journal of Representative Democracy, 60*(2), 325–344. https://doi.org/10.1080/00344893.2023.2261450

Country	**Type of Government**	**Distinct Features of Simultaneous Elections**	**Relevance for the Indian Context**
United States	Federal Presidential Republic	Federal and many state/local elections on the same day; 'ballot roll-off' effect where voters skip low-profilecandidates; crowding out of House candidates during concurrent elections	Limited - demonstrates voter information overload and negative effects on lesser-knowncandidates; Indian multi-tier complexity would amplify these issues.
Brazil	Federal Presidential Republic	Presidential, legislative, governorship, and municipal offices synchronised; 'married' timing but 'divorced' results with state autonomy maintained	Highly Relevant - a large federal democracy successfully managing simultaneous elections while preserving state political autonomy; proves feasibility at scale.
Germany	Federal Parliamentary Republic	Parliamentary system with 'constructive vote of no-confidence' preventing premature dissolution; institutional safeguards ensure stability during synchronised cycles	Moderately Relevant - constitutional safeguards could prevent premature dissolution issues that disrupted India's original synchronised system (1951-1967)
Sweden	Unitary Parliamentary Constitutional Monarchy	Complete simultaneity - national, regional, and municipal elections every 4 years using proportional representation; highest administrative efficiency	Limited - small homogeneous population and unitary system differ significantly from India's diversity and federal complexity.
South Africa	Unitary Parliamentary Republic	National and provincial elections are synchronised every 5 years; municipal elections are separate; the dominant party system facilitates coordination.	Moderately Relevant - shows synchronisation works with dominant party systems but may face challenges as political competition increases (relevant to India's evolving democracy)
Belgium	Federal Parliamentary Constitutional Monarchy	Federal and regional elections are aligned with the EU Parliament every 5 years; it manages linguistic federalism through coalition traditions.	Moderately Relevant - demonstrates successful management of linguistic/cultural diversity through established coalition practices.
Indonesia	Unitary Presidential Republic	Largest single-day election operation (200M voters) - presidential, parliamentary, and regional simultaneously; concerns about ballot complexity and voter fatigue	Highly Relevant - proves logistical feasibility for large populations; voter fatigue and ballot complexity concerns are directly applicable to the Indian scale.
European Union (France-Germany)	Supranational Union/Federal Parliamentary Republics	Natural experiment showing policy coordination benefits when major powers have synchronised terms; 4-5 year overlapping governance periods.	Moderately Relevant - shows potential for improved policy coordination between the centre and states during synchronised governance periods
Canada/ Australia	Federal Parliamentary Constitutional Monarchies	Maintain separate federal and provincial/state cycles,prioritising federal autonomy over administrative efficiency.	Contrasting Model - prioritises federal principles over efficiency; represents an alternative approach India has considered but not adopted.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Marital Rape in India: The Uncriminalised Crime Against Gender Justice

Tanishq Sharma*

***BBA LL.B (Student) Bharati Vidyapeeth New Law College, Pune (Maharashtra) INDIA**

Abstract - The scourge of marital rape persists as a heinous crime in India, paralleling the gravity of rape itself. Primarily targeting married women, it stands as a significant impediment to gender equity in the nation, its roots deeply entrenched in historical societal norms. Despite its pervasive existence, Indian society has largely overlooked this issue, with minimal resistance stemming from various societal factors. Regrettably, the legislative response mirrors this apathy, failing to prioritize the eradication of marital rape. While the judiciary offers a glimmer of hope, its hands are tied, lacking the authority to enact laws which remains the domain of the legislature. The current legal framework inadequately addresses the severity of marital rape, necessitating the urgent implementation of robust legislation to combat this nefarious practice.

Introduction - Throughout history, India has grappled with numerous social maladies, ranging from Sati Pratha and Child Marriage to the Devdasi and Purdah systems. While some of these afflictions have gradually faded into obscurity, others persist, plaguing modern India. Marital rape stands as a stark example, entrenched in the fabric of Indian society since ancient times and persisting unabated in contemporary times. Despite its enduring presence, both societal attitudes and legislative responses towards this scourge have remained largely indifferent. However, the judiciary's stance differs, exhibiting a proactive stance against marital rape through landmark rulings. Unlike many nations where marital rape is strictly prohibited and punishable, India lacks effective legislation to address this pressing issue.

Meaning: Marital rape, essentially a form of rape, bears minimal distinction from conventional rape, save for the fact that the perpetrator is confined to the spouse. When non-consensual sexual activity occurs within marriage, regardless of the initiator, it qualifies as marital rape. Consequently, marital rape is deemed a gender-neutral offense, although husbands typically assume the role of perpetrators in the majority of cases, with instances of wives as perpetrators being exceedingly rare worldwide. While marital intercourse is intrinsic to marriage, the notion of marital rape starkly contradicts the foundational principles of marital union.

History: Every social malaise, including marital rape, is rooted in history, and its origins trace back to ancient times. Marital rape is not a recent phenomenon but has a longstanding presence in India, spanning ancient, medieval, and modern eras. In antiquity, women were often viewed as possessions, first of their fathers and then of their husbands post-marriage, devoid of autonomy and rights. This oppressive mindset served as fertile ground for the emergence of marital rape. Historical records attest to numerous instances of marital rape during those periods, exacerbated by the absence of effective legal protections for women and their limited awareness of their rights. Women, largely dependent on their husbands, had little recourse but to acquiesce to their husbands' dictates, regardless of their validity. These factors collectively facilitated the proliferation of marital rape throughout India's history, underscoring its enduring and pervasive nature across different epochs.

Indian Society: Human beings are inherently social creatures, reliant on society for various necessities such as safety, companionship, livelihood, and recreation. However, societies also contend with numerous social ills, which every member must confront. Thus, societies encompass both merits and demerits. Indian society, historically patriarchal and male-dominated, largely overlooks marital rape, primarily because its victims are predominantly women. Had men been the primary victims, marital rape would likely have been outlawed long ago. Few voices in India advocate for the prohibition and criminalization of marital rape. Society plays a pivotal role in combating social evils; without societal rejection, no social ill can be eradicated. In India's case, the persistence of marital rape stems from society's failure to reject it, allowing it to thrive unchecked.

Indian Legislature: The Indian legislature holds significant

potential in combatting marital rape within the country. However, there exists considerable reluctance within the Indian legislative body regarding the criminalization of marital rape. Despite numerous proposals aiming to criminalize marital rape being presented, they have consistently been rejected. Various bills have been introduced in the Indian Parliament with the objective of addressing this issue, yet none have progressed into legislation. The responsibility of criminalizing marital rape in India lies solely with the Indian legislature, but there is a notable lack of urgency in this regard. The legislature appears to be concerned that such criminalization could have adverse effects on the traditional institution of marriage in India, potentially leading to a rise in marital breakdowns.

Indian Executive: In alignment with the perspectives of Indian society and legislature, the Indian executive likewise stands opposed to the criminalization of marital rape within the country. Despite repeated appeals directed at successive Indian governments, none have displayed the resolve or fortitude necessary to enact legislation unequivocally outlawing marital rape. The rationale often cited for the lack of action on this front is a concern that implementing such laws could destabilize the institution of marriage and potentially lead to an uptick in divorce rates nationwide. Consequently, the stance taken by the Indian executive on this critical issue is deeply disappointing, reflecting a reluctance to address a grave societal concern.

Indian Judiciary: In contrast to the hesitant and restrained approach of the Indian legislature, the response of the Indian judiciary towards addressing the scourge of marital rape demonstrates a significantly more proactive stance. The judiciary, particularly the Supreme Court of India, has issued several landmark decisions strongly condemning the practice of marital rape and advocating for its criminalization on numerous occasions. Similarly, various High Courts across the country have echoed this call for action through their judgements, urging for the criminalization of marital rape in India. However, it's important to acknowledge that the role of the Indian judiciary in this matter is inherently limited. While the judiciary can advocate and set precedents, it ultimately falls upon the Indian legislature to enact laws that formally outlaw marital rape in the country.

Laws in India: In India, legislation exists to prosecute individuals guilty of rape, as outlined in Section 376 of the Indian Penal Code. However, when it comes to addressing the issue of marital rape, there is a noticeable gap in the legal framework. Specifically, there are no specific statutes dedicated to addressing marital rape. The only provision within Indian law that offers some form of protection to victims of marital rape is Section 375, Exception 2, of the IPC. This provision stipulates that if a husband engages in sexual intercourse with his wife who is below the age of 15 years, he can be charged with rape. However, a landmark decision by the Supreme Court of India in the case of Independent Thought v. Union of India has raised the age limit to 18 years. Consequently, under current legal interpretation, if a husband engages in sexual intercourse with his minor wife, he can be prosecuted for rape, but no such legal recourse exists for adult wives. Therefore, the legal landscape in India provides only partial protection to victims of marital rape, leaving a significant gap in safeguarding individuals from this egregious violation.

Conclusion: In conclusion, it is evident that marital rape, akin to rape itself, poses a significant threat to the attainment of gender justice in India. As long as such atrocities persist, the women of India cannot truly experience freedom and independence. Marital rape stands as a major violation of women's right to equality and right to life in the country. To propel India towards development, the eradication of marital rape is imperative, as it represents a substantial impediment to progress. However, achieving this goal necessitates a fundamental shift in the mindset of Indian society, legislature, and executive. Only through proactive measures from all sectors can marital rape be effectively criminalized in India. The Indian judiciary must also exert pressure on the legislature and executive through insightful rulings. It is imperative that Indian society, legislature, executive, and judiciary unite in a concerted effort against the scourge of marital rape to successfully purge this monstrous evil from the nation.

Suggestions: After an exhaustive exploration of every facet of marital rape, it's evident that this reprehensible phenomenon has deeply permeated Indian society. Urgent action is imperative to eradicate it from the country. Here are some essential suggestions to achieve this goal:

1. Implement comprehensive legislation to fully criminalize marital rape in India.
2. Ensure equal legal protection for both minor and adult married women against marital rape, without differentiation based on age.
3. Establish uniform punishment for rape and marital rape, ensuring consistency in justice delivery.
4. Eliminate the exception for marital rape in the Indian Penal Code by repealing Exception 2 of Section 375.
5. Extend the provisions of the Indian Evidence Act to marital rape, treating it on par with rape in all legal aspects.
6. Redefine marital rape as a gender-neutral offense to ensure equitable treatment under the law.
7. Implement robust safeguards in marital rape laws to prevent misuse, such as conducting thorough investigations before arrest and protecting the accused's family from harassment.
8. Introduce penalties for individuals found guilty of falsely accusing their spouses of marital rape.
9. Recognize marital rape as a specific ground for divorce, providing victims with legal recourse to end abusive marriages.
10. Establish special fast-track courts with female judges

and staff nationwide to expedite the adjudication of marital rape cases, ensuring fair and efficient justice delivery while preventing sensationalized media coverage

References:-

1. The Indian Penal Code 1860. Sections 375 & 376. India.
2. Finkelhor, David, & Yllo, Kersti. (1985). “License to Rape: Sexual Abuse of Wives.” New York: The Free Press.
3. Russell, Diana E.H. (1982). “Rape in Marriage.” New York: Macmillan Publishing Co.
4. Easteal, Patricia, & Plummer, Louise McOrmond. (2006). “Real Rape, Real Pain: Help for Women Sexually Assaulted by Male Partners.” Australia: Port Campbell Press.
5. Plummer, Louise McOrmond, & Levy-Peck, Jennifer Y., (Eds.) (2017). “Perpetrators of Intimate Partner Sexual Violence.” New York: Routledge.
6. Brownmiller, Susan. (1993). “Against Our Will: Men, Women & Rape.” New York: Ballantine Books.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Study of Phytochemical Constituents from Moringa Leaves

Kajal Dosondhi* Dr. Dhananjay Dwivedi Dr. Sunil Kumar Sikarwar*****

*Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
**Professor (Chemistry) P.M.B. Gujarati Science College,Nasiya Road, Indore (M.P.) INDIA
***Asst. Professor (Chemistry) PMCoE Shaheed Chandrashekhar Azad Govt. PG College, Jhabua (M.P.) INDIA

Abstract: Moringaoleifera commonly known as Drumstick tree is known to have valuable phytochemical constituents thus is a valuable medicinal plant of traditional medicinal system.The results obtained confirms the presence of flavonoids, glycosides,saponins, phenolic compounds, tannins, proteins and amino acids.
Keywords: Maceration, Phytochemicals, Solve.

Introduction - It is native tree abundantly found in sub-Himalayan regions of northen India(1).Moringaoleifera belongs to family Moringaceae family. It is found usually in drought proneareas, making it valuable and have been used to combat malnutrition. This plant is well known for it's nutritional worth as well as for it's medicinal references. Phytochemicals available in this is reported to have hypotensive, anticancer and antibacterial activity including the benefits for the treatment or prevention of infection or disease that may be from dietary administration of it's extracts,poultice,oils, salves, decoctions etc.(2,3,4).

Materials and Methods

Sample: The leaves of Moringaoleifera is collected first from nearby area of Jhabua district Madhya Pradesh (Govt. Polytechnic College Jhabua). This plant and leaf is authenticated by Dr S.Ray P.M.B.Gujarati Science College Indore.Collected leaves were washed in running tap water afterwards rinsed twice with distilled waterbrought dried under shade for two weeks at 30°C in hot air oven. These all were grounded into grinder then passed through filter of mesh size 0.2mm(5,6).

Extraction Method: 100 gm of prepared leaves powder was dissolved in to 250 ml of ethanol using maceration for 48 hours. After this the residue were dried and procedure was repeated with other solvents like water, cyclohexane and petroleum ether All were filtered with Whatmann filter paper No.1 and excess solvent were removed by evaporation. These obtained extract preparation were concentrated under reduced pressure using rotatory evaporator and kept at low temperature for further screening using standard tests for flavonoids, alkaloids, terpenoide, tannin, saponin,sugar,coumanin, phlobatannins, glycosides, sterols, steroid and protein.

Table No. 1

S.	Solvent Phytochemical	Water	Cylohexame	P.E.
1.	Flavonoids	+	-	-
2.	Acvaloid	-	+	+
3.	Terpenoide	-	+	+
4.	Tannin	+	-	-
5.	Saponine	+	-	-
6.	Sugar	+	-	-
7.	Coumanin	-	+	+
8.	Phlobatannins	+	-	-
9.	Glycosides	+	-	-
10.	Sterols	-	+	+
11.	Steroids	-	+	+
12.	Protein	+	-	-

Result and Discussion: The finding of phytochemical screening of Moringaoleifera are given as above in **Table-No.1.** This screening confirms the presence of phytochemicals like flavonoids, alkaloids, terpenoids, tannins, saponins, sugar, coumanin, phlobatannins, glycosides, sterols,steroids and protein in moringaoleifera leaves. These findings also support the basic of solubility as like dissolves like.

Due to polarity flavonoids, tannin,saponin, sugar, phlobatannins, glycosides and protein are soluble in polar solvent like water while alkaloids, terpenoids, coumanin, sterols,steroidsare soluble in nonpolar solvents like cyclohexane and petroleum ether.

Conclusion: Moringaoleifera leaves are rich in terms of nutritional aspects as found many phytochemicals are present in it's extract.

References:-

1. Euglie L.J (1999) The Miracle tree: Moringaoleifera:

Natural Nutrition for the tropic Church world service Dakar.68 ppj revised in 2001and published as the Miracle Tree: The Multiple Attributes of Moringa,172pp.
2. Abuye C. A M omwega,JK Imungi (1999)Familial tendency and dietary association of goitre in Gamo-Gofa,F Thiopia, East African Medical Journal 76:447-451.
3. Anwar F and MI Bhanger (2003) Analytical Characterization of Moringaoleifera seed oil grown in temperate regions of Pakistan. Journal of Agricultural and foot Chemistry 51:6558-6563.
4. Palada M C (1996) Moringa (Moringaoleifera lam.):A Versatile tree crop with horticultural potential in the subtropical United States Hort Science. 31,794-797.NUT GEN.
5. Pandey A., Tripathi S, concept of standardization, extraction and pre phytochemical Screening strategies for herbal drug , Journal of Pharmacognosy and phytochemistry 2014,3(5),115-119.
6. Harborne ,J.B. phytochemical methods London, Chapman and Hall Ltd.1973 ,49-188.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Chemical Composition of Corn and Maize and Their Applications in Medical Sector as Well as in Domestic Sector: A Brief Study

Akhilesh Chandra Verma*

***Department of Chemistry, Govt. Naveen College, Kui-Kukdur, Kabirdham (C.G.) INDIA**

Abstract: Corn (Zea mays), commonly referred to as maize, is one of the most cultivated cereal crops worldwide. This study presents a comprehensive overview of the chemical composition of corn and its various applications in the medical and domestic sectors. Corn is composed of significant macronutrients including carbohydrates, proteins, and fats, along with essential micronutrients such as B-complex vitamins, magnesium, and phosphorus. It is also rich in phytochemicals like lutein, zeaxanthin, and ferulic acid, which contribute to its antioxidant and anti-inflammatory properties. In the medical sector, corn is utilized in the development of nutraceuticals, anti-diabetic formulations, cardiovascular therapies, and as a dietary supplement. Domestically, corn and its derivatives (flour, starch, oil) are employed in cooking, baking, biodegradable household products, and personal care items. This paper integrates chemical insights with practical applications, highlighting corn's role as a sustainable resource in both health care and home management. Further research is recommended to explore advanced therapeutic uses and environmentally friendly domestic innovations.

Keywords: Corn, Maize, Nutraceuticals, Phytochemicals, Domestic Applications, Antioxidants, Functional Foods.

Introduction : Corn (Zea mays) is one of the most significant cereal grains globally, contributing not only to food security but also to industrial, domestic, and medicinal innovations. Originating from Central America and now cultivated in over 160 countries, corn serves as a staple food, livestock feed, biofuel source, and a raw material for various industrial applications. While the primary role of corn in food systems is well recognized, its chemical richness and multifunctionality are lesser known to the general public and even to some scientific sectors.This paper seeks to explore corn and maize from two perspectives: chemical composition and utility. In particular, the study focuses on how corn's unique combination of macronutrients, micronutrients, and phytochemicals makes it suitable for diverse applications. From corn oil used for cardiovascular health to corn starch in eco-friendly cleaning agents, the crop serves as a bridge between traditional domestic practices and modern scientific advancements.By reviewing the core components of corn and their interactions with human health and household systems, this research aims to create a knowledge platform for future exploration in food science, pharmacology, and sustainable home economics.

Chemical Composition of Corn and Maize : Corn (Zea mays), known commonly as maize, is chemically rich in both macro- and micronutrients and also contains several health-promoting phytochemicals. This composition underpins its widespread use in nutritional therapy, functional foods, pharmaceuticals, and even domestic applications. Understanding the complete chemical makeup of corn is essential to explore its multifaceted roles in modern and traditional contexts.

Macronutrients: Corn is primarily composed of carbohydrates, making up approximately 72–74% of its dry weight, largely in the form of starch. This starch is stored in the endosperm and is a vital energy source in both human and animal diets. Corn starch is also an industrial base for bioplastics and thickeners.

The protein content of corn ranges between 8–11%, with zein being the major protein fraction. Although zein is not a complete protein due to its low lysine and tryptophan levels, corn can be complemented with legumes to form a nutritionally adequate amino acid profile. Corn gluten meal, a by-product of corn processing, is protein-rich and often used in dietary supplements and animal feed.

Lipids constitute approximately 4–5% of whole corn, with corn germ containing up to 45% oil. Corn oil is largely composed of unsaturated fatty acids, particularly linoleic acid (omega-6) and oleic acid (omega-9), which are beneficial for heart health. It also contains phytosterols that may reduce LDL cholesterol levels. These macronutrients not only serve nutritional needs but also enable corn's role

in food processing, soap making, and emulsifier production.

Dietary fiber content in whole corn is about 7–9%. This includes both insoluble fibers such as cellulose and soluble fibers like pectin, aiding in digestive regulation and blood sugar stabilization. The bran and pericarp layers of the corn kernel are rich in fiber, contributing to satiety and gut health.

Micronutrients: Corn provides an array of essential vitamins and minerals, particularly from the B-vitamin group. These include:

1. Thiamine (B1) – Supports nervous system function and carbohydrate metabolism.
2. Niacin (B3) – Important for skin health and enzymatic activity; however, in untreated corn, niacin is bound and requires alkaline processing (nixtamalization) to become bioavailable.
3. Folate (B9) – Crucial for DNA synthesis and fetal development.
4. Pantothenic acid (B5) and pyridoxine (B6) – Aid in energy metabolism and red blood cell production.

In terms of minerals, corn contains:

1. Magnesium – Essential for bone health and enzyme activity.
2. Phosphorus – Supports skeletal structure and cellular energy transfer.
3. Potassium – Helps regulate blood pressure and nerve function.
4. Iron – Though present in small amounts, it contributes to hemoglobin synthesis.

Yellow maize is also a rich source of provitamin A carotenoids, particularly beta-carotene, which can be converted into vitamin A in the human body. This is especially significant in biofortified varieties (e.g., Golden Maize), used in combating vitamin A deficiency in developing countries.

Phytochemicals and Bioactive Compounds: Corn is particularly noted for its diverse range of phytochemicals, which offer health-protective effects beyond basic nutrition.

Lutein and Zeaxanthin: These carotenoids are concentrated in yellow maize varieties and are renowned for promoting eye health by protecting against age-related macular degeneration (AMD). Both compounds filter harmful blue light and act as antioxidants in the retina.

Ferulic Acid: A potent phenolic antioxidant, ferulic acid is abundant in the bran of corn. It neutralizes free radicals, reduces inflammation, and may protect against cardiovascular disease and certain cancers. It also contributes to corn's anti-aging and anti-wrinkle potential in cosmetic formulations.

Anthocyanins: Found primarily in purple and blue maize, anthocyanins exhibit strong antioxidant and anti-inflammatory properties. These pigments may support vascular health and glucose regulation, making them beneficial in anti-diabetic dietary interventions.

Flavonoids: Flavonoids such as apigenin, luteolin, and quercetin have been identified in corn husks and kernels. These compounds exhibit antimicrobial, anti-allergic, and cardioprotective activities, supporting corn's role in preventive medicine and immune modulation.

Phytosterols: Corn germ oil is rich in plant sterols, which structurally resemble cholesterol but help lower serum LDL cholesterol levels by inhibiting its absorption in the intestine. Their inclusion in functional foods and cholesterol-lowering spreads is now commonplace.

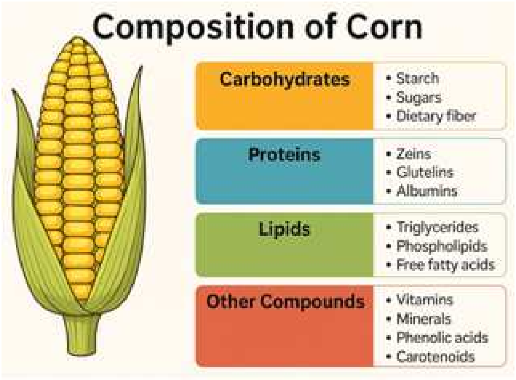

Summary of Composition

Nutrient Type	Main Compounds /Elements	Role/Function
Carbohydrates	Starch	Energy, food Processing
Proteins	Zein, glutelin	Body repair, animal feed
Lipids	Linoleic acid, oleic acid	Heart health, food oils
Vitamins	B1, B3, B6, Folate, Provitamin A	Metabolism, fetal health
Minerals	Mg, P, K, Fe	Enzymatic activity, blood pressure
Phytochemicals	Lutein, zeaxanthin, ferulic acid, phytosterols	Eye health, antioxidant, cholesterol control

This comprehensive chemical profile demonstrates that corn and maize are not just energy-rich crops but also reservoirs of therapeutic and functional molecules. Their composition supports a wide range of applications in health care systems, nutrition therapy, and even eco-conscious household practices.

Applications in the Medical Sector : The increasing interest in plant-based health interventions has underscored the significance of corn (*Zea mays*) not only as a dietary staple but also as a source of functional components with therapeutic potential. Corn and maize-derived products, particularly from kernels, bran, and germ, have been incorporated into a variety of medical and nutraceutical formulations due to their rich phytochemical and nutritional profile. This section discusses their diverse uses in the medical sector, focusing on nutraceutical applications, antioxidant and anti-inflammatory roles, and pharmaceutical potential.

Nutraceuticals and Functional Foods: Nutraceuticals are food-derived products offering health benefits beyond basic nutrition, often contributing to the prevention or management of chronic conditions. Corn plays a vital role in this space, particularly in the form of whole grains, corn oil, and bioactive isolates.

Corn oil is a rich source of phytosterols and unsaturated fatty acids, primarily linoleic and oleic acid, which contribute to lowering serum LDL cholesterol. According to Rios et al. (2020), phytosterol-enriched corn oil consumption resulted in a 10–15% reduction in LDL cholesterol among hyperlipidemic patients. Moreover, lutein and zeaxanthin in yellow maize are commonly used in eye health supplements aimed at delaying the progression of age-related macular degeneration (AMD) (Krinsky & Johnson, 2005).

Ferulic acid, predominantly found in corn bran, has also been incorporated into antioxidant-enriched foods that help in reducing oxidative damage, thus supporting metabolic and cellular health. These nutraceutical compounds position corn as a valuable raw material in the development of functional foods tailored to aging populations and at-risk groups with cardiovascular or visual disorders.

Antioxidant and Anti-inflammatory Properties: Oxidative stress is a common factor in chronic illnesses such as cancer, diabetes, and neurodegenerative disorders. Corn's phytochemicals exhibit significant free radical scavenging activity, contributing to the prevention and management of these diseases.

Anthocyanin-rich varieties, especially purple and blue maize, contain high levels of antioxidant compounds. Studies by Lopez-Martinez et al. (2015) demonstrated that anthocyanin extracts from purple maize significantly reduced reactive oxygen species (ROS) generation in vitro. In addition to anthocyanins, ferulic acid and flavonoids such as quercetin and luteolin from corn husks have been shown to inhibit inflammatory pathways, including cyclooxygenase (COX) and lipoxygenase (LOX) activity.

Clinical trials suggest that diets enriched with whole cornmeal can lead to improved inflammatory markers such as C-reactive protein (CRP) and interleukin-6 (IL-6) levels, thereby supporting corn's role as an anti-inflammatory agent (Gomez-Pinilla, 2017). This renders corn-based diets particularly beneficial for patients suffering from metabolic syndrome, arthritis, and autoimmune disorders.

Pharmaceutical and Clinical Uses: Corn also contributes to pharmaceutical formulations beyond dietary applications. Corn starch, a polysaccharide derived from the endosperm, is extensively used in drug delivery systems as a binder, disintegrant, and filler in tablets and capsules. Due to its biocompatibility and biodegradability, it is favored in the production of microcapsules for controlled drug release, especially in gastrointestinal medications.

Furthermore, genetically engineered varieties of corn have been explored for the production of plant-based vaccines and therapeutic proteins—a field known as **molecular** pharming. For example, corn has been used as a host for producing antigens for hepatitis B and Norwalk virus (Thanavala et al., 2005). These innovations offer a cost-effective and scalable approach to vaccine production in developing regions.

In diabetic care, resistant starch from corn has been found to reduce postprandial glucose levels, improving glycemic control among type 2 diabetes patients (Robertson et al., 2005). It also enhances insulin sensitivity by modulating gut microbiota and promoting short-chain fatty acid (SCFA) production.

Applications in the Domestic Sector : While corn (*Zea mays*) has long been valued as a food staple, its uses in domestic settings extend far beyond nutrition. Corn and its derivatives serve a variety of roles in household products, culinary practices, personal care, and even eco-friendly innovations. These applications leverage corn's biodegradable, non-toxic, and multifunctional chemical properties to create safe, sustainable solutions for everyday life.

Corn Flour and Oil in Cooking and Preservation: Corn flour and cornmeal are foundational ingredients in numerous traditional and modern kitchens. Rich in carbohydrates and gluten-free, corn flour is used in baking, frying, and thickening soups and sauces. Its neutral flavor and fine texture make it suitable for making flatbreads, tortillas, fritters, and porridge.

Corn oil, extracted from corn germ, is a preferred medium for cooking due to its high smoke point and mild flavor. More importantly, it contains essential fatty acids, such as linoleic acid, and plant sterols that promote cardiovascular health. In domestic food preservation, corn oil's antioxidant compounds slow down spoilage and rancidity in stored foods.

Corn flour is also used as a natural preservative and anti-caking agent. Its hygroscopic nature helps absorb excess moisture, keeping stored food items dry and extending their shelf life.

Corn Starch in Cleaning and Personal Care: Corn starch is one of the most versatile and widely used corn derivatives in the domestic sector. As a fine, absorbent powder, it is commonly employed for:

1. **Stain removal**: Corn starch can be sprinkled on greasy fabric or upholstery stains to absorb oil before washing.
2. **Natural deodorant**: Due to its moisture-absorbing properties, corn starch is used in DIY underarm powders.
3. **Baby care**: Often substituted for talcum powder, corn starch soothes irritated skin and prevents diaper rashes.
4. **Cosmetic products**: Corn starch acts as a binder and thickening agent in lotions, creams, and face powders, offering a soft, matte finish.

In eco-friendly cleaning products, corn starch is combined with vinegar and baking soda to create homemade glass and surface cleaners.

Traditional, Cultural, and Modern Culinary Practices: Corn has a deep-rooted cultural significance in many parts of the world. In India, corn flour is used to make 'makki di roti', a winter delicacy consumed with mustard greens. In Latin American countries, corn masa forms the basis of tamales, tortillas, and pupusas.

Cornmeal is often used as a breading agent in frying recipes, providing crispness and flavor. In baking, corn flour is mixed with other flours to make muffins, cornbread, and cookies, especially in gluten-sensitive diets.

Modern uses have also evolved to include instant mixes and ready-to-cook meals incorporating corn flour due to its easy digestibility and longer shelf life. In recent years, corn has also gained popularity in the form of popcorn-based snacks, energy bars, and extruded breakfast cereals.

Eco-Friendly Innovations and Biodegradable Utilities: Corn starch plays a pivotal role in the creation of biodegradable plastics and packaging materials. With increasing environmental concerns, starch-based films derived from corn are now used as sustainable alternatives to petroleum-based plastic for making carry bags, disposable cutlery, and food containers.

These bioplastics are compostable, reducing the carbon footprint of domestic waste. Corn-based detergents and soaps are also gaining attention due to their minimal skin irritation and environmentally safe decomposition.

Corn's chemical properties make it a remarkably useful resource in the domestic sphere. From its use in culinary traditions and household maintenance to modern biodegradable products, corn contributes significantly to sustainable living. Its ability to provide natural, affordable, and health-conscious alternatives ensures its enduring relevance in households around the world.

Conclusion and Future Scope : Corn (*Zea mays*), beyond its staple food status, represents a multifunctional crop with immense potential across both medical and domestic domains. This study has highlighted the diverse chemical composition of corn—rich in macronutrients, micronutrients, and powerful bioactive compounds such as flavonoids, phytosterols, carotenoids, and phenolic acids. These constituents contribute not only to its nutritional benefits but also to its therapeutic efficacy in managing chronic health conditions like cardiovascular disease, diabetes, oxidative stress, and age-related disorders.

The review also demonstrated how corn is being harnessed for nutraceutical and pharmaceutical development, with components like lutein, zeaxanthin, ferulic acid, and resistant starch contributing to clinical innovations and functional food formulations. In the pharmaceutical industry, corn-derived starches and genetically modified variants offer promising platforms for drug delivery and vaccine development.

Simultaneously, corn's role in domestic life is equally significant. From corn starch in household cleaners and cosmetics to corn flour in traditional recipes and biodegradable packaging, the plant's versatility supports sustainable living practices. As concerns around environmental degradation and synthetic product overuse rise, corn-based materials offer an eco-friendly and affordable alternative.

Future Scope: While the current applications are impressive, future research should focus on:

1. **Bioavailability and clinical validation** of corn-derived compounds through human trials.
2. **Development of fortified corn varieties** with enhanced levels of specific nutrients (e.g., provitamin A, zinc).
3. **Advancement of bioplastic technologies** using corn starch for scalable and compostable alternatives.
4. **Innovation in functional food design**, especially targeting low-income and nutritionally vulnerable populations.

Biotechnological advancements and interdisciplinary collaborations can further optimize corn's therapeutic and household utility, making it a cornerstone of health-promoting and sustainable lifestyles globally.

References:-

1. Awika, J. M. (2011). Major cereal grains production and use around the world. In Advances in Cereal Science: Implications to Food Processing and Health Promotion (pp. 1–13). ACS Symposium Series. https://doi.org/10.1021/bk-2011-1089.ch001
2. De Moura, F. F., Miloff, A., & Boy, E. (2015). Retention of provitamin A carotenoids in staple crops. Biofortification Progress, *2*(1), 139–152. https://doi.org/

10.3945/jn.115.219006

3. Giordano, D., Costantini, L., & Tedesco, I. (2018). Health benefits of anthocyanin-rich maize. Nutrients, *10*(10), 1383. https://doi.org/10.3390/nu10101383
4. Rios, J. L., Waterman, P. G., & Prieto, J. M. (2020). Plant sterols: Biological activity and therapeutic potential. Phytotherapy Research, *34*(7), 1534–1545. https://doi.org/10.1002/ptr.6632
5. Serna-Saldívar, S. O. (2012). Cereal Grains: Properties, Processing, and Nutritional Attributes. CRC Press.
6. Thanavala, Y., Mahoney, M., Pal, S., et al. (2005). Immunological responses to plant-derived hepatitis B surface antigen. Proceedings of the National Academy of Sciences, *102*(9), 3378–3382. https://doi.org/10.1073/pnas.0409898102
7. Wu, T., Yang, L., Guo, X., & Zhang, M. (2017). Anthocyanins and phenolic acids in purple maize and their health-promoting properties. International Journal of Molecular Sciences, *18*(7), 1429. https://doi.org/10.3390/ijms18071429
8. Xu, J., Zhang, H., Guo, X., Qian, H., & Zhang, H. (2013). The use of corn starch in controlled drug delivery: A review. Carbohydrate Polymers, *98*(1), 555–563. https://doi.org/10.1016/j.carbpol.2013.06.006

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Medecinal Plant Alo Vera

Dr. Sushama Singh Majhi*

*Assistant Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: Aloe Vera is a medicinal plant known for its antioxidant and anti-inflammatory properties, used for thousands of years to treat skin conditions like burns, wounds, and psoriasis. The gel inside its leaves contains vitamins, minerals, amino acids, and enzymes that can be applied topically or consumed orally to support skin health, aid digestion, and boost the immune system. Aloe Vera is a succulent plant known for its medicinal properties, particularly in treating skin conditions like burns and wounds. It is a short-stemmed, perennial plant with thick, fleshy leaves that contain a clear inner gel rich in vitamins, minerals, and amino acids, and a bitter yellow latex in the outer layer. This latex is a powerful laxative and should be ingested with caution.

Aloe Vera is a natural product that is now a day frequently used in the field of cosmetology. Though there are various indications for its use, controlled trials are needed to determine its real efficacy. The aloe Vera plant, its properties, mechanism of action and clinical uses are briefly reviewed in this article.
Keywords: Aloe Vera, health and beauty, skin.

Introduction - The Aloe Vera plant has been known and used for centuries for its health, beauty, medicinal and skin care properties. The name Aloe Vera derives from the Arabic word "Alloeh" meaning "shining bitter substance," while "Vera" in Latin means "true." 2000 years ago, the Greek scientists regarded Aloe Vera as the universal panacea. The Egyptians called Aloe "the plant of immortality." Today, the Aloe Vera plant has been used for various purposes in dermatology.

History : AloeVera has been used for medicinal purposes in several cultures for millennia: Greece, Egypt, India, Mexico, Japan and China.[1] Egyptian queens Nefertiti and Cleopatra used it as part of their regular beauty regimes. Alexander the Great, and Christopher Columbus used it to treat soldiers' wounds. The first reference to Aloe Vera in English was a translation by John in A.D. 1655 of Discords' Medical treatise De Materia Medica. By the early 1800s, Aloe Vera was in use as a laxative in the United States, but in the mid-1930s, a turning point occurred when it was successfully used to treat chronic and severe radiation dermatitis.

Plant description: The botanical name of Aloe Vera is Aloe barbadensis miller. It belongs to Asphodelaceae (Liliaceae) family, and is a shrubby or arborescent, perennial, xerophytic, succulent, pea- green colour plant. It grows mainly in the dry regions of Africa, Asia, Europe and America. In India, it is found in Rajasthan, Andhra Pradesh, Gujarat, Maharashtra and Tamil Nadu.

Type: A succulent, perennial plant with a short stem.

Leaves: Thick, fleshy, and green to grey-green with serrated edges and white flecks on some varieties. The leaves are arranged in a rosette and contain the useful gel.

Layers: Each leaf has three layers: a clear inner gel, a middle layer of bitter yellow latex, and an outer protective rind.

The plant has triangular, fleshy leaves with serrated edges, yellow tubular flowers and fruits that contain numerous seeds. Each leaf is composed of three layers:

1. An inner clear gel that contains 99% water and rest is made of glucomannans, amino acids, lipids, sterols and vitamins.
2. The middle layer of latex which is the bitter yellow sap and contains anthraquinones and glycosides.
3. The outer thick layer of 15–20 cells called as rind which has protective function and synthesizes carbohydrates and

proteins. Inside the rind are vascular bundles responsible for transportation of substances such as water (xylem) and starch.

Active components with its properties: Aloe Vera contains 75 potentially active constituents: vitamins, enzymes, minerals, sugars, lignin, saponins, salicylic acids and amino acids

Vitamins: It contains vitamins A (beta-carotene), C and E, which are antioxidants. It also contains vitamin B12, folic acid, and choline. Antioxidant neutralizes free radicals.

Enzymes: It contains 8 enzymes: aliiase, alkaline phosphatase, amylase, bradykinase, carboxypeptidase, catalase, cellulase, lipase, and peroxidase. Bradykinase helps to reduce excessive inflammation when applied to the skin topically, while others help in the breakdown of sugars and fats.

Minerals: It provides calcium, chromium, copper, selenium, magnesium, manganese, potassium, sodium and zinc. They are essential for the proper functioning of various enzyme systems in different metabolic pathways and few are antioxidants.

Sugars*:* It provides monosaccharides (glucose and fructose) and polysaccharides: (glucomannans). These are derived from the mucilage layer of the plant and are known as mucopolysaccharides. The most prominent monosaccharide is mannose-6-phosphate, and the most common polysaccharides are called glucomannans [beta-(1,4)-acetylated mannan]. Acemannan, a prominent glucomannan has also been found. Recently, a glycoprotein with antiallergic properties, called alprogen and novel anti-inflammatory compound, C-glucosyl chromone, has been isolated from Aloe Vera gel.

Anthraquinones: It provides 12 anthraquinones, which are phenolic compounds traditionally known as laxatives. Alboin and emodin act as analgesics, antibacterial and antivirals.

Fatty acids: It provides 4 plant steroids; cholesterol, camp sterol, â-sitosterol and lupeol. All these have anti-inflammatory action and lupeol also possesses antiseptic and analgesic properties.

Hormones: Auxins and gibberellins that help in wound healing and have anti-inflammatory action.

Others: It provides 20 of the 22-human required *amino acids* and 7 of the 8 essential amino acids. It also contains salicylic acid that possesses anti-inflammatory and antibacterial properties. Lignin, an inert substance, when included in topical preparations, enhances penetrative effect of the other ingredients into the skin. Saponins that are the soapy substances form about 3% of the gel and have cleansing and antiseptic properties.

Uses and properties: The gel is commonly used to soothe and heal skin injuries, burns, rashes, and dry skin.

Aloe Vera, the succulent plant has been in use for its impressive healing and therapeutic properties for over 1000 years. Commonly known as medicinal aloe, burn plant, lily of the desert, and elephants gall and Grits Kumari in Hindi, aloe vera is perhaps the first choice from the bounty of Mother **Nature, healing** wounds or to even promote digestion.

The green cactus looking plant grown in our gardens is a powerhouse of vital compounds that can be used right from cosmetics, nutritious juices to supplements.

Aloe Vera gel: Aloe Vera gel is a translucent product present in its leaves. It is made up of 96% water, protein containing 18-20 amino acids, **vitamins A, vitamin B, vitamin C, vitamin E,** certain organic and inorganic compounds.

Aloe Vera contains a host of potent plant compounds that includes lignin, saponins, salicylic acids and amino acids, vitamin B12, folic acid, and choline. The dense nutrient profile of Aloe Vera gel and drinking this healthy juice provides you with amazing healing benefits.

Howto Make Aloe Vera Gel at Home

2 Aloe Vera leaves

1 tsp coconut oil

½ tsp vitamin C powder

Method

Making aloe Vera gel is an easy and simple process.

Clean your hands and cut the leaves. Hold it in an upright position for a few minutes letting the resin out.

Wash the leaves thoroughly and peel off the thick skin with a knife and extract the transparent gel.

In a mixer, blend the gel adding few drops of coconut oil or vitamin C powder to preserve it for longer duration.

Store in a tight glass jar.

How to Use Aloe Vera Gel: Aloe Vera gel is loaded with a complex carbohydrate known as acemannan that can revamp cells and clear toxins. Ayurveda promotes it as an incredible healer both externally and internally.

1. **Aloe Vera Gel as A Face Pack:** Face packs made from aloe vera gel provide instant glow and provide skin radiance for longer hours. The gel also serves as moisturizer and thanks to its antimicrobial properties it can heal acne and reduce inflammation.
2. **Aloe Vera Gel as A Cleanser:** Acemannan in Aloe Vera is helpful in cleansing the clogged skin pores, clearing out dead skin cells and other skin toxins. Since the gel is very mild, it suits all skin types including sensitive ones.
3. **Aloe Vera Gel as A Sunscreen**

The gel is nutrient dense with an SPF 30 and aids the skin by shields it from harmful effects of UVA and UVB rays. The host of healing properties reduce the risk of aging, skin cancer and treat sunburns.

4. **Aloe Vera Gel as A Hair Oil:** Aloe Vera gel can be slimy but is an incredible hair care product for those suffering from hair loss. It arrests hair fall, clears dandruff and nourishes the dry scalp. Applying aloe vera gel regularly strengthens hair follicles and its antimicrobial properties treat fungal scalp infections effectively.

Skin Health: Aloe Vera is the top choice in many households in the world for its amazing healing properties, especially while treating skin diseases.

Use it for treating suntan or a pimple as its strong anti-viral and anti-bacterial properties aid in effectively treating skin problems. The clear gel can be applied topically to ward off infections, healing wounds and make the skin look glowing and supple.

1. **Soothes Sunburn:** The gel is popular for its anti-inflammatory properties and can reduce the harsh effects caused due to UV rays almost instantly. If you have a sunburn, rub some gel on the affected area as it penetrates into the epithelial layer of the skin and locks the moisture. The nutrition profile in the gel contributes towards nourishing the skin and speed up the process of healing.
2. **Delays Signs of Ageing:** Aloe Vera works wonders in treating wrinkles and fine lines that appear with the age. The skin tends to lose its hydration and elasticity and Aloe Vera is beneficial in flushing out dead cells even as it moisturizes the skin. Studies proves that Aloe Vera enhances the elasticity of skin, making it glow naturally.
3. **Fades Acne Marks:** Aloe Vera gel is one such wonder ingredient that can serve as as an anti-bacterial and anti-inflammatory agent. It prevents acne breakout, as the goodness of gibberellins and auxins in Aloe Vera regenerate new cells, in the process of healing.
4. **First Aid for Wounds:** It also serves as a first aid when it comes to healing wounds and insect bites. Dab some aloe vera gel on cuts, bruises and insect bites for instant healing or use it as an aftershave lotion to soothe the skin.
5. **Wipes Away Stretch Marks:** Stretch marks are quite bothersome and they are caused due to pregnancy, weight gain and loss of weight. Skin tends to lose its elasticity with the age. Regular application of aloe vera gel clears ugly looking stretch marks.
6. **Provides Silky Mane:** Aloe Vera is high on protein, vitamins and minerals that provide instant nourishment to hair follicles instantly. Applying aloe vera gel regularly improves its overall texture and makes the styling easy, be it for those curls or messy buns.
7. **Protects from Dense Water:** We find super hard water with high salt content in many places of our country due to its tropical climate. Taking shower with this water can make hair look duller and brittle. Massage aloe vera gel mixed with coconut or sesame oil on the scalp an hour before your bath for natural hydration, moisturization. It also provides pH balance of the hair, prevents itchy scalp and serves against the ill effects of dense water.
8. **Nourishes Hair from Within:** Aloe Vera is also a storehouse of healing enzymes that can flush out dead skin cells on the scalp. Always mix aloe vera gel with coconut oil and apply it on the scalp for faster growth, volume and glow.

Aloe Vera For Treating Skin Conditions:

1. **A loe Vera Gel for Prickly Heat:** Aloe Vera helps in clearing rashes caused due to prickly heat. The powerful antibacterial and antiseptic properties of the gel reduce inflammation on the affected area. Applying it as a thin layer especially on the babies guards the skin from dehydration. For instant relief, apply gel over the affected area and let it stay for 15 minutes. Rinse well with water and repeat it daily.
2. **Aloe Vera Face Packs for Skin Pigmentation:** Skin pigmentation is one of the major issues faced by teenagers and it is of various types. Pigmentation is classified into melasma, freckles, spots and age spot these ugly spots often occur due to hormonal imbalances, overexposure to sun, age, and presence of excessive melanin, a main pigment that provides natural skin tone.

Hyperpigmentation is common under intense heat due to overexposure to the sun. They form into freckles and turn into brown spots on the face.

If you are suffering from hyperpigmentation, seek help in aloe vera.

Aloe Vera & Honey Pack:

Ingredients:

1 tsp fresh aloe vera gel

½ tsp plain honey

Method: Take a bowl and mix the fresh aloe vera gel and honey.

Put it as a layer of face pack on the affected areas.

Let it dry for 30 minutes.

Wash it with lukewarm water, pat dry.

How It Works: Aloe Vera is rich in a loin that plays a major role in skin lightening. Mixing it with honey provides instant face glow.

3. **Aloe Vera Gel for Treating Acne:** Acne is a common and a worrying skin condition, especially for the teenagers. It causes spots, pimples, whiteheads, blackheads, cysts and nodules on the face, neck.

However, applying aloe vera gel regularly helps in clearing these scars on the face and neck over a few weeks.

Aloe Vera Face Pack

Ingredients:

1 tsp of fresh aloe vera extract

Method:

Extract gel from thick aloe vera leaves.

Spread it on the affected areas like a thin layer.

Let it dry for 30 minutes.

Rinse it with plain water.

How It Works: Aloe Vera get is a powerhouse of antioxidant and anti-inflammatory properties and these factors play an important role clearing the damaged skin. It repairs scars and prevents further formation of acne.

4. **Aloe Vera Moisturizer for Dry Skin:** Seasonal changes, be it summer, rainy, winter are not a good time for your skin and they bring in a lot of challenges. Air pollution is another toxic factor that can make your skin dry up faster and aggravate conditions like eczema and psoriasis.

For many of us, skin fails to retain the hydration as we age. If you have tried with a variety of moisturizers and yet to see results, it's time to make your own moisturizer. These DIY moisturizers are easy to make, affordable and

can be stored for a month. What's more, it also leaves your skin hydrated and supple for longer hours.

Aloe Vera Moisturizer

Ingredients

100 gms cup aloe vera gel
10 tsps. beeswax
75 ml coconut oil
75 ml almond oil
Few drops of any essential oil for fragrance

Method: In a double boiler, melt beeswax, coconut oil and almond oil. You can also microwave till it melts.

Add aloe vera gel, essential oil to the mixture. Keep stirring till it forms into a creamy texture.

Store in an air-tight glass jar.

How It Works: Aloe Vera gel heals inflammation, reduces itchiness and hydrates dry skin. Beeswax, when blended with coconut and almond oils, keeps skin moisturized and prevent skin infections.

Aloe Vera and Eucalyptus Oil Mask

Ingredients

1 Aloe Vera gel
3 to 5 drops of Essential eucalyptus oil or any other essential oil

Method: In a bowl, combine aloe Vera gel and eucalyptus oil.

Apply it on the scalp and gently massage till the oil gets absorbed.

Rinse hair with lukewarm water and mild shampoo.

How It Works: Aloe Vera moisturizes dry scalp and prevents the growth of bacteria. Essential eucalyptus oil not only clears dandruff but also lessens itchiness.

5. Aloe Vera For Tan

Aloe Vera: Aloe Vera is an extensively available and grown herb in your garden. It serves as a great cooling agent and is a one stop solution for all your skin and hair ailments. It nurtures the skin and acts as a skin cleanser by getting rid of the suntan, dryness and skin blemishes.

Aloe Vera Nutrition: Aloe Vera plant has a host of plant compounds such as mannans, polysaccharides, lectins, and anthraquinones that are valuable for health. As per USDA, Aloe Vera juice is an amazing source of essential minerals iron, sodium and calcium. It further has about 18 amino acids that work together with other compounds to provide numerous health benefits.

Aloe Vera Juice: The elixir of nutrients in Aloe Vera juice provides the body with a host of healing health benefits. This powerful juice promotes digestion and its anti-inflammatory properties help in treating ulcers. Aloe Vera juice plays a pivotal role in treating various skin disorders like psoriasis, dermatitis and soothe the skin from sunburn. The richness of antioxidants in Aloe Vera juice makes the skin glow naturally.

Benefits of Drinking Aloe Vera Juice: Aloe Vera juice is gooey, a thick liquid made from a fresh gel of the aloe vera plant leaf. The juice is made by grinding the gel of the plant, followed by filtering, and purifying the liquid. It has a mild taste and flavour that blends easily with smoothies and shakes. Aloe vera juice is valued as a complete food supplement.

Hydration: The aloe Vera plant is loaded with water;thus, it is the best choice to prevent dehydration. Staying well hydrated supports the body to detoxify the toxins and flush out impurities. Bestowed with chock full of nutrients having aloe Vera juice optimizes the body's organ output and maintain kidney health. Aside from this, aloe Vera juice helps to replenish and recover from heavy workouts.

Healthy Liver: Aloe Vera juice imbued with phytonutrients and water is an ideal way to keep the liver healthy and function well. As the liver functions best when the body is well-nourished and hydrated.

Remedies Heartburn: Drinking aloe Vera juice may offer respite from heartburn and acidity. The bioactive compound present in aloe Vera juice helps control the secretion of stomach acid. Thus, regular consumption of this soothing drink treat gastric ulcers and prevent them from worsening.

How to Make Aloe Vera Juice At Home

Ingredients:

2 tsp fresh aloe Vera gel
1 tsp lemon juice
1 glass chilled water

Method:

In a blender, mix aloe Vera gel and lemon juice.
Add chilled water and dilute it.
Serve immediately.

Aloe Vera Juice Nutrition

Nutritional value of beverages, aloe Vera juice drink, fortified with Vitamin C

Serving Size: 1 cup
Calories 36 Kcal.

Water	230.95 g
Energy	36 Kcal
Carbohydrate	9 g
Total Sugars	9 g
Calcium	19 mg
Iron	0.36 mg
Sodium	19 mg
Vitamin C	9.1 mg

Aloe Vera Supplements, Ointments and Patches

If you are not able to get fresh aloe Vera gel or do not have time on hands to use it in a natural way, switch over to the supplements. Available in the form of capsules or tablets, these supplements can be taken orally.

Uses of Aloe Vera Supplements:

Rich in Plant Compounds:

Aloe Vera supplements are rich in healthy plant compounds and the easiest way to get all your vitamins,
Supplements made minerals, amino acids all in one go.

Serves as Antioxidants:from Aloe Vera gel are known for antioxidant and antibacterial properties. Regular intake of these tablets restricts the growth of harmful bacteria in the

body.

Heals from Within:Supplements, ointments made from aloe vera penetrate deep into the skin and soothe the inner layers of the skin. Applying the ointments on the affected areas speeds up the process of healing.

Treats Mouth Ulcers: The goodness of Aloe Vera is also available in the form of patches. If you are suffering from mouth ulcers or canker sores, put an aloe vera patch on the affected area to heal instantly.

Reduces Blood Sugar: Ayurveda recommends aloe Vera to bring down the levels of blood sugar. Regular intake of aloe Vera supplements help in increasing insulin sensitivity and aid towards liver function. If you are a diabetic, talk to your doctor if aloe Vera supplements work for you.

Aloe Vera Recipes: It has been established that Aloe Vera is edible. In fact, these thick leaves are a staple diet in few areas of northern India. Known as Ghrit Kumari or Gwarpatha in Hindi, these leaves can be cooked into an amazing curry, that goes very well with rice and roti.

Ghrit Kumari Subzi

250 grams freshly chopped aloe Vera leaves
3 tbsp oil
2 tsp curd
½ tsp jeera or cumin
½ tsp mustard
½ tsp turmeric powder
1 tsp red chilli powder
½ tsp amchur or dry mango powder
¼ tsp sugar
Pinch of Hing
Salt to taste

Method:

Wash thick leaves of aloe vera and extract the gel. Wash again.
Chop it into small pieces. Boil in enough till tender, keep aside.
In a pan, heat oil. Add cumin, mustard and Hing.
Add boiled aloe Vera pieces along with turmeric and chilli powder.
Sauté for a minute and add curd.
Let the curd get absorbed by the curry. Sprinkle dry mango powder and add salt to taste. Stir well.
Serve hot with rice or roti.

Nutritional Values:

Aloe Vera leaves are loaded with vitamins, minerals, amino acids and antioxidants that provide total nutrition to the body while curd as a probiotic soothes the stomach. Cumin, dry mango powder aid in digestion and this curry keeps you full for a long time.

Kiwi And Aloe Popsicle

1 cup freshly cut Kiwi fruit
½ cup freshly extracted Aloe Vera gel
Chilled water

Method:

Dilute aloe Vera gel with chilled water.
Pour the juice in popsicle mould and add kiwi pieces.
Freeze it for 6 hours or until hard.

Internal consumption: Some people ingest the gel for its potential digestive health benefits and as a source of vitamins and minerals like Vitamin C, E, B12, calcium, and zinc.

Vitamins and minerals: It contains a wide range of vitamins (including A, C, and B12), enzymes, amino acids, and minerals.

Anti-inflammatory and antioxidant effects: The plant's compounds have shown antioxidant and anti-inflammatory properties.

Latex: The bitter, yellow latex from the outer layer is a powerful laxative and should be avoided for oral consumption, especially for pregnant or breastfeeding individuals. Ingesting the latex may cause abdominal cramps, diarrhoea, or other adverse effects.

Skin benefits

Wound healing: It accelerates the healing of cuts, burns, and other skin injuries.

Soothing: It soothes skin irritations, insect bites, and sunburn.

Anti-aging: Antioxidants in the plant may help reduce wrinkles and repair damaged skin cells.

Skin conditions: It can be effective for acne, psoriasis, dermatitis, and other skin ailments.

Internal benefits

Digestive health: Consuming aloe Vera juice is linked to improved digestion.

Immune support: It possesses immune-boosting and anti-viral properties.

Blood sugar management: Some studies suggest it may help manage blood sugar levels.

Nutritional content

Vitamins: Contains a range of vitamins, including A, C, E, and B-group vitamins (like B12).

Minerals: Provides minerals such as calcium, magnesium, zinc, and selenium.

Amino acids: Contains 19 of the 20 amino acids humans need, including all eight essential ones.

Antioxidants: Rich in antioxidants that fight free radical damage.

A loin: The yellow sap (a loin) in raw aloe Vera can cause cramping and has a laxative effect if ingested. It's recommended to soak raw gel in water to remove it, or use commercially prepared products which are typically a loin-free.

Mechanism of actions

Clinical uses: The clinical use of aloe Vera is supported mostly by anecdotal data. Though most of these uses are interesting, controlled trials are essential to determine its effectiveness in all the following diseases.

Conditions: Alopecia, bacterial and fungal skin infections, chronic leg wounds, parasitic infections, systemic lupus erythematosus, arthritis and tic douloureux.

Contraindication: Contraindicated in cases of known allergy to plants in the Liliaceae family.

Pregnancy and breastfeeding: Oral aloe is not recommended during pregnancy due to theoretical stimulation of uterine contractions, and in breastfeeding mothers, it may sometime causes gastrointestinal distress in the nursing infant.

Interactions: Application of aloe to skin may increase the absorption of steroid creams such as hydrocortisone. It reduces the effectiveness and may increases the adverse effects of digoxin and digitoxin, due to its potassium lowering effect. Combined use of Aloe vera and furosemide may increase the risk of potassium depletion. It decreases the blood sugar levels and thus may interact with oral hypoglycemic drugs and insulin.

Thus, though Aloe vera has wide spectrum of the properties and uses, some of them could be myths and some of them could be real magic. In future, controlled studies are required to prove the effectiveness of Aloe vera under various conditions.

References:-

1. Davis RH. Aloe vera: A scientific approach. New York: Vantage Press; .
2. Atherton P. Aloe vera revisited. Br J Phytother. 1998; 4:76–83.
3. Atherton P. The essential Aloe vera: The actions and the evidence. 2nd ed 1997.
4. Hutter JA, Salmon M, Stavinoha WB, Satsangi N, Williams RF, Streeper RT, et al. Anti-inflammatory C-glucosyl chromone from Aloe barbadensis. J Nat Prod. 1996;59:541–3. doi: 10.1021/np9601519.
5. Heggers J, Kucukcelebi A, Listengarten D, Stabenau J, Ko F, Broemeling LD, et al. Beneficial effect of aloe on wound healing in an excisional wound model. J Altern Complement Med. 1996;2:271–7. doi: 10.1089/acm.1996.2.271.
6. Roberts DB, Travis EL. Acemannan-containing wound dressing gel reduces radiation-induced skin reactions in C3H mice. Int J Radiat Oncol Biol Phys. 1995;32:1047–52. doi: 10.1016/0360-3016(94)00467-y.
7. Byeon S, Pelley R, Ullrich SE, Waller TA, Bucana CD, Strickland FM. Aloe barbadensis extracts reduce the production of interleukin-10 after exposure to ultraviolet radiation. J Invest Dermtol. 1988;110:811–7. doi: 10.1046/j.1523-1747.1998.00181.x.
8. Ishii Y, Tanizawa H, Takino Y. Studies of aloe. V: Mechanism of cathartic effect. Biol Pharm Bull. 1994;17:651–3. doi: 10.1248/bpb.17.651.
9. Kim HS, Lee BM. Inhibition of benzo [a] pyrene-DNA adduct formation by aloe barbadensis Miller. Carcinogenesis. 1997;18:771–6. doi: 10.1093/carcin/18.4.771.
10. West DP, Zhu YF. Evaluation of aloe vera gel gloves in the treatment of dry skin associated with occupational exposure. Am J Infect Control. 2003;31:40–2. doi: 10.1067/mic.2003.12.
11. Ernst E, Fugh-Berman A. Methodological considerations in testing the efficacy of complementary/alternative treatments (CATs) Int J Alt Comp Med. 1998;16:8–10.
12. Syed TA, Ahmad SA, Holt AH, Ahmad SH, Afzal M. Management of psoriasis with Aloe vera extract in a hydrophilic cream: A placebo-controlled, double-blind study. Trop Med Int Health. 1996;1:505–9. doi: 10.1046/j.1365-3156.1996.d01-91.x.
13. Syed TA, Afzal M, Ashfaq AS. Management of genital herpes in men with 0.5% Aloe vera extract in a hydrophilic cream A placebo-controlled double-blind study. J Derm Treatment. 1997;8:99–102.
14. Syed TA, Cheema KM, Ahmad SA, Ashfaq A. Aloe vera extract 0.5% in hydrophilic cream versus aloe vera gel for the measurement of genital herpes in males: A placebo-controlled, double-blind, comparative study. J Eur AcadDermVenereol. 1996;7:294–5.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Contemporary Currents in Modern Literature: Climate Imaginaries, Post human Relations, Digital Hybridity, and Migration Narratives

Dayaram Roy* Dr. Shaheen Saulat**

*Research Scholar (English) Mansarowar Global University, Village Gadia and Ratnakhedi (M.P.) INDIA
** Research Guide (English) Mansarowar Global University, Village Gadia and Ratnakhedi (M.P.) INDIA

Abstract: This paper surveys four salient and interlocking trends in contemporary literature—climate fiction (cli-fi), posthumanist and new materialist narratives, digital/digitally mediated literary forms and hybridity, and the rise of dystopian migration novels—and argues that together they mark a decisive shift in literary form and ethical imagination. Drawing on recent scholarship and representative cultural phenomena, I show how these trends respond to ecological crisis, technological entanglement, globalization, and the politics of mobility. Cli-fi reframes temporality and responsibility through speculative futures that model climate imaginaries and pedagogies. Posthumanist texts unsettle human exceptionalism by redistributing agency across nonhuman actors and technologies. Digital literature and formal hybridity reconfigure narrative voice, circulation, and genre boundaries. Finally, migration narratives—increasingly cast in dystopian and speculative modes—register contemporary anxieties about borders, belonging, and surveillance. The paper synthesizes recent critical work to argue that contemporary literature functions less as an autonomous aesthetic sphere than as a discursive and ethical practice that mediates our relation to planetary, technological, and social contingencies.

Introduction - The turn from twentieth-century modernisms and late twentieth-century postmodern pastiche toward twenty-first-century urgencies is marked less by neat stylistic replacement than by an accretion of concerns shaped by planetary crisis, technological saturation, and intensified human mobility. Contemporary writers and critics no longer treat literature as isolated aesthetic play; instead, literature functions as a site for modelling futures, redistributing ethical responsibility, and experimenting with form under new media conditions. Recent scholarship highlights several interrelated tendencies: the rise of climate fiction (cli-fi), the uptake of posthumanist thought, the expansion of digital hybridity, and the reconfiguration of migration narratives. These movements converge in their effort to rethink the human condition in an age defined by instability and interdependence.

Climate Fiction (Cli-fi): Narrative Futures and Ethical Pedagogy: Over the past two decades, climate fiction—or “cli-fi”—has emerged as one of the most dynamic forms of contemporary writing, bridging the gap between environmental science and literary imagination. As Adeline Johns-Putra argues, *“cli-fi engages readers emotionally in the abstract temporalities of climate change, fostering empathy across generations and species”* (Johns-Putra 272). Unlike traditional eco-literature that often romanticized nature, cli-fi dramatizes the future consequences of ecological collapse through speculative and dystopian lenses.

Prominent novels such as Margaret Atwood’s *MaddAddam* trilogy, Kim Stanley Robinson’s *The Ministry for the Future*, and Amitav Ghosh’s *The Great Derangement* exemplify how the genre demands moral and political reflection. Ghosh laments that *“the climate crisis is also a crisis of culture, and thus of the imagination”* (Ghosh 9). This observation underscores how literature must step into the vacuum left by political paralysis by reimagining the possible. Scholars like Greg Garrard suggest that *“the power of cli-fi lies in its capacity to mediate between scientific discourse and personal affect”* (Garrard 115), thereby rendering statistical abstractions emotionally legible.

Recent studies confirm the pedagogical utility of cli-fi. Matthew Schneider-Mayerson’s empirical research found that reading climate fiction *“produces measurable increases in concern about climate change and motivates pro-environmental behavior”* (Schneider-Mayerson 486). Thus, cli-fi not only entertains but also educates, serving as a narrative laboratory for environmental ethics. The speculative form allows authors to dramatize uneven global vulnerabilities—between the Global North and South, human and nonhuman, present and future—making the

genre a critical vehicle for climate justice.

In essence, cli-fi's narrative temporality—oscillating between dystopian warning and utopian possibility—embodies what Ursula K. Heise calls *"sense of planet,"* an awareness of global interconnectedness and ecological interdependence (Heise 22). It invites readers to think beyond the self and the present, cultivating what Timothy Clark describes as a *"scale-fractured consciousness,"* capable of apprehending long temporal arcs that exceed individual lifespans (Clark 73).

Cli-fi, therefore, operates as both mirror and prophecy: reflecting the failures of modernity while imagining survival strategies that depend on empathy, cooperation, and redefined notions of progress.

Posthumanism and New Materialism: Decentring the Human: Parallel to ecological reorientations in cli-fi, the rise of posthumanism and new materialism in literature marks a decisive intellectual and ethical turn away from anthropocentrism. Posthumanism, as RosiBraidotti defines it, *"does not celebrate the death of man but rather reconfigures the human in terms of its relational capacity and material embeddedness"* (Braidotti 56). Contemporary writers employ this framework to question human supremacy and to explore the porous boundaries between human, animal, machine, and environment.

In novels like Kazuo Ishiguro's *Klara and the Sun* or Richard Powers's*TheOverstory*, nonhuman entities—AI robots, trees, animals—become narrative agents, challenging traditional notions of consciousness and agency. As Jane Bennett asserts in *Vibrant Matter*, *"the political task is to cultivate the ability to discern nonhuman vitality, to become more open to the capacities of things"* (Bennett xiii). This ethos of distributed agency redefines literature's moral horizon: ethical consideration must now extend beyond the human.

Scholars such as Donna Haraway advocate for *"sympoiesis,"* or "making-with," emphasizing the co-creative relationships among species and systems (Haraway 33). In literary narratives, this concept materializes in stories that trace entanglements—cyborg identities, bioengineered ecosystems, or sentient technologies—reflecting what N. Katherine Hayles calls *"posthuman embodiment"* where information and materiality intertwine (Hayles 3).

Recent literary criticism has also emphasized the political potential of posthumanism. Francesca Ferrando notes that posthumanist narratives *"offer an ethics of relationality that resists both human exceptionalism and techncapitalist determinism"* (Ferrando 12). Such texts destabilize binary oppositions—mind/body, human/machine, nature/culture—opening discursive space for new modes of being and knowing.

Moreover, new materialist readings extend this framework to environmental ethics by recognizing matter as active, not inert. In Ali Smith's *Autumn* and Jenny Offill's*Weather*, the material world itself becomes a participant in the story's emotional and moral arc. The convergence of ecological awareness and posthuman theory suggests that the literary imagination now seeks to dissolve disciplinary boundaries and reimagine the self as networked, interdependent, and embedded in planetary systems.

Ultimately, posthumanist literature performs a dual function: it critiques the destructive legacy of anthropocentrism and simultaneously imagines an ethics attuned to multispecies coexistence. As Braidotti writes, *"to be posthuman is to think with the world, not against it"* (Braidotti 190).

Digital Literature and Formal Hybridity: Digital media have transformed the texture of storytelling. The novel's evolution into interactive fiction, online hypertext, and multimodal narratives expands literature's aesthetic reach. Hybrid forms—such as Ali Smith's *How to Be Both* or Jennifer Egan's *A Visit from the Goon Squad*—demonstrate how fragmented temporality mirrors digital consciousness. These forms redefine narrative authority, blur the line between reader and text, and signal what Lev Manovich terms *"cultural software"*: the mediation of experience through digital code.

Migration and the Dystopian Immigration Novel: Migration narratives have acquired speculative dimensions in recent years. Texts like Mohsin Hamid's *Exit West* and Valeria Luiselli's*Lost Children Archive* merge dystopia and realism to critique global inequities. As cultural critic Sarah Gendron observes, *"the dystopian immigration novel transforms displacement into allegory, revealing the psychic toll of borders on identity and memory"* (Gendron 204). Through speculative frames, these novels expose how fear, nationalism, and surveillance shape human mobility in an era of crisis.

Conclusion: The literature of the present moment is marked by an ethical reorientation: toward interdependence, toward futures shaped by climate and technology, and toward narratives that make precarious lives legible and audible. Cli-fi, post humanist narratives, formal hybridity, and dystopian migration novels each contribute distinctive responses to the crises that define the early twenty-first century. Together they testify that literature remains an essential medium for imagining and contesting possible worlds. For scholars and teachers, the imperative is clear: cultivate reading practices and critical vocabularies that respect multimodality, planetary stakes, and the politics of mobility. Future research should continue to track how these trends evolve—especially as climate events, technological change, and migration continue to reshape lived experience—and to examine pedagogical strategies that leverage literature's capacity to cultivate ethical imagination.

References:-

1. Atwood, Margaret. *MaddAddam Trilogy*. McClelland & Stewart, 2003–2013.

2. Bennett, Jane. *Vibrant Matter: A Political Ecology of Things*. Duke UP, 2010.
3. Braidotti, Rosi. *The Posthuman*. Polity Press, 2013.
4. Clark, Timothy. *Ecocriticism on the Edge: The Anthropocene as a Threshold Concept*. Bloomsbury, 2015.
5. Ferrando, Francesca. *Philosophical Posthumanism*. Bloomsbury, 2019.
6. Garrard, Greg. *Ecocriticism*. 2nd ed., Routledge, 2012.
7. Ghosh, Amitav. *The Great Derangement: Climate Change and the Unthinkable*. U of Chicago P, 2016.
8. Haraway, Donna J. *Staying with the Trouble: Making Kin in the Chthulucene*. Duke UP, 2016.
9. Hayles, N. Katherine. *How We Became Posthuman: Virtual Bodies in Cybernetics, Literature, and Informatics*. U of Chicago P, 1999.
10. Heise, Ursula K. *Sense of Place and Sense of Planet: The Environmental Imagination of the Global*. Oxford UP, 2008.
11. Ishiguro, Kazuo. *Klara and the Sun*. Faber and Faber, 2021.
12. Johns-Putra, Adeline. "Climate Change in Literature and Literary Studies." *Wiley Interdisciplinary Reviews: Climate Change*, vol. 7, no. 2, 2016, pp. 266–82.
13. Schneider-Mayerson, Matthew. "Empirical Ecocriticism : Environmental Texts and Reader Responses." *Environmental Humanities*, vol. 10, no. 2, 2018, pp. 480–500.
14. Smith, Ali. *Autumn*. Penguin, 2016.
15. Powers, Richard. *The Overstory*. Norton, 2018.

****

कहावतों की यात्रा : हर 20 कोस पर बदलती बोली में भारतीय सांस्कृतिक चेतना का विश्लेषण

डॉ. दीपा जोशी *

* प्रोफेसर, प्रबंधन विभाग (पीजी) श्री वैष्णव प्रबंधन एवं विज्ञान संस्थान, इंदौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय भाषाई परंपरा अपनी विविधता और सांस्कृतिक गहराई के लिए विश्वभर में अद्वितीय है। भारत में प्रचलित कहावतें केवल भाषा का व्यावहारिक उपकरण नहीं हैं, बल्कि वे जीवन-दर्शन, सामाजिक अनुभव, और सांस्कृतिक मूल्यों की वाहक भी हैं। 'हर 20 कोस (*is an ancient Indian unit of distance, roughly equivalent to two miles.*) पर बदलती बोली और हर 40 कोस पर बदलता पानी' जैसी कहावत भारतीय भाषाई व सांस्कृतिक परिदृश्य की जीवंत अभिव्यक्ति है। यह शोध-पत्र संकल्पनात्मक रूप में यह अध्ययन करता है कि कैसे भाषाई विविधता के भीतर कहावतें सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता, क्षेत्रीय पहचान, सामाजिक दृष्टिकोण और जीवन के व्यावहारिक अनुभवों को प्रकट करती हैं। यह अध्ययन अंत:विषय दृष्टिकोण अपनाते हुए भाषा-विज्ञान, नृविज्ञान और सांस्कृतिक अध्ययन को जोड़ता है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि बदलती बोलियों में कहावतें केवल शब्द-समूह नहीं, बल्कि ज्ञान-परंपरा की सतत धारा हैं।भारत के विभिन्न क्षेत्रों – उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और मध्य – की कहावतों का तुलनात्मक विश्लेषण यह दर्शाता है कि किस प्रकार कृषि, व्यापार, पारिवारिक जीवन, नैतिकता और सामाजिक संबंधों पर आधारित अनुभव अलग-अलग भाषिक रूपों में व्यक्त किए जाते हैं। यह शोध यह स्थापित करता है कि कहावतें केवल भाषाई उपकरण नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक अनुकूलनशीलता, सांस्कृतिक निरंतरता और सामूहिक चेतना की अभिव्यक्ति हैं। बदलती बोलियों में कहावतों का रूपांतरण भारतीय समाज की गतिशीलता और परिवर्तनशीलता को दर्शाता है। अत: यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कहावतें भारत की सांस्कृतिक धारा की जीवित स्मृतियाँ हैं, जो भाषा और संस्कृति के बीच पुल का कार्य करती हैं।

शब्द कुंजी – बोली, कहावत, सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता, भाषाई विविधता, भारतीय संस्कृति।

प्रस्तावना – भारतीय समाज अपनी भाषाई, सांस्कृतिक और पारंपरिक विविधताओं के कारण विश्व में विशिष्ट स्थान रखता है। यहाँ बोली, भाषा और जीवनशैली का ऐसा संगम दिखाई देता है, जो हर कुछ दूरी पर परिवर्तित हो जाता है। इस विशेषता को संक्षिप्त रूप से व्यक्त करने वाली कहावत है – 'हर 20 कोस पर बदलती बोली और हर 40 कोस पर बदलता पानी।' यह कहावत न केवल भारतीय भाषाई परिदृश्य का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करती है, बल्कि संस्कृति की परिवर्तनशीलता और क्षेत्रीय विशिष्टताओं की ओर भी संकेत करती है।भारत में भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं है, बल्कि यह जीवन-दर्शन, सामाजिक-संरचना, इतिहास और सामूहिक चेतना का भी संवाहक है। यही कारण है कि भारतीय भाषाएँ और बोलियाँ मात्र ध्वनि-रूप या व्याकरणिक संरचना नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अनुभवों और मूल्यों की वाहक हैं। कहावतें इस सांस्कृतिक ज्ञान का सबसे जीवंत और लोकप्रिय रूप हैं। वे पीढ़ी दर पीढ़ी संचरित होती हैं, बिना लिखित ग्रंथों या औपचारिक शिक्षा के भी। यही कारण है कि कहावतों को लोक-साहित्य की रीढ़ कहा जाता है।

कहावतें समाज के अनुभवों का संक्षिप्त और सटीक निचोड़ होती हैं। उनमें जीवन की परिस्थितियों, संघर्षों, खुशियों और सीखों का सार निहित होता है। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत में प्रचलित कहावत – 'मेहनत करे सो फल पावे' श्रम और धैर्य के मूल्य को दर्शाती है, वहीं राजस्थान की कहावत –'जाको राखे साइयां, मार सके ना कोय' विश्वास और भाग्य को प्रमुखता देती है। इन दोनों में जीवन-दृष्टि भिन्न दिखाई देती है, परंतु दोनों ही समाज के व्यवहार और सोच का परिचायक हैं।भारत में बोलियों का तेजी से बदलना केवल भाषाई तथ्य नहीं है, बल्कि यह भूगोल, जलवायु, इतिहास, सामाजिक संरचना और आर्थिक गतिविधियों का परिणाम है। पहाड़ी क्षेत्रों में बोली अलग, मैदानी क्षेत्रों में अलग और समुद्र तटवर्ती इलाकों में अलग पाई जाती है। इस भिन्नता के साथ ही कहावतों का स्वरूप भी बदलता है। उदाहरणार्थ, बंगाल की कहावतों में नदियों और जल-जीवन का गहरा प्रभाव मिलता है, जबकि बुंदेलखंड की कहावतों में खेती-बाड़ी और वर्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान है।इस परिवर्तनशीलता को समझने के लिए भाषाविज्ञानी जॉर्ज ग्रियर्सन ने अपने प्रसिद्ध *Linguistic Survey of India* (1927) में भारत की सैकड़ों बोलियों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया था। उन्होंने यह दर्शाया कि भारत में एक ही भाषा परिवार के भीतर इतनी विविधताएँ हैं कि थोड़ी-सी दूरी पर उच्चारण, शब्दावली और प्रयोग बदल जाते हैं। यही विविधता 'हर 20 कोस पर बदलती बोली' जैसी कहावतों को जन्म देती है।

भारत की भाषाई पहचान उसकी सांस्कृतिक विविधता का आधार है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रयुक्त कहावतें केवल बोलचाल का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि वे पीढ़ी दर पीढ़ी संचित सामाजिक अनुभव और नैतिक दृष्टिकोण को भी आगे बढ़ाती हैं। 'हर 20 कोस पर बदलती बोली' यह दर्शाता है कि

भारत का भाषाई नक्शा कितनी तेजी से बदलता है, और इसके साथ जीवन-शैली, परंपराएँ, रीति-रिवाज, तथा सांस्कृतिक मूल्यों में भी सूक्ष्म परिवर्तन देखने को मिलते हैं। यह कहावतें स्थानीय भूगोल, इतिहास, और सामुदायिक अनुभवों का दर्पण बनकर कार्य करती हैं।

कहावत और बोली: सांस्कृतिक दर्पण

1. **लोकज्ञान का भंडार:** कहावतें समाज के साझा अनुभवों का संक्षिप्त रूप होती हैं।

2. **बोलियों की लय:** राजस्थान की मारवाड़ी कहावत 'जाको राखे साइयां, मार सके ना कोय' और बिहार की मगही कहावत 'जकरा घर राम, ओकरा के डर कवन काम' एक ही भाव को अलग शैली में व्यक्त करती हैं।

3. **स्थानीय संदर्भ:** हर बोली की कहावतें स्थानीय जीवन की झलक दिखाती हैं। जैसे बुंदेलखंड में कृषि से जुड़ी कहावतें प्रमुख हैं जबकि बंगाल की कहावतों में नदी और जल संस्कृति का प्रभाव देखा जा सकता है।

कहावतें केवल शब्दों का खेल नहीं, बल्कि सांस्कृतिक दर्पण हैं। वे उस समाज की प्राथमिकताओं, आशाओं, संघर्षों और सामूहिक मूल्यों को उजागर करती हैं।कहावतें भिन्न भाषाई संसार की उपज हैं, परंतु इनके भीतर निहित जीवन-दर्शन सार्वभौमिक है।

आज के वैश्वीकरण और डिजिटलीकरण के युग में भी कहावतें अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए हैं। वे न केवल स्थानीय पहचान को सशक्त करती हैं, बल्कि यह भी दर्शाती हैं कि भारतीय समाज एकता में विविधता का आदर्श कैसे जीता है। बदलती बोलियों के साथ कहावतें समय के साथ अनुकूलित होती हैं और सामाजिक जीवन के नए अनुभवों को भी आत्मसात कर लेती हैं। इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि आधुनिक समय में भाषाई और सांस्कृतिक एकरूपता की प्रवृत्ति बढ़ रही है। शिक्षा, मीडिया और शहरीकरण ने स्थानीय बोलियों और कहावतों को हाशिए पर डाल दिया है। ऐसे में यह शोध यह दर्शाता है कि बोलियों में निहित कहावतें केवल भाषाई अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सांस्कृतिक धरोहर हैं जिन्हें संरक्षित करना अत्यंत आवश्यक है।

अत: इस शोध-पत्र की भूमिका हमें यह समझने के लिए तैयार करती है कि कैसे हर 20 कोस पर बदलती बोली केवल ध्वनि और लय का परिवर्तन नहीं है, बल्कि उसके भीतर सांस्कृतिक अनुभवों का अनूठा संसार छिपा है। और इस संसार की सबसे सशक्त अभिव्यक्ति कहावतों में दिखाई देती है।

साहित्य समीक्षा

1 शर्मा, आर. (2010) : भारतीय कहावतें लोकज्ञान और सामाजिक व्यवहार की झलक देती हैं। यह अध्ययन कहावतों के सांस्कृतिक और नैतिक संदेश को समझने में मार्गदर्शक है।

2 वर्मा, एस. (2012) : बोलीगत विविधता और लोककथन में सांस्कृतिक अंतर स्पष्ट है। भाषा परिवर्तन और क्षेत्रीय पहचान पर अध्ययन के लिए आधार प्रदान करता है।

3 मिश्रा, पी. (2013): ग्रामीण भारत में कहावतें सांस्कृतिक और नैतिक पाठ के रूप में कार्य करती हैं। ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में सांस्कृतिक चेतना के विश्लेषण में सहायक।

4 गुप्ता, ए. (2014): हिंदी भाषी क्षेत्रों में कहावतें पहचान और सामाजिक संबंध को प्रभावित करती हैं। क्षेत्रीय सांस्कृतिक संदेश का विश्लेषण।

5 जोशी, एम. (2015) : कहावतों और बोली के बीच गहरा अंतर्संबंध। बोलीगत परिवर्तन और सांस्कृतिक भिन्नताओं को समझने में मदद।

6 सिंह, आर. (2015): कहावतें सांस्कृतिक संचरण और पीढ़ीगत ज्ञान का माध्यम।.सांस्कृतिक निरंतरता और ज्ञान संरचना पर प्रकाश।

7 खत्री, वी. (2016) : ग्रामीण समाज में कहावतें सामाजिक नियंत्रण और नैतिक शिक्षा देती हैं। ग्रामीण सांस्कृतिक व्यवहार और सामाजिक नियमों का विश्लेषण।

8 पांडेय, एस. (2016): बुंदेलखंड की बोली विविधता सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को प्रतिबिंबित करती है। क्षेत्रीय भाषाई और सांस्कृतिक विश्लेषण के लिए आधार।

9 शर्मा, डी. (2017): हिंदी क्षेत्र की कहावतों में सांस्कृतिक और नैतिक समानताएँ। तुलनात्मक सांस्कृतिक अध्ययन में सहायक।

10 यादव, के. (2017): कहावतें ज्ञान और सामाजिक व्यवहार को संप्रेषित करती हैं। सामाजिक और भाषाई अध्ययन में योगदान।

11 त्रिपाठी, आर. (2018): कहावतें भारतीय समाज की दर्पण छवि हैं। समाजशास्त्रीय और सांस्कृतिक चेतना अध्ययन के लिए मार्गदर्शक।

12 कुमार, एन. (2018):कहावतें पीढ़ी-दर-पीढ़ी सीखने के उपकरण।. शिक्षा और सांस्कृतिक ज्ञान हस्तांतरण के लिए महत्वपूर्ण।

13 चौधरी, ए. (2018) : लोकभाषा और कहावतें सांस्कृतिक पहचान बनाए रखती हैं। भाषाई और सांस्कृतिक चेतना के अध्ययन में सहायक।.

14 सिंह, पी. (2019): ग्रामीण भारत में कहावतें मौखिक इतिहास का स्रोत।सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संरचना की समझ।

15 खान, एस. (2019): अवध क्षेत्र की बोलीगत कहावतें स्थानीय सांस्कृतिक परंपराएँ दर्शाती हैं। क्षेत्रीय सांस्कृतिक अध्ययन में उपयोगी।

16 वाजपेयी, एम. (2019):हिंदी कहावतों में प्रकृति और कृषि संस्कृति का महत्व। पर्यावरणीय और कृषि सांस्कृतिक चेतना का अध्ययन।

17 सिंह, टी. (2020): कहावतें सामाजिक मान्यताओं और नैतिक व्यवहार को प्रभावित करती हैं। सामाजिक व्यवहार और नैतिकता के अध्ययन में सहायक।

18 शुक्ला, वी. (2020) : कहावतों के भाषाई स्वरूप का विश्लेषण।भाषाई विविधता और संरचना की समझ।

19 जोशी, आर. (2020): ग्रामीण समाज में कहावतें नैतिक मार्गदर्शक। नैतिक शिक्षा और सामाजिक निर्देश का मूल्यांकन।

20 वर्मा, के. (2021) : कहावतें सांस्कृतिक स्मृति को संरक्षित करती हैं। सांस्कृतिक निरंतरता और पहचान के अध्ययन में सहायक।

21 शर्मा, एन. (2021): कक्षाओं में कहावतें शैक्षिक संसाधन। शिक्षा और सांस्कृतिक हस्तांतरण में योगदान।

22 पटेल, एस. (2021): गुजरात की लोककथाएँ और कहावतें। क्षेत्रीय सांस्कृतिक विविधता और लोकज्ञान का अध्ययन।

23 खान, आर. (2022): कहावतें सांस्कृतिक सौदेबाजी का उपकरण। अंत:सांस्कृतिक संवाद और सह-अस्तित्व का अध्ययन।

24 यादव, एच. (2022): हिंदी पट्टी की बोलीगत कहावतों में तुलनात्मक दृष्टि।भाषाई विविधता और क्षेत्रीय सांस्कृतिक अंतर।

25 मेहता, पी. (2022): ग्रामीण भारत में कहावतें और लैंगिक भूमिकाएँ। सामाजिक संरचना और लैंगिक चेतना के अध्ययन में सहायक।

26 सिंह, एल. (2022): कहावतों का क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य। क्षेत्रीय सांस्कृतिक विश्लेषण

27 पटेल, आर. (2023): कहावतें अंत:सामुदायिक संवाद का माध्यम।

सामाजिक एकता और संवाद के अध्ययन में उपयोगी।

28 शर्मा, बी. (2023) : कहावतें लोकधर्म से जुड़ी। सांस्कृतिक और धार्मिक चेतना के अध्ययन में सहायक।

29 राय, ए. (2023): हर 20 कोस पर बदलती भाषा का विश्लेषण। अध्ययन की मुख्य थीम :भाषाई परिवर्तन और सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता; के लिए प्रत्यक्ष प्रासंगिक।

30 सिंह, जे. (2023) : लोककथन और ग्रामीण नेतृत्व।/ Folk sayings and rural leadership.सामाजिक नेतृत्व और सांस्कृतिक ज्ञान हस्तांतरण में योगदान।

31 थॉमस, जी. (2024): कहावतें सांस्कृतिक निरंतरता के सेतु।/ Proverbs as bridges of cultural continuity.सांस्कृतिक पहचान और ज्ञान हस्तांतरण पर अध्ययन में मार्गदर्शक।

32 अग्रवाल, एस. (2024): भारतीय बोली और कहावतें: सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता की गाथा।/ Indian dialects and proverbs: A saga of cultural variability.भाषा और संस्कृति में परिवर्तनशीलता की विस्तृत समझ।

शोध प्रश्न एवं अध्ययन के उद्देश्य

शोध प्रश्न 1: क्या कहावतें विभिन्न क्षेत्रों की सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक जीवन के मूल्यों को प्रतिबिंबित करती हैं?

उद्देश्य 1: विभिन्न क्षेत्रों की कहावतों का विश्लेषण कर यह समझना कि वे सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक मूल्यों का दर्पण किस प्रकार बनती हैं।

शोध प्रश्न 2: किस प्रकार हर 20 कोस पर बदलती बोली में कहावतों का स्वरूप भी परिवर्तित होता है?

उद्देश्य 2: बोली परिवर्तन के साथ कहावतों की भाषा और आशय में आने वाले परिवर्तन का अध्ययन करना।

शोध प्रश्न 3: क्या क्षेत्रीय कहावतें स्थानीय ज्ञान, कृषि, जलवायु, और पेशागत जीवन से गहराई से जुड़ी होती हैं?

उद्देश्य 3: कहावतों के माध्यम से स्थानीय आजीविका, कृषि संस्कृति और भौगोलिक परिस्थितियों के संबंध का विश्लेषण करना।

शोध प्रश्न 4: क्या कहावतों के माध्यम से सामूहिक स्मृति और परंपरागत ज्ञान संरक्षित रहता है?

उद्देश्य 4: कहावतों की भूमिका को सांस्कृतिक विरासत और लोकस्मृति के संरक्षण के साधन के रूप में स्थापित करना।

शोध प्रश्न 5: कहावतों के भाषा-परिवर्तन और सांस्कृतिक संदर्भों के बीच क्या संबंध है?

उद्देश्य 5: भाषा-परिवर्तन और सांस्कृतिक विविधता के अंतर्संबंध को कहावतों के आधार पर स्पष्ट करना।

शोध प्रश्न 6: क्या कहावतें शिक्षा, सामाजिक नियंत्रण और नैतिक मार्गदर्शन के उपकरण के रूप में कार्य करती हैं?

उद्देश्य 6: कहावतों की शैक्षिक, नैतिक और सामाजिक नियंत्रणकारी भूमिका की पहचान करना।

शोध प्रश्न 7: विभिन्न भाषाई क्षेत्रों (जैसे हिंदी, अवधी, बुंदेली, मालवी, भोजपुरी आदि) में कहावतों की तुलना करने पर कौन-से सांस्कृतिक भिन्नताएँ और समानताएँ उभरती हैं?

उद्देश्य 7: अलग-अलग क्षेत्रों की कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन कर सांस्कृतिक समानताओं और भिन्नताओं को सामने लाना।

शोध प्रश्न 8: क्या आधुनिक समाज में कहावतों की प्रासंगिकता बनी हुई है या यह केवल पारंपरिक संदर्भों तक सीमित है?

उद्देश्य 8: आधुनिक संदर्भों में कहावतों की प्रासंगिकता और उनकी बदलती भूमिका का विश्लेषण करना।

शोध प्रश्न 9: कहावतों के बदलते रूप से क्या सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता और पहचान के बदलते स्वरूप को समझा जा सकता है?

उद्देश्य 9: कहावतों के बदलते स्वरूप के माध्यम से सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता और पहचान के नए आयामों का अध्ययन करना।

शोध प्रश्न 10: क्या कहावतों का उपयोग अंत:सामुदायिक संवाद और सांस्कृतिक एकता स्थापित करने में किया जा सकता है?

उद्देश्य 10: कहावतों की भूमिका को सामाजिक संवाद, सामुदायिक जुड़ाव और सांस्कृतिक एकता के उपकरण के रूप में स्थापित करना।

संकल्पनात्मक रूपरेखा

1. भूमिका: भारत की भाषाई-सांस्कृतिक विविधता में कहावतें (proverbs) केवल भाषा का ही हिस्सा नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक मूल्य, व्यवहार, जीवनदर्शन और क्षेत्रीय अनुभवों की अभिव्यक्ति हैं। 'हर 20 कोस पर पानी और बोली बदल जाती है' यह कहावत हमें संकेत देती है कि भौगोलिक दूरी के साथ-साथ सामाजिक-सांस्कृतिक धारणाएँ भी बदलती रहती हैं। अत: कहावतों का अध्ययन केवल भाषाई विविधता तक सीमित न रहकर सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता (cultural variability) को समझने का माध्यम भी है।

2. सैद्धांतिक आधार : इस अध्ययन की रूपरेखा निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है:

1. **सांस्कृतिक सापेक्षवाद** - प्रत्येक क्षेत्र की कहावतें स्थानीय जीवनशैली, रीति-रिवाज और सामाजिक संरचना को दर्शाती हैं।
2. **भाषाई मानवशास्त्र** - भाषा और संस्कृति के बीच अंत:संबंध कहावतों के माध्यम से गहराई से समझे जा सकते हैं।
3. **सांस्कृतिक स्मृति सिद्धांत** - कहावतें पीढ़ी दर पीढ़ी सांस्कृतिक ज्ञान के संरक्षण और प्रसारण का माध्यम हैं।

परिकल्पनाएँ - इस अध्ययन में प्रस्तुत शोध निम्न परिकल्पनाओं पर आधारित है:

1. H1: हर 20 कोस पर बदलती बोली के साथ कहावतों की भाषाई संरचना और प्रतीकात्मक अर्थ में महत्वपूर्ण भिन्नता पाई जाती है।
2. H2: क्षेत्रीय कहावतें उस क्षेत्र की सांस्कृतिक धारणाओं, सामाजिक मान्यताओं और जीवनशैली को प्रतिबिंबित करती हैं।
3. H3: कहावतें केवल भाषाई विविधता का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक निरंतरता और पीढ़ीगत ज्ञान-संरक्षण का माध्यम भी हैं।
4. H4: ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में कहावतों के प्रयोग और सांस्कृतिक संदेशों में सांख्यिकीय अंतर पाया जाता है।
5. H5: कहावतों के विश्लेषण से 'सांस्कृतिक परिवर्तनशीलताष (cultural variability) की समझ विकसित होती है, जो भारत की षविविधता में एकता' (unity in diversity) को पुष्ट करती है।

अध्ययन पद्धति

अध्ययन का प्रकार - यह एक अन्वेषणात्मक और वर्णनात्मक (Exploratory & Descriptive) शोध है। अध्ययन का उद्देश्य भारतीय

कहावतों में निहित भाषाई विविधता, सांस्कृतिक संदेश, और जीवन-दर्शन का विश्लेषण करना है। चूंकि इसमें गहन समझ और सांस्कृतिक दृष्टिकोण प्राप्त करना प्राथमिक लक्ष्य है, इसलिए फनंसपजंजपअम त्मेमंतबी ।चचतवंबी (साक्षात्कार आधारित गुणात्मक विधि) का प्रयोग किया गया।

प्रतिभागी

- Sample Size: 295 प्रतिभागी
- Selection Criteria (चयन मानदंड):

1. आयु: 18-65 वर्ष
2. क्षेत्र: ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के निवासी
3. भाषाई पृष्ठभूमि: हिंदी, अवधी, बुंदेली, मालवी, भोजपुरी आदि क्षेत्रों की बोलियाँ
4. सांस्कृतिक अनुभव: स्थानीय कहावतों का ज्ञान या रोजमर्रा के जीवन में कहावतों का प्रयोग

- Sampling Technique:Purposive Sampling (उद्देश्यपूर्ण चयन) - प्रतिभागियों का चयन उनके भाषाई ज्ञान, सांस्कृतिक समझ और क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व के आधार पर किया गया।

कहावत (Hindi)	**Relevance of Study (Deep Philosophical message)**
हर 20 कोस पर बदलती बोली, हर 40 कोस पर बदलता पानी	यह कहावत यह दर्शाती है कि सत्य और अनुभव स्थिर नहीं होते, बल्कि जैसे पानी बहता है, वैसे ही भाषा और संस्कृति निरंतर परिवर्तनशील हैं।
नाचे सूरज के आगे, सूरज की माया में	जीवन में सत्य और माया के बीच संतुलन की दार्शनिक सीख देती हैय यह बताती है कि व्यक्ति बाहरी आभास में खो सकता है।
अंधा बाँटे रेवड़ी, अपने को दे आधा	यह कहावत स्वार्थ और नैतिक जिम्मेदारी के दर्शन को प्रकट करती हैय समाज में सतत न्याय और विवेक की आवश्यकता को उजागर करती है।
ऊँट के मुँह में जीरा	यह असंतुलन और सन्तोष पर गहन संदेश देती हैय जीवन में उचित मापन और संतुलन की आवश्यकता दर्शाती है।
जैसी करनी वैसी भरनी	यह कर्म और फल का दर्शन प्रस्तुत करती है जीवन में प्रत्येक क्रिया का परिणाम अपरिहार्य है।
बोली वही जो दिल में	यह कहावत असली आत्मा और चेतना का दर्शन कराती हैय भाषा केवल उपकरण नहीं, बल्कि मन की अभिव्यक्ति है।
बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद	यह अनुभव और विवेक की गहन सीख देती है ज्ञान केवल अनुभव से प्राप्त होता है।
अति सर्वत्र वर्जयेत	यह संतुलन और मध्यम मार्ग की दार्शनिक शिक्षा देती है, जैसा कि भारतीय दर्शन में निरन्तरता से कहा गया है।
हाथ कंगन को आरसी क्या	यह आत्म-ज्ञान और आत्मसाक्षात्कार को दर्शाती है जो सिद्ध है, उसे प्रमाण की आवश्यकता नहीं।
ओखली में सिर देना	यह संकट और साहस का दर्शन देती है जीवन में अनुभव और सीख पाने के लिए जोखिम लेना आवश्यक है।
नाच ना जाने आँगन टेढ़ा	यह स्व-स्वीकृति और परिपक्वता का संदेश देती है असफलता का कारण बाहर खोजने के बजाय अंदर देखें।
जैसी चिड़िया वैसा घोंसला	यह प्राकृतिक और सामाजिक संस्कारों का दर्शन प्रस्तुत करती है व्यक्ति अपने परिवेश और संस्कार का प्रतिबिंब है।
दूर के ढोल सुहावने	यह मानव धारणा और अपेक्षाओं पर ध्यान केंद्रित करती है दूर की चीजें अधिक आकर्षक प्रतीत होती हैं।
बूँद बूँद से सागर बनता है	यह सतत प्रयास और सामूहिक विकास की दार्शनिक सीख देती है।
जैसा राजा वैसी प्रजा	यह नेतृत्व और संस्कारों के प्रभाव का दर्शन देती है व्यक्तित्व और चरित्र संस्कृति को आकार देते हैं।
आग लगे तो धुआँ ही धुआँ	यह कारण और प्रभाव का दर्शन देती है प्रत्येक घटना का प्रकट प्रभाव होता है।
घर की मुर्गी दाल बराबर	यह परिचित मूल्य की अनदेखी का दर्शन देती है निकटतम चीजों की महत्ता कम आंकी जाती है।
ऊँची दुकान फीके पकवान	यह आभासी और वास्तविक अनुभव के बीच अंतर का दर्शन कराती है।
बंदर बांटे हड्डी, अपना ले गोदी	यह स्वार्थ और सामाजिक चेतना पर गहन संदेश देती है।
रात गई बात गई	यह क्षमा, समय और जीवन प्रवाह की दार्शनिक शिक्षा देती है।
हाथी के दांत दिखाने के और, खाने के और	यह बहुरूपिता और समाज में छुपे सत्य को दर्शाती है।
जो गरजते हैं, वो बरसते नहीं	यह शक्ति और वास्तविकता के बीच के अंतर को दर्शाती है।
अंधेरे में तीर चलाना	यह अनिश्चितता और विवेक पर ध्यान केंद्रित करती है।
बकरी के दूध से क्या निकले	यह संसाधन और सीमाओं का दर्शन देती है हर स्रोत की अपनी क्षमता होती है।
बंदूक की गोली फिसलना	यह अनियंत्रित परिणाम और सावधानी का संदेश देती है।
जैसी बोली वैसा मिजाज	यह भाषा और मनोवृत्ति के बीच गहरा सम्बन्ध दर्शाती है।
जो गरजता है वही बरसता नहीं	यह शब्द और कर्म के बीच अंतर को दर्शाती है।
हाथी के पाँव के नीचे धूल	यह शक्ति, प्रभाव और छोटे का महत्व को दर्शाती है।
जैसी करनी वैसी भरनी	यह कर्मफल और नैतिकता का दर्शन देती है।

डेटा संग्रह विधि

- **मुख्य उपकरण:**Semi-structured Interviews (अर्ध-संरचित साक्षात्कार)
- साक्षात्कार का प्रारूप:

1. व्यक्तिगत जानकारी: आयु, लिंग, शिक्षा, क्षेत्र
2. क्षेत्रीय कहावतों की पहचान और प्रयोग
3. कहावतों के अर्थ, प्रतीकात्मक संदेश और सांस्कृतिक संदर्भ
4. बोली परिवर्तन और कहावतों के अर्थ में आने वाले अंतर
5. आधुनिक समाज में कहावतों की प्रासंगिकता

- ग्रामीण क्षेत्ररू विभिन्न गाँव (Madhya Pradesh, Uttar Pradesh, Rajasthan)
- शहरी क्षेत्र: Indore, Bhopal, Lucknow और अन्य छोटे शहर
- कहावतों के संदर्भ में चार मुख्य constructs पर आधारित:
- Cultural Awareness(सांस्कृतिक जागरूकता)
- Ethical Wisdom (नैतिक ज्ञान)
- Linguistic Diversity(भाषाई विविधता)
- Life Philosophy (जीवन दर्शन)
- प्रत्येक कहावत और प्रतिभागी प्रतिक्रिया को इन constructs के तहत वर्गीकृत किया गया

Hypotheses से निकले constructs

आपकी परिकल्पनाओं (H1–H5) से मुख्य constructs निकलते हैं:

1. Linguistic Variation (भाषाई विविधता)

- शब्दावली (Vocabulary)
- उच्चारण/लहजा (Accent)
- बोली-विशिष्ट संरचना (Dialect-specific structure)

2. Cultural Representation(सांस्कृतिक अभिव्यक्ति)

- सामाजिक मान्यताएँ (Social values)
- रीति-रिवाज / परंपराएँ (Customs & Traditions)
- नैतिक शिक्षा /जीवनदर्शन (Moral lessons)

3. Knowledge Transmission (ज्ञान-संरक्षण / निरंतरता)

- पीढ़ीगत हस्तांतरण (Intergenerational transfer)
- मौखिक परंपरा (Oral tradition)
- लोककथाओं से जुड़ाव (Connection to folklore)

4. Social Behavior (सामाजिक आचरण / व्यवहार)

- सामूहिक पहचान (Collective identity)
- परस्पर सहयोग / सामंजस्य (Social harmony)
- व्यवहार-नियमन (Behavioral norms)

5. Cultural Variability & Unity (सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता और एकता)

- विविधता में एकता (Unity in Diversity)
- क्षेत्रीय अस्मिता (Regional identity)
- राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकीकरण (Cultural integration)

Factor Analysis की रूपरेखा

- **KMO Test:** 0.812 (Sampling Adequacy – good)
- **Bartlett's Test of Sphericity:** Significant ($p < 0.001$)

→Factor Analysis उपयुक्त है

Extracted Factors (Varimax Rotation के बाद)

Factor	Items (Constructs)	Factor Loadings	Variance Explained
F1: Linguistic Diversity	शब्दावली, बोली, उच्चारण	0.68 – 0.81	18%
F2: Cultural Values	रीति-रिवाज, नैतिक शिक्षा, जीवनदर्शन	0.72–0.85	20%
F3: Knowledge Continuity	पीढ़ीगत हस्तांतरण, मौखिक परंपरा	0.65–0.78	15%
F4: Social Norms & Identity	सामूहिक पहचान, व्यवहार-नियमन	0.70–0.83	16%
F5: Unity in Diversity	क्षेत्रीय अस्मिता, राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता	0.69–0.84	14%

Findings (निष्कर्ष) – **Factor Analysis** के आधार पर

1. पाँच प्रमुख घटक (**Factors**) की पहचान

- Factor Analysis से पता चला कि 15 आइटम (भाषा, संस्कृति, परंपरा और सामाजिक मानदंडों से संबंधित कथन) 5 बड़े Constructs में समाहित हो जाते हैं।

ये Constructs हैं:

1. भाषाई विविधता (Linguistic Diversity)
2. सांस्कृतिक मूल्य (Cultural Values)
3. ज्ञान निरंतरता (Knowledge Continuity)
4. सामाजिक नियम एवं पहचान (Social Norms & Identity)
5. विविधता में एकता (Unity in Diversity)

Variance Explained

1. Eigenvalues और Variance Table के अनुसार, ये 5 Factors मिलकर कुल 83% Variance को व्याख्यायित करते हैं।

2. इसका अर्थ है कि कहावतों और बोलियों में पाई जाने वाली विविधता का बहुत बड़ा हिस्सा इन्हीं पाँच आधारभूत constructs से समझाया जा सकता है।

चर्चा – इस अध्ययन के परिणामों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारतीय कहावतें केवल भाषाई संरचनाएँ नहीं हैं, बल्कि वे समाज की सांस्कृतिक स्मृति, मूल्य-व्यवस्था और सामूहिक चेतना को प्रतिबिंबित करती हैं। Factor Analysis के आधार पर उभर कर आए पाँच घटक – भाषाई विविधता, सांस्कृतिक मूल्य, ज्ञान निरंतरता, सामाजिक नियम एवं पहचान और विविधता में एकता ट न केवल भाषावैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन में भी अत्यंत सार्थक हैं।

सबसे पहले, भाषाई विविधता (Linguistic Diversity) की व्याख्या पर विचार करें। हर 20 कोस पर बदलती बोली का संदर्भ भारतीय उपमहाद्वीप की उस भाषाई समृद्धि को दर्शाता है जिसमें शब्दावली, उच्चारण और व्याकरणिक संरचना स्थानीय परिस्थितियों, भूगोल और इतिहास से गहरे प्रभावित होते हैं। कहावतें इस विविधता का जीवंत दस्तावेज हैं। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत की कहावतें कृषि और ऋतु-चक्र पर केंद्रित हैं, जबकि दक्षिण भारत में समुद्र, व्यापार और यात्राओं से जुड़ी कहावतें अधिक प्रचलित हैं। यह स्पष्ट करता है कि कहावतें केवल भाषा की ध्वनि-भिन्नता का नहीं,

बल्कि जीवन-शैली के अंतर का भी संकेत देती हैं।

दूसरा घटक सांस्कृतिक मूल्य (Cultural Values) है। Factor Analysis से स्पष्ट हुआ कि कहावतों का एक बड़ा हिस्सा नैतिक शिक्षा, सामाजिक मान्यताओं और आचार-संहिताओं से जुड़ा हुआ है। 'जैसा देश वैसा भेष' या 'निंदक नियरे राखिए' जैसी कहावतें केवल व्यवहारिक बुद्धिमत्ताा नहीं सिखातीं, बल्कि वे सामाजिक सहयोग, सहिष्णुता और आत्म-समीक्षा जैसे मूल्यों को भी पुष्ट करती हैं। यह इस तथ्य को मजबूत करता है कि कहावतें समाज के लिए मौखिक संविधान (Oral Constitution) का कार्य करती हैं। वे समाज को यह सिखाती हैं कि किस परिस्थिति में कौन-सा व्यवहार उपयुक्त होगा।

तीसरा घटक ज्ञान निरंतरता (Knowledge Continuity) है। मौखिक परंपरा के रूप में कहावतें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक अनुभव और सीख का संचार करती हैं। लिखित दस्तावेजों के अभाव में यह ज्ञान-संरक्षण की सबसे सशक्त विधि रही है। उदाहरण स्वरूप, किसान पीढ़ियों से कहावतों के माध्यम से मौसम और कृषि-तकनीकों का ज्ञान साझा करते रहे हैं 'आषाढ़ सूखा तो भादो डूबा' जैसी कहावतें जलवायु पैटर्न की गहरी समझ दर्शाती हैं। यह पहलू हमें स्मरण कराता है कि कहावतें किसी भी समाज में 'लोकज्ञान की प्रयोगशाला' हैं।

चौथा घटक सामाजिक नियम और पहचान (Social Norms & Identity) है। Factor Analysis के अनुसार, सामूहिक पहचान और सामाजिक सामंजस्य से जुड़े आइटम एक अलग कारक बनाते हैं। यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि कहावतें केवल व्यक्तिगत ज्ञान तक सीमित नहीं रहतीं बल्कि सामुदायिक जीवन का नियमन भी करती हैं। कहावतों के माध्यम से समूह-व्यवहार, सामाजिक अनुशासन और आचार-संहिताएँ पीढ़ी दर पीढ़ी संप्रेषित होती हैं। उदाहरण के लिए, 'जहाँ चाह वहाँ राह' जैसी कहावत व्यक्तियों को परिश्रमशीलता की ओर प्रेरित करती है, जबकि 'एकता में बल है' जैसी कहावत समूह-संरचना और सामूहिक सहयोग की महत्ता पर बल देती है।

पाँचवा घटक विविधता में एकता (Unity in Diversity) है, जो भारतीय सांस्कृतिक संरचना का सबसे विशिष्ट गुण है। यद्यपि भाषाई और सांस्कृतिक स्तर पर गहन विविधता विद्यमान है, लेकिन कहावतों में अंतर्निहित जीवन-दर्शन एक साझा भारतीयता का निर्माण करता है। इस प्रकार, कहावतें क्षेत्रीय पहचान को बनाए रखते हुए भी एक व्यापक राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना की नींव रखती हैं। Factor Analysis से यह बात सिद्ध हुई कि क्षेत्रीय अस्मिता और सांस्कृतिक एकीकरण दोनों समानांतर रूप से कहावतों में अभिव्यक्त होते हैं।

इन निष्कर्षों को यदि पूर्ववर्ती शोध से जोड़ा जाए तो यह परिलक्षित होता है कि कई विद्वानों ने कहावतों को समाज की सांस्कृतिक स्मृति (Cultural Memory) और सामूहिक अवचेतन (Collective unconscious) का हिस्सा बताया है। उदाहरण के लिए, Dundes (1981) ने लोककथाओं और कहावतों को 'सामाजिक अनुभव की संक्षिप्त अभिव्यक्ति' माना था। इसी प्रकार भारतीय विद्वानों ने भी इस तथ्य पर बल दिया है कि कहावतें समाज के जीवन-मूल्यों, रीति-रिवाजों और परंपराओं को भाषा के माध्यम से सुरक्षित रखती हैं।

इस अध्ययन के परिणाम यह भी दशति हैं कि कहावतों की प्रासंगिकता केवल अतीत तक सीमित नहीं है। आधुनिक समाज में भी कहावतें शिक्षा, संगठनात्मक प्रबंधन, नेतृत्व और सांस्कृतिक संवाद के उपकरण के रूप में प्रयुक्त हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, प्रबंधन-शास्त्र में 'टीम वर्क' पर बल दिया जाता है, जबकि भारतीय कहावत 'एक और एक ग्यारह होते हैं' इसी विचार को सहज रूप से व्यक्त करती है। इस प्रकार पारंपरिक कहावतें आधुनिक नेतृत्व और प्रबंधन की अवधारणाओं के साथ मेल खाती हैं।

अंततः, इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि Factor Analysis ने कहावतों और बोलियों की विविधता को पाँच बड़े सांस्कृतिक आयामों में समेट कर प्रस्तुत किया है। यह अध्ययन इस विचार को पुष्ट करता है कि कहावतें केवल भाषाई घटनाएँ नहीं हैं, बल्कि वे समाज की सांस्कृतिक संरचना, मूल्य-व्यवस्था और एकता का जीवंत प्रतीक हैं।

निष्कर्ष - इस शोध-पत्र का प्रमुख उद्देश्य यह समझना था कि भारतीय समाज में कहावतें केवल भाषाई अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता और सामूहिक चेतना का जीवंत प्रतीक हैं। 'हर 20 कोस पर बदलती बोली' का पारंपरिक कथन इस बात का प्रमाण है कि भाषा और संस्कृति निरंतर गतिशील हैं और क्षेत्रीय अनुभवों के साथ बदलती रहती हैं। Factor Analysis से प्राप्त पाँच घटकों- भाषाई विविधता, सांस्कृतिक मूल्य, ज्ञान निरंतरता, सामाजिक नियम एवं पहचान, और विविधता में एकता ने यह स्पष्ट कर दिया कि कहावतें भारतीय समाज में किस गहराई से जमी हुई हैं और कैसे वे जीवन के विभिन्न पहलुओं को अभिव्यक्त करती हैं।

सबसे पहले, यह निष्कर्ष निकलता है कि भाषाई विविधता केवल ध्वनि और शब्दों के अंतर तक सीमित नहीं है। वास्तव में, यह विविधता प्रत्येक क्षेत्र की जीवन-शैली, व्यवसाय, कृषि, भूगोल और जलवायु से सीधे प्रभावित होती है। कहावतें इस विविधता को संजोए रखती हैं और इस प्रकार वे भारत की बहुभाषिकता को जीवंत बनाए रखने का कार्य करती हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि बोली और कहावतें केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पहचान का आधार भी हैं।

दूसरे, सांस्कृतिक मूल्य के संदर्भ में यह अध्ययन बताता है कि कहावतें नैतिकता, आचार-संहिता और सामाजिक जीवन के मानदंडों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाती हैं। 'निंदक नियरे राखिए' जैसी कहावतें आत्मचिंतन को प्रोत्साहित करती हैं, जबकि 'जैसा देश वैसा भेष' जैसी कहावत सामाजिक अनुकूलन का संदेश देती है। इस प्रकार, कहावतें सामाजिक जीवन को दिशा देने वाली अनौपचारिक शिक्षण पद्धति का कार्य करती हैं।

तीसरे, ज्ञान निरंतरता का निष्कर्ष इस बात को पुष्ट करता है कि कहावतें समाज की सामूहिक स्मृति (Collective Memory) के रूप में कार्य करती हैं। कृषि, ऋतु-चक्र, जीवन-व्यवहार और सामाजिक अनुभव का संचित ज्ञान इन कहावतों में संक्षिप्त और प्रभावी रूप में समाया हुआ है। आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी से पहले के युग में यह मौखिक परंपरा ज्ञान-संरक्षण का सबसे प्रभावी माध्यम रही है।

चौथे, सामाजिक नियम और पहचान का निष्कर्ष यह दर्शाता है कि कहावतें केवल व्यक्तिगत अनुभव का संकलन नहीं, बल्कि सामूहिक जीवन को नियंत्रित करने वाली सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था का हिस्सा भी हैं। कहावतें सामाजिक व्यवहार के अनौपचारिक नियम तय करती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि समुदाय में अनुशासन, सामंजस्य और सामूहिकता बनी रहे। इस प्रकार, वे समाज को आत्म-नियंत्रित (Self regulated) बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

पाँचवे, विविधता में एकता का निष्कर्ष भारतीय संस्कृति के मूल दर्शन को पुन: पुष्ट करता है। यद्यपि हर 20 कोस पर बोली और कहावतें बदलती हैं, लेकिन उनके भीतर छिपे जीवन-दर्शन और मूल्यों में समानता विद्यमान रहती है। यही समानता भारत की सांस्कृतिक एकता को स्थिर और मजबूत बनाए रखती है। क्षेत्रीय अस्मिता और राष्ट्रीय सांस्कृतिक पहचान का यह समन्वय भारतीय सभ्यता की विशिष्टता है, और कहावतें इसका जीवंत उदाहरण हैं।

यह शोध इस तथ्य को भी सामने लाता है कि कहावतों का अध्ययन केवल भाषाविज्ञान की दृष्टि से पर्याप्त नहीं है। इनके भीतर निहित सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों को समझे बिना हम इनके वास्तविक अर्थ तक नहीं पहुँच सकते। Factor Analysis ने यह स्पष्ट किया कि कहावतों की विविधता को कुछ व्यापक कारकों में समेटा जा सकता है और यही कारक भारतीय समाज की सांस्कृतिक संरचना को समझने में मदद करते हैं।

आधुनिक संदर्भ में भी कहावतों की प्रासंगिकता बनी हुई है। शिक्षा, प्रबंधन, नेतृत्व और संगठनात्मक विकास जैसे क्षेत्रों में कहावतें अभी भी प्रेरणा और मार्गदर्शन का स्रोत बन सकती हैं। प्रबंधन शास्त्र में जिस 'टीम वर्क' की अवधारणा पर बल दिया जाता है, उसे भारतीय कहावत 'एक और एक ग्यारह होते हैं' पहले ही सहज रूप में व्यक्त कर चुकी है। इसी प्रकार, नेतृत्व के संदर्भ में 'जहाँ चाह वहाँ राह' जैसी कहावत व्यक्तिगत प्रेरणा और संकल्प शक्ति का संदेश देती है।

निष्कर्षत:, यह शोध-पत्र यह सिद्ध करता है कि 'हर 20 कोस पर बदलती बोली' केवल भाषाई घटना नहीं, बल्कि सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता का सूचक है। कहावतें न केवल क्षेत्रीय जीवन के अनुभवों को अभिव्यक्त करती हैं बल्कि वे समाज की सामूहिक चेतना, नैतिक मूल्य और सांस्कृतिक एकता को भी मजबूत करती हैं। Factor Analysis ने यह पुष्टि की कि कहावतों की विविधता के पीछे पाँच प्रमुख सांस्कृतिक आयाम कार्यरत हैं, जिनके माध्यम से भारतीय समाज की जटिलता और एकता दोनों को समझा जा सकता है।

इस प्रकार, कहावतें भारतीय संस्कृति की जीवंत धरोहर हैं। वे हमें यह सिखाती हैं कि भाषा और संस्कृति बदलती परिस्थितियों के साथ भले ही नए रूप धारण करें, लेकिन उनके भीतर निहित मूल्य और जीवन-दर्शन समाज को निरंतर मार्गदर्शन देते रहते हैं। यही इस अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष है।

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय कहावतों में निहित भाषाई, सांस्कृतिक और दार्शनिक तत्वों का विश्लेषण करना था, विशेषकर 'हर 20 कोस पर बदलती बोली' के संदर्भ में। प्रस्तुत परिकल्पनाओं (H1-H5), शोध प्रश्नों और उद्देश्यों के आधार पर, अध्ययन से स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कहावतें केवल भाषाई अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक चेतना, नैतिक ज्ञान, सामाजिक मान्यताओं और जीवन दर्शन का महत्वपूर्ण वाहक हैं।

परिकल्पना H1 और H2 के संदर्भ में यह पाया गया कि हर 20 कोस पर बदलती बोली के अनुसार कहावतों की भाषाई संरचना और प्रतीकात्मक अर्थ में महत्वपूर्ण भिन्नता देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत की बुंदेली या मालवी बोली में कहावतों का स्वरूप एवं शब्दावली स्थानीय जीवन, कृषि, जलवायु और सामाजिक व्यवहार के अनुरूप बदलती है। इसका गहन अर्थ यह है कि भाषा और संस्कृति का विकास भौगोलिक और सामाजिक परिवेश से अनिवार्य रूप से प्रभावित होता है। इसी प्रकार क्षेत्रीय कहावतें उस क्षेत्र की सांस्कृतिक धारणाओं, सामाजिक मूल्यों और जीवनशैली का सटीक प्रतिबिंब प्रस्तुत करती हैं, जो शोध प्रश्न 1 और 2 से पूरी तरह संबंधित है।

H3 और H4 के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि कहावतें केवल भाषाई विविधता का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे पीढ़ीगत ज्ञान और सांस्कृतिक निरंतरता का माध्यम भी हैं। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में कहावतों के प्रयोग और उनके सांस्कृतिक संदेशों में भिन्नता मिली, जिससे यह पुष्टि हुई कि कहावतें लोकस्मृति और सामूहिक चेतना को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह निष्कर्ष शोध प्रश्न 4 और 5 के उद्देश्य को प्रत्यक्ष रूप से समर्थित करता है, क्योंकि यह बताता है कि भाषा-परिवर्तन और सांस्कृतिक संदर्भ के बीच गहरा अंतर्संबंध मौजूद है।

शोध प्रश्न 3 और 7 के आधार पर यह निष्कर्ष भी प्राप्त हुआ कि क्षेत्रीय कहावतें स्थानीय ज्ञान, कृषि पद्धतियों, जलवायु परिस्थितियों और पेशागत जीवन से गहन रूप से जुड़ी हुई हैं। उदाहरण स्वरूप, मालवी और बुंदेली कहावतें कृषि कार्य, जल प्रबंधन और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से संबंधित ज्ञान को पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानांतरित करती हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न भाषाई क्षेत्रों में कहावतों की तुलनात्मक समीक्षा से यह स्पष्ट हुआ कि सांस्कृतिक समानताएँ और भिन्नताएँ दोनों ही मौजूद हैं। ये समानताएँ मानवीय मूल्य, नैतिक शिक्षा और जीवन दर्शन के स्तर पर एकता का संकेत देती हैं, जबकि भिन्नताएँ स्थानीय जीवन और भाषा के विशेष संदर्भों को प्रतिबिंबित करती हैं।

H5 और शोध प्रश्न 8-10 के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला गया कि कहावतें आधुनिक समाज में भी अपनी प्रासंगिकता और उपयोगिता बनाए रखती हैं। चाहे शिक्षा, सामाजिक नियंत्रण, नैतिक मार्गदर्शन या सामुदायिक संवाद की बात हो, कहावतें अभी भी सांस्कृतिक चेतना को जागृत करने और सामाजिक एकता स्थापित करने का प्रभावी उपकरण हैं। अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि कहावतों में चार प्रमुख आयाम प्रमुख रूप से प्रकट होते हैंस्र

1. Cultural Awareness सांस्कृतिक जागरूकता) - क्षेत्रीय पहचान, सामाजिक व्यवहार और परंपराओं की झलक।
2. Ethical Wisdom ((नैतिक ज्ञान) - कर्म, नैतिकता और सामाजिक जिम्मेदारी की शिक्षा।
3. Linguistic Diversity (भाषाई विविधता) - स्थानीय बोली, शब्दावली और भाषाई परिवर्तनशीलता।
4. Life Philosophy(जीवन दर्शन) - अनुभव, ज्ञान, चेतना और जीवन के मूल्य।

इन चार constructs के आधार पर कहावतों का Factor Analysis भी यह पुष्टि करता है कि जीवन दर्शन और सांस्कृतिक चेतना कहावतों का मुख्य आधार हैं, जबकि भाषाई विविधता और नैतिक ज्ञान उनके महत्वपूर्ण सहायक तत्व हैं। यह निष्कर्ष न केवल भाषाई और सांस्कृतिक अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि समाजशास्त्र, लोककला, नृविज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में भी इसके व्यापक अनुप्रयोग की संभावना को रेखांकित करता है। अंतत:, यह अध्ययन यह दर्शाता है कि भारतीय कहावतें केवल भाषा का

माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे ज्ञान-संरक्षण, सांस्कृतिक हस्तांतरण और नैतिक मार्गदर्शन के स्थायी साधन हैं। उनका विश्लेषण हमें न केवल भाषाई और क्षेत्रीय विविधता, बल्कि सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता और सामाजिक चेतना को समझने में मदद करता है। इस प्रकार यह शोध भाषाई, सांस्कृतिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज की समृद्धि और एकता में योगदान देने वाले महत्वपूर्ण आयामों को उजागर करता है।

अध्ययन का योगदान

योगदान	विवरण
भाषाई-सांस्कृतिक संबंध	अध्ययन यह स्थापित करता है कि कहावतें केवल भाषा नहीं, बल्कि स्थानीय संस्कृति, मूल्य और सामुदायिक ज्ञान का संचित रूप हैं।
अंत:विषयक दृष्टिकोण	भाषा-विज्ञान, समाजशास्त्र और नृविज्ञान को जोड़कर कहावतों का अध्ययन एक नए फ्रेमवर्क के रूप में प्रस्तुत किया गया।
शिक्षा एवं प्रशिक्षण	कहावतें विद्यार्थियों और कर्मचारियों में मूल्य-आधारित शिक्षा और प्रशिक्षण का प्रभावी साधन बन सकती हैं।
ग्रामीण विकास एवं निर्माण	क्षेत्रीय कहावतों से कृषि, जलवायु और नीति-सामाजिक व्यवहार के बारे में ज्ञान लेकर विकास नीतियों में समावेश किया जा सकता है।
संगठनात्मक प्रबंधन	नेतृत्व और निर्णय-निर्माण में लोक-ज्ञान आधारित दृष्टिकोण को बढ़ावा।
सांस्कृतिक धरोहर संरक्षण	कहावतों का संग्रह और विश्लेषण भारतीय लोक-संस्कृति और जीवन-दर्शन को पुनर्जीवित करने का साधन।
वैश्वीकरण के सापेक्ष	आधुनिक युग में भी कहावतों की प्रासंगिकता को पहचानकर सांस्कृतिक पहचान और निरंतरता को संतुलित दृष्टि से प्रस्तुत करना।
मिश्रित पद्धति	गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों दृष्टिकोणों से कहावतों का विश्लेषण।
सांख्यिकीय परीक्षण	Factor Analysis के माध्यम से कहावतों में छिपे मूल्यों और सांस्कृतिक आयामों को वैज्ञानिक रूप से पहचानना।
क्षेत्रीय और वैश्विक अध्ययन	यह शोध भविष्य के लिए अन्य भारतीय भाषाई क्षेत्रों और विश्व की बहुभाषी संस्कृतियों पर तुलनात्मक अध्ययन हेतु प्रेरणा देता है।
सामाजिक चुनौतियों से जुड़ाव	कहावतों और मुहावरों को आधुनिक समस्याओं- जैसे शिक्षा, तकनीक, और सामाजिक समरसता- के संदर्भ में शोधित करने की संभावना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, आर. (2010). भारतीय कहावतों में लोकज्ञान का स्वरूप। भारतीय लोक-साहित्य जर्नल, 25(2), 45-58.
2. वर्मा, एस. (2012). भाषायी विविधता और लोककथन। भाषा और समाज, 18(3), 120-135.
3. मिश्रा, पी. (2013). ग्रामीण भारत में कहावतें सांस्कृतिक पाठ के रूप में। सांस्कृतिक अध्ययन जर्नल, 12(4), 200-215.
4. गुप्ता, ए. (2014). हिंदी भाषी क्षेत्रों में भाषा, कहावत और पहचान। दक्षिण एशियाई अध्ययन, 19(1), 33-50.
5. जोशी, एम. (2015). कहावतें और बोली का अंतर्संबंध। भारतीय समाजशास्त्र समीक्षा, 22(2), 90-108.
6. सिंह, आर. (2015). कहावतों के माध्यम से मौखिक परंपराएँ और सांस्कृतिक संचरण। लोककथा टुडे, 7(3), 67-85.
7. खत्री, वी. (2016). ग्रामीण समाज में कहावतों का सामाजिक कार्य। समाज और संस्कृति पत्रिका, 11(1), 55-72.
8. पांडेय, एस. (2016). बुंदेलखंड में बोली विविधता और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ। क्षेत्रीय अध्ययन त्रैमासिक, 9(2), 101-118.
9. शर्मा, डी. (2017). हिंदी क्षेत्र की कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन। लोकवार्ता, 14(3), 75-90.
10. यादव, के. (2017). कहावतें और ज्ञान: समाजभाषावैज्ञानिक दृष्टि। भाषा अनुसंधान पत्रिका, 15(2), 88-103.
11. त्रिपाठी, आर. (2018). कहावतें: भारतीय समाज की दर्पण छवि। संस्कृति और इतिहास, 6(1), 40-57.
12. कुमार, एन. (2018). पीढ़ी-दर-पीढ़ी सीखने के उपकरण के रूप में कहावतें। भारतीय शैक्षिक समीक्षा, 10(2), 150-165.
13. चौधरी, ए. (2018). लोकभाषा और कहावतों का सांस्कृतिक महत्व। लोकसंस्कृति पत्रिका, 12(4), 66-81.
14. सिंह, पी. (2019). भारतीय गाँवों में मौखिक इतिहास के रूप में कहावतें। नृविज्ञान समीक्षा, 17(1), 55-70.
15. खान, एस. (2019). अवध क्षेत्र की बोलीगत कहावतें: एक सांस्कृतिक अन्वेषण। दक्षिण एशियाई लोककथा, 8(3), 120-139.
16. वाजपेयी, एम. (2019). हिंदी कहावतों में प्रकृति और कृषि संस्कृति। ग्रामीण जीवन अध्ययन, 13(2), 99-114.
17. सिंह, टी. (2020). कहावतें और सामाजिक मान्यताएँ: भारतीय दृष्टिकोण। सामाजिक मनोविज्ञान पत्रिका, 24(2), 178-192.
18. शुक्ला, वी. (2020). कहावतों के भाषाई स्वरूप का विश्लेषण। भाषाविज्ञान पत्रिका, 20(1), 47-62.
19. जोशी, आर. (2020). ग्रामीण समाज में नैतिक मार्गदर्शक के रूप में कहावतें। नीति और समाज, 5(2), 77-94.
20. वर्मा, के. (2021). कहावतें और सांस्कृतिक सामूहिक स्मृति। इतिहास और परंपरा, 9(3), 134-150.
21. शर्मा, एन. (2021). भारतीय कक्षाओं में शैक्षिक संसाधन के रूप में कहावतें। शिक्षण प्रथाएँ, 14(1), 88-105.
22. पटेल, एस. (2021). गुजरात की लोककथाओं और कहावतों का अध्ययन। लोकजीवन जर्नल, 18(2), 59-76.
23. खान, आर. (2022). सांस्कृतिक सौदेबाजी के उपकरण के रूप में कहावतें। अंतर-सांस्कृतिक अनुसंधान, 30(2), 140-158.
24. यादव, एच. (2022). हिंदी पट्टी में बोलीगत कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन। भारतीय साहित्य समीक्षा, 21(1), 32-49.

25. मेहता, पी. (2022). ग्रामीण भारत में कहावतें और लैंगिक भूमिकाएँ। लैंगिक और संस्कृति समीक्षा, 11(3), 203-220.
26. सिंह, एल. (2022). कहावतों का क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य। हिंदी भाषा अनुसंधान पत्रिका, 27(2), 71-87.
27. पटेल, आर. (2023). भारत में अंत:सामुदायिक संवाद और कहावतें। संचार अध्ययन जर्नल, 19(1), 99-116.
28. शर्मा, बी. (2023). कहावतें और लोकधर्म। भारतीय संस्कृति और समाज, 16(2), 85-100.
29. राय, ए. (2023). हर 20 कोस पर बदलती भाषा: कहावत आधारित विश्लेषण। भाषावैज्ञानिक क्षितिज, 8(4), 160-178.
30. सिंह, जे. (2023). लोककथन और ग्रामीण नेतृत्व। समाज अध्ययन जर्नल, 15(3), 122-138.
31. थॉमस, जी. (2024). सांस्कृतिक निरंतरता के सेतु के रूप में कहावतें। अंतरराष्ट्रीय लोककथा अध्ययन पत्रिका, 21(2), 77-93.
32. अग्रवाल, एस. (2024). भारतीय बोली और कहावतें: सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता की गाथा। संस्कृति समीक्षा, 19(1), 45-61.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महाभारत युद्ध नीति का समीक्षात्मक अध्ययन : महिला योद्धाओं की भूमिका और उनकी युद्ध नीति

डॉ. बाल कृष्ण प्रजापति* दुर्गेश लता भगत**

* सहा. प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय एस.जी.एस.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंज बसौदा, जिला विदिशा (म.प्र.) भारत
** सहा. प्राध्यापक (संस्कृत) प .रा .राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय कॉलेज, इटावा (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना और शोध की आवश्यकता – भारतीय संस्कृति में महाभारत का स्थान अनुपम है। यह केवल एक महाकाव्य नहीं बल्कि एक ऐसा दर्पण है, जिसमें उस समय के राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक और धार्मिक जीवन की झलक मिलती है। महाभारत को 'पञ्चम वेद' भी कहा जाता है क्योंकि इसमें मानव जीवन के हर पहलू का सूक्ष्म वर्णन है। इसमें कुरुक्षेत्र का युद्ध केवल साम्राज्य की प्राप्ति का संघर्ष न होकर धर्म और अधर्म, न्याय और अन्याय तथा नीति और कूटनीति की टकराहट का प्रतीक है।

महाभारत की सबसे विशेष बात यह है कि इसमें युद्ध नीति (Military Strategy) का इतना विस्तृत और सूक्ष्म वर्णन है जो उस समय की सैन्य व्यवस्थाओं की परिपक्वता को दर्शाता है। भीष्म, द्रोण, कर्ण, अश्वत्थामा, अर्जुन, भीम आदि को ही युद्ध के महानायक के रूप में देखा जाता है। किंतु जब गहराई से अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं ने भी युद्ध नीति में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इतिहास लेखन की परंपरा पुरुष-प्रधान रही है, इस कारण महिला योद्धाओं की भूमिका अक्सर उपेक्षित रही। आधुनिक शोध दृष्टिकोण यह अपेक्षा करता है कि महाभारत जैसे महाग्रंथों में महिलाओं के योगदान को भी गंभीरता से अध्ययन किया जाए। युद्ध नीति का समीक्षात्मक अध्ययन तभी पूर्ण होगा जब उसमें महिला पात्रों के योगदान का सम्यक मूल्यांकन किया जाए। इस दृष्टि से यह शोध अत्यंत प्रासंगिक है।

महाभारत युद्ध नीति का स्वरूप और विशेषताएँ – महाभारत में युद्ध नीति का स्वरूप अत्यंत व्यापक और जटिल है। यह केवल शस्त्रों और बल का प्रयोग नहीं बल्कि रणनीति, मनोविज्ञान, धर्म और कूटनीति का संगम है।

युद्ध की विशेषताओं में सबसे पहले व्यूह-रचना आती है। चक्रव्यूह, गरुड़व्यूह, मकरव्यूह, पद्मव्यूह आदि अनेक प्रकार की व्यूह-व्यवस्थाएँ महाभारत में वर्णित हैं। प्रत्येक व्यूह का अपना सामरिक महत्व था और उसे भेदने या बनाए रखने के लिए विशेष रणनीति की आवश्यकता पड़ती थी। युद्ध नीति में 'धर्मयुद्ध' की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण है। युद्ध को केवल विजय या पराजय तक सीमित न मानकर उसे धर्म की स्थापना का साधन माना गया। यही कारण है कि श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता में यह उपदेश दिया कि धर्म के लिए युद्ध करना उसका कर्तव्य है।

महाभारत की युद्ध नीति में निम्नलिखित प्रमुख तत्व पाए जाते हैं –

1. **धर्म और नीति का संतुलन –** युद्ध केवल शक्ति प्रदर्शन नहीं बल्कि धर्म की रक्षा हेतु।
2. **मनोवैज्ञानिक युद्ध –** सैनिकों का उत्साह बनाए रखना और शत्रु के मनोबल को तोड़ना।
3. **कूटनीति और छल –** समय-समय पर छल और राजनीति का प्रयोग भी आवश्यक माना गया।
4. **संधि और संवाद –** युद्ध से पूर्व शांति-स्थापना के प्रयासों को प्राथमिकता।

इन सबमें महिला पात्रों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष योगदान था। उन्होंने युद्ध की दिशा तय करने, प्रेरणा देने और नैतिक आधार प्रदान करने का कार्य किया।

द्रौपदी का रणनीतिक व नैतिक योगदान – महाभारत में द्रौपदी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि कहा जाए कि कुरुक्षेत्र युद्ध की जड़ द्रौपदी के अपमान में है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

द्रौपदी का सबसे बड़ा योगदान युद्ध के लिए नैतिक आधार तैयार करना था। द्यूतसभा में उसका अपमान पांडवों के लिए सहन न करने योग्य था। द्रौपदी ने प्रतिज्ञा ली कि जब तक दुर्योधन और दुशासन का वध न होगा तब तक वह अपने केश नहीं बांधेंगी। यही प्रतिज्ञा पांडवों के लिए युद्ध का सबसे बड़ा प्रेरणास्त्रोत बनी।

द्रौपदी ने भीम को यह शपथ दिलाई कि वह दुशासन का रक्त पिये बिना शांत नहीं होंगे। भीम का यह क्रोध और द्रौपदी का यह संकल्प युद्धभूमि में बार-बार स्मरण कराया जाता रहा। इस प्रकार द्रौपदी प्रत्यक्ष रूप से रणभूमि में नहीं उतरीं, परंतु उनकी प्रतिज्ञा और संकल्प ने युद्ध की रणनीति को ऊर्जा दी।

उनकी भूमिका मनोवैज्ञानिक युद्ध की थी। उन्होंने पांडवों को हर समय यह स्मरण कराया कि यह युद्ध केवल राज्य पाने का साधन नहीं बल्कि धर्म और नारी सम्मान की रक्षा का माध्यम है। इस दृष्टि से द्रौपदी महाभारत की सबसे प्रभावशाली महिला योद्धा कही जा सकती हैं।

कुंती की राजनीतिक और युद्ध नीति संबंधी भूमिका – कुंती का योगदान युद्ध नीति में प्रत्यक्ष युद्ध से अलग लेकिन अत्यंत निर्णायक था। वे पांडवों की माता होने के साथ-साथ उनकी मार्गदर्शक भी थीं।

कुंती ने पांडवों को सदैव एकता में रहने की शिक्षा दी। जब अर्जुन द्रौपदी को स्वयंवर से लाए तो कुंती ने अनजाने में कहा – 'जो लाए हो, सब मिलकर बाँट लो।' यह कथन सामाजिक दृष्टि से विवादास्पद हो सकता है,

किंतु राजनीतिक और युद्ध नीति की दृष्टि से यह अत्यंत दूरदर्शी था। इससे पांडवों में आंतरिक कलह की संभावना समाप्त हो गई और वे एकजुट होकर कौरवों का सामना करने लगे।

कुंती ने अपने पुत्रों को धर्म और नीति की राह पर चलने के लिए निरंतर प्रेरित किया। उन्होंने युद्ध के समय भी पांडवों को यह स्मरण कराया कि उनका उद्देश्य केवल बदला लेना नहीं बल्कि धर्म की स्थापना करना है।

कुंती का योगदान इस बात में है कि उन्होंने पांडवों के मनोबल को सदैव ऊँचा रखा और उन्हें रणनीतिक दृष्टि से एकसूत्र में बाँध दिया।

सुभद्रा, अभिमन्यु और नारी का परोक्ष प्रभाव - सुभद्रा का प्रत्यक्ष युद्ध में योगदान कम था, किंतु उन्होंने परोक्ष रूप से युद्ध नीति को प्रभावित किया। गर्भावस्था में अर्जुन ने सुभद्रा को चक्रव्यूह भेदन का ज्ञान सुनाया। यद्यपि सुभद्रा बीच में सो गई, फिर भी गर्भस्थ अभिमन्यु ने आधा ज्ञान ग्रहण कर लिया। यही ज्ञान बाद में कुरुक्षेत्र में उसकी वीरता का कारण बना।

अभिमन्यु का चक्रव्यूह में प्रवेश और वीरतापूर्वक लड़ाई महाभारत युद्ध का महत्वपूर्ण अध्याय है। यह सुभद्रा की परोक्ष भूमिका का परिणाम था।

इसके अतिरिक्त सुभद्रा ने भी पांडवों के लिए मनोबल बढ़ाने का कार्य किया। वह यदुवंश की पुत्री थीं और उनके माध्यम से पांडवों को यदुवंश का सहयोग भी प्राप्त हुआ।

इस प्रकार सुभद्रा का योगदान प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष था, किंतु रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

उलुका और अन्य महिला योद्धाओं का प्रत्यक्ष योगदान - महाभारत में कुछ गौण महिला पात्र भी हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष युद्ध में भाग लिया। उलुका उनमें प्रमुख हैं। उन्होंने शत्रु पक्ष के विरुद्ध साहसपूर्वक रणभूमि में प्रवेश किया और अपनी वीरता का परिचय दिया।

महिलाओं का यह प्रत्यक्ष युद्ध में उतरना यह दर्शाता है कि महाभारत केवल पुरुषों की वीरगाथा नहीं बल्कि महिलाओं के साहस और नेतृत्व का भी ग्रंथ है। यद्यपि इन महिला योद्धाओं के नाम इतिहास में उतने प्रसिद्ध नहीं हैं, किंतु उनका योगदान यह सिद्ध करता है कि महिलाएँ भी युद्ध नीति के व्यावहारिक पक्ष में सक्षम थीं।

इस प्रकार महाभारत युद्ध नीति के अध्ययन में हमें द्रौपदी और कुंती जैसे परोक्ष योगदानकर्ताओं के साथ-साथ उलुका जैसी प्रत्यक्ष योद्धाओं का भी उल्लेख करना चाहिए।

महिला योद्धाओं की भूमिका का तुलनात्मक व समीक्षात्मक अध्ययन- महाभारत की महिला योद्धाओं की तुलना यदि पुरुष योद्धाओं से की जाए तो यह स्पष्ट होता है कि दोनों की भूमिकाएँ अलग-अलग थीं किंतु समान रूप से महत्वपूर्ण। पुरुष योद्धा प्रत्यक्ष रणभूमि में शौर्य दिखा रहे थे, तो महिलाएँ मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक और नैतिक आधार प्रदान कर रही थीं। युद्ध केवल शस्त्रों से नहीं जीता जाता, बल्कि मनोबल, प्रेरणा और नैतिक बल से भी जीता जाता है। इस दृष्टि से महिलाएँ युद्ध नीति का अभिन्न अंग थीं।

समीक्षात्मक दृष्टि से कहा जा सकता है कि महाभारत में महिला योद्धाओं की भूमिका को पर्याप्त मान्यता नहीं मिली। इतिहासलेखन की पुरुष-प्रधान प्रवृत्ति ने उनके योगदान को गौण बना दिया। किंतु वस्तुतः द्रौपदी, कुंती, सुभद्रा और अन्य महिलाएँ युद्ध नीति की धुरी थीं।

निष्कर्ष और भविष्य की संभावनाएँ - महाभारत के युद्ध का अध्ययन केवल पुरुष योद्धाओं तक सीमित करना अधूरा दृष्टिकोण है। महिला योद्धाओं और पात्रों ने प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों रूपों में युद्ध नीति को गहराई से प्रभावित किया।

द्रौपदी ने अपमान और प्रतिज्ञा के माध्यम से युद्ध को नैतिक आधार दिया।

कुंती ने एकता और राजनीतिक संतुलन बनाए रखा।

सुभद्रा ने अभिमन्यु के माध्यम से चक्रव्यूह भेदन की रणनीति का योगदान दिया।

उलुका जैसी योद्धाओं ने प्रत्यक्ष युद्ध में भाग लेकर साहस का परिचय दिया।

इस प्रकार महिलाएँ महाभारत युद्ध नीति की अदृश्य लेकिन निर्णायक शिल्पकार थीं। उनका अध्ययन आज के समाज के लिए भी प्रासंगिक है क्योंकि यह बताता है कि नेतृत्व, प्रेरणा और रणनीति में महिलाओं का योगदान अनिवार्य है।

भविष्य में इस विषय पर और शोध की आवश्यकता है। विशेषकर अन्य पौराणिक ग्रंथों में महिला योद्धाओं की भूमिका की तुलना करके युद्ध नीति में उनकी स्थिति को और स्पष्ट किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. व्यास, महाभारत (भीष्म पर्व एवं द्रोण पर्व), गीता प्रेस, गोरखपुर, 2018। - पृ. 245-312
2. डॉ. द्वारका प्रसाद मिश्र, महाभारत और युद्धनीति, भारतीय विद्या भवन प्रकाशन, मुंबई, 2016। - पृ. 98-156
3. पं. रामचंद्र शुक्ल, भारतीय महाकाव्य और स्त्री योगदान, प्रयाग विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2014। - पृ. 203-267
4. डॉ. सुभाष चंद्र भारती, महाभारत में नारी और युद्ध नीति, दिल्ली विश्वविद्यालय शोध पत्र, 2019। - पृ. 45-122
5. कृष्णदत्त वर्मा, महाभारत का युद्ध विज्ञान, ज्ञानमंडल प्रकाशन, वाराणसी, 2010। - पृ. 151-214

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

धार्मिक स्थलों के विकास कार्य (धार्मिक नगर चित्रकूट के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. राजेश कुमार सिंह तिवारी*

* सहा. प्रा. (वाणिज्य) राजभान सिंह स्मा. महाविद्यालय, मनिकवार, जिला रीवा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत एक धर्म प्रधान देश है विंध्य की पवित्र धरती में अनेक तीर्थ मौजूद है जो हमारी सांस्कृतिक आस्था सामाजिक समरसता और आर्थिक गतिविधियों के केन्द्र है, धार्मिक नगर चित्रकूट त्रेता युग के भगवान श्रीराम से सम्बन्ध रखता है। बनवास के समय श्रीराम सीता और लक्ष्मण चित्रकूट पधारे थे तथा वही पर बनवास का समय व्यतीत करने का निर्णय लिया था, किन्तु भाई भरत के चित्रकूट पहुँचने और श्रीराम को अयोध्या का राजतंत्र स्वीकार करने का कहा इस पर श्रीराम चित्रकूट मे रह कर बनवास के समय में इसे अवरोध माना और यहाँ से चलकर पंचवटी पहुचें।

चित्रकूट एक विशेष धार्मिक नगरी है यहॉं हर भारतीय की श्रद्धा जुडी हुई है। समाज के आकांक्षाओं के अनुरूप शासन ने चित्रकूट का विशेष विकास करने का निर्णय लिया है। यहाँ अमावास्या के दिन लगभग 5 लाख और अन्य दिन लगभग 20 हजार श्रद्धालु पहुँचते है तथा दीपावली के अवसर पर 35 से 40 लाख श्रद्धालु आते है। धार्मिक स्थलों का विकास करने से समाज की समस्त अभिलाषाएँ पूरी होती है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र के लेखन में प्रत्यक्ष अवलोकन एवं लोगों से सक्षात्कार द्वारा प्राथमिक समंक एवं समाचार पत्रों, सरकारी विज्ञापनों एवं बजट पत्रकों के द्वारा द्वितीयक सामग्री एकत्रित की गई है।

चित्रकूट के मुख्य स्थान एवं विकास – चित्रकूट विन्ध्य पर्वतमाला के बीच बसा हुआ एक दिव्य धार्मिक स्थान हैं, जो भगवान श्री राम के जीवन से अपने गहरे धार्मिक सम्बन्धों एवं वनवास के दौरान बिताये गये समय को सजोये हुए है, जो एक प्रेरणा का स्त्रोत है। चित्रकूट के मुख्य दर्शनीय स्थान निम्न है–

1. **रामघाट –** यह घाट चित्रकूट का प्रवेश द्वार एवं हृदय स्थल है, जो मन्दाकिनी नदी के तट पर बना हुआ है। यहाँ पर भगवान श्री राम माता सीता एवं लक्ष्मण ने अपने 14 वर्षो मे से लगभग 12 वर्ष विताये थे। रामघाट में ही श्री राम स्नान करने के बाद यहाँ पर दीपदान किया करते थे आज भी लोगों के द्वारा घाट में स्नान करके दीपदान करते है। इसी घाट के पास गोस्वामी तुलसीदास की भगवत ज्ञान प्राप्ति हुई थी।
2. **जानकी कुण्ड –** शान्त जानकी कुण्ड एक प्राचीन और धार्मिक स्थल है जो रामघाट से 2 कि.मी. दूरी पर स्थित है, ऐसा कहा जाता हे कि इसका नामकरण माता सीता से जुड़ा होने के कारण इसको जानकी कुण्ड कहा गया। यहाँ पर मन्दाकिनी (गंगा) का घाट थोड़ा सकरा है जहाँ पर माता सीता स्नान करती थी। लोग यहाँ आध्यात्मिक आभा को आत्मसात करने के लिए आते है।
3. **स्फटिक शिला –** जानकी कुण्ड से कुछ ही कि.मी. आगे स्फटिक शिला स्थित है जिसमें भगवान श्री राम के चरणों का निशान है। ऐसा कहाँ जाता है कि यही पर माता सीता को भगवान इन्द्र के पुत्र जयंत ने चोंच मारी थी, जो उस समय कौवे के भेष धारण किये हुए थें।
4. **हनुमान धारा –** हनुमान धारा राम घाट से करीब 3 कि.मी. पर स्थित है यहॉं पर श्री हनुमान जी पंचमुखी मन्दिर है और हमेशा वहाँ जल बहता रहता है। इसके ऊपर की ओर जाने पर सीता रसोई है जो आस्था का केन्द्र है।
5. **गुप्त गोदावरी –** गुप्त गोदावरी रामघाट से 18 कि.मी. पर स्थिति एक पवित्र और मनोरम स्थल है यह एक प्राकृतिक गुफाओं का एक समूह हैं जो श्री राम व लक्ष्मण के वनवास से जुड़ा हुआ है। ऐसी मान्यता हैं कि श्री राम जी के चित्रकूट आगवन की जानकारी महर्षि गौतम की पुत्री गोदावरी जी को लगी तो वे नासिक से भगवना श्री राम के दर्शन हेतु भूमिगत मार्ग से होते हुए यहाँ आकर प्रकट हुई थी इस कारण इस गुफा का नाम गुप्त गोदावरी पड़ा।
6. **सती अनुसुइया आश्रम –** चित्रकूट में रामघाट से करीब 12 कि.मी. दूरी पर सती अनुसुइया का आश्रम है। अनुसुइया महर्षि कर्दम और देवहूति की पुत्री और ब्रम्हा की मानस पुत्री कपिल की बहन थी तथा महर्षि अति की पत्नी थी। सती अनुसुइया को वरदान स्वरूप दत्तात्रेय (विष्णु अवतार) चंद्रमा (ब्रम्हा के अंश) और दुर्वासा (शिव के अवतार) अनके तीन पुत्र हुए। उनकी कठोर तपस्या के कारण मंदाकिनी नदी पृथ्वी पर अवितरित हुई।
7. **कामदगिरि पर्वत परिक्रमा –** चित्रकूट में कामदगिरि पर्वत की परिक्रमा का इतिहास त्रेता युग से जुड़ा है। इस पर्वत में वनवास के दौरान भगवान राम सीता और लक्ष्मण ने यहाँ रह कर अपना समय बिताया था। मान्यता के अनुसार भगवान राम ने स्वयं इस पर्वत को आर्शीवाद दिया था कि जो इसकी पंचकोसी परिक्रमा करेगा, उसकी सभी मनोकामनाएँ पूरी होगी। इस पर्वत के प्रमुख देवता कामतानाथ जी स्वामी है जिनके दर्शन मात्र से ही सभी दुख दर्द दूर हो जाते है। इसी परिक्रमा के अन्तर्गत लक्ष्मण पहाड़ी स्थिति है तथा इसमें चारों दिशाओं में चार मुखार बिन्दु है।
8. **भरत कूप –** भरत कूप की कहानी भगवान राम के वनवास काल से जुड़ी हो जब उनके भाई भरत चित्रकूट में उन्हें अयोध्या का राजा बनाने के लिए सभी पवित्र तीर्थो का जल लेकर आये थें किन्तु भगवान राम के द्वारा

राजा बनने और अयोध्या वापस जाने से इंकार करने पर ऋषि अति की सलाह पर सारे जल को एक कुएँ में डाल दिया, जिससे इस कूप को भरत कूप कहा जाने लगा। इस कुएँ के जल से स्नान करने से समस्त तीर्थो के स्थानों का स्नान का फल प्राप्त होता है।

उपरोक्त धार्मिक स्थानों के अधोसंरचना विकास हेतु म.प्र. शासन द्वारा वर्तमान में धार्मिक नगरी चित्रकूट के विकास के लिए 11 कार्य लगभग 300 करोड़ के लागत से विकास कार्य करने का निर्णय लिया है। निम्नलिखित सारणी में विभिन्न कार्यो का विवरण एवं उनकी लागत राशि को दर्शाया गया है-

सारणी क्रमांक - 1: चित्रकूट के विकास कार्यो का विवरण

क्र.	विकास कार्य का विवरण	लागत राशि	अन्य विवरण
1.	फोरलेन 16 कि. सडक (मोहकम गढ़ तिराहा से पीली कोठी तक)	44.62 करोड़	-
2.	अन्डर ग्राऊण्ड विद्युतीकरण	11.13 करोड़	-
3.	सभी वार्डो में 60 कि.मी. पाइप लाइन	7.49 करोड़	-
4.	कामदि गिरि परिक्रमा पथ	36.84 करोड़	-
5.	अध्यात्मिक घाट (राधव प्रयाग घाट)	27.21 करोड़	-
6.	श्रीराम संस्कृति वन	12.53 करोड़	-
7.	मंदाकिनी/पैसुनी नदी पुर्नजीवन	1.83 करोड़	-
8.	सीवर प्रोजेक्ट	32.08 करोड़	-
9.	गुप्त गोदावरी से मोड़ तक (14 कि.मी. फोर लेन)	81.00 करोड़	-
10.	चित्रकूट मंदाकिनी घाट निर्माण	24.62 करोड़	-
11.	सतना चित्रकूट फोरलेन (डी.पी.आर. स्टेज में)	25.00 करोड़	-

स्त्रोत- नगर प्रशासन चित्रकूट, एक रिपोर्ट

उपरोक्त सारणी में स्पष्ट है कि समाज की मंशानुसार शासन चित्रकूट नगरी का विकास कार्य को अंजाम देने का निर्णय लिया है जिसे भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों में चित्रकूट का नाम भी सर्वोच्च स्थान पर होगा तथा देश-विदेश से पर्यटक चित्रकूट नगरी पहुॅचेगें तथा वनवास श्रीराम के आर्दशों का स्मरण करेगे इससे न केवल आवागवन बढेगा बल्कि आर्थिक गतिविधिया तेज होगी लोगो को रोजगार मिलेगा तथा साम्प्रदायिक सद्‌भाव एवे समरसता में वृद्धि होगी तथा स्वस्थ्य सांस्कृतिक, एवं अध्यात्मिक आचरण का विकास इस प्रकार समस्त समाज देश की एकता एवं समृद्धि और विदेशी सहयोग मे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करेंगा।

निष्कर्ष - निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि पवित्र नगरी चित्रकूट के विकास की दिशा में यह शासन का महत्वपूर्ण कदम है जो आगे और विकसित करने की दिशा में बढेंगा तथा एक स्वस्थ्य सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास की दिशा में और आगे बढ़ेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. समाचार पत्र दैनिक भास्कर
2. 5 नवम्बर 2025

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

छत्तीसगढ़ राज्य में भूमि उपयोग एवं सिंचाई : एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. घनश्याम नागे*

* अतिथि व्याख्याता (भूगोल) शा.पं.जवाहर लाल नेहरु कला एवं विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बेमेतरा (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण वन 46,25,200 हेक्टेयर क्षेत्र में विस्तृत है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 38.21 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में सबसे अधिक वन दक्षिणी क्षेत्र के अंतर्गत नारायणपुर जिले में 86.17 प्रतिशत है। सबसे कम वन दुर्ग, बेमेतरा व रायपुर जिला में आते हैं, जहां वन क्षेत्र प्रतिशत शून्य है। कृषि के लिए अप्राप्त भूमि का क्षेत्रफल 10,38,069 हेक्टेयर है, जो कुल क्षेत्रफल का 8.57 प्रतिशत है। अकृषि कार्यो में लगी भूमि का प्रतिशत 6.5 तथा ऊसर एव पथरीली भूमि का प्रतिशत 2.39 है। ऊसर एवं गैर कृषि भूमि का सबसे अधिक प्रतिशत (8.04) दंतेवाड़ा में तथा सबसे कम (0.002) बेमेतरा जिला में है। कृषि कार्यो के लिए जो भूमि उपलब्ध नहीं है,उनमें सबसे अधिक प्रतिशत(17.90) रायपुर जिला का है, और सबसे कम (0.45) नारायणपुर व कोण्डागांव (1.87) में है। अध्ययन क्षेत्र में पडती के अतिरिक्त अन्य भूमि 12,66,393 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 10.47 प्रतिशत है। चरागाह और घास का मैदान 89,3,656 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 7.39 प्रतिशत है। झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग का क्षेत्र 2,706 हेक्टर है। यह क्षेत्रफल का 0.02 प्रतिशत है। इसी तरह कृषि योग्य बेकार भूमि 37,00,32 हेक्टेयर हैं। यह क्षेत्रफल का 3.06 प्रतिशत है। पडती भूमि का क्षेत्र 54,5,816 हेक्टेयर है। यह क्षेत्रफल का 4.51 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में फसलों का निराक्षेत्रफल 46,29,677 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के क्षेत्रफल का 38.24 प्रतिशत है। समतल मैदानी क्षेत्र में निरा बोया गया क्षेत्र अधिक है एवं जहां वनों की अधिकता तथा ढाल युक्त भूमि है वहां निरा बोया गया क्षेत्र न्यूनतम है। अध्ययन क्षेत्र के भूमि उपयोग प्रतिरूप में काफी भिन्नता है। छत्तीसगढ़ राज्य अपने विषम पहाड़ी व पठारी उच्चावच के कारण तालाबों द्वारा सिंचाई के लिए अधिक उपयुक्त है परंतु हाल के वर्षो में यहां नहरें और नलकूपों द्वारा सिंचाई अधिक लोकप्रिय हो रही है। अध्ययन क्षेत्र में नहरों की संख्या भले ही कम है लेकिन इनके द्वारा सिंचित क्षेत्र प्रतिशत (56.16) सबसे अधिक है। सरकार द्वारा अध्ययन क्षेत्र में किसानों को नलकूप संचालन हेतु सस्ते दामों पर एवं समुचित मात्रा में बिजली, पेट्रोल, डीजल की उपलब्धि कराकर कृषि भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन लाया जा सकता है। फसलों के निराक्षेत्रफल प्रतिशत में वृद्धि की जा सकती है।इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में उपलब्ध तालाबों एवं बांधों का पांच – छह वर्षों के नियमित अन्तराल पर गहरीकरण करवाना आवश्यक है। इससे सिंचित क्षेत्र प्रतिशत में वृद्धि किया जा सकता है।

शब्द कुंजी – अकृषिभूमि, वन, पड़ती, निराक्षेत्र सिंचाई।

प्रस्तावना – भूमि मानव का सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है,जो कृषि सहित सभी विकास कार्यो के लिए मूलभूत आधार प्रदान करता है। भूमि पर ही मानव विभिन्न क्रियाकलाप करता है। वस्तुत: भूमि उपयोग भौगोलिक अध्ययन का एक महत्वपूर्ण परिवर्तनशील पक्ष है, जो प्रारम्भिक काल से ही मानव प्रविधि विकास क्रम के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। भूमि उपयोग न केवल कृषि के क्षेत्र में अपितु नगरीय विकास एवं प्रादेशिक नियोजन में भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भौगोलिक अध्ययन में भूमि का प्रयोग क्षेत्र, प्रकृति, उत्पादन कारक, उपभोग पदार्थ, स्थिती, संपत्ति तथा पूंजी के रूप में किया जाता है। भूमि की विशेषताओं के आधार पर भूमि का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है। इस प्रकार भूमि को विभिन्न श्रेणियों या वर्गो में विभाजित कर दिया जाता है। इस वर्गीकरण के अनेक आधार हो सकते हैं, जैसे भौतिक प्राकृतिक व सामाजिक व्यवस्थाएँ आदि। वर्तमान में बढ़ती हुई जनसंख्या तथा ज्ञान –विज्ञान में प्रगति के कारण भूमि उपयोग की सीमाओं में बहुत अधिक परिवर्तन होते जा रहे है।

कृषि को प्रभावित करने वाले कारकों में सिंचाई का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत जैसे देशों में विशेषत: जहां वर्षा अपर्याप्त तथा अविश्वसनीय है सिंचाई का अधिक महत्व है। सिंचाई कृषि का एक आधारभूत निर्धारक तत्व इसलिए भी है, कि वर्षा की अपर्याप्तता विशेषत: शुष्क कृषि वाले क्षेत्रों में कृषि उत्पादन में बड़ी बाधा है। परम्परागत कृषि में सिंचाई का महत्व केवल वर्षा की कमी तथा सुखे के प्रकोपों से सुरक्षात्मक भूमिका के रूप में रहा है किंतु अधिक उपज वाले उन्नत बीजों, रासायनिक उर्वरकों तथा बहुफसली कृषि को अपनाने से नियंत्रित सिंचाई उत्पादकता वृद्धि में प्रधान कारक बन गई है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में विरल तथा अनिश्चित वर्षा के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने में सिंचाई महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। स्वतंत्रता के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि के साथ–साथ सिंचाई पर अत्यधिक ध्यान दिया गया और यह काम आज भी जारी है। आज देश के विस्तृत क्षेत्रों में नहरों ,नलकूपों, कुओं, तालाबों , तथा अनेक बड़े बांधों और सैकड़ो मध्यम एवं छोटी सिंचाई योजनाओं को क्रियान्वित किया गया है । यही कारण है कि वर्तमान में भारत के विस्तृत क्षेत्र में सिंचाई की जाती है ,किंतु अभी भी इस दिशा में बहुत काम किया जाना बाकी है। इसलिए विभिन्न योजना कालों में सूखाग्रस्त क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधाओं के विस्तार पर विशेष ध्यान दिया गया। विभिन्न राज्यों में सिंचाई की सुविधाओं तथा सिंचाई के विकास

के स्तरों में प्रादेशिक विभिन्नताएं दृष्टिगोचर होती है। किसी भूमि का उपयोग किस सीमा तक किया जा रहा है कि उस प्रतिरूप को जानना भी आवश्यक है साथ ही साथ छत्तीसगढ़ में प्रादेशिक स्तर पर भूमि उपयोग तथा सिंचाई के साधनों एवं सिंचित क्षेत्र प्रतिरूप में बहुत अधिक विभिन्नता पाई जाती है। इस विभिन्नता के कारणों को जानने तथा क्षेत्र के समग्र विकास के लिए अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य है। यह मध्यप्रदेश के दक्षिण – पूर्व में 17°43' उत्तरी अक्षांश से 24°5' उत्तरी अक्षांश तथा 80°15' पूर्वी देशांतर से 84°20'पूर्वी देशांतर रेखाओं के मध्य स्थित है। इसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 1,35,194 वर्ग किलोमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 2,55,45,198 है। यह देश का 2.11 प्रतिशत है। जिसमें पुरुष जनसंख्या 1,28,32,895 तथा महिला 1,27,12,303 है। राज्य में अनुसूचित जाति जनसंख्या 12.81 प्रतिशत तथा जनजाति 30.62 प्रतिशत है। यहां जनसंख्या वृद्धि दर 22.61 प्रतिशत है ,जो पिछले दशक में 18.06 प्रतिशत थी। राज्य में साक्षरता दर 72.28 प्रतिशत है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. अध्ययन क्षेत्र में भूमि – उपयोग प्रतिरूप का पता लगाना।
2. अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के विभिन्न साधनों की संख्या एवं सिंचित क्षेत्र का पता लगाना।
3. भूमि उपयोग एवं सिंचाई से संबंधित समस्याओं का पता लगाकर सुझाव हेतु नियोजन प्रस्तुत करना।

विधितंत्र – प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक ऑकड़ों पर आधारित है। इस अध्ययन हेतु कृषि सांख्यिकी सारणी पुस्तिका (वर्ष 2020-22), कार्यालय आयुक्त भू-अभिलेख रायपुर छत्तीसगढ़ से ऑकड़ों का संकलन कर विश्लेषण कर अध्ययन किया गया है। भूमि उपयोग प्रतिरूप के अध्ययन के लिए वर्ष 2020 से 2022 तक के आंकड़ों का औसत ज्ञात कर विश्लेषण किया गया है। अध्ययन क्षेत्र में केवल सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले विभिन्न स्रोतों की संख्या एवं विभिन्न स्रोतों द्वारा सिंचित क्षेत्र को हेक्टेयर एवं प्रतिशत में बताया गया है।

अध्ययन क्षेत्र में भूमि उपयोग वितरण – किसी प्रदेश की संपूर्ण भूमि का विभिन्न कार्यों के लिए किया जाने वाला उपयोग भूमि उपयोग कहलाता है। ग्रेट ब्रिटेन में प्रथम भूमि उपयोग सर्वेक्षण 1930 में सर डडले स्टाम्प ने करवाया था। इसमें समस्त भूमि को 6 भूमि उपयोग श्रेणियां में विभक्त किया गया था। द्वितीय भूमि उपयोग सर्वेक्षण 1960 में आरंभ हुआ जिसमें भूमि को 13 श्रेणियां में विभक्त किया गया है। इस प्रकार स्पष्ट है, कि भूमि उपयोग के अंतर्गत समस्त भूमि का वर्गीकरण विभिन्न कार्यात्मक श्रेणियों के अनुसार किया जाता है।

भारत में ग्रामीण भूमि उपयोग की विभिन्न श्रेणियां इस प्रकार है –

1. वन,
2. बंजर तथा कृषि अयोग्य भूमि,
3. गैर कृषि उपयोग हेतु प्रयुक्त भूमि
4. कृषि योग्य बंजर भूमि
5. स्थायी चरागाह एवं पशुचारण,
6. वृक्षों एवं झाड़ियों के अंतर्गत भूमि,
7. चालू पडती
8. अन्य पडती
9. शुद्ध बोया गया क्षेत्र और
10. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र।

अध्ययन क्षेत्र में वनों का वितरण – मानव के हस्तक्षेप के बिना प्राकृतिक रूप से उगने वाले पेड़ पौधे को प्राकृतिक वनस्पति कहते हैं। वन प्राकृतिक संसाधन है जिसका राष्ट्रीय महत्व है। वनों का महत्व इनसे होने वाले प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ से भी स्पष्ट होता है। किसी प्रदेश की प्राकृतिक वनस्पति का निर्धारण उस स्थान की जलवायु के द्वारा होता है। अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण वन का प्रतिनिधि वृक्ष बबूल है। चरागाह एवं सड़क ,नदी तथा तालाब के किनारे आम ,इमली ,पीपल, नीम, बरगद ,आवला,बेर, आदि प्रमुख है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्रों में इमरती वृक्षों की बहुलता पाई जाती है। इन वृक्षो में साल, सागौन , सरई, शीशम, हर्रा, बहेड़ा, आदि प्रमुख है।

अध्ययन क्षेत्र वन संपदा की दृष्टि से संपन्न राज्य है। अध्ययन क्षेत्र में वनों का औसत क्षेत्रफल 46,25,200 हेक्टेयर है। यह कुल क्षेत्रफल का 38.21 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में सबसे अधिक वन राज्य के दक्षिणी क्षेत्र नारायणपुर जिला में है। यहां 88.17 प्रतिशत क्षेत्र में वन है। दूसरे क्रम में कोरिया जिला 58.77 प्रतिशत तीसरे क्रम में धमतरी 48.02 प्रतिशत इसके बाद क्रमशः गरियाबंद 45.77 प्रतिशत, सूरजपुर 44.25 प्रतिशत, मुंगेली 40.39 प्रतिशत क्षेत्र में वन है। दुर्ग एवं बेमेतरा जिला में वन क्षेत्र की स्थिति शून्य है। रायपुर जिले में 0.43 प्रतिशत क्षेत्र में वन है। अध्ययन क्षेत्र में वनों का वितरण अत्यधिक असमान है जिसका कारण यहां की प्राकृतिक परिस्थितियां है। विशेषतया जलवायु एवं उच्चावच की विविधता ने वनों के वितरण को प्रभावित किया है।

सारणी क्र. 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

कृषि भूमि के लिए अप्राप्त भूमि – अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि के लिए अप्राप्त भूमि का कुल क्षेत्रफल 10,38,069 हेक्टेयर है, जो पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 8.57 प्रतिशत है। इस वर्ग में भूमि उपयोग को दो वर्गों में रखा गया है। अकृषि कार्यों में लगी भूमि ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमि है। अकृषि कार्यों में लगी भूमि 6.5 प्रतिशत तथा ऊसर एवं पथरीली भूमि का प्रतिशत 2.39 है। अकृषि कार्यों में प्रयुक्त भूमि के अंतर्गत भूमि उपयोग अधिवास,जलाशय, परिवहन के मार्गो ,उद्योग एवं खानों को सम्मिलित किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में इस प्रकार के भूमि के विस्तार में किसी भी क्षेत्र की सांस्कृतिक उन्नति एवं आर्थिक समृद्धि का आकलन किया जा सकता है।

ऊसर एव कृषि के अयोग्य भूमि के अंतर्गत अनूपजाऊ पथरीली दलदली एवं उबड -खाबड चट्टानी भूमि सम्मिलित की जाती है। राज्य के दक्षिणी क्षेत्र दंतेवाड़ा जिले में ऊसर व गैर मुमकिन भूमि का प्रतिशत सबसे अधिक 8.04 प्रतिशत है। इसके बाद उत्तर पूर्वी क्षेत्र जशपुर जिले में 8.14 प्रतिशत उत्तरी-मध्यवर्ती क्षेत्र कोरबा में 4.33 प्रतिशत तथा बस्तर का 3.28 प्रतिशत क्षेत्र ऊसर एवं गैरमुमकिन भूमि के अंतर्गत सम्मिलित है।

पडती के अतिरिक्त अन्य अकृषि क्षेत्र – पडती के अतिरिक्त अन्य अकृषि क्षेत्र के अंतर्गत भूमि को तीन उपविभागों में रखा गया है। स्थायी चरागाह एवं अन्य घास के क्षेत्र, झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग एवं कृषि योग्य बेकार भूमि आदि सम्मिलित है।

पडती के अतिरिक्त अन्य भूमि का क्षेत्र 12,66,393 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 10.47 प्रतिशत है। स्थायी चरागाह एवं घास के

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

क्षेत्र का विस्तार 7.39 प्रतिशत है। झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग का क्षेत्र मात्र 0.02 प्रतिशत एवं कृषि योग्य बेकार भूमि 3.06 प्रतिशत है। राज्य के उत्तरी क्षेत्र बलरामपुर जिला में मुस्तकील व ढीगर चरागाह क्षेत्र सबसे अधिक 14.65 प्रतिशत है। इसके बाद मध्यवर्ती क्षेत्र रायपुर जिला में 12.26 प्रतिशत दक्षिणी क्षेत्र कांकेर 10.43 प्रतिशत तथा उत्तरपूर्वी-मध्यवर्ती क्षेत्र के अंतर्गत रायगढ़ 10.28 प्रतिशत जांजगीर चांपा 8.48 प्रतिशत है। सबसे कम दंतेवाड़ा 1.24 तथा बीजापुर 1.36 प्रतिशत है।

इन जिलों में चरागाह का क्षेत्र सबसे कम है जो वर्तमान पशुओं की संख्या को भरण पोषण में सहायता पहुंचाने में असमर्थ है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या की वृद्धि के कारण चरागाह एवं घास के क्षेत्र में निरंतर कमी होती जा रही है।

झाड़ियों के झूण्ड तथा बाग के अंतर्गत क्षेत्र (भूमि) में छोटे-छोटे गुच्छेदार पेड़ छायादार वृक्ष सम्मिलित किए जाते हैं, जो निराफसली क्षेत्र में सम्मिलित नहीं होते हैं। इसके अंतर्गत 2,706 हेक्टेयर क्षेत्र है जो पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 0.02 प्रतिशत है। क्षेत्र के नारायणपुर ,दंतेवाड़ा बीजापुर, रायगढ़ एवं सरगुजा जिलों में झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग क्षेत्र का क्षेत्र निरंक है।

कृषि योग्य बेकार भूमि – इस वर्ग में वे भूमि सम्मिलित होती है, जो कृषि योग्य है, लेकिन भौतिक, सामाजिक एवं आर्थिक बाधाओं के कारण इनमें कृषि नहीं की जाती है। ये छोटे-छोटे पेड़ पौधों से ढके होते हैं, जो कृषि भूमि के बीच भूखण्डों में स्थित है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि योग्य बेकार भूमि का क्षेत्रफल 3,70,032 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 3.06 प्रतिशत है। राज्य के दक्षिणी एवं मध्यवर्ती क्षेत्र में कृषि योग्य पड़ती भूमि अधिक है। इसके अंतर्गत सबसे अधिक सुकमा 10.36 प्रतिशत, दंतेवाड़ा 8.74, रायपुर 7.52 तथा दुर्ग 4.84 प्रतिशत क्षेत्र है। राज्य के दक्षिणी क्षेत्र वनांचल एवं पहाड़ी एवं पठारी क्षेत्र होने के कारण इस प्रकार की भूमि का क्षेत्र अधिक है। सबसे कम कृषि योग्य पड़ती भूमि उत्तरी -पूर्वी क्षेत्र सरगुजा, बलरामपुर, सूरजपुर, कोरिया एवं जशपुर में हैं। यहाँ कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र प्रतिशत शून्य है।

अध्ययन क्षेत्र में भूस्वामित्व का अत्यधिक बटवारा खेतों को छोटे-छोटे भागों में विभाजित करता है। इन छोटे या बहुत छोटे खेतों में कृषि करने में कठिनाई होती है। परिणामस्वरुप यह कृषि योग्य बेकार भूमि में परिवर्तित हो जाता है।

सारणी क्र. 02 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

पडती भूमि – जिस भूमि को भूतकाल में कृषि कार्य हेतु उपयोग में लाई जाती थी,परन्तु पिछले कुछ वर्षो से(1-5 वर्ष तक) यह भूमि अस्थायी रूप से अकृषि भूमि के रूप में पडती भूमि की अंतर्गत रखी जाती है। अध्ययन क्षेत्र में पडती भूमि का क्षेत्रफल 5,45,816 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 4.51 प्रतिशत है।

राज्य के दक्षिणी क्षेत्र(दंतेवाड़ा जिला,) में वन खनिज एवं पहाड़ी क्षेत्र होने के पड़ती भूमि का क्षेत्र सबसे अधिक (9.22 प्रतिशत) है। इसके बाद उत्तरी-मध्यवर्ती क्षेत्र में रायगढ़ 6.81, जशपुर 6.70 तथा उत्तरी क्षेत्र के अंतर्गत सरगुजा 6.06 बलरामपुर 5.26, कोरिया 5.36 प्रतिशत तथा मध्यवर्ती क्षेत्र रायपुर जिला में पड़ती भूमि का प्रतिशत 5.68 है।

अध्ययन क्षेत्र में फसलों का निराक्षेत्रफल – अध्ययन क्षेत्र में फसलों का निराबोया गया क्षेत्र 46,29,677 हेक्टेयर है। यह पृष्ठ के कुल क्षेत्रफल का 38.24 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न जिलों में निराफसली क्षेत्र के वितरण में काफी भिन्नता है। निराफसली क्षेत्र का वितरण मिट्टी की उर्वरता से संबंधित है। निराफसली क्षेत्र का प्रतिशत सबसे अधिक बेमेतरा में (79.15), दुर्ग (64.06), जांजगीर (58.42) ,रायपुर (56.58), बलौदाबाजार-भाटापारा (51.47) तथा महासमुंद 52.60 प्रतिशत है। नारायणपुर तथा बीजापुर जिला में फसलों का निराक्षेत्र प्रतिशत सबसे कम है। यहाँ क्रमश: 3.59 तथा 12.36 प्रतिशत है।

समतल मैदानी क्षेत्र में निराबोया गया क्षेत्र अधिक है एवं जहां वनों की अधिकता है तथा ढाल युक्त भूमि है वहां निरा बोया गया क्षेत्र न्यूनतम है। असमतल धरातल के कारण कृषि का विस्तार कम है। सिंचाई सुविधाओं वाले भागों में दो फसली क्षेत्र अधिक है। दो फसली क्षेत्र की कमी का प्रमुख कारण कृषि की मानसून पर निर्भरता तथा सिंचाई सुविधाओं का अभाव है।

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई – छत्तीसगढ़ की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। अत: राज्य की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने तथा प्रतिकूल मौसम में कृषि उत्पादन बढ़ाने में सिंचाई का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रदेश की मानसूनी वर्षा सिंचाई की आवश्यकता को बढ़ा देती है। सिंचाई के साधनों द्वारा वर्षा की अनिश्चितता से उत्पन्न समस्याओं का सामना किया जा सकता है। अत: अध्ययन क्षेत्र में लंबे समय से सिंचाई की आवश्यकता का अनुभव होता रहा है। वर्ष 1991 में भारतीय सिंचाई आयोग ने भी इसे स्वीकार किया है। इसके सुझाव अनुसार छत्तीसगढ़ में सिंचाई साधनों का विकास प्रारंभ किया गया। सन 1920 से 1940 की समयावधि में प्रगति हुई है किंतु अभी भी सिंचाई की आवश्यकता क्षेत्र में बनी हुई है।

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले साधनों की संख्या एवं वितरण प्रतिरूप – अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के साधनों में नहरें प्रमुख हैं। इसके अलावा नलकूप, तालाब, कुएँ एवं अन्य स्त्रोतों से सिंचाई की जाती है। प्रदेश में क्षेत्रवार सिंचाई के साधनों के प्रतिशत में बहुत अधिक असमानता मिलती है। प्रदेश में नहरो की संख्या 0.21 प्रतिशत, नलकूपों की संख्या 72.54, तालाबों की संख्या 5.31 प्रतिशत, कुओं की संख्या 21.83 प्रतिशत तथा जलाशयों की संख्या 0.21 प्रतिशत है।

नहरें – भारत में नहर सिंचाई का दूसरा महत्वपूर्ण साधन है जिससे लगभग 23.7प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्र लाभान्वित होता है। भारत में विश्व का सबसे बड़ा नहर तंत्र है जिसकी लंबाई 1 लाख किलोमीटर से अधिक है। देश का 63% से अधिक नहर सिंचित क्षेत्र उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, बिहार ,मध्य प्रदेश एवं पंजाब राज्यों में अवस्थित है।

सारणी क्र. 3: छत्तीसगढ़ सिंचाई के साधन एवं सिंचित क्षेत्र हेक्टेयर

छ.ग. सिंचाई के स्त्रोत	सिंचाई के साधनो की संख्या	सिंचित क्षेत्र (हे.)	सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत
नहरो की संख्या	1,048	9,53,753	45.92
नलकूपों की संख्या	3,47,115	10,81,960	52.07
कुएँ (सिंचाई)	10,45,59	1,37,55	0.67
तालाबों की संख्या	2,54,57	2,71,06	1.30
जलाशयों की संख्या	1,008	1,008	0.04
योग	**4,79,187**	**20,77,582**	**100**

स्त्रोत:-कृषि सांख्यिकी ,आयुक्त भू-अभिलेख, छ.ग. रायपुर

इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र ,कर्नाटक ,उड़ीसा, तमिलनाडु एवं छत्तीसगढ़ में देश का 27 प्रतिशत से अधिक नहर सिंचित क्षेत्र पाया जाता है। मध्य

प्रदेश और छत्तीसगढ़ राज्य अपने विषम पहाड़ी पठारी उच्चावच के कारण तालाबो द्वारा सिंचाई के लिए अधिक उपयुक्त है परंतु हाल के वर्षों में यहां नहरें और नलकूपों द्वारा सिंचाई अधिक लोकप्रिय हो रही है। अध्ययन क्षेत्र में नहरों की संख्या भले ही कम है लेकिन इनके द्वारा सिंचित क्षेत्र प्रतिशत (56.16) सबसे अधिक है।

अध्ययन क्षेत्र में सबसे ज्यादा नहरों की संख्या दंतेवाड़ा एवं कोरिया जिले में है। यहां इनका प्रतिशत क्रमश: 1.30 व 1.02 है। विशेष आदिवासी बहुल क्षेत्र होने एवं साथ ही राज्य एवं केंद्र सरकार की योजनाओं द्वारा लाभान्वित होने के कारण कारण यहां पर नहरों की संख्या भले ही अधिक है लेकिन नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्र कम है। नहरों की संख्या सबसे कम बेमेतरा जिला में है। यह क्षेत्र समतल मैदानी भू-भाग होने के कारण व भूमिगत जल की समीपता के कारण नलकूपों की संख्या अधिक है।

अध्ययन क्षेत्र के मुंगेली ,धमतरी ,बलौदाबाजार-भाटापारा व कोंडागाँव आदि क्षेत्रों में नहरों की संख्या 0.01 से 0.06 प्रतिशत के मध्य है। रायपुर ,दुर्ग महासमुंद ,बालोद ,गौरेला पेंड्रा-मरवाही , जांजगीरचांपा एवं सूरजपुर जिले में नहरो की संख्या 0.10 से लेकर 0.18 के मध्य हैं। इसी तरह अध्ययन क्षेत्र के बिलासपुर, सरगुजा, बलरामपुर ,कांकेर ,बस्तर तथा कबीरधाम जिले में नहरों की संख्या 0.20 से लेकर 0.28 प्रतिशत तक है। अध्ययन क्षेत्र के शेष जिलों जशपुर, रायगढ़, कोरबा, सुकमा, नारायणपुर राजनांदगाँव तथा गरियाबंद जिले में नहरों की संख्या 0. 33 से लेकर 0.73 प्रतिशत तक है। राज्य के समतल मैदानी क्षेत्र सबसे अधिक सिंचित क्षेत्र (जांजगीर-चांपा 86.45 रायपुर 80.8 बलौदा बाजार 72.97 धमतरी 72.97 बालोद 70.907 बिलासपुर 63.18 मुंगेली 73 प्रतिशत दुर्ग 57.26 प्रतिशत) है।

यहां नहरों के विकास के लिए अधिक सुविधाएँ होने के कारण यहां सिंचित क्षेत्र प्रतिशत अधिक है। इसके विपरीत उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्र पहाड़ी एवं पठारी होने के कारण नहरों द्वारा अपेक्षाकृत कम सिंचित है।

नलकूपों का वितरण - भारत में आज नलकूप सिंचाई का सबसे लोकप्रिय साधन है। इनकी शुरुआत सन 1930 में हुई और नियोजित विकास के साथ लघु सिंचाई कार्यक्रम के अंतर्गत गंगा के मैदान में इनका बेधन शुरू किया गया। आज देश में सरकारी और निजी नलकूपों की संख्या 45 लाख से अधिक है। निजी नलकूप एक किसान के लिए सिंचाई का बड़ा उपयोगी, सुविधाजनक और भरोसेमंद साधन है। इसको लगाने का खर्च एक औसत किसान वहन कर सकता है। हमारे देश में उत्तर प्रदेश में नलकूपो की संख्या सर्वाधिक है।

अध्ययन क्षेत्र में नलकूपों की संख्या 72.44 प्रतिशत है। क्षेत्र में सबसे ज्यादा नलकूपों की संख्या कबीरधाम जिले में है। यहाँ नलकूपों की संख्या 99.47 प्रतिशत है। दूसरे क्रम में नारायणपुर 97.07 व बेमेतरा 97.06, तथा तीसरे क्रम में धमतरी जिला(97 प्रतिशत) का स्थान आता है। यह जिला नदी बेसिन के आस पास के कारण यहां संख्या अधिक है। सबसे कम (3.55 प्रतिशत) नलकूपों की संख्या जशपुर तथा बलरामपुर जिला में (9.18 प्रतिशत) है। यह उत्तरी पहाड़ी पठारी क्षेत्र एवं पाट प्रदेश होने के कारण नलकूपों की संख्या कम है। अध्ययन क्षेत्र के गरियाबंद जिला में नलकूपों की संख्या 90.15 प्रतिशत, रायपुर जिला में 90.19, कोंडागांव में 91.80 प्रतिशत, दुर्ग जिले में 92.22 दंतेवाड़ा में 93.82, महासमुंद में 94.99 ,बालोद में 94.84 तथा कांकेर में 95.43 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र के शेष जिलों में नलकूपों की संख्या बहुत ही कम है। यहां नलकूपों की संख्या 22.54 से लेकर 88.19 प्रतिशत तक है। इसके अंतर्गत गौरेला पेंड्रामरवाही 22.54 कोरबा 22.95, सूरजपुर 30.02 ,सरगुजा 34.36 बीजापुर 46.46, सुकमा 62.61 प्रतिशत है। बस्तर जिला में 74.50 प्रतिशत, बिलासपुर 78.23, जांजगीर 62.98 रायगढ़ 64.46 एवं मुंगेली 88.19 प्रतिशत हैं।

अध्ययन क्षेत्र में नलकूपों द्वारा सबसे अधिक सिंचित क्षेत्र के अंतर्गत जिलों में क्रमश: नारायणपुर 100 प्रतिशत दंतेवाड़ा 97.81 कांकेर 95.59 तथा बेमेतरा 93.51 एवं कबीरधाम 81.03 सुकमा 79.25, महासमुंद (71.35 प्रतिशत) का स्थान आता है। इन जिलों में सिंचाई की अन्य सुविधाओं की कमी के कारण नलकूपों का द्वारा सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत अधिक है।

अध्ययन क्षेत्र में तालाबों की संख्या एवं सिंचित क्षेत्र वितरण प्रतिरूप - देश में तालाबों द्वारा सिंचाई मुख्यत: दक्षिणी प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में अधिक लोकप्रिय है जहां की धरातलीय उच्चावच कठोर उबड़-खाबड़ निचले पठारी भागों में मौसमी नदियों को बांधकर या ग्रामीणों द्वारा श्रमदान कर सिंचाई की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खुदाई कर तालाब बनवाया जाता है। छत्तीसगढ़ राज्य के दक्षिणी क्षेत्रों में विशेष कर सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले तालाबों की संख्या अधिक है। अध्ययन क्षेत्र में तालाबो द्वारा सिंचित क्षेत्र 2,710.6 हेक्टेयर है। यह कुल सिंचित क्षेत्र का 1.30 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले तालाबों की संख्या 5.31 प्रतिशत है। प्रदेश में तालाबों की संख्या सबसे ज्यादा बीजापुर जिले में 46.35 प्रतिशत है। यह तालाबों की अधिकता के कारण तालाबो द्वारा सिंचित क्षेत्र प्रतिशत सबसे अधिक है 96.53 प्रतिशत क्षेत्र तालबों से सिंचित होता है। दूसरे स्थान पर सबसे अधिक तालाबों की संख्या सुकमा 35.95 प्रतिशत तथा तीसरे स्थान पर जांजगीर चांपा 25.27 एवं कोरबा मे संख्या 24.20 प्रतिशत है। सबसे कम तालाबों की संख्या कबीरधाम जिले में है। यहां तालाबों की संख्या शून्य है। राज्य के कबीरधाम, नारायणपुर मुंगेली,जिलों में तालाबो द्वारा सिंचित क्षेत्र प्रतिशत शून्य है। धमतरी, दुर्ग, बालोद, नारायणपुर तथा कोंडागांव जिले में तालाबों की संख्या एक प्रतिशत से भी कम है। इन जिलों में तालाबों की संख्या कम होने की कारण सिंचाई के लिए अन्य साधनों का उपयोग किया जाता है।

सारणी क्र. 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

अध्ययन क्षेत्र मे कुओं की सख्या एवं सिंचाई वितरण प्रतिरूप - कुआं धरातल में एक छोटा छिद्र है जिसमें से सिंचाई और पीने के लिए भौम जल निकाला जाता है। यह एक सस्ता ,भरोसेमंद और लोकप्रिय सिंचाई का साधन है। कुआं उन क्षेत्रों में लोकप्रिय है जहां पर्याप्त भौम जल उपलब्ध है और जल स्तर की गहराई 15 मीटर से अधिक नहीं पाई जाती है।

भारत में सबसे अधिक कुएं पंजाब से बिहार तक गंगा के मैदान में पाए जाते हैं। इसके अलावा पूर्वी राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र ,मध्यप्रदेश, तमिलनाडु , आंध्रप्रदेश एवं कर्नाटक में इनका भरपूर वितरण पाया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में कुएँ के जल का उपयोग सिंचाई हेतु किया जाता है। कुएँ के द्वारा सिंचित क्षेत्र 13,755 हेक्टेयर है। यह कुल सिंचित क्षेत्र का 0.67 प्रतिशत है। तालाबों की ही भांति कुओं द्वारा सिंचाई में कई कठिनाइयां हैं उनकी निर्भरता भौम जल संसाधन पर है जिसका वितरण पूरे देश में एक सा नहीं है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी एवं दक्षिणी पहाड़ी पठारी क्षेत्रों में कुआं खोदना अपेक्षाकृत कठिन है। भौम जल के अधिक दोहन और गिरते जल स्तर के कारण प्रथम संस्तर से जल अधिग्रहण करने वाले अधिकांश कुएँ

सुख जा रहे हैं। भौम जल के अंधाधुन्ध अनियोजित निकासी से आगे आने वाले दिनों में भयंकर जल संकट की संभावना है ।

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले कुओं की संख्या 21.83 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में सबसे अधिक कुओं की संख्या जशपुर जिले में 91.05 प्रतिशत प्रथम स्थान पर है। द्वितीय स्थान बलरामपुर जिला 85.83 प्रतिशत तृतीय स्थान सूरजपुर जिला जहां संख्या 66.57% है। अर्थात राज्य के उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में कुओं की अधिकता है। अध्ययन क्षेत्र के कबीरधाम जिला में कुओं की संख्या सबसे कम 0.11 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में जहां सिंचाई के लिए उपयोग में आने वाले कुओं की संख्या अत्यंत कम है, उनमें नारायणपुर जिला 0.73 कांकेर 0.76 सुकमा 0.87 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र के शेष जिलों में कुओं की संख्या का प्रतिशत 1.39 से लेकर 51.92 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र में कुओं से सबसे अधिक सिंचित जिला जशपुर है। यहां कुओं से 15.76 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित होता है। इसके बाद सूरजपुर 14.21, बलरामपुर 12.87, कोरबा 7.24, सरगुजा 6.29, एवं गोरेल्ला पेंडरा - मरवाही का 5.19 प्रतिशत क्षेत्र कुओं द्वारा संचित होता है। अत: राज्य के उत्तरी- पूर्वी क्षेत्र में कुओं की अधिकता के कारण सिंचित क्षेत्र प्रतिशत अधिक है। राज्य के अधिकांशत: जिलों में कुओं द्वारा सिंचित क्षेत्र 1% से भी कम है ।

जलाशयों की संख्या एवं वितरण प्रतिरूप - अध्ययन क्षेत्र में जलाशयों द्वारा सिंचित क्षेत्र 1,008 हेक्टेयर है। यह कुल सिंचित क्षेत्र का 0.4 है। अध्ययन क्षेत्र में जलाशयों की संख्या 0.21 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र के कोरिया जिले में इनकी संख्या सबसे अधिक 0.89 प्रतिशत है। इसके बाद नारायणपुर 0.73 राजनांदगांव तथा गरियाबंद 0.43 एवं रायगढ़ 0.42 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र के दंतेवाड़ा सुकमा, बीजापुर आदि क्षेत्रों में जलाशयों की कमी है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई एवं उद्योग आदि के लिए वृहत स्तर पर जलाशयों का निर्माण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र में प्रमुख सिंचाई परियोजनाएं - प्रदेश में कृषि एवं उद्योग क्षेत्र को निरंतर जल उपलब्ध कराने की उद्देश्य से क्षमता आधार पर विभिन्न सिंचाई परियोजनाएं स्थापित की गई है। प्रदेश में सर्वप्रथम सिंचाई परियोजना महानदी एवं धमतरी जिले में स्थापित किया गया था। प्रदेश में सिंचाई के लिए तीन (वृहद मध्यम और लघु) परियोजनाएं हैं।

छत्तीसगढ़ में स्थापित 8 प्रमुख वृहद सिंचाई परियोजनाएं हैं। तांदुला परियोजना बालोद जिला में तांदुला नदी पर, संजय गांधी (खारंग) परियोजना अध्ययन क्षेत्र के रतनपुर, बिलासपुर जिला के खारंग नदी पर ,राजीव गांधी (मनियारी) परियोजना खुडिया, मुंगेली जिला में मनियारी नदी पर, मिनीमाता (हसदो बांगो) परियोजना कोरबा जिला में हसदो नदी पर, सिकासर परियोजना गरियाबंद जिला में पैरी नदी पर, जोक व्यपवर्तन परियोजना महासमुंद जिला में जोक नदी पर, वीरनारायण सिंह (कोडार) परियोजना महासमुंद जिला में कोडार नदी पर, पंडित रविशंकर (महानदी) परियोजना धमतरी जिला में महानदी पर परियोजनाएं स्थापित है।

इसके अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र में निर्माणाधीन 4 वृहद सिंचाई परियोजनाएं भी सम्मिलित है। इन परियोजनाओं में सोढूर धमतरी जिला में सोढूर नदी पर, अरपा भैंसाझार कोटा, बिलासपुर जिला में अरपा नदी पर, समोदा व्यपवर्तन परियोजना रायपुर जिले में महानदी पर, दिलीप सिंह जूदेव (केलो) परियोजना रायगढ़ जिला में केलो नदी पर निर्माणाधीन है। महानदी सिंचाई परियोजना की कुल सिंचाई क्षमता 2.64 लाख हेक्टेयर, मिनीमाता हसदो बांगो परियोजना, कोरबा की सिंचाई क्षमता 4,20,580 हेक्टेयर , राजीव गांधी कुड़िया परियोजना मुंगेली की सिंचाई क्षमता 11515 हैकटेयर, संजय गांधी खारंग परियोजना बिलासपुर की सिंचाई क्षमता 8300 हैकटेयर तथा इसी तरह स्वर्ग की दिलीप शिव जयदेव खेलो परियोजना रायगढ़ की सिंचाई क्षमता 22810 हेक्टेयर है। अध्ययन क्षेत्र में बृहद स्तर पर सिंचाई परियोजनाएं निर्मित होने के बावजूद भी सिंचाई के लिए पर्याप्त नहरो की व्यवस्था नहीं हो पाया है।

निष्कर्ष एवं सुझाव - अध्ययन क्षेत्र में ऊसर एव कृषि के अयोग्य भूमि है जो अनुपयोगी पथरीली दलदली व उबड - खाबड है को कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित किया जा सकता है। दलदलीय भूमि में वन रोपण कर भूमि को उपयोगी बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त असमतल भूमि को समतल कर कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित किया जा सकता है। असमतल व पहाड़ी-पठारी भूमि में काजू आदि फलोद्यान की कृषि का विकास कर धीरे-धीरे भूमि को फसली क्षेत्र के अंतर्गत सम्मिलित कर सकते हैं। भूस्वामित्व संबंधी बटवारा प्रथा को समाप्त कर भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है। पड़ती भूमि में रासायनिक उर्वरकों एवं देशी गोबर खाद का उपयोग कर फसलों के निराक्षेत्र प्रतिशत में वृद्धि की जा सकती है। चरागाह एवं घास के क्षेत्र जो जनसंख्या वृद्धि के कारण मानव अधिवास के रूप में परिवर्तित हो रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण कर रोका जा सकता है। जिससे पशुओं के जीवन-यापन के लिए वे क्षेत्र उपयुक्त बने रह सकते हैं और पशु भी वातावरण के अनुकूल रह सकते हैं। सरकार द्वारा क्षेत्र में किसानों को नलकूप संचालन हेतु सस्ते दामों पर एवं समुचित मात्रा में बिजली, पेट्रोल, डीजल की उपलब्धि कराकर कृषि भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन लाया जा सकता है। फसलों के निराक्षेत्रफल प्रतिशत में वृद्धि की जा सकती है। अध्ययन क्षेत्र में बृहद स्तर पर सिंचाई परियोजनाएं निर्मित होने के बावजूद भी सिंचाई के लिए पर्याप्त नहरों का विकास नहीं हो पाया है। इसके अतिरिक्त कुछ क्षेत्र में अत्यधिक सिंचाई जलग्नता और लवणता की समस्याएं भी पैदा कर रही है। इसके लिए भूमि में आवश्यक दवावों का छिड़काव कर इस समस्या का निराकरण किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में उपलब्ध तालाबों एवं बांधों का पांच-छ: वर्षो के नियमित अन्तराल पर गहरीकरण करवाना आवश्यक है। इससे सिंचित क्षेत्र प्रतिशत में वृद्धि किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. कृषि सांख्यिकी सारणी, कार्यालय आयुक्त भू- अभिलेख, छत्तीसगढ़ ,रायपुर, वर्ष, 2020-22.
2. गौतम, अलका, 2019, कृषि भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक 119,148.
3. गौतम शिवानंद, संसाधन और पर्यावरण, भारत का भूगोल तथा प्रयोगात्मक भूगोल, रामप्रसाद एण्ड संस आगरा पृष्ठ क्र. 315-318
4. तिवारी, आर. सी., 2019, भारत का भूगोल ,प्रवालिका पब्लिकेशंस इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक 167 से 171
5. तिवारी, विजय कुमार, 2004, छत्तीसगढ़ एक भौगोलिक अध्ययन, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुंबई पृष्ठ क्रमांक, 85
6. पाण्डेय, जे.एन. , 2018 कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ठ क्र. 155, 159

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सारणी क्र. 1: छत्तीसगढ़ राज्य : भूमि उपयोग प्रतिरुप 2020 से 2022

क्र.	भूमि उपयोग	2019-20		2020-21		2021-22		औसत	
		क्षेत्रफल हे.	प्रतिशत	क्षेत्रफल हे.	प्रतिशत	क्षेत्रफल हे.	प्रतिशत	क्षेत्रफल हे.	पृष्ठ के कुल क्षेत्र का प्रतिशत
1	वन क्षेत्रफल	44,07,093	37.07	47,11,443	38.66	47,57,065	38.87	46,25,200	38.21
2	कृषि के लिए जो भूमि अयोग्य है	10,37,468	8.72	10,38,624	8.52	10,38,114	8.48	10,38,069	8.57
(क)	गैर कृषि भूमि	7,50,203	6.31	7,51,095	6.16	7,43,920	6.07	7,48,406	6.18
(ख)	ऊसर भूमि	2,87,265	2.41	2,87,529	2.36	2,94,194	2.41	2,89,663	2.39
3	अकृषि भूमि जिसमें पड़ती सम्मिलित नही है।	12,62,248	10.62	1,258,599	10.32	12,78,334	10.44	12,66,393	10.47
(क)	चरागाह व घास का मैदान	8,93,044	7.51	8,95,107	7.34	8,92,817	7.30	8,93,656	7.39
(ख)	झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग	2,745	0.02	2,828	0.02	2,544	0.02	2,706	0.02
(ग)	कृषि योग्य बेकार भूमि	3,66,459	3.08	3,60,664	2.96	3,82,973	3.12	3,70,032	3.06
4	पड़ती भूमि	5,46,517	4.60	5,55,502	4.56	5,35,429	4.38	5,45,816	4.51
5	फसल का निराक्षेत्र फल	46,35,340	38.99	46,22,725	37.94	46,30,966	37.83	46,29,677	38.24
	योग :-	1,18,88,666	100	1,21,86,893	100	1,22,39,908	100	1,21,05,155	100

स्त्रोत:-कृषि सांख्यिकी ,आयुक्त भू-अभिलेख, रायपुर (छ.ग.)

सारणी क्र. 02: छत्तीसगढ़ राज्य : जिलेवार भूमि उपयोग प्रतिरुप वर्ष 2020-22 प्रतिशत

क्र.	जिलाका नाम	राजस्व वन	वन क्षेत्र	ऊसर व गैर मुमकिन भूमि	कृषि के लिए जो भूमि उपलब्ध नहीं है	कृषि योग्य पड़ती भूमि	मुस्तकील व दीगर चारागाह	झाड़ियों के झुण्ड तथा बाग	पड़ती भूमि	फसल का निरा क्षेत्रफल
1	रायपुर	0.56	0.43	0.12	17.04	7.27	12.66	0.02	5.68	56.62
2	बलौदाबाजार	3.27	23.15	2.59	6.60	2.15	7.74	0.00	2.99	51.51
3	गरियाबंद	15.37	45.77	0.68	3.90	0.97	5.24	0.00	1.69	28.38
4	महासमुन्द	6.24	22.16	1.21	7.51	1.05	6.18	0.00	3.01	52.64
5	धमतरी	3.75	48.02	0.37	7.32	0.69	4.00	0.00	1.16	34.69
6	दुर्ग	0.00	0.00	2.00	15.53	4.84	8.41	0.04	5.11	64.07
7	बालोद	9.79	20.36	1.29	8.95	2.31	3.80	0.01	2.53	51.09
8	बेमेतरा	0.00	0	0.00	8.73	1.44	8.24	0.00	2.41	79.18
9	राजनांदगांव	12.12	19.91	2.20	6.37	2.60	6.42	0.03	4.69	46.20
10	कबीरधाम	5.76	35.84	2.24	4.74	0.66	6.52	0.01	2.35	41.88
11	बस्तर	14.23	36.35	3.28	4.34	6.02	4.24	0.22	4.41	26.92
12	कोंडागांव	28.45	39.84	2.54	1.87	1.64	2.28	0.00	1.32	22.06
13	नारायणपुर	1.90	88.17	0.23	0.45	2.00	2.00	0.00	1.61	3.64
14	कांकेर	14.80	28.84	3.00	4.92	5.82	10.43	0.00	3.74	28.45
15	दन्तेवाड़ा	9.66	33.60	8.04	3.57	8.74	1.24	0.00	9.22	25.93
16	सुकमा	24.32	36.31	2.05	1.46	10.36	4.19	0.01	3.74	16.56
17	बीजापुर	47.54	27.22	0.99	2.87	6.31	1.36	0.00	1.32	12.39
18	बिलासपुर	9.93	20.20	0.88	6.70	2.97	10.50	0.01	3.54	45.18
19	गौरेला पेण्ड्रा मरवाही	30.30	30.89	2.30	2.00	1.37	3.17	0.00	3.49	26.48
20	मुंगेली	0.70	40.39	0.93	4.04	0.00	6.41	0.00	1.55	46.82
21	जांजगीर चांपा	2.21	17.72	0.53	7.40	2.68	8.48	0.02	2.49	58.47
22	कोरबा	26.39	39.62	4.33	3.35	2.88	3.58	0.01	2.83	17.01
23	रायगढ़	9.08	22.63	2.20	9.05	1.14	10.28	0.00	6.81	38.81
24	सरगुजा	22.63	25.26	1.02	5.53	0.00	9.30	0.00	6.06	30.20
25	बलरामपुर	12.24	36.73	0.27	4.93	0.00	14.65	0.01	5.26	25.91
26	सूरजपुर	3.06	44.25	0.24	5.70	0.00	10.60	0.00	5.66	30.49
27	कोरिया	7.94	58.77	2.24	4.19	0.00	5.59	0.00	5.31	15.96
28	जशपुर	8.75	26.88	8.14	3.91	1.56	6.53	0.00	6.70	37.53
	योग्य राज्य	**13.13**	**32.40**	**2.08**	**5.27**	**2.71**	**6.33**	**0.39**	**3.41**	**34.28**

स्त्रोतः-कृषि सांख्यिकी ,आयुक्त भू-अभिलेख, छ.ग. रायपुर

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सारणी क्र. 4: छत्तीसगढ़ राज्य जिलेवार विभिन्न स्त्रोतों से सिंचित क्षेत्रफल प्रतिशत में

क्र.	जिला का नाम	नहरो से		नलकुपो से		तालाबों से		कुओं से		अन्य स्त्रोतो से		योग
		कुल	निराक्षेत्र	कुल	निराक्षेत्र	कुल	निराक्षेत्र	कुल	निराक्षेत्र	कुल	निराक्षेत्र	
1	रायपुर	72.75	80.18	24.95	17.34	1.27	1.43	0.05	0.05	0.98	0.99	100
2	बलौदाबाजार	66.32	72.97	25.69	19.11	0.86	0.70	0.77	0.77	6.36	6.43	100
3	गरियाबंद	48.45	59.40	48.65	37.25	0.63	0.76	0.15	0.17	2.12	2.42	100
4	महासमुन्द	25.30	34.41	71.35	61.49	1.80	2.00	0.08	0.11	1.47	1.99	100
5	धमतरी	69.95	72.57	28.89	26.21	0.08	0.11	0.42	0.45	0.66	0.66	100
6	दुर्ग	41.34	51.26	56.81	40.15	0.23	0.33	0.07	0.10	1.55	2.15	100
7	बालोद	53.23	70.07	42.72	24.58	2.11	2.79	0.26	0.35	1.68	2.21	100
8	बेमेतरा	5.35	10.55	93.51	87.23	0.84	1.63	0.01	0.01	0.29	0.58	100
9	राजनांदगांव	22.18	29.00	70.67	64.28	1.03	0.93	0.44	0.49	5.68	5.30	100
10	कबीरधाम	18.97	29.89	81.03	70.11	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	100
11	बस्तर	9.01	9.01	53.67	53.67	1.37	1.37	1.33	1.33	34.61	34.62	100
12	कोंडागांव	0.78	0.78	66.52	66.52	1.62	1.63	0.63	0.64	30.42	30.43	100
13	नारायणपुर	0.00	0.00	100.00	100.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00	100
14	कांकेर	4.24	6.68	95.59	93.06	0.15	0.25	0.00	0.015	0.00	0.00	100
15	दन्तेवाड़ा	0.00	0.00	97.81	97.81	0.54	0.54	1.65	1.65	0.00	0.00	100
16	सुकमा	0.00	0.00	79.25	79.26	0.58	0.58	0.14	0.14	20.02	20.02	100
17	बीजापुर	0.00	0.00	1.88	1.88	96.53	96.53	0.46	0.46	1.13	1.13	100
18	बिलासपुर	53.91	63.18	44.96	35.44	0.93	1.14	0.20	0.24	0.00	0.00	100
19	गौरेला पेण्ड्रा मरवाही	23.88	22.22	66.43	68.96	1.11	1.48	5.19	5.15	3.39	2.19	100
20	मुंगेली	50.66	73.00	40.31	27.00	0.00	0.00	0.03	0.00	0.00	0.00	100
21	जांजगीर चांपा	86.45	86.45	12.36	12.36	0.63	0.63	0.03	0.03	0.53	0.53	100
22	कोरबा	69.54	69.54	13..51	13.50	6.27	6.26	7.24	7.24	3.44	13.87	100
23	रायगढ़	26.86	43.24	57.98	34.01	4.87	7.88	1.08	0.99	9.21	13.88	100
24	सरगुजा	21.06	21.24	32.24	31.63	2.96	2.88	6.29	6.02	37.45	38.23	100
25	बलरामपुर	17.93	18.48	1.81	1.68	18.35	17.38	12.87	12.04	49.04	50.42	100
26	सूरजपुर	3.20	3.66	52.58	53.38	5.88	5.92	14.21	13.81	24.13	23.23	100
27	कोरिया	28.50	27.43	42.44	42.93	1.69	1.83	10.22	10.19	17.15	17.62	100
28	जशपुर	44.48	44.84	1.79	1.71	1.85	1.75	15.76	15.82	36.10	35.88	100
	योग्य राज्य	**44.58**	**56.16**	50.40	37.90	**1.26**	**1.55**	**0.63**	**0.71**	**3.13**	3.68	100

स्त्रोत:–कृषि सांख्यिकी ,आयुक्त भू–अभिलेख, छ.ग. रायपुर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा का तुलनात्मक अध्ययन

सुनिता गणावा* डॉ. समता मेहता**

* शोधार्थी (वाणिज्य) सम्राट विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) भगतसिंह शासकीय स्नातकोत्तार महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह अध्ययन निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह जानना है कि सुविधाओं, सुरक्षा, विश्वसनीयता, त्वरित सेवा, उपयोग में सरलता तथा समस्या समाधान के आधार पर दोनों प्रकार के बैंक ग्राहकों की अपेक्षाओं को किस हद तक पूरा कर रहे हैं। डिजिटल अर्थव्यवस्था के बढ़ते प्रयोग के संदर्भ में इस विषय पर शोध की आवश्यकता इसलिए महत्तवपूर्ण है क्योंकि ग्राहकों की संतुष्टि और विश्वास सीधे बैंकिंग सेवाओं की गुणवत्ता से प्रभावित होते हैं।

इस अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है, जिसके अंतर्गत अलग-अलग आयु, पेशा और बैंकिंग पृष्ठभूमि वाले ग्राहकों से प्रश्नावली के माध्यम से डेटा संकलित किया गया। आँकड़ों का विश्लेषण वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक पद्धतियों द्वारा किया गया।

मुख्य निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि निजी बैंकों के ग्राहक सेवा की गति, उपयोग में सरलता तथा तकनीकी दक्षता को अधिक सराहते हैं, जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ग्राहकों को सुरक्षा, विश्वसनीयता और सरकारी भरोसे का अधिक अनुभव होता है। दोनों क्षेत्रों में ग्राहकों ने तकनीकी समस्याओं और समय-समय पर आने वाली नेटवर्क कठिनाइयों को प्रमुख चुनौती के रूप में चिन्हित किया। संपूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सतत तकनीकी सुधार और ग्राहक-केंद्रित नीतियाँ ही ऑनलाइन बैंकिंग को और अधिक प्रभावी बना सकती हैं।

शब्द कुंजी – ऑनलाइन बैंकिंग, ग्राहक धारणा, निजी बैंक, सार्वजनिक बैंक, डिजिटल सेवाएँ, ग्राहक संतुष्टि, सुरक्षा, विश्वसनीयता, तकनीकी दक्षता, तुलना अध्ययन।

प्रस्तावना – भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने पिछले दो दशकों में उल्लेखनीय परिवर्तन देखा है। डिजिटलाइजेशन ने पारम्परिक बैंकिंग को आधुनिक, तेज और अधिक सुविधाजनक स्वरूप प्रदान किया है। आज बैंकिंग सेवाएँ शाखा-केन्द्रित न होकर मोबाइल, इंटरनेट और एटीएम जैसे प्लेटफॉर्मो के माध्यम से 24×7 उपलब्ध हैं। विशेषकर कोविड-19 महामारी के बाद डिजिटल लेन-देन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई, जिससे ऑनलाइन बैंकिंग आम ग्राहकों के दैनिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है।

डिजिटलाइजेशन और बैंकिंग क्षेत्र में परिवर्तन – डिजिटलाइजेशन ने बैंकिंग सेवाओं को स्वचालित, सुरक्षित और त्वरित बनाया है। आज खाता खोलने से लेकर धन अंतरण, बिल भुगतान, निवेश प्रबंधन, लोन एप्लिकेशन, और पासबुक अपडेट तक लगभग सभी प्रक्रियाएँ ऑनलाइन संपन्न हो सकती हैं। यूनिफाइड पेमेंट इंटरफेस (UPI), इंटरनेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग और डिजिटल वॉलेट जैसे माध्यमों ने बैंकिंग कार्यों को सरल बना दिया है।

भारतीय रिजर्व बैंक और भारत सरकार द्वारा 'Digital India' और 'Cashless Economy' जैसे अभियानों ने ऑनलाइन बैंकिंग को व्यापक स्वीकार्यता दिलाई है।

ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं का महत्व – ऑनलाइन बैंकिंग के माध्यम से ग्राहक समय, स्थान और लागत-तीनों की बचत करते हैं। यह प्रणाली पारदर्शिता, सुरक्षा और सुविधा को बढ़ाती है। डिजिटल रिकॉर्ड रखने से लेन-देन के प्रमाण सुरक्षित रहते हैं और धोखाधड़ी की संभावनाएँ कम होती हैं। बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच बढ़ने से वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) में भी वृद्धि हुई है।

आज के प्रतिस्पर्धी बैंकिंग वातावरण में ऑनलाइन सेवाओं की गुणवत्ता सीधे-सीधे ग्राहक संतुष्टि और ग्राहक-निष्ठा (Customer Loyalt) को निर्धारित करती है।

निजी एवं सरकारी बैंकों की भूमिका – निजी क्षेत्र के बैंक (जैसे HDFC, ICICI, Axis Bank आदि) तकनीकी नवाचार और त्वरित सेवा के लिए जाने जाते हैं। वे उपयोगकर्ता-अनुकूल इंटरफेस, तेज समस्या-समाधान और न्यूनतम प्रतीक्षा समय को प्राथमिकता देते हैं। दूसरी ओर, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक (जैसेSBI, PNB, Bank of Baroda आदि) व्यापक ग्राहक आधार, अधिक विश्वसनीयता और सरकारी भरोसे के कारण महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि, उन्हें तकनीकी सुधार और ग्राहक सेवा में समय-समय पर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इस तुलनात्मक अध्ययन का उद्देश्य इन्हीं दोनों प्रकार के बैंकों की ऑनलाइन सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा में अंतर को समझना है।

ग्राहक धारणा के अध्ययन की उपयोगिता – ग्राहक धारणा वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से ग्राहक सेवा की गुणवत्ता, सुरक्षा, सुविधा और उपयोग

में सरलता का अनुभव करते हैं। ग्राहकों की धारणा को समझना बैंकिंग संस्थानों के लिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि इसी आधार पर वे अपनी नीतियों और तकनीकी सेवाओं में सुधार कर सकते हैं। यदि किसी बैंक की ऑनलाइन सेवा तेज, सुरक्षित और उपयोगकर्ता-अनुकूल होती है, तो ग्राहक संतुष्टि बढ़ती है और बैंक के प्रति विश्वास मजबूत होता है।

सांख्यिकीय परिप्रेक्ष्य - भारत में डिजिटल भुगतान लगातार बढ़ रहा है। हालिया आंकड़ों के अनुसार:

1. देश में UPI लेन-देन प्रति माह लगभग 10-12 अरब तक पहुँच चुके हैं।
2. 80% से अधिक बैंक ग्राहकों ने कम-से-कम एक बार ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं का उपयोग किया है।
3. RBI की रिपोर्ट के अनुसार डिजिटल बैंकिंग लेन-देन में वर्ष दर वर्ष लगभग 30-35% की वृद्धि दर्ज हो रही है।

ये आँकड़े दर्शाते हैं कि ऑनलाइन बैंकिंग भारत की बैंकिंग प्रणाली का अभिन्न अंग बन चुका है, इसलिए ग्राहकों की धारणा का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी है।

साहित्य-समीक्षा

ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं पर पिछले दो दशकों में व्यापक शोध हुआ है, जिसमें सेवा-गुणवत्ता, सुरक्षा, उपयोग-सुविधा, विश्वास ((Trust)) तथा ग्राहक-संतुष्टि को प्रमुख संकेतकों के रूप में पहचाना गया है। Ling et al. (2016) ने अपनी अध्ययन रिपोर्ट में दर्शाया कि वेबसाइटध्ऐप के वेब-डिजाइन, प्रणाली की विश्वसनीयता और सुरक्षा तंत्र (Encryption, Authentication) ग्राहक संतोष को सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार, Jun and Cai (2001) ने ई-सेवा गुणवत्ता के आयाम जैसेकृविश्वसनीयता, प्रतिक्रियाशीलता तथा सुविधाकृको डिजिटल बैंकिंग अनुभव के मुख्य निर्धारक बताया।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में Hazra & Srivastava (2010) ने Indian Journal of Marketing में प्रकाशित अपने शोध में स्पष्ट किया कि सेवा-गुणवत्ता (Service Quality) के पाँच तत्वकृविश्व्सनीयता, आश्वस्तता, मूर्तता, प्रतिक्रियाशीलता और सहानुभूति-ग्राहक -निर्माण और संतुष्टि दोनों को गहराई से प्रभावित करते हैं। Kumbhar (2011) ने ऑनलाइन बैंकिंग अपनाने में जनसांख्यिकीय चर, इंटरनेट-अनुभव, जोखिम-धारणा और बैंक-विश्वास को महत्त्वपूर्ण कारक पाया।

Parasuraman, Zeithaml और Berry द्वारा विकसित SERVQUAL मॉडल ऑनलाइन बैंकिंग के आकलन में व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। कई अध्ययनों ने इसका डिजिटल संस्करण E-SERVQUAL या NetQUALअपनाया है। नवीन अध्ययन जैसे Bhuvaneswari & Maruthamuthu (2024,ScienceScholar) ने Structural Equation Modeling (SEM) के माध्यम से यह प्रमाणित किया कि सेवा-गुणवत्ता के आयाम सीधे ग्राहक संतुष्टि और निष्ठा से जुड़ते हैं।

निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की तुलना करने वाले हालिया शोध (उदा., Rajeev Vashisht & Rajinder Singh, 2024; BPAS Journals) बताते हैं कि निजी बैंक डिजिटल नवाचार, त्वरित सेवा, मोबाइल-इंटरफेस, और UX-डिजाइन में अधिक उन्नत पाए जाते हैं, जबकि सार्वजनिक बैंक सुरक्षा-विश्वास, व्यापक पहुँच, तथा कम शुल्क जैसी विशेषताओं के कारण ग्राहकों को आकर्षित करते हैं। इसी प्रकार, Malik & Goyal (2022) ने निष्कर्ष दिया कि निजी बैंक तकनीकी दक्षता में अग्रणी हैं, जबकि सरकारी बैंक सेवा-स्थिरता और जोखिम-नियंत्रण में बेहतर माने जाते हैं।

तकनीकी परिप्रेक्ष्य में RBI, NPCI और PwC की रिपोर्टें दर्शाती हैं कि भारत में डिजिटल भुगतान पिछले कुछ वर्षों में तीव्र गति से बढ़ा है। UPI लेन-देन में वार्षिक 30-40% वृद्धि ने ग्राहकों को ऑनलाइन बैंकिंग की ओर प्रेरित किया है। EY (2023) की रिपोर्ट दर्शाती है कि 80% भारतीय ग्राहक अब कम से कम एक डिजिटल बैंकिंग सेवा का नियमित उपयोग करते हैं, जिससे सेवा-गुणवत्ता का महत्व और बढ़ जाता है।

शोध-विधि- इस अध्ययन में निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। शोध-विधि को स्पष्ट, व्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए निम्न बिंदुओं का अनुसरण किया गया है।

शोध डिजाइन - इस अध्ययन में दो प्रकार के शोध डिजाइन अपनाए गए हैं:

1. वर्णनात्मक शोध - वर्णनात्मक डिजाइन का उद्देश्य वास्तविक परिस्थितियों का तथ्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करना है। इस शोध में ग्राहकों की आयु, उपयोग की आवृत्ति, ऑनलाइन बैंकिंग के प्रति भरोसा, सुविधा, सुरक्षा-धारणा, संतुष्टि आदि पहलुओं का वर्णनात्मक विश्लेषण किया गया है। इससे जानकारी मिलती है कि ग्राहक ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं का अनुभव किस प्रकार करते हैं।

2. तुलनात्मक शोध - तुलनात्मक डिजाइन का उपयोग निजी और सार्वजनिक बैंकों के बीच अंतर को समझने के लिए किया गया। अध्ययन में दोनों प्रकार के बैंकों के ग्राहकों की प्रतिक्रियाओं का तुलना-आधारित विश्लेषण किया गया है, ताकि यह ज्ञात हो सके कि कौन-सा क्षेत्र तकनीकी दक्षता, सेवा-गुणवत्ता, सुरक्षा और सुविधा के संदर्भ में बेहतर प्रदर्शन कर रहा है।

डेटा के स्रोत

1. **प्राथमिक डेटा -** प्राथमिक डेटा सीधे ग्राहकों से प्राप्त किया गया।

1. **प्रश्नावली -** ऑनलाइन एवं ऑफलाइन माध्यम से एक संरचित प्रश्नावली वितरित की गई।

2. **साक्षात्कार-** चुनिंदा उत्तरदाताओं से संक्षिप्त साक्षात्कार किए गए ताकि उनकी राय को अधिक गहराई से समझा जा सके।

2. **द्वितीयक डेटा -** द्वितीयक डेटा विभिन्न विश्वसनीय स्रोतों से संकलित किया गया, जैसे-

1. RBI की वार्षिक रिपोर्ट
2. बैंकिंग सेक्टर पर शोध-पत्र और जर्नल
3. समाचार-पत्र एवं वित्तीय पोर्टल
4. संबंधित बैंकों की आधिकारिक वेबसाइट
5. डिजिटल बैंकिंग और UPI पर उपलब्ध सरकारी एवं निजी संस्थाओं की रिपोर्टें

नमूना आकार और सैम्पलिंग तकनीक - इस अध्ययन के लिए कुल 200 ग्राहकों से डेटा संकलित किया गया। इसमें 100 निजी बैंक के ग्राहक और 100 सार्वजनिक बैंक के ग्राहक शामिल किए गए।

सैम्पलिंग के लिए सरल रैण्डम सैम्पलिंग (Simple Random

Sampling) तकनीक अपनाई गई। इस तकनीक का चयन इसलिए किया गया क्योंकि इससे प्रत्येक ग्राहक को चयनित होने का समान अवसर मिलता है और नमूना अधिक प्रतिनिधिक (Repraswentative) बनता है।

(क) उपकरण – डेटा संकलन हेतु एक संरचित प्रश्नावली का उपयोग किया गया। प्रश्नावली में मुख्यत: Likert Rating Scale (1-5) का प्रयोग किया गया, जिसमें-

1. 1 = बिल्कुल असंतुष्ट
2. 2 = असंतुष्ट
3. 3 = तटस्थ
4. 4 = संतुष्ट
5. 5 = अत्यंत संतुष्ट

इस स्केल का उपयोग सेवा-गुणवत्ता, सुरक्षा, सुविधा, प्रतिक्रिया-समय, तकनीकी दक्षता और समग्र संतुष्टि को मापने के लिए किया गया। प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत, औसत (Mean) और तुलनात्मक चार्टों के आधार पर किया गया।

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

समस्याओं व अनुभवों का विश्लेषण – उपरोक्त तालिका के आधार पर, ग्राहकों द्वारा अनुभव की जाने वाली प्रमुख समस्याओं और सकारात्मक अनुभवों का विश्लेषण इस प्रकार है:

1. निजी क्षेत्र के बैंकों के संदर्भ में:

- **सकारात्मक पहलू:** गति, उपयोग में आसानी, नवाचार और ग्राहक सहायता मुख्य बिंदु हैं जहाँ ये बैंक शानदार प्रदर्शन करते हैं। ग्राहक इनके डिजिटल इंटरफेस और नई सुविधाओं से अत्यधिक संतुष्ट हैं।
- **समस्याएँ / चुनौतियाँ:** मुख्य समस्या ऊँचे लेन-देन शुल्क के रूप में सामने आई है। कुछ ग्राहकों ने अत्यधिक व्यक्तिगतकरण को कभी-कभी चतपअंबल के मामले में अवांछित महसूस किया।

2. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के संदर्भ में:

- **सकारात्मक पहलू:** सुरक्षा और कम लागत इनके सबसे मजबूत पक्ष हैं। ग्राहक इन बैंकों को सुरक्षित मानते हैं और ऑनलाइन सेवाओं के लिए कम शुल्क होने से वे खुश हैं।
- **समस्याएँ / चुनौतियाँ:** सबसे बड़ी चुनौती तकनीकी बुनियादी ढांचे की है। लगातार डाउनटाइम, धीमी गति और पुराने जमाने के यूजर इंटरफेस ग्राहकों की मुख्य शिकायतें हैं। इसके अलावा, ग्राहक सहायता का धीमा और कम कुशल होना एक प्रमुख समस्या बनी हुई है।

समग्र व्याख्या– विश्लेषण से स्पष्ट है कि निजी बैंक 'उपयोगकर्ता अनुभव और नवाचार' पर ध्यान केंद्रित करके ग्राहकों को आकर्षित कर रहे हैं, जबकि सार्वजनिक बैंक 'सुरक्षा और सामर्थ्य' के अपने पारंपरिक लाभों पर निर्भर हैं। हालाँकि, तकनीकी मुद्दों और खराब ग्राहक सेवा के कारण सार्वजनिक बैंकों में समग्र ग्राहक संतुष्टि पीछे रह जाती है। सार्वजनिक बैंकों के लिए अपने डिजिटल प्लेटफॉर्म के बुनियादी ढांचे और उपयोगकर्ता इंटरफेस में सुधार करना भविष्य में प्रतिस्पर्धा बनाए रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली ऑनलाइन बैंकिंग सेवाओं के प्रति ग्राहकों की धारणा का तुलनात्मक विश्लेषण करना था। अध्ययन के निष्कर्षों से स्पष्ट होता है कि दोनों प्रकार के बैंक डिजिटल बैंकिंग सेवाओं के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, किंतु ग्राहकों के अनुभव और संतुष्टि स्तर में उल्लेखनीय अंतर देखने को मिलता है।

निजी क्षेत्र के बैंकों के ग्राहक सेवा की गति, सहज इंटरफेस, तकनीकी दक्षता, व्यक्तिगत सुविधाओं और त्वरित समस्या-समाधान के कारण उच्च संतुष्टि व्यक्त करते हैं। आधुनिक ऐप-डिजाइन, फीचर-समृद्ध प्लेटफॉर्म और कम तकनीकी त्रुटियों के कारण निजी बैंक डिजिटल सुविधा प्रदान करने में अग्रणी हैं। वहीं दूसरी ओर, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के ग्राहक सुरक्षा, विश्वसनीयता, सरकारी भरोसे तथा कम लेन-देन शुल्क के कारण अधिक संतुष्टि दर्शाते हैं। इन बैंकों का मजबूत नेटवर्क और पारंपरिक विश्वास उनकी प्रमुख शक्ति है।

हालाँकि, अध्ययन में यह भी पाया गया कि सार्वजनिक बैंकों को तकनीकी धीमापन, बार-बार आने वाली सिस्टम त्रुटियों, पुराने इंटरफेस, और ग्राहक सहायता में विलंब जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। निजी बैंकों में भी अधिक शुल्क और अत्यधिक व्यक्तिगत डेटा उपयोग जैसी चिंताएँ सामने आईं।

समग्र रूप से अध्ययन यह इंगित करता है कि यदि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक तकनीकी आधुनिकीकरण, इंटरफेस सुधार और ग्राहक सहायता को मजबूत करें तथा निजी बैंक सुरक्षा और शुल्क-नीतियों को संतुलित करें, तो दोनों ही क्षेत्र ऑनलाइन बैंकिंग अनुभव को और अधिक प्रभावी एवं ग्राहक-केंद्रित बना सकते हैं। डिजिटल युग में सतत नवाचार और ग्राहक-केंद्रित दृष्टिकोण ही बैंकिंग सेवाओं की गुणवत्ता का भविष्य निर्धारित करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Parasuraman, A., Valarie A. Zeithaml, and Leonard L. Berry. "SERVQUAL: A Multiple-Item Scale for Measuring Consumer Perceptions of Service Quality." *Journal of Retailing*, vol. 64, no. 1, 1988, pp. 12–40.
2. Jun, M., and S. Cai. "The Key Determinants of Internet Banking Service Quality: A Content Analysis." *International Journal of Bank Marketing*, vol. 19, no. 7, 2001, pp. 276–291.
3. Ling, Kian, et al. "E-Service Quality, Website Design and Customer Satisfaction in Online Banking." *Journal of Internet Banking and Commerce*, vol. 21, no. 2, 2016.
4. Hazra, S., and R. Srivastava. "Service Quality and Consumer Behaviour in Indian Banking Sector." *Indian Journal of Marketing*, vol. 40, no. 4, 2010, pp. 15–25.
5. Kumbhar, V. "Factors Influencing the Adoption of Internet Banking: Evidence from India." *International Journal of Business and Management*, vol. 6, no. 8, 2011, pp. 117–126.
6. Bhuvaneswari, P., and P. Maruthamuthu. "Service Quality Dimensions and Customer Loyalty in Online Banking: An SEM Approach." *ScienceScholar: Journal of Management Studies*, 2024.
7. Malik, A., and R. Goyal. "Comparative Analysis of Service Quality between Public and Private Sector Banks in India." *Journal of Banking & Finance Studies*, vol. 9, no. 1, 2022, pp. 45–60.
8. Vashisht, Rajeev, and Rajinder Singh. "Digital Innovations and Customer Perception: A Comparative

Study of Private and Public Sector Banks." *BPAS Journal of Management*, vol. 5, no. 2, 2024, pp. 88–105.

9. Reserve Bank of India. *Report on Trend and Progress of Banking in India 2022–23*. Reserve Bank of India, 2023.
10. National Payments Corporation of India (NPCI). *Unified Payments Interface (UPI) — Annual Transaction Statistics 2023–24*. NPCI, 2024.
11. शर्मा, अरविंद. भारतीय बैंकिंग में डिजिटल सेवाओं का विकास. नई दिल्ली: प्रकाशन भवन, 2021.
12. वर्मा, संजय.'ऑनलाइन बैंकिंग में ग्राहक संतुष्टि का अध्ययन: निजी और सरकारी बैंकों की तुलना।' भारतीय प्रबंध अध्ययन पत्रिका, खंड 12, संख्या 3, 2022, पृ. 45-58.
13. तिवारी, कविता. 'डिजिटल बैंकिंग के बदलते स्वरूप और सुरक्षा चुनौतियाँ।' वित्त और प्रौद्योगिकी समीक्षा, खंड 6, संख्या 1, 2023, पृ. 90-102.
14. मिश्रा, रमेश. डिजिटल भारत और बैंकिंग सेवाओं में नवाचार. लखनऊ: ज्ञानदीप प्रकाशन, 2020.
15. सिंह, प्रमोद. 'निजी और सार्वजनिक बैंकों में ऑनलाइन सेवा गुणवत्ता का तुलनात्मक अध्ययन।' आर्थिक विकास शोध पत्रिका, खंड 8, संख्या 2, 2021, पृ. 33-47.
16. जोशी, अंजलि. 'ग्राहक धारणा और ऑनलाइन बैंकिंग: एक सर्वेक्षण आधारित अध्ययन।' समकालीन प्रबंधन दृष्टि, खंड 10, संख्या 4, 2022, पृ. 112-125.
17. चौहान, दीपक. डिजिटल भुगतान प्रणाली और भारतीय बैंकिंग का भविष्य. जयपुर: अरिहंत पब्लिकेशन्स, 2019.
18. अग्रवाल, मोनिका.'ऑनलाइन बैंकिंग में सुरक्षा और गोपनीयता से जुड़े मुद्दे।' ई-बिजनेस रिसर्च जर्नल, खंड 7, संख्या 1, 2024, पृ. 55-68.
19. पांडे, लोकेश. 'UPI और मोबाइल बैंकिंग का ग्रामीण ग्राहकों पर प्रभाव।' भारतीय आर्थिक अध्ययन, खंड 15, संख्या 2, 2023, पृ. 77-89.
20. कौर, हरप्रीत. 'डिजिटल बैंकिंग सेवाएँ: एक उपभोक्ता व्यवहार अध्ययन।' प्रबंधन शोध और समीक्षा, खंड 9, संख्या 3, 2023, पृ. 130-142.

तालिका 1

क्र.	**मापदंड**	**निजी क्षेत्र के बैंक (औसत स्कोर 1-5)**	**सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक (औसत स्कोर 1-5)**	**टिप्पणी (व्याख्या)**
1	वेबसाइट/ऐप का उपयोग करने में आसानी	4.5	3.8	निजी बैंकों के डिजिटल प्लेटफॉर्म अधिक सहज और आधुनिक पाए गए।
2	लेन-देन की गति एवं दक्षता	4.6	4	निजी बैंकों में लेन-देन आमतौर पर तेजी से पूरे होते हैं।
3	सुरक्षा विशेषताएँ	4.4	4.5	दोनों प्रकार के बैंक सुरक्षा को उच्च प्राथमिकता देते हैं, सार्वजनिक बैंक थोड़े बेहतर रेटेड।
4	ग्राहक सहायता सेवा	4.2	3.5	चैटबॉट, कॉल सेंटर के माध्यम से निजी बैंकों की सहायता सेवा अधिक कुशल पाई गई।
5	सेवाओं की विविधता	4.3	4.2	निवेश, बिल भुगतान, ऋण आवेदन जैसी सेवाओं में दोनों बराबर हैं।
6	लेन-देन शुल्क	3.8	4.4	सार्वजनिक बैंक ऑनलाइन लेन-देन पर कम शुल्क लगाते हैं, जिससे ग्राहक अधिक संतुष्ट हैं।
7	डिजिटल भुगतान एकीकरण	4.7	4.1	UPI, वॉलेट आदि के एकीकरण में निजी बैंकों के ऐप अग्रणी हैं।
8	व्यक्तिगतकरण	4.4	3.6	निजी बैंक ग्राहकों की आदतों के आधार पर व्यक्तिगत ऑफर और डैशबोर्ड प्रदान करते हैं।
9	तकनीकी खराबी/डाउनटाइम	4	3.4	सार्वजनिक बैंकों के सिस्टम में तकनीकी खराबी और अनुसूचित डाउनटाइम की शिकायत अधिक मिली।
10	नवाचार और नई सुविधाएँ	4.5	3.7	निजी बैंक AI सहायक, बजटिंग टूल्स जैसी नई सुविधाएँ जल्दी लॉन्च करते हैं।
	कुल औसत संतुष्टि स्कोर	4.34	3.86	निष्कर्ष: निजी बैंकों में ग्राहक संतुष्टि का समग्र स्तर सार्वजनिक बैंकों की तुलना में स्पष्ट रूप से अधिक है।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महिला सशक्तिकरण में स्व सहायता समूह की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

श्रीमति वर्षा कहार* डॉ. पूजा तिवारी**

* शोधार्थी, शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिंदवाडा (म. प्र.) राजा शंकर शाह वि.वि., छिंदवाडा (म.प्र.) भारत
** शोध निर्देशिका, विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिंदवाडा (म. प्र.) भारत

शोध सारांश – महिला सशक्तिकरण और स्वयं सहायता समूह एक बहुचर्चित विषय बन गया है। स्वयं सहायता समूह महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण योगदान कर रहे है क्योंकि समूहों में कार्य करने से उनके स्वाभिमान गौरव व आत्मनिर्भरता में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप महिलाओं की स्थिति देश के विकास को प्रदर्शित करती है। विश्व का कोई भी देश महिलाओ को हाशिए पर रख कर अपना आर्थिक विकास नही कर सकता है। महिलाओं को देश के विकास की मुख्यधारा से जोडना ही इन्हे सशक्त बनाने के लिए उन्हे निर्णय सक्षम बनाना होगा। सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक और स्वयं के जीवन में निर्णय लेने की क्षमता ही सशक्तिकरण है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मार्च 1975 से अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की शुरूआत की गई तब से विश्व में महिला सशक्तिकरण एक जागरूक अभियान बन गया है। इसके लिए राष्ट्रीय स्थानीय स्तर पर विभिन्न प्रयास भी किए गए। महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक रूप से सुदृढ बनाने में स्वयं सहायता समूहों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। देश में लगभग 60 लाख स्वयं सहायता समूहों से 6.7 करोड़ महिलाए जुडी हुई है। परन्तु हमारी देश की सामाजिक, सांस्कृतिक आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियां महिला समूहों की गतिशीलता, व्यवहार्यता व सहायता में अनेक चुनौतियां खडी करती है। इन चुनौतियों को कम करने में महिला संगठनों समाज सेवी संस्थाओं व गैर सरकारी संगठनों द्वारा कार्य किया जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप महिला समूहों की सक्रियता व सामाजिक आर्थिक रूप से भागीदारी व महिला सशक्तिकरण सही मायने में हो रहा है।
यह अध्ययन पूर्व के अध्ययनों को नवीन परिदृश्य में देखने का प्रयास है।
इस शोध पत्र में मुख्यत महिला सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका को प्रस्तुत किया गया है।
शब्द कुंजी – महिला सशक्तिकरण, आर्थिक विकास, स्व सहायता समूह, महिला स्थिति, सामाजिक और राजनीतिक विकास।

प्रस्तावना – दुनिया में ऐसा कोई भी देश नही है जहां महिलाओं को हाशिए पर रखकर आर्थिक विकास संभव हुआ हों। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोडे बिना किसी समाज राज्य व देश के आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक विकास की कल्पना भी नही की जा सकती। भारत की कुल आबादी की आधी महिलाओं को सशक्त बनाए बिना सुदृढ भारत का सपना पूरा नही किया जा सकता, विशेषकर ग्रामीण महिला को सशक्त किए बिना (शर्मा 2013).

स्वयं सहायता समूह महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। जिसमें बांग्लादेश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मुहम्मद युनूस का प्रयास उल्लेखनीय रहा है। इन्होने 1970 से ही लघुवित्ता आंदोलन की शुरूआत की थी जिसके तहत गरीबी, विशेषकर औरतों को बिना किसी शर्त के ऋण देने की व्यवस्था की गयी और आज लघुवित्ता आंदोलन विश्व के 7 हजार संस्थाओं द्वारा चलाया जा रहा है। जिससे लगभग 1 करोड 6 लाख लोगो को रोजगार दिया जा चुका है (श्रीवास्तव 2008)। वास्तव में स्वयं सहायता समूह गांव के व्यक्तियों का एक ऐसा संगठन है जो अपनी इच्छा से संगठित होकर, नियमित रूप से थोडी थोडी बचत कर सामूहिक निधि में जमा करते है तथा जिसका उपयोग सदस्यों की आकस्मिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए किया जाता है। इस प्रकार समूह के सदस्य हफतें अथवा महीने से एक बार बैठक कर विभिन्न विषयों पर चर्चा कर, एक दूसरे की समस्याओं का समाधानकरते है, जिससे ये महिलायें गरीबी, बेरोजगारी तथा निरक्षरता के चक्रव्यूह से निकलकर सशक्तिकरण की दिशा में कदम बढा रही है और न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक और राजनीतिक आयामों पर भी सशक्तिकरण की और अग्रसर है (गुप्ता एवं पंथी 2013)।

महिला सशक्तिकरण को दुनिया में लगभग सभी समाजों में स्त्री पुरूष भेदभाव को कम करने के एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में देखा है। सशक्तिकरण का अर्थ एक ऐसी प्रक्रिया से है जिसके तहत शक्तिहीन लोगों को अपने जीवन की परिस्थितियों को नियंत्रित करने के बेहतर अवसर मिलते है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए आवश्यक है कि पुरूष प्रधान समाज में स्त्रियों के साथ होने वाले भेदभाव के बारे में वे जागरूक बने।

स्वयं सहायता समूह का लक्ष्य निर्धनों में नेतृत्व क्षमता का विकास करना व उन्हें सामर्थ्यवान बनाना है। इससे ग्रामीण निर्धनों द्वारा स्वेच्छा से गठित एक समूह है जिसमें समूह के सदस्य अपनी इच्छा से जितनी चाहे बचत आसानी से कर लेते है। असका अंशदान एक सम्मिलित निधि में करने तथा समूह के सदस्यों को उत्पादकता अथवा आपातकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण के रूप में देने के लिए परस्पर सहमति होती है।

सिंह, कुशल व गौतम (2007) ने अपने अध्ययन में निष्कर्ष दिया है कि महिलओं का एक अत्यधिक बडा प्रतिशत स्व सहायता समूहों की सदस्यता के बाद सकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है। महिलाओं की समूह

में भागीदारी उन्हें अपनी आंतरिक शक्ति को खोजने, आत्मविश्वास अर्जित करने, सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण और क्षमता निर्माण करने योग्य बनाता है।

लोकेश (2009) के अनुसार स्व सहायता समूहों के पास देश में समाजिक, आर्थिक क्रांति लाने की शक्ति है। यह आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रस्थिति, निर्णय निर्माण को परिवर्तित करने में योगदान कर सकता है। और महिलाओं की बाहरी गतिविधियों में वृद्धि करता है।

पुहाजेन्दी एवं बाढात्या (2002) ने अपने अध्ययन में दिखाया है। कि स्व सहायता समूह के सदस्यों ने अपनी आर्थिक अवस्था को उनकी तुलना में जो समूह के सदस्य नही है अधिक उन्नत अनुभव किया है।

स्वयं सहायता समूहों के निष्पादन से संबंधित किये गये विभिन्न सर्वेक्षणों में यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि स्वयं सहायता समूहों को लघु ऋण प्रदान करने से ग्रामीण महिलाओं की भौतिक गतिशीलता, निर्णय के अधिकारों में वृद्धि, सौदा शक्ति तथा विभिन्न स्तरों पर समस्या मात्र वे घर के कामों में ही कुशल नही, बल्कि सामुदायिक स्तर पर भी विभिन्न आर्थिक क्रियाओं को करने में भी निपूण है। इस प्रकार महिलाओं द्वारा महिला सशक्तिकरण का यह प्रयास सराहनीय है।

अध्ययन के उद्देश्य–

1. स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों की स्थिति का अध्ययन,
2. महिला सशक्तिकरण पर स्व सहायता समूह के प्रभाव का अध्ययन,
3. स्वयं सहायता समूह की प्रगति की समीक्षा करना।

स्व सहायता समूह का उद्देश्य – स्वयं सहायता समूह का उद्देश्य ग्रामीण निर्धनों मुख्य रूप से महिलाओं को लघु ऋण उपलब्ध कराना है। तथा इसके साथ ही साथ बैंकिग गतिविधियों के साथ जोडकर बचत तथा महिलाओं में आपसी सहयोग को बढावा देना है इसके अतिरिक्त इसका प्रमुख उद्देश्य महिलओं में समानता तथा संबद्धता को विकसित करना, आत्म विश्वास बढाना, आत्म निर्भरता बढाना तथा उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाना है, जिससे वे व्यक्तिगत स्तर पर सशक्त होने के साथ साथ सामूहिक स्तर पर भी सशक्त हो सके और अपने अधिकारों के लिए सामने आ सके।

स्व सहायता समूह का संचालन– समूह के सुचारू रूप सें संचालन के लिए प्रत्येक समूह अपने सदस्यों में से ही तीन प्रतिनिधि अध्यक्ष कोषाध्यक्ष तथा सचिव की नियुक्ति करता है, ताकि समूह क्रियाविधि सुचारू रूप से चल सके। पदाधिकारियों को चुनने का आधार मुख्यत: शिक्षा तथा आत्मविश्वास होता है ताकि समूह में हिसाब किताब का काम ये स्वयं कर सके। प्राय: सुविधादाता द्वा कभी कभी इनको समूह चलाने की ट्रेनिंग भी दी जाती है। प्रत्येक महीने समूह की नियमित मीटिंग होती है, जो कि किसी सार्वजनिक स्थान अथवा प्रत्येक सदस्य के घर बारी बारी से होती है।

महिला स्वयं सहायता समूह समान स्तर की 10 से 20 महिलाओं का वह समूह है जिसके सदस्य स्वेच्छा से इसकी सदस्यता प्राप्त कर पारस्परिक सहयोग व एकता जैसे सिद्धांतों के आधार पर बचत व साख जैसी आर्थिक गतिविधियों की शुरूआत कर सकते है। विभिन्न समूहों के अध्ययन से एक विशेष तथ्य सामने आया है कि महिलाओं के समूह अथवा ऐसे समूह जिनमें महिलाओं की संख्या अधिक है, अधिक सफल व निरंतर कार्यशील रहे है।

स्व सहायता समूहो का महिलाओं के जीवन पर प्रभाव– स्वयं सहायता समूहों में कार्य करने के कारण महिलाओं के आत्मविश्वास, स्वाभिमान, आत्म गौरव इत्यादि में वृद्धि होती है क्योकि घरेलू परिधि के बाहर एक समूह के रूप में छोटी छोटी बचत इकटठी करके ऋण लेकर, बैंक कर्मचारियों से संपर्क लघु उद्यम स्थापित करके, समूह की बैठको की कार्यवाई संचालित करके महिलाओं में निम्नलिखित क्षमताओं का विकास होता है –

स्वनिर्णय की शक्ति – स्वयं सहायता समूह के सदस्य के रूप में काम करने के कारण महिलाओं की स्वयं निर्णय लेने की शक्ति का विकास होता है। महिलाओं द्वारा बैंको के साथ लेन देन कागजी कार्यवाई इत्यादि करने से उनमें आत्म विश्वास धनपता है।

जानकारी तथा संसाधनों की उपलब्धता – समूह के सदस्य के रूप में महिलाओं की गतिशीलता बढ जाती है। घर की चारदीवारी में कैद रहने वाली महिलाए इन समूहों के माध्यम से पंचायत संस्थाओं, बैक सरकारी तंत्र गैर सरकारी संगठना सूक्ष्म वित संस्थानों इत्यादि से संपर्क में आती है जिससे उनके पास अधिक सूचना एवं संसाधन होते है।

समूहिक निर्णय के मामलों में अपनी बात बलपूर्वक रखने की समर्थता – अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि स्वयं सहायता समूहों में कार्य करने वाली महिलाओं की सामुदायिक कार्यो स्वयं सहभागिता पंचायत की बैठको में उपस्थिति अधिक सक्रिय होती है।

आर्थिक आत्मनिर्भरता – स्वयं सहायता समूह की सदस्य के रूप में महिलाएं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती है। जिससे परिवार में उनकी स्थिति में सुधार होता है। तथा इस प्रकार उपलब्ध धन का इस्तेमाल वे अपने निजी इस्तेमाल अथवा बच्चों की शिक्षा व स्वास्थय इत्यादि में करती है।

मनोवैज्ञानिक विकास – स्वयं सहायता समूह की सदस्य के रूप में महिलाओं द्वारा स्वयं की पहल पर सामाजिक बदलावों के लिए भागीदारी सुनिश्चत होती है। उनका बदलाव लाने की अपनी क्षमता में सामूहिक शक्ति बेहतर करने केलिए कौशल सीखने की क्षमता का विकास होता है।

महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों के विकास में बाधक तत्व – यद्यपि महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों द्वारा काफी अच्छा काम किया जा रहा है किन्तु भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिलाओं को स्वयं को समूहों के रूप में संगठित होने व किसी उद्यम के विकास में पुरूषों की तुलना में कही अधिक कठिनाइयों का सामना करना पडता है, जैसे –

महिलाओं की गतिशीलता पर सीमाएं – भारत में पुरूष प्रधान समाज के कारण महिलाओं का जीवन प्राय: घर की चारदीवारी में ही सीमित होता है। इसलिए घर के बाहर जाकर स्वयं सहायता समूहों के रूप में संगठित होने की स्थिति में उन पर अनेक प्रकार की सामाजिक बाधाएं होती है।

सामाजिक प्रतिबंध – भारतीय समाज में महिलाओं के रहन–सहन, काम काज रोजगार इत्यादि पर अनेक सामाजिक – पारम्परिक रीति रिवाज भी बाधा के रूप में काम करते है। महिला स्वयं सहायता समूहों को स्वयं के उद्यम के उत्पादों का प्रचार करने व उनको शहरों तक पहुंचाने के लिए पुरूषों की सहायता लेनी पडती है।

बैकर्स का नकारात्मक रवैया – स्वयं सहायता समूहों की सदस्य के रूप में जब महिलाएं बैंको से ऋण इत्यादि के लिए संपर्क करती है तो पूर्व अनुभव के अभाव में उनकी जिज्ञासाएं व शंकाएं अधिक होती है। किंतु बैंकर्स की तरफ से इस स्थिति के प्रति सकारात्मक व सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार नही किया जाता है। जिससे महिला समूहों का मनोबल कम होता है।

प्रशासनिक बाधाएं – सरकारी संस्थाओं से संपर्क साधने मे महिला समूहों को प्रशासनिक रूढिताओं जटिलताओं भ्रष्टाचार रिश्वतखोरी पुरूषवादी मानसिकता इत्यादि के कारण अनेक बाधाओ का सामना करना पडता है।

साहित्य की समोक्षा – चौधरी (2010) के अध्ययन के अनुसार, महिला सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कोई महिला अपने जीवनस्तर को उन्नत करने के लिए विद्यमान सामाजिक व्यवस्थाओं और संस्कृति को चुनौती देती है और इस प्रक्रिया के माध्यम से उसकी योग्यतायें उभरकर आती है। वास्तविक महिला सशक्तिकरण की श्रेणी में केवल वही गतिविधियां समाहित की जा सकती है, जिसके माध्यम से महिलाएं समाज के वर्तमान व्यवस्थाओं का प्रतिरोधकरती है और इस प्रक्रिया में उनकी जीवन परिस्थितयों में स्पष्ट सुधार परिलक्षित होता है।

सिंह, कुशल व गौतम (2007) ने अपने अध्ययन में निष्कर्ष दिया है कि महिलाओं का एक अत्यधिक बड़ा प्रतिशत स्व सहायता समूहों की सदस्यता के बाद सकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है। महिलाओं की समूह में भागीदारी उन्हें अपनी आंतरिक शक्ति को खोजने, आत्मविश्वास अर्जित करने, सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण और क्षमता निर्माण करने योग्य बनाता है।

लोकेश (2009) के अनुसार स्व सहायता समूहों के पास देश में सामाजिक, आर्थिक काति लाने की शक्ति है। यह आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रस्थिति, निर्णय निर्माण को परिवर्तित करने में योगदान कर सकता है और महिलाओं की बाहरी गतिविधियों में वृद्धि करता है।

श्रीवास्तव (2020) के अनुसार स्वयं सहायता समूह देश के विभिन्न राज्यों में अनेक गतिविधियों द्वारा न केवल महिलाओं के समाजिक व आर्थिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हे अपितु समाज में सकारात्मक व रचनात्मक वातावरण को विकसित करने में भी सहायक है।

महिलाओं की आर्थिक स्थिति मे सुधार आसानी से देखा जा सकता है। महिलाएं पहले से अधिक जागरूक हुई है इस कार्यक्रम में रूचि रखती है यही कारण है कि अधिकांश महिलाओं द्वारा समूह की मासिक बैठको में भाग लिया जाता है (श्रीनिवास 2016)

सिंह (2011) के अनुसार वर्तमान में महिला स्वयं सहायता समूह की संख्या बहुत तेजी से बढ रही है। इन समूहों का कार्य ऋण प्राप्त किये बिना नही चल पाता। अत: यह समूह ऋण प्राप्त करने हेतु बैंक से निरंतर जुडते जा रहे है। केवल सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, सहकारी बैंक क्षेत्रीय ग्रामीण बैक ही नही बल्कि निजी क्षेत्र के बैंक एवं विदेशी बैंक भी अपना व्यापार बढाने हेतु गांव में कार्यरत स्वयं सहायता समूहों तक अपनी पहुच बनाने हेतु निरंतर प्रसासरत है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि समूह की क्रियाओं में भाग लेकर महिलाएं विभिन्न कार्यो से जुडकर विकास के नये आयाम से जुड गयी है। महिला सशक्तिकरण का प्राथमिक उद्देश्य ही यह है कि उनको अपने अधिकारों के प्रति सशक्त किया जाय और परिवार में निर्णय के स्तर पर ज्यादा से ज्यादा भागीदारी बढाई जाये।

इस प्रकार ग्रामीण महिलाओं को स्वावलंबी और आत्मनिर्भर बनाने में स्वयं सहायता समूह महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है, जिसके अंतर्गत स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसके तहत अब तक 30 हजार से ज्यादा स्वयं सहायता समूहों का गठन किया जा चुका है। विभिन्न तथ्यों से स्पष्ट प्रमाण मिलते है, कि इन्हीं समूहों के माध्यम से महिलाओं पर किये गये घरेलू हिंसा तथा शोषण पर प्रभावशाली ढंग से रोक लगायी गई है, जिससे समाज में महिलाओं की स्थिति में कुछ हद तक सुधार भी आया है।

एक समय में जो महिलाएं अशिक्षित तथा अज्ञानी थी, स्वयं सहायता समूह से जुडने के पश्चात अपने स्वास्थ्य बच्ची की शिक्षा भोजन की पौष्टिकता तथा परिवार नियोजन के प्रति जागरूक हो गई है। प्रौढ शिक्षा मिशन द्वारा स्वयं सहायता समूह आंदोलनों से महिलाओं में नेतृत्व गुणों का भी विकास किया जिससे वे समूह की बात को सामने लाने में सक्षम हुई। इस अध्ययन में समाज के अतिआवश्यक, अविभाज्य किंतु पिछडे हुए अंग महिला को सशक्त एवं स्वावलंबी बनाने हेतु प्रभावी उपकरण स्वयं सहायता समूहों की भूमिका पर दृष्टिपात करने का प्रयास किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. शर्मा क्षमा 2002 स्त्रीत्ववादी विमर्श समाज और साहित्य, राजकमल, नई दिल्ली।
2. शर्मा ओमप्रकाश 2004, ग्रामीण समाज में नियोजित सामाजिक परिवर्तन, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
3. राजकुमार 2005 नारी के बदलते आयाम अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
4. पसूका मार्च 2006 ग्रामीण महिलाओं की बदलती स्थिति, कुरूक्षेत्र, पेज न. 03, भारत सरकार की पत्रिका सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
5. कुमार नीरज मार्च 2007 महिला सशक्तिकरण की कुछ कोशिशें, कुरूक्षेत्र 53 (5)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आयुष्मान भारत एवं प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के माध्यम से जीवन में बदलाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन (सतना जिले के संदर्भ में)

आभा सिंह कुशवाहा* डॉ. अंजनी कुमार पाण्डेय**

* शोधार्थी, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला सतना (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला सतना (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – आयुष्मान भारत एवं प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना भारत सरकार की एक महत्वकांक्षी योजना है जिसका उद्देश्य हर भारतीय नागरिक को स्वास्थ्य सेवाओं का नि:शुल्क लाभ मिले। पिछले कुछ दशकों में हमारे देश के विभिन्न स्वास्थ्य संकेतको में सुधार हुआ है जबकि जेब से होने वाला खर्च लाखों लोगों को गरीबी की स्थिति में लाता है। यह अभी भी चिंता का बड़ा विषय है इस समस्या को दूर करने और अस्पतालों में भर्ती होने वाले आबादी के कमजोर वर्गों को द्वितीयक और तृतीयक देखभाल प्रदान करने के लिए प्रतिवर्ष प्रति परिवार 5 लाख रुपये का स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने के उद्देश्य वर्ष 2018 में आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना शुरू की गई जिसमें तत्कालीन राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना को शामिल कर लिया गया।

पैनलबद्ध अस्पतालों में निशुल्क और कागज रहित सेवाओं तक पहुंच के लिए इसके अंतर्गत करीब 10.74 करोड़ से अधिक गरीब और कमजोर परिवार (लगभग 50 करोड लोग) इन लाभों के हकदार हैं। इसमें अस्पताल में भर्ती होने से पहले तीन दिन और अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद 15 दिन डायग्नोस्टिक और दावों के रूप में होने वाला खर्च शामिल है। परिवार का आकार, आयु या लिंग की कोई सीमा नहीं है ताकि लाभार्थी परिवारों के सभी सदस्यों को इसमें शामिल करना सुनिश्चित किया जा सके।

शब्द कुंजी– आयुष्मान भारत, वैश्विक स्वास्थ्य सेवा प्रणाली, जागरूकता, अपनी जेब से खर्च, सार्वजनिक वित्त पोषित स्वास्थ्य बीमा, सार्वभौमिक स्वास्थ्य ।

प्रस्तावना – सर्वप्रथम आयुष्मान भारत योजना को प्रधानमंत्री द्वारा 14 अप्रैल 2018 को भीमराव आम्बेडकर की जयंती के दिन झारखंड के रांची जिले से आरंभ किया और पूरे देश में 23 सितंबर 2018 को लागू किया गया था।

भारत सरकार की ओर से देश के आर्थिक रूप से कमजोर लोग (बी.पी.एल. कार्ड) धारक को अच्छी और अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं सुविधाएं प्रदान करने के लिए आयुष्मान भारत एवं प्रधानमंत्री आरोग्य भी योजना चलाई गई है। इस योजना के तहत निम्न वर्ग के व्यक्ति जो गरीब रेखा के नीचे आते है। उन्हें भारत सरकार द्वारा 5 लाख रूपये तक स्वास्थ्य लाभ मिलता है।

इस योजना का लाभ उठाने के लिए आयुष्मान भारत स्वास्थ्य कार्ड बनवाना पड़ता है। इसको 'आभा कार्ड' के नाम से भी जाना जाता है। इस योजना का राष्ट्रीय स्वास्थ्य के द्वारा 2017 में प्रस्तावित किया गया और 21 मार्च 2018 को कैबिनेट द्वारा आयुष्मान भारत राष्ट्रीय सुरक्षा मिशन के रूप में मंजूरी दी।

अब यह योजना आयुष्मान भारत योजना या प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के नाम से लोकप्रिय है। इस योजना का अध्याय वाक्य है–

'कोई भी पीछे ना छूटे'

साथ ही इस योजना का लाभ पूरे देश में कहीं भी लिया जा सकता है। योजना की लागत केंद्र और राज्य सरकारों के बीच साक्षा की जाती है।

आयुष्मान भारत योजना की विशेषताएं

1. यह पूरे भारत में सर्वाधिक और निजी दोनों अस्पतालों में द्वितीयक और तृतीयक अस्पताल देखभाल के लिए प्रति परिवार प्रति वर्ष 5 लाख रुपये का लाभ प्रदान करता है।
2. इस योजना से 12 करोड़ से अधिक गरीब और कमजोर परिवार (लगभग 55 करोड लोग) को लाभ मिलेगा।
3. इससे लाभार्थियों को अस्पताल में सीधे नि:शुल्क स्वास्थ्य सेवाएं प्राप्त करने की सुविधा मिलती है।
4. इसमें अस्पताल में भर्ती होने से तीन दिन पहले और 15 दिन बाद तक का नि:शुल्क सेवा शामिल है। जिसमें निदान और दवाइयां शामिल है।
5. परिवार के आकार, आयु या लिंग पर कोई सीमा नहीं है तथा सभी पूर्व मौजूदा स्थितियों को पहले दिन से ही कवर किया जाता है।
6. यह योजना पोर्टेबल है अर्थात लाभार्थी भारत में किसी भी सूचीबद्ध अस्पताल में उपचार प्राप्त कर सकता है।
7. इसमें लगभग 1929 प्रक्रियाएं शामिल हैं जिनमें दवाओं, नैदानिक परीक्षणों, डॉक्टर की फीस, कमरे का शुल्क और आई.सी..यू. खर्चे जैसी लागत का ध्यान रखा जाता है।
8. सार्वजनिक अस्पतालों को उनकी सेवाओं के लिए निजी अस्पतालों के जैसे ही प्रतिपूर्ति की जाती है।
9. इस योजना में शामिल होने की पात्रता के लिए सामाजिक आर्थिक जाति जनगणना 2011 (SECC) का उपयोग किया गया है। ऐसे परिवार जो जनगणना के इस आंकड़े में शामिल नहीं है किंतु उन्हें

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के तहत लाभ मिलता है। वो भी इस योजना में शामिल माने गये हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण (NHA) इस योजना को संचालित करने वाली प्रमुख योजना है।

उद्देश्य – केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी आयुष्मान भारत योजना ने न सिर्फ लाखों लोगों को प्रभावित किया है बल्कि इस योजना ने इलाज में खर्च होने वाले करोड़ों रूपये की भी बचत कराई है। मध्य प्रदेश में अब तक 3.61 करोड़ परिवारों को योजना का लाभ मिल चुका है। इस योजना में हर माह 60 से 70 प्रतिशत इलाज आयुष्मान कार्ड से होता है। ये एक प्रधानमंत्री जी की तरफ से बहुत बड़ी उपलब्धि है जिससे गरीब व निम्न वर्ग के नागरिकों को नि:शुल्क इलाज प्रधान कर रहे हैं। प्रदेश में 34 लाख 72 हजार 386 बुजुर्गो और 81 लाख 94 हजार 72 श्रमिकों के आयुष्मान कार्ड बनने थे लेकिन अब तक 14 लाख 25 हजार 397 कार्ड ही बन गए है।

मुख्य उद्देश्य और जीवन में बदलाव

1) सस्ती स्वास्थ्य सेवा : यह योजना आर्थिक रूप से वंचित परिवारों को सालाना 5 लाख रूपये तक का स्वास्थ्य सेवा प्रदान करती है। जिससे वे महंगी चिकित्सा प्रक्रियाओं का लाभ उठा सकते हैं।

2) वित्तीय बोझ में कमी आम : आम आदमी बीमारियों के कारण आने वाले भारी खर्चे से बचने की कोशिश करता है और इस पैसे का उपयोग अन्य जरूरतों पर कर सकते हैं जिससे वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना न पड़े।

3) गुणवत्तापूर्ण उपचार : यह योजना निम्न परिवारों को तृतीयक और माध्यमिक स्तर के उपचार जैसे हृदय, किडनी और कैंसर के इलाज तक पहुंच प्रदान करती है जिससे उनके समग्र स्वास्थ्य में सुधार होता है।

4) स्वास्थ्य सेवाओं तक आसन पहुंच : योजना का लक्ष्य परिवारों को बिना किसी वित्तीय चिंता के गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करने में सक्षम बनाना है।

5) शामिल और सामान स्वास्थ्य प्रणाली : यह समावेशी स्वास्थ्य प्रणाली के निर्माण की दिशा में एक बड़ा कदम है जिससे देश में सार्वजनिक स्वास्थ्य में दीर्घकालिक सुधार हो सकते हैं।

संक्षेप में, यह योजना मध्यप्रदेश के लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराकर उनके स्तर को सुधारने वित्तीय सुरक्षा और उन्हें एक स्वस्थ या खुशहाल जीवन जीने में मदद करने का एक प्रयास है।

शोध प्रविधि

1. प्रकार : विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक
2. स्त्रोत : प्राथमिक डेटा (सर्वेक्षण और इंटरव्यू)
3. द्वितीय डेटा : संसदीय रिपोर्ट, सरकारी अस्पतालों की जांच, शोध पत्र आदि
4. नमूना : 300 ग्रामीण और शहरी निम्न परिवारों (जो जिले के 5 गांव)
5. साधन : संरचित प्रश्नावली, फोकस समूह चर्चा, व्यक्ति का साक्षात्कार।

प्रस्तावित शोध प्रविधि में मध्यप्रदेश में प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के तहत सतना जिला में शोध किया गया है तथा इस का विवरण ऊपर दर्शाया गया है।

लाभ :

1) चिकित्सा, परीक्षा, उपचार और परामर्श नि:शुल्क।
2) अस्पताल में भर्ती से पूर्ण खर्चा।
3) गैर-वाहन और गहन स्वास्थ्य सेवायें।
4) दवाइयां और चिकित्सा उपयोग।
5) नैदानिक और प्रयोगशाला में नि:शुल्क जांच।
6) अस्पताल में रहने/खाने का खर्च नि:शुल्क।
7) उपचार के दौरान उत्पन्न होने वाली जटिलताएं का निवारण।
8) अस्पताल में भर्ती होने के बाद 15 दिन तक देखभाल नि:शुल्क (सेवा) इत्यादि।

समस्या :

1) जागरूकता की कमी – कई लोगों को योजना और उसके लाभो के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती।

2) नामांकन प्रक्रिया में देरी – योजना के लिए नामांकन प्रक्रिया में देरी होना या उसमें अडचने आना एक चुनौती है।

3) सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं का कमजोर होना – सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में आई कमियां या नाजुक स्थिति लाभार्थियों को बीमा के दायरे में लाने के लिए निजीकरण की ओर ले जा सकती है।

4) उच्च-स्तरीय सुविधाओं का प्रबंध – स्वास्थ्य और कल्याण केन्द्रों से लाभार्थियों को उच्च स्तरीय सुविधाये में रेफर करने के लिए उच्च-स्तरीय सुविधाओं को मजबूत करने की आवश्यकता है।

5) लागत और वित्तीय पहलू – कुछ लोगों का मानना है कि योजना के तहत स्वास्थ्य सेवाएं निजीकरण की ओर ले जा सकती है और सार्वजनिक वित्त पोषण की भूमिका कम हो सकती है।

सुझाव :

1) जागरूकता बढ़ाना – योजना के बारे में लाभार्थियों और समुदाय के बीच में जागरूकता और जानकारी के स्थान में सुधार करना महत्वपूर्ण है।

2) नामांकन प्रक्रिया को सरल बनाना – लाभार्थियों को योजना का लाभ उठाने के लिए आसान और त्वरित प्रक्रिया प्रदान करनी चाहिए।

3) सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत करना – मौजूदा चिकित्सा बुनियादी ढांचे को मजबूत करना और सार्वजनिक प्रणाली में पर्याप्त निवेश करना आवश्यक है।

4) निजी क्षेत्र की भागीदारी का लाभ उठाना – निजी क्षेत्र में मौजूद अच्छी तरह से सुसज्जित अस्पतालों का प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है और निजी क्षेत्र से अधिक भागीदारी को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

5) नीतिगत सुधार : गुणवत्ता, समानता और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए नीतिगत सुधारो और मजबूत निगरानी की आवश्यकता है।

निष्कर्ष – अंत में निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के तहत भारतीय नागरिकों को स्वास्थ्य सेवा के लिए नि:शुल्क सुविधा प्रदान की गई। जिसके द्वारा निम्न वर्ग के लोगों को खर्चा व कर्ज से मुक्ति मिल सके।

आयुष्मान भारत योजना के द्वारा इसने भारत में स्वास्थ्य सेवा पहुंचकर लाभार्थियों के जीवन में बहुत बदलाव लाया है। इसमें लाखों लोगों को वित्तीय सुरक्षा प्रदान हुई और सामाजिक, आर्थिक असमानताओं को काम किया गया है योजना ने दुनिया की सबसे बड़ी स्वास्थ्य बीमा योजनाओं में से एक बनकर स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र को बदल दिया है। लेकिन जागरूकता, प्रशासनिक चुनौतियां और धोखाधड़ी की रोकथाम में अभी भी सुधार की आवश्यकता है।

सरकार द्वारा संचालित (आयुष्मान भारत योजना) स्वास्थ्य संबंधी योजनाएं:

1. राष्ट्रीय आयुष मिशन
2. राष्ट्रीय आरोग्य निधि
3. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
4. जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम
5. मिशन इंद्रधनुष
6. प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना
7. निक्षय सुरक्षा योजना
8. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन इत्यादि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय
2. भारत सरकार 'प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना' राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण से प्राप्त (2023)
3. वित्त मंत्रालय 'आर्थिक सर्वेक्षण 2022-23'
4. इंटरनेट
5. दैनिक भास्कर
6. कुरुक्षेत्र वर्ष 2023-24
7. हिंदुस्तान टाइम्स, पत्रिका
8. प्रतियोगिता दर्पण इत्यादि।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कमार जनजाति की व्यवसाय उपभोग एवं जीवन स्तर पर उनका प्रभाव (धमतरी जिले के संदर्भ में)

डेकेश्वरी*

* शोधार्थी, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय,रायपुर (छ.ग.) भारत

सारांश:- प्रस्तुत अध्ययन 'कमार जनजाति की व्यवसाय उपभोग एवं जीवन स्तर पर उनका प्रभाव' (धमतरी जिले के संदर्भ में) के अध्ययन हेतु 256 कमार परिवारों का सॉलविन पद्धति द्वारा चयन किया गया जिसका उद्देश्य कमार परिवारों के आय एवं रोजगार की स्थिति का अध्ययन एवं कमार परिवारों के उपभोग की प्रवृत्ति का प्रभाव की जानकारी प्राप्त करना है। प्रत्यक्ष साक्षात्कार एवं अनुभव के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि इनकी आर्थिक स्थिति बहुत पिछड़ी हुई है। निदर्श कमार परिवारों की लिंग संरचना के विश्लेषण से यह ज्ञात होत है कि कुल निदर्श कमार परिवार की सदस्य संख्या 988 है जिसमें पुरूष 470 एवं महिला 548 है यह स्पष्ट है कि कमार परिवारों में पुरूष की संख्या से महिलाओं की संख्या अधिक है। इसी प्रकार कमार परिवारों में कुल 402 व्यक्ति अशिक्षित है एवं कुल 586 व्यक्ति शिक्षित है। पुरूषों की तुलना में महिलाएं अधिक शिक्षित है। इसी प्रकार उच्च शिक्षा की सुविधा गांवों में नहीं होने के कारण बच्चे पढ़ने के लिए गांव से बाहर नहीं जा पाते है इस कारण शिक्षा स्तर में कमी आई है। कमार परिवारों में कार्यशील व्यक्ति की कुल जनसंख्या 593 है, जिसमें पुरूष 292 (19.24 प्रतिशत) एवं महिला 301 (50.76 प्रतिशत) है। कमार परिवारों के मकानो का अध्ययन किया गया जिसमें पक्का मकान,79 (30.9 प्रतिशत) कच्चे मकान, 30 (11.79 प्रतिशत), 140 (54.7 प्रतिशत) मिश्रित मकान है तथा 07 (2.7) प्रतिशत के पास झोपड़ी के मकान है। 17.19 प्रतिशत कमार परिवार भूमि प्राप्त कर्ता है बल्कि 82.81 प्रतिशत कमार भूमिहीन है। निदर्श कमार परिवारों में कृषि एवं वनोपज व्यवसाय 42 (16.4 प्रतिशत) परिवारों की आय का मुख्य स्त्रोत है। मजदूरी (63.6 प्रतिशत), नौकरी (1.56 प्रतिशत)एवं बांस सिल्फ (18.36 प्रतिशत) है इससे यह ज्ञात होता है कि मजदूरी एवं वनोपज व्यवसाय से सबसे अधिक कार्य करते है। मासिक आय के आधार पर औसत विश्लेषण औसत आकार, परिवार की कुल आय, परिवार की औसत प्रति व्यक्ति आय के विश्लेषण ज्ञात होता है कि अधिक आय वर्ग की संख्या 0-100 आय वालों की है। इसी प्रकार 3000-500 आय वर्ग में। 0.39 प्रतिशत इस प्रकार अधिक आय वाले परिवारों की संख्या कम है। जो इसके पिछड़े एवं गरीबी के जीवन स्तर को बताता है। विभिन्न रोजगार के स्त्रोंतो से प्राप्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल कमार परिवारों की कुल 15037 दिन का रोजगार प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोध में कमार परिवारों की जीवन स्तर पर आय, रोजगार के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। कमार परिवारों में रोजगार और आय में वृद्धि के साथ उनके उपभोग प्रवृत्ति के स्तर में वृद्धि हुई है, जिसका प्रभाव कमार परिवारों के पारिवारिक बजट में आधुनिकता का प्रभाव पड़ा है।

शब्द कुंजी- कमार, उपभोग, जनजाति, रोजगार, व्यवसाय, पारिवारिक, आय, साधन।

प्रस्तावना - जनजातियों की संस्कृति भारतीय समाज में भारतीय लोक संस्कृति का ही अभिन्न अंग है, भारत विविधताओं का देश है। यह विभिन्न सामाजिक व सांस्कृतिक समूहों का संगम स्थल रहा है। यह देश की भौगोलिक स्थिति देश की भिन्नताओं को प्रभावित करती है। जिसका प्रभाव उस क्षेत्र के निवासियों पर पड़ता है। अत: देश में एक ओर विभिन्न क्षेत्रों में अनेक ऐसे मानव समूह निवास करते है, जो सभ्य समाज से दूर जंगलों पहाड़ों एवं पठारी क्षेत्रों में निवास करते है। वे अत्यधिक पिछड़े हुए है जो कि वन्य जाति, आदिम जाति, आदिवासी एवंजनजाति के नामों से संबोधित किया जाता है। इस आशय से इन जनजातियों के नाम संविधान की पांचवी अनुसूची में सम्मिलित किए गए है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान में इन लोगों को अनुसूचित जनजाति का नाम दिया गया। दक्षिण अफ्रीका के बाद सर्वाधिक जनजातियों की जनसंख्या भारत में पाई जाती है।

सन् 1935 के अधिनियम के अनुसार जनजातीय जनसंख्या को भारत सरकार द्वारा इन्हें विशेष पिछड़ी जनजातियों के नाम से संबोधित किया गया है। इसी प्रकार सर ए. बेन्स ने इन्हें पर्वतीय जनजातियां (हिल ट्राइब्स) 'वन्य जाति' जंगल पीपुल्स, फॉरेस्टर ट्राइबन अथवा कोक कहा है। ऐसी जनजातियों या जनजातीय समुदायों के अंतर्गत भाग या समहे जिनहें संविधान के प्रयोजन के लिए अनुच्छेद 342 के अंतर्गत समझा जाता है। (1) आदिम विशेषताओं के संकेत (2)विशिष्ट संस्कृति (3) भौगोलिक एकीकरण (4) बड़े पैमाने पर समुदाय के साथ संपर्क में संकोच (5) पिछड़ापन इत्यादि।

जनजाति से अभिप्राय:- जनजाति से अभिप्राय ऐसे व्यक्तियों का समूही जो किसी निश्चित भू-भाग पर निवास करते है। विकास की दृष्टि से काफी पिछड़े हुए है। अनुसूचित जनजाति शैक्षणिक स्तर तथा परंपरागत व्यवसाय के आधार पर विभेद करना पड़ रहा है। भारत के संदर्भ में निम्न जातियों को सामाजिक रूप से पिछड़ी जातियां माना जा सकता है।

जनजाति शब्द की उत्पत्ति:- जनजाति शब्द की उत्पत्ति तथा अर्थ के बारे में अलग-अलग विचार धाराएं शामिल है। जनजाति शब्द की उत्पत्ति

अंग्रेजी शब्द (ट्राइब) से बना है, जिसका अभिप्राय रोमन भाषा (ट्राई) बुआ से बना है जिसका अर्थ होता है कि एक राजनीतिक इकाई सबसे पहले इस शब्द का प्रयोग इन सामाजिक समूहों के लिए किया गया है। जिसकी भाषा, सभ्यता एवं संस्कृति एक सामाजिक संगठन है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और मानव जीवन में सामाजिक आर्थिक दशाओं का प्राथमिक स्थान है जो कि जीवन का प्रमुख आधार है।

डॉ. डी .ए. मजूमदार (1939) के अनुसार जनजाति की परिभाषा निम्नलिखित ही है जिन जाति परिवारों में पारिवारिक वर्गो का समूह होता है जिनसे सदस्य एक साथ निश्चित भू-भाग पर काम करते है तथा कुछ निषेधाज्ञाओं का पालन करते है। साधारण तथा जनजाति अंतर्विवाह के सिद्धांत का समर्थन करते है।

नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना 1 नवंबर 2000 लगभग एक तिहाई जनसंख्या 30.62 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों की है। संविधान के अनुच्छेद 342 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा छत्तीसगढ़ को आदिवासी क्षेत्र घोषित किया गया है। प्रदेश के 146 विकासखंडो में से 85 आदिवासी बाहुल्य विकासखंड है। कमार भारत सरकार के द्वारा घोषित विशेष पिछड़ी जनजातियों के रूप में मान्य किया गया है। ये जनजातियाँ (बैगा, कमार, अबुझमाड़िया, पहाड़ी कोरवा, खिरहोर) बाद में दो जनजातियों को विशेष पिछड़ी जनजाति के अंतर्गत शामिल किया गया है।

जिन दो जनजातियों को शामिल किया गया है उसके नाम भूंजिया, पंडो है जो राज्य सरकार द्वारा मान्य है। छत्तीसगढ़ में कमार जनजाति की कुल जनसंख्या जनगणना के अनुसार 926530 है जिसमें पुरूष जनसंख्या 13070, महिला जनसंख्या 14460 है । कमार जनजाति का संकेद्रण गरियाबंद, धमतरी एवं कसडोल में है। इस राज्य में इनका लिंगानुपात 1030 है जो राज्य के कुल लिंगानुपात का 989 प्रतिशत से अधिक है। जिनकी दशकीय वृद्धि 14.78 प्रतिशत रही। कमार जनजाति कुल साक्षरता 39.13 जिसमें पुरूष साक्षरता 23.70 प्रतिशत एवं महिला 15.43प्रतिशत है। कमार जनजाति अपनी उत्पत्ति मैनपुर विकासखंड के देवडोंगर ग्रांम से बताते है। मुख्य व्यवसाय बांस के सूपा, टोकरी, कंदमूल एवं जंगली उपज का संग्रहण, आखेट कृषि कर आज भी आदिम अवस्था मे जीवन व्यतीत कर रहे है । कमार जनजाति क्रमश: पहाड़पटिया एवं बुंदराजिया में विभक्त है। केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार के विकास कार्यक्रम, शिक्षा संचार यातायात एवं बाह्य सम्पर्को के कारण कमार जनजाति के लोगों के अभिमतों में परिवर्तन करने का प्रयास किया जा रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य:-

1. कमार परिवारों के आय एवं रोजगार की स्थिति का अध्ययन
2. कमार परिवारों के उपभोग प्रवृत्ति का प्रभाव

अध्ययन की परिकल्पना:-

1. कमार जनजाति परिवारों की आर्थिक स्थिति में कोई सुधार नहीं है।
2. अधिकांश कमार परिवार गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे है।

शोध प्रविधि:- प्रस्तु शोध का आंकलन प्रत्यक्ष साक्षात्कार एवं अवलोकन के साथ प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों समंको पर आधारित है। कमार विकास अभिकरण एवं शासकीय अर्द्धशासकीय संस्थाओं द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदनों की सहायता एवं शोध पत्रों को शामिल किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र:- प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र सॉलविन पद्धति विधि द्वारा कमार परिवारों को नगरी और मगरलोड विकासखंडों के 256 परिवारों का चयन किया गया है।

अध्ययन की सीमाएं:- प्रस्तुत अध्ययन के साक्षात्कार के उपरांत जनजातियों द्वारा समंक संकलन में प्रत्यक्ष सहभागिता का अभाव संकोची की प्रकृति अध्ययन की सीमाएं रही।

अध्ययन क्षेत्र का विश्लेषण:- तालिका

तालिका 1.1: कमार परिवारों की लिंग संरचना

क्र.	लिंग संरचना	संख्या	प्रतिशत
1	पुरूष	470	47.57
2	महिला	518	52.43
	कुल	**988**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

सारणी क्रमांक 1.1 में कमार परिवारों की लिंग संरचना के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों की कुल सदस्य संख्या 988 है जिनमें पुरूषों की संख्या 470 (47.57 प्रतिशत) एवं महिला की संख्या 548 (52.53 प्रतिशत) है।

तालिका क्रमांक 1.2: कमार परिवारों की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शैक्षणिक स्तर	पु.	प्रति.	म.	प्रति.	कु.	प्रति.
1	अशिक्षित	159	39.53	243	60.45	402	100
2	साक्षर	21	38.89	33	61.11	54	100
3	प्राथमिक	168	53.67	145	46.33	313	100
4	माध्यमिक	80	51.61	175	48.38	155	100
5	हाईस्कूल	31	62	19	38	50	100
6	हायर सेकण्डरी	09	75	03	25	12	100
7	स्नातक	02	100	-	-	02	100
	कुल	**470**	**47.57**	**518**	**52.43**	**988**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.2 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों में कुल 402 व्यक्ति अशिक्षित है एवं कुल 586 व्यक्ति शिक्षित में से 39.55 प्रतिशत पुरूष अशिक्षित एवं 60.45 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित है। इसी प्रकार कुल साक्षर व्यक्ति 54 है । जिसमें से 38.89 प्रतिशत पुरूष साक्षर तथा 61.11 प्रतिशत महिलाएं साक्षर है। कमार परिवारों में प्राथमिक शिक्षा का स्तर वाले व्यक्ति की संख्या 313 है जिसमें से पुरूष 168 (53.67 प्रतिशत) एवं महिलाएं 145 (46.33 प्रतिशत) है। माध्यमिक शिक्षा का स्तर वाले व्यक्ति की जनसंख्या 155 है जिसमें पुरूष 80 (51.61 प्रतिशत) एवं महिलाएं 75 (48.38 प्रतिशत) है । हाई स्कूल शिक्षा का स्तर वाले व्यक्ति की कुल जनसंख्या 50 है जिनमें से पुरूष 31 (62 प्रतिशत) एवं महिला 19 (38 प्रतिशत) है। हायर सेकण्डरी का स्तर वाले व्यक्ति की जनसंख्या 12 है जिनमें से पुरूष 09 (75 प्रतिशत) है। स्नातक शिक्षा का स्तर वाले व्यक्ति की कुल संख्या 02 है जिसमें पुरूष 02 (100 प्रतिशत) है । इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि पुरूषों की तुलना में महिला कम शिक्षित है।

तालिका 1.3: कमार परिवारों में कार्यशील जनसंख्या का आकार

क्र.	निदर्श	कार्यशील जनसंख्या			अकार्यशील जनसंख्या		
		पु.	म.	कुल	पु.	म.	कुल
1	संख्या	292	301	593	178	217	395
2	प्रतिशत	49.24	50.76	100	45.06	54.94	100

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.3 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों में सदस्यों की कुल संख्या 988 है जिसके अंतर्गत निदर्श कमार परिवारों में कार्यशील व्यक्ति की कुल जनसंख्या 593 है जिसमें से पुरूष संख्या 292 (49.24 प्रतिशत), महिला की संख्या 301 (50.76प्रतिशत) है। इसी प्रकार कमार परिवारों में अकार्यशील व्यक्ति की कुल संख्या 178 (45.06 प्रतिशत), महिला की संख्या 217 (59.54प्रतिशत) है।

तालिका 1.4: कमार परिवार के मकान की संरचना

क्र.	मकान के प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	पक्का	79	30.9
2	कच्चा	30	11.7
3	मिश्रित	140	54.7
4	झोपड़ी	7	2.7
	कुल	**256**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.4 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों की मकान स्थिति का अध्ययन किया गया है जिसमें कमार परिवारों में पक्का मकानों की संख्या 79 (30.9प्रतिशत) कच्चे मकानों की संख्या 30 (11.7 प्रतिशत) है। तथा मिश्रित मकानों की संख्या 140 (54.7 प्रतिशत) है, झोपड़ी मकानो की संख्या 7 (2.7 प्रतिशत) है। अत: यह स्पष्ट है कि कमार परिवारों में मिश्रित मकानों की संख्या सबसे अधिक है एवं सबसे कम झोपड़ी मकानों की संख्या है।

तालिका 1.5: कमार परिवारों के आवास में विद्युतीकरण

क्र.	विद्युतीकरण	संख्या	प्रतिशत
1	एकल बत्ती कनेक्शन	186	42.6
2	मीटर	50	19.6
3	विद्युतीकरण नहीं	20	7.8
	कुल	**256**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.5 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों की कुल संख्या 256 है जिनमें 72.6 प्रतिशत कमार परिवारों के आवास में एकलबत्ती कनेक्शन लगा है जो शासन द्वारा प्रदान की गई है। 19.6 प्रतिशत कमार परिवारों के आवास में विद्युत मीटर लगा हुआ है, जबकि 7.8 प्रतिशत कमार परिवारों के आवास में विद्युतहीन है इन परिवारों को शासन की सुविधा का लाभ नहीं मिल पाया है। एकलबत्ती कनेक्शन सभी कमार परिवार को शासन द्वारा 40 यूनिट के उपभोग में छूट एवं शेष राशि भुगतान करने इस योजना के तहत 3 बल्ब ही जलाने है।

तालिका 1.6: कमार परिवारों में भूमि वितरण की स्थिति

क्र.	भूमि की स्थिति	परिवार की संख्या	प्रतिशत
1	भूमि प्राप्तकर्ता	44	17.19
2	भूमिहीन	212	82.8
	कुल	**256**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.6 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों की कुल संख्या 256 है, जिसमें से शासन की योजनाओं द्वारा योजना के तहत प्रदान की गई भूमि का 17.19 प्रतिशत कमार परिवार भूमि प्राप्तकर्ता है बल्कि 82.81 प्रतिशत कमार परिवार भूमिहीन है। इससे यह स्पष्ट होता है कि बहुत से कमार परिवार शासकीय योजना से वंचित होने के कारण भूमिहीन है और आर्थिक स्थिति भी निम्न है।

तालिका 1.7: कमार परिवारों की व्यवसाय का मुख्य स्त्रोत

क्र.	मकान के प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	कृषि एवं वनोपज	42	16.41
2	मजदूरी एवं वनोपज	163	63.67
3	नौकरी	4	1.56
4	बांस सिल्फ एवं वनोपज	47	18.36
	कुल	**256**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.7 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कमार परिवारों में कृषि एवं वनोपज व्यवसाय 42 (16.41 प्रतिशत) परिवारों की आय का मुख्य स्त्रोत है। मजदूरी एवं वनोपज 163 (63.67 प्रतिशत), नौकरी 4 (1.56 प्रतिशत) एवं बांस सिल्फ 47 (18.36 प्रतिशत) कमार परिवारों की आय का स्त्रोत एवं व्यवसाय है। इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि मजदूरी एवं वनोपज व्यवसाय से सबसे अधिक कार्य करने वाले परिवार है। दूसरा मुख्य व्यवसाय परंपरागत व्यवसाय बांस सिल्फ एवं वनोपज कार्य है, क्योंकि धीरे-धीरे वनोपज संग्रहण मुख्य व्यवसाय से सहायक व्यवसाय के रूप में कार्य करते है, धीरे-धीरे कमार परिवारों की आवश्यकता की वस्तुओं में वृद्धि होने लगी है जो वनोपज संग्रहण के कार्य से पर्याप्त नहीं हो पाता है इस कारण उन्हें मजदूरी कार्य के प्रति रूचि बढ़ने लगी है।

तालिका 1.8: कमार परिवारों की व्यवसाय का मुख्य स्त्रोत

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	स्वयं के कृषि से प्राप्त आय	20666.67	7.30
2	मनरेगा से प्राप्त आय	124878.50	44.12
3	वनोपज संग्रहण से प्राप्त आय	59558.33	21.04
4	अन्य व्यवसाय से प्राप्त कुल आय	36450	12.88
5	शासकीय/अर्द्धशासकीय व्यवसाय से प्राप्त आय	41500	14.66
6	**कुल आय**	**283048.50**	**100**
7	प्रति परिवार आय	1105.66	-
8	प्रति व्यक्ति आय	286.49	-

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.8 में कमार परिवारों में विभिन्न स्त्रोतों से प्रात कुल मासिक आय (रू. में) के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सारणी में कमार परिवारों के स्वयं के कृषि से प्राप्त आय, मनरेगा (मजदूरी) करने प्राप्त आय, वनोपज संग्रहण, अन्य व्यवसाय, शासकीय व्यवसाय से प्राप्त आय का विवरण प्रस्तुत किय गया है। कुल निदर्श कमार 256 परिवारों को विभिन्न स्त्रोतों से कुल आय 283048.50 रूपये मासिक आय प्राप्त होती है। जिसमें से स्वयं की कृषि से प्राप्त आय 20666.67 रूपये (7.30 प्रतिशत), मनरेगा (मजदूरी) से प्राप्त आय 124878.50 रूपये (44.12 प्रतिशत) मासिक आय प्राप्त होती है। वनोपज संग्रहण से प्राप्त आय 59558.33 रूपये (21.04 प्रतिशत), अन्य व्यवसाय से प्राप्त आय 36450 रूपये (12.88 प्रतिशत) तथा शासकीय/अर्द्धशासकीय व्यवसाय से प्राप्त आय 41500 रूपये मासिक आय है। इस प्रकार स्पष्ट है कि कमार परिवारों में प्रति परिवार आय 1105.66 रूपये मासिक है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

तालिका 1.9 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 1.9 में कमार परिवारों की औसत आकार एवं मासिक आय वर्ग के आधार पर परिवार की संख्या परिवार की कुल सदस्य संख्या, परिवार का औसत आकार, परिवार की कुल आय, परिवार की औसत आय एवं औसत प्रति व्यक्ति आय के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित 256 कमार परिवारों की आय वर्ग को 6 भागों में बांटा गया है। परिवार की अधिकतम संख्या 0-1000 आय वर्ग में सर्वाधिक परिवार की संख्या 185 (72.26 प्रतिशत) एवं सदस्यों की संख्या 65 (67.31 प्रतिशत) तथा परिवार का औसत आकार 3.5 है। 1000-2000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 56 (21.88प्रतिशत) एवं सदस्यों की संख्या 258 (26.61 प्रतिशत) तथा परिवार का औसत आकार 4.6 है। 2000-3000 आय वर्ग के कमार परिवार की संख्या 10 (3.91 प्रतिशत) है, सदस्यों की संख्या 47 (4.76 प्रतिशत) एवं परिवार का औसत आकार 4.7 है। इसी प्रकार 3000-5000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 01 (0.39 प्रतिशत) एवं सदस्यों की संख्या 4 (0.40 प्रतिशत) तथा परिवार का औसत आकार 4 है। इस प्रकार इन दोनों आय वर्ग में न्यूनतम परिवार की संख्या है। 10000 से अधिक आय वर्ग में परिवार की संख्या 03 (1.17 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 11 (1.17 प्रतिशत) एवं परिवार का औसत आकार 3.6 है।

तालिका 1.10: कमार परिवारों में विभिन्न स्त्रोतो से प्राप्त कुल रोजगार (दिनों में)

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	मनरेगा से प्राप्त कुल रोजगार (दिनों में)	9027	60.03
2	गैर कृषि श्रम से प्राप्त कुल रोजगार (वनोपज) (दिनों में)	4084	27.16
3	स्वयं की कृषि से प्राप्त कुल रोजगार (दिनों में)	1926	12.81
4	समस्त स्त्रोतो से प्राप्त कुल रोजगार	15037	100
5	प्रति कार्यशील व्यक्ति रोजगार	25.36	-
6	प्रति परिवार रोजगार	58.74	-
7	प्रति व्यक्ति आय	45935	-

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.10 में कमार परिवारों विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त कुल रोजगार (दिनों में) के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कमार परिवारों में मनरेगा से प्राप्त कुल रोजगार, कृषि श्रम से प्राप्त कुल रोजगार, स्वयं की कृषि से प्राप्त रोजगार का विवरण प्रस्तुत किया गया है। कुल कमार परिवारों को कुल 15037 दिन का रोजगार प्राप्त होता है जिनमें से मनरेगा से प्राप्त रोजगार 9027 (60.03 प्रतिशत) दिन है। गैर कृषि क्षेत्र से प्राप्त रोजगार 4084 (27.16 प्रतिशत) दिन स्वयं की कृषि से प्राप्त रोजगार 1926 (12.81 प्रतिशत) दिन कमार परिवारों में प्रति कार्यशील व्यक्ति रोजगार 25.36 दिन है। कुल निदर्श कमार परिवारों के प्रति परिवार रोजगार 58.74 दिन है एवं प्रति व्यक्ति रोजगार 5.10 दिन है।

तालिका 1.11 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 1.11 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कमार परिवारों की कुल संख्या 256 है जिनमे से कमार परिवारों में 1000 आय वर्ग वाले परिवार खाद्य पदार्थ 37702.52 रू. (26.25 प्रतिशत) व्यय करते है। गैर खाद्य पदार्थ पर 104044.66 रू. (72.44 प्रतिशत) व्यय करते है तथा बचत (1.31 प्रतिशत) करते है। 1000-2000 आय वर्ग वाले खाद्य पदार्थ पर 1495.00 रू. (21.35 प्रतिशत) मासिक व्यय गैर खाद्य पदार्थ पर 535.26.23 (76.42 प्रतिशत) व्यय 2.23 प्रतिशत बचत करते है। 2000-3000 आय वर्ग वाले परिवार का खाद्य पदार्थ पर 4093.63 रू. (17.10 प्रतिशत) व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 19199.34 रू. (80.20 प्रतिशत) व्यय एवं (2.70 प्रतिशत) बचत करते है। 3000-5000 आय वर्ग के परिवार खाद्य पदार्थ पर 429.94 रू. (8.52 प्रतिशत) व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 2500.16 रू. (82.84 प्रतिशत) मासिक एवं (3.43 प्रतिशत) बचत करते है। 5000-10000 आय वर्ग समूह के परिवार खाद्य पदार्थ पर 672.01 रू. (8.52 प्रतिशत) मासिक व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 6549.78 रू (83.04 प्रतिशत) एवं 8.44 प्रतिशत बचत करते है। 10000 रू. से अधिक आय वर्ग के परिवार का खाद्य पदार्थ पर 1787.96 रू (5.18 प्रतिशत) मासिक व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 2949.78 रू (85.25 प्रतिशत) एवं 9.57 प्रतिशत बचत करते है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जैसे-जैसे आय वर्ग में वृद्धि होती है। कमार परिवारों की खाद्य पदार्थो पर मासिक व्यय उपभोग व्यय की तुलना में गैर खाद्य पदार्थो पर मासिक व्यय अधिक है।

तालिका 1.12: कमार परिवारों की आवागमन के साधन

क्र.	आवागमन के साधन	संख्या	प्रतिशत
1	सायकल	35	14.45
2	मोटर सायकल	2	0.78
3	सायकल, मोटर सायकल	13	5.08
4	कुछ नहीं	204	79.69
	कुल	**256**	**100**

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.12 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कमार परिवारों में 35 (14.45 प्रतिशत) परिवारों में आवागमन के लिए सायकल का उपयोग करते है। 02 (0.78 प्रतिशत) कमार परिवारों में आवागमन के लिए मोटर सायकल का उपयोग करते है। सायकल एवं मोटर सायकल से आवागमन के लिए 13 (5.08) परिवारों में करते है। 204 (79.69) प्रतिशत कमार परिवार ऐसे होते है जिनके पास कुछ भी नहीं है। वह पैदल ही आवागमन करते है। क्योंकि निदर्श कमार परिवारों की आय इतनी अधिक नहीं होती वह इन सभी विलासित की वस्तु का उपयोग कर सके।

तालिका 1.13: कमार परिवारों में घरेलू उपभोग की सामग्री

क्र.	घरेलू उपभोग की सामग्री	संख्या	प्रतिशत
1	फर्नीचर/ टेबल	14	5.4
2	कुर्सी	10	3.9
3	आलमारी	9	3.5
4	पलंग	7	2.7
5	टी.वी.	45	17.5
6	मोबाईल	57	22.2
7	गैस चूल्हा	10	3.9

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका क्रमांक 1.13 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कमार परिवारों में फर्नीचर/टेबल का उपयोग 14 (5.4 प्रतिशत) तथा 10 (3.9 प्रतिशत) परिवारों में कुर्सी का उपयोग करते है। कमार परिवारों में 09 (3.5 प्रतिशत) आलमारी, 45 (17.5 प्रतिशत) परिवारों में टी.वी., 7 (2.7 प्रतिशत)

परिवारों में पलंग का उपयोग करते है । इस प्रकार कमार परिवारों में 57 (22.2 प्रतिशत) परिवारों में मोबाईल का उपयोग करते है जो शासन द्वारा वितरित की गई है । 10 (3.9 प्रतिशत) कमार परिवारों में गैस चूल्हा एवं इंडक्शन का उपयोग करते है ।

निष्कर्ष एवं सुझाव :- विश्लेषित उपरोक्त आंकड़ों के आधार मानते हुये यह निष्कर्ष निकाला गया कि अध्ययन क्षेत्र के कमार परिवारों की लिंग संरचना के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कमार परिवारों की कुल सदस्य संख्या 988 है जिसमें पुरूषों की संख्या 548 (52.53 प्रतिशत) है । इसी प्रकार कमार परिवारों में कुल 402 व्यक्ति अशिक्षित है तथा कुल 586 व्यक्ति शिक्षित है इनमे से 39.55 प्रतिशत पुरूष अशिक्षित एवं 60.45 प्रतिशत महिला अशिक्षित है। 38.89 प्रतिशत पुरूष साक्षर तथा 61.11 प्रतिशत महिला साक्षर है। इससे यह ज्ञात होता है कि पुरूषों की तुलना में महिलाएं कम शिक्षित है । कमार परिवारों में कार्यशील व्यक्ति की कुल जनसंख्या 593 है जिसमें से पुरूष की संख्या 292 (49.24 प्रतिशत), महिला की संख्या 301 (50.76 प्रतिशत) है । इसी प्रकार कमार परिवारों में अकार्यशील पुरूष की संख्या 178 (45.06 प्रतिशत) एवं महिला की संख्या 217(59.54 प्रतिशत) है तथा 79 (30.9 प्रतिशत) पक्का मकान, 30 (11.7 प्रतिशत) कच्चा मकान, 07 (2.7 प्रतिशत) झोपड़ी मकान, 140 (54.7 प्रतिशत) मिश्रित मकान है । 42.6 प्रतिशत कमार परिवारों के आवास में एकलबत्ती कनेक्शन लगा है जो शासन द्वारा प्रदान की गई है। 19.6 प्रतिशत कमार परिवारों के आवास में विद्युत मीटर लगा हुआ है तथा 7.8 प्रतिशत कमार परिवारों में विद्युतीकरण नही हुआ है । 17.19 प्रतिशत कमार परिवार भूमि प्राप्तकर्ता है जबकि 82.8 प्रतिशत कमार परिवार भूमिहीन है । कृषि एवं वनोपज व्यवसाय 42 (16.41 प्रतिशत), मजदूरी एवं वनोपज व्यवसाय 163 (63.67 प्रतिशत), नौकरी 04 (1.56 प्रतिशत) एवं बांस शिल्प 47 (18.36 प्रतिशत) के कार्यो में कमार परिवार सन्लग्न है एवं उनके रोजगार का साधन है । कमार परिवारों की विभिन्न स्त्रोतो से प्राप्त कुल आय 283048.50 रूपये मासिक आय प्राप्त होती है । स्वयं की कृषि से प्राप्त आय 20666.67 रू. (17.30 प्रतिशत), मनरेगा (मजदूरी से) प्राप्त आय 124878.50 रू. (44.12 प्रतिशत) मासिक आय प्राप्त होती है । वनोपज संग्रहण से प्राप्त आय 595558.33 (21.04 प्रतिशत), अन्य व्यवसाय से प्राप्त आय 36450 रू. (12.88 प्रतिशत) तथा शासकीयध्अर्द्धशासकीय व्यवसाय से प्राप्त आय 41500 रू. मासिक आय है । 0-1000 आय वर्ग में सर्वाधिक परिवार की संख्या 185 (72.26 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 65 (67.31 प्रतिशत), परिवार की औसत आकार 3.5 है । 1000-2000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 56 (21.88 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 258 (26.11 प्रतिशत) है तथा परिवार का औसत आकार 4.6 है । 2000-3000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 10 (3.91 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 47 (4.76 प्रतिशत) एवं परिवार का औसत आकार 4.7 है। 3000-5000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 01 (0.39 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 5 (0.51 प्रतिशत), परिवार का आकार 5 है । 5000-10000 आय वर्ग में परिवार की संख्या 01(0.39 प्रतिशत), सदस्यों की संख्या 4(0.40 प्रतिशत),परिवार का औसत आकार 04 है । 10000 से अधिक आय वर्ग में परिवार की संख्या 03(1.17 प्रतिशत) है, सदस्यों की संख्या 11(1.11 प्रतिशत), परिवार का औसत आकार 3.6 है । 0-1000 आय वर्ग वाले परिवार खाद्य पदार्थ पर 26.52 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 72.44 प्रतिशत व्यय तथा 1.31 प्रतिशत बचत करते है । 1000-2000 आय वाले खाद्य पदार्थ पर 21.35 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पर 76.42 प्रतिशत व्यय तथा 2.23 प्रतिशत बचत करते है । 2000-3000 आय वर्ग वाले खाद्य पदार्थो पर 17.10 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पदार्थो पर 80.20 प्रतिशत व्यय एवं 2.70 प्रतिशत बचत करते है। 3000-5000 आय वर्ग वाले खाद्य पदार्थ पर 8.52 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 82.84 प्रतिशत व्यय, एवं 3.43 प्रतिशत बचत करते है । 5000-10000 आय वर्ग वाले खाद्य पदार्थ पर 8.52 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 83.04 प्रतिशत व्यय तथा 8.44 प्रतिशत बचत करते है । 10000रू से अधिक आय वर्ग वाले खाद्य पदार्थ पर 5.18 प्रतिशत व्यय, गैर खाद्य पदार्थ पर 85.25 प्रतिशत व्यय तथा 9.57 प्रतिशत बचत करते है । 14.45 प्रतिशत कमार परिवारों में आवागमन के लिए सायकल का, 0.78 प्रतिशत मोटर सायकल, 5.08 प्रतिशत मोटर सायकल एवं सायकल उपयोग करते है तथा 79.69 प्रतिशत के पास आवागमन के साधन कुछ भी नहीं है । 5.4 प्रतिशत फर्नीचर टेबल, 3.8 प्रतिशत कुर्सी, 3.5 प्रतिशत आलमारी, 17.5 प्रतिशत टी.वी. 2.7 प्रतिशत पलंग, 22.2 प्रतिशत मोबाईल तथा 3.9 प्रतिशत कमार परिवारों में गैस चूल्हा एवं इंडक्शन का उपयोग करते है।

विश्लेषण के आधार पर यह सुझाव प्रस्तावित किया जा सकता है कि इस जनजाति के लिए ऐसी योजना का निर्माण करना चाहिए जिनसे उनको संपूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य दी जा सके। अपने व्यवसाय, उपभोग के स्तर, रहन-सह- एवं जीवन स्तर को सुधार सके। कमार जनजाति को समाज के मुख्यधारा से जोड़ने के लिए शिक्षित हो बहुत आवश्यक है ताकि रोजगार के विभिन्न साधनों में कृषि से सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास को बेहतर बनाया जा सके। स्वास्थ्य के लिए चिकित्सा सुविधा मुहैया कराय जाये क्योंकि जनजातियों में स्वास्थ्य संबंधी समस्या एवं स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता लाने की आवश्यकता है। आवागमन के साधन को और मजबूत किया जाये। शिक्षा के स्तर को बढ़ाने के लिए ज्यादा से ज्यादा प्रेरित किया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रसेल और हीरालाल (1916): 'द ट्राइब्ज एण्ड कास्टस् ऑफ सेंन्ट्रल प्राविन्सेज ऑफ इंडिया' R-Vol- 3 पे. 323-230
2. तिवारी, राकेश कुमार (1990): 'आदिवासी समाज में आर्थिक परिवर्तन' । नार्दन बुक सेंटर, नई दिल्ली
3. वर्मा, एल.एन. एवं ओमप्रकाश बोरीवाल (2002):'आदिवासी की आर्थिक विकास में ग्रामोलोग की भूमिका (झाबुआ जिला के विशेष संदर्भ में)' समाजाकि सहयोग, शोध प्रबंधन अभिषद श्री कृष्ण संस्थान उज्जैन, अंक - 213 पृ.क्र. 42-50
4. विद्यार्थी (1970): ने जनजातीय जीवन पर परिवर्तन "Vidyarthi, L.P', Cultral Configuration of Ranchi Culcutta, Book land, 1970,P- 67.
5. व्यास, विकास: 'भील आदिवासियों के सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन में विकास योजनाओं की भूमिका' शोध पत्र देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इंदौर, 1995.
6. शुक्ला, अर्चना (1999):' मध्यप्रदेश में आदिवासी समाज व विभिन्न

योजनाऐं, शोध प्रकल्प, अंक 07, पृ. क्र. 13-17
7. सिंह, अभय,'आदिवासियों के विकास का आधार' योजना 2009, पृ.57-58
8. सोलंकी, अर्जुन एवं ममता मंडाले, (2010): 'नरेगा का अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के आर्थिक जीवन पर प्रभाव' सामाजिक सहयोग, शोध प्रबंधन अभिषद श्री कृष्ण संस्थान उज्जैन, अंक 73, पृ.क्र. 75-81
9. सैनी, अभिलाषा एवं कश्यप मेजूलता (2007):'आदिवासी अर्थव्यवस्था - स्वरूप एवं प्रकार' रिसर्च डाइजेस्ट, अंक 2, पृ.क्र. 99-101
10. M.S,MEENA,K.M.SINGH ;2015I'झारखंड के आदिवासी प्रभुत्व वाले क्षेत्रों में ग्रामीण परिवारों के बीच आय की असमानता और निर्धारक' Indian Journal of Agricultural science, 87(1) PP: 92&96, January,2017.

तालिका 1.9: कमार परिवारों का औसत आकार एवं मासिक आय (रू. में)

आय वर्ग	परिवारों की संख्या	परिवार के कुल सदस्य	परिवार का औसत आकार	परिवार की कुल आय	परिवार का औसत आय	औसत प्रति व्यक्ति
0-1000	185 (72.26)	65 (67.31)	3.5	143628.67	776 .37	143628.67
1000-2000	56 (21.88)	258 (26.11)	4.6	70042.17	1250 .75	271 .48
2000-3000	10 (3.91)	47 (4.76)	4.7	23939 .33	2393 .93	509 .35
3000-5000	01 (0.39)	05 (0.51)	5	3034 .17	3034 .17	606 .83
5000-10000	01 (0.39)	04 (0.40)	4	7887 .50	7887 .50	1971 .88
10000 से अधिक	03 (1.17)	11 (1.11)	3.6	344516.-67	11505 .56	3437 .88
	256 (100)	988 (100)	4.2	283048.50	93396 .05	6714 .05

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

तालिका 1.11: कमार परिवारों का खाद्य पदार्थ एवं गैर खाद्य पदार्थो पर मासिक व्यय (प्रतिशत में)

क्र.	पारिवारिक आय वर्ग (रू. में)	खाद्य पदार्थ रू. (प्रतिशत में)	गैर खाद्य पदार्थ रू. (प्रतिशत में)	बचत	योग
1	0-1000	37702.52 (26.52)	104044.66 (72.44)	18981.54 (1.31)	100
2	1000-2000	14954.00 (21.35)	53526.23 (76.42)	1561.94 (2.23)	100
3	2000-3000	4093.63 (17.10)	19199.34 (80.20)	646.36 (2.70)	100
4	3000-5000	429.94 (8.52)	2500.16 (82.84)	104.07 (3.43)	100
5	5000-10000	672.01 (8.52)	6549.78 (83.04)	665.71 (8.44)	100
6	10000 से अधिक	1787.96 (5.18)	29425.46 (85.25)	3303.25 (9.57)	100

स्त्रोत:-व्यक्तिगत सर्वेक्षण

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

स्मार्टफोन उपयोग का बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की आदतों पर प्रभाव

महेन्द्र सिंह* डॉ. विष्णु भाई डी. चौधरी**

* शोधार्थी (शारीरिक शिक्षा) माधव विश्वविद्यालय, पिंडवाड़ा, सिरोही (राज.) भारत
** प्रोफेसर (शारीरिक शिक्षा) माधव विश्वविद्यालय, पिंडवाड़ा, सिरोही (राज.) भारत

शोध सारांश– आज के युग में स्मार्टफोन का व्यापक प्रभाव समाज के प्रत्येक आयु वर्ग में पढ़ रहा है। जिससे प्राथमिक स्तर के बच्चों की शारीरिक गतिविधि और खेलकूद की आदतें भी प्रभावित हो रही हैं। स्मार्टफोन का सीधा असर बच्चों की खेल गतिविधि और शारीरिक सक्रियता पर है। आज के डिजिटल युग में छोटे बच्चों में स्वास्थ्य और फिटनेस पर प्रभाव का प्रमुख कारण स्मार्टफोन का बढ़ता उपयोग है। इसलिए स्मार्टफोन का उपयोग बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की आदतों पर प्रभाव विषय पर अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है। शोध हेतु उदयपुर जिले के, विशेष कर 6 से 9 वर्ष आयु वर्ग के प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा 1 से पांचवी कक्षा में अध्यनरत 100 विद्यार्थियों का चयन किया गया है, जिसमें 10 प्राथमिक विद्यालयों में प्रत्येक में से 10-10 छात्रों का चयन किया गया है। शोध में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति अपनाई गई है। आंकड़ों का संग्रहण सर्वेक्षण प्रश्नावली अवलोकन तथा साक्षात्कार के माध्यम से याद्दश्चिक नमूना पद्धतिद्वारा किया गया है। प्रत्यक्ष परीक्षण हेतु खेल गतिविधियों में बच्चों की भागीदारी का पता लगाया गया है। शोध से पता चला है कि अधिकांश 35% बच्चे प्रतिदिन 3 घंटे से अधिक स्मार्टफोन का उपयोग करते हैं, जिससे बच्चों की खेलकूद गतिविधियों में भागीदारी कम हो रही है। अधिकांश 45% बच्चे खेलों व अन्य शारीरिक गतिविधियों में बिल्कुल भाग नहीं लेते जिसका प्रभाव बच्चों की शारीरिक सक्रियता पर पड़ता है जिससे 66% बच्चों का शारीरिक सक्रियता का स्तर बिल्कुल निम्न हो गया है।

इस प्रकार स्मार्टफोन उपयोग और शारीरिक सक्रियता गतिविधियों के बीच उल्टा संबंध पाया गया है। अधिक स्मार्टफोन उपयोग कम शारीरिक गतिविधि, कम स्मार्टफोन उपयोग अधिक शारीरिक गतिविधि।

सहसंबंध गुणांक (r) = 0.92 यह नकारात्मक उच्च सह संबंध है।

स्मार्टफोन विषय पर साहित्य समीक्षा से प्राप्त पूर्ववर्ती अध्ययनों ने भी स्मार्टफोन का बच्चों की शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य तथा शारीरिक गतिविधि पर प्रभावों को रेखांकित किया है। अधिकांश अध्ययनों में यह पाया गया है कि बच्चों में स्मार्टफोन का अत्यधिक उपयोग शारीरिक गतिविधि और शारीरिक सक्रियता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। जिससे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है और स्मार्टफोन का उपयोग बच्चों के जीवन को प्रभावित करता है। अत: बच्चों में बढ़ता स्क्रीन टाइम उनकी शारीरिक गतिविधियों में भागीदारी का घटना है जबकि 6 से 9 वर्ष शारीरिक विकास की अवस्था में खेलकूद व शारीरिक गतिविधि महत्वपूर्ण है। अधिक समय स्मार्टफोन उपयोग के कारण खेलने कूदने या शारीरिक गतिविधि के लिए समय और ऊर्जा कम बचती है जिससे दिनचर्या का अधिक स्थिर होना स्वाभाविक है। शारीरिक सक्रियता में कमी का प्रमुख कारण बच्चों की शारीरिक स्वास्थ्य का प्रभावित होना, फिटनेस, मोटापा, दृष्टि, व मानसिक स्वास्थ्य पड़ सकता है। लेकिन नियमित खेलकूद करने वाले बच्चों में संतुलन समन्वय सामाजिकता और स्वास्थ्य बेहतर पाया जाता है।

इस शोध में स्मार्टफोन उपयोग और शारीरिक सक्रियता के बीच नकारात्मक संबंध पाया गया है। जितना अधिक समय बच्चे स्मार्टफोन पर बिताते हैं, उतनी ही उनकी खेलकूद और शारीरिक गतिविधियों में भागीदारी कम हो जाती है। समाधान हेतु अभिभावकों को पारिवारिक स्तर पर स्मार्टफोन उपयोग पर समय सीमा तय हो, स्क्रीन टाइम नियंत्रण हेतु पारिवारिक नियमों का निर्धारण हो तथा बच्चों को दैनिक खेलकूद गतिविधियों के लिए आवश्यक रूप से प्रोत्साहित किया जाए। विद्यालय स्तर पर खेलकूद को अनिवार्य बनाकर खेलकूद के घंटे सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य हो। पारिवारिक, शैक्षिक तथा सामाजिक स्तर पर खेल नीति बने ताकि शारीरिक गतिविधियों में बढ़ोतरी हो। इस प्रकार यह शोध स्मार्टफोन के उपयोग, बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की आदतों पर स्मार्टफोन के प्रभाव को स्पष्ट करता है। और नई डिजिटल शिक्षा नीति के लिए भविष्य हेतु महत्वपूर्ण उपयोगी मार्गदर्शन प्रदान करता है।

शब्द कुंजी – स्मार्टफोन, सक्रियता, शारीरिक, बच्चों ,स्वास्थ्य, खेलकूद।

प्रस्तावना – आधुनिक युग में स्मार्टफोन बच्चों के जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। जो बच्चों के सामाजिक विकास को प्रभावित करता है। बच्चों का शारीरिक विकास उनके दैनिक क्रियाकलापों, आसपास के वातावरण, तथा सीखने की आदतों, व शारीरिक गतिविधियों के प्रभाव से बच्चों में शारीरिक सक्रियता का निर्माण होता है। स्मार्टफोन का अधिक प्रयोग मानव की शारीरिक क्रियो में कमी उत्पन्न कर रहा है जिससे शारीरिक शिथिलता वह अनेक शारीरिक विकार उत्पन्न हो रहे हैं (6 से 9 वर्ष) बच्चों में पड़ रहा है। बच्चों का शारीरिक विकास पर अध्ययन में स्मार्टफोन के

उपयोग से शारीरिक सक्रियता खेलकूद व्यायाम की गतिविधियों का बच्चों पर पढ़ने वाले प्रभाव का अध्ययन आज के युग की चर्चा का महत्वपूर्ण विषय है। बच्चे तेजी से स्मार्टफोन की ओर आकर्षित हो रहे हैं। स्मार्टफोन का अत्यधिक उपयोग शारीरिक सक्रियता खेलकूद गतिविधि वह स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

शोध समस्या– आजकल छोटे बच्चों में जिनकी उम्र 6 से 9 वर्ष है जो प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा 1 से कक्षा 5 तक अध्ययन कर रहे हैं ऐसे बच्चों में स्मार्टफोन का बढ़ता उपयोग उनकी शारीरिक सक्रियता को कम कर रहा है। शारीरिक सक्रियता में कमी के चलते बच्चों में दौड़ना, कूदना, खेलना, व्यायाम करना आदि परंपरागत खेलकूद की आदतों में कमी आ रही है। जिसका प्रभाव बच्चों के शारीरिक स्वास्थ्य पर पढ़ रहा है। इस विषय पर भारत के राजस्थान राज्य के उदयपुर जिले का अध्ययन महत्वपूर्ण है जो बच्चों के द्वारा स्मार्टफोन के अत्यधिक उपयोग के कारण शारीरिक सक्रियता खेलकूद वह स्वास्थ्य पर प्रभाव की जानकारी प्रदान करेगा।

शोध का उद्देश्य :

1. पता लगाना है की बच्चों द्वारा स्मार्टफोन का उपयोग किस उद्देश्य से किया जाता है और बच्चे कितने समय तक प्रतिदिन स्मार्टफोन उपयोग कर रहे हैं।
2. स्मार्टफोन उपयोग से बच्चों की शारीरिक सक्रियता किस स्तर पर प्रभावित हो रही है यह जानकारी प्राप्त करना।
3. बच्चों की शारीरिक गतिविधियों का पता लगाना और खेलकूद क्रियो में बच्चों की प्रतिभागिता, परंपरागत मैदानी खेलों पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करना।
4. स्मार्टफोन उपयोग का बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की आदतों पर प्रभाव विषय पर अभिभावकों और शिक्षकों की भूमिका पहचाना।

शोध की सीमाएं– यह अध्ययन उदयपुर जिले के प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा 1 से पांचवी कक्षा तक अध्यनरत नियमित विद्यार्थियों तक सीमित है जिन बच्चों की उम्र 6 से 9 वर्ष है यह शोध कार्य वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति के अनुसार प्रश्नावली, साक्षात्कार और अवलोकन पर आधारित है। शोध में अन्य डिजिटल उपकरणों की बजाय केवल स्मार्टफोन के बच्चों की शारीरिक गतिविधि वह सक्रियता पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

परिकल्पना:

H0: स्मार्टफोन के उपयोग से बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

H: स्मार्टफोन के उपयोग से बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

साहित्य की समीक्षा–

WHO (2021) के अनुसार 5 से 10 वर्ष के बच्चों का प्रतिदिन अधिकतम स्क्रीन टाइम 1 घंटे होना चाहिए। 1 घंटे से अधिक का स्क्रीन टाइम बच्चों की शारीरिक कमियों का कारण बन सकता है। साथ ही WHO की (2019) की रिपोर्ट में बच्चों की दैनिक शारीरिक गतिविधियां न्यूनतम 2 घंटे प्रतिदिन होना उनकी शारीरिक सक्रियता के लिए आवश्यक है।

जनेया (2015) ने प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों की स्मार्टफोन के अति उपयोग की आदतों पर नियंत्रण और समायोजन के प्रभाव विषय पर अध्ययन किया जिसमें उपरोक्त दोनों कारकों के प्रभाव की जांच की गई इस अध्ययन में सियोल कोरिया के प्राथमिक विद्यालय के पांचवी कक्षा के छात्र शामिल थे। प्राप्त आंकड़ों की विश्लेषण के बाद निष्कर्ष रूप में कहा गया स्मार्टफोन के अति उपयोग पर नियंत्रण हेतु अभिभावकों का पारिवारिक नियंत्रण व विद्यालय स्तर पर कठोर नियंत्रण नीति से स्मार्टफोन के अति उपयोग को रोकने का सुझाव दिया गया।

इंडियन रिपोर्ट कार्ड ऑन फिजिकल एक्टिविटी (2022) विद्यार्थियों में स्क्रीन टाइम: 85% किशोर प्रतिदिन 120 मिनट स्क्रीन टाइम रिपोर्ट करते हैं। जिससे शारीरिक सक्रियता कम होती है और शारीरिक गतिविधि, खेल व्यायाम आदि में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खेलकूद, योग, व्यायाम आदि शारीरिक गतिविधियों को बढ़ाने के लिए नई स्क्रीन टाइम नियंत्रण नीति का निर्माण करना डिजिटल युग की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

अंतर्राष्ट्रीय जर्नल (2024) International Journal of Contemporary Pediatrics (RNT मेडिकल कॉलेज उदयपुर) द्वारा निम्न शोध विषय 'दक्षिणी राजस्थान में स्कूल के नियमित बच्चों में स्क्रीन आधारित मीडिया प्रयोग का स्वरूप एवं उसका प्रभाव' क्रॉस सेक्शनल अध्ययन में स्क्रीन आधारित मीडिया के उपयोग का शारीरिक मानसिक और शैक्षिक प्रभावों के विश्लेषण से पता चला कि अधिक स्क्रीन टाइम के कारण मानवीय व्यवहार में कई समस्याएं देखने को मिल रही हैं जिसमें जिज्ञासा व नींद की कमी, अवसाद एकाकीपन, तथा सामाजिक अलगाव की स्थिति देखी गई है।

शोध विधि– प्रस्तुत शोध समस्या का उद्देश्य स्मार्टफोन के उपयोग का बच्चों की शारीरिक गतिविधि और शारीरिक सक्रियता पर प्रभाव का अध्ययन करना है। अत: आंकड़े एकत्रित करने हेतु सर्वेक्षण विधि का चयन किया जाता है।

न्यादर्श : उदयपुर जिले के 10 विद्यालयों में अध्यनरत कक्षा 1 से कक्षा 5 तक नियमित विद्यार्थी जिनकी संख्या 100 है का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया है। प्रत्येक विद्यालय से 10 छात्रों का चयन किया गया है।

आश्रित चर : आयुवर्ग (6 से 9 वर्ष) कक्षा 1 से 5 वी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी।

स्वतंत्र चर : स्मार्टफोन का बढ़ता उपयोग।

उपकरण: प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता द्वारा जिस समस्या का चयन किया गया उसके लिए उपकरण के रूप में प्रश्नावली का निर्माण किया गया। जिसमें 22 प्रश्न स्मार्टफोन के उपयोग से संबंधित लिए गए।

डेटा विश्लेषण: बच्चों की कुल संख्या 100 है जिनका चयन यादृश्चिक नमूना पद्धति से किया गया है। तालिका एक में बच्चों का स्मार्टफोन दैनिक उपयोग प्रतिशत में तथा तालिका दो में बच्चों की खेलकूद गतिविधियों में भागीदारी तालिका तीन में (शारीरिक सक्रियता)और तालिका कर में (अभिभावकों द्वारा स्मार्टफोन पर नियंत्रण) का विवरण दिया गया है।

क्र.	समय (घंटे)	संख्या N=100	प्रतिशत (%)
1	0 – 1	15	15 %
2	1 – 2	19	19 %
3	2 – 3	31	31 %
4	3 घंटे से अधिक	35	35 %
		कुल: 100	कुल: 100 %

तालिका: 1 बच्चों का स्मार्टफोन उपयोग (प्रतिदिन)(X=घंटे)

क्र.	खेलकूद गतिविधि	संख्या N=100	प्रतिशत (%)
1	नियमित खेलकूद में भागीदारी	31	31 %
2	कभी कभी भागीदारी	24	24 %
3	खेलों में नहीं भाग लेने वालें बच्चें	45	45 %
		कुल: 100	कुल: 100 %

तालिका: 2 बच्चों की खेलकूद गतिविधियों में भागीदारी

तालिका 2 में खेलकूद में नियमित भागीदारी बराबर 31% है। तथा कभी-कभी खेलकूद में भाग लेने वाले छात्र 24% हैं। खेलकूद क्रियो में भाग नहीं लेने वाले छात्रों का प्रतिशत 45 है इन्हीं को उच्च/मध्यम/निम्न के रूप में मानकर शारीरिक सक्रियता का स्तर निकल गया है।

तालिका: 3 शारीरिक सक्रियता का स्तर (y)

क्र.	शारीरिक सक्रियता का स्तर (y)	संख्या N=100	प्रतिशत (%)
1	उच्च	15	15 %
2	मध्यम	19	19 %
3	निम्न	66	66 %
		कुल:100	कुल:100 %

तालिका: 4 अभिभावकों द्वारा स्मार्टफोन पर नियंत्रण

क्र.	नियंत्रण का स्तर	संख्या N=100	प्रतिशत (%)
1	नियंत्रित	34	34 %
2	असीमित	66	66 %
	योग	100	100 %

तालिका: 4 से (स्मार्टफोन उपयोग) समय के आधार पर अनुमान लगाया गया है, अनुमान (उपयोग का समय पर आधारित) है।

बहुत कड़ा नियंत्रण: दैनिक उपयोग 0 से 1 घंटा (अधिक नियंत्रित)।

मध्य नियंत्रण: 1 से 2 घंटे।

कमजोर नियंत्रण/कोई नियंत्रण नहीं : 2 या 3 घंटे से अधिक।

अभिभावकों के वास्तविक नियंत्रण डेटा चित्र में नहीं दिए गए इसलिए शोधकर्ता ने स्मार्टफोन के दैनिक उपयोग समय तालिका एक से नियति अनुमान किया। कम उपयोग जीरो से एक घंटा को कड़ा नियंत्रण, मध्य उपयोग एक से दो घंटा को मध्य नियंत्रण तथा दो या उससे अधिक घंटा उपयोग को कमजोर नियंत्रण या कोई नियंत्रण नहीं माना है।

तालिका 2 की व्याख्या: तालिका 2 से स्पष्ट होता है की अध्ययन में सम्मिलित बच्चों में 31% बच्चे नियमित रूप से खेलकूद गतिविधियों में भाग लेते हैं।जिन्हें उच्च शारीरिक सक्रियता स्तर का माना गया है। वहीं 24% बच्चे कभी-कभी खेलकूद में भाग लेते हैं जिन्हें मध्यम सक्रियता स्तर में रखा गया है। जबकि 45% बच्चे खेलकूद गतिविधियों में बिल्कुल भाग नहीं लेते अत: उनका शारीरिक सक्रियता स्तर निम्न पाया गया है। इसका मतलब यह हुआ कि बच्चों की बड़ी संख्या (लगभग आधे बच्चे) शारीरिक गतिविधियों से वंचित हैं, जो उनके स्वास्थ्य और सर्वांगीण विकास के लिए चिंताजनक स्थिति है।

तालिका 4 की व्याख्या: तालिका 4 के अनुसार अभिभावकों द्वारा बच्चों के स्मार्टफोन उपयोग पर नियंत्रण की स्थिति मिश्रित पाई गई है। केवल 34% बच्चों का स्मार्टफोन नियंत्रित है अर्थात हुए प्रतिदिन 2 घंटे से कम समय तक ही स्मार्टफोन का उपयोग करते हैं जबकि 66% बच्चों का उपयोग असीमित है अर्थात हुए प्रतिदिन 2 घंटे से अधिक समय तक स्मार्टफोन का उपयोग करते हैं। इस प्रकार अधिकांश अभिभावक बच्चों के स्मार्टफोन उपयोग पर पर्याप्त नियंत्रण नहीं रख पा रहे हैं। जिसकी परिणाम स्वरुप बच्चों में अत्यधिक उपयोग की प्रवृत्ति विकसित हो रही है।

दिए गए आंकड़ों के अनुसार (तालिका एक तालिका दो और तालिका तीन) से हम स्मार्टफोन उपयोग (घंटे के आधार पर) और शारीरिक सक्रियता के स्तर के बीच सह संबंध गुणांक (Correlation Coefficient) ज्ञात करने से पूर्व इसे निम्न प्रकार से चरणबद्ध किया गया हैं :

चरण: 1

सह संबंध गुणांक ज्ञात करना आंकड़े व्यवस्थित करना स्मार्टफोन का उपयोग (x= घंटे)

0-1 = 15

1-2 = 19

2-3 = 31

3 घंटे से अधिक=35

शारीरिक सक्रियता स्तर (y)

उच्च = 15

मध्यम = 19

निम्न = 66

अब दोनों को तुलनीय पैमाने पर लाने पर

0-1 घंटे = उच्च सक्रियता

1-2 घंटे = मध्यम सक्रियता

2-3 और 3घंटे = निम्न सक्रियता

चरण: 2 समांतर सारणी बनाना

स्मार्टफोन का उपयोग (y)	विद्यार्थी (%)	शारीरिक सक्रियता (y)	विद्यार्थी (%)
कम (0-1)	15	उच्च	15
मध्यम (1-2)	19	मध्यम	19
अधिक (2-3)	31	निम्न	66 (वितरीत)
अत्यधिक (3)	35		

यहां से साफ दिखता है कि जैसे-जैसे स्मार्टफोन का उपयोग बढ़ता है वैसे-वैसे शारीरिक सक्रियता घटती है।

चरण:3 सहसंबंध निकालना:

सहसंबंध निकालने हेतु पियर्सन सहसंबंध सूत्र का प्रयोग किया गया हैं।

$$r = \frac{n(\Sigma xy)-(\Sigma x)(\Sigma y)}{\sqrt{[n\Sigma x2-(\Sigma x)2]\,[n\Sigma y2-(\Sigma y)2]}}$$

चरण:4 अनुमानित कोडिंग:

- स्मार्टफोन उपयोग स्तर (x): 1=कम, 2 मध्यम, 3=अधिकतम , 4 अत्यधिक
- शारीरिक सक्रियता का स्तर (y): 3 उच्च, 2= मध्यम, 1=निम्न,

अब प्रतिशत को अनुपात मानकर:

x (स्मार्टफोन)	y (सक्रियता)	विद्यार्थी प्रतिशत
1	3	15 %
2	2	19 %
3	1	31 %
4	1	35 %

चरण: 5 गणना-

अब **Weighted correlation**निकालने पर:

- ΣX = (115 + 219+ 331 + 435) = 15+38+93+140 = 286
- ΣY = (315 + 219 + 131 + 135) = 45+38+31+35 = 149
- ΣXY=(1315+2219+3131+4135)= 45+76+93+140 = 354
- ΣX^2=($1^2$15 +$2^2$19 +$3^2$31 +$4^2$35)=15+76+279+560= 930
- ΣY^2=($3^2$15 + $2^2$19 +$1^2$31 +$1^2$35)=135+76+31+35= 277
- N = 100

अत: सूत्र

$$r = \frac{n(\Sigma xy)-(\Sigma x)(\Sigma y)}{\sqrt{[n\Sigma x2-(\Sigma x)2][n\Sigma y2-(\Sigma y)2}}$$

$$r = \frac{100\ (354) - (286)\ (149)}{\sqrt{[100(930)-(286)^2]\ [100(277)-(149)^2]}}$$

$$r = \frac{35400-42614}{\sqrt{[93000-81796]\ [27700-22201]}}$$

$$r = \frac{-7214}{\sqrt{(11204)\ (5499)}}$$

$$r = \frac{-7214}{\sqrt{61505896}}$$

$$r = \frac{-7214}{7842}$$

$$r = -0.92$$

अंतिम परिणाम सहसंबंध गुणांक (r) = 0.92

यह (नकारात्मक उच्च सह संबंध) (Negative High Correlation) हैं। मतलब जितना अधिक स्मार्टफोन का उपयोग होगा उतनी ही कम बच्चों की शारीरिक सक्रियता और खेलकूद की भागीदारी होगी।

परिणाम एवं निष्कर्ष:

परिणाम- संग्रहित आंकड़ों का सांख्यिकी विश्लेषण करने के उपरांत स्मार्टफोन के उपयोग और बच्चों की शारीरिक सक्रियता के मध्य अत्यधिक नकारात्मक सहसंबंध पाया गया है। सहसंबंध गुणांक r=0.92 प्राप्त हुआ, जो यह संकेत करता है कि जैसे-जैसे बच्चों का स्मार्टफोन उपयोग बढ़ता है, वैसे वैसे उनकी शारीरिक सक्रियता एवं खेलकूद की गतिविधियों में सहभागिता में उल्लेखनीय कमी आती है।

चर्चा- प्राप्त परिणाम यह दर्शाते हैं कि स्मार्टफोन बच्चों के जीवन में जितनी गहराई से समाहित होता जा रहा है, उतना ही उनके सक्रिय जीवन शैली पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है । जिन बच्चों का स्मार्टफोन उपयोग अधिक है वह नियमित खेलकूद से दूर रहकर निष्क्रिय जीवन शैली अपनाते पाए गए। इसके विपरीत जिन बच्चों का स्मार्टफोन उपयोग सीमित रहा उनमें शारीरिक सक्रियता का स्तर अधिक एवं संतुलित देखा गया। यह प्रवृत्ति आधुनिक जीवन शैली की गंभीर चुनौती को सामने लाती है । बच्चों की दिनचर्या में तकनीकी साधनों का बढ़ता उपयोग उनके शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्थिरता और सामाजिक व्यवहार पर प्रतिकूल असर डाल रहा है। यदि यह प्रवृत्ति नियंत्रित न की गई तो भविष्य में बच्चों के शारीरिक विकास, स्वास्थ्य और सामूहिक जीवन में सहभागिता पर नकारात्मक प्रभाव गहरा हो सकता है।

निष्कर्ष- इस शोध से स्पष्ट रूप से सिद्ध हुआ कि बच्चों के स्मार्टफोन का उपयोग और उनकी शारीरिक सक्रियता के मध्य नकारात्मक एवं उच्च सह संबंध है। सहसंबंध गुणांक r= -0.92 यह दर्शाता है कि स्मार्टफोन का अत्यधिक उपयोग बच्चों को खेलकूद और अन्य शारीरिक गतिविधियों से दूर ले जा रहा है। अध्ययन में यह भी उजागर हुआ है कि अधिकांश बच्चे स्मार्टफोन के आकर्षण के कारण खेलकूद जैसी सक्रीय गतिविधियों में रुचि नहीं ले रहे हैं। यह प्रवृत्ति बच्चों के सर्वांगीण विकास, स्वास्थ्य एवं सामाजिक व्यवहार के लिए चिंता का विषय है।

सुझाव/सिफारिश- अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर निम्नलिखित सुझाव अथवा शिफारिशें प्रस्तुत की जा सकती हैं:

1. **स्मार्टफोन उपयोग की समय सीमा:** अभिभावकों एवं शिक्षकों को बच्चों के स्मार्टफोन उपयोग की अवधि को नियंत्रित एवं अनुशासित करना चाहिए।
2. **खेलकूद का संवर्धन:** विद्यालयों और परिवारों को खेलकूद एवं शारीरिक गतिविधियों को बच्चों के जीवन का अनिवार्य अंग बनाने पर बोल देना चाहिए।
3. **समय प्रबंधन कौशल:** बच्चों को पढ़ाई, खेल और मनोरंजन में संतुलन स्थापित करने हेतु समय प्रबंधन का अभ्यास कराना आवश्यक है।
4. **विकल्पीय अवसर:** बच्चों को योग, व्यायाम, सांस्कृतिक एवं रचनात्मक गतिविधियों में शामिल होने के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराए जाएं।
5. **जागरूकता अभियान:** समाज में यह जागरूकता फैलाना आवश्यक है कि अत्यधिक स्मार्टफोन उपयोग बच्चों के स्वास्थ्य और भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. WHO (2021) - शारीरिक गतिविधि दिशानिर्देश।
2. जनेया (2015) - स्मार्टफोन उपयोग और बच्चों पर प्रभाव।
3. इंडियन रिपोर्ट कार्ड (2022) - शारीरिक गतिविधि आधारित सर्वे रिपोर्ट।
4. RNT मेडिकल कॉलेज (2024) - स्क्रीन मीडिया और बच्चों पर प्रभाव।
5. कॉमन सेंस मीडिया (2020). किशोर और स्मार्टफोन: माता-पिता के लिए एक गाइड।
6. प्यू रिसर्च सेंटर (2019). मोबाइल प्रौद्योगिकी और घरेलू ब्रॉडबैंड 2019।
7. अमेरिकन अकादमी ऑफ पीडियाट्रिक्स (2018). स्कूल-आयु वर्ग के बच्चों और किशोरों में मीडिया उपयोग।
8. रॉयल सोसाइटी फॉर पब्लिक हेल्थ (2017). स्टेटसऑफमाइंड: सोशल मीडिया और युवाओं का मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आदिवासी क्षेत्रों में आर्थिक योजनाओं का प्रभाव – विशेष संदर्भ चंद्रपुर जिला

डॉ. राजेश्वर डी. रहांगडाले*

* सह-प्राध्यापक एवं प्रमुख (अर्थशास्त्र) राष्ट्रसंत तुकडोजी महाविद्यालय, चिमूर, जिला-चंद्रपुर (महाराष्ट्र) भारत

शोध सारांश – चंद्रपुर जिला महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र का एक प्रमुख आदिवासी बहुल जिला है, जहाँ 34 विभिन्न आदिवासी जातियाँ (मुख्यत: गोंड – 80%) निवास करती हैं। जिले में आदिवासी जनसंख्या का अनुपात 17.07% है, जो राज्य की औसत से अधिक है। सरकार की विभिन्न आर्थिक योजनाओं (जैसे PM-JANMAN, एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना, एकाधिकार खरीदी योजना, शबरी आदिवासी वित्ता महामंडल ऋण) के माध्यम से आदिवासियों की आर्थिक उन्नति के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। यह शोध पत्र माध्यमिक आँकड़ों (सरकारी रिपोर्ट, अध्ययन रिपोर्ट) पर आधारित है तथा इन योजनाओं के सकारात्मक प्रभाव (आय वृद्धि, रोजगार अवसर) और चुनौतियों (जागरूकता की कमी, कार्यान्वयन में बाधाएँ) का विश्लेषण करता है। निष्कर्ष में योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन और स्थानीय भागीदारी बढ़ाने की सिफारिशें की गई हैं।

प्रस्तावना – चंद्रपुर जिला महाराष्ट्र का सबसे बड़ा आदिवासी बहुल जिला है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ 3,89,267 आदिवासी थे (कुल जनसंख्या का 17.07%)। 2025 के अनुमान से यह संख्या 4.5 लाख से अधिक हो चुकी है। इसमें मुख्य रूप से गोंड, माडिया गोंड, कोलाम, परधान, हलबी, अंध आदि जातियाँ शामिल हैं। जिले के 1,673 गाँवों में से 850 से अधिक आदिवासी बहुल एवं दुर्गम हैं। ताडोबा-अंधारी टाइगर प्रोजेक्ट, कोयला खदानें और सीमेंट उद्योगों के कारण बड़ी मात्रा में जंगल और जमीन नष्ट हुई है, जिससे पारंपरिक आजीविका (वन उत्पाद संग्रहण, कृषि, पशुपालन) संकट में है।

राष्ट्रीय स्तर पर आदिवासियों की प्रति व्यक्ति आय औसत से 65: से भी कम है और चंद्रपुर में यह और भी कम (लगभग रू 55,000-65,000 वार्षिक) है। 90% से अधिक आदिवासी परिवार गरीबी रेखा से नीचे हैं। बड़े पैमाने पर पलायन (चीनी मिलों, ईंट भट्टों, निर्माण कार्य), कर्जदारी, कुपोषण (45% बच्चे कुपोषित), माध्यमिक स्तर पर 15-20% स्कूल ड्रॉपआउट जैसी समस्याएँ गंभीर हैं।

इस पृष्ठभूमि में केंद्र और राज्य सरकार की आर्थिक योजनाओं का उद्देश्य आदिवासियों को मुख्यधारा में लाना, स्वरोजगार सृजन करना और स्थायी आय स्रोत उपलब्ध कराना है। 2023 से PM-JANMAN और 2024 से धरती आबा जनजातीय ग्राम उत्कर्ष अभियान (DA-JGUA) शुरू हुआ है, जिसका सीधा प्रभाव चंद्रपुर के 167+PVTG एवं आदिवासी गाँवों पर पड़ रहा है। 2025-26 के केंद्रीय बजट में आदिवासी कल्याण के लिए 46% वृद्धि (रू14,925 करोड़) इस क्षेत्र की ओर बढ़ते ध्यान को दर्शाती है।

शोध पद्धति– यह शोध पूर्णत: माध्यमिक आँकड़ों पर आधारित है। निम्नलिखित विश्वसनीय स्रोतों का उपयोग किया गया है:

- केंद्रीय आदिवासी मंत्रालय वेबसाइट (http://tribal.nic.in/) एवं PIB रिलीज (जुलाई-अगस्त 2025)
- महाराष्ट्र आदिवासी विकास विभाग (http://tribal.maharashtra.gov.in/) एवं महाशबरी महामंडल वेबसाइट (http://mahashabari.in)
- महाराष्ट्र बजट 2024-25 एवं 2025-26 विश्लेषण (PRS India, Economic Survey of Maharashtra 2024-25)
- चंद्रपुर जिला वेबसाइट (http://chandrapur.gov.in/) एवं ITDP चंद्रपुर के टेंडर/रिपोर्ट
- PIB, DD News, UNDP रिपोर्ट (2024-2025)
- शबरी महामंडल डैशबोर्ड (नवंबर 2025 तक)
- PM-JANMAN/DA-JGUA पोर्टल प्रगति डेटा (जून-अक्टूबर 2025)

विश्लेषण पद्धति– गुणात्मक परिमाणात्मक। 2018-19 से 2025-26 तक लाभार्थी संख्या, व्यय, प्रतिशत की तुलनात्मक जांच।

सीमा: प्राथमिक सर्वे नहीं होने से लाभार्थियों के प्रत्यक्ष अनुभव नहीं मिल सकेय केवल सरकारी आँकड़ों पर निर्भरता।

प्रमुख आर्थिक योजनाएँ

अ. प्रधानमंत्री जनजाति आदिवासी न्याय महा अभियान (PM-JANMAN) / धरती आबा जनजातीय ग्राम उत्कर्ष अभियान (DA-JGUAI) (2023-26)

कुल बजट: रू 24,104 करोड़ (केंद्र हिस्सा रू15,336 करोड़)

चंद्रपुर में 167 गाँव चयनित (माडिया गोंड बहुल)

प्रमुख घटक:PMAY-G घर, सड़कें, पेयजल, बिजली, सोलर, मार्केटिंग सेंटर, वन धन विकास केंद्र, होमस्टे, व्यवसाय प्रशिक्षण

नवंबर 2025 तक प्रगति: महाराष्ट्र में 70% से अधिक घर स्वीकृत, चंद्रपुर में 4,500 घर वितरण शुरू, 100 किमी सड़कें पूरी, 120 गाँवों में सोलर लाइटिंग।

ब. शबरी आदिवासी वित्ता एवं विकास महामंडल ऋण योजना (2024-

25 एवं 2025-26)
ब्याज दर: 4-6%
अधिकतम ऋण: व्यक्तिगत रू5 लाख, स्वयं सहायता समूह रू15 लाख
2024-25 चंद्रपुर लक्ष्य: 2200+लाभार्थी
वास्तविक लाभ (नवंबर 2025 तक): 1,989 नए लाभार्थी, रू60.56 करोड़ वितरित (राज्य स्तर); चंद्रपुर में 350+ लाभार्थी
मुख्य उपयोग: किराना दुकान, बकरी पालन, पोल्ट्री, सब्जी विक्रय, ऑटो रिक्शा।

क. एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना (ITDP) चंद्रपुर
16 उपकेंद्र, 128 गाँव
2024-25 खर्च: लगभग रू 520 करोड़
मुख्य कार्य : 100% अनुदान पर कुएँ, फार्म पॉंड, पशुपालन किट, ड्रिप सिंचाई, सब्जी बीज
2025 में 19 आश्रमशालाओं/हॉस्टलों के लिए फूड सप्लाई टेंडर।

ड. एकाधिकार खरीदी योजना (तेंदू पत्ता):
2024 संग्रह: 5.80 लाख मानक बोरे, दर रू4800/बोरा
2025 बोनस: रू1500/बोरा चंद्रपुर-गडचिरोली-गोंदिया मिलाकर 12 लाख+ बोरे
85,000+ आदिवासी परिवारों को प्रत्यक्ष लाभ (मई-जून 2025 में राशि वितरित।

इ. अन्य महत्वपूर्ण योजनाएँ :
वन धन विकास केंद्र: 15 केंद्र सक्रिय (महुआ, शहद, औषधी वनस्पतियाँ)
NSTFDC योजना: रू 10 लाख तक कम ब्याज ऋण
बिरसा मुंडा योजना: कृषि यांत्रिकीकरण अनुदान।

प्रभाव विश्लेषण:
सकारात्मक प्रभाव (2023-2025):
- PM-JANMAN से 4,500 परिवारों को घर, 80% गाँवों में सड़क-पानी-बिजली → पलायन में 15-20% कमी
- शबरी ऋण से 350 नए उद्योग→मासिक रू15,000-30,000 आय
- तेंदू पत्ता बोनस से रू120 करोड़ →85,000 परिवारों को नकद
- ITDP अनुदान से फसल उत्पादकता 35-40% वृद्धि
- औसत मासिक आय 2019 के रू4,500 से बढ़कर 2025 में रू 9,000-11,000

चुनौतिया/नकारात्मक पहलू:
- 40-45% लाभार्थियों को योजनाओं की पूरी जानकारी नहीं
- दस्तावेज/आधार लिंकिंग के कारण 20-25% आवेदन रद्द
- खदानों से प्रभावित 15,000 परिवारों का पूर्ण पुनर्वास बाकी
- PM-JANMAN की गति धीमी (महाराष्ट्र में जून 2025 तक केवल 65-70%)
- शबरी ऋण वसूली 65%
- तेंदू पत्ता संग्रह में दलालों का हस्तक्षेप अब भी मौजूद।

निष्कर्ष एवं सिफारिशें: 2023 से नवंबर 2025 तक चंद्रपुर में आदिवासी जीवन स्तर में स्पष्ट सुधार हुआ है। शबरी ऋण एवं तेंदू बोनस से नकद आय बढ़ी है, PM-JANMAN से मूलभूत सुविधाएँ मजबूत हुई हैं। फिर भी कार्यान्वयन में कमियाँ, जागरूकता की कमी और उद्योगों का नकारात्मक प्रभाव पूरी सफलता में बाधक हैं। 2025-26 में 46% बजट वृद्धि सकारात्मक संकेत है।

यदि नीचे दी गई सिफारिशें 2026 तक कड़ाई से लागू की जाएँ तो चंद्रपुर के आदिवासी परिवारों की औसत मासिक आय रू15,000-20,000 तक पहुँच सकती है और मजदूरी पलायन 60% से अधिक कम हो सकता है।

सिफारिशें:
1. गाँव स्तर पर मासिक जागरूकता शिविर अनिवार्य स्थानीय भाषाओं में डिजिटल माध्यम
- हर तालुका में महीने के दूसरे व चौथे शनिवार को संयुक्त शिविर
- गोंडी, माडिया, हलबी, कोलामी में छोटे वीडियो/ऑडियो व्हाट्सएप से भेजें
- आधार, बैंक, जाति प्रमाणपत्र की तत्काल जाँच/सुधार कैंप
2. PM-JANMAN/DA-JGUA के लिए अलग पूर्णकालिक विशेष अधिकारी त्रैमासिक फील्ड विजिट
3. शबरी ऋण प्रक्रिया पूर्णत% डिजिटल (15 दिन में पूरा) वसूली के लिए स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहन
4. तेंदू पत्ता में 100% DBT बायोमेट्रिक हाजिरी दलालों पर स्थायी प्रतिबंध
5. प्रत्येक तालुका में 'आदिवासी उद्यमिता एवं कौशल विकास केंद्र' (बकरी/मुर्गी पालन, महुआ प्रसंस्करण, सोलर तकनीक, डिजिटल मार्केटिंग आदि प्रशिक्षण)
6. हर साल स्वतंत्र तृतीय-पक्ष प्रभाव मूल्यांकन (TISS/IIM/Gokhale Institute द्वारा)
7. अतिरिक्त सिफारिशें
- सीमेंट/कोयला कंपनियों के SR से स्कूल, स्वास्थ्य केंद्र, सोलर प्लांट अनिवार्य
- आदिवासी महिलाओं के लिए 'लक्ष्मी बचत गट' - रू 20 लाख तक ब्याज-मुक्त ऋण
- वन अधिकार दावों का जून 2026 तक 100% निपटारा।

इन सभी सिफारिशों को यदि 2026 के बजट में कार्य-योजना के साथ शामिल किया जाए तो चंद्रपुर जिला महाराष्ट्र का 'आदिवासी विकास मॉडल जिला' बन सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-
1. Times of India (2024), PM's tribal upliftment scheme to reach 167 Chanda villages.
2. Burghate, K., &Herkal, S. (2023). TIJER.
3. Galaxy International Multidisciplinary Research Journal (2024).
4. Proceedings ICHES (2024).
5. TRTI Evaluation Reports (2019-2021).
6. IIP Series (2024).
7. Tribal Maharashtra Annual Report (2018-19).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

इंदौर और कपड़ा उद्योग का इतिहास, वर्तमान स्थिति एवं भविष्य की संभावनाएँ

श्रीमती ज्योतिबाला राठौर*

* प्रशिक्षण अधिकारी, राष्ट्रीय कौशल प्रशिक्षण संस्थान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत के औद्योगिक इतिहास में इंदौर का नाम विशेष रूप से कपड़ा उद्योग के लिए जाना जाता है। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर आज तक इंदौर ने न केवल मध्य भारत, बल्कि देश के वस्त्र उत्पादन में अग्रणी भूमिका निभाई है। यह शोध पत्र इंदौर की पहली कपड़ा मिल से लेकर प्रधानमंत्री मित्र पार्क तक की विकास यात्रा को रेखांकित करता है, जिसमें ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक और औद्योगिक पक्षों का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना – भारत की औद्योगिक प्रगति में कपड़ा उद्योग का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। यह उद्योग न केवल आर्थिक विकास का आधार है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, रोजगार और तकनीकी प्रगति का भी प्रतीक है।

इंदौर, जो कभी मालवा क्षेत्र की सांस्कृतिक राजधानी रहा, 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से कपड़ा उद्योग का केंद्र बन गया। महाराजा तुकोजीराव द्वितीय के समय से प्रारंभ होकर यह उद्योग सर हुकुमचंद जैसे उद्योगपतियों के प्रयासों से स्वर्ण युग तक पहुँचा और आज प्रधानमंत्री मित्र पार्क जैसी आधुनिक परियोजनाओं के माध्यम से पुन: वैश्विक स्तर पर स्थापित हो रहा है।

इंदौर में कपड़ा मिलों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

पहली कपड़ा मिल (1866) – इंदौर में पहली कपड़ा मिल की स्थापना सन् 1866 में महाराजा तुकोजीराव द्वितीय द्वारा की गई थी।

यह राज्य की पहली कपड़ा मिल थी और इसकी मशीनें हाथियों पर लादकर इंदौर लाई गईं , जो उस युग की तकनीकी दूरदृष्टि और उत्साह का प्रतीक है।

मिल के लिए रूई का प्रबंध गुजराती व्यापारियों डायाभाई बसंती और सोजीराम सालिगराम द्वारा किया गया, जिन्होंने जीनिंग फैक्ट्री लगाई। प्रारंभ में कपड़ा मोटा बनता था, और सैनिकों को वेतन के रूप में कपड़ा दिया जाने लगा। बाद में यह मिल भंडारी परिवार को बेच दी गई।

औद्योगिक विस्तार और स्वर्ण काल (1909–1925) – 1909 में सर सेठ हुकुमचंद और सेठ जमनादास मुहारमल के प्रयासों से मालवा यूनाइटेड मिल की स्थापना मुंबई के सर करीमभाई इब्राहिम की देखरेख में हुई। इसके बाद क्रमश:

1. फतेहपुरिया जीनिंग एंड प्रेसिंग फैक्ट्री,
2. हुकुमचंद मिल,
3. नंदलाल भंडारी मिल,
4. स्वदेशी कॉटन मिल,
5. कल्याण मिल, और
6. राजकुमार मिल

की स्थापना हुई।

1917 से 1925 तक का समय इंदौर के कपड़ा उद्योग का सुनहरा युग (Golden Era) माना जाता है। उस समय सात मिलों में 10,720 लूम्स और 4,05,805 स्पिंडल्स चालू थे।

मध्यभारत प्रांत की 15 मिलों में से 7 केवल इंदौर में थीं, जिससे इंदौर को 'मालवा का मैनचेस्टर' कहा जाने लगा।

इंदौर और कपास उत्पादन की स्थिति – कपास को भारत में 'सफेद सोना' कहा जाता है। मध्यप्रदेश देश के कुल कपास उत्पादन का लगभग 43 प्रतिशत और विश्व का लगभग 24 प्रतिशत उत्पादन करता है।

इंदौर और उसके आसपास के खरगौन, धार, बुरहानपुर, बड़वानी, खंडवा, झाबुआ, अलीराजपुर, देवास और रतलाम जिले कपास उत्पादन के प्रमुख केंद्र हैं।

उत्पादन आँकड़े :-

वर्ष	कपास उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
2022-23	8.78
2023-24	6.30
2024-25	5.60

वर्तमान में मध्यप्रदेश में कपास का रकबा 5.83 लाख हेक्टेयर है।

यहाँ के कपास का रेशा 30 मिमी लंबा होता है, जिससे फाइन क्वालिटी धागा तैयार किया जाता है। यूरोप और अमेरिका में मध्यप्रदेश के कपास से बने टॉवेल, चादर और वस्त्र की विशेष मांग है। राज्य से तैयार कपड़ा और गारमेंट का वार्षिक निर्यात लगभग 7,000 करोड़ है।

प्रधानमंत्री मित्र (PM MITRA) पार्क – एक औद्योगिक क्रांति की शुरुआत – प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने 17 सितम्बर 2025 को अपने 75वें जन्मदिन पर इंदौर के पास धार जिले के ग्राम भैसोला में देश के पहले PM MITRA Park की आधारशिला रखी।

यह परियोजना 2158 एकड़ भूमि पर विकसित की जा रही है। इसमें 114 इकाइयों ने रू 23,146 करोड़ के निवेश की स्वीकृति दी है, जिससे लगभग 72,000 प्रत्यक्ष रोजगार सृजित होंगे। यहाँ 81 Plug and Play यूनिट्स स्थापित होंगी, जिनसे फाइबर से लेकर फैब्रिक, फैशन और फॉरेन एक्सपोर्ट तक की संपूर्ण वैल्यू चेन विकसित होगी।

परियोजना की प्रमुख विशेषताएँ :-

1. 3 लाख से अधिक प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रोजगार की संभावना।
2. श्रमिकों व महिला कर्मचारियों के लिए आवासीय व सामाजिक सुविधाएँ।
3. निवेशकों के लिए आधुनिक बुनियादी ढाँचा व लॉजिस्टिक सपोर्ट।
4. 27,109 करोड़ रुपये के कुल निवेश प्रस्ताव अब तक प्राप्त।
5. वस्त्र उद्योग के बड़े संगठनों की रुचि - भारत को 'Global Textile Hub' बनाने की दिशा में कदम।

औद्योगिक, सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

1. आर्थिक प्रभाव- PM मित्र पार्क से न केवल स्थानीय उद्योगों को प्रोत्साहन मिलेगा, बल्कि कपास किसानों को भी उचित मूल्य और बाजार उपलब्ध होगा। राज्य के एक्सपोर्ट वैल्यू में उल्लेखनीय वृद्धि की संभावना है।

2. सामाजिक प्रभाव - यह परियोजना महिला रोजगार, तकनीकी प्रशिक्षण और ग्रामीण विकास के नए अवसर प्रदान करेगी। स्थानीय युवाओं के लिए Skill Development केंद्र स्थापित किए जाएंगे, जिससे उन्हें आधुनिक तकनीकी प्रशिक्षण मिलेगा।

3. पर्यावरणीय प्रभाव - परियोजना में Green Manufacturing Zero Liquid Discharge System and Waste Recycling को अपनाया जा रहा है, जिससे यह भारत का पहला सस्टेनेबल टेक्सटाइल पार्क बनेगा।

इंदौर - भविष्य का टेक्सटाइल हब - इंदौर पहले ही 'क्लीन सिटी' और 'स्मार्ट सिटी' के रूप में पहचाना जा चुका है। अब यह 'टेक्सटाइल हब' बनने की दिशा में तेजी से अग्रसर है।

मालवा क्षेत्र की ऐतिहासिक औद्योगिक पृष्ठभूमि, उत्कृष्ट कपास उत्पादन, प्रशिक्षित श्रमिक वर्ग और निवेश के लिए अनुकूल वातावरण , ये सभी कारक इंदौर को भविष्य का वस्त्र उद्योग केंद्र बना रहे हैं।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ

चुनौतियाँ-

1. जलवायु परिवर्तन के कारण कपास उत्पादन में उतार-चढ़ाव।
2. ऊर्जा लागत में वृद्धि।
3. विदेशी प्रतिस्पर्धा।

संभावनाएँ-

1. टेक्सटाइल सेक्टर में Automation & AI Integration
2. हैंडलूम, हैंडीक्राफ्ट और ऑर्गेनिक टेक्सटाइल का उभरता बाजार।
3. इंदौर का भौगोलिक स्थान , मध्य भारत में लॉजिस्टिक हब के रूप में लाभकारी।

निष्कर्ष - इंदौर का कपड़ा उद्योग केवल औद्योगिक विकास का इतिहास नहीं, बल्कि यह श्रम, सृजन और नवाचार की परंपरा का प्रतीक है। 1866 की पहली कपड़ा मिल से लेकर 2025 के पीएम मित्र पार्क तक की यह यात्रा भारत की आत्मनिर्भरता और औद्योगिक आत्मविश्वास का परिचायक है। कपास किसानों से लेकर उद्योगपतियों तक, श्रमिकों से लेकर निर्यातकों तक , यह श्रृंखला भारत की Make in India और Vocal for Local नीतियों को सशक्त बना रही है। इंदौर एक बार फिर 'मालवा का मैनचेस्टर' बनकर विश्व वस्त्र मानचित्र पर अपनी नई पहचान स्थापित कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश शासन, उद्योग विभाग- PM Mitra Park Official Project Report, 2025
2. Holkar State Industrial Records, 1866-1920
3. इंदौर जिला गजेटियर, 1909-1930
4. भारत सरकार, वस्त्र मंत्रालय- Annual Textile Report 2024-25
5. श्रीकृष्ण भटनागर (1995): मध्यभारत की औद्योगिक परंपरा
6. गांधी, मोहनदास के. हिन्द स्वराज , स्वदेशी और आत्मनिर्भरता पर विचार
7. DGT & MSDE Reports, Skill India and Textile Training Initiatives, 2024
8. Economic Times (2025) : PM Mitra Park Dhar – India's First Integrated Textile Hub

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सागर संभाग में चयनित सार्वजनिक एवम् निजी बैंकों की गैर निष्पादित सम्पत्ति का अध्ययन

फरहा नाज* डॉ.प्रभा अग्रवाल**

* शोधार्थी (वाणिज्य) महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह अध्ययन मध्य प्रदेश के सागर संभाग में संचालित चुनिंदा सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों में गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों (एनपीए) की प्रवृत्तियों, कारणों और प्रभावों की विश्लेषणात्मक जांच प्रस्तुत करता है। पांच साल की अवधि में प्राथमिक और द्वितीयक दोनों डेटा स्रोतों का उपयोग करके, अनुसंधान विभिन्न बैंकिंग संस्थानों में एनपीए की मात्रा और पैटर्न की तुलना करता है। अध्ययन एनपीए के संचय में योगदान देने वाले आंतरिक और बाह्य कारकों की भी पड़ताल करता है, जिसमें ऋण वितरण प्रथाएं, उधारकर्ता चूक, आर्थिक स्थिति और नियामक उपाय शामिल हैं। तुलनात्मक विश्लेषण से पता चलता है कि निजी क्षेत्र के समकक्षों की तुलना में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में एनपीए का बोझ अधिक है, यह अध्ययन भारतीय बैंकिंग प्रणाली के भीतर वित्तीय स्वास्थ्य और ऋण दक्षता में सुधार से संबंधित नीति निर्माताओं, बैंकिंग पेशेवरों और शिक्षाविदों के लिए महत्वपूर्ण है।
शब्द कुंजी –सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक, सागर डिवीजन, परिसंपत्ति गुणवत्ता, सकल एनपीए अनुपात, वित्तीय प्रदर्शन, ऋण वसूली, ऋण जोखिम, बैंकिंग क्षेत्र सुधार।

प्रस्तावना – भारतीय बैंकिंग देश और उसके लोगों की जीवन रेखा है। बैंकिंग ने अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रों को विकसित करने और भारतीय क्षितिज पर प्रगति की एक नई सुबह लाने में मदद की है। इस क्षेत्र ने लाखों लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं को हकीकत में बदला है। लेकिन ऐसा करने के लिए, उसे मीलों दूर तक कठिन भूभाग पर नियंत्रण करना पडा है। आज भारतीय बैंक आत्मविश्वास के साथ दुनिया के आधुनिक बैंकों से प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। बैंकिंग क्षेत्र अर्थव्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थानों में से एक है। इसे अर्थव्यवस्था की सफलता या विफलता के लिए जिम्मेदार मुख्य कारक माना जाता है। बैंक भी अर्थव्यवस्था के सबसे पुराने वित्तीय संस्थानों में से एक है। वे अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में जमा राशि जुटाने और ऋण वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बैंकिंग प्रणाली ईंधन इंजेक्शन प्रणाली है जो बचत जुटाकर और उन्हें उच्च रिटर्न निवेश के लिए आवंटित करके आर्थिक दक्षता को उत्तोजित करती है। आधुनिक वाणिज्यिक बैंकिंग वाला देश, अपने वर्तमान स्वरूप में, हाल ही में उत्पन्न हुआ है।

भूमिका – भारत के मध्य भू-भाग पर विद्यमान मध्यप्रदेश के उत्तरी क्षेत्र में सागर संभाग अवस्थित है। जिसके अन्तर्गत, सागर, छतरपुर, पन्ना, दमोह, टीकमगढ़ एवं निवाड़ी जिले शामिल है, जो मिलकर एक संभाग का रूप देते हैं। इस संभाग का निर्माण दमोह एवं सागर जिलों को जबलपुर संभाग से पृथक कर निर्मित किया गया था। तत्पश्चात 26 जनवरी 1973 को पन्ना, टीकमगढ़ और छतरपुर को रीवा संभाग के जिलों से पृथक कर इस संभाग में मिला लिया गया था। 1 अक्टूबर 2018 को टीकमगढ़ के निवाड़ी तहसील को अलग कर जिले के रूप में स्थापित किया गया। निवाड़ी जिले को मिला कर वर्तमान समय में सागर संभाग में समाहित जिलों की संख्या छः है। संभाग के अन्तर्गत सभी जिलो को संस्कृति, भाषायी विशिष्टता एवं पर्यटन से प्रदेश में इस संभाग की एक अलग ही पहचान है जिले के सागर संभाग के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

ऐतिहासिक स्थिति – भारत के मध्य भाग में स्थित सागर संभाग में सागर, दमोह, टीकमगढ़, छतरपुर और पन्ना सहित कई जिले शामिल हैं। क्षेत्र का बैंकिंग क्षेत्र व्यक्तियों, व्यवसायों और कृषि उद्यमों को वित्तीय सेवाएँ प्रदान करके आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्र के बैंक इस संभाग में काम करते हैं, जो ग्रामीण और शहरी आर्थिक विकास में योगदान करते हैं। भारतीय स्टेट बैंक (SBI), पंजाब नेशनल बैंक (PNB) और बैंक ऑफ बड़ौदा (BOB) जैसे राष्ट्रीयकृत बैंकों की HDFC बैंक, ICICI बैंक और एक्सिस बैंक जैसे निजी बैंकों के साथ-साथ मजबूत उपस्थिति है। सहकारी बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (RRB) भी लघु उद्योगों, स्वयं सहायता समूहों और हाशिए के समुदायों की वित्तीय जरूरतों को पूरा करते हैं। सागर संभाग में बैंकिंग क्षेत्र कृषि निर्भरता, औद्योगीकरण और क्षेत्रीय व्यावसायिक प्रथाओं जैसे कारकों से काफी प्रभावित है। इस क्षेत्र में प्रधानमंत्री जन धन योजना (PMJDY), प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) योजनाओं और माइक्रोफाइनेंस पहलों के माध्यम से वित्तीय समावेशन प्रयासों में वृद्धि देखी गई है। इन विकासों के बावजूद, कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं, जिनमें बुनियादी ढाँचे की कमी, कम वित्तीय साक्षरता और दूरदराज के इलाकों में पहुँच संबंधी समस्याएँ शामिल हैं। डिजिटल बैंकिंग की भूमिका बढ़ गई है, और ग्राहकों की बढ़ती संख्या मोबाइल बैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग और यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (UPI)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सेवाओं को अपना रही है।

आर्थिक विकास में बैंकिंग की भूमिका – सागर संभाग में बैंकिंग क्षेत्र बचत को जुटाकर और उन्हें उत्पादक निवेशों में लगाकर आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कृषि क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनी हुई है, जिसमें किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) और कृषि सावधि ऋण जैसी योजनाओं के तहत किसानों को बड़े प्रतिशत ऋण दिए जाते हैं। इसके अलावा, छोटे और मध्यम उद्यम (एसएमई) और कुटीर उद्योग अपने परिचालन का विस्तार करने, रोजगार सृजित करने और क्षेत्रीय आय के स्तर में सुधार करने के लिए बैंक वित्तपोषण पर निर्भर हैं। कृषि और व्यवसाय ऋण के अलावा, बैंक किफायती ऋण देकर आवास और शिक्षा क्षेत्र में भी योगदान करते हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना (पीएमएवाई) और शिक्षा ऋण सब्सिडी जैसी विभिन्न सरकार समर्थित पहलों की शुरूआत ने वित्तीय संस्थानों को अपनी पहुंच का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया है।

गैर–निष्पादित आस्तियों (एनपीए) और ऋण वसूली के रुझान – सागर संभाग में कार्यरत बैंकों के लिए गैर–निष्पादित परिसंपत्तियां (एनपीए) एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय बनकर उभरी हैं। एनपीए ऐसे ऋण या अग्रिम हैं जिनमें उधारकर्ता 90 दिनों या उससे अधिक समय तक ब्याज या मूलधन का भुगतान करने में विफल रहता है। एनपीए का बढ़ता स्तर बैंकों की लाभप्रदता और तरलता को प्रभावित करता है, जिससे ऋण प्रवाह में समग्र मंदी आती है। पिछले दशक में, क्षेत्र के सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में उच्च एनपीए अनुपात का सामना करना पड़ा है, जैसे कि ऋण देने के मानदंडों में ढील, कृषि ऋण चूक और अपर्याप्त जोखिम मूल्यांकन तंत्र जैसे कारक। सागर संभाग में एनपीए में प्राथमिक योगदानकर्ताओं में कृषि क्षेत्र, लघु और मध्यम उद्यम (एसएमई), और बुनियादी ढांचा परियोजनाएं शामिल हैं।

बैंकिंग क्षेत्र में सुधार के लिए सरकारी नीतियां और सिफारिशें – सरकार ने सागर संभाग में एनपीए की समस्या को दूर करने और बैंकिंग प्रणाली को मजबूत करने के लिए कई नीतियां और योजनाएं शुरू की हैं। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (पीएमएमवाई), किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) योजना और माइक्रो और लघु उद्यमों के लिए क्रेडिट गारंटी फंड ट्रस्ट (सीजीटीएमएसई) जैसी पहलों ने छोटे उधारकर्ताओं के लिए ऋण पहुंच में सुधार करने और वित्तीय संकट को कम करने में मदद की है। इसके अतिरिक्त, भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने बैंकों के बीच बेहतर वित्तीय अनुशासन सुनिश्चित करने के लिए सख्त नियामक मानदंड लागू किए हैं। सागर संभाग में बैंकिंग दक्षता बढ़ाने के लिए, यह अनुशंसा की जाती है कि बैंक एनपीए प्रबंधन के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाएं। क्रेडिट मूल्यांकन प्रक्रियाओं को मजबूत करना, उन्नत जोखिम प्रबंधन तकनीकों को लागू करना और वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों को बढ़ावा देना ऋण चूक को कम करने में मदद कर सकता है। इसके अतिरिक्त, बैंकों और स्थानीय सरकारी एजेंसियों के बीच सहयोग ऋण वसूली दरों में सुधार कर सकता है और वित्तीय समावेशन प्रयासों को सुव्यवस्थित कर सकता है। बैंकिंग पहुंच बढ़ाने और परिचालन लागत को कम करने के लिए, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल बैंकिंग की पहुंच को भी बढ़ाया जाना चाहिए।

सागर जिले की भौगोलिक स्थिति एवं नाम की उत्पत्ति से सम्बंधित लोककथा – भारत के मध्य में मध्यप्रदेश व मध्यप्रदेश के मध्य में सागर जिला अर्थात् मध्यप्रदेश का हृदय स्थल सागर स्थित है, जो $23^0 10'$ से $24^0 27'$ उत्तरी अक्षांश तथा $78^0 52'$ से $79^0 21'$ पूर्वी देशांश के मध्य फैला है। सागर जिले का क्षेत्रफल 10,252 वर्ग किलोमीटर है। यहाँ की जनसंख्या 23,78,458 के लगभग है तथा लिंगानुपात 896 है

सागर जिले की बारह तहसीलें – बीना, खुरई, मालथौन, बंडा, शाहगढ़, राहतगढ़, जैसीनगर, सागर, गढ़ाकोटा, रहली, देवरी तथा केसली है।

भौगोलिक स्थिति: सागर जिला मध्यप्रदेश के उत्तर मध्य में स्थित है। यह क्षेत्र प्रायश: बुंदेलखण्ड के नाम से जाता है। सागर के उत्तर में छतरपुर और ललितपुर जिले, पश्चिम में विदिशा, गुना जिले, दक्षिण में नरसिंहपुर, पश्चिम – दक्षिण में रायसेन तथा पूर्व में दमोह जिले की सीमायें मिलती हैं।

सागर शहर के बीचों–बीच एक अत्यंत सुन्दर झील है जिसे लाखा बंजारा झील के नाम से जाना जाता है। ऐसी लोक किवदंती है कि सागर झील का निर्माण 13वीं शताब्दी में बंजारों ने किया था। इसका निर्माण लाखा बंजारा नामक बंजारे द्वारा कराया गया था। लाखा एक प्रसिद्ध बंजारा था, जो अपने अन्य बंजारा साथियों के साथ लद्दू भैंसों, बैलों पर नमक और अन्य ग्राहस्थिक सामग्री लादकर बुंदेलखण्ड क्षेत्र में आते थे और घूम–घूम कर व्यापार किया करते थे। लद्दू मवेशियों के साथ अत्यधिक जल की आवश्यकता पड़ती थी।

अत: जहाँ पर पानी कम या उपलब्ध नहीं होता था, वहाँ बंजारे अपने निजी पैसे से तालाब, बावड़ियों का निर्माण करा देते थे। मवेशियों की जल आपूर्ति के लिए बंजारों ने दो पहाड़ियों के मध्य सागर शहर में विशाल तालाब का निर्माण करवा दिया और बाद में इसी सागर झील के नाम से दांगियों, अहीरों एवं गौड़ शासकों ने शासन किया।

पर्वत एवं नदियाँ : सागर जिला मालवा पठार के दक्षिण – पूर्व किनारे विंध्यांचल पर्वत श्रेणी पर स्थित है। यहाँ सामान्य तल के ऊपर तीन सौ से पांच सौ फुट ऊँची उठी हुई पर्वत मालाएं, ऊपर उल्लिखित नदी पात्रों को एक–दूसरे से प्रथक करती हैं। इनमें से सबसे प्रमुख पर्वतमाला लिधोरा से बंडा होते हुए जयसिंहनगर तक दक्षिण–पश्चिम की ओर फैली है। ये पहाड़ियां, जिनके शिखर सपाट हैं, अधिकांशत: वनाच्छादित हैं और कहीं–कहीं उनकी ऊंचाई लगभग 2000 फुट है। पथरिया जो सागर से निकट है, इसकी ऊंचाई औसत समुद्रतल से 2,035 फुट है। आगे चलकर तेंदू डाबर जो 2,182 फुट ऊँची है।

जलवायु एवं तापमान: किसी क्षेत्र की जलवायु उस क्षेत्र के वातावरण का महत्वपूर्ण घटक होती है अर्थात् जलवायु वन, वर्षा, मिट्टी एवं कृषि को प्रभावित करने वाला तत्व है। सागर में और जिलों की अपेक्षा गर्मी कम पड़ती है। इसलिए यहाँ का रहवास निरोग और सुखद है।

नवम्बर से फरवरी तक शीत ऋतु रहती है, इसके पश्चात् मार्च से जून तक ग्रीष्म ऋतु रहती है तथा वर्षा मध्य जून से प्रारंभ होकर सितम्बर के अंत तक होती है। अक्टूबर में वर्षाऋतु, शीतऋतु में परिवर्तित होने लगती है। सागर जिले का न्यूनतम तापमान जनवरी माह में 05^0 सेंटीग्रेड तथा अधिकतम 47^0 सेंटीग्रेड रिकॉर्ड किया जाता है। सागर जिले की औसत वर्षा लगभग 45 इंच है।

जंगली जानवर: सागर जिले में हिरण, चीतल, सांभर, नीलगाय, काला हिरण, सोनकुत्ते, सियार, भालू, बारहसिंगा, लोमड़ी, सेई, बन्दर, चौसिंघा, जंगली सूअर, लकडबग्घा, आदि जानवर पाये जाते हैं। खनिज सम्पदा: सागर जिले में विपुल खनिज सम्प्रदा नहीं है तथापि इस जिले में वृहद मात्रा

में निर्माण सामग्री उपलब्धा है और चूना पत्थर भी अनेकों स्थानों पर थोड़ी-थोड़ी मात्रा में पाया जाता है। मालथौन के उत्तर में अटा में बलुआ पत्थर पट्टीनुमा परतों के रूप में पाया जाता है।

उद्देश्य:

1. आर्थिक विकास में बैंकिंग की भूमिका पर अध्ययन करना।
2. बैंकिंग क्षेत्र सुधार के लिए सरकारी नीतियों और सिफारिशों का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पना:

- चयनित सार्वजनिक एवं निजी बैंको की गैर निष्पादित सम्पति में अंतर है।

अनुसंधान क्रियाविधि- इस शोध में एकत्रित किए गए आंकड़ों का विश्लेषण और उनकी व्याख्या प्रस्तुत की गई है। अध्ययन का उद्देश्य सागर संभाग के चयनित सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों में गैर निष्पादित सम्पत्तियों (एन.पी.ए.) की स्थिति का तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक आकलन करना हैं। द्वितीय समकों एवं सूचनाओं का संग्रहण हेतु पुस्तकालयों में उपलब्ध शासकीय एवं अर्धशासकीय प्रकाशन तथा निजी प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित सामग्री, पत्र-पत्रिकाएँ, समाचार पत्रो आदि से उपयोग किया गया है, इसके अलावा इंटरनेट का भी सहारा लिया गया हैं। इसके अलावा राज्य स्तरीय बैंकर्स,संभागीय एवं जिलेवार समितियों एवं अग्रणी भारतीय स्टेंट बैंक टीकमगढ़ से संमक संग्रहित किये गये है।

शोध का क्षेत्र एवं सीमाएॅ:- शोध अध्ययन का क्षेत्र मध्यप्रदेश के सागर संभाग से संबंधित है जिसमें बैंको की संख्या अत्याधिक होने के कारण सार्वजनिक एवं निजी बैंको का चयन दैवनिदर्शन पद्धति द्वारा किया गया है जिसमें पाँच सार्वजनिक एवं निजी बैंको का चयन किया है जो निम्न प्रकार है।

चयनित बैंक

सार्वजनिक बैंक	**चयनित निजी बैक**
1.एसबी आई बैंक	**1.आईसी आईसी आई बैंक**
2.इंडियन बैंक	**2.एक्सिस बैंक**
3.पीएन बी बैंक	**3.एचडी एफसी बैंक**
4.बीओ आई बैंक	**4.बंधन बैंक**
5.केनरा बैंक	**5.एयू स्मॉल फिन. बैक**

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के सकल एनपीए का पाँच वर्षों (2021-2025) का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसमें स्पष्ट है कि भारतीय स्टेट बैंक (SBI) का एनपीए राशि के मामले में सर्वाधिक है, जो 2021 में 30,401 रूपये लाख से बढ़कर 2024 में 54,061रूपये लाख तक पहुँचा और 2025 में थोड़ा घटकर 49,017 रूपये लाख रहा। यह कुल सार्वजनिक क्षेत्र के एनपीए का लगभग 63% हिस्सा है, जो बैंकिंग प्रणाली में SBI की प्रमुखता और उसके जोखिम दोनों को दर्शाता है। पंजाब नेशनल बैंक (PNB) का भी योगदान उल्लेखनीय है, जिसका एनपीए 2021 के 6,024 रूपये लाख से लगातार बढ़कर 2025 में 14,647 रूपये लाख तक पहुँच गया, जिससे इसका कुल हिस्सा 15-6% हो गया। इंडियन बैंक और बैंक ऑफ इंडिया का हिस्सा क्रमश: 9-97% और 5-94% रहा। केनरा बैंक का योगदान सबसे कम (5-50%) रहा, लेकिन इसमें भी वृद्धि का रुझान देखा गया। समग्र रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का सकल एनपीए 2021 के 48,810 रूपये लाख से बढ़कर 2024 में 87,254 रूपये लाख तक पहुँचा और 2025 में 80,842 रूपये लाख पर आकर स्थिर हुआ। यह दर्शाता है कि कुछ सुधारात्मक कदम 2025 में प्रभावी हुए, जिससे गिरावट आई। परंतु कुल मिलाकर यह प्रवृत्ति बैंकों की ऋण प्रबंधन प्रणाली में कमियों और बढ़ते जोखिम को इंगित करती है।

ग्राफ 1: सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक एनपीए (लाख रूपये)

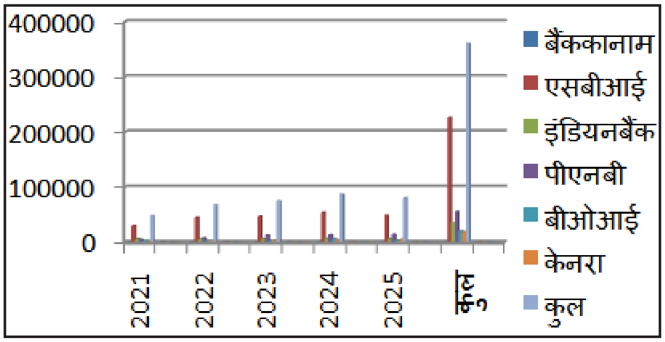

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 2 में निजी क्षेत्र के बैंकों के सकल एनपीए का पाँच वर्षों (2021-2025)का विवरण दिया गया है। इसमें स्पष्ट है कि एक्सिस बैंक और आईसीआईसीआई बैंक सबसे अधिक प्रभावित रहे। एक्सिस बैंक का एनपीए 2021 में केवल 809 रूपये लाख था, लेकिन 2022 में यह तेजी से बढ़कर 5,722 रूपये लाख और 2025 में 10,595 रूपये लाख हो गया। कुल एनपीए में इसका हिस्सा 41.94%रहा, जो निजी क्षेत्र में सर्वाधिक है। आईसीआईसीआई बैंक का एनपीए भी उल्लेखनीय वृद्धि के साथ 2021के 993 रूपये लाख से बढ़कर 2025 में 8,713 रूपये लाख पहुँच गया और इसका हिस्सा 25-87% रहा। एचडीएफसी बैंक, जो आमतौर पर स्थिर माना जाता है, 2021में 7,095 रूपये लाख के उच्च स्तर पर था लेंकिन अगले वर्षों में अपेक्षाकृत संतुलित रहा और 2025 तक 3,378 रूपये लाख पर सीमित रहा। यह दर्शाता है कि बैंक ने प्रभावी रिकवरी रणनीतियाँ अपनाई। बंधन बैंक और एयू स्मॉल फाइनेंस बैंक का कुल एनपीए योगदान क्रमश: 5-97%और 5-41% रहा, जो छोटे स्तर के जोखिम को दिखाता है। समग्र रूप से निजी क्षेत्र के बैंकों का कुल एनपीए 2021के 9,484 रूपये लाख से बढ़कर 2025 में 26,412 रूपये लाख तक पहुँच गया। यह प्रवृत्ति संकेत देती है कि निजी बैंकों में ऋण पोर्टफोलियो की गुणवत्ता पर दबाव बढ़ा है, विशेष रूप से तेजी से विस्तार करने वाले बैंकों में।

ग्राफ 2: निजी क्षेत्र के बैंक एनपीए (लाख रूपये)

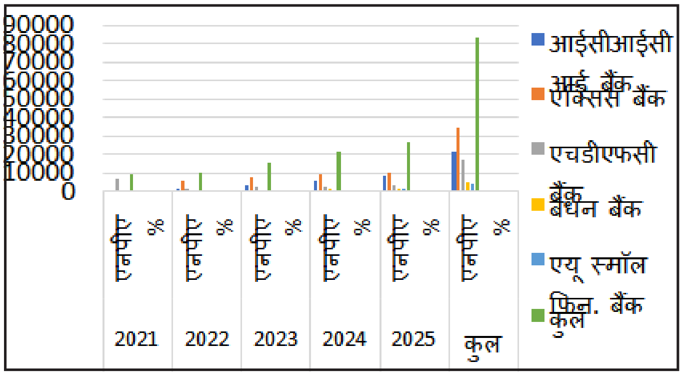

निष्कर्ष – सागर संभाग के चयनित सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों की गैर निष्पादित संपत्तियों (NPA) का विश्लेषण करने के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में गैर निष्पादित संपत्तियों की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है। अत: स्पष्ट होता है कि चयनित सार्वजानिक एवं निजी बैंको की गैर निष्पादित सम्पत्ति में अंतर है इसका प्रमुख कारण प्राथमिकता क्षेत्र में अधिक ऋण वितरण, कमजोर ऋण वसूली तंत्र, और प्रशासनिक अक्षमता है। दूसरी ओर, निजी क्षेत्र के बैंक अपने बेहतर जोखिम प्रबंधन, कुशल ऋण मूल्यांकन प्रणाली तथा तकनीकी हस्तक्षेप के कारण एनपीए पर अपेक्षाकृत अधिक नियंत्रण रखने में सफल रहे हैं। यह भी दर्शाता है कि गैर निष्पादित संपत्तियाँ न केवल बैंकों की लाभप्रदता को प्रभावित करती हैं, बल्कि समग्र बैंकिंग प्रणाली की विश्वसनीयता और आर्थिक स्थायित्व पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। अत: यह आवश्यक है कि बैंकों द्वारा कठोर ऋण स्वीकृति मानदंडों को अपनाया जाए, समय पर पुनरुद्धार उपाय किए जाएं, और वसूली तंत्र को अधिक सशक्त किया जाए। इसके अतिरिक्त, नीति-निर्माताओं को भी चाहिए कि वे एकीकृत नियामक ढांचे के माध्यम से सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों के बैंकों को सहयोग प्रदान करें, जिससे वित्तीय अनुशासन को बढ़ावा मिले और एनपीए की समस्या को जड़ से समाप्त किया जा सके। इस प्रकार, यह अध्न नीति एवं व्यावहारिक सुधारों के लिए मार्गदर्शन प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव, बी.के., बुन्देलखण्ड का इतिहास (1531 से 1857 ई. तक), डी. के. प्रिंटवर्ल्ड प्रा. लि., नई दिल्ली, 2019, पृ.12
2. तिवारी, गोरेलाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1990, पृ. 1
3. त्रिपाठी, काशीप्रसाद, बुन्देलखंड का सामाजिक-आर्थिक इतिहास, समय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020, पृ. 13
4. गुप्त, नर्मदा प्रसाद, बुन्देलखण्ड का सीमांकन, कृष्णदत्त बाजपेयी (सं), बुन्देलखण्ड – गौरव खण्ड-1, महेंद्र कुमार मानव अभिनन्दन समिति, भोपाल, 1993, पृ.211-212
5. जोशी, मदनमोहन (सं.), मध्यप्रदेश सन्दर्भ, दैनिक नईदुनिया प्रकाशन, 1998-99, पृ. 16
6. रैकवार, महेश कुमार, सागर संभाग में इसाई मिशनरियों की गतिविधियाँ प्रोटेस्टेंट मत के विशेष सन्दर्भ में (1878 से वर्तमान तक), शोध प्रबन्ध, इतिहास विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, 2013, पृ. 1
7. जिला प्रशासन निवाड़ी, दिनांक 01.012023 को उद्दत https://niwari.nic.in/
8. डेंगरे, एकता, बुंदेलखंड के अवनद्ध वाद्यों की बजौटी वादन शैली, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2013, पृ. 1
9. जैन, किरण, सागर जिला और उद्योग-धन्धे, लक्ष्मी पाण्डेय (सं.), ये है बुंदेलखंड भाग – 1,
10. अनुझा बुक्स पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2020, पृ. 145
11. जिला प्रशासन सागर, दिनांक – 23.01.2023 को उद्दतhttp://sagar.nic.in/
12. वही
13. त्रिपाठी, काशीप्रसाद, बुंदेलखंड के तालाबों एवं जल प्रबंधन का इतिहास, बुन्देलखण्ड अनुसंधान पोर्टल, दिनांक – 30.01.2023 को उद्दत https://cutt.ly/NwAsJuSd
14. कृष्णन, व. सु., मध्यप्रदेश जिला गजेटियर सागर, भोपाल, 1970, म.प्र., पृ. 4
15. वही, पृ. 5
16. रायबहादुर, हीरालाल, सागर- सरोज, सागर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर (हिन्दी), 1922, पृ.4
17. रायकवार, माधवसिंह, टीकमगढ जिले के मंदिर एवं स्थापत्य कला, नागेश दुबे एवं मोहन लाल चढार (सं.), मध्य भारत की कला, संस्कृति एवं पुरातत्व, एस. एस. डी. एन. पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली, पृ. 46
18. सोनी, नारायण दास, ऐतिहासिक ओरछा राज्य से बना जिला टीकमगढ, ये है बुंदेलखण्ड भाग – 2, पूर्वोक्त, पृ.67
19. पाण्डेय, लक्ष्मी, निवाड़ी परिचय, ये है बुंदेलखण्ड भाग – 2, वही, पृ.63
20. जिला प्रशासन निवाड़ी, पूर्वोक्त
21. तिवारी, शिव कुमार, मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ जिले में सेवा केन्द्र का भौगोलिक विश्लेषण, शोध प्रबंधा, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झाँसी, 1996, पृ.32
22. श्रीवास्तव, रूचि, जिला टीकमगढ़ में कृषिगत भूमि- उपयोग एवं पोषण स्तर, शोध प्रबंध,
23. बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी, 2001, पृ. 17
24. टीकमगढ़ विकास योजना, संचनालय नगर तथा ग्राम निवेश, मध्यप्रदेश ग्राम तथा नगर
25. निवेश अधिनियम, 1973 के प्रवाधानान्तर्गत प्रकाशित मध्यप्रदेश भोपाल, पृ. 2
26. सैनी, कल्पना एवं चौबे, रमेश, सागर की सांस्कृतिक विरासत, आदित्य पब्लिशर्स, बीना,
27. सागर, म.प्र., 2007, पृ. 77

तालिका 1: सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक एनपीए (लाख रूपये)

	2021		2022		2023		2024		2025		कुल	
बैंक का नाम	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%
एसबीआई	30401	8.45%	45460	12.63	47726	13.26	54061	15.02	49017	13.62	226665	63.0%
इंडियनबैंक	6905	1.90%	6685	1.85	7508	2.08	7792	2.16	6997	1.94	35887	9.97%
पीएनबी	6024	1.67%	8731	2.42	12740	3.54	13991	3.88	14647	4.07	56133	15.6%
बीओआई	3546	0.98%	3519	0.97	3485	0.96	6159	1.71	4657	1.29	21366	5.94%
केनरा	1934	0.54%	3037	0.84	4062	1.12	5251	1.45	5524	1.53	19808	5.50%
कुल	48,810	13.56%	67,432	18.74	75,521	21%	87,254	24.25	80,842	22.46	359859	100%

स्त्रोत – अग्रणी भारतीय स्टेट बैंक, टीकमगढ़।

नोट– वर्ष 2021 में निवाड़ी जिले के उपलब्ध तालिका से संबंधित आँकड़े नही है। (कोविड–19 महामारी के कारण)

तालिका 2 : निजी क्षेत्र के बैंक एनपीए (लाख रूपये)

	2021		2022		2023		2024		2025		कुल	
बैंक का नाम	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%	एनपीए	%
आईसीआई सीआई बैंक	993	1.20	1534	1.85	3672	4.44	6473	7.83	8713	10.54	21385	25.87
एक्सिस बैंक	809	0.97	5722	7.92	7668	9.27	9881	11.95	10595	12.81	34675	41.94
एचडीएफसी बैंक	7095	8.58	1447	1.75	2497	3.02	2776	3.35	3378	4.08	17193	20.79
बंधन बैंक	0	0	777	0.93	1040	1.25	1317	1.59	1798	2.17	4932	5.97
एयू स्मॉल फिन. बैंक	587	0.71	568	0.68	423	0.51	969	1.17	1928	2.33	4475	5.41
कुल	9484	11.47	10048	12.15	15300	18.50	21416	25.90	26412	31.95	82660	100

स्रोत – अग्रणी भारतीय स्टेट बैंक, टीकमगढ़।

नोट – वर्ष 2021में निवाड़ी जिले के उपलब्ध तालिका से संबंधित आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। (कोविड–19महामारी के कारण)

****

वर्तमान परिदृश्य में साइबर सुरक्षा की स्थिति : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

डॉ. शिवाकान्त तिवारी *

* प्रभारी प्राचार्य, आर्यावर्त शासकीय महाविद्यालय, मोहन बड़ोदिया (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – आज का विश्व सूचना और तकनीक के नये युग में प्रवेश कर चुका है। इंटरनेट, कृत्रिम बुद्धिमत्ता(AI) क्लाउड कंप्यूटिंग, जैसी तकनीकों ने समाज को काफी गतिशील और सुविधाजनक बना दिया है परन्तु इसके साथ ही साइबर अपराध भी तेजी से बढ़े हैं। साइबर सुरक्षा आज के समय की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गयी है। यह शोध वर्तमान परिदृश्य में साइबर सुरक्षा की अवधारणा, उसकी आवश्यकता, उपयोग की जा रही तकनीकें, भारत की स्थिति ओर संभावित समाधान पर प्रकाश डालने का प्रयास है। इसका प्रमुख उद्देश्य बढ़ते तकनीकी प्रयोग के प्रभाव के बीच साइबर सुरक्षा को सशकत बनाने के उपायों पर ध्यान आकर्षित करना है।

शब्द कुंजी – साइबर सुरक्षा, साइबर अपराध, कृत्रिम बुद्धिमत्ता(AI), डिजिटल सदी।

प्रस्तावना – 21वीं सदी को डिजिटल सदी कहा जाता है। जीवन का कोई क्षेत्र आज डिजिटल क्रांति से अछूता नहीं है। शिक्षा, चिकित्सा, परिवहन, व्यापार, बैंकिंग, युद्ध जैसा प्रत्येक क्षेत्र आज डिजिटल तकनीक पर निर्भर है। अगर विकास की प्रतिस्पर्धा में बने रहना है तो डिजिटल तकनीक में निरन्तर नवाचार करना पड़ेगा। क्योंकि जैसे-जैसे डिजिटल तकनीक का विस्तार हो रहा है वैसे-वैसे ही इसके दुरूपयोग की घटनाएँ भी बढ़ रही है। आज साइबर अपराध बड़ी तेजी से अपने पैर पसार रहा है। डेटा चोरी हो जाने, बैंक से छलपूर्वक पैसे निकाल लेने जैसी घटनाएँ तेजी से बढ़ रही हैं। आजकल डिजिटली हाउस अरेस्ट कर जीवनभर की कमाई छीन लेने जैसी घटनाएँ बहुत अधिक हो रही हैं। ऐसी घटनाओं से बचने के लिए कौन-कौन से उपाय किये जायें जिससे हमारे कम्प्यूटर नेटवर्क, डेटा, संचार या व्यक्तिगत जानकारियाँ सुरक्षित रहें इस विषय में निरन्तर कार्य करने की आवश्यकता है।

साइबर सुरक्षा का महत्व – साइबर सुरक्षा का महत्व सर्वोपरि है क्योंकि अगर साइबर सुरक्षा खतरे में पड़ी तो इसके परिणाम बहुत दूरगामी हो सकते हैं विशेषकर निम्नलिखित क्षेत्र सर्वाधिक प्रभावित हो सकते हैं।

1. **व्यक्तिगत सुरक्षा–** आज एक आम व्यक्ति साइबर तकनीक का प्रयोग मोबाइल, ईमेल, सोशल मीडिया, बैंकिंग, मनोरंजन जैसे अनेक क्षेत्रों में कर रहा है लेकिन साइबर अपराधियों का सबसे आसान शिकार भी आम व्यक्ति ही बन रहा है। अगर आम आदमी की व्यक्तिगत सुरक्षा खतरे में पड़ी तो वह डिजिटल तकनीक से दूर हो जायेगा।
2. **आर्थिक स्थिरता–** आनलाइन लेन-देन और ई कामर्स जेसे क्षेत्रों की सुरक्षा आर्थिक स्थिरता की दृष्टि से आवश्यक है। बड़े-बड़े हैकर्स किसी बड़ी कम्पनी का डेटा हैक कर उसे कुछ ही समय में अरबों की आर्थिक क्षति पहुँचा देते हैं। हैकिंग का समय बढ़ने से क्षति भी बढ़ जाती है।
3. **राष्ट्रीय सुरक्षा–** राष्ट्रीय सुरक्षा सदैव सर्वोपरि रही है। आज के युग में किसी भी देश की सुरक्षा इस बात पर निर्भर करती है कि वह डिजिटल रूप से कितना सक्षम है। हाल ही में भारत द्वारा चलाये गये आपरेशन सिंदूर में भी इसकी झलक देखने को मिली। हमारे देश की सेनाओं ने डिजिटल तकनीक का बेहतरीन उपयोग करके दुश्मन देश पाकिस्तान की हवाई सुरक्षा व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया और कुछ ही घण्टों में उसे घुटनों पर ला दिया। रूस-यूक्रेन युद्ध में भी इसका भरपूर उपयोग देखने को मिल रहा है।
4. **विश्वसनीयता–** किसी की बात की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि सामान्य व्यकित उस पर कितना भरोसा करता है। कोरोना महामारी के दौर से हमारे देश में सामान्य व्यक्तियों के बीच में डिजटल तकनीक का उपयोग तेजी से बढ़ा है। लेकिन डिजिटल तकनीक का भविष्य इस बात पर निर्भर है कि आम व्यक्ति कितना सुरक्षित रह सकता है। वह सुरक्षित महसूस करेगा तभी डिजिटल तकनीक का उपयोग करेगा।

विश्व में साइबर सुरक्षा की स्थिति – वर्तमान में साइबर सुरक्षा परम्परागत तरीकों से काफी आगे निकल चुकी है। अब एंटी वायरस और फायर बॉल जैसे साधनों से आगे बढ़कर नई-नई तकनीकों का उपयोग सायबर सुरक्षा में हो रहा है जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं।

1. **कृत्रिम बुद्धिमत्ता(AI) –** कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग वर्तमान में साइबर सुरक्षा के लिए प्रमुखता से किया जा रहा हे। यह खतरे का संकेत मिलते ही तुरन्त पहचान कर सुरक्षा के लिए स्वचलित प्रतिक्रियाओं को सक्रिय कर देती है। यह बड़ी तेजी से डेटा का विश्लेषण कर खतरों से आगाह करती है ओर स्वत: ही खतरों से बचने के लिए आवश्यक प्रणाली को सक्रिय कर धोखाधड़ी और दुर्भावनापूर्ण गतिविधियों को रोक देती है। इसके साथ ही कृत्रिम बुद्धिमत्ता अनुभव से सीखकर आगामी खतरों से बचने में भी मददगार साबित होती है। गूगल और माइक्रोसाफ्ट अख आधारित खतरा विश्लेषण मॉडल का उपयोग अपने सर्वर में कर रहे हैं।
2. **क्लाउड सुरक्षा–** क्लाउड आधारित सुरक्षा अपने डेटा, एप्लीकेशन,

ओर इंफ्रास्ट्रक्चर को खतरों से बचाने के लिए एन्क्रिप्शन, एक्सेस कन्ट्रोल ओर वास्तविक समय में खतरों का पता लगाने जैसे उपायों का उपयोग करती है। मल्टी फैक्टर अर्थेटिकेशन (MFA) और डेटा लैप्स प्रिवेंशन (DLP) जैसे तरीकों का उपयोग भी इसके द्वारा किया जाता है।

3. **ब्लॉकचेन**– ब्लॉकचेन तकनीक डेटा को अपरिवर्तनीय (Immutable) बनाती है और लेन-देन की पारदर्शिता को बढ़ाती है। बैंकिंग क्षेत्र और आपूर्ति श्रृंखला में इसका उपयोग किया जाता हे। ब्लॉकचेन में नियंत्रण केन्द्रीकृत ना होकर नेटवर्क के सभी प्रतिभागियों के बीच वितरित होता है जिस कारण यह सुरक्षित और पारदर्शी बनता है।

4. **बायोमेट्रिक सुरक्षा**– बायोमेट्रिक सुरक्षा प्रणाली अत्याधुनिक तकनीक है जो किसी व्यक्ति की शारीरिक विशिष्टताओं का उपयोग कर उसकी पहचान की पुष्टि करती है। इस कारण इसमें सेंध लगाना लगभग असम्भव है। इसमें व्यक्ति की उंगलियों के निशान, आँखों की स्कैनिंग, चेहरे की पहचान यहाँ तक कि डी.एन.ए. का उपयोग भी उसकी पहचान को सत्यापित करने के लिए किया जाता है।

5. **क्वांटम एन्क्रिप्शन**– सायबर सुरक्षा की यह सबसे नवीनतम तकनीक है जो डेटा को सुरक्षित करने के लिए क्वांटम यांत्रिकी का उपयोग करती है। इसमें गुप्त एन्क्रिप्शन कुंजियों के वितरण का इस्तेमाल किया जाता है। कुंजियों को प्रकाश के क्वांटम कणों (फोटान) पर एनकोड किया जाता है। यह सुरक्षा तकनीक उच्च स्तर की सुरक्षा प्रदान करती है जो भविष्य में सायबर सुरक्षा का प्रमुख आधार बन सकती है।

भारत में साइबर सुरक्षा की स्थिति – भारत की वर्तमान जनसंख्या 146 करोड़ से अधिक है। इसमें से लगभग 90 करोड़ से अधिक व्यक्ति इंटरनेट का उपयोग करते हैं। ऐसे में इतनी बड़ी संख्या के उपयोगकर्ताओं की साइबर सुरक्षा एक बड़ी चुनौती है। विश्व में साइबर सुरक्षा के लिए किये जा रहे प्रयास तो भारत में किये ही जा रहे हैं, साथ ही यहाँ की परिस्थिति अनुसार कुछ अतिरिक्त प्रयास भी भारत सरकार द्वारा किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं–

(1) **राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति (2013)**– सायबर सुरक्षा की चुनौती से निपटने के लिए राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति (2013) बनायी गयी है जिसका उद्देश्य उपयोगकर्ताओं के लिए एक सुरक्षित साइबर परिस्थिति के तंत्र का विकास करना है।

(2) **इंडियन कम्प्यूटर इमरजेंसी रिस्पॉन्स टीम (CERT- In)** – यह संगठन साइबर हमलों की समय पर सूचना उपलब्ध कराने, उनकी रोकथाम करने ओर त्वरित, उचित प्रतिक्रिया करने के लिए बनाया गया है।

(3) **डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन एक्ट 2023** –देश के नागरिकों के व्यक्तिगत डेटा को सुरक्षा प्रदान करने के लिए इस अधिनियम के द्वारा कानूनी प्रावधान किये गये हैं।

(4) राष्ट्रीय साइबर समन्वय केन्द्र NCCC – साइबर सुरक्षा को और सुदृढ़ करने के लिए उक्त केन्द्र का निर्माण किया गया जिसका मुख्य कार्य नेटवर्क ट्रैफिक की निगरानी और विश्लेषण करने में सहायता प्रदान करना है।

साइबर अपराधों के मुख्य कारण – लगातार अनेक प्रयासों के बावजूद भारत में साइबर अपराधों में लगातार वृद्धि हो रही है। NCRB की 2024 की रिपोर्ट अनुसार पिछले पाँच वर्षों में साइबर अपराधों में लगभग तीन गुना की वृद्धि हुई है। इसके प्रमुख कारण निम्नानुसार हैं –

1. **जागरूकता की कमी**– हमारे देश के अधिकांश उपयोगकर्ता तकनीकी रूप से जागरूक नहीं है। उन्हें यह पता नहीं होता कि साइबर सुरक्षा के लिए क्या-क्या आवश्यक कदम उठाने चाहिए। इस कारण वे आसानी से साइबर अपराधियों के शिकार बन जाते हैं।

2. **तकनीकी असमानता**– हमारे देश की बहुत बड़ी जनसंख्या आज भी गाँवों में निवास करती है जो साइबर सुरक्षा की जानकारी में काफी पीछे है जबकि शहरी क्षेत्रों में अपेक्षाकृत जागरूकता बढ़ी है।

3. **विदेशी हमले**– हमारे देश में कई बार साइबर हमले विदेशी धरती से संचालित होते हैं जिन्हें ट्रैक करना और रोकना अधिक कठिन हो जाता है।

4. **कानूनी जटिलताएँ** –यद्यपि भारत में साइबर सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए कई कानूनी प्रावधान किये गये हैं लेकिन अभी भी साइबर अपराधों की जाँच करना और तकनीकी प्रमाण जुटाना काफी दुष्कर है जिसका लाभ अपराधी उठा लेते हैं।

5. **तेजी से बदलती तकनीक** – इंटरनेट के क्षेत्र में बड़ी तेजी से नई-नई तकनीकों का विकास हो रहा है। जब तक उपयोगकर्ता साइबर अपराधों से बचाव को समझ पाता है, तब तक अपराधी अपराध की नई तकनीक खोज लेते हैं।

साइबर सुरक्षा को सशक्त बनाने के उपाय – साइबर अपराधों के बढ़ते खतरे से निपटने के लिए वर्तमान समय में Zero Trust Architecture को अपनाने पर जोर दिया जा रहा है। जिसमें किसी भी उपयोगकर्ता या उपकरण पर बिना सत्यापन के भरोसा नहीं किया जाता है। इसलिए सभी का सत्यापन आवश्यक है। साथ ही व्यावहारिक विश्लेषण Behavioral Analytics एवं खतरा खुफिया प्लेटफार्म Threat Intelligence Platforms का उपयोग करके सुरक्षा प्रणालियों को और अत्याधुनिक और मजबूत बनाया जा रहा है।

भारतीय रिजर्व बैंक ने डिजिटल भुगतान की सुरक्षा के लिए ओबड्समैन स्कीम लागू की है। गृह मंत्रालय ने साइबर स्वच्छ केन्द्र की स्थापना की है जो हानिकारक साफ्टवेयर की पहचान अधिक सटीक तरीकों से करता है।

साइबर सुरक्षा के लिए उठाये उपरोक्त कदमों के साथ-साथ निम्नांकित दिशा में भी तेजी से कार्य करने की आवश्यकता है।

1. **शिक्षा और प्रशिक्षण** – साइबर सुरक्षा की शिक्षा और प्रशिक्षण पर और अधिक बल देना होगा। शिक्षण संस्थाओं में साइबर सुरक्षा को पाठ्यक्रम में शामिल करना चाहिए।

2. **सार्वजनिक जागरूकता** – नागरिकों को इस दिशा में और अधिक जागरूक करने की आवश्यकता है। उन्हें पासवर्ड के सही उपयोग, दो स्तरीय सत्यापन ओर फिशिंग से बचने के उपायों की जानकारी निरन्तर देना आवश्यक है।

3. **नवाचार को प्रोत्साहन** – साइबर अपराधी नित नये तरीकों का उपयोग साइबर ठगी के लिए करते हैं। उनसे सुरक्षा के लिए भारतीय एजेंसियों और स्टार्टअप्स को नयी-नयी सुरक्षा तकनीकें विकसित करने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए।

4. **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग**– साइबर अपराध आज विश्वव्यापी हो गये हैं। वे किसी भी देश की सीमा के बाहर से ही बड़े आराम से अपराध करते हैं। अत: इनसे निपटने के लिए वैश्विक स्तर पर सहयोग कर डेटा साझाकरण किया जाना चाहिए। साथ ही सुरक्षा एजेंसियों को भी वैश्विक स्तर पर एक दूसरे का सहयोग करना चाहिए।

भविष्य की दिशा - भविष्य में इंटरनेट का उपयोग बहुत तेजी से बढ़ने वाला है। धीरे-धीरे लगभग सभी कार्य ऑफलाइन मोड से ऑनलाइन मोड पर शिफ्ट हो जायेंगे। इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IOT) 5G नेटवर्क और कम्प्यूटर तथा स्मार्ट डिवाइस की संख्या में तेजी से वृद्धि होगी। इसके साथ ही साइबर अपराधों का खतरा भी बढ़ेगा। जिससे बचने के लिए साइबर सुरक्षा को एक निरन्तर प्रक्रिया के रूप में सक्रिय करना पड़ेगा तथा तकनीकी सुधार के साथ-साथ उपयोगकर्ताओं को भी निरन्तर जागरूक और सतर्क रहना होगा।

निष्कर्ष - वर्तमान काल में इंटरनेट का व्यापक प्रयोग सभी क्षेत्रों में किया जा रहा है। भारत जैसे देश में एक विशाल जनसंख्या इसका उपयोग कर रही है। आधुनिक तकनीक ने कई कार्यो को बहुत आसान और आम जनता के लिए सुलभ बना दिया है। किन्तु इंटरनेट के उपयोग ने सुविधा के साथ-साथ कई समस्याओं को भी जन्म दिया है। साइबर अपराधियों ने इंटरनेट का दुरूपयोग करके कई बड़ी-बड़ी घटनाओं को अंजाम दिया है। व्यक्तियों को हानि पहुँचाने के साथ कई बड़ी-बड़ी कम्पनियों तथा कई बार तो देशों को भी अपराधियों ने अपनी ठगी का शिकार बनाया है। ऐसे में आवश्यकता इस बात की है कि साइबर अपराधों को रोकने के लिए मजबूत अधोसंरचना का निर्माण किया जाये। सभी नागरिकों को निरन्तर जागरूक किया जाए। सभी की सामूहिक जिम्मेदारी और नीति निर्माण का संतुलन ही साइबर सुरक्षा को पर्याप्त सुदृढ़ करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति, भारत सरकार (2013)
2. CERT- In वार्षिक रिपोर्ट, 2024
3. डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन एक्ट 2023
4. नासकॉम और डेलॉइट, भारत में साइबर सुरक्षा की स्थिति रिपोर्ट 2024
5. आर.के. शर्मा, साइबर अपराध और विधिक प्रावधान, नई दिल्ली : प्रकाश पब्लिशिंग,2022

****

विधि के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण एवं इससे जुड़ी स्वदेशी ज्ञान परंपराऐं

गरीमा राठौर*

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय विधि महाविद्यालय, अशोकनगर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – पर्यावरण यानि हमारे चारों और मौजूद ऐसा वातावरण जिसमें मनुष्य, जीव, जन्तु और वनस्पति जो कि एक दूसरे पर आश्रित हैं। पर्यावरण की रक्षा अनंत काल से वेदों, पुराणों और उपनिषदों में की गई है भारतीय ज्ञान परम्पराओं के अन्तर्गत व्यक्ति को हमेशा पर्यावरण संरक्षण के लिए आधार माना गया है। प्राचीन काल में व्यक्ति की दिनचर्या में पर्यावरण संरक्षण को कार्य एवं पर्यावरण संरक्षण को एक विचार माना गया। जिससे व्यक्ति एक स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सके और स्वस्थ शरीर एवं स्वास्थ मन के लिए हमारे चारों ओर का वातावरण भी अच्छा होना चाहिए। इसलिए भारतीय ज्ञान परम्पराओं के द्वारा व्यक्ति को पर्यावरण संरक्षण से कई प्रकार से जोड़ा गया। जैसे-जैसे समय बीतता गया पर्यावरण संरक्षण में जब व्यक्ति के द्वारा स्वदेशी परम्पराऐं तोड़ी जाने लगी तो पर्यावरण विधि का जन्म पर्यावरण के लिए एक कारगर हथियार साबित हुआ। जिससे व्यक्ति को पर्यावरण के प्रति जागरूक किया जा सके। इसलिए पर्यावरण संरक्षण के लिए विधि की उपयोगिता और भारतीय ज्ञान परम्पराओं दोनो का महत्त्व सर्वोपरि है। हम अपने इस शोध में दानों का ही अध्ययन करेंगे।

शब्द कुंजी – पर्यावरण, विधि, कानून, नियम, संरक्षण, संस्कृति, वातावरण, व्यक्ति, परंपराऐं, प्राचीन।

प्रस्तावना – 'भारतीय परम्परा ही हमारा विचार है।
इसी से ही होता पर्यावरण संरक्षण का विस्तार है।
प्राचीन से लेकर वर्तमान तक
हम ऐसी परम्पराऐं निभाऐंगे
कि पर्यावरण विधि के रूप
पर्यावरण को बचाऐंगे'

पर्यावरण संरक्षण क्यू है ?

पर्यावरण के शब्द में यह ध्वनि होता है कि 'परि' एवं 'आवरण' से मिलकर 'पर्यावरण' शब्द का जन्म हुआ। 'परि' अर्थात् चारों ओर एवं आवरण यानि घेरा। मतलब पर्यावरण प्रकृति की ऐसी संरचना है, जो कि हमारे चारों तरफ एक आवरण की तरह है। इसके अन्तार्गत जैविक और अजैविक यानि मृदा, जल, वायु तथा रसायन, पौधे, पशु तथा सूक्ष्मय जीवाणु आते है और इन्हीग सभी चीजों के संरक्षण को जो स्थलमण्डल, वायुमण्डल एवं जलमण्डल से मिलकर बना है, इसी को पर्यावरण संरक्षण कहा जाता है। इसी के अन्तर्गत विधिक पर्यावरण की बात की जाए, तो विधिक पर्यावरण का आशय उन कानूनों, नियमों, विनियमों और नीतियों से है जो कि किसी देश, राज्य या समाज में व्यवसायिक गतिविधियों, व्यक्तिगत व्यवहार और सामाजिक संबंधों को नियंत्रित करता है।

'हम सब मिलकर पर्यावरण से हाथ मिलाऐंगे
हर रोज अपना कुछ समय पर्यावरण संरक्षण में लगाऐंगे'

पर्यावरण संरक्षण वर्तमान के साथ प्राचीन भारत से भी एक गंभीर विषय रहा है यदि हर व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण के लिए अपना कुछ समय देता है, तो हम धीरे-धीरे सतत् प्रयास के द्वारा पर्यावरण के लिए एक अच्छे साधनों को खोज पाऐंगे। प्रति व्योक्ति का यह कर्त्तव्य है, कि पर्यावरण संरक्षण के लिए अपने स्तर पर प्रयास करें क्योंकि व्यक्ति से ही समाज बनता है और समाज से राज्य और राज्यों से देश का निर्माण होता है। हर स्तर पर इसकी भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण है। छोटे-छोटे प्रयासों के द्वारा व्यक्ति जागरुकता के साथ पर्यावरण संरक्षण कर सकता है। पर्यावरण संरक्षण आज की दुनिया का गंभीर एवं महत्त्वपूर्ण विषय है। पर्यावरण संरक्षण के लिए बड़े स्तर पर प्रयास के साथ छोटे-छोटे स्तर पर भी प्रयास किया जाना चाहिये। पर्यावरण संरक्षण सिर्फ मनुष्य जाति के विकास के लिए ही नहीं बल्कि हर प्रकार के जीव जन्तु और वनस्पति के लिए भी अत्यंत आवश्यक है क्योंकि हम सभी एक आवरण में बंधे हुए हैं। हमारे लिए एक दूसरे के साथ पर्यावरण में रहना आवश्यक है, जिससे कि पारिस्थिति के अनुकूल हो।

आज के इस विषय में पर्यावरण संरक्षण भारत के पुनरुत्थान के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय है। भारत में हजारों प्रकार के जीव जन्तु एवं वनस्पति है, जिसके लिए पर्यावरण को समय-समय पर संरक्षित किया गया है। भारत का विकास मनुष्य के द्वारा और मनुष्य के स्वस्थ मन एवं शरीर का विकास पूर्णत: पर्यावरण पर निर्भर है।

पर्यावरण संरक्षण से जुड़ी विधियों – पर्यावरण को बचाना न सिर्फ हमारी नैतिक जिम्मेदारी है, बल्कि यह हमारी विधिक जिम्मेदारी भी हो गई है। भारत हमारा पहला देश है, जिसने पर्यावरण संरक्षण को भारत में संविधान के अंतर्गत मूलभूत कर्तव्य में शामिल किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 48 ए में यह प्रावधान है, कि राज्य देश के पर्यावरण संरक्षण तथा सुधार और वनों तथा वन्य जीवन की रक्षा करने का प्रयास करेगा।

वहीं अगर भारतीय संविधान के अंतर्गत मौलिक कर्तव्य की बात की जाए तो अनुच्छेद 51 ए यह कहता है, कि भारत के हर नागरिक का एक कर्तव्य होगा, कि वह नदियों तथा वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण

सुधार करें और सभी सजीव प्राणियों के प्रति करुणा का भाव रखें।

पर्यावरण संरक्षण को एक वैश्विक समस्या मानी गई है और एक जिम्मेदारी भी मानी गई है। पर्यावरण से जुड़ी वैश्विक चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए 1972 में स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण के संबंध में संयुक्त सम्मेलन हुआ, जिसमें 113 देशों ने भाग लिया।

इसके आगे अगर भारतीय संविधान की बात की जाए तो संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के अंतर्गत भी पर्यावरण में काफी चीजों को बताया गया है। जैसे कि संघ सूची के 56 वां शीर्षक अंतरराष्ट्रीय नदियों और नदी घाटियों के निर्माण से संबंधित है, वही 57 वां शीर्षक राज्य क्षेत्रीय सागर खंड में मछली पकड़ने से संबंधित है, वही हम राज्य सूची के विषय की अगर बात करते हैं, तो 14 वां शीर्षक में कृषि कीड़े सुरक्षा पौधों की बीमारियों को बताया गया है, 17वीं शीर्षक में जलप्रपात, सिंचाई नहर, जल विकास गठबंधन आदि चीजों को बताया गया है। समवर्ती सूची की अगर बात करें तो 17 ए में वनों को स्थान दिया गया है, 17बी के अंतर्गत वन्य पशु एवं पक्षियों को संरक्षण प्रदान किया गया है।

पर्यावरण और कानून का संबंध बहुत ही पुराना है। पर्यावरण के लिए पहले भी स्वतंत्रता से पूर्व कई नियम बनाए गए थे और उसके बाद भी गए कानून बनाए गए इनमें से एक कानून पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 है, जो कि वर्ष 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन के बाद भारत में यही नियम लागू किया गया। इसमें पर्यावरण से जुड़ी हर चीजों को लाया गया। इसकी सबसे खास बात यह है कि कोई भी व्यक्ति अधिनियम का अगर उल्लंघन करता है तो उसके विरुद्ध मुकदमा लाया जा सकता है और सक्षम अधिकारी को भी सूचित किया जा सकता है।

वहीं पर्यावरण संरक्षण में अगर हम बात करें तो वायु प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण अधिनियम 1981 लाया गया जो की वायु प्रदूषण से संबंधित था। जिनमें कंपनियों द्वारा जो वायु प्रदूषण फैलाया जाता है या गाड़ियों को इसमें शामिल किया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत धारा 20 के तहत मोटर वाहन रजिस्ट्रेशन प्राधिकारी राज्य सरकार को यह अधिकार है कि वह मोटर वाहनों से निकलने वाले खतरनाक पदार्थों को नियंत्रित करें।

वहीं पर्यावरण संरक्षण में अगर बात करें तो वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम 1972 लाया गया जिसके अंतर्गत जंगली जानवरों को संरक्षण प्रदान किया गया और राष्ट्रीय उद्यानों और राष्ट्रीय पार्क को अभ्यारण की देखभाल की गई और इसके अंदर रहने वाले जीव जंतुओं को सुरक्षा प्रदान की गई और उनके लिए कड़े से कड़े कानून बनाए गए।

पर्यावरण संरक्षण के लिए जल प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण अधिनियम 1974 भी लाया गया, जिसमें जल के भौतिक रासायनिक अथवा जैविक गुना को किसी भी प्रकार के द्रव गैस पदार्थों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होने वाली अशुद्धियां सभी को ध्यान रखा गया और यह देखा गया कि क्या जल प्रदूषण किसके द्वारा फैलाया जा रहा है और उसके लिए एक दंड की व्यवस्था भी की गई।

पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्यावरण से संबंधित विवादों को निपटागन के लिए राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण की स्थापना की गई इस नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल भी कहा जाता है इसका मुख्यालय भोपाल बनाया गया।

पर्यावरण संरक्षण एवं भारतीय ज्ञान परम्पीराऐं – पर्यावरण संरक्षण एवं भारतीय ज्ञान परंपराएं का संबंध एक दूसरे से बहुत ही अटूट है। यदि हम पर्यावरण की संरक्षण के लिए मानव जाति की बात करें, तो यह मानव जाति प्राचीन काल से आज वर्तमान तक पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य कर रही है। यह पर्यावरण संरक्षण कहीं वेदों, उपनिषदों और यजुर्वेदों, रामायण काल आदि युगों में रहा है। प्रकृति मनुष्य की परंपरा ही नहीं बल्कि संस्कृति भी है, जो कि हमारी रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी रीति रिवाज में शामिल हो गई है। जैसे तुलसी विवाह, आम के वृक्ष की पूजा, आंवला नवमी जिसमें आंवला वृक्ष की पूजा की जाती है, आदि सभी रीति रिवाज न सिर्फ हमें मन और तन की ताजगी देते हैं, बल्कि प्रकृति की संरक्षण में भी मदद करते हैं। हमने इतिहास के पन्नों को भी देखा कहीं ना कहीं पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण हमारा सकारात्मक ही मिला है। सिंधु सभ्यता के युग में आर्यों की जीवन शैली ने पर्यावरण प्रेम को दर्शाया है। वह विशेष रूप से वृक्ष पूजा करते थे। आर्यों के द्वारा प्रारंभ की गई यह प्रक्रिया एवं परंपरा बाद में भी जीवित रही। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अभ्यारण की पांच श्रेणियां होती थी, चंद्रगुप्त के समय वन की भी सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था, सम्राट अशोक के शासनकाल में सर्वप्रथम वन्य जीवों के संरक्षण हेतु नियम बनाए गए थे और उसके पश्चात भी सिलसिला चलता ही रहा।

भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण को अत्यधिक महत्व दिया गया है, जहां वेदों और उपनिषदों की बात की जाती है, वही साधु संतों के द्वारा पर्यावरण से जुड़ी बातें मिलती हैं। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण के लिए कई प्रथाओं का जन्म हुआ कई प्रथाएं पुरानी थी और साथ में कहीं रीति रिवाज भी पर्यावरण संरक्षण से जुड़े हुए हैं। जैसे कि हम आपको बताएं कि मानव जाति के लिए हर त्यौहार कहीं ना कहीं पर्यावरण के संरक्षण को दर्शाता है। वेदों में पर्यावरण के महत्व उनकी रक्षा के प्रति जागरूकता को दर्शाया गया है। वह हमारे लिए एक बहुत बड़ा आधार है, कि प्राचीन काल में हमारी शिक्षा इन वेदों पर ही निर्भर थी। हमारी शिक्षा के अंतर्गत वेदों के द्वारा हमें पर्यावरण की सुरक्षा के नियम बताए गए थे। वेदों में वायु को प्राण वायु कहा गया है और वायु संरक्षण की बात बताई गई है, इसलिए वेदों में अंतरिक्ष में आने वाली पराबैंगनी एवं अन्य जहरीली गैस से पृथ्वी को कैसे बचाया जा सकता है, कहीं ना कहीं इनका भी उल्लेख मिलता है। वेद हमारे लिए एक महत्वपूर्ण आधार है।

भारतीय संस्कृति में वृक्षों को पूज्य माना गया है। जैसे कि हम कहें तो पीपल का पेड़ जिनकी पूजा की जाती है, वट वृक्ष, तुलसी का पेड़, बीलपत्र जो की शिवजी को चढ़ाए जाते हैं, जिससे कि अन्य और भी वृक्ष है, जैसे आंवले का वृक्ष इन सभी वृक्षों की पूजा की जाती है, साथ ही जलवायु अग्नि इनको भी देवता स्वरूप माना गया है। समुद्र और नदी का भी पूजन करने का रिवाज प्राचीन काल से ही हमारे भारत में माना गया है। नदियों की पूजा हम इसलिए किया करते हैं क्योंकि नदियों का स्वच्छ पानी हमें पीने के काम और खेती करने के काम में आता है, इसलिए नदियों को स्वच्छ रखना हमारा दायित्व है इसलिए नदियों की पूजा हम करते हैं। जैसे की नदियों में गंगा, सिंधु, सरस्वती, यमुना, गोदावरी, नर्मदा आदि नदियां हैं, जिनका उल्लेख हमें आर्यों के काल में भी देखने को मिलता है। इन्हीं सब की पूजा की जाती है। धरती को भी धरती माता का दर्जा दिया गया है, जिससे कि व्यक्ति जहां रह रहा है वहां को स्वच्छ रखें। पुराने काल में जब व्यक्ति गुरुकुल में पढ़ाई किया करते थे, तो वह अपनी रोज दिनचर्या का कुछ समय पर्यावरण संरक्षण को दिया करते थे। पर्यावरण संरक्षण का पाठ इसलिए उन्हें पढ़ाया जाता था जिससे कि व्यक्ति अपने आसपास के वातावरण को स्वच्छ रख सके और सकारात्मक सोच का जन्म हो सके क्योंकि ऐसा माना जाता है कि अगर हम

अपने आसपास का वातावरण प्रदूषित रखते हैं, तो हमारे मन में विचार भी प्रदूषित ही आते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा को पर्यावरण से जोड़ने के लिए यह बहुत ही आवश्यक है, कि हम कुछ ऐसे कार्य करें जिससे हमारे भारतीय ज्ञान परंपरा को एक नई दिशा मिल सके। जैसे कि हमें वृक्षारोपण लगातार करते रहना चाहिए, प्रकृति मैं वन संरक्षण करते रहना चाहिए, पर्यावरण के लिए जागरूकता फैलानी चाहिए, स्कूल के स्तर पर बच्चों के क्लासेस में पर्यावरण संरक्षण को लेकर हमेशा एक विषय होना चाहिए, पर्यावरण दिवस के अंतर्गत हमें हर साल कार्यक्रम आयोजित करवाने चाहिए।

प्राचीन भारतीय परम्पराओं में पर्यावरण संरक्षण – प्राचीन भारतीय परम्पराओं में पर्यावरण संरक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण बुनियाद भारत के तपस्वियों, ऋषियों, मुनियों द्वारा रखी गई और इन्हें समय समय पर आगे हमारे राजाओं और सम्राटों के द्वारा बढ़ाया गया। प्रकृति हमारे लिए पूजनीय थी। प्राचीन काल से आज भी कई जगहों पर प्रकृति को देवता और उससे जुड़ी चीजों की पूजा की जाती है क्यों कि उनका मानना है कि यही हमारे जीवन को संरक्षित करती है। हमने स्वयं को प्रकृति व पर्यावरण का हिस्सा माना और परंपराओं के विकास के साथ सूर्य, जल, पर्वत, सागर, नदियों, पेड़–पौधे, जीव–जन्तु एवं वनस्पतियों आदि को पूज्य, माना है। हमारी लोक संस्कृति एवं तीज – त्यौहार एवं हर चीज में पर्यावरण की झलक देखने को मिलती है, जैसे :–

- हमारे यहां बसंत महोत्सव जिसे ऋतुओं का राजा कहते हैं।
- हमारे यहां वेदों में पर्यावरण संरक्षण एवं सिद्धांत पाए जाते हैं।

'प्रकृति रक्षति रक्षिता'

- अथर्ववेद के अन्तकर्गत भूमिसूक्तव में

अरण्यंर ते पृथिवी स्योरनमस्तुं
मातरम् औषधीनाम
मा ते मर्म विमृग्वपरि मा ते हृदयमर्पितम्।

(अर्थात् है भूमि, तेरे वन हमारे लिए सुखदायी हो। भूमि तेरे वृक्षों को मैं इस तरह काटूं कि वे शीघ्र ही पुन: अंकुरित हो जाए। भूमि को औषधियों की माता माना गया है।)

- राजस्थान के बिस्नोंई समाज के द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए किए गए कार्य सराहनीय हैं।
- पर्यावरण संरक्षण के अन्तोर्गत प्राचीन काल की परम्पराओं में जैव विविधता देखी गई है, जिसके अन्तरर्गत जीव जन्तुत का संरक्षण भी सर्वोपरि माना गया है। भारत के आदिवासी क्षेत्रों में जीव जन्तुत, वृक्ष एवं वनस्पति को आज भी पूजा जाता है।
- हमारे भारतीय दर्शन में पर्यावरण को ईश्वर के प्रतिरूप के रूप में सम्मानित व संरक्षणीय माना गया है और तैत्तरीयोपनिषद में कहा गया है 'ईश्वरीय आत्मा से आकाश की, आकाश से वायु की, वायु से अग्नि की और अग्नि से जल तथा जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। पृथ्वी ने वनस्पति उपजाई, अन्न दिया और मानव जाति सहित असंख्य जीव जन्तु को पैदा किया। इस सृष्टि में प्रत्येक जीव जंतु की अहम भूमिका है।
- पर्यावरण संरक्षण के प्रति हम प्राचीनकाल से अत्यंत सजग और चेतन रहें। इस संदर्भ में यजुर्वेद की इन पंक्तियों का उल्लेख आवश्यक है।

'वनाना पतये नम'
वृक्षाणां पतये नम'
औषधीनां पतये नम'
अरण्यांनां पतये नम'

ऋषि मुनियों के द्वारा भी समय समय पर पर्यावरण को एक शांति एवं विकास का प्रतीक बताया गया है। कहा जाता है जहाँ पर पर्यावरण संरक्षण होता है वहाँ मनुष्य का विकास निरंतर होता है, वहाँ वायु, जल और स्थल इतने स्वच्छ होते हैं कि वह व्यक्ति को सकारात्मक सोच का प्रादुर्भाव होता है जिससे व्यक्ति निरंतर विकास की ओर अग्रसर होता है। पर्यावरण संरक्षण आज से नहीं बल्कि प्राचीन काल से ही व्यक्तियों के द्वारा किया जा रहा है। जो कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक पूजा के रूप में या कार्य का एक भाग होता था जिससे उन्हें जीवन में जीने के लिए एक स्वच्छ वातावरण मिले।

निष्कर्ष – पर्यावरण में रह रहे मनुष्य के लिए पर्यावरण संरक्षण एक गंभीर मुद्दा है। यदि हमने पर्यावरण को संरक्षण प्रदान नहीं किया, तो हम मनुष्य को भी संरक्षण प्रदान नहीं कर पाएंगे। आने वाली परिस्थितियों के लिए मनुष्य ही जिम्मेदार होगा। प्राचीन ज्ञान परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण को लेकर जो नियम बनाए गए थे, यह सिद्धांत थे, पर बहुत ही प्रभावशाली थे। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ना शुरू हो गई और व्यक्ति सकारात्मक सोच की बजाय नकारात्मकता की ओर अग्रसर होने लगा, वहां पर पर्यावरण संरक्षण की जगह पर्यावरण का दोहन होने लगा।

भारत के पुनरुत्थान के लिए पर्यावरण का विषय एक बहुत ही अच्छा विषय है। यह विधि के अंतर्गत पर्यावरण संरक्षण कैसे किया जाता है और इसमें स्वदेशी ज्ञान परंपराओं की भूमिका किस प्रकार है। यदि हम एक विकसित भारत की कल्पना करते हैं, तो हमारे लिए मानव जाति के विकास के लिए पर्यावरण का संरक्षण बीच महत्वपूर्ण विषय है। पर्यावरण संरक्षण पुराने काल में कुछ ऐसी परंपराओं के साथ किया जाता था, कि उसका केंद्र बिंदु मनुष्य के साथ जीव जंतु वनस्पति की रक्षा करना होता था। इसलिए भारत के पूर्व स्थान के लिए अत्यधिक आवश्यक है, की विधि के साथ पर्यावरण संरक्षण एवं स्वदेशी ज्ञान परंपराओं का भी ध्यान रखा जाए। क्योंकि मानव जाति के विकास के साथ ही देश यानी भारत का विकास सुनिश्चित है और मानव जाति के लिए उसके पद पद पर विकास के लिए पर्यावरण संरक्षण एक आवश्यक प्रक्रिया है। जो कि स्वस्थ मन के साथ स्वस्थ मनुष्य को जन्म देती है, जिससे व्यक्ति बेहतर तरीके से भारत के पूर्व स्थान में योगदान देगा। जल, जीवन, मनुष्य, वनस्पति यह सब पर्यावरण संरक्षण का एक भाग है, जिससे निश्चित ही भारत का पुनरुत्थान होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी (परीक्षा मंथन : अनिल अग्रवाल)
2. पर्यावरणीय विधि (चुनौतियाँ, विश्लेषण और भविष्य : अनूप कुमार और प्रो. बी.सी. निर्मल)
3. पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण विधि की रूपरेखा (डा. अनिरूद्ध प्रसाद)
4. पर्यावरण अध्ययन (मोतीलाल बनारसीदास)
5. पर्यावरण एवं पारिस्थिति (माजिद हुसैन)
6. इंटरनेट
7. न्यूजपेपर लेख जनसत्ता (पर्यावरण की खातिर)
8. पर्यावरण : भारत सरकार (पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय नई दिल्ली : लेखक आर. के. गुप्ता, ऋचा शर्मा)
9. ENN : Environment News Network
10. पर्यावरण पत्रिका : पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की हिन्दी पत्रिका

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Study of the Role of FMCG Companies in the Development of the Rural Economy

Nitin Karoliya* Dr. Rishi Sharma**

***Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**
**** Associate Professor, SIRT-E, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract: The Fast-Moving Consumer Goods (FMCG) sector is one of the largest contributors to the Indian economy and has a significant influence on rural development. This study analyses how FMCG companies support the growth of the rural economy through employment generation, market expansion, supply chain development, improved standards of living, and empowerment of rural consumers. The paper explores major initiatives, challenges, and opportunities faced by FMCG firms in rural India. It also highlights the role of government policies and digital technologies in improving rural penetration. Findings indicate that FMCG companies have become a major driver of economic activity in rural areas by creating jobs, improving income stability, promoting entrepreneurship, and ensuring access to essential goods.
Keywords: Entrepreneurship, Govtpolicises, Economy, Challenges, Supply Chain management.

Introduction - India's rural population accounts for nearly 65% of the total population, making the rural economy a critical foundation of national development. The FMCG industry, which includes daily-use products such as food, beverages, personal care, and household items, plays a crucial role in shaping economic growth in rural India. Over the last two decades, the sector has witnessed rapid expansion in rural markets due to rising incomes, better connectivity, and increasing awareness among rural consumers. This paper studies the various ways in which FMCG companies contribute to rural economic development and identifies the challenges and future opportunities.

Review of Literature

Several studies have highlighted the importance of rural markets for FMCG companies:

1. **Nielsen Report (2022)** stated that rural FMCG consumption is growing faster than urban consumption because of increasing purchasing power and deeper distribution networks.
2. **McKinsey India (2023)** reported that rural India contributes nearly one-third of total FMCG sales and will drive future growth.
3. **Academic studies** emphasize that FMCG firms help develop rural infrastructure, improve employment opportunities, and increase access to branded and quality products.

Research Objectives:

1. To study the contribution of FMCG companies to rural economic development.
2. To identify key initiatives taken by FMCG firms in rural areas.
3. To understand the impact of FMCG-driven employment and supply chains on rural income.
4. To examine the challenges faced by FMCG companies in expanding in rural markets.
5. To suggest measures to strengthen the role of FMCG firms in supporting rural growth.

Research Methodology:

1. **Type of Research:** Descriptive and analytical
2. **Data Source:** Secondary data from reports, journals, government publications, FMCG annual reports
3. **Data Collection:** Online databases, industry reports (Nielsen, KPMG, McKinsey), and published literature
4. **Scope:** Focus on Indian rural markets and major FMCG companies like Hindustan Unilever Ltd. (HUL), ITC, Nestlé, Dabur, and Patanjali.

Overview of FMCG Sector in India: The FMCG sector is the fourth-largest sector in India. It includes three main categories:

1. **Food and Beverages** – Dairy, snacks, cereals, packaged foods
2. **Personal Care** – Soap, shampoo, cosmetics, hygiene products
3. **Home Care** – Detergents, cleaning products, insecticides

Rural markets contribute nearly 30–35% of the total FMCG revenue, making them a key growth driver.

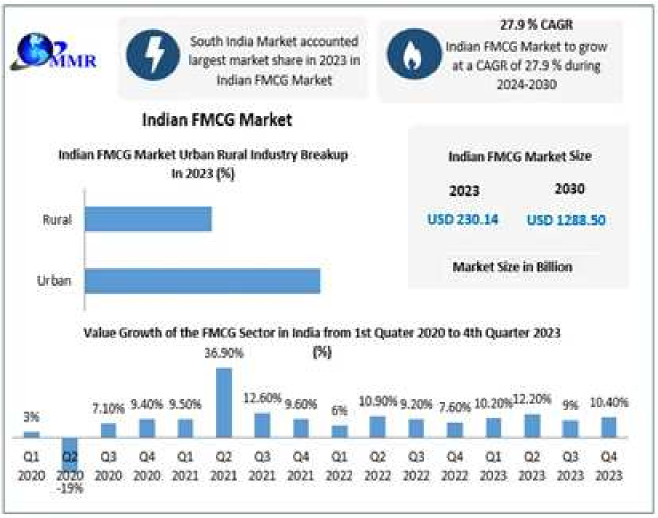

Importance of Rural Economy in India: The rural economy is vital because:

1. It employs more than 50% of India's workforce.
2. Agriculture and allied activities provide livelihoods to millions.
3. Rural consumers are increasingly adopting branded products.
4. Government schemes (Digital India, PMGSY roads, SHGs) have strengthened market access.

Role of FMCG Companies in the Development of the Rural Economy

Employment Generation:

1. FMCG firms create jobs through manufacturing units, distribution networks, and retail markets.
2. Companies like HUL and ITC hire local people as rural sales promoters and distributors.
3. Rural youth gain stable income and skill development opportunities.

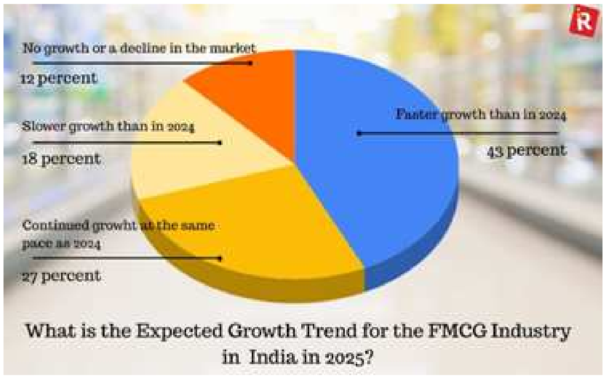

Development of Rural Supply Chains:

1. FMCG companies build storage units, transport networks, warehouses, and last-mile connectivity.
2. This improves the overall infrastructure of rural areas.

Promotion of Rural Entrepreneurship

1. Companies train Self Help Groups (SHGs), women groups, and micro-entrepreneurs.
2. Example: **HUL's Project Shakti** created thousands of women entrepreneurs ("Shakti Ammas").

Increase in Rural Income Levels:

1. Better job opportunities increase disposable income.
2. More income leads to greater spending on education, health, and improved living standards.

Access to Quality Products:

1. Rural consumers get access to good-quality soap, food, hygiene products, and packaged items.
2. Helps improve health and lifestyle.

Digital Inclusion:

1. FMCG companies use digital payments, mobile marketing, and e-commerce in rural regions.
2. Improves digital literacy and rural connectivity.

CSR and Rural Development:

1. FMCG firms invest in healthcare camps, sanitation drives, water conservation projects, and education.
2. Example: ITC's watershed development programme.

Major FMCG Initiatives in Rural India

1. **HUL – Project Shakti:** Women entrepreneurs selling FMCG products in villages.
2. **ITC – e-Choupal:** Digital marketplace for farmers to sell produce directly.
3. **Dabur – Rural Distribution Drive:** Micro-distributors in small villages.
4. **Nestlé – Healthy Kids Programme:** Nutrition awareness initiatives.

Challenges Faced by FMCG Companies in Rural Markets:

1. Poor road connectivity and high transportation cost.
2. Seasonal income patterns affecting purchasing power.
3. Low brand loyalty; consumers prefer cheaper substitutes.
4. Inconsistent electricity and internet access.
5. Cultural differences and diverse consumption habits.
6. Higher cost of distribution in remote areas.

Findings of the Study:

1. Rural India is becoming a major FMCG growth hub.
2. FMCG companies significantly strengthen rural income through jobs and entrepreneurship.
3. Digital and physical infrastructure created by FMCGs improves rural connectivity.
4. Challenges remain, especially in logistics and rural affordability.
5. Long-term collaboration between government and FMCG companies is essential.

Recommendations:

1. Strengthen last-mile distribution through technology and local entrepreneurship.
2. Increase investment in rural infrastructure and warehousing.
3. Offer affordable product variants (sachets, small packs).
4. Expand digital literacy programmes for rural sellers and buyers.
5. Collaborate with SHGs and NGOs for deeper rural engagement.

Conclusion: FMCG companies play a powerful role in boosting the rural economy by generating employment, promoting entrepreneurship, improving supply chains, and supplying essential goods that improve the standard of living. Their initiatives help in reducing rural poverty, strengthening local markets, and motivating skill development among rural youth. Despite challenges, the future of FMCG expansion in rural India is promising because of rising incomes, digitization, and government support. Strengthening the partnership between FMCG firms, rural communities, and policymakers can accelerate the overall development of India's rural economy.

References:-

1. Krishnamurthy, R., &Shrinivasan, K. R. (2020). *Rural marketing: Text and cases*. Pearson.
2. Krishnamacharyulu, C. S. G., & Ramakrishnan, L. (2018). *Rural marketing: A textbook*. Pearson.
3. Kashyap, P. (2019). *Rural marketing: India's changing marketplace*. Sage Publications.
4. Kotler, P., & Armstrong, G. (2021). *Principles of marketing*. Pearson.
5. Ramaswamy, V. S., &Namakumari, S. (2020). *Marketing management*. McGraw-Hill Education.
6. Gupta, S. L. (2017). *Rural marketing*. Sultan Chand & Sons.
7. Indian Journal of Marketing. (2022). FMCG penetration in rural markets: Trends and opportunities.
8. International Journal of Research in Commerce & Management. (2021). Impact of FMCG companies in rural development.
9. Journal of Rural Development. (2020). Rural income and consumption behaviour in India. National Institute of Rural Development.
10. Economic & Political Weekly. (2023). Rural consumer behaviour and FMCG demand patterns.
11. International Journal of Business and Management Research. (2021). Rural consumer behaviour in India.
12. Asian Journal of Management Research. (2022). Rural marketing strategies of Indian FMCG companies.
13. Government of India. Ministry of Rural Development. (2023). *Annual report*. https://rural.nic.in
14. Government of India. Ministry of Finance. (2024). *Economic survey of India*. https://indiabudget.gov.in
15. National Sample Survey Office. (2021). *Household consumption expenditure survey*. Ministry of Statistics and Programme Implementation.
16. NITI Aayog. (2023). *Digital inclusion and rural development report*.
17. Reserve Bank of India. (2023). *Annual report*. https://rbi.org.in
18. Hindustan Unilever Limited. (2023). *Annual report 2022–23*. https://hul.co.in
19. ITC Limited. (2023). *Annual report 2022–23*. https://itcportal.com
20. Nestlé India. (2023). *Sustainability and nutrition initiatives report*. https://nestle.in
21. Dabur India Ltd. (2023). *Annual report 2022–23*. https://dabur.com
22. PatanjaliAyurved. (2023). *Annual report*. https://patanjaliayurved.org
23. KPMG India. (2023). *Indian FMCG sector report*. https://kpmg.com/in
24. Deloitte. (2024). *Consumer industry insights: FMCG in rural India*. https://www2.deloitte.com/in
25. PwC India. (2023). *Changing behaviour of rural consumers*. https://pwc.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सिंधु सभ्यता का आर्थिक, शिल्प, व्यापार एवं नगरीय जीवन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

राकेश कुमार जीनगर*

* सहायक आचार्य, आर एन टी कॉलेज, कपासन, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

शोध सारांश – सिंधु सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप की एक अत्यंत प्राचीन और विकसित नगरीय सभ्यता थी, जिसने आर्थिक संगठन, शिल्पकला और व्यापारिक तंत्र के क्षेत्र में विश्व स्तर पर अपनी विशिष्ट पहचान बनाई। यह सभ्यता मुख्यत: सिंधु नदी और उसकी सहायक नदियों के तटवर्ती क्षेत्रों में विकसित हुई थी, जो आज के भारत और पाकिस्तान के विभिन्न भागों में फैली हुई थी। पुरातात्त्विक उत्खननों से प्राप्त साक्ष्यों से यह स्पष्ट होता है कि यहाँ के लोग कृषि, धातु-शिल्प, मिट्टी के बर्तनों, मनके-निर्माण, वस्त्र-उद्योग तथा विदेशी व्यापार में अत्यंत दक्ष थे।

यह अध्ययन सिंधु सभ्यता के आर्थिक, औद्योगिक, शिल्पिक और व्यापारिक तंत्र का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अनुसंधान पद्धति के रूप में ऐतिहासिक तथा वर्णनात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है, जिसमें उत्खननों से प्राप्त भौतिक साक्ष्यों और पूर्ववर्ती शोधों का संकलन व मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि सिंधु सभ्यता के लोग संगठित शहरी जीवन, योजनाबद्ध नगर व्यवस्था और दीर्घ दूरी के व्यापारिक नेटवर्क के माध्यम से एक आत्मनिर्भर एवं समृद्ध अर्थव्यवस्था का निर्माण कर चुके थे।

इसके अतिरिक्त यह सभ्यता केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और तकनीकी दृष्टि से भी उन्नत थी। सिंधु नगरों की जल-निकासी, भवन-निर्माण, सामाजिक समानता और स्वच्छता के सिद्धांत आधुनिक शहरी नियोजन के अग्रदूत सिद्ध होते हैं। इस प्रकार, सिंधु सभ्यता न केवल भारत की आर्थिक-सांस्कृतिक धरोहर है, बल्कि वैश्विक सभ्यताओं के विकास क्रम में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में भी मानी जा सकती है।

शब्द कुंजी – सिंधु सभ्यता, शिल्पकला, उद्योग, व्यापार, नगरीय जीवन, अर्थव्यवस्था, सांस्कृतिक विकास।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के विकास क्रम में सिंधु घाटी सभ्यता वह चरण है जिसने भारत को प्राचीन विश्व की अग्रणी सभ्यताओं की श्रेणी में स्थापित किया। लगभग 3300 ईसा पूर्व से 1750 ईसा पूर्व के बीच विकसित इस सभ्यता ने मानव समाज को शहरी जीवन, तकनीकी दक्षता और संगठित आर्थिक ढाँचे का नया आयाम प्रदान किया। यह सभ्यता सिंधु नदी प्रणाली विशेष रूप से रावी, व्यास, सतलज और घग्गर के किनारों पर विकसित हुई, जहाँ उपजाऊ भूमि और जल की प्रचुरता ने कृषि, उद्योग और व्यापार की नींव रखी।

1921 ई. में हड़प्पा तथा 1922 ई. में मोहनजोदड़ो की खोज ने भारतीय इतिहास में एक नए युग का आरंभ किया। इन स्थलों से प्राप्त अवशेष जैसे – मुहरें, पक्की ईंटों से बने घर, जल निकासी प्रणाली, विशाल स्नानागार और गोदाम यह सिद्ध करते हैं कि सिंधु समाज उच्च शहरी संगठन, तकनीकी क्षमता और सामाजिक अनुशासन का प्रतीक था।

यह सभ्यता केवल भौतिक प्रगति का उदाहरण नहीं, बल्कि सामाजिक समानता, आर्थिक सहयोग और सांस्कृतिक सहिष्णुता की भी प्रतीक रही। यहाँ की नगरीय योजना में किसी एक वर्ग का प्रभुत्व नहीं था, बल्कि सामूहिक भागीदारी का संकेत मिलता है। महिलाओं की सज्जा के लिए गहनों, मनकों और सौंदर्य सामग्री का निर्माण यह दर्शाता है कि शिल्प और कला का महत्तव जीवन के हर स्तर पर था।

सिंधु सभ्यता के अध्ययन की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि यह आधुनिक युग के आर्थिक नियोजन और सतत विकास के लिए ऐतिहासिक दिशा प्रदान करती है। इस सभ्यता की संरचनात्मक विशेषताएँ – जैसे स्वच्छता, संगठन, सामुदायिक जीवन और उत्पादन-वितरण की दक्षता – आज के शहरी विकास के लिए प्रेरक सिद्ध होती हैं।

अत: प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य केवल सिंधु सभ्यता के ऐतिहासिक स्वरूप को रेखांकित करना नहीं, बल्कि उसके आर्थिक, शिल्पिक और व्यापारिक योगदान का विश्लेषण कर यह स्पष्ट करना है कि यह सभ्यता आधुनिक भारतीय अर्थव्यवस्था और शहरी संस्कृति की वैचारिक नींव कैसे बनी।

साहित्य समीक्षा

1. जॉन मार्शल (1924) शोध शीर्षक :'Mohenjo-daro and the Indus Civilization' अपने अध्ययन में मार्शल ने यह सिद्ध किया कि सिंधु सभ्यता विश्व की सर्वप्रथम योजनाबद्ध नगरीय सभ्यताओं में से एक थी। उन्होंने मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के उत्खननों से प्राप्त जल-निकासी प्रणाली, सड़कों की योजना और भवन-निर्माण की तकनीक का विश्लेषण करते हुए कहा कि यह सभ्यता वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यंत उन्नत थी।

2. मोर्टिमर व्हीलर (1950) शोध शीर्षक:'The Indus Valley Civilization' व्हीलर ने सिंधु सभ्यता को 'भारत की प्रथम शहरी क्रांति' कहा। उन्होंने विशेष रूप से नगर नियोजन, दुर्ग क्षेत्र और नागरिक भागों के सामाजिक संगठन पर प्रकाश डाला। उनके अनुसार सिंधु नगर

प्रशासनिक दक्षता और अनुशासन का उदाहरण थे, जहाँ स्वच्छता और जल प्रबंधन का उच्च स्तर था।

3. एस. आर. राव (1985) शोध शीर्षक:'Lothal and the Indus Maritime Trade System' राव ने लोथल की खोज के माध्यम से यह स्थापित किया कि सिंधु सभ्यता समुद्री व्यापार में भी अग्रणी थी। उन्होंने बंदरगाह, गोदाम और मुहरों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि इस सभ्यता के व्यापारी मेसोपोटामिया और सुमेर जैसी विदेशी सभ्यताओं से व्यापारिक संपर्क में थे।

4. ग्रेगरी पोसेहल (1990) शोध शीर्षक:'The Indus Civilization: A Contemporary Perspective' पोसेहल ने सिंधु सभ्यता के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे का विश्लेषण करते हुए बताया कि यह एक संगठित और आत्मनिर्भर आर्थिक तंत्र था। उन्होंने तर्क दिया कि कृषि, उद्योग और व्यापार का समन्वय इस सभ्यता की स्थिरता का प्रमुख कारण था।

5. शिरीन रत्नागर (2001) शोध शीर्षक: 'Understanding Harappa: Civilization in the Greater Indus Valley' रत्नागर ने इस अध्ययन में यह दृष्टिकोण प्रस्तुत किया कि सिंधु सभ्यता का पतन केवल प्राकृतिक आपदाओं के कारण नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं के आंतरिक परिवर्तन से भी संबंधित था। उन्होंने इसे 'परिवर्तनशील आर्थिक समाज' की संज्ञा दी।

6. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (अडख,2015–2020) शोध शीर्षक: 'Excavation Reports of Rakhigarhi, Dholavira and Kalibangan' हाल के उत्खननों से यह सिद्ध हुआ कि सिंधु सभ्यता का विस्तार उत्तर भारत तक था। राखीगढ़ी में मिले आवासीय ढाँचों, धातु-उपकरणों और अनाज भंडारों से यह स्पष्ट हुआ कि सभ्यता की आर्थिक नींव अत्यंत संगठित थी और कृषि पर आधारित थी।

7. डॉ. आर. एस. शर्मा (2018) शोध शीर्षक:'भारतीय आर्थिक इतिहास में सिंधु सभ्यता का योगदान' शर्मा ने अपने अध्ययन में कहा कि सिंधु सभ्यता भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला थी। उन्होंने स्पष्ट किया कि सिंधु समाज की उत्पादन पद्धति, श्रम-विभाजन और शिल्प-उद्योग की परंपराएँ आगे चलकर वैदिक और उत्तरवैदिक समाज में समाहित हो गईं।

समीक्षा-साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न विद्वानों ने सिंधु सभ्यता को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा है कृमार्शल और व्हीलर ने जहाँ इसके नगरीय नियोजन और तकनीकी प्रगति पर बल दिया, वहीं राव और पोसेहल ने इसके आर्थिक और व्यापारिक आयामों पर ध्यान केंद्रित किया।रत्नागर और शर्मा ने सभ्यता के पतन और उसके दीर्घकालिक प्रभावों का विश्लेषण किया। समग्र रूप से ये सभी अध्ययन यह दर्शाते हैं कि सिंधु सभ्यता एक समन्वित आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रणाली थी जिसने भारतीय सभ्यता के विकास की मजबूत नींव रखी।

शोध के उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य सिंधु सभ्यता के आर्थिक, शिल्पिक, व्यापारिक तथा नगरीय जीवन के विविध पहलुओं का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करना है।

इस शोध के विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. सिंधु सभ्यता की आर्थिक संरचना का अध्ययन करना तथा कृषि, उद्योग और व्यापार के बीच परस्पर संबंधों को स्पष्ट करना।
2. शिल्प एवं उद्योगों की प्रकृति, तकनीकी विकास और सामाजिक महत्तव का विश्लेषण करना।
3. नगरीय जीवन की योजनाबद्ध संरचना, प्रशासनिक संगठन और सामाजिक व्यवस्था की व्याख्या करना।
4. सिंधु सभ्यता के विदेशी व्यापारिक संबंधों एवं सांस्कृतिक संपर्कों की पहचान करना।
5. आधुनिक भारत के आर्थिक एवं शहरी विकास में सिंधु सभ्यता की विरासत की प्रासंगिकता को रेखांकित करना।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन निम्न मुख्य परिकल्पनाओं पर आधारित है-

1. सिंधु सभ्यता की अर्थव्यवस्था कृषि, उद्योग और व्यापार के संतुलन पर आधारित थी।
2. इसकी नगरीय योजना और जल-निकासी प्रणाली उस युग की उन्नत तकनीकी दक्षता को दर्शाती है।
3. शिल्प और उद्योग विदेशी व्यापार से जुड़े थे तथा आर्थिक समृद्धि के प्रमुख स्रोत थे।
4. बाहरी सभ्यताओं से संपर्क ने इसके आर्थिक और सांस्कृतिक विकास को गति दी।
5. यह सभ्यता सामाजिक समानता और अनुशासन पर आधारित संगठित शहरी समाज का उदाहरण थी।

न्यादर्श – यह अध्ययन 'ऐतिहासिक-सांस्कृतिक' और 'संरचनात्मक-कार्यात्मक' दृष्टिकोण पर आधारित है। इस वैचारिक ढाँचे के अनुसार, सिंधु सभ्यता का विकास भौगोलिक स्थिति, आर्थिक संसाधन, तकनीकी प्रगति और सामाजिक संगठन के संतुलित समन्वय से हुआ।

शोध में यह मान्यता रखी गई है कि सभ्यता की स्थिरता उसके आर्थिक ढाँचे, शिल्प, उद्योग और व्यापारिक संबंधों की परस्पर निर्भरता पर आधारित थी। अत: यह अध्ययन सिंधु सभ्यता को एक संगठित सामाजिक-आर्थिक प्रणाली के रूप में विश्लेषित करता है, जिसने भारतीय सभ्यता की नींव को स्थायित्व प्रदान किया।

शोध-विधि – इस अध्ययन में ऐतिहासिक-वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध का स्वरूप गुणात्मक है, जिसमें सिंधु सभ्यता के आर्थिक, शिल्पिक, व्यापारिक और नगरीय जीवन का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

डेटा संग्रह हेतु द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है -जैसे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की रिपोर्टें, जॉन मार्शल, मोर्टिमर व्हीलर, एस. आर. राव आदि विद्वानों के ग्रंथ, तथा भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद की प्रकाशन सामग्री।

संग्रहित तथ्यों का गुणात्मक विश्लेषण कर यह समझने का प्रयास किया गया है कि सिंधु सभ्यता का आर्थिक और सामाजिक ढाँचा परस्पर जुड़ा हुआ था। यह अध्ययन प्रत्यक्ष उत्खनन पर नहीं, बल्कि उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों और पूर्ववर्ती अध्ययनों के विश्लेषण पर आधारित है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – सिंधु सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप की प्राचीनतम और सर्वाधिक विकसित सभ्यताओं में से एक थी, जिसने मानव इतिहास को संगठित शहरी जीवन, तकनीकी प्रगति और आर्थिक समृद्धि की दिशा में अग्रसर किया। यह सभ्यता मुख्यत: सिंधु नदी तथा उसकी सहायक नदियोंकृरावी, व्यास, सतलज, घग्गर और हाकराकृके तटवर्ती क्षेत्रों में फली-फूली। वर्तमान में इसका भूगोलिक विस्तार पाकिस्तान के सिंध और पंजाब प्रांत से लेकर भारत के हरियाणा, पंजाब, राजस्थान और गुजरात के

क्षेत्रों तक फैला हुआ था।

सिंधु सभ्यता का ऐतिहासिक उद्भव लगभग 3300 ईसा पूर्व माना जाता है। इसका विकास तीन चरणों में हुआ-'पूर्व-हड़प्पा काल, हड़प्पा काल और उत्तर- हड़प्पा काल।' पूर्व- हड़प्पा काल में ग्राम्य जीवन की झलक मिलती है, जबकि मध्य हड़प्पा काल में सुव्यवस्थित नगरों, ईंटों के घरों, सड़कों और नालियों के माध्यम से यह सभ्यता अपने उत्कर्ष पर पहुँची। उत्तर-हड़प्पा काल में धीरे-धीरे इसका पतन आरंभ हुआ, परंतु इसकी सांस्कृतिक परंपराएँ वैदिक काल तक जीवित रहीं।

1921 ई. में रायबहादुर दयाराम साहनी द्वारा हड़प्पा की खोज और 1922 ई. में राखलदास बनर्जी द्वारा मोहनजोदड़ो के उत्खनन ने भारतीय इतिहास को नया आयाम प्रदान किया। इन खोजों ने यह सिद्ध किया कि भारतीय उपमहाद्वीप में नगरीय सभ्यता का विकास समकालीन मिस्र और मेसोपोटामिया सभ्यताओं के समानांतर हुआ था। तत्पश्चात् लोथल (गुजरात), कालीबंगा (राजस्थान), राखीगढ़ी (हरियाणा), धोलावीरा (कच्छ) और चन्हूदड़ो (सिंध) जैसे स्थलों की खोजों ने इस सभ्यता के व्यापक प्रसार और विविधता को प्रमाणित किया।

इन स्थलों से प्राप्त वस्तुएँ-जैसे पक्की ईंटों से बने मकान, जल-निकासी प्रणाली, विशाल स्नानागार, अनाज भंडार, मनके, धातु उपकरण, मिट्टी के बर्तन और मुहरें-यह संकेत करती हैं कि सिंधु समाज में संगठन, नियोजन और तकनीकी ज्ञान की उच्च अवस्था थी। लोथल में प्राप्त बंदरगाह और मेसोपोटामिया में मिली सिंधु मुहरें इस बात का प्रमाण हैं कि उस समय भारत का व्यापारिक संबंध पश्चिम एशिया की सभ्यताओं से स्थापित था।

सिंधु सभ्यता का आर्थिक जीवन कृषि, उद्योग और व्यापार पर आधारित था। उपजाऊ भूमि, सिंचाई के साधन और व्यापारिक मार्गों की उपलब्धता ने इस सभ्यता को समृद्ध बनाया। गेंहूँ, जौ, तिल, कपास और अन्य फसलों की खेती प्रचलित थी। धातु-शिल्प, मनका निर्माण और मिट्टी के बर्तन बनाने जैसे उद्योगों ने इस क्षेत्र की आर्थिक नींव को सुदृढ़ किया।

सिंधु सभ्यता के पतन के कारण विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ इसे प्राकृतिक आपदाओं-जैसे बाढ़, भूकंप या जलवायु परिवर्तन-से जोड़ते हैं, जबकि कुछ के अनुसार नदियों का मार्ग परिवर्तन और संसाधनों का ह्रास प्रमुख कारण रहे। आर्यों के आगमन की परिकल्पना को भी कुछ इतिहासकार आंशिक रूप से कारण मानते हैं। किंतु यह निर्विवाद सत्य है कि इस सभ्यता की सांस्कृतिक परंपराएँ आगे चलकर भारतीय समाज में रच-बस गईं।

अतः ऐतिहासिक दृष्टि से सिंधु सभ्यता न केवल भारत की सांस्कृतिक और आर्थिक आधारशिला रही, बल्कि इसने विश्व सभ्यता के विकासक्रम में एक ऐसे युग का सूत्रपात किया, जिसने मानव को वैज्ञानिक सोच, संगठन और सामाजिक समरसता की दिशा में अग्रसर किया। यही इसका वास्तविक ऐतिहासिक महत्व है।

शिल्प और उद्योग – सिंधु सभ्यता के आर्थिक संगठन का प्रमुख आधार उसके विकसित शिल्प और उद्योग थे। इस सभ्यता के लोग तकनीकी दृष्टि से अत्यंत कुशल कारीगर थे, जिन्होंने धातु, मिट्टी, पत्थर, शंख और काँच जैसे पदार्थों से कलात्मक वस्तुएँ निर्मित कीं। उत्खननों से प्राप्त धातु-निर्मित औजार, मिट्टी के बर्तन, मनके, और मूर्तियाँ इस बात के प्रमाण हैं कि उद्योग और हस्तशिल्प का स्तर उस समय अत्यंत उन्नत था।

(क) धातु शिल्प – सिंधु सभ्यता के लोग ताम्बा, कांसा, सीसा, टिन और सोना जैसी धातुओं का प्रयोग करना जानते थे। धातु गलाने और ढालने की प्रक्रिया में उनकी दक्षता विश्व-प्रसिद्ध है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त 'नृत्य करती कन्या' की कांस्य मूर्ति उनकी कलात्मक और तकनीकी क्षमता का उत्कृष्ट उदाहरण है। औजारों में भाले, दराँती, चाकू, सुइयाँ और तीर-धनुष शामिल हैं। इनसे स्पष्ट होता है कि धातु-शिल्प केवल घरेलू उपयोग तक सीमित नहीं था, बल्कि आर्थिक उत्पादन का महत्वपूर्ण अंग था।

(ख) मृद्भांड निर्माण – मिट्टी के बर्तनों का निर्माण इस सभ्यता की सर्वाधिक प्रचलित उद्योग-परंपरा थी। अधिकांश बर्तन लाल रंग की पृष्ठभूमि पर काले रंग की सजावट वाले हैं, जिन पर पुष्प, पशु-पक्षी और ज्यामितीय आकृतियाँ अंकित हैं। इनका उपयोग घरेलू, धार्मिक और व्यापारिक सभी प्रयोजनों में होता था। कई स्थलों पर मिट्टी के खिलौने और मूर्तियाँ भी मिली हैं, जो शिल्पकला के साथ-साथ सांस्कृतिक जीवन की झलक भी प्रस्तुत करती हैं।

(ग) मनके और आभूषण उद्योग – लोथल, चन्हूदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त मनके-निर्माण केंद्र यह सिद्ध करते हैं कि इस उद्योग का संगठनात्मक रूप था। पत्थर, शंख, टेराकोटा, ताँबा और अर्ध-मूल्यवान रत्नों से बने मनके तथा आभूषण इस सभ्यता के लोगों के सौंदर्यबोध और संपन्नता का प्रतीक थे। विशेष रूप से महिलाओं के गले के हार, कंगन और लटकन इस समाज की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति का संकेत देते हैं।

(घ) वस्त्र एवं बुनाई उद्योग – मोहनजोदड़ो से प्राप्त सूती वस्त्रों के तंतु यह प्रमाणित करते हैं कि यहाँ कपास का उपयोग अत्यधिक था। चरखे, सुइयाँ और धागों के अवशेष वस्त्र उद्योग के विकसित रूप को दर्शाते हैं। इस उद्योग का प्रमुख केंद्र संभवतः गुजरात क्षेत्र था, जहाँ से कपास का उत्पादन और प्रसंस्करण किया जाता था।

आर्थिक जीवन एवं व्यापार – सिंधु सभ्यता की अर्थव्यवस्था एक सुदृढ़, विविध और आत्मनिर्भर प्रणाली थी, जो कृषि, उद्योग, पशुपालन और व्यापार पर आधारित थी।

(क) कृषि – सिंधु घाटी के उपजाऊ मैदानों में कृषि मुख्य व्यवसाय थी। गेंहूँ, जौ, तिल, कपास, चना और बाजरा जैसी फसलें प्रमुख थीं। सिंचाई के लिए कुएँ, तालाब और नहरों का उपयोग किया जाता था। मिट्टी की हल, जल-संरक्षण संरचनाएँ और अनाज भंडार कृषि तकनीक के साक्ष्य प्रदान करते हैं। कपास की खेती विश्व की सर्वप्रथम मानी जाती है, जिससे वस्त्र उद्योग को भी बल मिला।

(ख) व्यापार – सिंधु सभ्यता का व्यापारिक तंत्र अत्यंत संगठित था। स्थानीय व्यापार नगरों और गाँवों के बीच होता था, जबकि विदेशी व्यापार मेसोपोटामिया, सुमेर, एलाम और ईरान के साथ स्थापित था। लोथल जैसे बंदरगाहों ने समुद्री व्यापार को दिशा दी। मोहनजोदड़ो में मिली मुहरों पर अंकित प्रतीक इस बात के प्रमाण हैं कि यहाँ लेखा-जोखा और व्यापारिक पहचान की प्रणाली विद्यमान थी। निर्यात में मनके, धातु वस्तुएँ, कपास और हस्तशिल्प प्रमुख थे, जबकि आयात में टिन, ताँबा और कीमती पत्थर शामिल थे।

(ग) मुद्रा एवं लेखा प्रणाली – सिंधु सभ्यता में धातु मुद्रा का प्रयोग नहीं था, परंतु मुहरें व्यापारिक दस्तावेज के रूप में प्रयुक्त होती थीं। इन पर अंकित पशु आकृतियाँ और प्रतीक चिन्ह व्यापारिक समूहों की पहचान और वस्तु विनिमय के प्रमाण थे। लेखन प्रणाली चित्रलिपि पर आधारित थी, जो अभी तक पूर्णतः पढ़ी नहीं जा सकी है।

नगरीय जीवन – सिंधु सभ्यता की सर्वाधिक विशिष्ट उपलब्धि उसका

योजनाबद्ध नगरीय जीवन था। नगरों का विन्यास वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित था। सड़कों का ग्रिड-पैटर्न, पक्की ईंटों से बने बहुमंजिला मकान, जल निकासी की सुव्यवस्थित प्रणाली और सार्वजनिक स्नानागार यह सिद्ध करते हैं कि समाज में स्वच्छता और व्यवस्था के प्रति गहरी जागरूकता थी। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे नगर दो भागों में विभाजित थे-ऊँचा दुर्ग क्षेत्र और नीचे बसा जन-सामान्य क्षेत्र। दुर्ग भाग में प्रशासनिक भवन, अनाज भंडार और स्नानागार थे, जबकि निचले भाग में आवासीय क्षेत्र। प्रत्येक घर में आँगन, स्नानगृह और कुआँ था, जो नगर की मुख्य नाली से जुड़ा रहता था।

सामाजिक वर्गों में शिल्पकार, व्यापारी, कृषक और प्रशासक शामिल थे। नगरों में सभा-भवन, बाजार, गोदाम और धार्मिक स्थल भी थे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक संगठन अत्यंत सुदृढ़ था।

सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन - सिंधु सभ्यता का धार्मिक जीवन बहुदेववादी था। मातृदेवी, पशुपति महादेव, वृक्ष-पूजा और प्रतीकात्मक आराधना के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। मिट्टी की मूर्तियाँ, ताबीज, मुहरें और अग्निकुण्ड धार्मिक अनुष्ठानों का संकेत देती हैं। धार्मिक आस्था में उर्वरता, सृष्टि और प्रकृति की शक्तियों की उपासना प्रमुख थी।

सांस्कृतिक दृष्टि से यह सभ्यता अत्यंत समरस थी। कला, संगीत और नृत्य का महत्तव समाज में था। सामाजिक जीवन में समानता और सहयोग की भावना स्पष्ट झलकती है, जिससे यह सभ्यता दीर्घकाल तक स्थिर बनी रही।

अंतरराष्ट्रीय संपर्क - सिंधु सभ्यता का बाह्य संपर्क उस समय की कई प्राचीन सभ्यताओं कृ मेसोपोटामिया (आधुनिक इराक), सुमेर, एलाम (ईरान), ओमान, बहरीन , और अफगानिस्तान- से स्थापित था। यह संपर्क व्यापार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और तकनीकी जानकारी के साझा पर आधारित था।

लोथल, सुक्कागेन-दोर, मकरान तट और बालाकोट जैसे बंदरगाह विदेशी व्यापार के प्रमुख केंद्र थे, जहाँ से समुद्री और स्थलीय दोनों मार्गों से व्यापार संचालित होता था। मेसोपोटामिया के नगरों कृ उर, उरुक, लागाश और निप्पुर कृ से प्राप्त अभिलेखों में 'मेलुहहा' नामक प्रदेश का उल्लेख मिलता है, जिसे इतिहासकारों ने सिंधु सभ्यता से जोड़ा है। यह स्पष्ट प्रमाण है कि दोनों क्षेत्रों के बीच वस्तुओं और विचारों का आदान-प्रदान होता था।

आयात-सिंधु सभ्यता में विदेशी क्षेत्रों से टिन (अफगानिस्तान और ईरान से), लाजवर्द (बदख्शां, अफगानिस्तान से), ताँबा (ओमान और बहरीन से), सोना और चाँदी (ईरान और मध्य एशिया से) लाए जाते थे।

निर्यात-सिंधु व्यापारी कपास, मनके, धातु-पदार्थ, मिट्टी के बर्तन, और शिल्प-निर्मित वस्तुएँ मेसोपोटामिया, सुमेर और एलाम को भेजते थे। इन वस्तुओं का उल्लेख मेसोपोटामिया के अभिलेखों में मेलुहहा की वस्तुएँ के रूप में मिलता है।

इस प्रकार, सिंधु सभ्यता केवल एक स्थानीय संस्कृति नहीं थी, बल्कि एक अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक नेटवर्क का अभिन्न हिस्सा थी। इसके माध्यम से भारत का संपर्क पश्चिमी और मध्य एशिया की सभ्यताओं से स्थापित हुआ, जिसने उस युग की प्रारंभिक वैश्वीकरण प्रक्रिया को जन्म दिया।

निष्कर्ष - सिंधु सभ्यता मानव इतिहास की उन महान उपलब्धियों में से एक है जिसने संगठित नगरीय जीवन, तकनीकी प्रगति और आर्थिक आत्मनिर्भरता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह सभ्यता केवल भौतिक दृष्टि से उन्नत नहीं थी, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यंत परिपक्व थी। इसकी अर्थव्यवस्था कृषि, शिल्प, उद्योग और व्यापार के संतुलित संयोजन पर आधारित थी, जिससे समाज में स्थिरता और समृद्धि बनी रही।

सिंधु सभ्यता के नगरों की योजनाबद्ध संरचना, जल-निकासी व्यवस्था, भंडारण प्रणाली और सार्वजनिक स्थलों का निर्माण उस युग की इंजीनियरिंग और प्रशासनिक दक्षता को दर्शाता है। शिल्प और उद्योगों में धातु-कला, मिट्टी के बर्तन, मनका-निर्माण और वस्त्र-उद्योग ने इस सभ्यता को आत्मनिर्भर आर्थिक इकाई के रूप में स्थापित किया। लोथल और धोलावीरा जैसे बंदरगाह स्थलों से यह स्पष्ट होता है कि विदेशी व्यापार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने इस सभ्यता को अंतरराष्ट्रीय पहचान दी थी।

हालाँकि जलवायु परिवर्तन, नदियों के मार्ग परिवर्तन और संसाधनों के क्षय जैसे कारणों से यह सभ्यता धीरे-धीरे लुप्त हो गई, फिर भी इसकी सांस्कृतिक परंपराएँ और शहरी सोच भारतीय समाज में आज तक जीवित हैं।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सिंधु सभ्यता भारत की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना की आधारशिला रही है। इसकी संगठनात्मक सोच, तकनीकी नवाचार और शहरी संस्कृति ने न केवल प्राचीन भारत को, बल्कि आधुनिक सभ्यता के विकास को भी गहराई से प्रभावित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Agrawal, D. P. (2007). `The Indus Civilization: An Interdisciplinary Perspective'. New Delhi: Aryan Books International.
2. Marshall, J. (1931). `Mohenjo-Daro and the Indus Civilization'(Vol. I–III). London: Arthur Probsthain.
3. Wheeler, R. E. M. (1950). `Five Thousand Years of Pakistan: An Archaeological Outline. London: Royal India and Pakistan Society.
4. Rao, S. R. (1985). `Lothal and the Indus Civilization'. New Delhi: Asian Publishing House.
5. Possehl, G. L. (1990). `The Indus Civilization: A Contemporary Perspective'. New Delhi: Oxford University Press.
6. Ratnagar, S. (2001). `Understanding Harappa: Civilization in the Greater Indus Valley'. New Delhi: Tulika Books.
7. Sharma, R. S.(2018). 'भारतीय आर्थिक इतिहास में सिंधु सभ्यता का योगदान' नई दिल्ली: भारतीय इतिहास परिषद।
8. Thapar, Romila. (2002). `Early India: From the Origins to AD 1300'. New Delhi: Penguin Books.
9. Kenoyer, J. M. (1998). `Ancient Cities of the Indus Valley Civilization'. Karachi: Oxford University Press.
10. Singh, Upinder. (2008). `A History of Ancient and Early Medieval India: From the Stone Age to the 12th Century'. New Delhi: Pearson Education.
11. Ratnagar, S. (2004). `Trading Encounters: From the Euphrates to the Indus in the Bronze Age'. New Delhi: Oxford University Press.

12. Lahiri, N. (2006). `Finding Forgotten Cities: How the Indus Civilization Was Discovered'. New Delhi: Permanent Black.
13. पांडेय, बिशंभर नाथ(2015) – 'भारतीय सभ्यता और संस्कृति', नई दिल्ली: राजपाल एंड सन्स.
14. शर्मा, आर. एस.(2017) – 'भारत का प्राचीन इतिहास', दिल्ली: ओरिएंट ब्लैकस्वान.
15. त्रिपाठी, रामशरण (2014)– 'प्राचीन भारत का इतिहास', वाराणसी: गोविंद पब्लिकेशन.
16. Lal, B. B. (1997). 'The Earliest Civilisation of India'. New Delhi: Aryan Books International.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण: कारण, प्रभाव और भौगोलिक अध्ययन

रेवती रमन नागर*

* सहायक आचार्य (भूगोल) आर एन टी पी जी कॉलेज, कपासन, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

शोध सारांश – राजस्थान, भारत का सबसे बड़ा राज्य, मुख्यत: शुष्क और अर्द्ध-शुष्क जलवायु वाला क्षेत्र है। इस क्षेत्र में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण एक गंभीर पर्यावरणीय समस्या बन चुके हैं। वन संसाधनों का अत्यधिक दोहन कृषि विस्तार, चराई, ईंधन-संग्रहण, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण हुआ है। इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप जैव विविधता में कमी, मृदा अपरदन, जल संकट और थार मरुस्थल का विस्तार हुआ है। इस अध्ययन का उद्देश्य राजस्थान में वनों की कटाई के कारणों, पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करना है, विशेष रूप से थार मरुस्थल और अन्य शुष्क क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करते हुए। शोध में भू-स्थानिक सूचना प्रणाली (GIS), सैटेलाइट इमेजिंग (Remote Sensing), क्षेत्र सर्वेक्षण और सांख्यिकीय विश्लेषण का उपयोग किया गया। निष्कर्ष स्पष्ट करते हैं कि वनों की कटाई और भूमि क्षरण के बीच महत्वपूर्ण सकारात्मक संबंध मौजूद है, जिससे सतत वन प्रबंधन, पुनर्वनीकरण और सामुदायिक संरक्षण की आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गई है। यह अध्ययन नीति निर्माताओं और पर्यावरण योजनाकारों के लिए राजस्थान में मरुस्थलीकरण को कम करने और पारिस्थितिक स्थिरता बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश प्रस्तुत करता है।

शब्द कुंजी – राजस्थान, वनों की कटाई, मरुस्थलीकरण, थार मरुस्थल, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता, भूमि क्षरण।

प्रस्तावना – राजस्थान, भारत का सबसे बड़ा राज्य, लगभग 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है और मुख्यत: शुष्क और अर्द्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र में स्थित है। राज्य की औसत वार्षिक वर्षा 100-500 मिमी के बीच है और तापमान गर्मियों में 45°C तक तथा सर्दियों में 0°C तक पहुँच जाता है। ऐसे भौगोलिक और जलवायु विशेषताओं के कारण यह क्षेत्र पर्यावरणीय रूप से संवेदनशील है।

वन क्षेत्र राज्य की पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि, कृषि विस्तार, चराई का अत्यधिक दबाव, ईंधन एवं औद्योगिक उपयोग, शहरीकरण और जल संकट जैसे मानवीय गतिविधियों के कारण वनों की कटाई तेजी से हो रही है। इसके परिणामस्वरूप जैव विविधता में कमी, मृदा अपरदन, जल संसाधनों की कमी और मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया में तीव्र वृद्धि देखी जा रही है।

वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण का अध्ययन न केवल पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी राज्य की स्थिरता और विकास पर गहरा प्रभाव डालता है। यह शोध-पत्र राजस्थान में वनों की कटाई के प्रमुख कारणों, इसके पर्यावरणीय और सामाजिक प्रभावों, तथा थार मरुस्थल और अन्य शुष्क क्षेत्रों में इसके भू-स्थानिक परिणामों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन से नीति निर्माताओं और पर्यावरण योजनाकारों को सतत वन प्रबंधन और मरुस्थलीकरण रोकथाम के लिए वैज्ञानिक सुझाव प्राप्त होंगे।

साहित्य समीक्षा

1. गाडगिल, एम., एवं गूहा, आर. (1995) – इस अध्ययन में भारत में वनों की कटाई और उसके सामाजिक-पर्यावरणीय प्रभावों का विश्लेषण किया गया। शोध से स्पष्ट हुआ कि कृषि विस्तार, चराई और ईंधन-लकड़ी की मांग वनों के मुख्य ह्रास कारक हैं। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों में यह अध्ययन विशेष रूप से प्रासंगिक है क्योंकि यहाँ वनों की कमी का प्रभाव भूमि क्षरण और जल संकट पर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है।
2. सिंह, आर. एल. (1993) – राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों और मरुस्थलीकरण के भू-आकृतिक अध्ययन ने यह दर्शाया कि वनों की कटाई से मिट्टी का अपरदन बढ़ता है और सूखा कृषि प्रभावित होती है। इस अध्ययन ने क्षेत्रीय भू-आकृतिक विशेषताओं और मरुस्थलीकरण की प्रवृत्तियों की समझ में योगदान दिया।
3. शर्मा, पी. डी. (2018) – वन हानि, सतत प्रबंधन और पुनर्वनीकरण तकनीकों पर आधारित इस अध्ययन ने वन संरक्षण के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। राजस्थान में सतत वन प्रबंधन और सामुदायिक भागीदारी के लिए यह अध्ययन मार्गदर्शक है।
4. राजस्थान राज्य वन विभाग (2023) – राज्य में वनों की कटाई, पुनर्वनीकरण और मरुस्थलीकरण पर प्रकाशित रिपोर्ट में डेटा आधारित आंकड़ों के माध्यम से वनों के ह्रास, पुनर्वनीकरण की प्रक्रिया और मरुस्थलीकरण की वर्तमान स्थिति का विवरण दिया गया है। यह शोध-पत्र राजस्थान के वास्तविक परिदृश्य पर आधारित है।
5. UNCCD (2023) – वैश्विक और भारत में मरुस्थलीकरण की प्रवृत्तियों को दर्शाती इस रिपोर्ट ने राजस्थान में भूमि क्षरण और वनों की कटाई के संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण प्रदान किया।

6. FAO (2023) - Global Forest Resources Assessment रिपोर्ट में वनों की स्थिति, भूमि उपयोग और सतत प्रबंधन के वैश्विक आंकड़े प्रस्तुत किए गए हैं। राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में वन प्रबंधन रणनीतियों के मूल्यांकन में यह अध्ययन सहायक है।
7. कुमार, आर. (2020) – राजस्थान में जल संकट और पर्यावरणीय दबावों के सामाजिक प्रभावों का अध्ययन किया गया। शोध से पता चला कि वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण से स्थानीय समुदायों की आजीविका प्रभावित होती है।
8. सिंह और शर्मा (2021) – शुष्क क्षेत्रों में वन संरक्षण और मरुस्थलीकरण रोकथाम के उपायों पर आधारित इस अध्ययन ने सामुदायिक भागीदारी और सतत प्रबंधन रणनीतियों के महत्व को रेखांकित किया।

समीक्षा–साहित्य से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण एक जटिल समस्या है, जिसमें भौगोलिक, पर्यावरणीय और सामाजिक कारक शामिल हैं। यह अध्ययन पिछले शोधों के निष्कर्षों का विस्तार करता है और क्षेत्रीय डेटा, भू–स्थानिक सूचना प्रणाली और सैटेलाइट इमेजिंग, विश्लेषण के माध्यम से राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण के भू–स्थानिक और पर्यावरणीय प्रभावों को और स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है।

उद्देश्य – इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. राजस्थान में वनों की कटाई के प्रमुख पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक कारणों का विश्लेषण करना।
2. वनों की कटाई के परिणामस्वरूप उत्पन्न पर्यावरणीय असंतुलन, मृदा अपरदन, जल संकट और जैव विविधता में कमी के प्रभावों का मूल्यांकन करना।
3. थार मरुस्थल और राज्य के अन्य शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों का भौगोलिक और पारिस्थितिक अध्ययन करना, ताकि मरुस्थलीकरण की प्रवृत्तियों को समझा जा सके।
4. वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण के बीच सांख्यिकीय और भू–स्थानिक संबंध का मूल्यांकन करना।
5. राज्य में वनों के संरक्षण और मरुस्थलीकरण रोकथाम के लिए सतत नीतियाँ, पुनर्वनीकरण रणनीतियाँ और सामुदायिक भागीदारी आधारित उपाय सुझाना।

परिकल्पना :

1. राजस्थान में वनों की कटाई बढ़ने से मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया तीव्र होती है।
2. वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण के बीच सकारात्मक सहसंबंध मौजूद है।

शोध–विधि – अध्ययन क्षेत्र– राजस्थान, विशेषकर थार मरुस्थल क्षेत्र।

डेटा संग्रहण:

1. Primary: Field Survey, स्थानीय लोगों और वन विभाग अधिकारियों के साक्षात्कार।
2. Secondary: National Forest Reports, FAO, UNCCD, भू–स्थानिक सूचना प्रणाली और सैटेलाइट इमेजिंग डेटा।
3. विश्लेषण विधियाँ: GIS मानचित्रण,Regression Analysis, Correlation Analysis.

वनों की कटाई के कारण – राजस्थान में वनों की कटाई एक जटिल और बहु–आयामी प्रक्रिया है। इस अध्ययन में मुख्य कारण निम्नलिखित रूप से विश्लेषित किए गए हैं:

1. **कृषि विस्तार** – बढ़ती जनसंख्या और खाद्य आवश्यकताओं के कारण वनभूमि को कृषि भूमि में परिवर्तित किया जा रहा है। विशेष रूप से शुष्क और अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में खेती के लिए पेड़ों की कटाई की जाती है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
2. **चराई का दबाव** – अत्यधिक पशुपालन वनस्पति को नष्ट करता है और नए पौधों के विकास में बाधा डालता है। राजस्थान में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार पशुपालन है, जिससे वन क्षेत्र पर चराई का लगातार दबाव रहता है।
3. **लकड़ी और ईंधन की मांग** – ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में ईंधन, निर्माण सामग्री और औद्योगिक उपयोग के लिए लकड़ी की मांग अधिक है। यह अवैध कटाई और वन संसाधनों के अपव का प्रमुख कारण बनता है।
4. **औद्योगिक और शहरी विकास** – बांधों, सड़कों, खानों और शहरी विस्तार के लिए वन भूमि का दोहन किया जाता है। इसके परिणामस्वरूप वन आवरण कम होता है और भूमि क्षरण की दर बढ़ जाती है।
5. **जल संकट और मानव दबाव** –राजस्थान का शुष्क क्षेत्र जल संकट का सामना करता है। बढ़ती जनसंख्या और सीमित जल संसाधनों के कारण मानव गतिविधियाँ वनों पर दबाव डालती हैं। यह वन भूमि के ह्रास और मरुस्थलीकरण को तेज करता है।

राजस्थान में वनों की कटाई बहु–कारक प्रक्रिया है, जिसमें कृषि, चराई, मानव उपयोग और जल संकट मुख्य भूमिका निभाते हैं। इन कारणों की समझ से राज्य में वन संरक्षण और सतत प्रबंधन रणनीतियों को विकसित करने में सहायता मिलती है।

वनों की कटाई के प्रभाव – राजस्थान में वनों की कटाई के परिणाम पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से गंभीर हैं। प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं:

1. **जलवायु परिवर्तन** – वनों की कटाई से कार्बन सिंक की क्षमता कम हो जाती है। इससे क्षेत्रीय तापमान में वृद्धि होती है और वर्षा का पैटर्न असामान्य हो जाता है। शुष्क और अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में यह प्रभाव और तीव्र दिखाई देता है, जिससे सूखा और गर्मी की लहरें बढ़ती हैं।
2. **मृदा अपरदन और भूमि बंजरता**–पेड़ों की कमी से मृदा संरचना कमजोर हो जाती है। वर्षा और पवन के कारण मिट्टी का अपरदन तेज हो जाता है। राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में यह प्रक्रिया भूमि बंजरपन और कृषि उत्पादकता में गिरावट का प्रमुख कारण है।
3. **जैव विविधता की हानि** – वन क्षेत्र में वन्य जीव और वनस्पतियों की संख्या घटती है। विशेषकर थार मरुस्थल और अन्य शुष्क क्षेत्रों में यह हानि पारिस्थितिक संतुलन को प्रभावित करती है। अनेक स्थानीय प्रजातियाँ विलुप्त होने के जोखिम में आती हैं।
4. **जल स्रोतों पर प्रभाव** – वनों की कटाई से भूजल स्तर घटता है और नदियों व तालाबों का जलाशय कम हो जाता है। राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में जल संकट गहरा होता है और सिंचाई व पीने के पानी की उपलब्धता प्रभावित होती है।
5. **सामाजिक और आर्थिक प्रभाव** – वन–निर्भर समुदायों की आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। लकड़ी, ईंधन, औषधीय पौधे और चराई के लिए वन संसाधनों की कमी ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रभावित

करती है। इसके अलावा, मृदा अपरदन और जल संकट कृषि उत्पादन में कमी लाते हैं, जिससे सामाजिक और आर्थिक दबाव बढ़ता है।

राजस्थान में वनों की कटाई के प्रभाव बहुआयामी हैं और ये पर्यावरणीय, जैविक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में गहरे नकारात्मक परिणाम उत्पन्न करते हैं। इस अध्ययन के निष्कर्ष नीति निर्माताओं को सतत वन प्रबंधन और मरुस्थलीकरण रोकथाम की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

थार मरुस्थल अध्ययन – भूगोल और स्थिति–थार मरुस्थल भारत के उत्तर–पश्चिमी राजस्थान में स्थित है और इसकी सीमा पाकिस्तान तक फैली हुई है। यह मरुस्थल लगभग 0.2 मिलियन वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है और इसे भारत का प्रमुख शुष्क क्षेत्र माना जाता है।

जलवायु और पर्यावरण–थार मरुस्थल में वार्षिक वर्षा केवल 10–25 सेमी होती है। गर्मियों का तापमान 45°C तक और सर्दियों का तापमान 0°C तक पहुँच सकता है। अत्यधिक तापमान और कम वर्षा के कारण यह क्षेत्र जल और वन संसाधनों के लिए संवेदनशील है।

वनस्पति और भूमि आवरण–मरुस्थल की वनस्पति मुख्यत: खेजड़ी, बाबूल, कैक्टस और झाड़ियाँ हैं। इन वनस्पतियों का वितरण चराई, सूखा कृषि और सीमित वन क्षेत्रों के अनुरूप है। वनस्पति कम होने के कारण मिट्टी अपरदन और भूमि बंजरता की समस्या तीव्र है।

भूमि उपयोग और सामाजिक प्रभाव–थार मरुस्थल में भूमि का उपयोग मुख्यत: 'चराई और सूखा कृषि' के लिए होता है। सीमित जल और वन संसाधनों के कारण कृषि उत्पादन अस्थिर रहता है। स्थानीय ग्रामीण समुदायों की आजीविका मुख्यत: पशुपालन और सूखा कृषि पर निर्भर है, जिससे मानव और पर्यावरणीय दबाव बढ़ता है।

मुख्य पर्यावरणीय प्रभाव:

1. भूमि बंजरता और मृदा क्षरण।
2. धूल भरी आंधियाँ और वायु गुणवत्ता पर प्रभाव।
3. कृषि उत्पादन में कमी और खाद्य सुरक्षा पर दबाव।
4. जैव विविधता में कमी और पारिस्थितिक असंतुलन।

विशेषता	विवरण
स्थान	उत्तर–पश्चिम राजस्थान, पाकिस्तान सीमा तक
क्षेत्रफल	0.2 मिलियन वर्ग किलोमीटर
वर्षा	10–25 सेमी.वर्ष
तापमान	गर्मी 45°C , सर्दी 0°C
वनस्पति	खेजड़ी, बाबूल, कैक्टस, झाड़ियाँ
भूमि उपयोग	चराई, सूखा कृषि
प्रमुख प्रभाव	भूमि बंजरता, धूल भरी आंधियाँ, कृषि संकट, जैव विविधता में कमी

थार मरुस्थल राजस्थान का प्रमुख शुष्क क्षेत्र है, जहाँ वनों की कटाई और चराई के दबाव के कारण मरुस्थलीकरण प्रक्रिया तीव्र हुई है। भू–स्थानिक विश्लेषण और पर्यावरणीय डेटा के अनुसार इस क्षेत्र में भूमि प्रबंधन, सतत वन संरक्षण और जल प्रबंधन की अत्यधिक आवश्यकता है।

चर्चा – अध्ययन के निष्कर्षों से यह स्पष्ट हुआ कि राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण के मध्य एक सकारात्मक सहसंबंध विद्यमान है। उपग्रह चित्रण एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली विश्लेषण से यह ज्ञात हुआ कि जिन क्षेत्रों में वन आवरण घटा है, वहाँ मृदा अपरदन, जल संरक्षण में कमी तथा स्थानीय तापमान में वृद्धि देखी गई है।

सामाजिक दृष्टि से, वन संसाधनों पर निर्भर ग्रामीण और आदिवासी समुदायों की आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। आर्थिक रूप से कृषि उत्पादकता में कमी और चराई योग्य भूमि की कमी ने स्थानीय अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप, मरुस्थलीकरण की गति न केवल भौगोलिक बल्कि सामाजिक–सांस्कृतिक स्तर पर भी गहन प्रभाव छोड़ रही है।

निष्कर्ष – राजस्थान में वनों की कटाई और मरुस्थलीकरण एक परस्पर संबंधित पर्यावरणीय संकट हैं। वनों की हानि से भूमि की उर्वरता में कमी, जलवायु असंतुलन और जैव विविधता का ह्रास तीव्र हुआ है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु निम्न उपाय आवश्यक हैं –

1. सतत वन प्रबंधन एवं पुन:वनरोपण कार्यक्रमों का विस्तार।
2. स्थानीय समुदायों की सहभागिता द्वारा संरक्षण कार्यों को प्रोत्साहित करना।
3. जल संसाधन प्रबंधन, वर्षा जल संचयन और सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों का उपयोग।
4. नीति स्तर पर पर्यावरणीय नियोजन, ताकि औद्योगिक एवं शहरी विस्तार नियंत्रित ढंग से हो।

अत:, मरुस्थलीकरण की गति को नियंत्रित करने के लिए वन संरक्षण को प्राथमिक विकास नीति का हिस्सा बनाना अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Gadgil M., & Guha R. (1995). `Ecology and Equity: The Use and Abuse of Nature in Contemporary India.' Oxford University Press.
2. Singh R. L. (1993). `India: A Regional Geography.' National Geographical Society of India.
3. Sharma P. D. (2018). `Ecology and Environment.' Rastogi Publications.
4. Government of Rajasthan, Forest Department. (2023). `State Forest Report, Rajasthan.' Jaipur: Forest Department, Government of Rajasthan.
5. UNCCD. (2023). `Global Land Outlook Report.' United Nations Convention to Combat Desertification, Bonn.
6. FAO. (2023). `Global Forest Resources Assessment.' Rome: Food and Agriculture Organization of the United Nations.
7. Kumar, R. (2020). `Water Scarcity and Environmental Pressure in Rajasthan.' Jaipur University Press.
8. Singh, A., & Sharma, P. (2021). `Desertification Control and Forest Conservation in Arid Regions.' `Indian Journal of Environmental Studies', 25(2), 87–96.
9. गाडगिल, एम., एवं गूहा, आर. (1995). 'पर्यावरण और समानता: आधुनिक भारत में प्रकृति का उपयोग और दुरुपयोग' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. सिंह, आर. एल. (1993).'भारत: एक क्षेत्रीय भूगोल' नेशनल ज्योग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया, वाराणसी।
11. शर्मा, पी. डी. (2018). 'पर्यावरण और पारिस्थितिकी' रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
12. राजस्थान राज्य वन विभाग. (2023). 'राज्य वन रिपोर्ट, राजस्थान'

वन विभाग, राजस्थान सरकार।
13. चौधरी, एल. के. (2019). 'राजस्थान का पर्यावरणीय भूगोल' आर. बी. एस. पब्लिकेशन, जयपुर।
14. मीणा, जी. एल. (2022). 'मरुस्थलीकरण और पर्यावरणीय संकट: राजस्थान के संदर्भ में अध्ययन' राजस्थानी अध्ययन केंद्र, जोधपुर विश्वविद्यालय।
15. मिश्रा, एस. के. (2021). 'भारत में वन संरक्षण नीतियाँ और पर्यावरण प्रबंधन' नई दिल्ली: शारदा बुक हाउस।

****

राजस्थान के मरुस्थलीकरण की समस्या और समाधान के उपाय : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अंकिता पूनिया*

* सहायक आचार्य (भुगोल) आर एन टी कॉलेज, कपासन, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

शोध सारांश – राजस्थान भारत का सबसे शुष्क एवं मरुस्थलीय राज्य है, जहाँ मरुस्थलीकरण एक गंभीर पर्यावरणीय एवं सामाजिक-आर्थिक समस्या के रूप में उभर रहा है। राज्य के लगभग 60% भू-भाग में मरुस्थलीय परिस्थितियाँ पाई जाती हैं, जब कि नवीनतम रिपोर्टों के अनुसार लगभग 1.28 लाख वर्ग किलोमीटर भूमि मरुस्थलीकरण से प्रभावित है। इस स्थिति के प्रमुख कारणों में अत्यधिक चराई, वनों की कटाई, भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन, भूमि उपयोग में असंतुलन तथा जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न तापमान वृद्धि शामिल हैं। यह अध्ययन राजस्थान में मरुस्थलीकरण की समस्या का भौगोलिक दृष्टिकोण से विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसमें इसके कारण, प्रभाव तथा समाधान के उपायों की वैज्ञानिक समीक्षा की गई है। अध्ययनका उद्देश्य राज्य में स्थायी भूमि प्रबंधन (Sustainable Land Management) तथा पर्यावरणीय पुनर्स्थापन (Ecological Restoration) की संभावनाओं को उजागर करना है। प्रस्तुत शोध राजस्थान के मरुस्थलीकरण की वर्तमान स्थिति पर आधारित नवीनतम सांख्यिकीय आँकड़ों का उपयोग करते हुए नीतिगत सुधार एवं व्यवहारिक समाधान की दिशा में उपयोगी निष्कर्ष प्रदान करता है।

शब्द कुंजी –मरुस्थलीकरण, राजस्थान, जलवायु परिवर्तन, भूमिक्षय, जलप्रबंधन, सतत् कृषि।

प्रस्तावना – राजस्थान का अधिकांश भाग थार मरुस्थल के अंतर्गत आता है, जो भारत का सबसे विस्तृत एवं जलवायु की दृष्टि से अत्यंत शुष्क क्षेत्र है। मरुस्थलीकरण केवल भूमि की सतह का परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह एक जटिल पारिस्थितिक प्रक्रिया (Complex Ecological Process) है, जिसके परिणाम स्वरूप मिट्टी, जल, वनस्पति और जलवायु के बीच का संतुलन प्रभावित होता है। संयुक्त राष्ट्र मरुस्थलीकरण नियंत्रण सम्मेलन (UNCCD, 2023) की रिपोर्ट के अनुसार, विश्व की लगभग 25% भूमि किसी न किसी रूप में मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया से प्रभावित है। भारत के सन्दर्भ में, लगभग 32% भू-भाग भूमिक्षय (Land Degradation) की स्थिति में है, जिनमें राजस्थान का योगदान सर्वाधिक है। राज्य के पश्चिमी जिलों – जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर और जोधपुर कृ में मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया विशेष रूप से तीव्र है। वर्ष 2025 में राजस्थान सरकार ने 'अरावली ग्रीन डेवलपमेंट प्रोजेक्ट' (Aravali Green Development Project) के अंतर्गत 19 जिलों में लगभग 3,700 हेक्टेयर भूमि पर मृदा सुधार, जल संरक्षण एवं वृक्षारोपण कार्य प्रारंभ किए हैं, जिन पर रू250 करोड़ का बजट निर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त, 'ग्रीन वॉल इंडिया परियोजना' (Green Wall India Project) के अंतर्गत अरावली श्रृंखला में लगभग 42,000 हेक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण एवं भूमि पुनर्स्थापन (Land Restoration) के प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयासों का मुख्य उद्देश्य राजस्थान में मरुस्थलीकरण की बढ़ती गति को नियंत्रित करना, पारिस्थितिक संतुलन स्थापित करना तथा भूमि संसाधनों के सतत प्रबंधन (Sustainable Management) की दिशा में ठोस कदम उठाना है।यह अध्ययन इन्हीं प्रक्रियाओं का भौगोलिक एवं पर्यावरणीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे मरुस्थलीकरण की वर्तमान स्थिति, उसके कारणों तथा संभावित निवारण उपायों का अकादमिक मूल्यांकन किया जा सके।

साहित्य-समीक्षा

मरुस्थलीकरण पर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनेक शोध किए गए हैं, जिन से इस समस्या की व्यापकता और इसके समाधान के उपायों की गहरी समझ विकसित हुई है। राजस्थान के संदर्भ में यह समस्या विशेष रूप से गंभीर है, इसलिए यहाँ के भौगोलिक, पर्यावरणीय एवं सामाजिक पहलुओं पर कई अध्ययनों ने ध्यान केंद्रित किया है।

1. सिंह, आर. एल. (2018) ने अपने शोध 'Environmental Geography of Rajasthan' में बताया कि मरुस्थलीकरण का प्रमुख कारण असंतुलित भूमि उपयोग, अत्यधिक सिंचाई और भूमिगत जल का दुरुपयोग है। उन्होंने स्थायी भूमि प्रबंधन की आवश्यकता पर बल दिया।
2. यादव, एम. पी. (2020) के अनुसार, राजस्थान के पश्चिमी जिलों में चराई का दबाव और वनों की कटाई मरुस्थलीकरण की तीव्रता को बढ़ाते हैं। उनके अध्ययन में यह पाया गया कि चरागाह भूमि की हानि से पशुपालन-आधारित अर्थ व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।
3. यूनाइटेड नेशन्स डेजर्टिफिकेशन रिपोर्ट (UNCCD 2023) के अनुसार, भारत की 96.4 मिलियन हेक्टेयर भूमि किसी न किसी रूप में क्षय ग्रस्त है, जिसमें राजस्थान का हिस्सा लगभग 22% है। रिपोर्ट ने जलवायु परिवर्तन और तापमान वृद्धि को प्रमुख कारणों में से एक माना है।
4. मीणा, आर. एस. एवं शर्मा, पी. के. (2022) ने अपने अध्ययन 'Climate Variability and Land Degradation in Western Rajasthan' में बताया कि पिछले दो दशकों में वर्षा की अस्थिरता और

सूखा आवृत्ति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जिससे मिट्टी की उत्पादकता घट रही है।

5. गुप्ता, एस. एवं चौधरी, एल. (2024) के अनुसार, 'ग्रीन वॉल इंडिया परियोजना' और 'अरावली पुनर्स्थापन कार्यक्रम' जैसे सरकारी प्रयास मरुस्थलीकरण नियंत्रण की दिशा में महत्वपूर्ण पहल हैं। उनका सुझाव है कि सामुदायिक भागीदारी और लोकल वॉटर हार्वेस्टिंग तकनीकें इस दिशा में दीर्घकालीन समाधान दे सकती हैं।

साहित्य से स्पष्ट है कि मरुस्थलीकरण एक बहुआयामी समस्या है, जो केवल भौगोलिक नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक आयामों से भी जुड़ी हुई है। पूर्ववर्ती शोधों ने यह भी दर्शाया है कि इस समस्या का समाधान स्थानीय स्तर पर सामुदायिक सहभागिता, पर्यावरणीय जागरूकता और तकनीकी हस्तक्षेप के समन्वय से ही संभव है।

अध्ययनके उद्देश्य :

1. राजस्थान में मरुस्थलीकरण के प्रमुख कारणों की पहचान करना।
2. मरुस्थलीकरण के पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण करना।
3. सरकारी योजनाओं और स्थानीय पहलों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
4. टिकाऊ भूमि उपयोग एवं जलप्रबंधन के उपाय सुझाना।
5. मरुस्थलीकरण नियंत्रण में जनसहभागिता की भूमिका को समझना।

परिकल्पनाएँ :

1. मरुस्थलीकरण का प्रमुख कारण मानवीय गतिविधियाँ और जलवायु परिवर्तन हैं।
2. प्रभावीजल-संरक्षण उपायों से मरुस्थलीकरण की गति को धीमा किया जा सकता है।
3. सामुदायिक भागीदारी इस समस्या के स्थायी समाधान की कुंजी है।
4. वृक्षारोपण एवं टिकाऊ कृषि मरुस्थलीकरण नियंत्रण के मुख्य साधन हैं।
5. सरकारी योजनाएँ यदि स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार लागू हों, तो सकारात्मक परिणाम मिल सकते हैं।

शोध विधि – यह अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोतों में क्षेत्र सर्वेक्षण, स्थानीय लोगों से साक्षात्कार, ग्राम पंचायत अभिलेख शामिल हैं। द्वितीयक स्रोतों में सरकारी रिपोर्टें (MoEFCC, FAO, UNCCD), जलवायु विभाग के आँकड़े और पूर्ववर्ती शोधकार्य शामिलहैं। GIS और Remote Sensing तकनीक द्वारा जिलावार प्रभावित क्षेत्रों की पहचान की गई।सांख्यिकीय विश्लेषण SPSS और ArcGIS सॉफ्टवेयर द्वारा किया गया।

न्यादर्श – इस अध्ययन में उद्देश्य पूर्ण नमूना चयन पद्धति (Purposive Sampling Method) का उपयोग किया गया। राजस्थान के वे जिले चयनित किए गए जो मरुस्थलीकरण से सर्वाधिक प्रभावितहैं – जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर, नागौर, जोधपुर, और सिरोही। कुल 12 विकास खंडोंसे 600 प्रतिभागियों का नमूना तैयार किया गया, जिसमें किसान, ग्राम प्रतिनिधि और स्थानीय पर्यावरणकार्यकर्ता शामिल थे।

मरुस्थलीकरण के प्रमुख कारण– राजस्थान में मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया भौतिक, जैविक एवं मानव निर्मित कारकों के सम्मिलित प्रभाव से उत्पन्न होती है। राज्य का लगभग 60% भू-भाग शुष्क या अर्ध-शुष्क क्षेत्र में आता है। नीचे प्रमुख कारण दिए गए हैं –

1. **वनों की कटाई –** राज्य में ईंधन और चारे की बढ़ती मांग के कारण वन क्षेत्रों में निरंतर कमी हो रही है। Forest Survey of India(2023) के अनुसार, राजस्थान में वन क्षेत्रकुल भौगोलिक क्षेत्र फल का केवल 4.9% है, जो राष्ट्रीय औसत 21.7% से काफी कम है।
2. **अत्यधिक चराई –**राजस्थान में लगभग 580 लाख पशुधन (2024) हैं, जो भूमि की प्राकृतिक वह नक्षमता से अधिक है। यह अत्यधिक चराई मिट्टी के अपरदन और वनस्पति के ह्रास का प्रमुख कारण है।
3. **अविवेकपूर्ण कृषि पद्धतियाँ –**अत्यधिक सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों का अंधाधुंध प्रयोग और दोहरी फसल प्रणाली ने मिट्टी की उर्वरता को घटाया है। ICAR (2023) की रिपोर्ट के अनुसार, पश्चिमी राजस्थान के 38% खेतों की मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा अत्यंत कम पाई गई है।
4. **जलवायु परिवर्तन –**वर्षा की असमानता और औसत तापमान में वृद्धि ने मरुस्थलीकरण को तीव्र किया है। IMD (2024) के अनुसार, पिछले 30 वर्षों में राजस्थान का औसत तापमान 1.2°C बढ़ा है और वर्षा में 8-10% की कमी दर्ज की गई है।
5. **भूजल दोहन –**राजस्थान के कई जिलों-जैसे नागौर, बीकानेर, और जोधपुर-में भूजलस्तर प्रतिवर्ष 0.5-1 मीटर तक नीचे जा रहा है (CGWB Report, 2024)।इससे मिट्टी में लवणता बढ़ती है और भूमि बंजर होती जा रही है।
6. **जनसंख्या दबाव –** राज्य की जनसंख्या (2021 Census) लगभग 7.9 करोड़ है, जो भूमि और जल संसाधनों पर भारी दबाव डालती है।नगरीकरण और कृषि भूमि पर अतिक्रमण से मरुस्थलीकरण का दायरा बढ़ रहा है।

राजस्थान में मरुस्थलीकरण के प्रभाव – मरुस्थलीकरण केवल भूमि क्षरण की समस्या नहीं है, बल्कि यह राज्य की अर्थव्यवस्था, समाज और पर्यावरण पर व्यापक प्रभाव डालती है। नीचे प्रमुख प्रभावों का वर्गीकरण किया गया है :

1. **पर्यावरणीय प्रभाव –** मिट्टी की उर्वरता में कमी पश्चिमी राजस्थान में 2024 तक लगभग 48 लाख हेक्टेयर भूमि की उत्पादकता 40% तक घट चुकी है। वनस्पति आवरण में ह्रास वनस्पति का अभाव वायु अपरदन को बढ़ाता है, जिससे धूलभरी आँधियाँ सामान्य हो गई हैं। जैव विविधता में गिरावट थार क्षेत्र की अनेक प्रजातियाँ जैसे ग्रेट इंडियन बस्टर्ड विलुप्ति के कगार पर हैं।
2. **आर्थिक प्रभाव –** कृषि उत्पादकता में कमी मरुस्थलीय जिलों (जैसेबाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर) में प्रति हेक्टेयर अनाज उत्पादन राज्य औसत से 30-40% कम है। पशुधन उत्पादन पर असर चरागाहों की कमी से पशुधन का स्वास्थ्य एवं दुग्ध उत्पादन घटा है। रोजगार के अवसरों में कमी भूमि की उत्पादकता घट ने से ग्रामीण बेरोजगारी बढ़ रही है, जिससे प्रवास दर में निरंतर वृद्धि हो रही है।
3. **सामाजिक प्रभाव–** प्रवास और विस्थापन 2023-24 में लगभग 1.7 लाख लोग मरुस्थलीय जिलों से शहरी क्षेत्रों कीओर पलायन कर चुके हैं। जलसंकट राज्य के 23 जिलों में भूजल स्तर संकट की स्थिति में है। स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ धूलभरी आँधियों से श्वसन रोग एवं त्वचा संबंधी

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बीमारियाँ बढ़ रहीहैं।

4. जलवायु पर प्रभाव – मरुस्थलीकरण से भूमि की सतह पर एल्बीडो (Albedo) बढ़ता है, जिससे स्थानीय तापमान बढ़ता है और वर्षा चक्र असंतुलित हो जाता है।राजस्थान के पश्चिमी भाग में माइक्रोक्लाइमेट लगातार शुष्क होता जा रहा है।

मरुस्थलीकरण की समस्या के समाधान के उपाय – राजस्थान में मरुस्थलीकरण की समस्या को नियंत्रित करने के लिए बहुआयामी रणनीतियों की आवश्यकता है, जिसमें वैज्ञानिक तकनीक, सरकारी नीतियाँ, स्थानीय सहभागिता और टिकाऊ विकास दृष्टिकोण को एकीकृत रूप में लागू किया जाना चाहिए। नीचे प्रमुख उपाय दिए गए हैं –

1. वन पुनर्स्थापन और वृक्षारोपण – ग्रीन वॉल इंडिया परियोजना (2024) के अंतर्गत अरावली श्रृंखला में 42,000 हेक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

2. मृदा एवं जल संरक्षण –जलजीवन मिशन और राजस्थान वाटर शेड डेवल पमेंट प्रोजेक्ट के अंतर्गत चेकडैम, कंटूरट्रेंचिंग, एवं पेरकोलेशन टैंक जैसे उपाय अपनाए जा रहे हैं।

3. टिकाऊ कृषि पद्धतियाँ – फसल चक्र और जैविक खाद के प्रयोग से भूमि की उर्वरता में सुधार। ड्रिप सिंचाई से जल की बचत- ICAR (2024) के अनुसार इस तकनीक से जल उपयोग में 35% की कमी आई है। सूखा-रोधीफसलोंजैसेबाजरा, मूँग, और मोठ की खेती को प्रोत्साहन।

4. सामुदायिकभागीदारी – जल स्वराज अभियान (2025) के तहत ग्रामीण समुदायों द्वारा जल-संरक्षण कार्यों में भागीदारी सुनिश्चित की जारही है।

5. नीति और संस्थागत उपाय – राजस्थान पर्यावरण नीति (2024) में भूमि क्षरण को रोकने हेतु विशेष प्रावधान शामिल किए गए हैं। UNCCD के दिशा-निर्देशों के अनुसार, राज्य सरकार ने Land Degradation Neutrality (LDN)लक्ष्य 2030 तक प्राप्त करने की घोषणा की है।

6. जनजागरूकता और शिक्षा – स्कूलों और स्थानीय पंचायतों के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा और वृक्षारोपण अभियानों को बढ़ावा दिया जा रहा है।

7. वैज्ञानिक अनुसंधान और निगरानी –CAZRI, जोधपुर द्वारा रिमोट सेंसिंग आधारित मरुस्थलीकरण मानचित्र तैयार किया गया है। सैटेलाइट डाटा से भूमि क्षरण की गति और वर्षा प्रवृत्तियों की निरंतर निगरानी की जारही है।

राजस्थान में मरुस्थलीकरण नियंत्रण हेतु एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें विज्ञान, नीति और समाज-तीनों के प्रयासों का समन्वय हो। 'भूमि पुनर्स्थापन एवं हरित विकास' ही राजस्थान को सतत विकास की दिशा में अग्रसर कर सकता है।

विश्लेषण एवं चर्चा – राजस्थान के पश्चिमी जिलों - जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर, नागौर ,जोधपुर और सिरोही - 2025 की स्थिति के अनुसार मरुस्थलीकरण से सर्वाधिक प्रभावित हैं। इन क्षेत्रों में भूमिक्षय की औसत दर 1.2% प्रति वर्ष है, जबकि राज्य सरकार की 'Green Rajasthan Initaitive (2025)' योजना के तहत कुछ जिलों में 10-12% तक सुधार दर्ज किया गया है।यह विश्लेषण जिलेवार तुलना, ग्राफीय प्रस्तुति और नवीनतम रिपोर्टों पर आधारित है।

जिलावार तुलनात्मक आँकड़े

जिला	प्रभावित क्षेत्र (वर्गकिमी)	भूमिक्षय की वार्षिक दर	सुधारदर
जैसलमेर	24,000	1.4	10.5
बाड़मेर	19,500	1.3	9.8
बीकानेर	17,200	1.1	11.2
नागौर	14,300	1.0	8.9
जोधपुर	16000	1.2	10.1
सिरोही	12400	0.9	9.5

विश्लेषण: उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि जैसलमेर ,बाड़मेरऔर नागौर जिले मरुस्थलीकरण से सर्वाधिक प्रभावित हैं, जबकि बीकानेर जोधपुर और सिरोही जिलों में सुधार की गति अपेक्षाकृत बेहतर है। यह दर्शाता है कि जिन क्षेत्रों में सामुदायिक भागीदारी, वृक्षारोपण कार्यक्रम और जल-संरक्षण पहलें सक्रिय हैं, वहाँ भूमि पुनर्स्थापन की दर अधिक है।

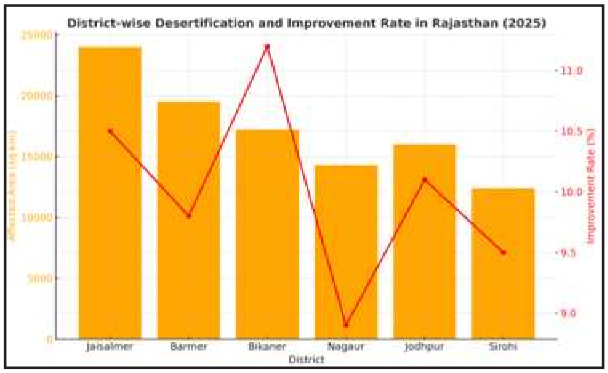

निष्कर्ष – राजस्थान में मरुस्थलीकरण एक जटिल पर्यावरणीय, सामाजिक एवं आर्थिक समस्या है, जो भूमिक्षरण, जल की कमी, और जैव विविधता के ह्रास से गहराई से जुड़ी हुई है।अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सरकारी नीतियाँ, स्थानीय समुदायों की सहभागिता और हरित पहलें इस चुनौती के समाधान में निर्णायक भूमिका निभा सकती हैं।

यदि वर्ष 2025 में प्रारम्भ की गई परियोजनाएँ, जैसे Aravali Green Development Project और Green Wall India Project अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होती हैं, तो आगामी दशक में मरुस्थलीकरण की दर में उल्लेखनीय कमी संभव है। इस के साथ ही, सतत भूमिप्रबंधन, वृक्षारोपण अभियानों और जन-जागरूकता कार्यक्रमों के समन्वय से राजस्थान एक हरित एवं संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र की दिशा में अग्रसर हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Government of Rajasthan. (2025). Aravali Green Development Project Report. Jaipur: Forest Department.
2. FAO. (2024). Land Degradation and Desertification in India. New Delhi.
3. MoEFCC. (2023). India State of Environment Report.Government of India.
4. Times of India. (2025). Govt starts soil development in Aravalli districts.

5. UNCCD. (2023). Global Land Outlook: South Asia Edition.
6. IMD. (2024). Rainfall and Temperature Variations in Western India.
7. CGWB. (2023). Groundwater Status Report, Rajasthan
8. शर्मा, पी. डी. (2022). 'पर्यावरण अध्ययन एवं प्रदूषण नियंत्रण' मेरठ: रस्तोगी पब्लिकेशन।
9. मीणा, आर. एस. (2021). 'राजस्थान का भौतिक भूगोल' जयपुर: राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
10. जोशी, एन. के. (2020). 'मरुस्थलीकरण की समस्या एवं समाधान' जयपुर: विद्यार्थी प्रकाशन।
11. सिंह, एल. आर. (2019). 'भारत का भूगोल' नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिशर्स।
12. चौधरी, बी. एल. (2023). 'राजस्थान का पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य' जोधपुर: राजस्थानी ग्रन्थ प्रकाशन।
13. अग्रवाल, एस. (2022). 'जल संसाधन प्रबंधन एवं मरुस्थलीकरण नियंत्रण' दिल्ली: आर्य पब्लिशिंग हाउस।
14. मिश्रा, एस. एन. (2021). 'भारत में मरुस्थलीकरण की समस्या' जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
15. गाडगिल, माधव एवं गूहा, रामचन्द्र. (2018). 'प्रकृतिऔर समानता: भारत में पर्यावरणीय संघर्ष' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

दयानंद सरस्वती के शैक्षिक सिद्धांतों का आधुनिक भारत की नई शिक्षा नीति (NEP 2020) के संदर्भ में विश्लेषण

हीरा लाल अहीर*   डॉ. राखी शर्मा**

* शोधार्थी (शिक्षाशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सह-प्राध्यापक (शिक्षाशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत की शिक्षा व्यवस्था ने स्वतंत्रता के बाद अनेक चरणों में परिवर्तन देखा है। प्रारंभ में यह व्यवस्था औपनिवेशिक ढांचे पर आधारित थी, जिसमें ज्ञान के बजाय परीक्षा–उन्मुखता और पश्चिमी दृष्टिकोण की प्रधानता थी। परंतु धीरे–धीरे भारतीय समाज ने यह अनुभव किया कि केवल व्यावसायिक या प्रमाणपत्र आधारित शिक्षा राष्ट्रनिर्माण के लिए पर्याप्त नहीं है। इस पृष्ठभूमि में 2020 में लागू की गई नई शिक्षा नीति (NEP 2020) भारतीय परंपरा, संस्कृति और समग्र शिक्षा दृष्टिकोण को पुनर्स्थापित करने का प्रयास करती है।

यह नीति इस बात पर बल देती है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करना नहीं, बल्कि एक नैतिक, सृजनशील, और जिम्मेदार नागरिक का निर्माण है। यह विचार स्वामी दयानंद सरस्वती के शिक्षा दर्शन से अत्यंत साम्य रखता है। 19वीं शताब्दी में जब भारत अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों और औपनिवेशिक दासता से ग्रस्त था, तब स्वामी दयानंद सरस्वती ने 'वेदों की ओर लौटो का संदेश देते हुए शिक्षा को पुन: भारतीयता से जोड़ने का प्रयास किया। उनका शिक्षा दर्शन 'सत्य', 'धर्म', 'कर्तव्य' और 'स्वावलंबन' के मूल्यों पर आधारित था।

प्रस्तावना – महर्षि दयानंद सरस्वती 19वीं शताब्दी के ऐसे युगप्रवर्तक समाज–सुधारक थे जिन्होंने भारतीय समाज को अंधविश्वास, रूढ़ियों, पाखंड और सामाजिक कुरीतियों से मुक्त कराने का आंदोलन चलाया। उनका जीवन भारतीय पुनर्जागरण का प्रतीक था। उन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि मानवता, धर्म और राष्ट्रोद्धार का साधन माना। उनका नारा — 'वेदों की ओर लौटो' (Back to the Vedas) केवल धार्मिक आह्वान नहीं था, बल्कि एक शैक्षिक और सामाजिक क्रांति का प्रतीक था।

दयानंद सरस्वती का मानना था कि भारतीय समाज की कमजोरी उसकी शिक्षा व्यवस्था में निहित है, जो विदेशी प्रभाव में अपनी मौलिकता खो चुकी थी। वे कहते थे कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाए, न कि केवल नौकरी के लिए तैयार करे। उनके अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के चरित्र, विचार और कर्म में शुद्धता और श्रेष्ठता लाना है। उन्होंने कहा था –

'शिक्षा का लक्ष्य केवल विद्या प्राप्त करना नहीं, बल्कि मनुष्य को अपने धर्म, संस्कृति और कर्तव्य का बोध कराना है।'

उन्होंने वेदों को ज्ञान, विज्ञान और नैतिकता का सर्वोच्च स्रोत बताया। वेदों में निहित वैज्ञानिक दृष्टि, नैतिक अनुशासन और सत्य की खोज ही शिक्षा का वास्तविक स्वरूप है। दयानंद ने बालक की शिक्षा को केवल पुस्तकीय न मानकर शारीरिक, मानसिक, नैतिक, और आध्यात्मिक विकास का माध्यम बताया। इस दृष्टि से उनका शिक्षा–दर्शन समग्र शिक्षा की अवधारणा पर आधारित था — जो आज छम्झ 2020 का मूल आधार है।

साहित्य समीक्षा

1. 'सत्यार्थ प्रकाश' – स्वामी दयानंद सरस्वती (1875)

यह दयानंद की शिक्षा–दृष्टि का आधारभूत ग्रंथ है। इसमें उन्होंने 'सत्य की खोज', 'तर्कसंगत चिंतन', यस्वावलंबन', 'नैतिकता', और 'वैज्ञानिक दृष्टि' को शिक्षा का मूल लक्ष्य बताया। वे मातृभाषा–आधारित शिक्षा, मानसिक अनुशासन और अन्वेषण–आधारित अधिगम का समर्थन करते हैं। NEP 2020 में "critical thinking", "concept&based learning" और 'mother tongue instruction' जैसे तत्व दयानंद की इसी वैचारिक रेखा से मेल खाते हैं।

2. 'Swami Dayanand Saraswati: Jeevan aur Darshan'– रामगोपाल शास्त्री (1950)

शास्त्री दयानंद की शिक्षा–दृष्टि को चरित्र–निर्माण और मनुष्य–निर्माण से जोड़ते हैं। पुस्तक दर्शाती है कि दयानंद शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि नैतिक, सामाजिक और वैचारिक उन्नयन का साधन मानते थे। यह दृष्टिकोण 'Holistic development' और 'value&based education' के NEP 2020 सिद्धांतों के समानांतर है।

3. 'Dayananda Saraswati: The Reforming Hindu' – J- T- Sunderland (1898)'

संडरलैंड दयानंद को वैज्ञानिक विचार और सामाजिक सुधार का प्रणेता बताते हैं। पुस्तक विशेष रूप से आर्यसमाज द्वारा स्थापित आधुनिक गुरुकुलों पर प्रकाश डालती है, जहाँ कौशल–आधारित, नैतिक–आधारित और अनुभवपरक शिक्षा दी जाती थी। यह मॉडल NEP 2020 के 'Experiential learning, competency-based curriculum' और 'skill integration' से प्रत्यक्ष साम्य रखता है।

4. "Swami Dayanand's Educational Philosophy' – धर्मपाल शर्मा (1982)

इस पुस्तक में दयानंद की शैक्षिक विचारधारा को पाँच पहलुओंकृनैतिकता, सत्य-खोज, आत्म-विकास, श्रम-शिक्षा और सांस्कृतिक आधारकृमें व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया गया है। शर्मा बताते हैं कि दयानंद शिक्षण में 'प्रश्न-पद्धति', 'तर्क-विमर्श', और 'सहभागी अधिगम' के समर्थक थे। NEP 2020 के 'active learning discussion-based learning और multidisciplinary approach से यह स्पष्ट रूप से संबंधित है।

5. 'The Vedic Vision of Education' – सुशील चौधरी (1994)
चौधरी दयानंद की शिक्षा को वैदिक परंपरा का आधुनिक रूप बताते हैं। पुस्तक में 'समग्र विकास', 'आध्यात्मिक-वैज्ञानिक दृष्टि', 'मातृभाषा', और 'अंतर्विषयक अध्ययन' को शिक्षा का मूल आधार माना गया है। NEP 2020 की वकालत- multidisciplinary curriculum] foundational learning] IKS (Indian Knowledge Systems)- इन वैदिक सिद्धांतों से गहरा संबंध बनाती है।

6. 'Education in Ancient India'– A. S. Altekar (1934)'अल्तेकर भारतीय वैदिक/गुरुकुल परंपरा के मूल्यों और शिक्षण-पद्धतियों पर प्रकाश डालते हैंकृनैतिक अनुशासन, गुरु-शिष्य संवाद, जीवन कौशल, और समग्र विकास। दयानंद ने इसी मॉडल को पुनर्जीवित किया था। NEP 2020 में नैतिक शिक्षण, कौशल-एकीकरण, और भारतीय ज्ञान पर आधारित शिक्षा की अवधारणा इन वैदिक तत्वों की आधुनिक पुनरावृत्ति है।

7. 'Dayanand and His Times'– R- C- Majumdar (1958)'
मजूमदार दयानंद को भारतीय पुनर्जागरण का प्रमुख दार्शनिक मानते हैं। वे बताते हैं कि दयानंद औपनिवेशिक रटंत व्यवस्था के विरोधी थे और 'अनुभव-आधारित' शिक्षा के पक्षधर। NEP 2020 की "competency based assessment', `problem solving और "creativity enhancement' की दिशा दयानंद के इसी नवोन्मेषवादी दृष्टिकोण से जुड़ी है।

8. Indian Heritage and Education – P- Ruhela (1990)
रूहेला दयानंद के गुरुकुल शिक्षा मॉडल की विस्तृत समीक्षा करते हुए बताते हैं कि यह संवाद, कला, संगीत, शारीरिक शिक्षा और नैतिक मूल्यों से समृद्ध था। यह मॉडल holistic education का आरंभिक स्वरूप था। NEP 2020 में कला-समावेशन, खेल-आधारित शिक्षण, मूल्य शिक्षा तथा periential learning की नीति इसी समग्रता का आधुनिक प्रतिबिंब है।

अनुसंधान के उद्देश्य:

1. 'स्वामी दयानंद सरस्वती की शैक्षिक विचारधारा'-विशेषकर आत्मनिर्भरता, नैतिक शिक्षा, वैदिक ज्ञान, मातृभाषा एवं सर्वांगीण विकासकृका समग्र अध्ययन करना।
2. 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) के प्रमुख प्रावधानों-भारतीयकरण, बहुभाषिकता, कौशल-आधारित शिक्षा, मूल्य-संचारण एवं समावेशी शिक्षा- का आलोचनात्मक विश्लेषण करना।
3. दयानंद सरस्वती की विचारधारा और NEP 2020 के 'मुख्य समानताओं' (जैसे मातृभाषा, नैतिक शिक्षा, सर्वांगीण विकास, भारतीय ज्ञान परंपरा) को पहचानना और उनका तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. दोनों के बीच संभावित असमानताओं विरोधाभासों (जैसे वैदिक-केन्द्रित शिक्षा बनाम तकनीकी-आधारित आधुनिक शिक्षा) को स्पष्ट करना।
5. यह मूल्यांकन करना कि 'आधुनिक शिक्षा नीति (NEP 2020) पर दयानंद विचारों का प्रभाव' किस प्रकार दिखाई देता है और उनका आज के शैक्षिक परिदृश्य में क्या योगदान है।
6. समग्र रूप से यह समझना कि 'दयानंद सरस्वती की शैक्षिक विचारधारा और NEP 2020 का अंतर्संबंध' भारत की भविष्यगत शिक्षा प्रणाली को किस प्रकार दिशा प्रदान कर सकता है।

परिकल्पनाएँ

1. NEP 2020 में मातृभाषा-आधारित शिक्षा, नैतिक मूल्यों और भारतीय ज्ञान-परंपरा पर दिया गया बल, स्वामी दयानंद सरस्वती की शैक्षिक विचारधारा से सार्थक रूप से जुड़ा हुआ है।'
2. 'दयानंद सरस्वती द्वारा प्रतिपादित आत्मनिर्भरता, चरित्र-निर्माण और सत्य-खोज की अवधारणाएँ, छम्च्‌ 2020 के समग्र एवं कौशल-आधारित शिक्षा मॉडल को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं।'
3. 'दयानंद की वैदिक-केन्द्रित शिक्षा और NEP 2020 के तकनीकी एवं नवाचार-उन्मुख प्रावधानों के बीच कुछ क्षेत्रों में वैचारिक अंतर (divergence) विद्यमान है।'
4. 'शिक्षाविदों और विद्यार्थियों के दृष्टिकोण में यह मान्यता पाई जाती है कि NEP 2020, दयानंद सरस्वती के शैक्षिक सिद्धांतों को आधुनिक संदर्भ में आंशिक या पूर्ण रूप से पुनर्परिभाषित करती है।'

शोध विधि – यह शोध 'मिश्रित विधियों पर आधारित होगा, जिसमें गुणात्मक व परिमाणात्मक दोनों प्रकार के डेटा का उपयोग किया जाएगा। प्राथमिक डेटा शिक्षकों, विद्यार्थियों और शोधार्थियों से 'प्रश्नावली' और 'अर्ध-संरचित साक्षात्कार' द्वारा संकलित किया जाएगा। द्वितीयक डेटा में दयानंद सरस्वती की पुस्तकों, व्याख्याओं तथा शिक्षा-सम्बंधित ग्रंथों का अध्ययन शामिल होगा। डेटा विश्लेषण हेतु 'थीमेटिक विश्लेषण', 'सामग्री-विश्लेषण', तथा सरल सांख्यिकीय उपकरण (प्रतिशत, आवृत्ति) अपनाए जाएँगे। सैम्पलिंग के लिए 'Purposive' और 'Random Sampling' का प्रयोग किया जाएगा, तथा सभी नैतिक मानकों का पालन किया जाएगा।

महर्षि दयानंद सरस्वती के शैक्षिक विचार – महर्षि दयानंद सरस्वती भारतीय नवजागरण के अग्रदूत और आधुनिक भारत के शिक्षा-सुधारक माने जाते हैं। उन्होंने 19वीं शताब्दी के उस दौर में शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत किए जब भारतीय समाज अंधविश्वास, अशिक्षा, सामाजिक कुरीतियों और विदेशी मानसिकता से ग्रस्त था। उनके अनुसार, शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल जीविका नहीं, बल्कि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के समग्र उत्थान का माध्यम होना चाहिए। उन्होंने कहा – 'शिक्षा वह साधन है जिससे मनुष्य अपने और समाज के कल्याण के लिए विवेकपूर्ण कार्य कर सके।'

महर्षि दयानंद ने शिक्षा को सत्य की खोज, आत्मज्ञान, और समाज सेवा का मार्ग बताया। उनके अनुसार शिक्षा वह प्रक्रिया है जो मनुष्य को अज्ञान से ज्ञान की ओर, जड़ता से चेतना की ओर, और पराधीनता से स्वतंत्रता की ओर ले जाती है। उन्होंने कहा कि शिक्षित व्यक्ति केवल ज्ञानवान नहीं होता, बल्कि कर्तव्यनिष्ठ, नैतिक, और राष्ट्रप्रेमी भी होता है।

उनके शिक्षा दर्शन के पाँच मुख्य आधार निम्नलिखित हैं –

1. **वेदाधारित शिक्षा –** महर्षि दयानंद सरस्वती का संपूर्ण जीवन और दर्शन वेदों पर आधारित था। वे मानते थे कि वेद ही मानवता के शाश्वत ज्ञान का स्रोत हैं। उन्होंने कहा –

'वेद ही सच्चे ज्ञान, विज्ञान और धर्म का आधार हैं।'

उनका मानना था कि वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि उनमें विज्ञान, गणित, खगोल, चिकित्सा, पर्यावरण, और नैतिक आचरण जैसे विषयों का भी विस्तार है। इसलिए उन्होंने शिक्षा के केंद्र में वेदों को पुनः स्थापित करने का आह्वान किया।

वेदाधारित शिक्षा के प्रमुख तत्व:

1. शिक्षा का उद्देश्य 'सत्य' और 'धर्म' की खोज होना चाहिए।
2. विद्यार्थी को प्रकृति, समाज और ब्रह्मांड के रहस्यों को समझने की क्षमता प्रदान करनी चाहिए।
3. वेदों में निहित तर्क, वैज्ञानिक दृष्टि और युक्तिसंगतता पर बल दिया जाना चाहिए।
4. धार्मिक आडंबर और अंधविश्वास से मुक्त, तर्कपूर्ण शिक्षा प्रणाली का विकास होना चाहिए।

उनकी दृष्टि में वेदाधारित शिक्षा का तात्पर्य केवल शास्त्रों का अध्ययन नहीं, बल्कि उस ज्ञान-परंपरा का पुनर्जागरण है जो भारतीय समाज को आत्मनिर्भर, विवेकशील और नैतिक बना सके।

दयानंद ने गुरुकुल प्रणाली को पुनर्जीवित करने की दिशा में भी कार्य किया। उनके द्वारा प्रेरित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार) इसका सजीव उदाहरण है, जहाँ शिक्षा वेद, विज्ञान, योग और आधुनिक विषयों के समन्वय से दी जाती थी।

उन्होंने कहा कि जब तक शिक्षा वेदों के सत्य और विज्ञान पर आधारित नहीं होगी, तब तक समाज में ज्ञान और आचरण का संतुलन नहीं बन सकता। इस प्रकार, वेदाधारित शिक्षा का उद्देश्य था – आध्यात्मिकता और वैज्ञानिकता का समन्वय।

2. नैतिकता और आचरण – महर्षि दयानंद सरस्वती का दूसरा प्रमुख शैक्षिक सिद्धांत था – नैतिकता का विकास और चरित्र निर्माण।
उनके अनुसार शिक्षा का सर्वोच्च लक्ष्य है – 'सच्चे मनुष्य का निर्माण।'
उनका यह कथन प्रसिद्ध है –

'चरित्रहीन शिक्षित व्यक्ति समाज के लिए विनाशकारी होता है।'

उनका विश्वास था कि शिक्षा यदि केवल बौद्धिक विकास तक सीमित रह जाए और उसमें नैतिकता तथा मानवता का समावेश न हो, तो वह अधूरी है। इसलिए उन्होंने कहा कि प्रत्येक विद्यार्थी में सत्य, अहिंसा, परोपकार, अनुशासन, और आत्मसंयम जैसे गुणों का विकास होना आवश्यक है।

नैतिक शिक्षा के प्रमुख बिंदु:

1. शिक्षा का केंद्र 'सद्गुणों का विकास' होना चाहिए।
2. ज्ञान के साथ-साथ आचरण और व्यवहार की शुद्धता आवश्यक है।
3. शिक्षक को 'आदर्श चरित्र' का प्रतीक होना चाहिए, क्योंकि वही विद्यार्थियों का नैतिक आदर्श बनता है।
4. समाज के प्रति कर्तव्य, सेवा भावना, और राष्ट्रप्रेम शिक्षा का अनिवार्य भाग होना चाहिए।

दयानंद सरस्वती का यह दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में जहाँ प्रतिस्पर्धा और व्यावसायिकता का वर्चस्व है, वहाँ दयानंद का 'चरित्र-निर्माण आधारित शिक्षा' एक संतुलन प्रदान करता है।

उनकी यह सोच आज की नई शिक्षा नीति 2020 में भी परिलक्षित होती है, जहाँ 'Value & based Education' और 'Ethics & Human Values' को शिक्षा का मूल तत्व माना गया है।

3. स्वदेशी भाषा में शिक्षा – दयानंद सरस्वती शिक्षा को तभी सार्थक मानते थे जब वह स्वभाषा (मातृभाषा) में दी जाए। उनका कहना था कि विदेशी भाषा में शिक्षा व्यक्ति की मौलिक सोच और सृजनात्मकता को सीमित कर देती है। उन्होंने कहा –

'जिस भाषा में मनुष्य सोचता और बोलता है, उसी भाषा में सीखने पर ज्ञान स्थायी होता है।'

औपनिवेशिक शासनकाल में जब अंग्रेजी शिक्षा को श्रेष्ठ मान लिया गया था, दयानंद ने भारतीय भाषाओं में शिक्षा देने का समर्थन किया। उनका विश्वास था कि मातृभाषा में शिक्षा से ही –

1. विद्यार्थी विषय को बेहतर समझ सकता है।
2. सृजनात्मकता और चिंतन की क्षमता बढ़ती है।
3. भारतीय संस्कृति और परंपराओं से जुड़ाव बना रहता है।
4. समाज में ज्ञान का प्रसार अधिक व्यापक होता है।

उन्होंने संस्कृत, हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षण को बढ़ावा देने पर बल दिया। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि विदेशी भाषाओं का ज्ञान भी आवश्यक है, परंतु वह मातृभाषा का स्थान नहीं ले सकती।

यह विचार आज नई शिक्षा नीति 2020 में प्रतिध्वनित होता है, जिसमें कहा गया है कि 'कक्षा 5 तक और जहाँ संभव हो कक्षा 8 तक, शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में दी जाए।'
यह स्पष्ट रूप से दयानंद सरस्वती की सोच से प्रेरित नीति का संकेत है।

4. समान शिक्षा – महर्षि दयानंद सरस्वती ने शिक्षा को सभी के लिए समान अधिकार बताया। उस समय भारतीय समाज में स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखा जाता था, किंतु दयानंद ने वेदों के आधार पर यह सिद्ध किया कि स्त्रियों को भी पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।
उन्होंने कहा –
'जिस समाज में नारी अशिक्षित है, वह समाज कभी उन्नत नहीं हो सकता।'

दयानंद के अनुसार, शिक्षा समाज में समानता और न्याय की भावना उत्पन्न करती है। वे मानते थे कि शिक्षा का अधिकार जाति, लिंग, या वर्ग के आधार पर नहीं, बल्कि जन्मजात मानवीय अधिकार के रूप में सभी को मिलना चाहिए।

समान शिक्षा के प्रमुख तत्व:

1. स्त्री और पुरुष दोनों को समान शिक्षा के अवसर मिलें।
2. समाज के प्रत्येक वर्ग तक शिक्षा की पहुँच हो।
3. शिक्षा के माध्यम से सामाजिक अन्याय, छुआछूत और भेदभाव को समाप्त किया जाए।

उन्होंने आर्य समाज के माध्यम से बालिकाओं की शिक्षा के लिए विद्यालयों और गुरुकुलों की स्थापना कराई।

उनकी यह सोच भारतीय शिक्षा के लोकतंत्रीकरण की नींव थी — जिसका आधुनिक रूप 'Education for All' के रूप में देखा जा सकता है। NEP 2020 में भी 'Gender Inclusion Fund' और 'Universal Access to Education' जैसी नीतियाँ इसी दिशा में एक कदम हैं।

5. व्यावहारिक ज्ञान – महर्षि दयानंद सरस्वती का अंतिम किंतु अत्यंत महत्वपूर्ण शैक्षिक सिद्धांत था शिक्षा का संबंध जीवन और व्यवहार से होना चाहिए। वे केवल सैद्धांतिक या ग्रंथाधारित शिक्षा के पक्षधर नहीं थे। उन्होंने कहा कि–

'शिक्षा वही है जो मनुष्य को जीवन जीने की कला सिखाए।'

उनके अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं, बल्कि ज्ञान का प्रयोग करना सिखाना है। इसलिए उन्होंने शिक्षा को कौशल, श्रम, विज्ञान, और स्वावलंबन से जोड़ने की आवश्यकता बताई।

व्यावहारिक शिक्षा के प्रमुख बिंदु:

1. शिक्षा व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाए।
2. कृषि, उद्योग, व्यापार और विज्ञान से संबंधित ज्ञान दिया जाए।
3. विद्यार्थियों को हाथ से काम करने, प्रयोग करने, और समाज में योगदान देने की प्रेरणा मिले।
4. शिक्षा में जीवनोपयोगी विषयों को सम्मिलित किया जाए।

उनकी दृष्टि में एक शिक्षित व्यक्ति वह नहीं जो केवल पुस्तकें पढ़े, बल्कि वह जो समाज के हित में अपने ज्ञान का प्रयोग करे।

यह विचार आज 'Skill & based Education' और 'Vocational Training' के रूप में NEP 2020 का अभिन्न हिस्सा बन चुका है।

भारत की नई शिक्षा नीति (NEP 2020) – नई शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा प्रणाली में एक ऐतिहासिक परिवर्तन के रूप में देखी जाती है। इसका उद्देश्य भारतीय शिक्षा को आधुनिक, समावेशी, शोधमुखी और व्यवहारिक बनाना है। यह नीति केवल स्कूल या कॉलेज स्तर की शिक्षा में बदलाव नहीं लाती, बल्कि पूरे शैक्षणिक ढांचे को पुनर्गठित करती है ताकि विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास हो सके। इसके प्रमुख सिद्धांतों में पाँच मुख्य पहलू शामिल हैं – समग्र विकास, मातृभाषा में शिक्षा, लचीला पाठ्यक्रम, नैतिक और मूल्यपरक शिक्षा, तथा प्रौद्योगिकी का उपयोग। इन सभी का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि भारत की नई पीढ़ी केवल जानकारी रखने वाली नहीं, बल्कि रचनात्मक, संवेदनशील और नवाचारप्रिय बने।

1. **समग्र विकास –** इसका अर्थ है विद्यार्थी के व्यक्तित्व के हर पहलू – मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और नैतिक – का समान रूप से विकास। पुरानी शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थियों को मुख्य रूप से परीक्षा के अंक और रटने की क्षमता के आधार पर आँका जाता था। इससे उनमें सृजनात्मकता, तर्कशीलता और जीवन कौशलों का विकास सीमित रह जाता था। नई शिक्षा नीति इस दृष्टिकोण को बदलना चाहती है। इसमें कहा गया है कि शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का साधन नहीं बल्कि जीवन जीने की कला है। इसलिए अब विद्यालयों में ऐसे पाठ्यक्रम और गतिविधियाँ शामिल की जा रही हैं जो विद्यार्थियों को सोचने, समझने, विश्लेषण करने और व्यावहारिक जीवन में उपयोग करने के लिए प्रेरित करें। उदाहरण के लिए, कला, संगीत, नाटक, खेलकूद, योग, सामुदायिक सेवा और पर्यावरण संरक्षण जैसी गतिविधियों को शिक्षा का अभिन्न हिस्सा बनाया गया है। विद्यार्थियों को केवल विषयों में निपुण नहीं बल्कि भावनात्मक रूप से भी परिपक्व बनाने पर बल दिया गया है। इससे उनमें आत्मविश्वास, नेतृत्व, जिम्मेदारी और सहयोग की भावना विकसित होती है।

समग्र विकास का एक और महत्वपूर्ण पक्ष है कि विद्यार्थियों को अब सीमित दायरे में नहीं रखा जाएगा। उन्हें विज्ञान, कला, तकनीक और नैतिकता जैसे विविध क्षेत्रों में समान अवसर मिलेंगे। कक्षा में केवल शिक्षक बोलें और विद्यार्थी सुनें कृ यह पारंपरिक पद्धति अब धीरे–धीरे बदली जा रही है। अब 'एक्टिव लर्निंग' यानी सहभागितापूर्ण शिक्षा पर ध्यान दिया जा रहा है। इसका उद्देश्य है कि विद्यार्थी प्रश्न पूछें, तर्क करें, प्रयोग करें और अपनी समझ विकसित करें। इस प्रकार शिक्षा अब 'रटने' से 'समझने' की दिशा में आगे बढ़ रही है।

2. **मातृभाषा में शिक्षा–** नई शिक्षा नीति के अनुसार प्रारंभिक स्तर पर शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में दी जानी चाहिए। इसके पीछे वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण है। बच्चे जब अपनी मातृभाषा में सीखते हैं तो वे अवधारणाओं को अधिक गहराई से समझते हैं। भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, और जब अभिव्यक्ति अपनी भाषा में होती है, तो सीखना स्वाभाविक बन जाता है। विदेशी भाषा में शिक्षा देने से बच्चे के मस्तिष्क पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है क्योंकि उसे पहले भाषा समझनी पड़ती है और फिर विषय। लेकिन मातृभाषा में शिक्षा से वह सीधे विषय की आत्मा तक पहुँच पाता है। नीति कहती है कि कक्षा पाँच तक और जहाँ संभव हो वहाँ कक्षा आठ तक शिक्षा मातृभाषा में दी जाए। इससे ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों के लिए समान अवसर सुनिश्चित होंगे, क्योंकि अब भाषा उनके लिए बाधा नहीं बनेगी।

मातृभाषा में शिक्षा का उद्देश्य केवल सुविधा देना नहीं, बल्कि भारतीय भाषाओं और संस्कृति का संरक्षण भी है। भारत भाषाई रूप से समृद्ध देश है। हर भाषा में अपनी पहचान, परंपरा और ज्ञान की विरासत होती है। जब शिक्षा इन भाषाओं में दी जाती है, तो यह उस समाज की जड़ों को मजबूत करती है। साथ ही, यह नीति विद्यार्थियों में आत्मसम्मान भी बढ़ाती है क्योंकि वे अपनी भाषा में सोचने और बोलने पर गर्व महसूस करते हैं। मातृभाषा में शिक्षा के साथ–साथ विदेशी भाषाओं के ज्ञान को भी महत्व दिया गया है ताकि विद्यार्थी वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकें। इस प्रकार नीति का उद्देश्य भाषा को बाधा नहीं, बल्कि सेतु बनाना है।

3. **लचीला पाठ्यक्रम –** अब तक शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थियों को निश्चित धाराओं में बाँध दिया जाता था – जैसे विज्ञान, वाणिज्य और कला। इससे उनकी रुचि और क्षमता का पूरा उपयोग नहीं हो पाता था। नई शिक्षा नीति ने इस परंपरा को तोड़ दिया है। अब विद्यार्थी अपनी रुचि और भविष्य की दिशा के अनुसार विषयों का चयन कर सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि कोई विद्यार्थी गणित के साथ संगीत पढ़ सकता है, या भौतिकी के साथ इतिहास या नृत्य। इस लचीलेपन से शिक्षा अब सीमित दायरे से निकलकर बहुविषयी (Multidisciplinary) रूप ले रही है। नीति कहती है कि ज्ञान को वर्गीकृत नहीं किया जा सकताय विज्ञान और कला के बीच कोई दीवार नहीं होनी चाहिए। हर विषय दूसरे से जुड़ा है और वास्तविक जीवन में सभी ज्ञान एक साथ काम करते हैं।

लचीले पाठ्यक्रम का लाभ यह होगा कि विद्यार्थी अब अपनी रुचियों के अनुसार अध्ययन कर पाएंगे। इससे उनमें सीखने की प्रेरणा बढ़ेगी और वे किसी विषय को बोझ नहीं बल्कि अवसर के रूप में देखेंगे। साथ ही, नीति में कहा गया है कि विद्यार्थियों को किसी भी स्तर पर शिक्षा छोड़ने और बाद में फिर से जुड़ने की सुविधा होगी। इसे 'Multiple Entry and Unit System' कहा गया है। यानी अगर कोई विद्यार्थी किसी कारणवश पढ़ाई बीच में छोड़ता है, तो उसे अब तक के अध्ययन के लिए प्रमाणपत्र या डिप्लोमा मिलेगा और वह बाद में उसी स्तर से आगे की पढ़ाई जारी रख सकेगा। इससे शिक्षा अधिक समावेशी और जीवनपरक बनती है।

4. **नैतिक और मूल्यपरक शिक्षा –** शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम नहीं बल्कि एक ऐसा साधन है जो मनुष्य को अच्छा नागरिक बनाता है। इसलिए नई शिक्षा नीति में नैतिकता, आचार, संस्कार और नागरिकता के मूल्यों पर विशेष जोर दिया गया है। आधुनिक युग में जहाँ प्रतिस्पर्धा और भौतिकता बढ़ रही है, वहाँ मूल्यों का पतन भी एक चुनौती बन गया है।

NEP 2020 का मानना है कि शिक्षा को केवल बुद्धि नहीं, बल्कि चरित्र का निर्माण भी करना चाहिए। विद्यालयों में अब ऐसे विषय और गतिविधियाँ जोड़ी जा रही हैं जिनसे विद्यार्थियों में ईमानदारी, करुणा, सहानुभूति, सत्यनिष्ठा, जिम्मेदारी और सहनशीलता जैसी भावनाएँ विकसित हों।

नैतिक शिक्षा विद्यार्थियों को यह सिखाती है कि समाज में रहकर कैसे सही निर्णय लिए जाएँ, दूसरों के अधिकारों का सम्मान किया जाए और राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखा जाए। इसके अंतर्गत भारतीय संस्कृति, संविधान के मूल्य, पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार और वैश्विक नागरिकता जैसे विषयों को भी जोड़ा गया है। जब विद्यार्थी नैतिक रूप से मजबूत होंगे, तभी वे समाज और देश के प्रति अपने कर्तव्यों को समझ पाएंगे। इस प्रकार नई शिक्षा नीति एक ऐसे संतुलित व्यक्ति का निर्माण करना चाहती है जो ज्ञानवान तो हो ही, परंतु संवेदनशील और जिम्मेदार भी हो।

5. **प्रौद्योगिकी का उपयोग –** 21वीं सदी सूचना और प्रौद्योगिकी का युग है। शिक्षा प्रणाली अगर इस बदलाव के साथ नहीं चलती, तो वह पीछे रह जाएगी। इसलिए NEP 2020 ने शिक्षा में डिजिटल तकनीक के प्रयोग को एक केंद्रीय स्थान दिया है। इस नीति के अनुसार शिक्षण, सीखने, मूल्यांकन और शोध – सभी क्षेत्रों में तकनीक का प्रयोग किया जाएगा। ऑनलाइन शिक्षा, वर्चुअल कक्षाएँ, डिजिटल लाइब्रेरी, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग और डेटा विश्लेषण जैसे आधुनिक उपकरणों को शिक्षा प्रणाली में शामिल किया जाएगा। इसका उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी वैश्विक स्तर की जानकारी और अवसरों से जुड़ सकें।

नीति में 'राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच' (National Educational Technology Forum – NETF) की स्थापना का प्रस्ताव है, जो शिक्षकों और छात्रों को तकनीकी रूप से सक्षम बनाने में सहायता करेगा। COVID-19 महामारी के दौरान यह स्पष्ट हुआ कि भविष्य की शिक्षा डिजिटल और मिश्रित (Blended) रूप में होगी। इसलिए छम्च् 2020 ने तकनीकी साक्षरता को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाया है। अब विद्यार्थियों को डिजिटल टूल्स, प्रोग्रामिंग, कोडिंग, ऑनलाइन सुरक्षा और तकनीकी नवाचार के क्षेत्र में प्रशिक्षण दिया जाएगा। इससे वे न केवल उपभोक्ता बनेंगे, बल्कि तकनीक के सृजनकर्ता भी बन सकेंगे।

प्रौद्योगिकी का उपयोग ग्रामीण और शहरी शिक्षा के बीच की खाई को भी कम करेगा। जहाँ पहले संसाधनों की कमी से दूरस्थ क्षेत्रों के बच्चे पिछड़ जाते थे, वहीं अब ऑनलाइन प्लेटफॉर्म उन्हें भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँचाने में मदद करेंगे। साथ ही, डिजिटल शिक्षा से अनुसंधान और नवाचार को भी बढ़ावा मिलेगा क्योंकि विद्यार्थी अब वैश्विक ज्ञान-स्रोतों से सीधे जुड़ सकेंगे।

इन पाँचों बिंदुओं को समग्र रूप से देखें तो स्पष्ट होता है कि छम्च् 2020 शिक्षा को केवल सूचना देने का माध्यम नहीं, बल्कि जीवन को दिशा देने वाला तंत्र बनाना चाहती है। समग्र विकास से विद्यार्थी के व्यक्तित्व का निर्माण होगा, मातृभाषा में शिक्षा से समझ और अभिव्यक्ति मजबूत होगी, लचीले पाठ्यक्रम से रचनात्मकता बढ़ेगी, नैतिक शिक्षा से चरित्र का निर्माण होगा और प्रौद्योगिकी से शिक्षा आधुनिक और वैश्विक स्तर की बनेगी। इस नीति का उद्देश्य ऐसा भारत बनाना है जहाँ शिक्षा हर व्यक्ति तक पहुँचे, हर बच्चे को अपनी क्षमता का पूर्ण विकास करने का अवसर मिले, और देश ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति तथा मानवता के क्षेत्र में विश्व का नेतृत्व कर सके।

इस प्रकार नई शिक्षा नीति 2020 केवल एक दस्तावेज नहीं, बल्कि भारत के भविष्य की रूपरेखा है – एक ऐसा भविष्य जहाँ शिक्षा समावेशी, सशक्त, प्रेरणादायक और जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ी होगी। यही कारण है कि इसे 21वीं सदी के 'ज्ञान युग' की आधारशिला कहा जा सकता है।

दयानंद सरस्वती के विचार और नई शिक्षा नीति (2020) के बीच साम्यता

1. **मातृभाषा में शिक्षा –**महर्षि दयानंद सरस्वती का मानना था कि शिक्षा मातृभाषा में दी जानी चाहिए ताकि विद्यार्थी विषयों को सहज रूप से समझ सकें और ज्ञान का वास्तविक अर्थ ग्रहण कर सकें। विदेशी भाषा में शिक्षा देने से बच्चों की सोच और अभिव्यक्ति सीमित हो जाती है।नई शिक्षा नीति 2020 में भी कहा गया है कि प्रारंभिक स्तर पर (कक्षा 5 तक, और जहाँ संभव हो वहाँ कक्षा 8 तक) शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में दी जाएगी। दोनों दृष्टिकोणों का उद्देश्य यह है कि बच्चा अपनी भाषा में सोचकर सीख सके। मातृभाषा में शिक्षा से बालकों की रचनात्मकता, तर्कशक्ति और आत्मविश्वास बढ़ता है। यह भाषा को ज्ञान का माध्यम बनाकर शिक्षा को लोकतांत्रिक बनाती है।

2. **नैतिक शिक्षा–**दयानंद सरस्वती का मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान देना नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण करना है। उन्होंने कहा था कि शिक्षा वही है जो मनुष्य को 'जीवन जीने की कला' सिखाए। छ ए झ 2020 में 'मूल्यपरक शिक्षा' और 'जीवन-कौशल' पर विशेष बल दिया गया है। इसमें विद्यार्थियों में ईमानदारी, सहानुभूति, जिम्मेदारी और नागरिकता के मूल्यों का विकास करने पर जोर दिया गया है।दोनों ही दृष्टिकोण मानते हैं कि नैतिकता और आचार-विचार के बिना शिक्षा अधूरी है। NEP 2020 में यह सुनिश्चित किया गया है कि शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों में संवेदनशीलता, सहयोग और मानवीय मूल्यों की भावना भी विकसित हो।

3. **व्यावहारिक शिक्षा–** दयानंद सरस्वती के अनुसार शिक्षा का संबंध व्यवहार और जीवन से होना चाहिए। केवल सैद्धांतिक ज्ञान मनुष्य को पूर्ण नहीं बनाता, जब तक वह उसे जीवन में लागू न करे।NEP 2020 में 'कौशल आधारित शिक्षा' (Skill&based Education) का प्रावधान किया गया है। कक्षा 6 से ही विद्यार्थियों को व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा, जैसे कोडिंग, बढ़ईगिरी, कृषि, डिजाइन आदि सिखाई जाएगी। दोनों विचारों का उद्देश्य यह है कि शिक्षा केवल परीक्षा पास करने का साधन न बनकर जीवनोपयोगी बने। विद्यार्थी व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करके आत्मनिर्भर और सक्षम नागरिक बनें।

4. **समान शिक्षा–**दयानंद सरस्वती ने शिक्षा को सभी वर्गों के लिए समान रूप से उपलब्ध कराने की बात कही। उनका मत था कि स्त्री और पुरुष दोनों को शिक्षा का समान अधिकार होना चाहिए।NEP 2020 में 'सबके लिए शिक्षा' (Education for All) का लक्ष्य रखा गया है। इसमें विशेष रूप से बालिकाओं, ग्रामीण विद्यार्थियों, अनुसूचित जाति-जनजाति और दिव्यांग बच्चों की शिक्षा पर ध्यान दिया गया है। दोनों विचार समानता और समावेशिता पर आधारित हैं। शिक्षा को सामाजिक न्याय और अवसर की समानता का माध्यम माना गया है। NEP 2020 में भी 'Inclusive Education' को प्रमुख उद्देश्य बताया गया है ताकि कोई भी बच्चा शिक्षा से वंचित न रहे।

5. **स्वदेशी ज्ञान और संस्कृति –** दयानंद सरस्वती ने भारतीय संस्कृति, परंपरा और वैदिक ज्ञान के पुनरुत्थान पर बल दिया। उनका मानना था कि

भारतीय शिक्षा प्रणाली को अपनी जड़ों से जुड़कर विकसित किया जाना चाहिए।NEP 2020 में भारतीय परंपरा, कला, भाषा, योग, आयुर्वेद, और शास्त्रीय संगीत जैसे विषयों को शिक्षा में समाहित करने की बात कही गई है।

स्पष्ट है कि दयानंद सरस्वती के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उनके समय में थे। NEP 2020 उनकी शिक्षा-दृष्टि को आधुनिक रूप में प्रस्तुत करती है।

शिक्षा में चरित्र निर्माण का महत्व – शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल ज्ञान अर्जन या परीक्षा में उत्तीर्ण होना नहीं है, बल्कि व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में निहित है। शिक्षा मनुष्य को केवल बुद्धिमान नहीं बनाती, बल्कि उसे नैतिक, जिम्मेदार और समाजोपयोगी भी बनाती है। इसी कारण शिक्षा में चरित्र निर्माण (Character Building) का विशेष स्थान है। यदि किसी व्यक्ति के पास ज्ञान तो है, परंतु उसका चरित्र दुर्बल है, तो वह समाज के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। शिक्षा का उद्देश्य तभी पूर्ण माना जा सकता है जब वह व्यक्ति में अच्छे संस्कार, ईमानदारी, अनुशासन, सहनशीलता, करुणा, और जिम्मेदारी जैसे गुणों का विकास करे।

शिक्षा में प्रौद्योगिकी और आधुनिकता – दयानंद युग में प्रौद्योगिकी का विकास सीमित था, किंतु वे हमेशा नवीन ज्ञान और विज्ञान के समर्थक थे। NEP 2020 इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए तकनीकी शिक्षा, डिजिटल साक्षरता और नवाचार को शिक्षा का अंग बनाती है। यह वेदिक चिंतन और आधुनिक विज्ञान के बीच संतुलन स्थापित करती है।

भविष्य की दिशा – भारत की नई शिक्षा नीति (NEP 2020) ने देश की शिक्षा व्यवस्था को आधुनिक, लचीला और समावेशी बनाने की दिशा में एक सशक्त कदम उठाया है। परंतु यदि भारतीय शिक्षा को वैश्विक स्तर पर एक विशिष्ट पहचान दिलानी है, तो इसे केवल नीतिगत स्तर पर नहीं, बल्कि व्यावहारिक और सांस्कृतिक आधार पर भी मजबूत बनाना होगा। इसके लिए महर्षि दयानंद सरस्वती के शैक्षिक सिद्धांतों को NEP 2020 की भावना के साथ जोड़ना अत्यंत आवश्यक है। दयानंद के विचारों में शिक्षा को जीवन से जोड़ने, नैतिकता और स्वदेशी मूल्यों को बढ़ावा देने तथा आत्मनिर्भरता को विकसित करने की स्पष्ट दिशा दिखाई देती है।

1. **भारतीय मूल्य, संस्कृति और नैतिकता का समावेश**– शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य केवल ज्ञान अर्जन नहीं, बल्कि सुसंस्कृत नागरिक तैयार करना है। इसलिए शिक्षा में भारतीय मूल्य, परंपरा और संस्कृति का समावेश करना अत्यंत आवश्यक है। आधुनिक शिक्षा में जहाँ तकनीकी और वैज्ञानिक सोच को स्थान मिला है, वहीं हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारतीय संस्कृति में शिक्षा को हमेशा साधना और संस्कार के रूप में देखा गया है।
2. **शिक्षक प्रशिक्षण में दयानंद के आदर्शों का समावेश** – शिक्षा प्रणाली की सफलता का सबसे बड़ा आधार शिक्षक होते हैं। दयानंद सरस्वती ने कहा था कि शिक्षक को केवल ज्ञान का दाता नहीं, बल्कि समाज के निर्माणकर्ता के रूप में कार्य करना चाहिए। अत: भविष्य की दिशा में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में उनके आदर्शों और शिक्षण पद्धतियों का समावेश आवश्यक है।
3. **आत्मनिर्भरता और नवाचार की भावना का विकास** – दयानंद सरस्वती का मूल संदेश था की स्वराज और स्वावलंबन। यह विचार आज के युग में आत्मनिर्भर भारत के दृष्टिकोण से पूर्णत: प्रासंगिक है।

भविष्य की शिक्षा का लक्ष्य ऐसा विद्यार्थी तैयार करना होना चाहिए जो केवल नौकरी खोजने वाला नहीं, बल्कि नवाचार करने वाला हो।

NEP 2020 ने इस दिशा में अनेक सुधार किए हैं जैसे vocational education entrepreneurship training] Am¡a skill development पर जोर।

निष्कर्ष – महर्षि दयानंद सरस्वती और भारत की नई शिक्षा नीति (NEP 2020) दोनों का मूल उद्देश्य शिक्षा को समाज परिवर्तन का सशक्त माध्यम बनाना है। दयानंद सरस्वती का मानना था कि शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का साधन नहीं, बल्कि व्यक्ति और राष्ट्र के उत्थान का आधार है। उन्होंने ऐसी शिक्षा का समर्थन किया जो मनुष्य को आत्मनिर्भर, नैतिक, और विवेकशील बनाए। उनका "Lo' का दर्शन –अर्थात् आत्मज्ञान, स्वदेशीता, और आत्मनिर्भरता – आधुनिक शिक्षा नीति के 'आत्मनिर्भर भारत' के लक्ष्य से पूर्णत: मेल खाता है।

NEP 2020 ने शिक्षा को ज्ञान, कौशल, संस्कृति, और नवाचार का संगम बनाया है। इसमें मातृभाषा में शिक्षा, मूल्यपरक शिक्षण, अनुसंधान, और तकनीकी प्रगति के साथ-साथ भारतीय परंपरा और संस्कृति को भी स्थान दिया गया है। यही वे तत्व हैं जिनकी वकालत महर्षि दयानंद ने वर्षों पहले की थी। उनका विश्वास था कि यदि शिक्षा भारतीय जीवन-मूल्यों और नैतिक आदर्शों पर आधारित हो, तो समाज में समानता, स्वतंत्रता, और बौद्धिक जागरण का युग आएगा।

आज जब भारत वैश्विक मंच पर एक नई पहचान बना रहा है, तब दयानंद के शैक्षिक सिद्धांत NEP 2020 के लिए मार्गदर्शक प्रकाश की तरह कार्य कर रहे हैं। भविष्य की शिक्षा प्रणाली तभी सफल होगी जब उसमें भारतीय संस्कृति की जड़ें और आधुनिक विज्ञान की शाखाएँ दोनों समाहित हों। इस प्रकार, महर्षि दयानंद सरस्वती की विचारधारा आज भी प्रासंगिक है और नई शिक्षा नीति के माध्यम से भारत के समग्र, नैतिक, और आत्मनिर्भर विकास की दिशा तय करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दयानंद सरस्वती – सत्यार्थ प्रकाश, आर्य समाज प्रकाशन, 1875।
2. मानव संसाधन विकास मंत्रालय (भारत सरकार) – राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020), नई दिल्ली, 2020।
3. शर्मा, के.एन. – भारतीय शिक्षाशास्त्र का इतिहास, विनय प्रकाशन, दिल्ली, 2019।
4. जोशी, आर.एस. – भारतीय शिक्षा और नवाचार नीति, वाणी प्रकाशन, जयपुर, 2021।
5. वेद प्रकाश – शिक्षा दर्शन और सामाजिक सुधार, ज्ञान भारती, वाराणसी, 2018।
6. पांडे, सी.पी. – आधुनिक भारतीय शिक्षा के आयाम, नई शिक्षा पुस्तकालय, इलाहाबाद, 2020।
7. मिश्र, एस.एन. – महर्षि दयानंद और शिक्षा का भारतीय दृष्टिकोण, आर्य समाज प्रकाशन, हरिद्वार, 2017।
8. कुलश्रेष्ठ, एम.एल. – राष्ट्रीय शिक्षा नीति: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, प्रकाशन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2021।
9. कुमार, अरुण – 21वीं सदी की भारतीय शिक्षा व्यवस्था, अटलांटिक पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2022।
10. शर्मा, नीलम – भारतीय संस्कृति और शिक्षा में नैतिक मूल्य, वाणी प्रकाशन, भोपाल, 2019।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Blending Tongues, Bridging Worlds: Chutnefying in Diasporic and Popular Culture

Pr Minu Gidwani*

***Asst. Professor (English) PMCoE, BKSN Govt. College, Shajapur (M.P.) INDIA**

Abstract: Language is not merely a tool for communication; it serves as a dynamic repository of culture, memory, and identity. Among multilingual communities, *chutnefying*—the blending of two or more languages into a fluid, hybrid expression—has emerged as an effective medium of cultural expression. This paper examines chutnefying not only as a linguistic phenomenon but also as an expression of lived experience, a ground for social negotiation, and a form of creative agency. Driven by histories of migration, colonial encounters, and globalization, chutnefying enables speakers to inhabit multiple cultural spheres simultaneously, creating an environment in which tradition and modernity converge. Drawing on examples from Indian diasporic communities, Caribbean chutney music, Bollywood cinema, and contemporary digital media, this study documents how chutnefying functions as a deliberate artistic and social strategy. It empowers speakers to validate their identities, evoke humor, bridge generational divides, and challenge established linguistic hierarchies, while fostering innovative aesthetic forms. Far from a corruption of language, chutnefying demonstrates the endurance, adaptability, and richness of culture, revealing how linguistic fusion can illuminate the complexities of human experience and the creativity of communities navigating a multifaceted world.

Introduction - Language is not merely an instrument of communication; it serves as an active repository of culture, memory, and identity. Among multilingual communities, speakers often blend languages creatively, producing hybrid forms of speech that reflect the complexities of their social and cultural worlds. This phenomenon, commonly called *chutnefying*, is analogous to the blending of spices in chutney, where each linguistic ingredient contributes its unique flavor to an integrated whole (Rushdie 66).

Chutnefying is deeply rooted in histories of migration, colonization, and globalization. For example, in India, the coexistence of Hindi, English, and various regional languages encourages code-switching and translanguaging. García and Li describe translanguaging as the strategic use of diverse linguistic resources to negotiate meaning and identity (García and Li 62). Similarly, diasporic communities in the Caribbean, Europe, and North America mix their heritage languages with English to retain cultural connections, affirm identities, and navigate new social realities (Bakhtin 358; Kachru 23).

This study examines chutnefying as a vehicle of cultural expression across various contexts, including Indian diasporic communities, Caribbean chutney music, Bollywood films, and contemporary online media. In exploring these linguistic mergers, the study shows how chutnefying enables individuals to validate their identities, bridge disparate cultural worlds, and create new aesthetic forms. In doing so, it reveals intricate linguistic and cultural interactions in a globalized world.

Literature Review

Scholars have long examined linguistic hybridity as a site of cultural negotiation. For example, Kachru's concept of *World Englishes* highlights how colonial history produced varieties of English that interact with local languages, challenging notions of linguistic purity (Kachru 23). Bakhtin's theory of heteroglossia similarly emphasizes that hybrid languages embody multiple voices, reflecting both social tensions and creative expression (Bakhtin 358).

In diasporic contexts, Dabydeen observes that Indo-Caribbean communities blend Bhojpuri, Hindi, and Creole to preserve identity and cultural memory (Dabydeen 72), while Ashraf shows that Bollywood's use of Hinglish communicates cosmopolitanism alongside cultural intimacy (Ashraf 110). Recent scholarship also shows that social media and online content accelerate hybrid linguistic registers, fostering playful self-expression and community belonging (Androutsopoulos 41; Sharma 66). Building on these discussions, this paper highlights chutnefying as a creative cultural practice, linking linguistic innovation to media, humor, and the negotiation of culture.

Historical Context: Linguistic mixing is not a new phenomenon; it has occurred throughout history whenever cultures, societies, and trade networks intersect. Earlier patterns of migration, colonization, and commerce created

contexts of coexistence and communication across multiple languages, leading to linguistic hybridity (Heller 45). In India, colonial encounters exposed English to vernaculars such as Hindi, Bengali, and Marathi, producing what Kachru calls "outer-circle Englishes"—localized varieties of English shaped by native linguistic structures (Kachru 23).

The Indian diaspora offers rich examples of adaptive hybrid speech. For instance, indentured immigrants from Bihar and Uttar Pradesh brought Bhojpuri and Awadhi to the Caribbean, where they integrated these languages with African Creole, English, and other regional dialects, creating speech forms that were both pragmatic and culturally rich (Vertovec 78). These hybrid forms served not only practical communication needs but also transmitted social meanings, allowing communities to retain a sense of identity and belonging in new contexts (Alleyne 102).

Bakhtin's concept of heteroglossia provides a framework for understanding linguistic hybridity, arguing that language is inherently dialogic and shaped by multiple social voices and power structures (Bakhtin 358). The development of Caribbean chutney-soca music exemplifies this idea: Hindi lyrics are closely integrated with English, with musical forms influenced by Afro-Caribbean rhythms, thus embodying a nuanced blend of heritage, modernity, and transnational identity (Manuel 65). Through these musical forms, linguistic mixing does more than convey meaning; it affirms a unique Indo-Caribbean subjectivity and demonstrates that hybrid languages can function as powerful expressive and performative tools (Manuel 65).

Overall, historical and diasporic contexts show that chutnefying arises from practical necessity, social compromise, and aesthetic creativity. Indeed, linguistic hybridity has long served as a convergence of culture, identity, and language, well before the intensification brought by present-day globalization and digital media (Pennycook 128; García 47).

Media Representations

Literature and Film: Literature provides clear examples of chutnefying. For instance, Salman Rushdie's *The Satanic Verses* integrates English with Hindi, Urdu, and Farsi to create an intense linguistic experience (Rushdie 78). This blending of languages results in cultural hybridity and a postcolonial subjectivity that allows readers to perceive the world through a "dual vision."

Bollywood cinema similarly exhibits linguistic blending. Contemporary Hindi films often mix English into dialogue and song. For example, *Zindagi Na Milegi Dobara* (2011) and *Student of the Year* (2012) use Hinglish to articulate urban youth culture, global aspirations, and local roots. Hinglish in cinema embodies India's *glocal* identity—connected to the global while rooted in the local. Such linguistic blending makes characters more relatable to modern audiences and conveys cultural mobility.

Music: Music is an especially powerful medium for chutnefying in diasporic contexts. Caribbean chutney-soca music, for example, blends Indian lyrics with calypso rhythms, creating a festive hybrid sound rich in ethnic significance. Similarly, Bollywood music often incorporates English hooks within traditional Hindi song structures, producing a hybrid musical style with translingual resonance. These practices demonstrate that chutnefying in music is more than a linguistic shift: it enables artists to innovate and challenge norms, reaching audiences who traverse multiple linguistic and cultural spheres.

Digital and Online Media: The advent of social media has accelerated the spread of chutnefying. Platforms like Instagram, TikTok, and YouTube encourage lighthearted blending of languages. Hybrid forms like Hinglish, Taglish, and Spanglish appear in captions, memes, and video clips, allowing users to convey humor, reinforce identity, and affirm cultural belonging. Androutsopoulos (2005) notes that the internet serves as a "laboratory of language mixture" where new forms of multilingual communication emerge (Androutsopoulos 207). For example, an Indian social media post might say, "Mood kharab hai, but let's Netflix and chill," mixing English and Hindi to reflect the cultural ethos of young urbanites.

Identity Construction: Chutnefying plays a key role in shaping and enacting identity. Hybrid language practices can signal group membership, mark social distinctions, and convey cultural competence. For diasporic individuals, chutnefied speech enshrines heritage while facilitating accommodation in the host culture: maintaining foundational identity alongside integration into a new society. Language choice is inherently social, reflecting alignment, solidarity, and identity. Viewed in this light, chutnefying serves as an intentional linguistic strategy for expressing complex identities amid influences from multiple cultures.

Creativity, Humor, and Cultural Negotiation: Chutnefying is not merely functional; it is fundamentally creative. Humor, irony, and wordplay often rely on switching languages, producing layered meanings that monolingual speech cannot convey. Comedians, poets, and online creators frequently use language mixing for aesthetic effect and playful expression. Pennycook (2007) argues that chutnefying is a form of cultural innovation, revealing language as an arena of ongoing negotiation and invention (Pennycook 122). By blending linguistic norms, speakers break free from conventional boundaries, reshape narrative traditions, and articulate their identities in culturally resonant ways.

Criticisms: Despite its cultural richness, chutnefying often faces criticism. Language purists commonly dismiss hybrid languages as "corrupt" or "degenerate," fearing the loss of native forms. Some educational policies reinforce monolingual ideologies, marginalizing hybrid speech in favor of standardized English or regional languages. However, dismissing chutnefying overlooks its importance for cultural endurance. As Ngig) wa Thiong'o (1986) asserts, language is a medium for identity and resistance, and hybridization

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

can be a strategy to preserve cultural vibrancy in changing contexts (Ngig) 110). Thus, chutnefying exemplifies resilience, adaptation, and creative innovation rather than linguistic decline.

Globalization and the Future of Chutnefying: Globalization has accelerated chutnefying by bringing languages into ever-closer contact through migration, media, and the internet. As a result, linguistic experimentation continues to grow, with hybrid forms increasingly central to self-identification, cultural negotiation, and artistic expression. In this global context, chutnefying is more than an aesthetic choice: it can be a matter of survival and belonging, affirming cultural fluidity. It embodies the potential to inherit multiple heritages while creating new cultural forms.

Conclusion: Chutnefying transcends mere wordplay to become a significant cultural practice embodying creativity, resilience, and social negotiation. By merging linguistic traditions, communities express hybrid identities, navigate cultural complexities, and challenge entrenched language hierarchies.

Across diasporic communities, Caribbean chutney music, Bollywood films, and digital media, chutnefying operates at the confluence of individual expression and collective cultural memory. In embracing language blending, speakers assert their agency, evoke humor, and bridge generational and transnational divides, creating aesthetic forms that resonate locally and globally.

Far from diminishing linguistic richness, chutnefying enriches communication, celebrates cultural diversity, and reveals human creativity and adaptability. In a globalized world, it stands as a testament to the fluid, ever-changing nature of language and its profound connection to identity and culture.

References:-

1. Alleyne, Mervyn C. *Roots of Caribbean Music: Language and Culture in the Diaspora*. University Press of the West Indies, 2012.
2. Androutsopoulos, Jannis. “Code-Switching in Computer-Mediated Communication: Language Mixing in Graphological Stylization.” *Pragmatics*, vol. 15, no. 1, 2005, pp. 1–24.
3. Ashraf, Farah. *Hinglish in Bollywood: Language, Identity, and Modernity*. Routledge, 2019.
4. Bakhtin, Mikhail. *The Dialogic Imagination: Four Essays*. Translated by Caryl Emerson and Michael Holquist, University of Texas Press, 1981.
5. Dabydeen, David. *Heterogeneous Voices: Language and Identity in the Indo-Caribbean Diaspora*. Peepal Tree Press, 2005.
6. García, Ofelia, and Li Wei. *Translanguaging: Language , Bilingualism and Education*. Palgrave Macmillan, 2014.
7. Heller, Monica. *Paths to Post-Nationalism: A Critical Ethnography of Language and Identity*. Oxford University Press, 2007.
8. Kachru, Braj B. *The Alchemy of English: The Spread, Functions, and Models of Non-Native Englishes*. University of Illinois Press, 1990.
9. Manuel, Peter. *Caribbean Currents: Caribbean Music from Rumba to Reggae*. Temple University Press, 2006.
10. Ngig) wa Thiong’o, Ngig). *Decolonising the Mind: The Politics of Language in African Literature*. James Currey, 1986.
11. Pennycook, Alastair. *Global Englishes and Transcultural Flows*. Routledge, 2007.
12. Rushdie, Salman. *The Satanic Verses*. Viking, 1988.
13. Sharma, Anjali. “Digital Chutnefying: Online Language Blending and Identity Formation.” *Journal of Sociolinguistics*, vol. 25, no. 1, 2021, pp. 60–75.
14. Vertovec, Steven. *The Indian Diaspora in the Caribbean: Migration, Hybridity, and Identity*. Routledge, 2000.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मनीषा कुलश्रेष्ठ का उपन्यास त्रिमाया: मातृ सत्ता और इकोफेमिनिज्म का जीवंत दस्तावेज

हिमांशु नागदा* डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार**

* शोधार्थी (हिंदी) तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिंदी) एम.के.एच.एस गुजराती गर्ल्स कॉलेज, इंदौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – उपन्यास त्रिमाया मातृवंशी समुदायों की सामाजिक संरचनाओं, स्त्री-केन्द्रित सांस्कृतिक परंपराओं और प्रकृति-मानव अंतर्संबंधों का विश्लेषणात्मक रूप से अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह कृति हाथी-समूह की प्राकृतिक जीवन-व्यवस्था से लेकर खासी तथा नायर समाज की मातृसत्तात्मक प्रणालियों तक एक वैचारिक अनुक्रम निर्मित करती है, जिसके माध्यम से मातृसत्ता के विविध रूपों, वंशानुक्रम, सामुदायिक नेतृत्व और सांस्कृतिक स्मृतियों का तुलनात्मक परीक्षण संभव होता है। उपन्यास इको-फेमिनिज्म की अवधारणाओं विशेषत: स्त्री और प्रकृति के पारस्परिक सह-निर्भर संबंध को साहित्यिक और समाजशास्त्रीय दृष्टि से नए आयाम प्रदान करता है। माया, सोपान और माइया मार्गरीटा जैसे पात्रों के माध्यम से यह कृति व्यक्तिगत अनुभवों को व्यापक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में रूपांतरित करती है तथा मातृसत्ता के विघटन और पितृसत्ता के उभार की प्रक्रियाओं को चिन्हित करती है। इस प्रकार त्रिमाया मातृसत्ता एवं इको-फेमिनिज्म के अध्ययन हेतु एक प्रासंगिक साहित्यिक दस्तावेज के रूप में उभरता है।

शब्द कुंजी – मातृसत्ता, इकोफेमिनिज्म, स्त्री-नेतृत्व, प्रकृति, समुदाय, पर्यावरण।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के इतिहास में समाज का स्वरूप प्राय: पुरुष-प्रधान रहा है, और भारत भी इस परंपरा से अछूता नहीं है। किंतु इतिहास के प्रवाह में कुछ ऐसी संस्कृतियाँ और समुदाय भी विद्यमान रहे हैं जिन्होंने इस प्रवृत्ति को चुनौती दी है और स्त्री को समाज के केंद्र में स्थापित किया है। जनजातीय और आदिम समाज इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे अतीत और वर्तमान के बीच सेतु का कार्य करते हुए हमें यह संकेत देते हैं कि सामाजिक संरचना का विकास केवल पितृसत्तात्मक आधार पर ही नहीं हुआ है, बल्कि मातृ प्रधान व्यवस्थाएँ भी मानव जीवन का अभिन्न हिस्सा रही हैं। विश्व के विभिन्न भूभागों में आज भी ऐसे मातृसत्तात्मक समाज जीवंत हैं, जहाँ सदियों से स्त्रियाँ राजनीति, अर्थव्यवस्था और व्यापक सामाजिक ढाँचे का संचालन करती आई हैं और वंश परंपरा माता के नाम से आगे बढ़ती है। विश्व पटल पर यदि दृष्टि डालें तो मातृ सत्ता की झलक विभिन्न महाद्वीपों में दिखाई देती है। मिनांगकाबाउ दुनिया के सबसे बड़े मातृ वंशीय समाजों में से एक है, जिसमें संपत्ति और वंशानुक्रम महिलाओं के माध्यम से होता है। चीन की मोसुओ जनजाति, जिसकी जनसंख्या लगभग चालीस हजार आँकी जाती है, इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। यह समाज बौद्ध धर्म का अनुयायी होते हुए भी अपनी विशिष्ट परंपराओं से अलग पहचान बनाए हुए है, जहाँ विवाह का प्रचलित स्वरूप अनुपस्थित है, किंतु परिवार और समुदाय का संचालन स्त्रियों के नेतृत्व में होता है। इसी प्रकार कोस्टा रिका का ब्रिब्रि समाज, जिसकी जनसंख्या मोसुओ की आधी मानी जाती है, भी मातृ प्रधान परंपरा का संवाहक है, जहाँ स्त्रियों को न केवल उत्तराधिकार का अधिकार प्राप्त है, बल्कि उन्हें समाज की गरिमा और सम्मान की सर्वोच्च प्रति मूर्ति भी माना जाता है। इसी प्रकार अफ्रीका के अकान, उत्तर अमेरिका की कुछ आदिवासी जनजातियाँ तथा यूरोप और एशिया के सीमांत समाज हमें यह दर्शाते हैं कि मातृ सत्ता केवल अपवाद नहीं, बल्कि सामाजिक विकास का एक वैकल्पिक और ऐतिहासिक रूप है।

मार्क्सवादी विचारक फ्रेडरिक एंगल्स मातृ सत्ता के अवसाद का कारण निजी संपत्ति को मानते हैं। उनके अनुसार 'मातृ सत्ता का विनाश नारी जाति की विश्व ऐतिहासिक महत्व की पराजय थी। अब घर के अंदर भी पुरुष ने अपना आधिपत्य जमा लिया। नारी पदच्युत कर दी गई। वह जकड़ दी गई। वह पुरुष की वासना की दासी, संतान उत्पन्न करने का एक यंत्र मात्र बन कर रह गई।'[1] तो मातृ सत्ता की अवधारणा की अविश्वासी गर्दा लर्नर, अपनी पुस्तक 'क्रीऐशन ऑफ पैट्रीआकी' में वह लिखती हैं,'I am defining matriarchy as the mirror image of patriarchy. Using that definition, I would conclude that no matriarchal society has ever existed.'[2] अर्थात मातृ सत्ता और मातृ वंशीय दोनों अलग बिंदु हैं। मातृ वंश में स्त्री एवं पुरुष दोनों को समान दर्जा दिया जाता हैं। मातृ सत्ता का कोई अस्तित्व नहीं। मनीषा कुलश्रेष्ठ ने भी मातृसत्ता को इस प्रकार परिभाषित किया है, 'मातृसत्ता बहुत मोहक और यूटोपियन शब्द है.... नवपाषाण युग में जब 'परिवार' संस्था अपने प्रारम्भिक चरण में होगी तो इसकी स्थापना एक समूह के रूप में सुरक्षा, आवास और भोजन के लिए स्त्री ने की होगी। इसलिए उनके लिए मातृ के साथ 'सत्ता' शब्द का अर्थ शासन नहीं सहयोग रहा है। जबकि पितृसत्ता के साथ ऐसा नहीं है।'[3] 'मातृसत्ता क्या है? यह महज पितृसत्ता का महिला संस्करण नहीं है। एक मादा मुखिया स्वतन्त्र होती है, स्वायत्ता होती है। वह केवल कुल को पोषण और सुरक्षा ही नहीं देती वह मजबूत पारिवारिक बन्धन बनाती है। मातृसत्ता में मुखिया पद के लिए खूनी लड़ाइयाँ नहीं होतीं। सुदीर्घ अनुभव का स्वीकरण होता है, शेष सब उसे सहयोग देती हैं, सहायक होना यहाँ अधीन होना नहीं है।'[4]

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत की सांस्कृतिक विविधता में भी मातृसत्तात्मक परंपराएँ विशेष स्थान रखती हैं। संपूर्ण उप महाद्वीप की व्यापक संरचना यद्यपि पितृसत्तात्मक है, किंतु कुछ समुदायों ने अपने सांस्कृतिक अस्तित्व में मातृ वंशीय परंपराओं को जीवित रखा है। उत्तर-पूर्व के खासी, जयंतिया और गारो समुदाय आज भी मातृ वंशीय परंपरा को जीवंत किए हुए हैं। उपन्यास के अंतर्गत खासी समुदाय की स्त्री के लिए कहा गया है, 'लॉन्ग जैद ना लोआ किन्थेई', वंश की गिनती माँ से ही शुरू होती है। और ऐसा नहीं है कि औरतें महारानी बन के रहती हैं बल्कि उन्हें ज्यादा काम करना पड़ता है।'[5] खासी समाज में सबसे छोटी बेटी को परिवार की संपत्ति और परंपरा का उत्तराधिकारी माना जाता है, जबकि गारो समाज में स्त्री की भूमिका पारिवारिक सीमाओं से आगे बढ़कर सामाजिक निर्णयों में भी महत्वपूर्ण होती है। इसी प्रकार दक्षिण भारत में केरल का नायर समुदाय लंबे समय तक मातृसत्तात्मक संरचना के लिए प्रसिद्ध रहा है। इसमें मरुमक्कत्तयम व्यवस्था द्वारा वंश और संपत्ति का उत्तराधिकार मातृ रेखा से आगे बढ़ता था। तटीय कर्नाटक के बंट समुदाय में भी ऐसी ही मातृ वंशीय व्यवस्थाओं का इतिहास मिलता है, जहाँ परिवार और संपत्ति का केंद्रीकरण स्त्रियों के माध्यम से होता रहा। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि मातृ प्रधान परंपरा किसी एक भूभाग तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह विश्व-सभ्यता के विकास का साझा अध्याय है।

भारतीय दर्शन के प्राचीन ग्रंथों में इकोफेमिनिज्म संकल्पना के अंश किसी न किसी रूप में मिलते रहे हैं। अथर्ववेद संहिता में यह श्लोक देखे, 'यत् ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं, यास्त ऊर्जस्तन्व: संबभूवु: । तासु नो धेह्यभि न: पवस्व माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या: ।'[6] अर्थात 'हे पृथ्वी माता! जो आपके मध्यभाग और नाभिस्थान हैं तथा आपके शरीर से जो पोषणयुक्त पदार्थ प्रादुर्भूत होते हैंय उसमें आप हमें पवित्रता प्रदान करें। यह धरती हमारी माता है और हम सब उसके पुत्र हैं।' मनुष्य पृथ्वी को माता तथा स्वयं को उसका अंश अथवा पुत्र मानता था।

'इकोफेमिनिज्म' के अंतर्गत पृथ्वी तथा स्त्री के प्रति शोषण को एक दृष्टि से देखा जाता है। नारी का संबंध प्रकृति के प्रत्येक तत्वों से जुड़ा है। अर्थात सती प्रथा, दहेज समस्या, भ्रुण हत्या, बलात्कार, बाल विवाह इत्यादि स्त्री विरोधी होने के साथ ही प्रकृति विरोधी भी हैं। प्रमिला के. पी. लिखती हैं, 'पारिस्थितिकीय स्त्रीवाद व्यापक जैविक लोकतंत्र का भी चिंतन है, जिसमें सिद्धांत से बढ़कर आचरण का महत्व है। यह प्रकृति के सभी अवयवों के महत्व को अख्तियार करता है। इसलिए यह जीव-जंतुओं व प्रकृति-तत्वों के अंतर्संबंधों की जाँच करता है, आपसी विनिमय का विश्लेषण करता है, किसी एक पक्ष के स्वामित्व या महत्व को ठुकराता है।'[7] तो वहीं कैरेन जे. वॉरेन ने 'इकोफेमिनिजम: हिस्टोरिक एंड इंटरनेशनल इवोल्यूशन' में इकोफेमिनिज्म के बारे में बताया है, 'Ecofeminism is a movement that sees a connection between the exploitation and degradation of the natural world and the subordination and oppression of women.'[8]

हिंदी साहित्य में उपन्यास केवल कहानी कहने का माध्यम नहीं रहा है, बल्कि वह समाज, संस्कृति और विचारधाराओं के गंभीर विमर्श का भी मंच रहा है। इक्कीसवीं सदी में यह प्रवृत्ति और भी गहरी हुई है जहाँ साहित्यकार केवल भावनाओं का चित्रण करने तक सीमित नहीं रहते, बल्कि सामाजिक संरचनाओं और विभिन्न विचारधारा के प्रतिमानों को चुनौती भी देते हैं। विधा की इस समकालीन पंक्ति में मनीषा कुलश्रेष्ठ का नाम उन रचनाकारों में लिया जाता है जिन्होंने न केवल अपनी कथा-दृष्टि से नई भूमि पर अधिकार किया है बल्कि स्त्री-चेतना को वैचारिक गहराई भी प्रदान की है। त्रिमाया उनका नवीन उपन्यास है, जो प्रकाशित होते ही चर्चाओं के केंद्र में आ गया। 'स्त्री वर्ग की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संरचना का भविष्य क्या रहेगा, यदि संसार केवल स्त्रियों का हो?' इस कृति का मूल प्रश्न कुछ ऐसा ही प्रतीत होता है। यह प्रश्न जितना कल्पनाशील है, उतना ही वैचारिक दृष्टि से जटिल भी। पी सी जोशी ने बताया, 'इस उपन्यास में यह बड़ी स्पष्टता के साथ आया है कि भारतीय समाजों की मातृसत्तात्मक व्यवस्थाएँ किस तरह से पितृसत्तात्मक व्यवस्था में बदलती चली गयीं, इस बदलाव के बावजूद यह ठोस तथ्य इस उपन्यास में आया है कि खासी और नायर समुदाय की महिलाएँ भारत में किसी भी विशिष्ट पितृसत्तात्मक समाज की महिलाओं की तुलना में अधिक सशक्त हैं।'[9] यह उपन्यास मातृ सत्ता, इको-फेमिनिज्म और भारतीय समाज की सांस्कृतिक स्मृतियों के मध्य एक ऐसा संवाद रचता है जो न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि वैचारिक और शोधपरक दृष्टि से भी महत्तवपूर्ण है।

त्रिमाया उपन्यास की संरचना चार अध्यायों विलक्षण माया, मायाविड़ु, सुनहरे तारों के पुल रू माइया मार्गरीटा और त्रिमाया के माध्यम से निर्मित होती है। ये अध्याय कथा कहने के साधन मात्र नहीं, बल्कि ऐसे विमर्श-स्तर हैं जहाँ मातृसत्ता, प्रकृति, स्त्री-अनुभूति और सांस्कृतिक निरंतरता पर विचार बनने लगते हैं।

उपन्यास का आरंभ जिस जंगल और हाथी-समुदाय के प्रसंगों से होता है, वहाँ मातृसत्ता केवल मानव-समाज की अवधारणा नहीं हैं, यह प्रकृति के कई जीव-समूहों में एक सुगठित सामाजिक संरचना के रूप में विद्यमान है। लेखिका हाथी समुदाय को मनुष्य के समान भावनात्मक, सामाजिक एवं संज्ञानात्मक क्षमताओं वाला प्राणी प्रस्तुत करती हैं। दोनों के जीवनानुभवों को समानांतर रखे तो संवेदना, स्मृति, परिवार, शोक, उत्सव, संकट प्रबंधन जैसी वृत्तियाँ मनुष्य मात्र की विशेषताएँ नहीं हैं। हाथियों की भी है। उल्लेखित है कि 'तुम लोगों की तरह ही हम भी अपने दिवंगतों का शोक मनाते हैं और नवजन्मों का उत्सव। हमारी अपनी खूब पुरानी समृद्ध भाषा है। हम अपने होने का इतिहास जानते हैं। हम खुद को पहचानते हैं। हम अपने अतीत, वर्तमान और भविष्य का अन्तर जानते हैं। हम याद रखते हैं, जीते हैं और आगत निर्धारित करते हैं और उसकी चिन्ता भी करते हैं। हम बखूबी जान रहे हैं कि हमारे साथ क्या हो रहा है। हम मनुष्यजनित खतरे को भाँप रहे हैं, मगर हम उनको भी पहचानते हैं जो हमारे अस्तित्व के लिए सहायक हैं।'[10] हाथियों के समूह में मातृ-नेतृत्व, सामूहिक स्मृति, पारस्परिक सहयोग, खतरे की पहचान और संसाधन-साझेदारी जैसे तत्तव यह संकेत देते हैं कि मातृसत्ता एक जैव-मानविकी ढाँचा है, जो सह-अस्तित्व और संरक्षण को प्राथमिकता देता है। किंतु कुछ ऐतिहासिक साक्ष्य भी इंगित करते है कि मानव-हाथी संबंध मूलत: संघर्षमूलक रहे हैं। उपन्यास में जंगल के पिता यानी वापी दा का यह कथन स्पष्ट करता है, 'मैं मानता हूँ हाथियों और मनुष्य का आपसी संघर्ष आज से नहीं प्राचीन काल से होता आ रहा है। छठी या पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में किसी समय लिखे गये गजशास्त्र में इसका जिक्र किया गया है। रोमपाद के शासनकाल के दौरान बड़े-बड़े हाथी दलों ने फसल लूटने के चककर में समूचे अंग राज्य को नष्ट कर दिया था। फिर मनुष्य तो मनुष्य है उसने हाथियों को युद्ध और बोझ उठाने वाले जानवर के रूप में पकड़ना शुरू किया। जाल और लोहे के कीलकाँटे बिछाकर, गड्ढे

खोदकर। बस तभी से दोनों में संघर्ष जारी है। मगर ज्यादा कीमत हाथी ने चुकाई है। वरना वे हमसे अधिक होते।'[11] परिणामस्वरूप यह असममित संघर्ष मानव हितों की प्रधानता तथा हाथियों पर निरंतर बढ़ते दमनात्मक दबाव को उजागर करता है।

उपन्यास में जलदापारादहासीमारा का जंगल, तीस्तादतोरसा का भूगोल इको-फेमिनिज्म के इस सिद्धांत को पुष्ट करते हैं कि प्रकृति और स्त्री-केन्द्रित व्यवस्थाएँ परस्पर जुड़ी प्रणालियाँ हैं, जिन्हें दमन या हस्तक्षेप सबसे पहले विघटित करता है। मातृसत्ता के पुनर्स्थापन में यदि भविष्य में कभी पितृसत्ता अपनी सीमाओं के बोझ तले बिखरने लगेगी और मनुष्य अपने ही संघर्षों में विश्व को चकनाचूर करने लगेगा, तब एक नए सामाजिक ढाँचे, एक नई सत्ता की तलाश अनिवार्य हो जाएगी। उस मोड़ पर हाथियों के समुदाय से सीखना सार्थक होगा। क्योंकि ये शांत, विवेकपूर्ण दिग्गज अपने मातृसत्तात्मक अनुशासन और सामूहिक संवेदना से वह संतुलित संसार जीते हैं, जिसकी कल्पना हम केवल स्वप्नों में करते हैं।

अगली कड़ी में लबास्ना कैंपस और आईएएस प्रशिक्षण का उल्लेख समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह दिखाने के लिए महत्वपूर्ण है कि आधुनिक प्रशासनिक ढाँचों में प्रवेश करने वाली युवा पीढ़ी जब मेघालय के मातृवंशीय समाज जैसे विषयों का अध्ययन करती है, तो वह भारतीय समाज-व्यवस्था की विविधता और उसके वैकल्पिक मॉडल्स से रुबरू होती है। माया द्वारा मेघालय की मातृवंशीय प्रणाली पर किया गया प्रेजेंटेशन इस तथ्य को सामने लाता है कि भारतीय समाज में मातृसत्ता कोई सीमांत परिघटना नहीं, बल्कि ऐतिहासिक रूप से विकसित, संरचनात्मक रूप से संगठित और सामाजिक रूप से स्वीकृत धारा रही है। सोपान सर की परनानी थारवाड की अम्माची के अल्फा वूमेन होने की जानकारी नायर समाज की उस जटिल सामाजिक प्रणाली की ओर संकेत करती है, जिसमें वंश, संपत्ति, उत्तराधिकार और परिवार-रचना स्त्री-केंद्रित रही है।

उपन्यास की भावभूमि में विशाल जंगल, विराट हाथी, कुलमाता, खासी समाज, नायर समाज की कद्दावर महिलाएं अमिट छाप छोड़ती हैं, जिसके पदचिन्हों पर चलते हुए वह अपनी परिणीति पाता है। मायाविड्डु सोपान सर, माया की कहानी के माध्यम से लेखिका केरल की कला -संस्कृति- विरासत के गलियारों में, नायर समाज की उत्कृष्ट परंपराओं के आंगन में ले जाती है और यहीं मिलता है नायर समाज की उदात्ता विरासत का भव्य विराट परिचय। कलानिलयम की धरोहर अजीब से रोमांच से भर देती है। प्रकृति और परिवेश की मादकता को आत्मसात करता सोपान- माया के बीच पनपता प्रेम मातृसत्ता के बीच पल्लवित होता है।

नायर समाज का मातृवंशीय ढाँचा समय के साथ कैसे ढहता है, उपन्यास इसे किसी व्यक्तिगत कथा के बजाय एक सामाजिक-वैचारिक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है। 'जिस समाज में माँ मुखिया वहाँ स्त्री की मर्जी सर्वोपरि, यानी वह यौनिक तौर पर भी स्वतन्त्र। वैवाहिक बन्धन यानी 'सम्बन्धम' जो कि नितान्त लचीला कि स्त्री जब चाहे त्याग दे, अपना ले। ऐसा क्यों हो! अब नायर पुरुष योद्धा नहीं रहे। नौकरियाँ कर रहे, किताबें लिख रहे, नेता बन रहे तो हम तो अब अपनी स्त्रियों को पवित्र नैतिकता के दायरे में और अपने कंट्रोल में रखेंगे।.......हिन्दू नायर परिवार के चौखटों को बदला गया.. यानी पितृसत्ता का आगमन हुआ।'[12] नायर समाज की मातृवंशीय परंपरा स्त्री-केंद्रित संपत्ति, पारिवारिक नेतृत्व और संबंधों की स्वायत्तता का विशिष्ट मॉडल थी। औपनिवेशिक प्रभाव और पुरुषों में उत्पन्न नैतिक चिंता ने इस व्यवस्था को चुनौती दी, जिसके परिणामस्वरूप 1925 के 'नायर रेगुलेशन' द्वारा मैट्रिलिनी को कानूनी रूप से समाप्त कर पितृसत्ता का प्रभुत्व स्थापित किया गया। थारवड्ड के अवशेष आज भी इस परिवर्तन के साक्षी हैं। 1921 की राजा रवि वर्मा की पेंटिंग 'हेयर कम्स पापा!!' एक प्रतीक के रूप में सामने आती है, जो मातृसत्ता के विमर्श में परिवर्तन की ऐतिहासिक चेतावनी बनकर खड़ी होती है।

उपन्यास के क्रम में माइया मार्गरीटा वास्तव में भारतीय मातृवंशीय परंपरा की अंतिम जीवित कड़ी पर विमर्श है। यह अध्याय यह प्रश्न उठाता है कि क्या मातृसत्ता का अस्तित्व आधुनिकता और पूँजीवाद के दबावों के बीच शेष रह सकता है? मार्गरीटा की दृष्टि, उसकी स्पष्टता, परिवार की कुड्डु को अधिकार सौंपने का जतन इस विचार की ओर संकेत करता है कि मातृसत्ता केवल जन्मगत अधिकार नहीं, बल्कि जिम्मेदारियों और वैचारिक सजगता की प्रणाली है। इसी संदर्भ में नकुल-माइया संबंध भी किसी प्रेमकथा का रूप लेता है।

अपने प्रस्थान बिंदु में यह उपन्यास प्रकृति बनाम सभ्यता, मातृसत्ता बनाम पितृसत्ता, परंपरा बनाम आधुनिकता, समाज बनाम व्यक्ति का वैचारिक संलयन प्रस्तुत करता है। हाथी समाज का अध्ययन बताता है कि प्रभावी नेतृत्व आक्रामकता पर नहीं, बल्कि अनुभव, सहयोग और सामूहिक सुरक्षा पर आधारित होता है। उनका नेतृत्व कार्य-वितरण, संवेदनशीलता और समूह-एकजुटता पर टिका है, जिसमें सत्ता-संघर्ष या हिंसक प्रतिस्पर्धा का स्थान नहीं होता। 'हाथी सिखाते हैं नेतृत्व हमेशा आक्रामकता से नहीं होता है, क्योंकि यह नेतृत्व मादाएँ जो करती हैं। वहाँ अनुभव से आपको मुखिया पद मिलता है ना कि खून-खराबे, षड्यन्त्र से। काश हमने सीखा होता इनसे कि समाज की सत्ता मादाओं को दे दो।.. इन हथिनियों के लिए नर लड़ाई का कारण नहीं होते, वे आते हैं और चले जाते हैं, लेकिन ये सदा एक-दूसरे के साथ बनी रहती हैं। मैंने बहुत समझदार कुलमाताओं को देखा है, बड़े-बड़े अकाल, भीषण बाढ़ों से झुण्ड को बचाकर ले जाते हुए।'[13] अंततः उपन्यास यह इंगित करता कि मातृसत्ता की अवधारणा किसी एक समुदाय या भू-प्रदेश तक सीमित नहीं रही। तथा इसके अंतर्गत मानीखेज उद्देश्य के साथ उसी ठसक से नये सवाल जवाब मिलते रहे है।

निष्कर्ष – त्रिमाया समकालीन हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट उपन्यास के रूप में स्थापित होता है, क्योंकि यह मातृसत्तात्मक समाजों की अंतर्निहित संरचनाओं, प्रकृतिदमानव संबंधों और स्त्री-केन्द्रित सांस्कृतिक परंपराओं को गहन अध्ययनशील दृष्टि से प्रस्तुत करता है। उपन्यास की संरचना अल्फा हथिनी से अल्फा वूमेन तक के संक्रमण को जिस रूप में सामने लाती है, वह इस तथ्य को रेखांकित करता है कि मातृसत्ता केवल ऐतिहासिक संदर्भ भर नहीं, बल्कि सामाजिक संगठन, नेतृत्व और स्मृति की एक निरंतर प्रणाली है। इसी प्रकार मार्गरिट से त्रिमाया तक की वैचारिक यात्रा में स्त्री-अनुभव, सांस्कृतिक उत्तराधिकार और सामुदायिक शक्ति का विकास स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

भाषा की सृजनात्मकता, शिल्प की विविधता और सांस्कृतिक विश्लेषण की गहराई इस उपन्यास को साधारण कथा से ऊपर उठाकर एक महत्वपूर्ण वैचारिक पाठ बनाती है। यह उपन्यास पाठक से सक्रिय सहभागिता की अपेक्षा करता है सातत्यपूर्ण पढ़ने, चिंतन और तुलना के द्वारा ही इसके सामाजिक, नृवंशीय और पारिस्थितिक आयाम पूर्ण रूप से समझ में आते हैं।

इस दृष्टि से त्रिमाया मातृसत्ता, इको-फेमिनिज्म और भारतीय समाज की वैकल्पिक व्यवस्था-परंपराओं पर एक सशक्त साहित्यिक दस्तावेज के रूप में उभरता है। यह न केवल पारंपरिक धारणाओं को चुनौती देता है, बल्कि यह भी संकेत करता है कि स्त्री-केंद्रित समाज-व्यवस्थाएँ भारतीय संस्कृति में गहरे निहित रही हैं। अत: यह उपन्यास समकालीन शोध, सांस्कृतिक अध्ययन और स्त्री-अधिकार विमर्श के लिए एक महत्तवपूर्ण संदर्भ-ग्रंथ का रूप धारण कर लेता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एंगल्स, फ्रेडरिक, (1960), परिवार, निजी संपत्ति और राज्यों की उत्पत्ति, ई-पुस्तकालय, पृष्ठ 72
2. लर्नर, गेर्डा (1986), द क्रिएशन ऑफ पैट्रीआर्की, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क, पृष्ठ-31
3. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2025), त्रिमाया, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 09
4. वही, पृष्ठ 73
5. वही, पृष्ठ 209
6. गौड़, पं. रामस्वरुप शर्मा, व्याख्याकार, (1997), अथर्ववेद संहिता, श्लोक 12 भाग-2, कांड-12, भूमि सूक्त, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, पृष्ठ 13
7. प्रमिला, के. पी. (2015), स्त्री अध्ययन की बुनियाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-69
8. जे. वॉरेन, कैरेन, इकोफेमिनिज्म: हिस्टोरिक एंड इंटरनेशनल इवोल्यूशन, पृष्ठ 206
9. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2025), त्रिमाया, प्राक्कथन से, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 08
10. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2025), त्रिमाया, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 14
11. वही, पृष्ठ 229
12. वही, पृष्ठ 99-100
13. वही, पृष्ठ 231

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मालवा क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत, भौगोलिक विशिष्टता और पर्यटन रूझान का राजस्थान और गुजरात के साथ तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. रामबिलास मरकाम*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, भोपाल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध-पत्र मालवा क्षेत्र (मध्यप्रदेश) की सांस्कृतिक विरासत, भौगोलिक विशिष्टताओं और पर्यटन प्रवृत्तियों का राजस्थान एवं गुजरात से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। तीनों क्षेत्रों में ऐतिहासिक स्मारक, धार्मिक स्थल, लोककला, स्थापत्य परंपराएँ और सांस्कृतिक पहचान प्रमुख भूमिका निभाती हैं। अध्ययन के अंतर्गत साहित्य समीक्षा, क्षेत्रीय तुलनात्मक मॉडल तथा पर्यटन नीतियों का मूल्यांकन किया गया है। परिणाम बताते हैं कि जहाँ राजस्थान विरासत आधारित पर्यटन में अग्रणी हैं, वहीं गुजरात आधुनिक पर्यटन अवसंरचना में आगे हैं। मालवा क्षेत्र (उज्जैन, मांडू, महेश्वर, ओंकारेश्वर और इंदौर) में विशिष्ट सांस्कृतिक धरोहर होने के बावजूद पर्यटन प्रचार, प्रबंधन और संरचनात्मक विकास की कमी है। अध्ययन सुझाता है कि नीति सुधार, डिजिटल प्रमोशन, सतत पर्यटन मॉडल और समुदाय आधारित प्रबंधन द्वारा मालवा को एक प्रमुख पर्यटन गंतव्य के रूप में विकसित किया जा सकता हैं। साथ ही आगंतुक रूझान और क्षेत्रीय विकास संकेतकों में समानताओं और विशमताओं पर प्रकाश डालता है। पर्यटकों के आगमन सांस्कृतिक स्थलों के घनत्व, आर्थिक प्रभाव और अवसंरचना सूचकांकों की विस्तृत तुलना प्रस्तुत करके, यह शोधपत्र मालवा की अप्रयुक्त क्षमता पर प्रकाश डालता है और सतत पर्यटन विकास के लिए सुझाव प्रस्तुत करता है।

शब्द कुंजी – मालवा क्षेत्र, रास्थान पर्यटन, गुजरात पर्यटन, सांस्कृतिक विरासत, भौगोलिक विशिष्टता, तुलनात्मक अध्ययन, विरासत संरक्षण नीतियाँ, तीर्थ पर्यटन, पर्यटन रूझान।

प्रस्तावना – आधुनिक युग में पर्यटन उद्योग सम्पूर्ण विश्व में तेजी से विकसित हो रहा है। जैव विविधता, वनों, नदियों, पर्वतों, स्मारकों और संस्कृति के क्षेत्र में भारत की अदभुत विशेषताओं को देखते हुए इस उद्योग में उत्तरोत्तर वृद्धि करने की आत्यधिक संभावनाएं है। मध्य प्रदेश का मालवा क्षेत्र एक महत्पूर्ण सांस्कृतिक भू-भाग, प्राचीन काल से ही अपनी विशिष्ट लोक-संस्कृति, स्थापत्य धरोहर, पारंपरिक कला-शिल्प और अनोखे भौगोलिक स्वरूप के लिए प्रसिद्ध रहा हैं। इसके पश्चिम में राजस्थान, और गुजरात राज्य स्थित है। शाजापुर, मंदसौर, नीमच, रतलाम, खरगोन, खण्डवा, झाबुआ, अलीराजपुर, बड़वानी, धार, देवास, राजगढ़, उज्जैन, इंदौर आदि जिले एवं मांडू, महेश्वर, ओंकारेश्वर जैसे ऐतिहासिक शहरों के साथ मालवा एक सांस्कृतिक गलियारे के रूप में कार्य करता है जो उत्तरी, पश्चिमी और मध्य भारत को जोड़ता है, साथ ही भारतीय सभ्यता के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देता हैं। दूसरी ओर, राजस्थान और गुजरात दोनों ही पड़ोसी राज्य अपनी सांस्कृतिक पर्यटन नीतियों, संरक्षण दृष्टिकोण और प्रभावी ब्रांडिंग रणनीतियों के कारण राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों को बड़े पैमाने पर आकर्षित करते हैं। राजस्थान और गुजरात के विकसित मॉडल को आधार बनाते हुए मालवा की संभावनाओं और चुनौतियों का समृद्ध सांस्कृतिक वैभव अपेक्षित पहचान नहीं प्राप्त कर सका तथा किस प्रकार की नीति से सामुदायिक भागीदारी, तकनीक और अवसंरचना विकास के माध्यम से इसे एक प्रमुख सांस्कृतिक पर्यटन गंतव्य बनाया जा सकता है। यह तुलनात्मक दृष्टिकोण न केवल क्षेत्रीय विकास की दिशा में उपयोगी है, बल्कि भारत के व्यापक सांस्कृतिक पर्यटन परिदृष्य को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

मालवा की सांस्कृतिक विरासत

ऐतिहासिक और स्थापत्य विरासत– मालवा प्राचीन सभ्यता का केंद्र रहा है, जिस पर मौर्य, गुप्त, परमार (विशेष रूप से राजा भोज), मालवा सल्तनत, मुगल, मराठों और बाद में होल्करों ने शासन किया। इस स्तरित इतिहास ने विविध वास्तुशिल्प रूपों का निर्माण किया है।

उज्जैन: एक हिंदू ब्रह्मांड विज्ञान का प्रमुख केंद्र है, यहाँ महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग, काल भैरव मंदिर, सांदीपनि आश्रम आदि प्रसिद्ध हैं।

मांडू (धार): एक किलाबंद मध्ययुगीन शहर जो अफगान और मालवा सल्तनत वास्तुकला जैसे जहाज महल, हिंडोला महल, होशंगशाह का मकबरा और महलनुमा परिसरों के लिए जाना जाता है।

महेश्वर: नर्मदा नदी पर स्थित एक आध्यात्मिक शहर जो अहिल्याबाई होल्कर घाट वास्तुकला और माहेश्वरी हथकरघा साड़ियों के लिए प्रसिद्ध है।

ओंकारेश्वर: 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक, जो नर्मदा नदी पर ॐ के आकार के द्वीप पर स्थित है।

ये सांस्कृतिक संपत्तियां मालवा को एक संभावित विरासत पर्यटन केंद्र के रूप में स्थापित करती है, हालांकि गुजरात के संगठित विरासत सर्किट और राजस्थान के अच्छी तरह से संरक्षित शाही स्मारकों की तुलना

में इनके संरक्षण के लिए अधिक मजबूत प्रयासों की आवश्यकता है।

अमूर्त सांस्कृतिक विरासत- मालवा अपनी जीवंत अमूर्त परंपराओं के लिए जाना जाता है:

मेले और त्यौहार: उज्जैन का सिंहस्थ कुंभ, रंग पंचमी, मालवा उत्सव, कार्तिक मेला, गैर नृत्य।

संगीत एवं प्रदर्शन कलाएं: मांडा गायन, गवलन लोकगीत, आदिवासी भिलाला नृत्य (भगोरिया पर्व)। शिल्प और हथकरघा: माहेश्वरी बुनाई, पारंपरिक घातु शिल्प, पत्थर पर नक्काशी आदि।

मालवा की भौगोलिक विशिष्टता: मालवा का पठार, दक्कन ट्रैप का एक भाग है, यहाँ की उपजाउ काली मिटटी कपास की खेती के लिए उपयोगी है। 300 से 600 मीटर तक उँचा पठारी क्षेत्र सुखद जलवायु प्रदान करता है। यह नदी, घाटियाँ और वनों से भरा लहरदार इलाका है। धार, झाबुआ, अलीराजपुर जिले (आदिवासी क्षेत्र) घने जंगल वाले क्षेत्र हैं।

जलवायु और पर्यावरणीय विशेषताएं- मालवा की ऊष्ण कटिबंधीय जलवायु, पड़ोसी मैदानों की तुलना मे ठंडी होती है। यहां शिप्रा, चंबल, नर्मदा आदि बड़ी नदियाँ है। ये विशेषताएं पर्यटन पैटर्न का आकार देने में मदद करती है, विशेष रूप से मौसमी तीर्थयात्रा (उज्जैन), पहाड़ी पर्यटन (मॉडू) और नदी-आधारित पर्यटन (महेश्वर)।

गुजरात गरवा, पटोला, बुनाई, कच्छी कढ़ाई और राजस्थान घूमर, पाबूजी की फड़ की तुलना में, मालवा की अमूर्त विरासत समृद्ध है, लेकिन इसका व्यावसायिक प्रचार कम है। राजस्थान के शुष्क रेगिस्तान और पहाड़ी किले एवं गुजरात के तटीय मैदान, दलदली भूमि (कच्छ) और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों से मालवा की भौगोलिक स्थिति मालवा को अलग रखती है।

पर्यटन का विकास एवं रूझान - मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र विरासत, प्राकृतिक सौंदर्य, वन संपदा और धार्मिक पर्यटन का अनोखा संगम है। पर्यटन एक ऐसा क्षेत्र है, जो अर्थव्यवस्था, संस्कृति और समाज तीनों का परस्पर जोड़ता है। मालवा क्षेत्र में मांडू हेरिटेज सर्किट, उज्जैन आध्यात्मिक सर्किट, इंदौर-देवास सांस्कृतिक सर्किट, महेश्वर हथकरघा और घाट विरासत सर्किट आदि प्रमुख सर्क्रिट हैं।

धार्मिक पर्यटन- नदियॉ और घाट, धार्मिक पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। राजस्थान की भीषण गर्मियों के विपरीत, पठारी जलवायु वर्ष भर यात्रा के लिये अनुकूल है। मांडू की किलेबंद पहाड़ियाँ अद्वितीय वास्तुशिल्प परिदृष्य प्रस्तुत करती हैं। वन एवं जनजातीय क्षेत्र पारिस्थितिकी पर्यटन और सांस्कृतिक-जातीय पर्यटन की संभावनाएं प्रदान करते हैं। मालवा के तीर्थस्थल- महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग उज्जैन, ओमकारेश्वर ज्यातिर्लिंग, नर्मदा परिक्रमा महेश्वर, मांडू की सूफी दरगाह। इससे घरेलू पर्यटकों का रूझान बड़ा है, विशेषकर सिंहस्थ के दौरान, जो लाखों लोगों को आकर्षित करता है।

शहरी पर्यटन- वाणिज्यिक राजधानी इंदौर खाद्य पर्यटन, खरीदारी और सांस्कृतिक कार्यक्रम, व्यावसायिक पर्यटन, सम्मेलन और प्रदर्शनियों आदि में योगदान देता है। इंदौर ने सातवीं बार स्वच्छ भारत सर्वेक्षण में पहला स्थान हासिल किया है, जो इसे एक स्वच्छ और स्मार्ट पर्यटन गंतव्य बनाता है। हालाँकि, गुजरात के स्टैच्यू ऑफ यूनिटी, द्वारका, गिर, सोमनाथ और राजस्थान के जयपुर, जोधपुर, उदयपुर की तुलना में मालवा की ब्रांडिंग कम प्रभावशाली है।

योजनाएं- देश में पर्यटकों की संख्या बढ़ाने के लिए संस्कृति एवं पर्यटन विभाग एवं सरकार द्वारा कई योजनाएं एवं उपाय किये गये हैं, अपनी धरोहर अपनी पहचान, पर्यटन पर्व, देखो अपना देश स्वदेश दर्शन, आवास अवसंरचना प्रोत्साहन योजना, हेरिटेज होटल योजना, एक्सपोर्ट प्रोमोशन केपीटल गुडस स्कीम, सर्विस एक्सपोर्टस फ्राम इंडिया स्कीम, निर्यात गृह योजना, पीएमश्री पर्यटन हेलीकॉप्टर सेवा, एसएएससीआई योजना आदि। प्रमुख पर्यटन सर्किटों में पर्यटन सुविधाओं का विस्तार, होटलों विशेषत: बजट होटलों का विस्तार, वायु परिवहन क्षमता का विस्तार, देश की मूर्त व अमूर्त विरासतों को यूनेस्को की सूची में शामिल होना, चीन, उत्तर पूर्व एषिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया जैसे उभरते बाजारों पर फोकस आदि शामिल है। मध्यप्रदेश सरकार ने भी पर्यटन के क्षेत्र में कइ महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं जैस- सरसी आइलैंड रिसॉर्ट प्रारंभ, रीजनल टूरिज्म कॉन्क्लेव योजना, विलेज टूरिज्म योजना, फ्री एनआरआई ट्रैवल हेल्प पोर्टल लॉन्च, पर्यटन हेलीकॉप्टर सेवा आदि प्रयासों से प्रदेश में पर्यटकों का रूझान बड़ा है। इसके लिए प्रदेश को 'बेस्ट टूरिज्म स्टेट ऑफ द ईयर' अवाडर्स से सम्मानित किया गया है।

पर्यटन विकास में चुनौतियाँ-ग्रामीण विरासत स्थलों तक सीमित परिवहन संपर्क, संरक्षण और व्याख्या केंद्रों में कम निवेश, गुजरात और राजस्थान की तुलना में कमजोर डिजिटल प्रचार, विरासत स्मारकों के पास अपर्याप्त आवास समूह, विरासत संरक्षण नीतियों का धीमा कार्यान्वयन।

तुल्नात्मक संदर्भ- गुजरात नीति-संचालित पर्यटन (विरासत पर्यटन नीति, ब्रांडिंग, पीपीपी परियोजनाएं) में उत्कृष्ट है। राजस्थान की मजबूत शाही विरासत, रेगिस्तानी परिदृष्य और वैश्विक विपणन से लाभ मिलता है। मालवा मध्य प्रदेश में प्रचुर विरासत है, लेकिन खंडित संरक्षण प्रयासों के कारण इसकी क्षमता का पूरा उपयोग नहीं हा पाया है। मध्यप्रदेश में वर्ष 2024 में लगभग 13.41 करोड़ पर्यटकों का आगमन हुआ, वर्ष 2023 की तुलना में लगभग 19. प्रतिशत की वृद्धि हुई है। मालवा के धार्मिक पर्यटन के क्षेत्र में उज्जैन में लगभग 7.32 करोड़ पर्यटक पहुँचे, वर्ष 2023 की तुलना में 39 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और शहरी पर्यटन के क्षेत्र में भी इंदौर में लगभग 1.02 करोड पर्यटक पहँचे। परन्तु राजस्थान और गुजरात राज्यों की तुलना में विदेशी पर्यटकों के मामले में तो मध्यप्रदेश पिछड़ा हुआ है, घरेलू पर्यटन में भी गुजरात और राजस्थान से पीछे मध्यप्रदेश 9वें नम्बर पर रहा है।

शोध पद्धति- प्रस्तुत शोध मूलत: द्वितीयक समंकों पर आधारित है, जिसमें द्वितीयक डेटा- एएसआई रिपोर्ट, पर्यटन मंत्रालय डेटा एवं साहित्य समीक्षा- इतिहास, संस्कृति और पर्यटन से संबंधित शोध-पत्र, पुस्तकें एवं समाचार पत्रों आदि का उपयोग कर जानकारी एकत्र कर विवेचना एवं परिणाम प्रस्तुत किये गये हैं।

निष्कर्ष- इस तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मालवा क्षेत्र अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं, भौगोलिक विविधता और ऐतिहासिक धरोहरों के बावजूद राजस्थान और गुजरात की तुलना में पर्यटन आकर्षण एवं प्रचार-प्रसार में पीछे है। मालवा में तीर्थयात्राओं का मजबूत घरेलू आधार है, किन्तु विदेशी और उच्च खर्च पर्यटन के क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धात्मक कमी है। राजस्थान का सशक्त विरासत संरक्षण ढांचा और गुजरात का आधुनिक पर्यटन अवसंरचना मॉडल मालवा के लिए अनुकरणीय हैं। अध्ययन दर्शाता है कि यदि मालवा में विरासत संरक्षण नीतियाँ, समुदाय आधारित पर्यटन, डिजिटल प्रमोशन और आधारभूत सुविधाओं को सुदृढ किया जाए, तो यह क्षेत्र मध्य

भारत का प्रमुख सांस्कृतिक एवं धार्मिक पर्यटन केन्द्र बन सकता है। इसके लिए प्रदेश स्तर पर प्रयास भी किये जा रहे हैं। क्षेत्रीय सहयोग और एकीकृत नीति दृष्टिकोण इसकी भविष्यगत सफलता की कुंजी है। इसलिए तत्काल आवश्यक है कि संरक्षण-नीति और पर्यटन-प्रबंधन को संयोजित करके मालवा की पहचान को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर सशक्त किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. त्यागी, प्रशान्त (2015), 'भारतीय पर्यटन- विकास व विस्तार की अपार संभावनाएं' अतुल्य भारत पत्रिका पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार।
2. कुमारी, अजिता (2019), 'पर्यटन का नया आयाम: ग्रामीण पर्यटन' इण्डियन जरनल आफ रिसर्च, 8(9)
3. गुप्ता, शीलचन्द्र (2015), 'आर्थिक सुधार एवं मध्यप्रदेश में पर्यटन का विकास' शोध दर्शन रिसर्च जर्नल, 1(3)
4. पाण्डेय, आनंद कुमार एण्ड श्रीमती अर्चना (2016), 'सामान्य अध्ययन' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
5. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (2019-2024), वार्षिक रिपोर्ट।
6. मध्यप्रदेश सरकार (2022), मध्यप्रदेश टूरिज्म पॉलिसी।
7. वरे, डॉ.एस.एल., 'मध्यप्रदेश का इतिहास एवं संस्कृति' कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
8. जोशी, श्याम सुन्दर (2020), 'राजस्थान दर्शन' प्राइम पब्लिकेशन, भीलवाड़ा।
9. रंजन, डॉ. मनीष, 'भारतीय कला एवं संस्कृति' प्रभात एग्जाम, नई दिल्ली।
10. सागर, अरूण 'भारत के पर्यटन स्थल'।
11. कपूर, विमल कुमार धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्यटन स्थल डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
12. पंजाब केसरी समाचार पत्र।
13. दैनिक-भास्कर समाचार पत्र।

****

गिजुभाई के शिक्षा-दर्शन की आधुनिक शिक्षा में प्रासंगिकता : एक अध्ययन

डॉ. अनिल कुमार* अजय पाल सिंह**

* प्रोफेसर (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य गिजुभाई के शिक्षा दर्शन की पृष्ठभूमि का अध्ययन करते हुये गिजुभाई के बाल संसार के संदर्भ में माता-पिता की भूमिका का अध्ययन करना तथा गिजुभाई के बाल संसार के संदर्भ में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्ता द्वारा गिजुभाई के शैक्षिक दर्शन के द्वारा शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डाला है तथा उनको आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है।
शब्द कुंजी – शिक्षा दर्शन, आधुनिक शिक्षा।

प्रस्तावना – शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त पिछड़े राज्य राजस्थान में शिक्षा के स्तर को सुधारने की एक योजना लागू की गई थी 'शिक्षाकर्मी योजना'। इस योजना की पृष्ठभूमि थी कि विद्यालयों में बालकों का नामांकन तो होता है परन्तु बालक उपस्थित नहीं होते। जो आते भी हैं उनका शैक्षिक स्तर दयनीय होता है। इस स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षाकर्मी विद्यालय खोले गए जिनमें शिक्षा देने का ढंग राजकीय विद्यालयों से भिन्न था। जब मैं इस योजना से जुड़ी तो मुझे राजकीय तथा शिक्षाकर्मी दोनों ही विद्यालयों को निकट से देखने का अवसर प्राप्त हुआ और मैं दोनों विद्यालयों के दृश्यों में अन्तर देखकर चकित रह गयी। जहाँ राजकीय विद्यालयों में बालकों का नामांकन होने के बाद भी उपस्थिति नहीं थी जो बालक थे उनका स्वच्छता से कोई नाता नहीं था, शाला भी गंदी व दुर्गन्धपूर्ण थी मास्टरजी बीड़ी का धुआँ उड़ाते हुए और बच्चे भयाक्रांत। दूसरी ओर शिक्षाकर्मी विद्यालयों के छात्र आत्मविश्वास से परिपूर्ण, हँसते-खिलखिलाते हुए चेहरे, शैक्षिक स्तर भी संतोषजनक और बालकों के साथ खेलते हुए अध्यापक जिनके मुख में बीड़ी और गुटखा का नाम भी नहीं।

शोध अध्ययन का महत्व – आज भारतीय विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों में हुए शोधकार्यों को देखने से पता चलता है कि अधिकांश शोधकार्यों में शोधार्थियों ने प्रयोगात्मक शोधों के प्रति ही रूचि प्रदर्शित की है। ऐतिहासिक एवं दार्शनिक अनुसंधानों के प्रति कम ही रूचि प्रदर्शित की गयी है। शिक्षा दर्शन के क्षेत्र में महर्षि अरविन्द घोष, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, राधाकृष्णन, जाकिर हुसैन, मदन मोहन मालवीय, जे. कृष्णमूर्ति आदि पर शोधकार्य अवश्य हुए हैं किन्तु ये सभी शोधकार्य माध्यमिक अथवा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में ही हुए है। प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में कोई भी महत्वपूर्ण शोधकार्य अभी तक नहीं हुआ है। प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा शास्त्रियों के शिक्षा सम्बन्धी विचारों के अध्ययन का कार्य अभी अधूरा जान पड़ता है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान और उसके ठीक पहले के कुछ दशकों में परम्परा की कई गैर जरूरी कड़ियों को तोड़ने का प्रयास हमारे समाज में चला था। उसी कड़ी में एक नई समाज व्यवस्था रचने का स्वपन गाँधी जी ने देखा था परन्तु उसे पूरा करने के लिए एक नई शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता थी, जो बालपन से मनुष्य को संस्कारित कर सके। गिजुभाई के शैक्षिक प्रयोग उसी विराट स्वपन को साकार करने की दिशा में उठा गए कदम थे।

समस्या कथन – 'गिजुभाई के शिक्षा-दर्शन की आधुनिक शिक्षा में प्रासंगिकता : एक अध्ययन'

शोध विधि – शिक्षा के क्षेत्र में दार्शनिक अनुसंधान का उपयोग महान् चिन्तकों के शैक्षिक विचारों, संगठनों एवं आंदोलनों के अध्ययन के संदर्भ में किया जाता है। इस विधि का स्वरूप मूलत: व्याख्यात्मक होता है तथा इसके तहत विचारों या सम्प्रत्ययों के विश्लेषण, चरणसमीक्षात्मक आंकलन तथा चिन्तन के विचार-परिप्रेक्ष्य में विज्ञापित करने वाले पक्ष का निर्धारण, मुख्य उद्देश्य होता है। प्रस्तुत अध्ययन में जिस अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है। वह दार्शनिक अनुसंधान विधि है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. गिजुभाई के शिक्षा दर्शन की पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. गिजुभाई के शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना।
3. गिजुभाई के बाल संसार के संदर्भ में माता-पिता की भूमिका का अध्ययन करना।
4. गिजुभाई के बाल संसार के संदर्भ में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना।

निष्कर्ष – साधारण से किन्तु असाधारण से गिजुभाई केवल शिक्षक ही हों, ऐसा नहीं था वे सामाजिक क्रांति कार्यकर्ता भी थे। भला उस समय कौन यह सोच सकता था कि बालक की शिक्षा के लिए माता-पिता को भी सहभागी बनाया जाये। उन्होंने समझा था कि बालक का प्रथम विद्यालय तो माता-पिता ही होते हैं और वे ही यदि उदासीन रहेंगे, निरपेक्ष रहेंगे तो बालकों की शिक्षा हो ही नहीं सकती। वे अभिभावकों को सावधान करते, उनके लिए संगोष्ठियों का आयोजन करते, पत्र लिखते, भाषण देते जिससे माता-पिता अपना दायित्व समझ सकें और अपने धर्म का पालन कर सकें। अभिभावकों

के साथ वे केवल शिक्षा के सम्बन्ध में ही चर्चा नहीं करते थे अपितु वे माता-पिता को बालकों के उत्तम स्वास्थ्य को बनाने और उसे बनाए रखने के सम्बन्ध में भी समझाते, पौष्टिक आहार के विषय में बताते। अभिभावकों को उनके दायित्व का बोध कराने के साथ शिक्षकों को भी समझाते कि बालक की संभाल किस प्रकार करनी चाहिए जिससे बालक की स्वतंत्रता बनी रह सके और वह अपना स्वाभाविक विकास भी कर सके। वकील से शिक्षक बने गिजुभाई के मन में शिक्षक बन्धुओं के प्रति गहरी सहानुभूति थी। उनकी दशा से गिजुभाई पीड़ा का अनुभव करते थे। शिक्षकों को अपना सम्मान बनाए रखने और अपने व्यवसाय पर गर्व करने के लिए गिजुभाई प्रेरित करते थे और इस हेतु वे प्रशिक्षण की आवश्यकता का अनुभव करते थे। शिक्षक बंधुओं को संगठित होने का आह्वान किया करते थे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अग्रवाल, जे.सी. : राष्ट्रीय शिक्षा नीति : प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2003
2. अम्बेडकर ए.एस. : प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति : नन्द किशोर एण्ड ब्रदर्स वाराणसी : 1968
3. पाण्डे के.पी. : शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार : विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक वाराणसी, 2005
4. बहुगुणा, के.पी. : नई बुनियाद की तालीम : सर्वसेवा संघ प्रकाशन वाराणसी, 1981
5. मैथ्यूज गैरेथ बी. : बच्चों से बातचीत ग्रंथ शिल्पी (इण्डिया) प्रा.लि. लक्ष्मी नगर दिल्ली, 2001

****

विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान का अध्ययन

डॉ. गोविन्द सोनी* अनिल कुमार**

* सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य हनुमानगढ़ जिले में राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र-छात्राओं) एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र-छात्राओं) को सम्मिलित किया गया। परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान को जानने हेतु उपलब्धि परीक्षण स्वनिर्मित निर्मित एवं शिक्षकों हेतु साक्षात्कार मापनी (निदानात्मक कक्षाओं का योगदान) का निर्माण शोधकर्त्ता द्वारा स्वयं किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – विद्यार्थी, परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारण, निदानात्मक कक्षाओं का योगदान।

प्रस्तावना – विद्यालय शिक्षा किसी राष्ट्र की भावी दिशा निर्धारित करने वाला वह आधारभूत स्तंभ है, जिस पर विद्यार्थियों का समग्र विकास, बौद्धिक प्रगति तथा जीवन-संस्कार आधारित होते हैं। शिक्षा केवल पाठ्य-सामग्री के अधिगम तक सीमित न होकर विद्यार्थी की व्यक्तित्व-निर्माण प्रक्रिया को सक्रिय, समर्थ और संरचित बनाती है। आधुनिक शिक्षा-व्यवस्था में बोर्ड परीक्षाओं के परिणाम को न केवल गुणवत्ता का मानदंड माना जाता है, बल्कि आगे की शैक्षिक प्रगति, व्यावसायिक अवसरों और प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं की आधारशिला भी यही परिणाम निर्धारित करते हैं। अत: परीक्षा-परिणाम का उच्च या निम्न होना विद्यालय, शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक तथा संपूर्ण शिक्षा-तंत्र की कार्यक्षमता का दर्पण माना जाता है।

वर्तमान समय में यह देखा जा रहा है कि उच्च माध्यमिक स्तर पर अनेक विद्यालयों में परीक्षा-परिणाम अपेक्षित स्तर को प्राप्त नहीं कर पाते। इसके पीछे अनेक मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, शैक्षणिक, प्रशासनिक एवं व्यक्तिगत कारण होते हैं। इनमें विद्यार्थियों की अधिगम क्षमता, अध्ययन-आदतें, मानसिक व शैक्षिक तनाव, पाठ्यचर्या का दबाव, शिक्षण विधियों की कमियाँ, संसाधन-हीनता, परिवारिक वातावरण, माध्यम की समस्याएँ, अनियमित उपस्थिति, विषय-विशेष में कठिनाई, तथा विद्यालयों में प्रभावी अधिगम-सहायता तंत्र की कमी प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं। परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले इन विविध कारणों के मधय एक अत्यंत महत्वपूर्ण शैक्षणिक प्रक्रिया है– 'निदानात्मक मूल्यांकन तथा निदानात्मक कक्षाएँ'। निदानात्मक मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत विद्यार्थियों की अधिगम कठिनाइयों, उनकी विषयगत कमजोरियों, समझ के स्तर, त्रुटियों के प्रकार तथा अधिगम अंतरालों की पहचान की जाती है। इसके पश्चात इन कमियों को दूर करने के लिए नियोजित रूप से 'निदानात्मक कक्षाएँ', अभ्यास कार्य, वैकल्पिक व्याख्या, अतिरिक्त शिक्षण-सहायता, पुनर्सिखलन तथा व्यक्तिगत मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है। निदानात्मक कक्षाएँ प्राय: उन विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से आयोजित की जाती हैं जिनके परिणाम सतत निम्न रहते हैं या जो शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से अपेक्षित रूप से लाभान्वित नहीं हो पाते।

भारत के विद्यालयों में नई शिक्षा नीति 2020 के लागू होने के बाद से यह अपेक्षा बढ़ गई है कि विद्यालय व्यक्तिगत अधिगम (Personalized Learning), दक्षता-आधारित शिक्षा (Competency Based Education) तथा सतत मूल्यांकन को प्राथमिकता दें। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप निदानात्मक कक्षाओं का महत्व और बढ़ गया है, क्योंकि यह न केवल कमजोर विद्यार्थियों को सहारा देती हैं, बल्कि संपूर्ण कक्षा की प्रगति को भी संतुलित बनाती हैं। निदानात्मक कक्षाएँ विद्यार्थी की कमजोरी को 'दंड' के रूप में नहीं बल्कि 'सहयोग' के रूप में स्वीकार करती हैं। इस प्रकार ये कक्षाएँ शिक्षण को लोकतांत्रिक, सहभागितापूर्ण, बाल-केन्द्रित तथा समावेशी बनाती हैं। कई विद्यालयों में यह अनुभव किया गया है कि जहाँ निदानात्मक कक्षाओं का संचालन सुव्यवस्थित, नियमित और योजनाबद्ध तरीके से किया जाता है, वहाँ बोर्ड परीक्षाओं के परिणाम में उल्लेखनीय सुधार दिखाई देता है। इससे न केवल विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ता है, बल्कि शिक्षक-शिक्षण प्रक्रिया का उत्थान, अभिभावकों का विश्वास, तथा विद्यालय की शैक्षिक गुणवत्ता का स्तर भी उच्च होता है। इस प्रकार निदानात्मक कक्षाएँ विद्यालयी शिक्षा में गुणवत्ता उन्नयन का एक महत्वपूर्ण उपकरण हैं। इन्हीं विचारों को धयान में रखते हुए प्रस्तुत शोध में उच्च माध्यमिक विद्यालयों में परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों का व्यापक विश्लेषण करते हुए निदानात्मक कक्षाओं के योगदान का अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन न केवल विद्यालयी शिक्षा में सुधार हेतु दिशा प्रदान करता है, बल्कि भविष्य की शैक्षणिक योजनाओं, शिक्षण

रणनीतियों तथा विद्यालय प्रबंधान के लिए भी उपयोगी संकेत प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत शोध का महत्व –उच्च माध्यमिक स्तर पर परीक्षा परिणाम किसी भी शिक्षा–व्यवस्था का केंद्रीय मापदंड होता है। समाज में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को इन्हीं परिणामों के आधार पर परखा जाता है। ऐसे में यदि परीक्षा परिणाम संतोषजनक न हों, तो यह विद्यालय के शिक्षण–प्रक्रिया, मूल्यांकन–पद्धति तथा विद्यार्थियों की अधिगम क्षमता पर गंभीर प्रश्न खड़े करता है। वर्तमान शोध का महत्व इस तथ्य में निहित है कि यह अध्ययन उन मूलभूत कारणों को समझने का प्रयास करता है जो विद्यार्थियों की शैक्षिक प्रगति में बाधक बनते हैं और परीक्षा परिणाम को प्रभावित करते हैं।

निदानात्मक कक्षाएँ शिक्षण के ऐसे नवाचारी उपाय हैं, जो विद्यार्थियों की अधिगम कठिनाइयों को पहचान कर उन पर केंद्रित कार्यवाही करती हैं। यह अध्ययन यह समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि किस प्रकार निदानात्मक कक्षाएँ कमज़ोर विद्यार्थियों के शैक्षिक प्रदर्शन को बेहतर बना सकती हैं और परीक्षा परिणाम में सुधार ला सकती हैं। आज की शिक्षा–व्यवस्था में यह आवश्यक है कि हम केवल परीक्षा के बाद परिणामों का मूल्यांकन न करें, बल्कि पूरे वर्ष विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए मार्गदर्शन प्रदान करें। निदानात्मक प्रक्रिया हमें यही अवसर प्रदान करती है।

शोध का औचित्य इस बात से भी स्पष्ट होता है कि अनेक विद्यालयों में निदानात्मक कक्षाएँ केवल औपचारिकता बनकर रह गई हैं। शिक्षक प्रायः पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों पर ही निर्भर रहते हैं, जबकि अनेक विद्यार्थियों को विषय–विशेष में अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होती है। ऐसे में यह शोध निदानात्मक कक्षाओं की वास्तविक उपयोगिता, प्रभावशीलता तथा संचालन की गुणवत्ता का विश्लेषण करते हुए यह बताता है कि किन परिस्थितियों में ये कक्षाएँ सर्वाधिक प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं।

यदि विद्यालयों में नियमित रूप से योजना–बद्ध निदानात्मक कक्षाएँ आयोजित की जाएँ, तो परीक्षा परिणाम को बेहतर बनाया जा सकता है। साथ ही यह अध्ययन शिक्षकों को भी एक दिशा प्रदान करता है कि वे विद्यार्थियों की अधिगम कठिनाइयों को किस प्रकार पहचानें, किस प्रकार शिक्षण रणनीतियों को अनुकूल बनाएँ तथा किस प्रकार विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक बाधाओं को दूर करें।

इसके अतिरिक्त वर्तमान शोध का महत्व इस बात में भी है कि यह विद्यालयों में शैक्षिक विषमता को कम करने में निदानात्मक कक्षाओं की भूमिका को मजबूत करता है। अनेक विद्यार्थी सामाजिक, आर्थिक तथा भाषायी कठिनाइयों के कारण कमज़ोर प्रदर्शन करते हैं।

निदान का अंतिम कार्य होता है कि छात्रों की कमजोरियों को दूर किया जाये, जब उसकी कमजोरियों का कारण ज्ञात कर लेते हैं तो उन कारणों को दूर करने की प्रविधियों का चयन करके उनका प्रयोग करते हैं जिससे उनकी कमजोरियों को दूर किया जा सकता है। इस प्रकार निदान के अंतर्गत पूर्व कथन कार्य भी निहित होता है। छात्रों की कमजोरियों को दूर करके ही उनमें सुधार लाया जा सकता है सुधार से छात्रों की निष्पत्तियों के स्तर को उठाया जाता है। इस प्रकार निदान का कार्य साफल्यता भी है और निदान की क्रिया गतिशील भी होती है। सुधारात्मक प्रक्रिया व्यक्तिगत अधिक होती है प्रत्येक छात्र में अपनी कमजोरियाँ होती हैं।

निदानात्मक शिक्षण द्वारा कक्षा के कमजोर छात्रों का शैक्षणिक स्तर उच्च किया जा सकता है। हाईस्कूल स्तर पर विभिन्न विषयों के निदानात्मक शिक्षण के लिए शिक्षक को वैज्ञानिक नियमों व सिद्धांतों को व्यवहार में आने वाले उदाहरण देकर समझाना चाहिए। मॉडल,Charts/Specimenआदि का प्रयोग करना चाहिए छात्रों की दोषपूर्ण आदतों, कुशलताओं एवं मनोवृत्तियों को समाप्त करके उत्तम रूप प्रदान करना चाहिए।

समस्या कथन – 'विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान का अध्ययन'

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या

निदानात्मक कक्षायें : निदानात्मक शिक्षण का अर्थ होता है कि विद्यार्थियों की कमजोरियों को दूर किया जाये, जब उसकी कमजोरियों का कारण ज्ञात कर लेते हैं तो उन कारणों को दूर करने की प्रविधियों का चयन करके उनका प्रयोग करते हैं जिससे उनकी कमजोरियों को दूर किया जा सकता है।

योकम व सिम्पसन के अनुसार, 'निदान किसी कठिनाई का उसके चिन्हों या लक्षणों से ज्ञान प्राप्त करने की कला या कार्य है। यह तथ्यों के परीक्षण पर आधारित कठिनाई का स्पष्टीकरण है।'

योगदान : इससे आशय निदानात्मक कक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में गुणात्मक सुधार से है।

अध्ययन के उद्देश्य :

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर निदानात्मक कक्षाओं से पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर निदानात्मक कक्षाओं से पड़ने वाले प्रभाव।

न्यादर्श :–प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में हनुमानगढ़ जिले के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. उपलब्धि परीक्षण (स्वनिर्मित)
2. शिक्षकों हेतु साक्षात्कार मापनी (निदानात्मक कक्षाओं का योगदान) (स्वनिर्मित)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर निदानात्मक कक्षाओं से पड़ने वाले प्रभाव।

सारणी संख्या – 1, 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार 'राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर निदानात्मक कक्षाओं से पड़ने वाले प्रभाव में कोई सार्थक अंतर नहीं है' के परीक्षण हेतु किए गए सांख्यिकीय विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि पूर्व परीक्षण में दोनों समूहों के मध्यमान में कोई उल्लेखनीय भिन्नता नहीं पाई गई। राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के पूर्व परीक्षण में प्राप्त परिणामों की गणना से ज्ञात हुआ कि टी–अनुपात का मान 0.01 स्तर पर तालिका मान से कम है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि प्रारंभिक स्तर पर नियंत्रित एवं प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के बीच निदानात्मक कक्षाओं का कोई प्रभावकारी अंतर

दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

परन्तु, पश्च परीक्षण से प्राप्त परिणाम पूर्व परीक्षण से भिन्न पाए गए। राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह ;सामान्य कक्षाओंद्ध एवं प्रयोगात्मक समूह (निदानात्मक कक्षाओं) के बीच किए गए तुलनात्मक विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि टी–अनुपात का मान 0.01 स्तर पर तालिका मान से अधिक है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पश्च परीक्षण में दोनों समूहों के विद्यार्थियों की उपलब्धियों में स्पष्ट और सार्थक अंतर विद्यमान है। प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों ने नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक उत्तम प्रदर्शन किया।

अत: समग्र विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों निदानात्मक कक्षाओं का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं परीक्षा परिणाम पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियंत्रित समूह की तुलना में प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों ने बेहतर प्रदर्शन प्रस्तुत किया, जिससे यह प्रमाणित होता है कि निदानात्मक कक्षाएँ विद्यार्थियों के शैक्षिक परिणामों को सुधारने और उनकी अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

शैक्षिक सुझाव:

1. प्रयोगों को व्यक्तिगत रूप से करके अनुभवात्मक अधिगम विकसित करना चाहिए।
2. दूरसंचार एवं अन्य माध्यमों से विज्ञान और गणित संबंधी खोजों व प्रक्रियाओं को जानना चाहिए।
3. शैक्षिक, विज्ञान एवं तकनीकी पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन कर स्वनिरीक्षण एवं आलोचनात्मक सोच का विकास करना चाहिए।
4. इन कक्षाओं में विद्यार्थियों की कठिनाइयों का समुचित समाधान किया जाना चाहिए।
5. सहायक सामग्री जैसे नक्शे, चार्ट, मॉडल का अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता ने उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों को ही शामिल किया है। आगामी शोध के लिए महाविद्यालयों के विद्यार्थियों को भी लिया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध में मात्र 600 विद्यार्थियों का न्यादर्श लिया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।
3. भावी शोध में उच्च माध्यमिक विद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं में विद्यार्थियों में परीक्षा परिणाम को प्रभावित करने वाले कारणों में निदानात्मक कक्षाओं के योगदान का अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. गिरीश डॉ. पचौरी एवं पचौरी रितु, 'उभरते भारतीय समाज में शिक्षक की भूमिका' 2011, आर.लाल. बुक डिपो, मेरठ।
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. दुबे, डॉ. भावना (2006), 'प्राथमिक स्तर की कक्षा–3 में गणित विषय की प्रारम्भिक दक्षताओं के गुणात्मक विकास हेतु उपचारात्मक शिक्षण की प्रभावशीलता का अध्ययन।' एम.एड. लघुशोध प्रबन्ध, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)।
6. श्रीमती इन्दिरा पाल (2010) 'कक्षा–10वीं विज्ञान विषय की निदानात्मक कक्षाओं का छात्रों की उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।' एम.एड. लघुशोध प्रबन्ध, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर।
7. यादव, कमला सिंह (2004) माध्यमिक स्तर के अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम के विज्ञान एवं कला वर्ग छात्रों में मूल्य अभिमुखता एवं मूल्य अन्तर्द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन, शोध प्रबन्ध, शिक्षाशास्त्र, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
8. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह के विद्यार्थी	300	56.66	7.175	0.612	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थी	300	56.28	8.149		

सारणी संख्या 2: राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों अध्ययनरत् नियंत्रित समूह एवं प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के पश्च परीक्षण प्राप्तांकों के विश्लेषण से प्राप्त मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, प्रामाणिक त्रुटि एवं क्रांतिक अनुपात तालिका

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के नियंत्रित समूह के विद्यार्थी (सामान्य कक्षा)	300	133.45	8.253	1.567	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थी (निदानात्मक कक्षा)	300	137.37	8.835		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के सम्बन्ध में अध्ययन

डॉ. राजेश शर्मा* अशोक कुमार बैरवा**

*आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के सम्बन्ध में अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के जयपुर संभाग के राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों के 200-200 शिक्षकों पर किया गया। शिक्षकों की आत्म-अनुभूति मापनी (हरदेव ओझा) द्वारा निर्मित, कार्य स्थल शोषण मापनी डॉ. रमनदीप कौर एवं मीना झामत द्वारा निर्मित का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया 'महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण में परस्पर सहसम्बन्ध नहीं पाया गया'।
शब्द कुंजी – महाविद्यालय, शिक्षक, आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण।

प्रस्तावना – महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षक प्रायः अपने विषय में स्नातकोत्तर (मास्टर) डिग्री के साथ-साथ नेट/सेट या पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त होते हैं। वे न केवल अपने विषय के गहन ज्ञान के धारक होते हैं, बल्कि विद्यार्थियों के मार्गदर्शक और प्रेरक की भूमिका भी निभाते हैं। महाविद्यालय के विद्यार्थी अपने शैक्षणिक विषयों के साथ-साथ व्यक्तिगत, सामाजिक और व्यावसायिक जीवन से संबंधित समस्याओं के समाधान के लिए भी शिक्षकों पर निर्भर रहते हैं। विद्यार्थियों में यह विश्वास इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि शिक्षकों के पास अपने विषय का गहन ज्ञान, अनुसंधानात्मक दृष्टि और व्यावहारिक अनुभव होता है। शिक्षक केवल शैक्षणिक मार्गदर्शक नहीं होते, बल्कि विद्यार्थियों के जीवन में नैतिकता, चरित्र निर्माण, आत्मविश्वास और जिम्मेदारी की भावना विकसित करने में भी सहायक होते हैं।

शिक्षक के उच्च आचरण और समर्पण का विद्यार्थियों के भविष्य निर्माण में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिए महाविद्यालयों को सदैव योग्य, निष्ठावान और संवेदनशील शिक्षकों की नियुक्ति पर विशेष धयान देना चाहिए। अच्छे शिक्षक किसी भी समाज की रीढ़ होते हैं, उनकी कमी को कोई अन्य व्यक्ति पूरा नहीं कर सकता, जबकि एक अच्छा शिक्षक अन्य अनेक कमियों की पूर्ति कर सकता है। उच्च शिक्षा जीवन का वह चरण है जो विद्यार्थियों को न केवल रोजगार बल्कि जीवन के प्रति दृष्टिकोण और उद्देश्य प्रदान करता है। इन संस्थानों में कार्यरत शिक्षक अपने व्यावसायिक लक्ष्यों के प्रति सजग रहते हैं और उनकी प्राप्ति हेतु निरंतर प्रयत्नशील रहते हैं। शिक्षक तभी अपने लक्ष्य के प्रति पूरी निष्ठा से कार्य कर सकता है जब उसकी मौलिक आवश्यकताएं संतुष्ट हों। इन आवश्यकताओं की पूर्ति तभी संभव है जब शिक्षक अपने भीतर की कमियों को पहचानकर आत्म-विकास की दिशा में अग्रसर हो। जब शिक्षक अपनी आवश्यकताओं और क्षमताओं को समझकर उन्हें संतुलित करता है, तब वह अपने कार्य के प्रति अधिक समर्पित, आत्मविश्वासी और प्रेरित होता है। यह स्थिति आत्म-वास्तविकीकरण की अवस्था कहलाती है, जिसमें शिक्षक अपने जीवन के उद्देश्य और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझता है। आत्म-वास्तविकीकृत शिक्षक न केवल स्वयं को बल्कि अपने विद्यार्थियों को भी प्रबुद्ध करता है। उसमें ईर्ष्या, क्रोध, भेदभाव जैसे नकारात्मक भाव समाप्त हो जाते हैं और वह पूरे समाज को अपने परिवार के रूप में देखता है। ऐसे शिक्षक का जीवन गरिमामय होता है, जो समस्त मानवता के कल्याण के लिए कार्य करता है।

आज शिक्षा व्यवस्था और शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में निरंतर परिवर्तन हो रहा है। शिक्षक और विद्यार्थी दोनों की भूमिकाएं वैश्विक, सामाजिक, तकनीकी और सांस्कृतिक परिवर्तनों से प्रभावित हो रही हैं। आधुनिक युग में विश्व अनेक संकटों का सामना कर रहा है जैसे सामाजिक असमानता, पर्यावरणीय संकट, वैश्वीकरण के दुष्परिणाम, राजनीतिक अस्थिरता और लोकतांत्रिक मूल्यों पर संकट। इन परिवर्तनों ने शिक्षा क्षेत्र को भी गहराई से प्रभावित किया है। समाज में शिक्षकों की गरिमा, जो कभी अत्यंत ऊँची मानी जाती थी, अब धीरे-धीरे कम होती जा रही है।

वर्तमान समय में यह देखा गया है कि शिक्षकों के बीच आपसी मतभेद, प्रतिस्पर्धा और संगठनात्मक राजनीति बढ़ती जा रही है। कई बार महाविद्यालय राजनीति के केंद्र बन गए हैं जहाँ शिक्षक आपसी संघर्ष और गुटबाजी में उलझ जाते हैं। परिणामस्वरूप विद्यार्थियों को योग्य, समर्पित और प्रेरक शिक्षक नहीं मिल पाते। इससे विद्यार्थियों में भ्रम, असंतोष और भटकाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वे अध्ययन से विमुख होकर अन्य अनावश्यक गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं, जिससे उनके भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विभिन्न अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि आज अनेक महाविद्यालयों में शिक्षक कार्य स्थल शोषण का शिकार हो रहे हैं। 2017 के एक वार्षिक सम्मेलन की रिपोर्ट के अनुसार, महाविद्यालय शिक्षकों में कार्य स्थल शोषण के मामले अन्य व्यवसायों की तुलना में

लगभग 35 प्रतिशत अधिक पाए गए हैं, और लगभग 62 प्रतिशत शिक्षक किसी न किसी रूप में शोषण का अनुभव कर चुके हैं। यह स्थिति अत्यंत चिंताजनक है और यह विचारणीय है कि शिक्षण व्यवसाय से जुड़े व्यक्ति ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना किस प्रकार करते हैं।

प्रस्तुत शोध का महत्व – वर्तमान समय में शिक्षा संस्थानों में व्यावसायिक दबाव, प्रतिस्पर्धा, पदोन्नति की जटिलताएँ, प्रशासनिक बाधाएँ तथा सहयोगियों के बीच असमान व्यवहार जैसे कारणों से शिक्षकों को विभिन्न प्रकार के कार्य स्थल तनावों और शोषण का सामना करना पड़ता है। कई बार यह शोषण प्रत्यक्ष होता है तो कई बार यह सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक रूप में प्रकट होता है। इसका सबसे गहरा प्रभाव शिक्षक की आत्म-अनुभूति पर पड़ता है, जिससे उसकी शिक्षण गुणवत्ता, छात्रों से व्यवहार, और पेशेवर प्रतिबद्धता प्रभावित होती है। यदि शिक्षक स्वयं को असुरक्षित, उपेक्षित या अपमानित अनुभव करता है, तो उसकी रचनात्मकता, उत्साह और शिक्षण-प्रेरणा में कमी आती है। इसलिए इस अध्ययन की आवश्यकता इस दृष्टि से भी है कि यह समझा जा सके कि कार्य स्थल शोषण की परिस्थितियाँ किस प्रकार शिक्षकों की आत्म-अनुभूति और पेशेवर जीवन को प्रभावित करती हैं।

महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों का वातावरण विद्यालयी शिक्षकों से भिन्न होता है। यहाँ शैक्षणिक प्रतिस्पर्धा अधिक होती है, पदोन्नति और मूल्यांकन के मानदंड कठोर होते हैं, तथा सहकर्मियों और प्रशासन के बीच संवाद की प्रकृति भी अधिक औपचारिक होती है। इन परिस्थितियों में यदि शिक्षक के आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचती है या उसे पर्याप्त सहयोग नहीं मिलता, तो उसका आत्म-विश्वास डगमगा सकता है। आत्म-अनुभूति के कमजोर होने से शिक्षक में असंतोष, उदासीनता और मनोवैज्ञानिक तनाव बढ़ सकता है, जो अन्ततः विद्यार्थियों के सीखने के वातावरण को भी प्रभावित करता है। इस प्रकार यह अध्ययन शिक्षा प्रणाली के उन आंतरिक कारकों को उजागर करेगा जो शिक्षक की मानसिक संतुलन और शिक्षण प्रभाविता को प्रभावित करते हैं।

शोध का महत्व इस दृष्टि से भी है कि यह नीति-निर्माताओं, महाविद्यालय प्रबंधन, तथा शिक्षण संस्थानों को एक व्यावहारिक दिशा प्रदान करेगा। यदि अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कार्य स्थल शोषण और आत्म-अनुभूति में कोई महत्वपूर्ण संबंध है, तो यह शिक्षण संस्थानों में प्रशासनिक नीतियों के पुनर्मूल्यांकन का आधार बनेगा। शिक्षक के सम्मान, सुरक्षा और मानसिक सशक्तिकरण के लिए प्रभावी उपाय सुझाए जा सकेंगे। साथ ही, यह शोध शिक्षकों को भी आत्म-विश्लेषण, आत्म-प्रेरणा और आत्म-संतुलन के माध्यम से कार्यस्थल की कठिन परिस्थितियों से निपटने की प्रेरणा देगा।

इस अध्ययन का एक और महत्व यह है कि यह उच्च शिक्षा संस्थानों में कार्य संस्कृति की गुणवत्ता को मापने का अवसर प्रदान करेगा। आज जब शिक्षा को एक पेशा मात्र मानने की प्रवृत्ति बढ़ रही है, तब शिक्षक की मानसिक स्थिति और कार्य स्थल की संवेदनशीलता पर विचार करना अत्यावश्यक हो गया है। शिक्षक की आत्म-अनुभूति जितनी सशक्त होगी, वह उतनी ही प्रभावशाली रूप से अपने विद्यार्थियों के जीवन में प्रेरणा स्रोत बन सकेगा। इसके विपरीत, यदि शोषण, असुरक्षा और अन्याय की भावना प्रबल होती है, तो शिक्षक का समर्पण कमजोर पड़ता है। अतः यह अध्ययन समाज में शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकता है।

महाविद्यालयों के शिक्षकों की आत्म-अनुभूति और कार्य स्थल अनुभव उनके व्यावसायिक जीवन के दो मूल आयाम हैं। ये दोनों मिलकर शिक्षण की आत्मा को प्रभावित करते हैं। इस शोध के माध्यम से इन दोनों आयामों के पारस्परिक संबंध को उजागर करना न केवल मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उपयोगी होगा, बल्कि यह शिक्षण-प्रबंधन की रणनीतियों के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध होगा। यह अध्ययन इस तथ्य को रेखांकित करेगा कि संस्थान में सम्मान, सहयोग, पारदर्शिता और न्याय की भावना जितनी अधिक होगी, शिक्षकों की आत्म-अनुभूति उतनी ही सकारात्मक होगी, और शोषण जैसी प्रवृत्तियाँ स्वतः ही कम होंगी।

शोध का व्यावहारिक महत्व इस तथ्य में निहित है कि इसके निष्कर्षो के आधार पर उच्च शिक्षा संस्थानों में मानसिक स्वास्थ्य, पारस्परिक संबंध, और संगठनात्मक न्याय से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए जा सकते हैं। यह अध्ययन शिक्षण जगत में एक सकारात्मक कार्य संस्कृति स्थापित करने में सहायक हो सकता है। साथ ही, यह समाज को भी यह समझाने में मदद करेगा कि शिक्षकों की आत्म-अनुभूति और कार्य वातावरण का सीधा संबंध शिक्षा की गुणवत्ता और विद्यार्थियों के विकास से है।

अंततः कहा जा सकता है कि प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि शिक्षा केवल ज्ञान प्रदान करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक भावनात्मक और सामाजिक दायित्व भी है। जब तक शिक्षक स्वयं संतुलित, आत्मविश्वासी और सुरक्षित महसूस नहीं करता, तब तक वह दूसरों को प्रेरित नहीं कर सकता। इस प्रकार 'महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के सम्बन्ध में अध्ययन' न केवल शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य और पेशेवर विकास के लिए, बल्कि संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण शोध सिद्ध होगा।

समस्या कथन – 'महाविद्यालयों के शिक्षकों में आत्म-अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के सम्बन्ध में अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

महाविद्यालय शिक्षक– महाविद्यालय शिक्षकों से तात्पर्य उन शिक्षकों से है जो विभिन्न सरकारी एवं निजी महाविद्यालयों में अधयापन कार्य हेतु नियुक्त हैं। शोध कार्य में महाविद्यालय शिक्षक से तात्पर्य राजस्थान राज्य के जयपुर संभाग में स्थित विभिन्न महाविद्यालयों में कार्यरत प्रोफेसर, एसोसिएट प्रोफेसर, असिस्टेंट प्रोफेसर, गेस्ट फैकल्टी, एडहॉक फैकल्टी अदि सभी प्रकार के शिक्षकों से है।

आत्म- अनुभूति – आत्म- अनुभूति एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, व्यक्ति सामाजिक रूप से सक्षम होता है, अन्त-विषयक स्वायत्तता में परिपक्व होता है और सम्पूर्ण जीवन चक्र में निरंतर सीखता रहता है। अधिगम की यह प्रक्रिया कालान्तर में उसे चरम स्थिति अर्थात आत्म- अनुभूति की ओर ले जाती है। आत्म-वास्तविकीकरण से तात्पर्य मेस्लो के अनुसार प्रवर्तित आवश्यकताओं के पदानुक्रम के अंतिम सोपान में वर्णित आत्म-वास्तविकीकरण से है। इसके अनुसार आत्म- अनुभूति मनुष्य में निहित आत्म-सिद्धि की इच्छा है अर्थात उसमें जो सामर्थ्य अथवा शक्ति है वह वास्तविक रूप से प्रदर्शित हो सके। इस प्रवृत्ति के अनुसार व्यक्ति वैसा ही बनना चाहता है जैसा कि वास्तव में वह है और जितना उसमें बनने की इच्छा है। यह व्यूह रचना आत्म-वास्तविकीकरण के चरण में शिक्षकों को आत्मबल

एवं आत्म–वास्वविकता का परिचय कराती रहती है। इस स्थिति तक पहुंचने के लिये मनुष्य को मेस्लो के अनुसार आरम्भिक चार सोपान पूर्ण करने होते हैं। इसके उपरान्त ही मनुष्य इस आत्म–वास्तविकीकरण की स्थिति में पहुंच पाता है। यह स्थिति अपने आप को सिद्ध करने एवं सर्वोत्तम होने की भावना व्यक्त करता है।

अध्ययन के उद्देश्य :–

1. अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
3. निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :–

1. अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
2. राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
3. निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श :–प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के जयपुर संभाग के राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों के 200–200 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :–

1. आत्म–अनुभूति मापनी हरदेव ओझा
2. कार्य स्थल शोषण मापनी डॉ. रमनदीप कौर एवं मीना झामत

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

1. अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार अकादमिक महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच संबंध का विश्लेषण किया गया। इस उद्देश्य से संकलित आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करते हुए सहसंबंध गुणांक 'त' का मान ज्ञात किया गया, जो 0.185 प्राप्त हुआ। यह मान 0.01 के सार्थकता स्तर पर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण पाया गया। परिणामस्वरूप, शोधकर्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना कि अकादमिक महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं पाया जाता अस्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अकादमिक महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच एक सार्थक एवं प्रत्यक्ष सहसंबंध विद्यमान है।

(2) राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच संबंध का विश्लेषण किया गया। इस उद्देश्य से संकलित आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करते हुए सहसंबंध गुणांक 'त' का मान ज्ञात किया गया, जो 0.048 प्राप्त हुआ। यह मान 0.01 के सार्थकता स्तर पर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं पाया गया। परिणामस्वरूप, शोधकर्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना कि राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं पाया जाता स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच सार्थक एवं प्रत्यक्ष सहसंबंध विद्यमान नहीं है।

(3) निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 3 के अनुसार निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच संबंध का विश्लेषण किया गया। इस उद्देश्य से संकलित आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करते हुए सहसंबंध गुणांक 'त' का मान ज्ञात किया गया, जो 0.054 प्राप्त हुआ। यह मान 0.01 के सार्थकता स्तर पर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं पाया गया। परिणामस्वरूप, शोधकर्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना कि निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं पाया जाता स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण के बीच सार्थक एवं प्रत्यक्ष सहसंबंध विद्यमान नहीं है।

शैक्षिक सुझाव:

1. यह अध्ययन शिक्षकों को अपनी आत्म–अनुभूति को पहचानने और उसे सशक्त बनाने में सहायता करेगा।
2. शिक्षक आत्म–संतुलन और आत्म–स्वीकृति के माध्यम से कार्य स्थल के तनावों से प्रभावी ढंग से निपटने की क्षमता विकसित कर सकेंगे।
3. शोध के निष्कर्षों से शिक्षकों को यह समझने में सहायता मिलेगी कि कार्य स्थल शोषण का सामना करते समय आत्म–अनुभूति कैसे सुरक्षा कवच का कार्य करती है।
4. शिक्षक अपने व्यवहार, दृष्टिकोण और आत्मविश्वास में सकारात्मक परिवर्तन लाने हेतु प्रेरित होंगे।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. भावी शोध में अकादमिक महाविद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के शिक्षकों में आत्म–अनुभूति एवं कार्य स्थल शोषण का अध्ययन किया जा सकता है
2. वर्तमान अध्ययन केवल अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों तक सीमित है। भावी शोध में अन्य महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा निजी शिक्षण संस्थानों के शिक्षकों को भी सम्मिलित किया जा सकता है।
3. यह शोध केवल आत्म–अनुभूति और कार्य स्थल शोषण तक सीमित है, भविष्य के अध्ययन में अन्य मनोवैज्ञानिक चर जैसेकृकार्य–संतुष्टि, तनाव, भावनात्मक बुद्धिमत्ता और आत्म–नियंत्रण को भी जोड़ा जा सकता है।

4. भविष्य के शोध में लिंग, आयु, अनुभव, सामाजिक पृष्ठभूमि और वैवाहिक स्थिति के अनुसार तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष-40, अंक-10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. गरीब, एम., जमील, एस.ए., अहमद, एम., और गौस, एस.एम. (2016, मई) नौकरी के प्रदर्शन पर तनाव एवं प्रभाव : डफर विश्वविद्यालय में शैक्षणिक कर्मचारियों पर एक केस अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकोनॉमिक रिसर्च, 13;1, 21-33। 12 जनवरी , 2019
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. चावला, मोनिका (2003), 'जेण्डर जस्टिस वूमैन एण्ड लॉ इन इण्डिया' नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप पब्लिशर।
7. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट।
8. श्रीवास्तव, सुधारानी (2009), 'महिला उत्पीड़न और वैधानिक उपचार,' नई दिल्ली (305-4 डक्ठ-च 60500)ब अर्जुन पब्लिसिंग हाउऽस।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म-अनुभूति	400	71.57	10.288	0.185	अस्वीकृत
अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों कार्य स्थल शोषण	400	170.56	12.150		

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म-अनुभूति	200	71.07	10.745	0.048	स्वीकृत
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों कार्य स्थल शोषण	200	172.51	11.689		

सारणी संख्या - 3

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों में आत्म-अनुभूति	200	72.68	10.531	0.054	स्वीकृत
निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे कार्यरत शिक्षकों कार्य स्थल शोषण	200	169.88	11.041		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में महत्व

डॉ. गुंजन शर्मा* गोविन्द सिंह**

* प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में महत्व का अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोधकार्य हेतु ऐतिहासिक एवं दार्शनिक तथ्यों पर आधारित है। अत शोध कार्य ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक विधि के द्वारा किया गया है।

शब्द कुंजी – स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द घोष व शैक्षिक विचार।

प्रस्तावना – भारत के पूर्वी भाग पर ब्रह्म समाज के एवं पश्चिमी भाग पर आर्य समाज के प्रभाव के कारण भारतीय अपनी संस्कृति के प्रति आकृष्ट हुए, जिससे कुछ जागरूकता अवश्य आई। श्री अरविन्द ने अपना आंदोलन 'पाण्डिचेरी आश्रम' स्थापित कर प्रारम्भ किया। स्वामी विवेकानन्द ने अपने गुरू श्री रामकृष्ण परमहंस के नाम पर उनके तप साधित स्थान दक्षिणेश्वर में 'रामकृष्ण मठ व रामकृष्ण मिशन' नामक संस्था स्थापित करके की। कलकत्ता को इस संघ का प्रमुख केन्द्र बनाया। इसके अतिरिक्त भारत के अन्य प्रदेशों में भी इसके केन्द्र खोले और विस्मृत भारतीयों को उनके तेजोमय व गौरवमय अतीत की याद दिलाते हुए उन्हें तदनुरूप बनने के लिए प्रोत्साहित किया।

भारतीय धर्म व संस्कृति का विस्मरण जितना एक शताब्दी पूर्व था आज उससे भी ज्यादा दृष्टि गत है। शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षा का माध्यम, प्रशासन, गुरू-शिष्य सम्बन्ध व अनुशासन में हम अब भी विदेशी संस्कृति के पोषक बने हुए हैं। अत: आज भी शिक्षा जगत में भारतीय संस्कृति के संवाहक स्वामी विवेकानन्द एवं श्री अरविन्द घोष के शैक्षिक योगदान को स्मरण कर वृहत करना समीचीन होगा। संस्कृति का पोषण व संहवन तो सभी करते हैं परन्तु किसी विदेशी द्वारा अन्य देश की संस्कृति का संरक्षण व अनुकरण करना निश्चय ही उस संस्कृति की श्रेष्ठता का प्रतीक हैं।

शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व – वर्तमान भारती शिक्षा अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है, क्योंकि इसका स्वरूप न तो प्राचीन रह गया है न आधुनिक यह न तो गुरूकुल परम्परा के आदर्श एवं स्वाभाविक विकास के अनुरूप है और न इससे विदेशी संस्थानिक परम्परा के तत्वों का अनुसरण किया जा रहा है। यह न तो उच्चतम आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करने में सक्षम है और न ही रोजगार दिलाने में। कहने को तो अर्थकारी है किन्तु रोजगारमुख नहीं है। नियोजनकर्त्ताओं ने गृहयुद्ध छिड़ा है श्रम आधारित शिक्षा न होने के कारण इस शिक्षा के उत्पाद 'नागरिक' कम है किन्तु 'अनुपयोगी साहब' अधिक। कार्य, संस्कृति एवं नैतिकता का अवसान हो गया है। मानवीय संवेदना, गुरू-शिष्य परम्परा, नैतिक मूल्यों का अभाव के बीच से शिक्षा गुजर रही है। ऐसी स्थिति में शिक्षा व्यवस्था सर्वशून्य एवं सर्वक्षणिक स्थिति में आ गयी है। शिक्षा में न तो आध्यात्मिकता का अंश है और न ही विज्ञान का वैभव। जब अध्येता का मन ऐसी विभ्रम वाली स्थिति में हो तो मन में सहज जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि क्या अतीत में कोई ऐसी शिक्षाशास्त्री हुए है? जिनके शैक्षिक पद्धतियों में ऐसे उपयोगी तत्व विद्यमान हो जो वर्तमान शिक्षा की विसंगतियों का निवारण कर बालक में नवीन चेतना का संचार कर उसकी प्राकृतिक क्षमताओं के विकास में योगदान कर सके। अत: इस दृष्टि से भारतीय शैक्षिक विचारकों की मणिमाला का गहन निरीक्षण करने परिणामस्वरूप दो दैदीव्यमान नक्षत्र अपने आप अपनी अलौकित आभा विकीर्ण करते हुए उभरकर सामने आते हैं और वे हैं स्वामी विवेकानन्द और महर्षि अरविन्द।

स्वामी विवेकानन्द और श्री अरविन्द ने किसी नये धर्म का सूत्रपात नहीं किया, अपितु भारत के प्राचीन सनानत धर्म को पुन: गौरवान्वित करते हुए भारत के अभ्युदय के लिए धर्म को शिक्षा को आधार बनाया।

समस्या कथन – 'स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में महत्व।'

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के दार्शनिक विचारों का अध्ययन करना।
2. स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के धार्मिक एवं आध्यात्मिक विचारों का अध्ययन करना।

शोध विधि – यह अनुसंधान समस्या ऐतिहासिक एवं दार्शनिक तथ्यों पर आधारित है। अत शोध कार्य ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक विधि के द्वारा किया गया है।

परिसीमन – प्रस्तुत अध्ययन स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के शिक्षा दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन में शोधकर्त्ता ने अध्ययन को सुनिश्चित एवं सुविचारित बनाने के उद्देश्य से सीमाबद्ध करना आवश्यक समझा है, जिससे वह अपने शोध अध्ययन के निर्दिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त कर

सके। इस अध्ययन में स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द घोष के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन किया गया है।

शोध से सम्बन्धित साहित्य

1. **अभ्यकंर, एस. वी. (2020)** द्वारा पूना विश्वविद्यालय, पूना से शिक्षाशास्त्र विषय में पी. एच.डी. उपाधि हेतु, 'स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों एवं दार्शनिक आधारों पर परमाणु अंतरिक्ष युग तथा विश्वव्यापी मूल्य संकट के युग में मूल्य-शिक्षा के विशेष सन्दर्भ में तथा वर्तमान परिप्रेक्षय में भारत में मूल्य शिक्षा की आवश्यकता का विस्तृत, गहन एवं आलोचनात्मक विश्लेषण' नामक शीषर्क पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया गया था। जिसके प्रमुख निष्कर्ष निम्नवत् है - विवेकानन्द के शैक्षिक दृष्टिकोण के आकस्मिक एवं खण्डयुक्त प्रकाशन के बावजूद उनके शैक्षिक वक्तव्यों एवं लेखों में आत्मानुभूति का विचार विशेष महत्व का है। सामान्यत: भारतीय दर्शन और विशेष रूप से अद्धैत वेदान्त का आधुनिक नाभिकी भौतिकी से मान्य प्रासंगिकता एवं सादृष्य सम्बन्ध है। विवेकानन्द ने आदि शंकराचार्य के बुद्धित्व एवं बुद्ध के हृदय पक्ष के बीच समन्वय स्थापित किया है।

2. **कनकड़, प्रभा (2021)** द्वारा शिक्षाशास्त्र विषय में पी.एच.डी. उपाधि हेतु 'स्वामी विवेकानन्द एवं डॉ. एनी बेसेन्ट के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन' नामक शीर्षक पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया था। जिसके प्रमुख निष्कर्ष निम्नवत् है - स्वामी विवेकानन्द तथा डॉ. एनी बेसेन्ट ने भारत में प्राचीन गौरव व संस्कृति को पुन: स्थापित करने का सतत् प्रयास किया। विश्व बन्धुत्व व विश्वैक्य भावना का विकास दोनों शिक्षाविदों ने आवश्यक बताया।

भावी अध्ययन हेतु सुझाव :

1. श्री अरविन्द एवं स्वामी विवेकानन्द की स्त्री शिक्षा के सन्दर्भ में विचारधारा पर आलोचनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
2. भारतीय पुर्नजागरण में अरविन्द एवं स्वामी जी का शैक्षिक योगदान पर अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. विवेकानन्द, स्वामी (2000), 'भारत का ऐतिहासिक क्रम विकास एवं अन्य प्रबन्ध' रामकृष्ण मठ, नागपुर।
2. सिहं अरूण कुमार (2008), 'मनोविज्ञान, समाजशास्त्र एवं शिक्षा में शोध विधियां, संस्करण-8', नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोती लाल बनारसी लाल, दिल्ली।
3. निर्वेदानन्द स्वामी : हमारी शिक्षा, स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
4. तिवारी, डॉ. भरत कुमार : विवेकानन्द का दार्शनिक चिंतन, भारतीय भाषापीठ, महौली, दिल्ली।
5. हर्षानन्द स्वामी : शिक्षा : नये आयाम, राधाकृष्ण मठ, बंगलौर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवन शैली एवं व्यावसायिक आकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. राजेश शर्मा* जितेन्द्र कुमार नायक**

*आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवन शैली एवं व्यावसायिक आकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। अध्ययन राजस्थान राज्य के जयपुर जिले के विभिन्न अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् कुल 800 विद्यार्थियों जिसमे राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 400 विद्यार्थियों तथा निजी अकादमिक महाविद्यालयों में अधययनरत् 400 विद्यार्थियों पर किया गया। विद्यार्थियों की जीवन शैली मापनी एस. के. बावा एवं एस. कौर द्वारा निर्मित, व्यावसायिक आकांक्षा मापनी स्वयं द्वारा निर्मित का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवन शैली एवं व्यावसायिक आकांक्षा में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – स्नातक स्तर, विद्यार्थी, जीवन शैली, व्यावसायिक आकांक्षा।

प्रस्तावना –शिक्षा की यह स्वत: परिचालित सहज प्रक्रिया है जो केवल औपचारिकताओं से भरे विद्यालय में ही घटित नहीं होती बल्कि इस प्रक्रिया में बालक, परिवार, आस-पड़ोस, समाज सभी का योगदान रहता है। बालक यदि विद्यालय से समयबद्धता, नियमितता, नेतृत्व, अनुशासन, विशिष्ट ज्ञान, कौशलों एवं दक्षताओं को औपचारिक रूप से ग्रहण करता है तो वहीं घर, परिवार, पड़ोस व समाज से वह खान-पान, रहन-सहन, सद्‌विचार, दृष्टिकोण व आदतों को अनौपचारिक रूप से भी सीखता है। जिसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव उसके विद्यालयी अधिगम, उपलब्धि एवं व्यक्तित्व पर पड़ता है। बालकों के सीखे हुए व्यवहार यदि सकारात्मक होते हैं तब वह प्रगतिशील रहता है अन्यथा उसका विकास अवरूद्ध हो जाता है। खान-पान, गतिविधियों का चुनाव एवं व्यवहार जीवनशैली को स्वस्थ या अस्वस्थ बनाता है। सकारात्मक जीवनशैली व्यक्ति के अंदर प्रसन्नता का संचार कर सकती है वही नकारात्मक जीवनशैली व्यक्ति में दु:ख, बीमारियों तथा तनाव को जन्म दे सकती है। साधारण शब्दों में बालक क्या खाता है? क्या पहनता है ? क्या खेलता है? किनके साथ रहता है ? कब, कितना व कैसे पढ़ता है ? उसकी क्या आदतें हैं? उसकी पसंद-नापसंद क्या हैं एवं इनके प्रति उसके विचार क्या हैं ? ये सभी बातें बालक की जीवन शैली को दर्शाति हैं। बालक की जीवनशैली उसके विकास के साथ घनिष्ठ रूप से संबंधित होती है।

जीवनशैली को व्यक्ति की क्रियाओं, अभिवृत्ति तथा रुचियों से समझा जाता है वहीं दूसरी ओर जीवन कौशल को व्यक्ति की अपनी जरूरतों को एक विशेष परिस्थिति में पूरा करने की कुशलता जीवन यापन को प्रभावी बनाने व समायोजन स्थापन के लिए आवश्यक गुणों को अर्जित करने की क्षमता से हैं। अर्थात् जीवन कौशल एक विशिष्ट संकुचित संप्रत्यय है जिसे जीवनशैली का सामान्य रूप से अंग माना जा सकता है। जीवनशैली एक विस्तृत गुण है तथा जीवनकौशल को इसका एक भाग माना जा सकता है, परन्तु एक ही नहीं माना जा सकता। सामाजिक वातावरण में व्यक्तियों के बदलते क्रियाकलापों एवं व्यवहारों के अवलोकन द्वारा अनेक जीवनशैलीयाँ दृष्टिगोचर होती है जैसे- सामान्य, व्यावसायिक, उपभोग आधारित, सैनिक जीवनशैली, यौन संबंधी, धार्मिक/आध्यात्मिक जीवनशैली आदि।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने बताया कि भारत की लगभग 5 करोड आबादी तनाव से ग्रसित है तथा 20-25 फीसदी युवी पीढी तनाव व अवसाद की स्थिति से जूझ रहे हैं। टेक्नालॉजी, काम का बोझ, नाइट लाइफ, शिफ्टिंग जॉब, खेलकूद की कमी, सोशल नेटवर्किंग आदि वे कारण हैं जो भारतीय युवाओं को अवसाद जैसी स्थिति से ग्रसित करते हैं। इंटरनेट एडिक्शन भी इसका बड़ा कारण माना गया है। बदलती दुनिया के साथ-साथ भारत में लगातार किशोरों की जीवनशैली नया मोड़ ले रही है। वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण तथा पश्चिमीकरण समाज की आवश्यकताओं को बदल रहे हैं, जिससे जागरूक होकर युवा पीढ़ी और अधिक महत्वाकांक्षी बन रही है, जिसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव युवाओं की जीवनशैली पर पड़ रहा है। एक व्यक्ति जिस तरह से जीवन जीता है, उसका सीधा प्रभाव उसकी योग्यताओं एवं क्षमताओं पर पड़ता है जिसके आधार पर ही वह जीवन में सफलता व संतुष्टि प्राप्त करता है। अक्सर देखा जाता है कि विद्यार्थी जिस प्रकार की शैली को अपनाता है, वह उसकी संस्कृति, लिंग, पारिवारिक, पृष्ठभूमि सामाजिक आर्थिक स्थिति आदि से प्रभावित होती है। यह सत्य है कि स्नातक स्तर पर विद्यार्थी अपने व्यवसाय के बारे में विशिष्ट समझ के बजाय सामान्य समझ ही रखते हैं। परन्तु फिर भी समय के साथ-साथ किसी विशिष्ट व्यवसाय के प्रति उनका आकर्षण/चाह या लगाव इस स्तर पर विकसित हो चुका होता है तथा वे किसी खास व्यवसाय के प्रति आकांक्षाओं को प्रदर्शित करने लगते हैं कि वे क्या बनना चाहते हैं? किशोरों की आगामी

व्यावसायिक आकांक्षायें किस प्रकार की हैं, यह ज्ञात करना भी आवश्यक प्रतीत होता है।

व्यावसायिक विकास से व्यावसायिक आकांक्षाओं प्रभावित होती है अर्थात बालक व्यावसायिक विकास के जिस स्तर पर है उस स्तर के अनुसार ही उसमें व्यावसायिक आकांक्षायें भी निर्मित होती है। विकास के प्रारंभिक स्तर पर बालक का व्यावसायिक विकास अपूर्ण होता है जिस कारण उनके पास आकांक्षायें तो होती हैं परन्तु वे वास्तविक कम तथा काल्पनिक अधिक होती है। वहीं विकास के उच्च स्तर पर विशिष्टीकरण तथा परिपक्व निर्णयन क्षमता की ओर बढ़ जाते हैं तथा इस स्तर पर वे जिन व्यावसायिक आकांक्षाओं का चुनाव करते है वे वास्तविकता से परिपूर्ण होतीं हैं। अत: व्यावसायिक विकास मानव विकास की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जिस प्रकार बालक का शारीरिक एवं मानसिक पक्षों में विकास होता है उसी प्रकार व्यावसायिक विकास भी विकास स्तर का महत्वपूर्ण पक्ष है जो बालक में धीरे-धीरे विकसित होती है। व्यावसायिक विकास की दृष्टि से किशोरावस्था महत्वपूर्ण अवस्था है। अनेक मनोवैज्ञानिकों ने भी व्यावसायिक विकास को रखते हुए अलग-अलग आयु स्तर पर व्यावसायिक विकास को अध्ययन करने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत शोध का महत्व – वर्तमान समय में उच्च शिक्षा का क्षेत्र तीव्र परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजर रहा है। वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति, प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण और करियर की बढ़ती जटिलताओं ने स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के सामने अनेक नई चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत युवाओं का जीवन केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं रह गया है, बल्कि उनकी समग्र जीवन-शैली, भविष्य की व्यावसायिक आकांक्षाएँ, अध्ययन के दौरान अनुभव होने वाला व्यावसायिक आकांक्षा और अंतत: उनकी शैक्षिक उपलब्धि – ये सभी एक-दूसरे से अंतर्संबंधित कारक बन चुके हैं। ऐसे परिदृश्य में यह अनिवार्य हो जाता है कि विद्यार्थियों के संपूर्ण व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव डालने वाले इन बहुआयामी तत्वों का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया जाए। जीवन-शैली के माध्यम से विद्यार्थियों के स्वास्थ्य, दिनचर्या, पोषण, नींद, सामाजिक व्यवहार, तकनीकी उपयोग, मनोरंजन के तौर-तरीकों तथा मानसिक संतुलन का आकलन किया जाता है। एक संतुलित, अनुशासित तथा स्वस्थ जीवन-शैली न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाती है, बल्कि ध्यान, स्मृति, सकारात्मक सोच और कार्यक्षमता को भी बढ़ाती है, जो शैक्षिक उपलब्धि में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान समय में मोबाइल की लत, सोशल मीडिया का अत्यधिाक उपयोग, असंयमित दिनचर्या, अनियमित खानपान और अव्यवस्थित नींद-चक्र विद्यार्थियों की एक सामान्य समस्या बन चुके हैं, जिसके परिणामस्वरूप पढ़ाई के प्रति एकाग्रता में कमी, स्वास्थ्य संबंधी दिक्कतें और मानसिक तनाव का स्तर बढ़ता जा रहा है। इस कारण जीवन-शैली के शैक्षिक परिणामों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन नितांत आवश्यक हो जाता है।

व्यावसायिक आकांक्षा विद्यार्थियों के संपूर्ण व्यक्तित्व निर्माण का केंद्रीय तत्व है। स्नातक स्तर वह अवस्था है, जहाँ छात्र अपने कैरियर के बारे में गंभीरता से विचार करना शुरू करते हैं। यह आयु-काल अनिश्चितताओं, विकल्पों की अधिकता और सामाजिक-पारिवारिक अपेक्षाओं से भरा होता है। विद्यार्थी किस प्रकार का करियर चुनना चाहता है, उसकी योग्यता, रुचि, आर्थिक स्थिति, परिवार का शैक्षिक माहौल तथा सामाजिक परिस्थिति कैसी हैकृये तत्व मिलकर उसकी व्यावसायिक आकांक्षा को दिशा देते हैं। उच्च आकांक्षा मोटिवेशन को बढ़ाती है, परन्तु जब आकांक्षाओं और वास्तविक संसाधानों में असंगति होती है तो वही आकांक्षा तनाव का कारण भी बन जाती है। साथ ही अनेक विद्यार्थी उपयुक्त मार्गदर्शन के अभाव में करियर चुनाव में भ्रमित रहते हैं। इसलिए इस शोध के माध्यम से व्यावसायिक आकांक्षा के विभिन्न स्तरों तथा उनके शैक्षिक तनाव और उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव को समझना अत्यंत आवश्यक है।

इसी परिप्रेक्ष्य में यह शोध अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के बहुआयामी व्यक्तित्व को समझने में सहायता प्रदान करेगा। यह अध्ययन यह बताएगा कि किस प्रकार जीवन-शैली में सुधार करके तनाव को घटाया जा सकता है और शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाया जा सकता है। साथ ही यह भी स्पष्ट होगा कि उपयुक्त व्यावसायिक मार्गदर्शन विद्यार्थियों की आकांक्षाओं को यथार्थवादी बनाता है और उन्हें लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है। साथ ही यह शोध सामाजिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है क्योंकि स्नातक स्तर के विद्यार्थी ही भविष्य के शिक्षक, प्रशासक, वैज्ञानिक, इंजीनियर, उद्यमी और नागरिक बनते हैं। यदि इस आयु-काल में उनके मानसिक स्वास्थ्य, जीवन-शैली, करियर दृष्टि और अध्ययन-क्षमता को सही दिशा दी जाती है, तो यह न केवल व्यक्तिगत विकास अपितु राष्ट्रीय प्रगति का भी आधार बनता है। युवाओं की ऊर्जा और क्षमता का सही नियोजन तभी संभव है जब हम उनके जीवन-संबंधी कारकों को वैज्ञानिक रूप से समझें और उसके अनुरूप मार्गदर्शन प्रदान करें। इसी कारण यह अध्ययन शिक्षा-शास्त्र के क्षेत्र में अत्यधिक उपयोगी, सामयिक तथा बहु-आयामी महत्व रखता है।

समस्या कथन – 'स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवन शैली एवं व्यावसायिक आकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

जीवन शैली – जीवनशैली शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग प्रसिद्ध ऑस्ट्रियन मनोविश्लेषणवादी मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेडेड ऐडलर (1870-1937) द्वारा किया गया। जीवनशैली अंग्रेजी के दो शब्दों Life तथा Style से मिलकर बना है। जिसका अर्थ होता है 'Way one's lead his/her life' अर्थात् जीवन को आगे बढ़ाना। किसी भी व्यक्ति, परिवार तथा समाज के रहने या जीवन जीने का वह ढंग जिसमें वह अपने शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा आर्थिक वातावरण के साथ दैनिक आधार पर समन्वय स्थापित करने की कोशिश करता है, जीवनशैली कहलाता है।

व्यावसायिक आकांक्षा – विद्यार्थियों के अंदर उत्कृष्टता की भावना का स्तर तथा उसी मात्रा में हीनता का स्तर भी पाया जाता है। माध्यमिक स्तर की अपेक्षा इस स्तर पर वे अधिक परिपक्व होते हैं तथा उनमें इतनी क्षमता व योग्यता विकसित हो चुकी होती है कि वे तर्कसहित समस्या समाधान कर सकते हैं। आकांक्षाएं युवाओं के लिए संभव उपलब्ध विकल्पों को योजेजनाबद्ध करने निर्देशित करने तथा व्यवस्थित करने हेतु आधार का कार्य करती है साथ ही करियर चुनाव एवं व्यवहार निर्माण हेतु महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के व्यावसायिक आकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।
2. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के जयपुर जिले के विभिन्न अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् कुल 800 विद्यार्थियों जिसमे राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 400 विद्यार्थियों तथा निजी अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 400 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. जीवन शैली मापनी (एस. के. बावा एवं एस. कौर)
2. व्यावसायिक आकांक्षा मापनी (स्वनिर्मित)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से अधिक है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के जीवन शैली में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

2. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से अधिक है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शैक्षिक सुझाव– स्नातक स्तर पर अध्ययनरत किशोर उच्च शिक्षा की ओर कदम बढ़ाने को तैयार होते हैं जहां उनकी आकांक्षायें एवं जीवनशैली और अधिक स्पष्ट व स्थायी होने की ओर अग्रसर रहती हैं। इस कारण प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्नातक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की जीवनशैली के संदर्भ में व्यावसायिक आकांक्षाओं एवं शैक्षिक उपलब्धि को लिंग–भिन्नता एवं विषय–वर्ग भिन्नता के आधार पर अध्ययन किया गया है। अत: छात्र व छात्रायें तथा कला, विज्ञान विषय–वर्ग में अध्ययनरत विद्यार्थी प्रमुखत: किन जीवनशैलियों को अपना रहे हैं तथा विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं व शैक्षिक उपलब्धि का स्तर क्या है? यह विषय, विद्यालयी शिक्षक, प्रधानाचार्यों, अध्यापक शिक्षकों, परामर्शक व मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षा नीति निर्धारकों हेतु विशिष्ट उपयोगिता तथा महत्व रखता है। अपने व्यवहार, दृष्टिकोण और आत्मविश्वास में सकारात्मक परिवर्तन लाने हेतु प्रेरित होंगे।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. भावी शोध में महाविद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं में की जीवनशैली को गृहवातावरण, अध्ययन आदतें, व्यक्तित्व, समायोजन, जीवन संतुष्टि, मूल्य के सदंर्भ का भी अध्ययन किया जा सकता है
2. प्रस्तुत शोध विद्यार्थियों के विद्यार्थियों की जीवन शैली, व्यावसायिक आकांक्षा, व्यावसायिक आकांक्षा व शैक्षिक उपलब्धि जानने के लिये किया गया है। यदि विद्यार्थियों की विद्यार्थियों की जीवन शैली, व्यावसायिक आकांक्षा, व्यावसायिक आकांक्षा व शैक्षिक उपलब्धिा विषयों पर अलग–अलग अनुसंधान, बडे एवं व्यापक प्रतिदर्श लेकर किया जाये तो सार्थक एवं महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।
3. प्रस्तुत अध्ययन को अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति एवं सामान्य जाति के विद्यार्थियों की जीवन शैली, व्यावसायिक आकांक्षा, व्यावसायिक आकांक्षा व शैक्षिक उपलब्धि विषय पर विस्तृत प्रतिदर्श लेकर शोध कार्य किया जा सकता है।
4. अग्रेंजी एवं हिन्दी माध्यम के विद्यालयों, केन्द्रीय एवं आवासीय विद्यालय के विद्यार्थियों के विद्यार्थियों की जीवन शैली, व्यावसायिक आकांक्षा, व्यावसायिक आकांक्षा व शैक्षिक उपलब्धिपर अनुसंधान सम्पादित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य बी.एल. (2000): ' शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष–40, अंक–10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. चौधरी, के. विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षाओं, व्यावसायिक चयन एवं अकादमिक चयन का अध्ययन. बुच, एम. बी. फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन ए एन. सी. ई. आर. टी., दिल्ली, पृ.सं. 476.
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
6. पंकज एस. सुवेरा व सुनील एस. जादव (2014) 'अ कम्परेटिव स्टडी ऑफ द लाइफ स्टाइल अमंग अरबन एण्ड रूरल एजुकेटेड अनअम्प्लाइड प्युपिल'एसिशन जरनल ऑफ बिजनिस इकोनॉमिक्स एण्ड मैनेजमेंट
7. सिंह, सतविंदर (2014) 'ऐकेडमिक अचीवमेंट ऑफ सनीयर सैकण्डरी स्कूल स्टूडेंट्स इन रिलेशन टू देयर स्टडी हैबिट्स' शिक्षक अंतदृष्टि, 40–43
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।

9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की जीवन शैली	400	179.48	19.278	2.783	**अस्वीकृत**
निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की जीवन शैली	400	175.95	19.985		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा	400	50.49	10.461	0.916	**स्वीकृत**
निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की व्यावसायिक आकांक्षा	400	51.18	10.764		

****

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. अनिल कुमार* ममता कुमारी सैन**

*प्रोफेसर (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन करना है तथा शोधकर्ता द्वारा अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुये उपकरण के रूप में विजय लक्ष्मी चौहान और गुंजन गनोत्रा अरोरा द्वारा निर्मित अभिभावक सहभागिता मापनी Parental Involvement Scale (PIS–CA) का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया कि राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की अभिभावक सहभागिता एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बंध हैं।

शब्द कुंजी – राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, शैक्षिक उपलब्धि व अभिभावक सहभागिता।

प्रस्तावना – शिक्षण की प्रक्रिया में अपेक्षा की जाती है कि प्रत्येक विद्यार्थी सक्रिय रहकर सीखें तथा अभिभावक भी यही चाहते हैं कि वह प्रतिभाशाली हों। लेकिन कक्षा में कुछ बच्चे ही सीखने-सिखाने की प्राक्रिया में सक्रिय रहते हैं। इस समस्या के निवारण के लिए अध्यापन कार्य में कुछ नवीनता एवं परिवर्तन की आवश्यकता होती है। विद्यार्थी में अपार संभावनाएँ एवं क्षमताएँ होती है, जिनके विकास हेतु अवसर उपलब्ध कराने का कार्य अध्यापक-पालक व समाज का होता है। सर्वाधिक योगदान शिक्षक का व उनकी शिक्षण विधि का होता है। बच्चा जिन आदतों व संस्कारों को सीखता है वे जीवन पर्यन्त रहते हैं। विद्यालय इन आदतों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। आदत का निर्माण अधिगम के स्थायित्व से होता है और बालक द्वारा अधिगम किस स्तर तक ग्रहण किया गया है इसका आधार एक शिक्षक मूल्यांकन के द्वारा करता हैं। यह मूल्यांकन एक प्रकार की एक ऐसी कसौटी है जिस पर विद्यार्थी को खरा उतरना होता है। विद्यार्थियों की शारीरिक एवं मानसिक योगयता में विभिन्नताएँ पाई जाती है, जिसके आधार पर अधिगम के स्तर प्रभावित होते है।

मूल्यांकन एवं शिक्षा दोनों ही सापेक्ष है। शिक्षा की उत्पत्ती ही मूल्यांकन का प्रादुर्भाव है। प्राचीन काल में चूँकि औपचारिक रूप से ज्ञान प्राप्त करने के साधन आश्रम एवं गुरूकुल थे, जहाँ छात्र गुरू के सानिध्य में ज्ञान प्राप्त किया करते थे। चूँकि शिष्य एवं गुरू का साथ दीर्घ अवधि का होता था, इस अवधि के साथ-साथ गुरू-शिष्य का निरंतर मूल्यांकन किया करता था। इसके लिए हमारे ऐतिहासिक ग्रंथ भी साक्षी है। आज यह शिक्षण प्रक्रिया बाल केन्द्रित हो गई है। जिसके कारण मूल्यांकन का आधार भी मनोविज्ञान पर आधारित अर्थात् बालक की योग्यता एवं व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए रखा गया है। यह मूल्यांकन एक शिक्षक परीक्षा के माध्यम से करता है।

शोध अध्ययन का औचित्य – वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में पाठ्यक्रम का दबाव विद्यार्थियों पर लगातार बढ़ रहा है। अभिभावकगण अपने व्यवसाय एवं नौकरी में व्यस्त रहते हैं। अपने बालक-बालिकाओं को पर्याप्त समय नहीं दे पाते, जिससे उनके बच्चों का परीक्षा परिणाम प्रभावित होता है, जिसकी वजह से बालकों में डर, भय, दुश्चिंता, तनाव, चिड़चिड़ापन आ जाता है और बच्चे अवसाद में चले जाते हैं। कई छात्र-छात्राएं आत्महत्या तक कर लेते हैं। आजकल की पढ़ाई एवं मूल्यांकन पद्धति परीक्षा निर्भर हो गई है और यह परीक्षा सिर्फ परीक्षा परिणाम के नम्बरों तक सीमित हो गया है जिससे बालकों के शैक्षिक उपलब्धि के परिणाम में कमी आई है।

समस्या कथन :– 'राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक सहभागिता के प्रभाव का अध्ययन'

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अर्न्तगत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक सहभागिता एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन।
2. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अर्न्तगत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक सहभागिता एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन।

शोध की परिकल्पनाएँ :

1. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अर्न्तगत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक सहभागिता एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाएगा।

2. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक सहभागिता एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाएगा।

अध्ययन का परिसीमन – प्रस्तुत शोध अध्ययन राजस्थान राज्य के श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले तक सीमित है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिये राजस्थान माध्यमिक बोर्ड और केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यालयों के विद्यार्थियों तक परिसीमित है।

अनुसंधान विधि – प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण शोध विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में आंकड़ों के संग्रहण हेतु राजस्थान के श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के 209 स्कूलों एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के 52 स्कूलों के अन्तर्गत आने वाले उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु निम्नानुसार शोध उपकरण का प्रयोग किया गया है – विजय लक्ष्मी चौहान और गुंजन गनोत्रा अरोरा द्वारा निर्मित अभिभावक सहभागिता मापनी Parental Involvement Scale (PIS–CA) शैक्षिक उपलब्धि न्यादर्श हेतु चयनित स्कूलों के गत वर्ष का परीक्षा परिणामों के अंक।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यमान मानक विचलन, टी–परीक्षण तथा एफ–परीक्षण आदि सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

शोध अध्ययन के निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा परिकल्पनाओं के परीक्षण के पश्चात् प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्न निष्कर्ष प्राप्त किये हैं –

निष्कर्ष 1 – राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की अभिभावक सहभागिता एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसंबंध हैं। अध्ययन के दौरान यह देखा गया है कि राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एवं केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड समन्वित रूप में स्कूल शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए हरसम्भव प्रयास कर रहे हैं। साथ ही दोनों बोर्डो के स्कूलों में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक अपने बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि हेतु समान विचारधारा रखते हैं।

निष्कर्ष 2 – राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयों के कक्षा 10वीं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अभिभावक सहभागिता एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध नहीं हैं। सार्थक सम्बन्ध नहीं होने का मुख्य कारण अभिभावकों का आर्थिक परिस्थितियां हैं, जिसके कारण अभिभावक गण अपने बच्चों की शैक्षिक उपकब्धि पर धयान नहीं दे पाते और अध्ययन के लिए उचित शैक्षिक वातावरण के निर्माण में चूक जाते हैं।

शैक्षिक महत्व – अभिभावक सहभागिता के माध्यम से विद्यालयी वातावरण को उन्नत बनाया जा सकता है, जिसके लिये अभिभावक–शिक्षक वार्तालाप आवश्यक है। इसलिए अभिभावक सहभागिता विद्यालयी वातावरण को सकारात्मक बनाये रखने के लिए शैक्षिक महत्व रखता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. रामाकृष्णन, के. (2005), माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक प्रेरणा, बुद्धिमत्ता, आत्म अवधारणा, कक्षा वातावरण में अभिभावकों की सहभागिता, विषय पर पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध, कालिकट विश्वविद्यालय, उड़ीसा, पृष्ठ 182, 185.
2. शर्मा, निधि (2002), 12वीं के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं आंकाक्षाओं पर अभिभावकों की भागीदारी और आकाक्षाओं का प्रभाव, पी.एच.डी. शोध प्रबंधन, पंजाब विश्वविद्यालय, पंजाब, पृष्ठ 300–310.
3. शर्मा, बिरेन्द्र प्रकाश (2013), रिसर्च मेथडोलॉजी, पंचशील प्रकाशन, फिल्म कॉलोनी, चौड़ा रास्ता, जयपुर, 302003.
4. शर्मा, आर.ए. (2008), शिक्षा मापन के मूल तत्व एवं सांख्यिकीय, आर. लाल बुक डिपो, बेगम ब्रिज रोड, निकट राजकीय, इंटर कॉलिज, मेरठ, 250001–37001

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन

डॉ. बबीता शर्मा* ममता वर्मा**

*सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में टोंक जिले के राजकीय व गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कुल 600 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रुप में यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति मापनी शोधार्थी द्धारा स्वनिर्मित व अध्ययन आदत मापनी पाल्सने तथा शर्मा द्धारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

शब्द कुंजी –उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि।

प्रस्तावना – शिक्षा-क्षेत्र में आज का समय अनेक चुनौतियों और अवसरों का समामेलन है। समाज-विकास की दिशा में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण वाहन माना गया है क्योंकि यह केवल ज्ञान-प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि व्यक्तित्व-निर्माण, सामाजिक समायोजन और जीवन-क्षमता को भी प्रभावित करती है। विशेष रूप से माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थी जीवन के ऐसे निर्णायक पड़ाव पर होते हैं जहाँ उनकी अध्ययन, गृह-कार्य के प्रति दृष्टिकोण तथा शैक्षणिक उपलब्धि, तीनों का तालमेल उनके शैक्षणिक मार्ग तथा आगे की दिशा को बल प्रदान करता है। इस प्रसंग में यदि हम इन तीनों पहलुओं गृह-कार्य के प्रति दृष्टिकोण तथा शैक्षणिक उपलब्धि को समग्र रूप से देखें, तो उन्हें एक दूसरे के पूरक, प्रभावित एवं प्रभावित होने वाले कारक माना जा सकता है। इस अध्ययन का मूल उद्देश्य इन्हीं संबंधों को उजागर करना है, ताकि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों के शैक्षणिक जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके।

आज-के शिक्षा-परिवेश में गृह-कार्य का महत्व केवल शिक्षक द्धारा दिए गए अभ्यास तक सीमित नहीं रहा है, बल्कि यह सीखने-की प्रक्रिया, समय-प्रबंधान, आत्म-नियोजन तथा स्वाध्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण माध्यम बन गया है। विद्यार्थी जब नियमित रूप से गृह-कार्य करते हैं, तो न केवल पाठ्य-सामग्री को दोहराते हैं, बल्कि अपनी समझ को स्थिर करने, आत्म-विश्वास बढ़ाने तथा आगे के पाठ के लिए तैयार होने का अवसर भी प्राप्त करते हैं। दूसरी ओर, यदि विद्यार्थी के दृष्टिकोण में गृह-कार्य को बोझ की तरह देखा जाता है या वह उसे अनियमित रूप से करता है, तो यह सीखने-की प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है। इस दृष्टि से गृह-कार्य के प्रति दृष्टिकोण विशेष महत्व प्राप्त करता है।

अध्ययन करने के तरीके, समय का उपयोग, ध्यान-केन्द्रितता, पुनरावलोकन-चर्या, नोट-लेखन, स्वयं-परीक्षण आदि उन व्यवहारिक पैटर्न हैं जिनके द्धारा विद्यार्थी अपनी पढ़ाई को व्यवस्थित करते हैं। अध्ययनों में यह पाया गया है कि अच्छी अध्ययन आदत वाले विद्यार्थी अपनी पढ़ाई में अधिक सुसंगत तथा प्रभावी रहते हैं। इसके विपरीत, असंगठित अध्ययन, बेवक्त अध्ययन, निरंतरता की कमी, व्यवस्थित पुनरावलोकन के अभाव जैसी प्रवृत्तियाँ शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित कर सकती हैं। इसलिए अध्ययन आदत को विद्यार्थी की शैक्षणिक सफलता में एक महत्वपूर्ण कारक माना गया है।

शैक्षणिक उपलब्धि, अर्थात् सजगतापूर्वक अध्ययन के पश्चात प्राप्त अंक, ग्रेड, विषय-विशिष्ट दक्षता, तथा परीक्षा-प्रदर्शन, शिक्षा-प्रक्रिया का प्रत्यक्ष प्रमाण है। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की उपलब्धि केवल व्यक्तिगत सफलताओं तक सीमित नहीं होती, बल्कि आगे की शिक्षा-दिशा ;कॉलेज, विश्वविद्यालय, कॅरियर विकल्प तथा सामाजिक-आर्थिक स्थिति को भी प्रभावित करती है। इस प्रकार, विद्यार्थी के गृह-कार्य के प्रति दृष्टिकोण तथा अध्ययन आदत यदि अनुकूल हों, तो उनकी शैक्षणिक उपलब्धि को बढ़ावा मिलने की संभावना बढ़ जाती है।

अध्ययन करने के तरीके, समय का उपयोग, ध्यान-केन्द्रितता, पुनरावलोकन-चर्या, नोट-लेखन, स्वयं-परीक्षण आदि उन व्यवहारिक पैटर्न हैं जिनके द्धारा विद्यार्थी अपनी पढ़ाई को व्यवस्थित करते हैं। अध्ययनों में यह पाया गया है कि अच्छी अध्ययन आदत वाले विद्यार्थी अपनी पढ़ाई में अधिक सुसंगत तथा प्रभावी रहते हैं। इसके विपरीत, असंगठित अध्ययन, बेवक्त अध्ययन, निरंतरता की कमी, व्यवस्थित पुनरावलोकन के अभाव जैसी प्रवृत्तियाँ शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित कर सकती हैं। इसलिए अध्ययन आदत को विद्यार्थी की शैक्षणिक सफलता में एक महत्वपूर्ण कारक माना गया है।

भारत जैसे परिवर्तन-शील सामाजिक-शैक्षणिक परिवेश में, विशेष रूप से ग्रामीण या अर्धा-शहरी क्षेत्रों में, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों का अनुभव, शिक्षक-प्रेरणा, विद्यालय-संसाधन, अभिभावक-सहयोग, सामाजिक-परिवेश आदि अनेक बाह्य कारक इन तीन प्रमुख अंत:क्रियाशील आयामों (गृह-कार्य, अध्ययन, उपलब्धि) को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि विद्यार्थी का परिवार शिक्षा-प्रति प्रोत्साहित माहौल प्रदान करता है, तो गृह-कार्य के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक विकसित होने की संभावना अधिक होती है। यदि विद्यालय संसाधानों-सहित सुविधा सम्पन्न है और शिक्षण-प्रक्रिया सक्रिय है, तो अध्ययन आदत सुधारने की दिशा में सहायक होती है, परिणामस्वरूप शैक्षणिक उपलब्धि बेहतर होती है। इस प्रकार वातावरण एवं दृष्टिकोण का समन्वित प्रभाव स्पष्ट होता है।

उदाहरणस्वरूप, यदि किसी विद्यालय में गृह-कार्य को सिर्फ प्रतिलिपि-कृति की तरह देखा जाता है, तो विद्यार्थी उसे गहराई से नहीं करते, जिसके परिणामस्वरूप उनका अध्ययन आदत स्वाभाविक रूप से कमजोर बन सकता है और शैक्षणिक उपलब्धि प्रभावित हो सकती है। इसके विपरीत, यदि विद्यार्थी ने अपने गृह-कार्य को विश्लेषण-मुखी दृष्टिकोण से अपनाया हो, समय-प्रबंधान, स्व-परीक्षण-नोटिंग, पुनरावलोकन-प्रक्रिया आदि के माध्यम से अध्ययन किया हो, तो उसकी उपलब्धि बेहतर हो सकती है। इस प्रकार, हमें यह समझना आवश्यक है कि गृह-कार्य, अध्ययन आदत तथा शैक्षणिक उपलब्धि आपस में किस प्रकार संवाद, पारस्परिक प्रभाव तथा कारक-प्रभाव अनुभव करते हैं।

प्रस्तुत शोध का महत्व – शिक्षा किसी भी राष्ट्र की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा नैतिक उन्नति की आधारशिला होती है। किसी देश की प्रगति उसके नागरिकों की शिक्षा के स्तर पर निर्भर करती है। शिक्षित नागरिक ही देश की प्रगति में सार्थक योगदान दे सकते हैं। शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करना नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम भी है। शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति में विवेक, संवेदनशीलता, आत्मनिर्भरता तथा उत्तरदायित्व जैसे गुण विकसित होते हैं। इसी संदर्भ में छात्रों के अध्ययन व्यवहार, गृहकार्य के प्रति दृष्टिकोण तथा अध्ययन आदतों का उनके शैक्षणिक उपलब्धि से गहरा संबंध होता है। आज के प्रतिस्पर्धा युग में जहाँ ज्ञान का विस्तार तीव्र गति से हो रहा है, वहाँ अध्ययन के प्रति विद्यार्थियों का दृष्टिकोण और उनकी अध्ययन शैली शिक्षा की गुणवत्ता निर्धारित करने में अत्यंत महत्तवपूर्ण भूमिका निभाती है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी जीवन के ऐसे मोड़ पर होते हैं जहाँ से उनका उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक जीवन की ओर संक्रमण प्रारंभ होता है। इस स्तर पर विकसित होने वाली अध्ययन आदतें, कार्य के प्रति दृष्टिकोण और समय प्रबंधन की क्षमता उनके सम्पूर्ण भविष्य को दिशा प्रदान करती हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि छात्रों के अध्ययन व्यवहार, गृहकार्य की प्रवृत्ति और शैक्षणिक उपलब्धि के पारस्परिक संबंध का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए, ताकि शिक्षा प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और उपयोगी बनाया जा सके। अध्ययन की आवश्यकता इस बात में निहित है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थियों के शैक्षणिक परिणाम अपेक्षाकृत असंतोषजनक पाए जा रहे हैं, जिसका एक प्रमुख कारण उनकी असंगठित अध्ययन आदतें और गृहकार्य के प्रति उदासीनता है।

वर्तमान समय में शिक्षा का क्षेत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार ने विद्यार्थियों के अध्ययन के तरीकों को प्रभावित किया है। इंटरनेट और डिजिटल माध्यमों के अत्यधिक प्रयोग ने छात्रों की एकाग्रता और अध्ययन अनुशासन पर प्रभाव डाला है। अब यह और भी आवश्यक हो गया है कि यह समझा जाए कि आधुनिक परिवेश में विद्यार्थियों की अध्ययन आदतें किस दिशा में परिवर्तित हो रही हैं और इन परिवर्तनों का उनके शैक्षणिक प्रदर्शन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। इस अध्ययन के माध्यम से यह ज्ञात किया जा सकेगा कि गृहकार्य के प्रति दृष्टिकोण और अध्ययन आदतों में सुधार लाकर शैक्षणिक उपलब्धि को कैसे बढ़ाया जा सकता है।

शिक्षा शास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि अध्ययन आदतों का निर्माण बचपन से ही प्रारंभ हो जाता है और यह शिक्षक, माता-पिता एवं सामाजिक वातावरण पर निर्भर करता है। यदि विद्यार्थी को प्रारंभिक स्तर पर अच्छे अध्ययन अभ्यास सिखाए जाएँ, तो वह आगे चलकर स्व-प्रेरित शिक्षार्थी के रूप में विकसित हो सकता है। परंतु वर्तमान में विद्यार्थियों में आत्मनियंत्रण और अध्ययन के प्रति गंभीरता का अभाव देखा जा रहा है। यह अध्ययन इस दिशा में ठोस जानकारी प्रदान करेगा कि किस प्रकार अध्ययन व्यवहार में सुधार लाकर विद्यार्थियों की उपलब्धि को बेहतर बनाया जा सकता है।

गृहकार्य, अध्ययन आदत और शैक्षणिक उपलब्धि ये तीनों परस्पर संब (घटक हैं। गृहकार्य विद्यार्थियों को विषय की पुनरावृत्ति करने, आत्मनिर्भरता विकसित करने और आत्ममूल्यांकन का अवसर प्रदान करता है। अध्ययन आदत विद्यार्थियों के नियमित अध्ययन, धयान केंद्रण, समय प्रबंधान और सीखने के अनुशासन को निर्धारित करती है, जबकि शैक्षणिक उपलब्धि उन सभी प्रयासों का प्रतिफल होती है। इन तीनों घटकों के मध्य संबंध को समझना शिक्षा मनोविज्ञान के लिए भी अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि यह विद्यार्थियों के व्यवहारिक और भावनात्मक विकास से भी जुड़ा है।

अध्ययन की महत्ता इस दृष्टि से भी है कि यह शिक्षा नीति निर्माताओं, शिक्षकों और अभिभावकों को उपयोगी दिशानिर्देश प्रदान करेगा। इस शोध से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर विद्यालयों में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सुधार किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, यदि यह ज्ञात हो जाए कि गृहकार्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि अधिक होती है, तो विद्यालयों में गृहकार्य की प्रक्रिया को अधिक सृजनात्मक और प्रेरणादायक बनाया जा सकता है। इसी प्रकार यदि यह स्पष्ट हो कि नियमित अध्ययन आदतों वाले विद्यार्थी अधिक सफल होते हैं, तो शिक्षकों द्वारा छात्रों को समय प्रबंधान और अध्ययन रणनीतियों पर विशेष प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

अध्ययन का महत्त्व इस बात में भी निहित है कि यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली में व्याप्त उन चुनौतियों को उजागर करेगा जो विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित कर रही हैं। आज के समय में विद्यार्थियों पर प्रतियोगिता का अत्यधिक दबाव है। यह दबाव कई बार उनकी अध्ययन आदतों को विकृत कर देता है। ऐसे में यह आवश्यक है कि शोध के माध्यम से उन मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक तत्वों को पहचाना जाए जो अध्ययन आदतों को प्रभावित करते हैं। यह अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान देगा, क्योंकि इससे विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को अधिक गहराई से समझने में सहायता मिलेगी।

शोध कथन :- 'उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

गृहकार्य– कूपर (1989) ने गृहकार्य को परिभाषित किया है, कि 'वह कोई कार्य है जो छात्रों को विद्यालय शिक्षकों द्वारा सौंपा जाता है जिसे विद्यालय से छुट्टी के बाद के समय में किया जाना चाहिए।' डीजोंग, वेस्टरहोफ, और क्रीमर्स (2000) द्वारा दी गई गृहकार्य की व्यापक परिभाषा के अनुसार कि गृहकार्य 'नियमित स्कूल कक्षाओं के बाहर स्कूल पाठ्यक्रम के कार्यो को करना है'।

अभिवृत्ति– अभिवृत्ति पूर्व नियोजन अथवा तत्परता की वह अवस्था है जो सार्थक उद्दीपकों के प्रति पूर्व निश्चित तरीके से प्रतिक्रिया करने में सहायक होती है। अभिवृत्ति की संक्रियात्मक परिभाषा के अनुसार – अभिवृत्ति वह है जो व्यक्ति को किसी एक परिस्थिति में एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को प्रेरित करती है। व्यक्ति की किसी विशेष उद्दीपक के प्रति किस प्रकार की क्रिया होगी, यह उसके प्रति बनी अभिवृत्ति पर निर्भर करेगा। इस प्रकार अभिवृत्ति बहुत कुछ सीमा तक किए जाने वाले व्यवहार के लिए उत्तारदायी हो सकती हैं परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि व्यक्ति का व्यवहार संपूर्ण रूप से की अभिवृत्तियों पर ही निर्भर करता है।

अध्ययन आदत – सामान्य: किसी व्यक्ति को जो कार्य पहले कठिन जान पड़ता है, वह सीखने के बाद सरल हो जाता है। हम उसे जितना अधिक दोहराते हैं, उतना ही वह सरल होता चला जाता है। कुछ समय के बाद हम उसे बिना ध्यान दिये, बिना प्रयास किये, बिना सोचे–समझे, ज्यों का त्यों करने लगते हैं। किसी व्यक्ति के इस प्रकार कार्य करने को आदत कहते हैं अर्थात् आदत एक सीखा हुआ कार्य या अर्जित व्यवहार है, जो स्वत: होता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत पर प्रभाव अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

न्यादर्श –प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के टोंक जिले के राजकीय व गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कुल 600 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रुप में यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. गृहकार्य के प्रति अभिवृति मापनी स्वनिर्मित
2. अध्ययन आदत मापनी पाल्सने तथा शर्मा

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

1. उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :– परिकल्पना संख्या 1 के उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति एवं अध्ययन आदत के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.067 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01पर सार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का अध्ययन आदत पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

(2) उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.028 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर असार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की गृहकार्य के प्रति अभिवृति का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

शैक्षिक सुझाव:

1. यह अध्ययन विद्यार्थियों में गृहकार्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक होगा।
2. अध्ययन से छात्रों को नियमित अध्ययन की आदत विकसित करने की प्रेरणा मिलेगी।
3. यह उनके आत्म–अनुशासन, समय–प्रबंधन तथा स्व–प्रेरणा को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा।
4. गृहकार्य के महत्व को समझने से छात्रों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति बढ़ेगी।
5. यह अध्ययन छात्रों को उनकी शैक्षिक उपलब्धि में सुधार हेतु प्रभावी अध्ययन रणनीतियाँ अपनाने में सहायता करेगा।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. भावी शोध में उच्च माध्यमिक विद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं में गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन किया जा सकता है
2. प्रस्तुत शोध विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण का अध्ययन आदतों, समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों जानने के लिये किया गया है। यदि विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता, शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों विषयों पर अलग–अलग अनुसंधान, बडे एवं व्यापक प्रतिदर्श लेकर किया जाये तो सार्थक एवं महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।
3. प्रस्तुत अध्ययन को अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति एवं सामान्य जाति के विद्यार्थियों के गृहकार्य के प्रति अभिवृति, अध्ययन आदत व शैक्षिक उपलब्धि विषय पर विस्तृत प्रतिदर्श लेकर शोध कार्य किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य बी.एल. (2000): ' शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष-40, अंक-10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. कुलदीप, के. (2019). 'माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन' इंटरनेशनल जनरल ऑफ अप्लाइड रिसर्च, 5;11, 284-287.
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान'' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. डेवेसी, आई. (2015) 'व्यू ऑफ मिडिल स्कूल स्टूडेंट्स ऑन होमवकन असाइनमेंट इन साइंस कोसन' साइंस एजुकेशन इंटरनेशनल, 26, 539-556.
7. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), 'शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय', आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
8. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में गृहकार्य के प्रति अभिवृति	600	132.39	14.888	0.067	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदत	600	53.82	12.681		

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में गृहकार्य के प्रति अभिवृति	600	132.39	14.888	0.028	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि	600	73.55	10.664		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव एवं मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अध्ययन

डॉ. आरती* माया नेनीवाल**

*सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव एवं मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। अध्ययन राजस्थान राज्य के अजमेर एवं टोंक जिले के विभिन्न उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् कुल 400 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। अजमेर एवं टोंक जिले के राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् 200 शिक्षकों तथा गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् 200 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव मापन हेतु डॉ. हसीन ताज एवं मानसिक स्वास्थय मापन हेतु डॉ. जगदीश एवं डॉ. श्रीवास्तव द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव एवं मानसिक स्वास्थ्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
शब्द कुंजी – उच्च प्राथमिक विद्यालय, शिक्षक, शिक्षकीय ठहराव, मानसिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना – शिक्षा एक जीवंत प्रक्रिया है, जो समाज के जीवन की लय के साथ गतिशील रूप से विकसित होती रहती है। यह उस विशाल वृक्ष के समान है, जिसकी जड़ें संस्कृति, परंपरा और अनुभव में निहित हैं, तथा जिसकी शाखाएँ ज्ञान, मूल्य और प्रगति के रूप में फैलती हैं। शिक्षा समाज के विकास की जननी है और उसका संचालन एक दक्ष, संवेदनशील और समर्पित शिक्षक के माध्यम से संभव होता है। एक श्रेष्ठ समाज की नींव एक आदर्श शिक्षक के व्यक्तित्व, कृतित्व और नैतिक दृष्टिकोण पर टिकी होती है।

शिक्षा एक सामाजिक एवं विकासात्मक क्रिया है, जो व्यक्ति और समाज दोनों के सतत् विकास का साधान है। शिक्षण, इस शिक्षा प्रक्रिया की आत्मा है यह केवल सूचना के आदान-प्रदान का माध्यम नहीं, बल्कि अनुभवों, संबंधों और संवाद की ऐसी सृजनात्मक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विद्यार्थी जीवनोपयोगी ज्ञान प्राप्त करते हैं। मौरिसन ने कहा था कि 'प्रजातंत्र में शिक्षक का स्थान पथप्रदर्शक और निर्देशक के रूप में होता है।' वास्तव में, शिक्षक और बालक का संबंध केवल ज्ञान तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह भावनात्मक और सामाजिक स्तर पर गहरा संबंध होता है। किसी भी शिक्षा व्यवस्था की सफलता उसके शिक्षकों की योग्यता, प्रतिबद्धता और मानसिक स्वास्थ्य पर निर्भर करती है।

शिक्षा राष्ट्र के निर्माण की मेरुदंड है, और शिक्षक इस मेरुदंड का सबसे सशक्त स्तंभ। शिक्षक केवल ज्ञान का संवाहक नहीं होता, वह विद्यार्थियों के व्यक्तित्व, आचरण और चरित्र निर्माण में प्रत्यक्ष योगदान देता है। उसके व्यक्तित्व का प्रभाव बालकों पर गहराई से पड़ता है, जिससे उनमें सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक गुणों का विकास होता है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शब्दों में, 'समाज में शिक्षक का स्थान सर्वोच्च होता है, क्योंकि वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक बौद्धिक परंपरा और तकनीकी दक्षता का संवाहक होता है तथा सभ्यता की ज्योति को प्रज्वलित रखने में सहायक बनता है।'

विद्यालय शिक्षक और विद्यार्थी के प्रत्यक्ष संवाद का केंद्र होता है। अध्यापक की कार्यकुशलता, योग्यता और मनोवैज्ञानिक परिपक्वता शिक्षण प्रक्रिया की गुणवत्ता को निर्धारित करती है। शिक्षक विद्यार्थियों के लिए मार्गदर्शक, प्रेरक और सहयोगी की भूमिका निभाता है। वर्तमान समय में शिक्षण केवल ज्ञान प्रदान करने तक सीमित नहीं रह गया है, बल्कि यह विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास की एक सृजनात्मक प्रक्रिया बन चुका है। इसलिए आज के शिक्षक को आधुनिक शिक्षण-कौशल, तकनीकी दक्षता और मनोवैज्ञानिक स्थिरता की विशेष आवश्यकता है। वास्तव में, पाठ्यक्रम से कहीं अधिक महत्वपूर्ण शिक्षक का व्यक्तित्व है, क्योंकि वही विद्यार्थियों में सही दृष्टिकोण, विषय के प्रति रुचि और रचनात्मकता का संचार करता है।

शिक्षक समाज का सचेत अंग है, जिसका स्थान न केवल शैक्षिक बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षक को परिवर्तन के प्रमुख साधन के रूप में स्वीकार किया गया है। परंतु आज के युग में देखा जा रहा है कि शिक्षण एक सेवा की बजाय रोजगार का साधान बनता जा रहा है। यह प्रवृत्ति शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है। इस गिरावट के पीछे शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य, बढ़ता व्यावसायिक तनाव, भावनात्मक संवेदनशीलता की कमी और प्रतिकूल विद्यालयीय वातावरण जैसे कारक प्रमुख हैं। परिणामस्वरूप कई शिक्षक अपने विषय में पारंगत होने के बावजूद विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुरूप शिक्षण नहीं कर पा रहे हैं।

एक अच्छा शिक्षक वह है जो अधयापन कार्यों को दक्षता और निष्ठा से सम्पन्न करता है तथा विद्यार्थियों को प्रेरित करने में सदैव तत्पर रहता है।

प्रसिद्ध शिक्षाविद् पद्मभूषण डॉ. दौलतराम कोठारी ने कहा था, 'आज का युग ज्ञान का युग है' ज्ञान हर दशक में दुगुनी गति से बढ़ रहा है। यदि शिक्षक इस परिवर्तनशील प्रवाह के साथ स्वयं को नहीं बदलता, तो वह समय से पीछे रह जाता है।' यह कथन आधुनिक शिक्षकों के लिए प्रेरणा का स्रोत है, जो उन्हें निरंतर आत्म-सुधार और नवाचार के लिए प्रेरित करता है।

शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका निर्णायक होती है। बालक शिक्षक के व्यक्तित्व को अपनाना चाहता है, क्योंकि वही उसका आदर्श बनता है। प्रत्येक शिक्षक की अपनी जीवन-दृष्टि, मूल्य और आदर्श होते हैं, जिनका प्रभाव विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर पड़ता है। इस प्रकार शिक्षा की समस्त गतिविधियाँ शिक्षक के चारों ओर केंद्रित होती हैं। शिक्षक बालकों के विकास हेतु प्रेरक विचार देता है और उनके मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने का प्रयास करता है। वह विद्यार्थियों की समस्याओं को समझकर उन्हें समाधान की दिशा में अग्रसर करता है, जिससे उनमें आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास का विकास होता है।

अत: यह कहा जा सकता है कि शिक्षण-अधिगम की संपूर्ण प्रक्रिया का केंद्र शिक्षक ही है। ज्ञान के स्थानांतरण से लेकर मूल्य-संवर्धन तक, उसकी भूमिका अपरिहार्य है। एक सक्षम शिक्षक विद्यार्थियों की क्षमताओं को पहचानकर उन्हें बिना किसी झिझक के अभिव्यक्त होने के अवसर प्रदान करता है। वह बालकों के जीवन में संस्कार और नैतिक आधार की नींव रखता है, जो जीवनपर्यंत स्थायी रहती है। इसीलिए कहा जाता है 'शिक्षक राष्ट्रनिर्माण की रीढ़ है।' इसलिए यह अनिवार्य है कि शिक्षक मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक रूप से संतुलित तथा जागरूक रहे, ताकि वह शिक्षण के दायित्व को सफलतापूर्वक निभा सके और समाज के भविष्य को सही दिशा दे सके।

प्रस्तुत शोध का महत्व –शिक्षकीय ठहराव का आशय शिक्षक की अपने पेशे में निरंतरता, समर्पण, स्थिरता और संगठन के प्रति निष्ठा से है। जब किसी शिक्षक के भीतर ठहराव की भावना विकसित होती है, तो वह अपने कार्य को केवल दायित्व नहीं बल्कि आंतरिक संतोष का स्रोत मानता है। किंतु जब व्यावसायिक तनाव बढ़ता है जैसे समय का दबाव, प्रशासनिक दवाब, संसाधानों की कमी या विद्यार्थियों की अनुशासनहीनता तो ठहराव की भावना कमजोर पड़ने लगती है। इसी प्रकार, यदि शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य असंतुलित हो जाता है, तो उसका आत्मविश्वास, निर्णय क्षमता और सामाजिक अनुकूलन प्रभावित होते हैं। इसलिए शिक्षकीय ठहराव, व्यावसायिक तनाव और मानसिक स्वास्थ्य के बीच अंतर्संबंधों का विश्लेषण शिक्षा प्रणाली के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

वर्तमान समय में शिक्षक अनेक मानसिक एवं सामाजिक चुनौतियों से गुजर रहा है। एक ओर उससे तकनीकी दक्षता, नवाचारिता और परिणामोन्मुख शिक्षण की अपेक्षा की जाती है, वहीं दूसरी ओर संस्थागत दबाव, सीमित संसाधन और सामाजिक अपेक्षाएँ उसके कार्य के प्रति संतोष को घटाती हैं। ऐसे में यह जानना आवश्यक है कि इन परिस्थितियों का उसके मानसिक स्वास्थ्य और पेशागत ठहराव पर क्या प्रभाव पड़ता है। यह अध्ययन इस दिशा में नए दृष्टिकोण प्रदान करेगा कि किस प्रकार शिक्षक की मानसिक स्थिरता और तनाव प्रबंधान क्षमता उसके शिक्षण व्यवहार और शैक्षिक गुणवत्ता को प्रभावित करती है।

यदि यह ज्ञात होता है कि कौन-से कारक शिक्षकों में तनाव उत्पन्न करते हैं और मानसिक असंतुलन का कारण बनते हैं, तो उनकी रोकथाम के लिए ठोस उपाय किए जा सकते हैं। साथ ही, यदि यह समझा जा सके कि मानसिक स्वास्थ्य और ठहराव के बीच कैसे सकारात्मक संबंध हैं, तो शिक्षक-कल्याण कार्यक्रमों की दिशा और स्वरूप को और सशक्त बनाया जा सकता है। उच्च प्राथमिक विद्यालय वह स्तर है जहाँ विद्यार्थी किशोरावस्था की दहलीज पर होते हैं। इस अवस्था में शिक्षक का भावनात्मक संतुलन, सहानुभूति और मानसिक स्वास्थ्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्माण पर गहरा प्रभाव डालता है। यदि शिक्षक मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं होगा तो वह विद्यार्थियों के साथ सकारात्मक संबंध नहीं बना सकेगा। अत: शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य विद्यालय के वातावरण, विद्यार्थियों की उपलब्धि और शिक्षा की गुणवत्ता को सीधो प्रभावित करता है। इस कारण यह अध्ययन केवल शिक्षकों के लिए नहीं, बल्कि संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था के लिए उपयोगी और प्रासंगिक है।

शोध कथन – 'उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव एवं मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

उच्च प्राथमिक विद्यालय – उच्च प्राथमिक विद्यालयों से तात्पर्य ऐसे विद्यालयों से है जहाँ कक्षा एक से आठवीं तक के विद्यार्थियों को अध्ययन करवाया जाता है। यह विद्यालय राजस्थान शिक्षा विभाग से मान्यता प्राप्त होते है। इन विद्यालयों में कार्यरत् शिक्षक जो कक्षा आठवीं तक अध्ययन करवाते है उन्हें तृतीय श्रेणी शिक्षक कहा जाता है। शोध में उच्च प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक से तात्पर्य आठवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों को अध्यापन करवाने वाले शिक्षक से है।

1. **शिक्षकीय ठहराव –** शिक्षकीय ठहराव से तात्पर्य शिक्षकों की उस स्थिति से है जिससे वह अपनी योग्यता का सही उपयोग व मूल्यांकन करने में असक्षम होता है।
2. **मानसिक स्वास्थ्य –** मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य व्यक्ति का वह व्यवहार जो व्यक्तिगत योग्यता व क्षमताओं को जानकर परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित कर कार्य को परिणित करता है। मानसिक स्वास्थ्य ऐसी स्थिति है जहाँ व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, संवेगात्मक विकास की अधिकतम स्थिति को प्राप्त करता है। मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति विभिन्न कठिन परिस्थितियों को सृजनात्मक परिस्थितियों में बदलने में सक्षम होता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के राजस्थान राज्य के अजमेर एवं टोंक जिले के विभिन्न उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् कुल 400 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। अजमेर एवं टोंक जिले के राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् 200 शिक्षकों तथा गैर

राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् 200 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. शिक्षकीय ठहराव मापनी डॉ. हसीन ताज
2. मानसिक स्वास्थय अनुसूची डॉ. जगदीश एवं डॉ. श्रीवास्तव

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

(1) राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :– परिकल्पना संख्या 1 के अंतर्गत यह जांच की गई कि क्या राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव में कोई सार्थक अन्तर पाया जाता है या नहीं। इस उद्देश्य से दोनों प्रकार के विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों से प्राप्त आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया तथा 'टी' मान की गणना की गई। प्राप्त परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि राजकीय एवं गैर–राजकीय शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव के मध्यमान और प्रमाप विचलन में अंतर अत्यंत नगण्य है। गणना से प्राप्त 'टी' मान 0.01 के सारणी मान से कम पाया गया, जिससे यह निष्कर्ष निकला कि यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टि से असार्थक है। अत: इस परिकल्पना को स्वीकार किया गया। इसका तात्पर्य यह है कि विद्यालय के प्रकार चाहे वह राजकीय हो अथवा गैर–राजकीय शिक्षकों के ठहराव स्तर पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

(2) राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अंतर्गत यह जांच की गई कि क्या राजकीय व गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य में कोई सार्थक अन्तर पाया जाता है या नहीं। इस उद्देश्य से दोनों प्रकार के विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों से प्राप्त आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया तथा 'टी' मान की गणना की गई। प्राप्त परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि राजकीय एवं गैर–राजकीय शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमान और प्रमाप विचलन में अंतर अत्यंत नगण्य है। गणना से प्राप्त 'टी' मान 0.01 के सारणी मान से कम पाया गया, जिससे यह निष्कर्ष निकला कि यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टि से असार्थक है। अत: इस परिकल्पना को स्वीकार किया गया। इसका तात्पर्य यह है कि विद्यालय के प्रकार चाहे वह राजकीय हो अथवा गैर–राजकीय शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य स्तर पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

शैक्षिक सुझाव:

1. शिक्षक अपने व्यावसायिक तनावों के कारणों की पहचान कर उन्हें नियंत्रित करने के लिए आत्म–विश्लेषण एवं आत्म–संयम का अभ्यास कर सकते हैं।
2. शिक्षकीय ठहराव को बनाए रखने के लिए शिक्षक सकारात्मक दृष्टिकोण, कार्य के प्रति निष्ठा एवं संगठनात्मक निष्ठा का विकास कर सकते हैं।
3. मानसिक स्वास्थ्य सुधार हेतु योग, ध्यान और परामर्श सत्रों का नियमित अभ्यास कर कार्यस्थल पर मानसिक संतुलन बनाए रखा जा सकता है।
4. यह अध्ययन शिक्षकों को यह समझने में सहायता करता है कि व्यावसायिक तनाव का समाधान उनके दृष्टिकोण और व्यवहारिक कौशल में निहित है।
5. शिक्षकों को आत्म–प्रेरणा और आत्म–स्वीकृति के भाव से कार्य करना चाहिए ताकि उनके शिक्षकीय ठहराव में स्थिरता बनी रहे।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोध में मात्र 400 शिक्षकों का न्यादर्श लिया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।
2. शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव पर मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यक्तित्व के प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है
3. शिक्षकों के नेतृत्व क्षमता एवं प्रबंधकीय अभिरूचि पर शिक्षकीय ठहराव के प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।
4. तकनीकी एवं गैर तकनीकी महाविद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव, मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यावसायिक तनाव का तुलनात्मक लेकर शोध कार्य किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष–40, अंक–10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. कुमारी, एस., जाफरी, एस. (2014) उत्तर प्रदेश बोर्ड के उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य एवं शैक्षिक उपलब्धि, जर्नल ऑफ कम्युनिटी गाईडेन्स एण्ड रिसर्च, 31;2द्ध, 187–199।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) ' शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
6. राजश्री (2013), महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, जीवन संतुष्टि एवं समायोजन पर जीवन मूल्यों के प्रभाव का अध्ययन, दयालबाग एजुकेशलन इंस्टिट्यूट आगरा:
7. शर्मा, सुधा कुमारी (2013). :उच्च माध्यमिक स्तर के कला वर्ग के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवार के वातावरण, मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों व आत्म–विश्वास का अध्ययन', पी.एचडी. स्तर शोध, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, उत्तार प्रदेश।
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), 'शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय', आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव	200	276.51	32.469	0.318	स्वीकृत
गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के शिक्षकीय ठहराव	200	275.39	37.411		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य	200	251.21	19.759	2.484	स्वीकृत
गैर राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य	200	246.35	17.328		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. किरण गिल* मीनू**

* सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के श्री गंगानगर जिले में राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) को सम्मिलित किया गया। मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभावों जानने हेतु मूल्य प्रश्नावली (डॉ. जी. पी. शैरी एवं आर.पी. वर्मा) द्वारा निर्मित एवं मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति मापनी का निर्माण शोधकर्त्री द्वारा स्वयं किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया 'उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर में परस्पर सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी –विद्यार्थी, मूल्य, मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति, सहसम्बन्ध।

प्रस्तावना –शिक्षा मानव जीवन की आधारशिला तथा सामाजिक जीवन का अनिवार्य उपादान है। प्रकृति के आंगन में सूर्य के प्रकाश से जिस प्रकार कमल का पुष्प खिल उठता है ठीक उसी प्रकार शिक्षा रूपी ज्ञान को पाकर मानव प्रकाशवान हो जाता है। कहा भी जाता है कि पौधे का विकास कृषि द्वारा तथा मानव का विकास शिक्षा द्वारा होता है। शिक्षा मनुष्य के आन्तरिक विकास एवं वृद्धि की निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा अंधकार में भटकते हुए राही के लिए प्रकाश पुंज के समान है जो मानव को सत्य–असत्य एवं उचित–अनुचित का ज्ञान कराती है। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य मनुष्य एवं उसके समाज को प्रगतिशील, सांस्कृतिक एवं सभ्य बनाना है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। शिक्षा समाज द्वारा स्थापित विद्यालयों के माध्यम से, समाज की आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए सामाजिक वातावरण में दी जाती है। अत: शिक्षा और समाज को एक–दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। वर्मा एवं यादव ने व्यक्ति और समाज के विषय में कहा है, 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति से ही समाज का और समाज से ही व्यक्ति का अस्तित्व जुड़ा हुआ है।'

बालक समाज में रहकर बड़ा होता है तथा समाज से ही सीखता है। सीखने की इस प्रक्रिया में वह कुछ विचारों को ग्रहण करता है जो उसके आदर्श बनते हैं। ये आदर्श ही मूल्य कहलाते हैं। मूल्य सभी के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और एक विशेष स्थान रखते हैं। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति और समाज का सर्वांगीण तथा सर्वोत्तम विकास सम्भव है परन्तु यह विकास मूल्यों के अभाव में पूर्णत: असार्थक है। मूल्य वे आदर्श तथा मानदण्ड हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं। मूल्य ही व्यक्ति को सभ्य तथा सुसंस्कृत बनाते हैं जिनसे वह सम्पूर्ण समाज, राष्ट्र तथा विश्व का कल्याण करने में समर्थ हो सकता है। व्यक्ति की समस्त क्रियाओं तथा व्यवहार का मूलाधार मूल्य तथा आदर्श ही हैं। मूल्यों के विषय में विचार व्यक्त करते हुए शर्मा, उदयवीर (2015) ने कहा है, 'मूल्य मानव जीवन का अभिन्न अंग हैं। मानव की समस्त क्रियायें उनके मूल्यों का ही प्रतिबिम्ब हैं।' प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह किसी भी धर्म, जाति, संस्कृति, सभ्यता अथवा समुदाय से सम्बद्ध हो, कुछ निश्चित मूल्यों द्वारा निर्देशित होता है। मूल्य व्यक्ति के व्यवहार, सम्बन्धों, दृष्टिकोणों, निर्णयों तथा अभिवृत्तियों को प्रभावित करते हैं। यह कहना सर्वथा उचित है कि मूल्य हमारे विचारों, भावनाओं तथा क्रियाओं को नियंत्रित कर हमें उचित कार्यों की ओर अग्रसर करते हैं।

मूल्य मानव के सह अस्तित्व के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। जब कोई समाज मूल्यविहीन हो जाता है तो भौतिक प्रगति के शिखर पर पहुँच कर भी तुच्छ और दयनीय हो जाता है। अनेक विद्वानों द्वारा मूल्यों के महत्व पर विचार प्रस्तुत किये गये हैं। मीड़ का मत है कि मूल्यों के द्वारा ही समाज के व्यक्तियों तथा संस्कृति का उचित ज्ञान सम्भव होता है। सिंह (2012) ने मूल्यों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि 'मूल्य एक ओर मानवीय व्यवहार और सामाजिक सम्बन्धों को निर्धारित करने तथा सामाजिक संरचना तथा अन्त:क्रिया को नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं तो वहीं दूसरी ओर उन्हें स्थायित्व तथा सम्बद्धता प्रदान करते हैं।' मूल्यों की मानव के व्यक्तित्व के विकास में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्धानों द्वारा किये गये विविध शोधों के परिणामों ने प्रदर्शित किया है कि व्यक्तिगत मूल्य मानव के व्यवहार तथा जीवन व्यतीत करने के तरीकों को प्रभावित करते हैं, यह पाया गया कि मूल्य व्यक्ति के आचरण को निर्देशित करते हैं जो उसके तथा दूसरों के कल्याण को प्रभावित करता है मूल्य व्यक्ति की निर्णय शक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। मूल्य छात्रों की अधिगम शैली एवं शैक्षिक उपलब्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। लुंग, डोंग्यू तथा ल्यू (2014) द्वारा छात्रों के मूल्यों का अध्ययन किया गया

और यह पाया गया कि जिन विद्यार्थियों में उच्च व्यक्तिगत मूल्य थे वे अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों में अधिक श्रेष्ठ थे।

प्रस्तुत शोध का महत्व – मूल्यों में होने वाले परिवर्तन ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यथा–धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक, आर्थिक आदि को प्रभावित किया है। धार्मिक मूल्यों में जहाँ एक ओर कट्टरवादिता दिखाई देती है तो वहीं दूसरी ओर मानव की आस्था बनावटी प्रतीत होती है। अनेक सामाजिक मूल्य जैसे सहयोग, सहानुभूति, परोपकार, सेवा, उदारता, सहिष्णुता आदि पीछे छूट गये हैं। पारिवारिक मूल्यों में जितना परिवर्तन पिछले दो दशकों में हुआ है उतना कभी नहीं हुआ। वर्तमान समय में संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, सम्बन्धों में खुलापन आ गया है तथा सम्बन्धों के प्रति जिम्मेदारी का भाव कम होता जा रहा है। विशेष रूप से वर्तमान पीढ़ी, जिस पर भारत के नवनिर्माण का उत्तरदायित्व है, की प्राथमिकताएं बदलती जा रही हैं। विद्यार्थियों की मूल्य प्राथमिकताओं का अनेक विद्वानों द्वारा अध्ययन किया गया है जिनमें यही परिलक्षित हुआ है कि विद्यार्थियों के मूल्यों में क्रमिक क्षरण हो रहा है।

महास्के (2010) ने उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के व्यक्तिगत मूल्यों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि छात्रों के मूल्य प्रतिमान पर उनके लिंग का सार्थक प्रभाव पड़ता है। साथ ही यह भी परिणाम प्राप्त हुआ कि शहरी तथा ग्रामीण छात्रों के मूल्यों में सार्थक अन्तर होता है। वेलमुरूगन तथा अन्य (2014) ने उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की मूल्य प्राथमिकताओं का अध्ययन कर यह स्पष्ट किया कि विद्यार्थियों द्वारा राजनैतिक मूल्यों को सर्वाधिक उच्च प्राथमिकता दी गयी जबकि सैद्धान्तिक मूल्यों को सबसे निम्न प्राथमिकता दी गयी। भूटिया (2013) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों के धार्मिक, प्रजातान्त्रिक, आर्थिक, शक्ति तथा पारिवारिक प्रतिष्ठा मूल्यों का स्तर उच्च था जबकि इन विद्यार्थियों में सामाजिक, ज्ञान, सुखवादी तथा स्वास्थ्य मूल्यों का स्तर निम्न पाया गया। मूल्य प्राथमिकताओं पर छात्रों की संस्कृति, लिंग तथा क्षेत्र का भी सार्थक प्रभाव पाया गया।

नियोगी तथा चटर्जी (2015) ने अपने शोध पत्र के परिणामों में प्रदर्शित किया कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों में प्रजातान्त्रिक, आर्थिक, सुखवादी तथा पारिवारिक प्रतिष्ठा मूल्यों का स्तर उच्च था। इस शोध पत्र में यह भी निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि विभिन्न पाठ्य क्रियाओं का धार्मिक तथा सामाजिक मूल्यों पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। करीम तथा रहमान (2001) ने अपने अध्ययन में पाया कि विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों में आर्थिक तथा सौन्दर्यात्मक मूल्यों का उच्च स्तर था। शिक्षा प्रणाली मूल्य परिवर्तन को सार्थक रूप से प्रभावित करती है। अपने शोध में इन्होंने पुरूष तथा महिला विद्यार्थियों के सैद्धान्तिक तथा सौन्दर्यात्मक मूल्यों में भी विभिन्नता पायी।

मूल्य प्रतिमानों के चयन में व्यक्ति की आयु, लिंग, जाति, प्रजाति आदि एक निर्णायक भूमिका का निर्वाह करते हैं। व्यवसाय में परिवर्तन के साथ मूल्यों में भी परिवर्तन आता है। सामाजिक मूल्यों पर समयान्तराल का सार्थक प्रभाव पड़ता है और समय परिवर्तन के साथ–साथ मूल्य भी परिवर्तित हो जाते हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि छात्रों की मूल्य प्राथमिकताओं को अनेक सामाजिक, भौगोलिक तथा मनोवैज्ञानिक कारक प्रभावित करते हैं। गहन साहित्य समीक्षा के उपरान्त भी शोधार्थी को ऐसा कोई शोध कार्य प्राप्त नहीं हो सका है जिसमें विद्यार्थियों विशेष रूप से ग्वालियर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया हो। साथ ही किसी भी शोध कार्य में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति के कारण समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन भी नहीं किया गया है। अत: शोधार्थी ने ग्वालियर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं उसका समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने का निश्चय किया।

शोधकर्त्री का विश्वास है कि यह शोध कार्य नीति–निर्माताओं, पाठ्यक्रम निर्माताओं, अध्यापकों, मनोवैज्ञानिकों, मार्गदर्शकों, अध्यापकों, अभिभावकों तथा विद्यार्थियों के लिए हितकारी सिद्ध हो सकेगा। शोधकर्त्री का मत है कि प्रस्तुत शोध से प्राप्त परिणाम विद्यार्थियों के मूल्यों का विकास करने में सहायक हो सकेंगे तथा उनमें हो रहे नकारात्मक परिवर्तनों को रोकने में सहायता करने में सक्षम हो सकेंगे। शोधकर्त्री का मानना है कि प्राप्त परिणामों से मूल्यों के कारण समाज में होने वाले परिवर्तनों को जाना जा सकता है तथा समाज को उचित तथा कल्याणकारी दिशा की ओर अग्रसर किया जा सकता है।

समस्या कथन – 'उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

विद्यार्थी – यहां विद्यार्थी से तात्पर्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर से सम्बन्धित राजकीय तथा गैर राजकीय सीनियर सैकण्डरी विद्यालयों की 9, 10, 11 व 12 कक्षाओं में अध्ययन करने वाले छात्र एवं छात्राओं से है।

मूल्य – मूल्य मनुष्य के लिए एक मानदण्ड की तरह कार्य करते हैं। मूल्य वह इच्छित प्रत' है जिसमें व्यक्ति रूचि लेता है। जब व्यक्ति अपने सम्मुख दो या दो से अधिक समान रूप से आकर्षक साधनों एवं व्यवसायों में से किसी एक का चयन करना चाहता है तो उस समय उसकी विभिन्न मूल्यों की धारणा ही उसके मानसिक द्वन्द्व को समाप्त कर देती है। किसी समाज के वे विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड जिन्हें समाज के व्यक्ति महत्व देते हैं और जिनसे उनका व्यवहार निर्देशित एवं नियंत्रित होता है, उस समाज एवं उसके व्यक्तियों के मूल्य होते हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव का अध्ययन करना।
2. राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव का अध्ययन करना।
3. गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
2. राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
3. गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक

सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में श्री गंगानगर जिले के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (छात्र–छात्राओं) को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :–

1. मूल्य प्रश्नावली (डॉ. जी. पी. शैरी एवं आर.पी. वर्मा)
2. मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति मापनी (स्वनिर्मित)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.047 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

(2) राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.092 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

(3) गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव मे कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 3 के अनुसार गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.054 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति एवं समाज पर प्रभाव में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शैक्षिक सुझाव– विद्यार्थियों में मूल्यों के सम्वर्धन के लिए अध्यापकों को विभिन्न मूल्यों से सम्बन्धित कहानियों, कविताओं तथा प्रेरक प्रसंगों का अपने शिक्षण में प्रयोग करना चाहिए। शिक्षकों को स्वयं कक्षा में प्रजातान्त्रिक मूल्यों का पालन करना चाहिए, धार्मिक संकीर्णता से दूर रहना चाहिए तथा बदलते हुए समाज के बदलते हुए मूल्यों को हृदय से स्वीकार करने के लिए तत्पर रहना चाहिए। केवल तभी शिक्षक विद्यार्थियों में धार्मिक, सामाजिक, प्रजातान्त्रिक आदि अनेक मूल्यों का उचित विकास कर सकेंगे। शिक्षकों के द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए तथा सौन्दर्यात्मक, आर्थिक, सुखवादी तथा शक्ति मूल्य के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. न्यादर्श के लिए बड़े न्यादर्श का चयन किया जा सकता है इसके लिए विद्यालयों तथा विद्यार्थियों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।
2. प्रस्तुत अध्ययन को अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति एवं सामान्य जाति के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव विषय पर विस्तृत प्रतिदर्श लेकर शोध कार्य किया जा सकता है।
3. अग्रेंजी एवं हिन्दी माध्यम के विद्यालयों, केन्द्रीय एवं आवासीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्यों के प्रति परिवर्तित अभिवृति का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव पर अनुसंधान सम्पादित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य बी.एल. (2000): ' शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष–40, अंक–10, अप्रैल।
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. गौतम, रेनु, (2006) माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध–प्रबन्ध, शिक्षाशास्त्र, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
6. मिश्रा, सुनीता (2006) 'हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के मूल्य, व्यक्तित्व तथा समायोजन का प्रतिबल पर प्रभाव का अध्ययन', शोध प्रबन्ध, मनोविज्ञान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी।
7. यादव, कमला सिंह (2004) माध्यमिक स्तर के अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम के विज्ञान एवं कला वर्ग छात्रों में मूल्य अभिमुखता एवं मूल्य अन्तर्द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन, शोध प्रबन्ध, शिक्षाशास्त्र, वीर

बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
8. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट।
9. शर्मा, शोभा (2014) कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों के संगठनात्मक पर्यावरण तथा उसमें अध्ययनरत छात्राओं के व्यक्तित्व, शैक्षिक सम्प्राप्ति और वैयक्तिक मूल्यों का अध्ययन, शोध प्रबन्ध, शिक्षा शास्त्र, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ।
10. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्य के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति	600	29.06	9.491	0.047	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का समाज पर प्रभाव	600	26.86	7.438		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्य के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति	300	29.42	9.987	0.092	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का समाज पर प्रभाव	300	26.71	6.058		

सारणी संख्या – 3

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्य के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति	300	28.72	9.491	0.054	स्वीकृत
गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का समाज पर प्रभाव	300	27.02	7.438		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति एवं जागरूकता का अध्ययन

डॉ. रेखा सोनी* ओम प्रकाश ढाका**

* प्रोफेसर (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी (शिक्षा संकाय) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है कि 'प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति एवं जागरूकता का अध्ययन करना है तथा शोधकर्ता द्वारा अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुये बालश्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति व जागरूकता का मापनी का प्रयोग करते हुये दत्त संकलन किये हैं। निष्कर्ष रूप में पाया गया है कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष अध्यापकों के बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

शब्द कुंजी – प्राथमिक, उच्च प्राथमिक विद्यालय, बाल श्रम कानून व अभिवृत्ति एवं जागरूकता।

प्रस्तावना – आज के बच्चे आने वाले समय के नागरिक हैं। देश, समाज व वैष्विक स्तर पर खुषहाली, समृद्धि, आपसी प्रेम आदि के लिए बच्चों की परवरिष ऐसे परिवेष में की जाए जहाँ वे अपने बचपन की क्रियाओं आदि के द्वारा अपने परिवार, सम्बन्धियों को आनन्दित करने के साथ साथ मौलिक सोच, स्वतंत्र विचारधारा, मानव मूल्य तथा बन्धुत्व से परिपूर्ण हो। क्योंकि बच्चा अपने जन्म के साथ सर्वप्रथम माता-पिता व अपने परिवार से जुड़ता है और उन्हीं पारिवारिक मूल्यों को अपने में समाहित करता है जिनको वह अपनी सीमित ज्ञानेन्द्रियों के भाव से सीखता है। इसी कारण माता-पिता व परिवार उसकी प्रथम पाठषाला के साथ साथ बच्चे के आदर्श भी होते हैं। कहा भी गया है –

मातृपितृ कृताभ्यासों गुणितामेति बालकः।
न गर्भच्युतिमात्रेण पुत्रों भवति पण्डितः।।

बाल श्रम का प्रारम्भ औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप नये उद्योगों की स्थापना से ही माना जाता है। पूँजीवादी वर्ग न लाभ बढ़ाने के उद्देश्य से मजदूरों के बच्चों को भी अपने कल-कारखानों में मजदूरी पर रखना प्रारम्भ कर दिया गया। इस प्रकार बाल श्रमिकों से नियोजकों को काफी लाभ प्राप्त होने लगा, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न कल कारखानों के मालिकों ने अपने यहाँ बाल श्रमिकों को प्राथमिकता देना प्रारम्भ कर दिया और तभी से बाल श्रम चलता आ रहा है। दशोरा (2006) के अनुसार सेवा योजक अपने स्वार्थ की पूर्ति करने हेतु बच्चों का शोषण करने में संकोच भी नहीं करते और उनके स्वास्थ्य तथा व्यक्तित्व के प्रति सजग भी नहीं रहते।

शोध अध्ययन का महत्व – बाल श्रम करने की शुरूआत प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा के समय से ही होती है। अतः इस प्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए आवश्यक है कि अध्यापकों को बाल श्रम कानूनों का ज्ञान हो एवं इस दिशा में सहयोग करने के लिये अध्यापकों की सकारात्मक अभिवृत्ति हो। क्योंकि बाल श्रमिकों के लिये बाल श्रम कानून और आल श्रम नीति बनाई गई है। क्या हम इन कानून और नीतियों का पालन कर रहे हैं? क्या ये बच्चे शिक्षा का अधिकार प्राप्त कर रहे हैं?

विभिन्न शोध साहित्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह विषय आज के परिप्रेक्ष्य में प्रांसगिक है तथा इस विषय पर बहुत कम शोध हुआ है।

अतः आज आवश्यकता है ऐसे शोध की जो वर्तमान परिस्थितियों व नीतियों को ध्यान में रखकर किया जाये। अतः वर्तमान की नीतियों को ध्यान में रखकर इस विषय का चयन किया गया है।

समस्या कथन – 'प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति एवं जागरूकता का अध्ययन'

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति का ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर अध्ययन करना।
2. प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति जागरूकता का ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :

1. प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति में ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर अध्ययन पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति जागरूकता में ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अनुसंधान प्रविधि – किसी भी शोध को व्यवस्थित, तार्किक और त्रुटिरहित बनाने के लिये आवश्यक है कि एक निश्चित पद्धति का प्रयोग किया जाये। प्रस्तुत शोध की प्रकृति वर्णनात्मक शोध की है, जिसके अन्तर्गत शोध की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

सीमांकन – प्रस्तुत शोधकार्य को राजस्थान राज्य के सीकर जिले तक

सीमित किया गया है।

शोध अध्ययन का न्यादर्श – न्यादर्श के रूप में शोधकर्त्ता द्वारा सीकर जिले के प्राथमिक व उच्च प्राथमिक विद्यालयों के कुल 600 अध्यापकों का चयन किया गया है।

शोध उपकरण – प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता द्वारा स्वंय निर्मित मापनी का प्रयोग किया जायेगा। जो अध्यापकों की बालश्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति व जागरूकता का मापन किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यमान मानक विचलन, टी–परीक्षण तथा एफ–परीक्षण आदि सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

निष्कर्ष

परिकल्पना संख्या–1 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति में ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर अध्ययन पर कोई सार्थक अंतर नहीं है। पूर्व निर्धारित शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर ज्ञात होता है कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति समान पायी गई। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष अध्यापकों के बाल श्रम कानून के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

परिकल्पना संख्या–2 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति जागरूकता में ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है। पूर्व निर्धारित शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर ज्ञात होता है कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति जागरूकता समान रूप से पायी गई है। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष अध्यापकों की बाल श्रम कानून के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

भावी शोध के हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में जनसंख्या के लिए राजस्थान राज्य के सीकर जिले का चयन किया गया है। भविष्य में शोध अध्ययन के लिए अन्य भौगोलिक क्षेत्र का चयन किया जा सकता है।
2. आगामी शोध में राजस्थान के राज्यों के जवाहर नवोदय विद्यालय, राजकीय विद्यालय एवं अन्य शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालयों के अध्यापकों पर शोध कार्य किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. घोष, ए. एवं सीकर एच.ओ. (2000) – चाइल्ड लेबर इन मुराबादाबाद होम बेस्ट इण्डस्ट्रीज इन दि लेक ऑफ लेजिसलेशन, भारतीय आधुनिक शिक्षा, नई दिल्ली।
2. भारत सरकार (2001) – किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम संख्या 56, अध्याय 1, पृ.सं. 1–21
3. सीकर, एच. (2001) – मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, दिल्ली मोतीलाल।
4. एम.सी. मेहता विरूद्ध तमिलनाडू राज्य ए.आई.आर. (1997) – एस.सी. 699 – बालकों को खतरनाक कामों से मुक्त करने व शिक्षा प्रदान करने हेतु निर्देष।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. किरण गिल* प्रमिला कुमारी**

* सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर भारतीय शिक्षा–जगत में एक ऐसे दार्शनिक, चिंतक और प्रयोगधर्मी शिक्षाविद् के रूप में प्रसिद्ध हैं, जिन्होंने शिक्षा को मात्र परीक्षा–उन्मुख ज्ञानार्जन की प्रक्रिया न मानकर मनुष्यत्व के विकास का माध्यम माना। उनका शैक्षिक दर्शन प्रकृति, स्वतंत्रता, मानवतावाद, रचनात्मकता और सार्वभौमिकता के सिद्धांतों पर आधारित था। वर्तमान काल में जब शिक्षा प्रतिस्पर्धा, व्यवसायीकरण और तकनीकी केन्द्रितता से घिरती जा रही है, तब टैगोर के विचार न केवल प्रासंगिक दिखाई देते हैं, बल्कि भारतीय शिक्षा के नव–निर्माण के लिए दिशासूचक सिद्ध हो रहे हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में टैगोर के शैक्षिक दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन करते हुए यह विश्लेषित किया गया है कि आधुनिक परिस्थितियों में उनके सिद्धांत किस प्रकार शिक्षा की गुणवत्ता, विद्यार्थी व्यक्तित्व–विकास, भावात्मक परिपक्वता, सृजनशीलता और नैतिकता को मजबूत करने में उपयोगी हो सकते हैं। अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि टैगोर का शैक्षिक दर्शन आज भी शिक्षा–व्यवस्था के मानवीय, भावनात्मक, सांस्कृतिक एवं नैतिक पुनर्निर्माण की दिशा प्रदान करता है।

शब्द कुंजी – गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर, शैक्षिक दर्शन, समालोचनात्मक अध्ययन।

प्रस्तावना – भारतीय समाज और शिक्षा का इतिहास अनेक महापुरुषों के विचारों से निर्मित हुआ है, जिनमें गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का योगदान अद्वितीय है। वे केवल साहित्यकार, कवि, नाटककार या कलाकार ही नहीं थे, बल्कि एक गहन शिक्षाशास्त्री भी थे। उन्होंने शिक्षा को आत्म–विकास, प्रकृति के साथ तालमेल, कला–संवर्धन और मानवीय मूल्यों के संवर्धन का सर्वोत्तम साधन माना। उनके शिक्षा–दर्शन का प्रयोगात्मक रूप 'शांतिनिकेतन' और 'विश्वभारती' के रूप में विकसित हुआ, जिसने शिक्षा को बंद कमरों और कठोर पाठ्यक्रमों से मुक्त कर प्राकृतिक परिवेश, स्वतंत्र चिंतन और रचनात्मक गतिविधियों से जोड़ने का प्रयास किया। आज के यांत्रिक, परीक्षा–केन्द्रित एवं बाजार संचालित शिक्षा–तंत्र में टैगोर का मानवतावादी दृष्टिकोण नई ऊर्जा प्रदान करता है।

वर्तमान शोध–पत्र का उद्देश्य टैगोर के शैक्षिक दर्शन के प्रमुख तत्त्वों का विश्लेषण कर उन्हें आधुनिक शिक्षा के संदर्भ में परखना है। विशेष रूप से यह देखा गया है कि उनकी अवधारणाएँ नई शिक्षा नीति, बाल–केंद्रित अधिगम, कला–आधारित शिक्षा, भावात्मक विकास, पर्यावरणीय चेतना, विश्व–बंधुत्व तथा बहुसांस्कृतिक शिक्षा की आवश्यकताओं के साथ किस प्रकार सामंजस्य स्थापित करती हैं।

शोध का महत्व एवं औचित्य – इस अध्ययन का महत्व इस तथ्य में निहित है कि आज शिक्षा बहुआयामी परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। तकनीकी प्रगति, वैश्वीकरण, डिजिटल संसाधनों का विस्तार, प्रतिस्पर्धा की तीव्रता और बाजारवाद ने शिक्षा के उद्देश्यों और दिशा दोनों को प्रभावित किया है। ऐसे समय में टैगोर के शैक्षिक सिद्धांतों का पुनर्मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। उनके विचार विद्यार्थियों में संवेदनशीलता, मानवता, लोकतांत्रिक मूल्य, प्रकृति–प्रेम और सृजनशीलता को विकसित करने पर बल देते हैं, जिनकी आज के तनावग्रस्त और भौतिकवादी वातावरण में अत्यधिक आवश्यकता है।

टैगोर का मत था कि शिक्षा मनुष्य को बौद्धिक रूप से ही नहीं, बल्कि भावनात्मक, मानसिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी समृद्ध करे। यह दृष्टिकोण आधुनिक शिक्षा के समग्र विकास मॉडल से पूरी तरह मेल खाता है। इसके अतिरिक्त, भारत में नई शिक्षा नीति (NEP–2020) में भी अनुभवात्मक अधिगम, बहुविषयकता, कला–एकीकरण और स्थानीयता पर जोर दिया गया है, जो टैगोर के विचारों की समकालीन पुष्टि करता है।

इस शोध का औचित्य इसलिए भी है कि वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों, सामाजिक उत्तरदायित्व, मानवीय दृष्टिकोण और सौंदर्य–बोधा की कमी महसूस की जा रही है। टैगोर का शैक्षिक दर्शन इन सभी आयामों को अत्यंत संतुलित रूप से समाहित करता है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य:

1 स्वतन्त्र भारत की शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन करना।
2 वर्तमान की शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त विसंगतियों का अध्ययन करना।
3 वर्तमान की शिक्षा व्यवस्था व्याप्त विसंगतियों के निवारण हेतु सरकार द्धारा किये जा रहे प्रयासों का अध्ययन करना।
4 वर्तमान व्यवस्था में आने वाली सम्भावित चुनौतियों के सम्बन्ध में अध्ययन करना।
5 राष्ट्र के शैक्षिक उत्थान में टैगोर के विचारों का निर्धारण करना।
6 वर्तमान में शिक्षा की सम्भावित चुनौतियों के समाधान हेतु रवीन्द्रनाथ

टैगोर के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षक, शिक्षार्थी, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम, अनुशासन, विद्यालय आदि की उपादेयता का समालोचनात्मक अध्ययन।

7 वर्तमान में शिक्षा व्यवस्था में आने वाली सम्पूर्ण चुनौतियों के समाधान में टैगोर के शैक्षिक विचारों की उपादेयता का समालोचनात्मक अध्ययन करना।

रवीन्द्रनाथ टैगोर की शिक्षा में योगदान– टैगोर का शिक्षा–क्षेत्र में योगदान विशिष्ट और व्यापक है। उन्होंने जीवन भर शिक्षा के वास्तविक स्वरूप पर चिंतन किया और अंततः शांतिनिकेतन को अपने विचारों की प्रयोगशाला के रूप में स्थापित किया। उनका प्रथम योगदान यह था कि उन्होंने शिक्षा को स्वाभाविक, आनंददायी और प्रकृति के निकट लाने का प्रयास किया। वे शिक्षा को बच्चे के मन की स्वतंत्रता, उसकी जिज्ञासा और रचनात्मकता के अनुरूप ढालना चाहते थे।

1. महत्वपूर्ण योगदान यह था कि उन्होंने कला, संगीत, नृत्य, साहित्य और नाटक को शिक्षा का अनिवार्य अंग माना। उनका विश्वास था कि कला मनुष्य की संवेदनाओं को विकसित करती है, जीवन में सौंदर्य–बोधा लाती है और आत्म–अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है।
2. योगदान शिक्षा को वैश्विक दृष्टि प्रदान करना था। उन्होंने विश्वभारती की स्थापना करते समय 'यत्र विश्वम् भवत्येकनीडॕ' की भावना को प्रमुख रखा। उनके अनुसार शिक्षा में सीमाएँ नहीं होनी चाहिए; मनुष्य को विश्वमानव के रूप में विकसित किया जाना चाहिए।
3. योगदान शिक्षकद्विद्यार्थी के संबंधें को मानवीयता एवं स्नेह पर आधारित करना था। वे शिक्षक को ज्ञान–प्रदाता नहीं, बल्कि मार्गदर्शक, प्रेरक और सहयोगी मानते थे।

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा–दर्शन– मूल अवधारणाएँ:

1. **प्रकृति–आधारित शिक्षा –** टैगोर का विश्वास था कि प्रकृति सर्वोत्तम विद्यालय है। खुला वातावरण, वृक्षों की छाया, पक्षियों का संगीत, और प्राकृतिक सौंदर्य बच्चों के मन में जीवन, सौंदर्य और रचनात्मकता का संचार करता है। उनका मानना था कि कंक्रीट के बंद कमरों में बच्चे का विकास सीमित हो जाता है।

2. **स्वतंत्रता का सिद्धांत –** उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य बच्चे की स्वतंत्र अभिव्यक्ति, विचारों की स्वायत्तता और आत्मनिर्णय की क्षमता विकसित करना होना चाहिए। दंड, भय और अनुशासन का दमनकारी रूप शिक्षा के लिए अवांछनीय माना गया।

3. **मानवतावाद –** टैगोर मनुष्य को उसकी संपूर्ण संभावनाओं सहित विकसित करना चाहते थे। वे जाति, धर्म, भाषा और राष्ट्र की सीमाओं से ऊपर उठकर मानवीयता को सर्वोच्च मूल्य मानते थे। शिक्षा को उन्होंने मानवता की सेवा का माध्यम बताया।

4. **रचनात्मकता और कला–शिक्षा –** उनका विश्वास था कि कला मनुष्य की संवेदनाओं को विकसित करती है। इसलिए शिक्षण प्रक्रिया में कविता, नाटक, संगीत, चित्रकला और हस्तकला का विशेष स्थान होना चाहिए। उन्होंने कला को शिक्षा का अनिवार्य घटक माना।

5. **आत्म–विकास और आध्यात्मिकता –** टैगोर के अनुसार शिक्षा मनुष्य को बाहर नहीं, भीतर से समृद्ध करती है। आत्म–जागरूकता, आत्म–नियंत्रण और आत्म–निर्माण उनके दर्शन की आधारशिला है।

6. **अनुभव–आधारित शिक्षा –** वास्तविक ज्ञान वही है जो अनुभवों से विकसित होता है। सीखना केवल पुस्तकों में सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि वास्तविक जीवन की परिस्थितियों, गतिविधियों और प्रयोगों से होना चाहिए।

टैगोर के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समालोचनात्मक अध्ययन – वर्तमान समय में शिक्षा–तंत्र अनेक चुनौतियों से घिरा है– प्रतिस्पर्धा, आर्थिक दबाव, तकनीकी निर्भरता, नैतिक पतन, तनाव, रोजगार की अनिश्चितता और संवेदनशीलता का ह्रास। ऐसे वातावरण में टैगोर का दर्शन एक वैकल्पिक, मानवतावादी और समतामूलक शिक्षा मॉडल प्रस्तुत करता है। आधुनिक संदर्भ में इसका समालोचन निम्न रूप में किया जा सकता है–

1. **वर्तमान शिक्षा में रचनात्मकता का अभाव –** टैगोर रचनात्मकता को शिक्षा का केंद्र मानते थे, परंतु आज की शिक्षा परीक्षा और अंक आधारित हो गई है। कला–शिक्षा, खेल, संगीत और सृजनात्मक गतिविधियाँ धीरे–धीरे गौण होती जा रही हैं, जबकि टैगोर की दृष्टि में ये मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास के लिए अनिवार्य हैं।

2. **डिजिटल युग में प्रकृति–आधारित शिक्षा की प्रासंगिकता –** टैगोर के प्रकृति–प्रेम की आज पहले से अधिक आवश्यकता है। मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने बच्चों को प्रकृति से दूर कर दिया है। पर्यावरणीय संकट और मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में उनकी अवधारणाएँ अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होती हैं।

3. **वैश्विक नागरिकता की अवधारणा –** वैश्वीकरण के इस युग में टैगोर की 'विश्व–बंधुत्व' की शिक्षा अत्यंत आवश्यक है। सांप्रदायिकता, हिंसा, कट्टरता और भेदभाव को समाप्त करने हेतु उनका दर्शन विश्व–नागरिक का निर्माण करता है।

4. **शिक्षक–विद्यार्थी संबंध –** आज शिक्षा में व्यावसायिकता बढ़ने से शिक्षक और विद्यार्थी के बीच आत्मीयता कम हो रही है। टैगोर का संबंध–केन्द्रित दृष्टिकोण इस दूरी को कम करने में सहायक हो सकता है।

5. **शिक्षा का अत्यधिक तकनीकीकरण –** हालाँकि तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है, परंतु केवल मशीनों और डिवाइसों पर आधारित शिक्षा मानवीय तत्वों को कमजोर कर देती है। टैगोर का दृष्टिकोण तकनीक और मानवीय मूल्यों के बीच संतुलन स्थापित करता है।

6. **आलोचनात्मक दृष्टि –** यद्यपि टैगोर के सिद्धांत आज भी महत्वपूर्ण हैं, परंतु आधुनिक जटिलताओं को देखते हुए उनके मॉडल को समकालीन तकनीक, बहुविषयकता और वैश्विक प्रतिस्पर्धा की जरूरतों के साथ अनुकूलित करना होगा। शांतिनिकेतन का सम्पूर्ण मॉडल आज की परिस्थितियों में ज्यों का त्यों लागू करना संभव नहीं है, परंतु उसका सार आज भी उपयोगी है।

निष्कर्ष – अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा–दर्शन आधुनिक शिक्षा के लिए अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी है। उनका उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि भावनात्मक, सांस्कृतिक, नैतिक और प्राणात्मक विकास था। आज के तनावग्रस्त, प्रतिस्पर्धी और भौतिकवादी वातावरण में टैगोर का मानवतावादी शैक्षिक दृष्टिकोण शिक्षा को नई दिशा प्रदान करता है। वे शिक्षा को स्वतंत्रता, प्रकृति–सान्निध्य, रचनात्मकता, कला, मानवता और विश्व–बंधुत्व से जोड़ते हैं। इससे न केवल ज्ञान का विकास होता है, बल्कि जीवन में सामंजस्य, सौंदर्य–बोध और नैतिकता भी विकसित होती है। उनके विचार आधुनिक शिक्षा नीति के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि शिक्षा के मानवीय,

सौंदर्यपरक, नैतिक और सृजनात्मक पुनर्निर्माण के लिए टैगोर का दर्शन आज भी अनिवार्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर शिक्षा पर निबंध।
2. शांतिनिकेतन इतिहास और दर्शन।
3. भारतीय शिक्षा के महान चिन्तक विभिन्न लेखकों द्धारा।
4. नई शिक्षा नीति 2020 विश्लेषणात्मक अध्ययन।
5. भारतीय शिक्षाशास्त्र परम्परा और आधुनिकता।
6. टैगोर के विचार और शिक्षा : शोध एवं समीक्षा ग्रन्थ।
7. आधुनिक शिक्षा दर्शन- विभिन्न शिक्षाविदों के संग्रह।
8. गीतांजलि अँग्रेजी संस्करण
9. टैगोर रवीन्द्रनाथ, द मैक एण्ड हिज पोयट्री, वसंत कुमार राय, डोड मीड एंड कं. न्यूयार्क पृष्ठ सं. 213
10. टैगोर्स वर्क्स विश्वभारती संस्करण, खण्ड-4
11. टैगोर्स वर्क्स विश्वभारती संस्करण, खण्ड-13

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मनु एवं कौटिल्य के राजनीतिक चिन्तन में धर्म व धर्मनिरपेक्षता का समावेश : एक अध्ययन

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा*   पीरा राम**

* सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश –प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है कि आज भू–मण्डलीकरण के दौर में परस्परावलम्बन के युग में धर्मनिरपेक्षता वांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है। भारत के राजनीतिक चिन्तन में प्राचीन समय में मनु एवं कौटिल्य के काल में धर्म का जो स्वरूप रहा है केवल उस धर्म का ज्ञान प्राप्त करना ही मेरे इस शोध का उद्देश्य नहीं है, अपितु धर्म की उस अवधारणा के आधार पर वर्तमान की राजनीतिक एकीकरण की एक प्रमुख समस्या साम्प्रदायिकता को हल करने में हमें कहाँ तक सफलता मिल सकती है, ये ज्ञान प्राप्त करना है।
शब्द कुंजी – राजनीतिक चिन्तन, धर्म, धर्मनिरपेक्षता।

प्रस्तावना – भारतीय परम्परा में जीवन दर्शन और तदनुरूप व्यवस्था पायी जाती है, जिसमें सामाजिक एवं राजव्यवस्था के स्वरूप का विवेचन पाया जाता है। इस परम्परा के अन्तर्गत वेद, संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद, ग्रन्थ व स्मृतियों से चली आई परम्परा है। चार्वाक दर्शन के अतिरिक्त अन्य सभी भारतीय दर्शनों की मान्यता है कि –'अखिल ब्रह्माण्ड' के पीछे कोई उद्देश्य निहित है। यह ब्रह्माण्ड अपूर्णता से पूर्णता की ओर बढ़ रहा है। जीवन की निम्न अभिव्यक्तियों की तुलना में मानव जीवन श्रेष्ठ है और मानव जीवन का ब्रह्म से तादात्म्य ही इस सृष्टि का उद्देश्य है। सकल ब्रह्माण्ड की एकरूपता के पीछे धर्म की शक्ति है।

प्राचीन काल में धर्म संबंधी धारणा बड़ी व्यापक थी और वह मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को स्पर्श करती थी। धर्मशास्त्रकारों के मतानुसार 'धर्म' किसी सम्प्रदाय या मत का द्योतक नहीं है, प्रत्युत यह जीवन का एक ढंग या आचरण संहिता है, जो समाज के किसी अंग एवं व्यक्ति के रूप में मनुष्य के कर्मों एवं कृत्यों को व्यवस्थित करता है तथा उसमें क्रमश: विकास लाता हुआ उसे मानवीय अस्तित्व के लक्ष्य तक पहुँचने के योग्य बनाता है। धर्म 'धृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ है – धारण करना अर्थात् जो तत्व सारे संसार के जीवन को धारण करता हो, जिसके बिना लोक स्थिति संभव न हो, जिससे सब संयमित, सुव्यवस्थित एवं सुसंचालित रहे, उसे 'धर्म' कहते हैं।

शोध अध्ययन का महत्व – आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता के विस्तार ने धर्म के दायरे को बहुत संकीर्ण कर दिया है। आजादी के बाद भारत में राज्य के दायरे धर्मनिरपेक्ष स्वरूप को अपनाया जो पश्चिमी अवधारणा से भिन्न है। शोध का महत्व इस तथ्य में निहित है कि प्राचीन काल से ही भारतीय चिन्तन में राजनीति और धर्म की अन्त:क्रिया का महत्वपूर्ण स्थान था। धर्म किसी संकीर्ण संप्रदाय का पर्याय न होकर राज्य के दायित्वों का प्रतीक था। यद्यपि इन दायित्वों के निर्धारण का स्रोत तात्कालीन धर्मशास्त्र तथा परम्पराए थी, लेकिन ये दायित्व राज्य पर प्रभावी नियंत्रण का काम करते थे। वर्तमान में साम्प्रदायिक चुनौती का सामना करने तथा राजनीति को नैतिकता और मूल्य आधारित दिशा देने में यह शोध एक अकादमिक प्रयास है।

समस्या कथन – 'मनु एवं कौटिल्य के राजनीतिक चिन्तन में धर्म व धर्मनिरपेक्षता का समावेश : एक अध्ययन'

अनुसंधान प्रविधि – प्रस्तुत शोध में समाज विज्ञानों में प्रयुक्त वैज्ञानिक शोध पद्धति को अपनाया गया है, जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम भारतीय राजनीतिक चिन्तन में धर्म की और धर्मनिरपेक्षता की परम्परा विषय का चयन कर मनुस्मृति एवं अर्थशास्त्र में एवं प्रत्येक काल में धर्म और धर्मनिरपेक्षता की परम्परा, उसके राजनीति पर प्रभाव, धर्म की अवधारणा एवं धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप आदि का व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध अध्ययन करने का प्रयास किया है।

सीमांकन – प्रस्तुत शोधकार्य को भारत के राजस्थान राज्य के विभिन्न जिलों तक सीमित रखा गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – भारतीय राजनीतिक चिन्तन में धर्म एवं दण्डनीति के व्यापक महत्व को समझना ही प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है। सर्वपल्ली डॉ0 राधाकृष्णन भारत को धर्मो की प्रयोगशाला मानते हैं, जहाँ प्राय: सभी धर्म गुलदस्ते में रखे हुए फूलों के समान हैं, जो अपनी–अपनी खुशबू चारों ओर बिखेर रहे हैं। सभी सह अस्तित्व के दर्शन के आधार पर अपना विकास कर रहे हैं। मोटे तौर पर भारतीय संदर्भ में धर्म निरपेक्षता का अभिप्राय सर्वधर्म समभाव की नीति से है। सभी धर्मावलम्बियों की भावनाओं के हितों का संरक्षण एवं पोषण ही सच्ची धर्मनिरपेक्षता है। धर्मनिरपेक्षता के इसी दृष्टिकोण को समझाना शोध का उद्देश्य है कि आज भू–मण्डलीकरण के दौर में परस्परावलम्बन के युग में धर्मनिरपेक्षता वांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है। भारत के राजनीतिक चिन्तन में प्राचीन समय में मनु एवं कौटिल्य के काल में धर्म का जो स्वरूप रहा है केवल उस धर्म का ज्ञान प्राप्त करना ही मेरे इस शोध का उद्देश्य नहीं है, अपितु धर्म की उस अवधारणा के आधार पर वर्तमान की राजनीतिक एकीकरण की एक प्रमुख समस्या साम्प्रदायिकता को हल करने में हमें कहाँ तक सफलता मिल सकती है, ये

ज्ञान प्राप्त करना, इस शोध का उद्देश्य है।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: अपने समग्र रूप में धर्म एक ऐसा विचार है, जो वर्तमान पीढ़ी को दाय से जोड़ता है। व्यवस्था को नैतिक आचरण, मर्यादा से बाँधता है। राजनीतिक, सामाजिक, आचार और मर्यादा का निर्धारण करता है। भौतिक जीवन और अध्यात्म के सम्बंध को जोड़ता है तथा सर्वथा लौकिक संदर्भ में भी धर्म का विचार उतना ही प्रासंगिक है जितना आध्यात्मिक और पारलौकिक प्रसंगों में।

धर्म एक गतिशील विचार है जिसकी परिस्थितिगत व्याख्या देश और काल के अनुरूप भिन्न-भिन्न हो सकती है, किन्तु मर्यादा निर्वाह के सार-तत्व के रूप में यह विचार सार्वकालिक है। पारम्परिक चिन्तन में धर्म की कतिपय व्याख्याऐं, आचार के कतिपय नियम व्यवहार की कतिपय सीमाऐं सम्भवत: आज प्रासंगिक न हों, किन्तु यह निर्विवाद है कि प्रत्येक युग का एक धर्म होता है। यहाँ तक कि आपत्तिकाल का भी एक धर्म होता है। धर्म के चरण कालगणना के अनुसार अधिक अथवा कम हो सकते हैं, किन्तु उसकी प्रासंगिकता फिर भी बनी रहती है। पारम्परिक भारतीय चिन्तन की यह विरासत आज भी राजनीतिक विचारों के अध्येताओं के लिए न केवल चिन्तन और मनन अपितु शोध का विषय है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मनुस्मृति अध्याय 7, श्लोक संख्या 99, पृ. 165
2. ठाकुर लक्ष्मीदत्त प्रमुख स्मृतियों का अध्ययन, हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, 1965, पृ. 219-20
3. महाभारतम् परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती (अनु.) गोविन्दराम हासानंद दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1987 शान्ति पर्व एकत्रिंषोऽध्याय:, श्लोक संख्या 7, पृ. 1025
4. कल्याण 'धार्मिक' गीता प्रेस गोरखपुर, जनवरी, 1966 पृ. 143-144 ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 2011
5. शरण, आर. प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन का स्वरूप, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2008 पृ. 3-4

****

संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक प्रोत्साहन एवं व्यक्तित्व गुणों के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. अनिल कुमार* प्रदीप**

* प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक प्रोत्साहन एवं व्यक्तित्व गुणों के प्रभाव का अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुये दत्त संकलन का कार्य किया है तथा निष्कर्ष के रूप में पाया कि संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया।

शब्द कुंजी –संयुक्त परिवार, एकल परिवार व शैक्षिक उपलब्धि।

प्रस्तावना – प्रत्येक व्यक्ति इस व्यापक संसार में एक नवजात शिशु के रूप में आता है। उस समय वह अपनी प्रवृत्तियों आदतों व्यवहारों रीति रिवाजों संस्कृति सभ्यता आदर्शो एंव मूल्यों से बिल्कुल अनभिज्ञ रहता है। इस समय उन्हें किसी बात की जिज्ञासा भी नही रहती हैं किन्तु जैसे जैसे वह बड़ा होता है वैसे वैसे उस पर औपचारिक और अनौपचारिक साधनों का प्रभाव पडता है। जिसके द्वारा वह अपनी चीजों की जानकारी प्राप्त करता है और उसमें शोधन तथा परिमार्जन करके उससे उच्च अवस्था को प्राप्त करता है।

शिक्षा मानव जीवन के परिष्कार एंव विकास की प्रणाली है जिससे व्यक्ति में शारीरिक, मानसिक, सवेगात्मक एंव आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होता है। शिक्षा मानव के ज्ञान परिधि का विस्तार करती है। शिक्षा मानव को सामाजिक संसाधनों में परिवर्तन करने की चरणबद्ध प्रक्रिया है। शिक्षा मनुष्य के अंत: करण की क्षमताओं को उद्घाटित करके उसके चरित्र का निरंतर परिमार्जन करती है और उसे समाजोपयोगी ससांधनों में परिवर्तित करती है। शिक्षा प्रकाश का वह स्त्रोत है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ प्रदर्शन करती है। शिक्षा के प्रकार से ही हमारी कठिनाइयों का निवारण होता है। सूक्ष्म अध्ययन से यह ज्ञान होना है कि शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जन्म से पूर्व भी प्रकृति गर्भ के बालक को संसार में जीने लायक बनाती है। तत्पश्चात् उसे गुरू के रूप में माता पिता एंव परिवार के वयोवृद्ध सदस्य तथा शिक्षक उसे विशिष्ट शिक्षा प्रदान करते है।

शोध अध्ययन का महत्व – वर्तमान में अभिभावक अपने बालकों के भविष्य के प्रति चिन्तित दिखाई देते हैं क्योंकि वर्तमान युग प्रतिस्पर्धा का युग है। अभिभावक अपनी रोजगार की खोज में अपने परिवार से अलग होकर दूसरी जगह पर रहकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। अत: बालक केवल अपने माता–पिता व भाई–बहन के साथ रहता है, जिससे उसे सबका साथ व निरीक्षण नहीं मिल पाता है किन्तु संयुक्त परिवार में रहने वाले बालक को सबका साथ व निरीक्षण मिलता है। एकल परिवार में बच्चे अत्यंत आक्रोशित प्रवृत्ति के हो जाते हैं तथा वे केवल अपने माता–पिता के साथ ही रह पाते हैं तथा संयुक्त परिवार में रहने वाले बालक मिलनसार व अधिक समायोजित होते हैं। यह समस्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है तथा एक मनोवैज्ञानिक का रूप धारण करती जा रही है। समस्या के कारणों की खोज करने पर हमें इसकी जड़े अभिभावक प्रोत्साहन, शैक्षिक वातावरण, पारिवारिक वातावरण एवं अभिभावक के व्यक्तित्व की धरातल पर पाते हैं, अक्सर अभिभावक सुविधायें तो काफी जुटा लेते हैं परंतु बालक की रूचि एवं प्रोत्साहन पर ध्यान नहीं देते जिससे बालक का संपूर्ण विकास नहीं हो पाता। परिणाम शैक्षिक उपलब्धि होती है।

समस्या कथन – 'संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक प्रोत्साहन एवं व्यक्तित्व गुणों के प्रभाव का अध्ययन'

शोध विधि – प्रस्तुत शोध प्रबंध में अध्ययन हेतु शोध विधि के रूप में वर्णात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावकों के जन सांख्यिकी कारकों का अध्ययन करना।
2. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
3. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों के निम्न शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावकों के जन सांख्यिकी कारकों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

2. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अतंर नहीं पाया जाता है।
3. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अतंर नहीं पाया जाता है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में कुल 800 विद्यार्थी जिसमें संयुक्त परिवार व एकल परिवार के 400–400 कुल 800 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

सांख्यिकी विधियाँ – मध्यमान, प्रमाप विचलन व टी–मान का प्रयोग सांख्यिकी विधियों के रूप में किया गया है।

निष्कर्ष :

1. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक के जनसांख्यिकी कारकों के प्रभाव में सार्थक अंतर पाया गया। संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावकों के आयु में सार्थक अंतर पाया गया क्योंकि सभी आयु वर्ग के अभिभावकों के जवाबों में अंतर दिखाई दिया।
2. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। संयुक्त परिवार की अपेक्षा एकल परिवार के विद्यार्थियों की उच्च शैक्षिक उपलब्धि ज्यादा दिखाई दी।
3. संयुक्त एवं एकल परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। संयुक्त और एकल परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। एकल परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि दिखाई दी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डी.एन. श्रीवास्तव (2000) – आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान बारहवां संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगा।
2. नायक, डॉ. पी.के. एव रचना पाण्डेय (2018) 11वीं कक्षा के अभिभावक भागीदारी पर अध्ययन Annals of Art, Culture & Humanities on line ISSN 2455-5843, Vol. 3, Pg. 53-55
3. पाठक, पी.डी. (2009) – शिक्षा मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2, अड़तीसवीं संस्करण, 400–401
4. फ्रांसिस, शांतिलता (2013) – विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों एवं व्यक्तित्व का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध, पण्डित रविशंकर शुक्त विश्वविद्यालय, रायपुर 229–230
5. भटनागर, सुरेश (2013) – शिक्षामनोविज्ञान, सूर्यापब्लिकेशन, मेरठ ग्यारहवां संस्करण, 311

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही के सम्बन्ध में अध्ययन

डॉ. आरती* प्रेम चन्द खटीक**

* सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही के सम्बन्ध में अध्ययन किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में अजमेर व टोंक जिले के अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 शिक्षकों (150 पुरूष व 150 महिला) व हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 (150 पुरूष व 150 महिला) शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता मापनी प्रमोद कुमार और डी.एन. मुथा व कार्य जबाबदेही मापनी डॉ. प्रतिभा शर्मा द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालय के शिक्षक, शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही।

प्रस्तावना –शिक्षक विद्यालय तथा शिक्षा पद्धति की प्रमुख गत्यात्मक शक्ति है। शिक्षक का सीधा सम्बन्ध छात्रों से होता है। वह बालकों का सर्वांगीण विकास करने में सहायक तथा प्रगति की राह दिखाने वाला एक पथ प्रदर्शक होता है। शिक्षक केवल कक्षा में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विद्यालय में उचित वातावरण का निर्माण करता है। शिक्षक के शिक्षण कार्य का दर्पण विद्यार्थी होता है। किसी भी शिक्षक की प्रभावशीलता की जांच व मूल्यांकन कक्षा, कक्ष में होता है अर्थात किसी भी शिक्षक के विद्यार्थियों का विकास एवं उनकी उपलब्धियां शिक्षण प्रभावशीलता की मानक होती हैं। शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता में वृद्धि एवं उनके वांछित परिणामों पर निर्भर करती है, साथ ही शिक्षक की प्रभावशीलता में निहित शिक्षण कौशलों, व्यवसायिक प्रतिबद्धताओं एवं विद्यार्थियों की विशेषताओं का भी परिणाम होती है। शिक्षक का ज्ञान उसकी योग्यताएं, उसके कौशल तथा शिक्षण स्थितियां आदि क्षमताएं सकारात्मक भाव में हो तो नि:संदेह शिक्षक की प्रभावशीलता उच्च स्तर की होगी। शिक्षक का प्रभाव समाज को नवीन दिशा देने में महत्वपूर्ण है।

वर्तमान परिदृश्य में शिक्षक की जवाबदेही का सम्प्रत्यय अत्याधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि यह धारणा तीव्र होती जा रही है कि शैक्षिक उपलब्धियां समाज की उपेक्षाओं के अनुरूप नही है। शिक्षा के द्वारा सम्पूर्ण समाज को दिशा प्रदान की जाती है। यह दिशा या पथ पदर्शक शिक्षक है, इसलिए यह चिंता का विषय बन गया है कि अध्यापक अपने कर्तव्य के प्रति दायित्व बोध युक्त है कि नहीं। सर्वप्रथम यह जान लेना आवश्यक होगा कि हमारी संकल्पना जवाबदेही के सप्रंत्यय के विषय में क्या है। अध्याय–प्रथम: सम्प्रयात्मक पृष्ठभूमि जबावदेही की अवधारणा का मूल्य इसके उद्देश्य में निहित है यह किसी भी विषय की गुणवता बनाये रखने एवं विकसित करने का उद्देश्य रखती है। यह विषय की श्रेष्ठता बढ़ाने का प्रयास है। जवाबदेही के अर्थ की विवेचना करते समय इस बात पर बल देना अनिवार्य है कि एक अभिकर्ता अपनी क्रियाओं के प्रति जबावदेह होता है। इस अर्थ में हम जवाबदेही को हम 'उतरदायित्व' से भिन्न समझते है। प्राचीन शिक्षा में विद्ववान मानते थे कि छात्र अपने कार्यों के लिए निजी तौर पर खुद ही जिम्मेदार होते हैं, ये धारणा आज के विद्यालयों के बिल्कुल उलट है जो इस प्रकार है– विद्यालय छात्रों को पूरी तरह से अपने तरीके का चयन करने की इजाजत नहीं देता है, एक बार तय करने के बाद स्कूल छात्रों को कोर्स शुरू करने की इजाजत नहीं देते हैं कोर्स चुनने की आजादी, काम करने की आजादी, काम का नतीजा सहन करने की आजादी–ऐसी तीन महान आजादी हैं जिनसे निजी जिम्मेदारी बनती है।

शिक्षकों की कार्य दबावग्रस्तता के कारण उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है जैसे– अधिक कार्य करने के कारण शिक्षक चिड़चिड़ा हो जाता है तथा हमेशा तनाव में रहता है, जिससे वह अपने व्यवसाय के प्रति न्याय नहीं कर पाता है। बालकों के मानसिक स्वास्थ्य की अपेक्षा शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य कहीं अधिक महत्वपूर्ण होता है। शिक्षक मानसिक रूप से स्वस्थ होने पर विद्यार्थी की समस्याओं को हल कर सकता है और उन्हें समुचित निर्देशन भी दे सकता है, शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य के विकास के लिये आवश्यक है कि शिक्षण परिस्थितियों और शिक्षण सेवाओं में सुधार लाया जाये। शिक्षक अपने मानसिक स्वास्थ्य का स्वंय विकास कर सकता है यदि इसके संबंध में उन्हें समुचित बोध करवाया जाये। आधुनिक जीवन की व्यवस्तता का एक दुष्परिणाम तनाव रहा है।

प्रस्तुत शोध का महत्व – विद्यालयों में कार्य करते हुए शिक्षक बालक को आगे बढ़ते देखकर जहां संतुष्टि का आभास करते है वही दूसरी और अत्यधिक प्रयास के बावजूद बार–बार समझाने पर यदि बालकों के परिणामों में अन्तर नही ला पाते है तो वह दबाव का अनुभव करते है विकासात्मक युग

में विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को जहां एक और बालकों को पढ़ाने में सुख व संतुष्टि प्राप्त होती है वही उन्हे कार्य प्रकृति के कारण कार्य दबाव भी झेलना पड़ता है यदि दोनों परिस्थितियां साथ-साथ भी चल सकती है जिसका प्रभाव उनके कार्य निष्पादन पर पड़ता है इस समस्या के चयन करने का प्रमुख कारण है कि कार्य दबाव के कारण शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है इसे जानने अध्याय-प्रथम: सम्प्रयात्मक पृष्ठभूमि के लिए शोधार्थी ने शोध समस्या के रूप में इस समस्या का चुनाव किया है।

शोधार्थी के सामने निम्न प्रकार के प्रश्न उभरते है:-

1. क्या अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में हिन्दी माध्यम के विद्यालयों से कार्य तनाव अधिक होता है?
2. क्या विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों की प्रस्तुति का कार्य जवाबदेही से संबंध है?
3. क्या लिंगागत भेदभाव के कारण शिक्षकों के कार्य दबाव में अन्तर पाया जाता है?
4. तनाव के कारण अध्यापकों के शिक्षण अभिक्षमता पर प्रभाव क्या प्रभाव पड़ता है।

शोध कथन - 'अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता व कार्य जबाबदेही के सम्बन्ध में अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

शिक्षक: किसी शिक्षा संस्थान में विद्यार्थियों को पढ़ाने का कार्य करने वाला व्यक्ति, इसे स्वयं उपयुक्त शिक्षा प्राप्त किसी प्रशिक्षण संस्था से प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता है।

शिक्षण प्रभावशीलता: शिक्षण प्रभावशीलता उस अधिगम प्रक्रिया का नाम है जिसमें शिक्षक अपनी अभिरूचि के साथ विद्यार्थियों के साथ अन्त: क्रिया स्थापित कर बांछित उद्देश्यों को प्राप्त करता है। शिक्षण में प्रयुक्त होने वाली योजनाओं, साधनों, कक्षा प्रक्रियाओं एवं कौशलों का दक्षतापूर्ण प्रदर्शन ही शिक्षण प्रभावशीलता है।

कार्य जवाबदेही: उतरदायित्व, नैतिकता और जिम्मेदारी की ऐसी संकल्पना है जिसके कई अर्थ है नेतृत्व की भूमिका में जवाबदेही के अन्तर्गत कार्यो को करना और उनकी जिम्मेदारी लेने के साथ-साथ प्रशासन व प्रासन के दायरे में लागू करने तथा उसकी परिणति के प्रति जवाबदेही होना भी शामिल है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य जवाबदेही का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।
2. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य जवाबदेही में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

न्यादर्श - प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के अजमेर व टोंक जिले के अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 शिक्षकों व हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 300 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. शिक्षण प्रभावशीलता मापनी प्रमोद कुमार और डी.एन. मुथा
2. कार्य जबाबदेही मापनी डॉ. प्रतिभा शर्मा

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन -

1. अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या - 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :- परिकल्पना संख्या 1 के अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्यमान एवं प्रमाप विचलन के आधार पर गणना किया गया 'टी' मान 0.01 के सार्थकता स्तर पर सारणी मान से कम पाया गया। अत: इस परिकल्पना को स्वीकृत किया गया और यह निष्कर्ष निकाला गया कि अंग्रेजी माध्यम के शिक्षकों एवं हिन्दी माध्यम के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक अंतर नहीं पाया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम विद्यालयों की शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव नही पड़ता है तथा शिक्षण की भाषा एवं पद्धति शिक्षक के कार्य निष्पादन, शिक्षण कौशल और छात्र सहभागिता को प्रभावित नहीं करती है।

(2) अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य जवाबदेही में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या - 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य-जवाबदेही में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया है। प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य-जवाबदेही के मध्यमान एवं प्रमाप विचलन के आधार पर गणना किया गया 'टी' मान 0.01 के सार्थकता स्तर पर सारणी मान से कम है। अत: यह परिकल्पना कि 'अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य-जवाबदेही में कोई सार्थक अंतर नहीं है' स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दोनों माध्यमों के विद्यालयों के शिक्षक अपने कर्तव्यों के प्रति समान रूप से उत्तरदायी और समर्पित हैं तथा कार्य के प्रति उनकी दृष्टि में कोई महत्वपूर्ण भिन्नता नहीं पाई गई।

शैक्षिक सुझाव:

1. अध्ययन से शिक्षकों को यह ज्ञात होगा कि शिक्षण प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए आत्म-नियंत्रण और भावनात्मक संतुलन आवश्यक है।
2. माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक यह समझ सकेंगे कि व्यावसायिक तनाव किन कारकों से प्रभावित होता है और उन्हें कैसे नियंत्रित किया जा सकता है।
3. शिक्षकों को अपने कार्य के प्रति जिम्मेदारी और समर्पण का भाव विकसित करने की प्रेरणा मिलेगी।
4. महिला एवं पुरुष शिक्षक यह जान पाएंगे कि तनाव और कार्य-जवाबदेही के प्रभाव उनके व्यावसायिक प्रदर्शन को कैसे प्रभावित करते हैं।
5. शिक्षक अपने कार्य वातावरण को सकारात्मक बनाने हेतु प्रभावी संप्रेषण और सहकर्मी सहयोग की भावना विकसित कर सकेंगे।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. भावी शोध में उच्च माध्यमिक विद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता, तनाव, व्यावसायिक सन्तुष्टि व कार्य जबाबदेही का अध्ययन किया जा सकता है
2. प्रस्तुत शोध में राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालय स्तर के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता, तनाव, व्यावसायिक सन्तुष्टि व कार्य जबाबदेही का अध्ययन किया जा सकता है
3. विभिन्न व्यवसायिक पाठ्यक्रमों के संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन का विस्तार किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष-40, अंक-10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. सुजा, के. (2007). 'माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में शिक्षण में रूचि और कार्य सतुष्टि का शिक्षण अनुभव पर शिक्षण व्यवसाय के प्रति अभिवृति पर अंतर संगत प्रभाव पर अध्ययन' पीएच.डी. शोध, कालीकट : विश्वविद्यालय कालीकट।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. चामुण्डेसवरी, एस. एवं सन्थी, एस. (2009). 'शिक्षकों की व्यवसायिक प्रतिबद्धता एवं व्यवसायिक' संतुष्टि का अध्ययन हैदराबाद : नील कमल पब्लिकेशन, वॉल्यूम-8, पृ.सं. 29-31
7. श्रीवास्तव, के. (1997).'स्टडी ऑफ द रिलेशनशीप बिटविन ऑरगेनाईजेशन कलाईमेटस ऑफ स्कूल एण्ड जॉब सेटिशफिकेशन अमंग सैकण्डरी स्कूल टीचर्स' पीएच.डी. थीसिज,कानपुर : श्री शाहू जी महाराज कानपुर यूनिवर्सिटी.
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), 'शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय', आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता	300	252.24	16.851	0.512	स्वीकृत
अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता	300	251.48	14.645		

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य जवाबदेही	300	154.29	12.469	0.074	स्वीकृत
अंग्रेजी माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य जवाबदेही	300	153.22	12.178		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

तुलसीदास जी एवं कबीरदास जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में इनकी प्रासंगिकता

डॉ. रेखा सोनी* प्रियंका**

* प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य का उद्देश्य है कि तुलसीदास जी एवं कबीरदास जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में इनकी प्रासंगिकता का अध्ययन करना है तथा शोधकर्त्री द्वारा अध्ययन हेतु प्रस्तुत शोधकार्य में ऐतिहासिक, दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया है।

शब्द कुंजी – तुलसीदास व कबीरदास के शैक्षिक विचार, वर्तमान शिक्षा।

प्रस्तावना – प्राचीन काल में शिक्षा गुरूकुलों और आरण्यकों में प्रदान की जाती थी। तब शिक्षा तंत्र मानवीय चेतना के मर्मज्ञ एवं व्यक्तित्व गढ़ सकने की क्षमता रखने वाले महान ऋषि मुनियों के हाथ में थी। इसी के फलस्वरूप यह भारतभूमि देवभूमि कहलाती थी। आधुनिक काल में भी प्रगतिशील राष्ट्रों ने अपने नागरिकों को अभीष्ट शिक्षा में डालने के लिये शिक्षा प्रणाली को माध्यम बनाया है। किन्तु आज जब हम अपने देश में शिक्षा व्यवस्था पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें लगता है कि हम सही दिशा में नहीं बढ़ रहे हैं। दुर्भाग्यवश देश की शिक्षा व्यवस्था दुर्दशा में पड़ी हुई है और एक संकट के दौर से गुजर रही है। इसका कारण यह है कि वह दृष्टिकोणों और मूल्यों में हो रहे उन दूरगामी परिवर्तनों से निपटने में असमर्थ है जो हमारे समाज पर गहरा प्रभाव डाल रहे हैं। चरित्रहीनता, विश्रृखंलता आदि का प्रभाव समाज पर हावी होता जा रहा है। नैतिकता, स्वावलम्बन, कर्मठता जैसे गुणों का इससे कोई वास्ता नहीं है। जिसके कारण आज मनुष्य अपने भाईयों के भी अधिकारों का न केवल अतिक्रमण कर रहा है बल्कि उनका शोषण भी कर रहा है। समाज की व्यवस्था को सुव्यवस्थित रखने के लिए हमारे नीति शास्त्रों और शास्त्रियों ने समाज के तीन शत्रु माने हैं। प्रथम अज्ञान, द्वितीय अन्याय, तृतीय अभाव। इस प्रकार इन तीनों प्रकार की समस्याओं से लड़ने के लिए उन्होंने ब्राह्मण को अज्ञान से क्षत्रियों को अन्याय से और वैश्य को अभाव से लड़ने के लिए अभिष्कृत किया। जबकि चौथे स्तम्भ में वो लोग रहे जो किसी भी कारण से हम तीन प्रकार की समस्याओं से लड़ने में सक्षम व समर्थ न हो सकते थे, इसलिए उनका मुख्य कार्य सेवा माना गया था। इस प्रकार हम देखते हैं कि सारी सामाजिक व्यवस्था मानवाधिकारी की प्रहरी थी। किन्तु आलस्य, प्रमाद और अपने कार्य के प्रति नीरसता के भाव ने हमारी सामाजिक व्यवस्था पर धावा बोल दिया। शनैः-शनैः ब्राह्मण ने अपने मुख्य कार्य ज्ञान के प्रसार से मुँह मोड़ लिया, क्षत्रिय ने अन्याय से लड़ने की बजाय अन्याय को ही बढ़ावा देना प्रारम्भ कर दिया और वैश्य ने धन संग्रह कर औरों के अधिकार का हनन करना आरम्भ कर दिया। जिससे समाज में अव्यवस्था फेली। इसका मुख्य कारण यह रहा है कि हमने मानव को शिक्षित तो बनाया पर संस्कारित नहीं। अपनी मूल संस्कृति से हम भटक गये। सब एक दूसरे को मूर्ख बनाकर अपने कार्य सिद्धि में लगे हुए हैं। यदि किसी भी देश का शिक्षित मानव संस्कारित नहीं है तो वह समाज के लिए सबसे बड़ा शत्रु है। ये कुछ-कुछ वैसा ही है जैसा कि विज्ञान के विषय में कहा जाता है कि यदि उसका सदुपयोग हो तो वह हमारे लिए वरदान है अन्यथा दुरूपयोग होने पर वह हमारे लिए अभिषाप है।

शोध अध्ययन का औचित्य – यदि हम आधुनिक परिप्रेक्ष्य का अवलोकन करें तो हम पाते हैं कि आज का समाज सहस्त्र नेतृत्वों के बावजूद अनुसरण करने वालों की समस्या से जूझ रहा है। आज हमारे समाज में कबीरदास जी और तुलसीदास जी की शिक्षा को पढ़कर या यादकर सुनाने वाले तो बहुत मिल जायेंगे जो अपना व्यापार टेलीविजन चैनल पर आकर करते हैं परन्तु उनका मुख्य उद्देश्य शिक्षा में न होकर आर्थिक व्यापार ही अधिक है। ए.सी. कार में बैठकर गर्मी में झुलसते लोगों से शांति की अपील कितनी प्रभावी सिद्ध हो सकती है? एक साधारण स्थिति का यदि हम अवलोकन करें कि कबीरदास जी के जीवनकाल में भारत को हिन्दू और मुस्लिम धर्म के बीच पिसते जन समुदाय के पाखण्ड और अंधविश्वास के बीच रहना पड़ा। आज भी लगभग वही स्थिति हमारे सम्मुख दृष्टव्य है। जहां एक ओर हिन्दू-मुस्लिम झगड़े हैं वहीं हिन्दू जातियों को भी विभिन्न उप जातियों में विभक्त कर समाज को दिगभ्रमित किया गया है और जहाँ शिक्षा की बात है, वहाँ भी नूतन सुधार की महती आवश्यकता है। जो छात्रों का न केवल चरित्र निर्माण करे बल्कि उनके जीवन में व्याप्त रूढ़ियों और अंधविश्वासों को दूर करके नई चेतन, नया आलोक और आत्म विश्वास कराये। इसके लिए मैंने शिक्षा का विभिन्न परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया तो पाया कि भौतिक प्रगति की चकाचौंध में भी भारतीय समाज में आज भी हमारे प्राचीन संस्कृति और महान व्यक्तियों के प्रति आस्था न केवल विद्यमान है, बल्कि धीरे-धीरे बढ़ रही है, जिन विचारों या भावों को कबीरदास जी और तुलसीदास जी जैसे व्यक्तियों ने मध्यकाल में समाज सुधार के लिए व्यक्त किया था। उनके उन सिद्धांतों या विचारों में मानव धर्म का बीज आज के संसार के लिए कल्याणकारी वृक्ष बनकर हमारे सामने प्रस्फुटित हो सकता है। उनके कथन यद्यपि काफी वर्षो पहले कहे गये थे परन्तु वह आज भी उतने ही नवीन हैं क्योंकि जिन विषयों

पर उन्होंने लिखा या कहा वे हमारी समस्याओं या विश्व की समस्याओं के मूलभूत पहलूओं से सम्बन्धित हैं। इसी उपलक्ष्य में मेरा विचार था कि यदि गोस्वामी और कबीरदास जी की शिक्षा दर्शन को आज की शिक्षा में सुधार की दृष्टि से उपयोग में लाये तो वांछनीय परिवर्तन और सुधार की आषा की जा सकती है।

समस्या कथन – 'तुलसीदास जी एवं कबीरदास जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में इनकी प्रासंगिकता'

शोध अध्ययन के उद्देश्य – विषयवस्तु के विकास के संदर्भ में कबीरदास जी और तुलसीदास जी के विचारों का अध्ययन करना। संसार की प्रत्येक चीज को उसके वास्तविक रूप में देखना हर कार्य के असली कारण को समझना ज्ञान है और इस ज्ञान का प्रचार-प्रसार ही शिक्षा है। शिक्षा के संदर्भ में कबीरदास जी और तुलसीदास जी ने अकथनीय असाधारण साहित्य दिया है। एक कवि और साहित्यकार द्वारा समाज में व्याप्त अव्यवस्था और उससे निजात पाने का रास्ता उनका परम कर्त्तव्य बनता है जो कि नि:संदेह दोनों कवियों और दोनों साहित्यकारों ने उच्चतम की पराकाष्ठा तक निभाया है। आज वर्तमान समय में तकनीकी ज्ञान विज्ञान, गणित शिक्षा के मूल स्तम्भ हैं क्योंकि आज का समाज इन्हीं विषयों पर आधारित है और कार्यरत है। वहीं मध्यकालीन समाज में नैतिक मूल्यों की समझ, धर्मज्ञान, सामाजिक शिक्षा और भक्ति का ज्ञान की मूल शिक्षा थी।

शोध का सीमांकन – आज के समाज को इसी मनुष्यत्व की आवश्यकता है, क्योंकि हमारे समाज के सभी स्तरों में चाहे वे बुद्धिजीवी वर्ग ही हो विचारों में एक प्रकार की संकीर्णता व्याप्त है। यद्यपि हम दूसरे ग्रहों तक भी पहुंच चुके हैं, जो हमसे अनन्त दूरी पर स्थित हैं। इस अनन्त दूरी को भी हमने माप लिया है, मगर जो संकीर्ण विचारधारायें हमारे अपने समाज में हैं जो हमारे अंदर हैं, हम उनका समाधान क्यों नहीं ढूंढ पा रहे हैं। आज पश्चिमवाद हम पर दिन पर दिन हावी होता जा रहा है। हमारी नौजवान पीढ़ी उसका अंधाधुंध अनुकरण कर रही है, आखिर क्यों? ये महज एक सवाल नहीं जिसे वाद-विवाद कर समाप्त कर दिया जाये। ये हमारे देश के भविष्य का सवाल है। हम आज अपनी ही संस्कृति का निरादर करते हैं, क्योंकि हमारी शिक्षा इस प्रकार की है ही नहीं जो अपनी संस्कृति के प्रति छात्रों में जागरूकता पैदा कर सके उसकी महत्व को समझा सके। समाज में विश्रृंखलता आती जा रही है। यही कारण है कि आज हमें एक ऐसी विचारधारा की आवश्यकता है, जो इस व्यवस्था को सुधारने में सहायक बन सके। उपयुक्त इन्हीं सब कारणों को ध्यान में रखते हुए शोधकर्त्ता ने कबीरदास जी एवं तुलसीदास जी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में इनकी उपादेयता शीर्षक विषय पर शोध करने का विनम्र प्रयास करने की इच्छा की है। क्योंकि कबीरदास जी तथा तुलसीदास जी के विचार हैं तो किसी युग विशेष से सम्बन्धित नहीं हैं, बल्कि उनके विचारों की जो विशेषताऐं हैं वो पुरानी होते हुए भी आज शिक्षा के क्षेत्र में एक नवीन एवं अमृतपूर्ण परिवर्तन ला सकती हैं।

भविष्य में किये जाने वाले शोध-प्रबन्धों के लिए सुझाव :

1. यह शोध अध्ययन मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था के सन्दर्भ में किया गया है। इसको प्राचीन कालीन शिक्षा व्यवस्था के सन्दर्भ में भी किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में नैतिक मूल्यों, आध्यात्मिक मूल्यों, गुरू-महिमा, नारी-उत्थान, सामाजिक उत्थान तथा समन्वयवादी विचारधारा आदि का ही अध्ययन किया है इसी प्रकार का अध्ययन सांस्कृतिक मूल्यों के लिए भी किया जा सकता हैं।
3. 'आचार्य कुल' के अनुकरण पर बौद्धों ने नालन्दा जैसे विशाल विद्याविहार स्थापित किये। ईसाइयों ने अपने गिरजाघर तथा इस्लाम ने मकतब व मदरसे चलाये। आधुनिक विश्वविद्यालयों व कुलपति आदि की धारणा की पृष्टभूमि में भी 'आचार्यकुल' की अवधारणा निहित है। इस दृष्टि से तुलसी प्रणीत आचार्य कुल की अवधारणा का अनुसंधानपरक अधययन किया जाना वांछनीय है।

शोध अध्ययन के निष्कर्ष – आधुनिक शिक्षा-प्रणाली शैक्षिक मूल्यों के प्रति आस्था जागृत करने में असमर्थ है। लॉर्ड मैकाले द्वारा प्रतिपादित यह शिक्षा-पद्धति शिक्षार्थी के मन में भारतीय संस्कृति के प्रति हीनता और अश्रद्धा का भाव उत्पन्न करती है ऐसी स्थिति में गुरू को ईश्वर तुल्य मानने वाले कबीर तथा तुलसी के उपदेश ही भारतीयों की मानसिकता परिवर्तित करने में सार्थक हो सकते हैं। इनका अनुकरण करने से वर्तमान युग के छात्रों के मन में गुरू के प्रति आदर की भावना उत्पन्न हो सकती है। आज के कोलाहलमय परिवेश में यदि गुरूकुल जैसा पवित्र वातावरण छात्रों को प्रदान किया जाये तो छात्रों का भी स्वास्थ्य बेहतर हो सकता है तथा ज्ञान की साधना पूर्ण हो सकती है। आज गुरू-शिष्य सम्बन्धों में माधुर्य का अभाव है क्योंकि शिष्य गुरू का आदर नहीं करते इस कारण से गुरू भी शिष्यों को पिता के समान स्नेह नहीं करते अत: कबीर और तुलसी के गुरू-महिमा सम्बन्धी उपदेश इन सम्बन्धों को मधुर बनाने में उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सावित्री चन्द्र शोभा (1996) : तुलसी, सूर एवं दादू में समाज और संस्कृति, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
2. तुलसी के राम (2000) : रेडियो वार्ता संग्रह, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसार मंत्रालय भारत सरकार।
3. एस.सी. तिवारी : वर्णाश्रम शिक्षा व्यवस्था तथा आधुनिक युग में उसकी उपयोगिता (सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय)
4. शिव कुमार मिश्र (2001) : भक्ति आंदोलन और भक्तिकाव्य अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद सस्करण।
5. डॉ. सुशीला सिन्हा (2002) : लौह पुरूष कबीर प्रथम संस्करण, संजय प्रकाशन, दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजकीय एवं निजी विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि एवं वृतिक दबाब के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन

डॉ. राजेश शर्मा* सत्य नारायण खटीक**

* आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'राजकीय एवं निजी विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि एवं वृतिक दबाब के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के टोंक जिले में राजकीय एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 600 शिक्षकों पर किया गया। शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि मापन हेतु डॉ. एस. के. मंगल व डॉ. शुभ्रा मंगल द्वारा निर्मित, वृतिक दबाब मापन हेतु डॉ. ए. के. श्रीवास्तव एवं डॉ. ए. पी. सिंह का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया 'राजकीय एवं निजी विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि एवं वृतिक दबाब में परस्पर सहसम्बन्ध नहीं पाया गया'।

शब्द कुंजी – विद्यार्थी, राजकीय एवं निजी विद्यालय, शिक्षक, सांवेगिक बुद्धि, वृतिक दबाब।

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही भारत में शिक्षकों का स्थान ईश्वर से भी उच्चतर माना गया है क्योंकि राष्ट्र की वर्तमान व भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने का गौरवपूर्ण कार्य शिक्षकों द्वारा ही सम्पन्न कराया जाता है। एच.जी. वेल्स ने शिक्षक के महत्व की व्याख्या इस प्रकार की है 'शिक्षक इतिहास का निर्माता है। राष्ट्र का इतिहास विद्यालयों में लिखा जाता है और विद्यालय अपने शिक्षकों से बहुत भिन्न नहीं हो सकते।' किसी भी राष्ट्र के निर्माण में प्रभावशाली शिक्षकों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि अनेक व्यक्तियों का निर्माण करने वाला शिक्षक केवल एक व्यक्ति न होकर अपने आप में एक संस्था होता है। विद्यार्थी किसी भी राष्ट्र की सम्पत्ति और उसके भावी कर्णधार होते हैं। इनके मध्य एक अधयापक की भूमिका बगीचे के माली के समान होती है जो विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, जैविक व आध्यात्मिक विकास के उत्तरदायित्व को वहन करता है। इस सम्बन्ध में योगीराज अरविन्द घोष का कथन है कि 'अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में अपने ज्ञान की खाद देते हैं और अपने श्रम सीकर से सींच-सींच कर उन्हे महोण शक्तियां बनाते हैं।' एक स्वस्थ व शिक्षित समाज की बागडोर शिक्षक के हाथ में होती है। वह जैसा चाहे, वैसे ही समाज को बदल सकता है। वर्तमान भारतीय परिदृश्य, विश्व परिदृश्य के सन्दर्भ में प्राचीन भारतीय परिदृश्य से महत्वपूर्ण अन्तर लिये हुए हैं। आज गुरुकुल नाम की संस्थाओं का स्वरूप भी वर्तमान की औपचारिक शिक्षा प्रदान कर रही अन्य संस्थाओं से बहुत भिन्न नहीं रह गया है। आज शिक्षा ग्रहण करने के लिये जहां एक ओर जनमानस को प्रेरित किया जा रहा है वहीं दूसरी ओर सभी को शिक्षा सुलभ कराने के लिये सरकार पर दबाव बनाया जा रहा है। न सरकार अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर पा रही है और न ही समाज की शिक्षा सम्बन्धी सभी जरूरतें पूरी हो पा रही हैं। आज शिक्षक की स्थिति भी प्राचीन काल की तुलना में बिल्कुल भिन्न प्रतीत होती है। शिक्षार्थी भी चार-छ: घण्टे शिक्षा संस्थाओं में व्यतीत कर बाकी का समय समाज में रहकर व्यतीत कर रहा है। कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षक, शिक्षार्थी एवं शिक्षा संस्थाओं के स्वरूप में आमूल चूल परिवर्तन आ चुका है, लेकिन यदि कोई चीज नही बदली है तो वह है शिक्षक की जिम्मेदारी। जिस तरह से प्राचीन काल में बालक की शिक्षा की जिम्मेदारी समाज शिक्षक पर डालता था, आज भी समाज की अपेक्षायें शिक्षक से वही हैं। क्योंकि वास्तव में वह शिक्षक ही है जो बालक को उसकी स्वयं की जरूरतों की पूर्ति लायक क्षमता उत्पन्न करने के साथ ही उसे मानवता का सच्चा पाठ पढ़ा सकता है। यह कार्य आज भी शिक्षक के सिवाय और कोई सहजता से नहीं कर सकता है।

शिक्षक के शिक्षण तथा उसकी कार्यकुशलता को प्रभावित करने वाले कारकों में उसकी सांवेगिक बुद्धि भी महत्वपूर्ण होती है। सांवेगिक बुद्धि एक प्रकार की सामाजिक बुद्धि ही होती है जो हमारी स्वयं की भावनाओं की सहन शक्ति की क्षमताओं पर निर्भर करती है।

उपर्युक्त वर्णित तथ्यों के सन्दर्भ में शोधकर्ता की जिज्ञासा यह पता लगाने की हुई कि क्या माध्यमिक शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि के विभिन्न स्तरों का प्रभाव उनके व्यावसायिक नीतिबोध और वृत्तिक दबाव पडता है अथवा नहीं? सांवेगिक बुद्धि के विभिन्न स्तरों पर व्यावसायिक नीतिबोध व वृत्तिक दबाव की स्थिति में अन्तर आता है अथवा नहीं? इन चरों के पारस्परिक अर्न्तसम्बन्धों की गत्यात्मकता को परखने के लिए शोधकर्ता ने प्रस्तुत शोध समस्या का चयन शोध कार्य हेतु किया है।

प्रस्तुत शोध का महत्व – वर्तमान युग में शिक्षा व्यवस्था तीव्र गति से परिवर्तनशील सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों के प्रभाव में विकसित हो रही है। विद्यालय केवल ज्ञान देने का केंद्र नहीं रह गया है, बल्कि वह व्यक्तित्व-निर्माण, मूल्य निर्माण, भावनात्मक परिपक्कता तथा सामाजिक उत्तरदायित्व का आधार बन चुका है। ऐसी स्थिति में शिक्षक की भूमिका अत्यंत व्यापक और जटिल हो गई है। एक ऐसा शिक्षक जो

भावनात्मक रूप से परिपक्व हो, तनाव को प्रभावी ढंग से नियंत्रित कर सके और अपने व्यावसायिक कर्तव्यों का नीतिगत ढंग से निर्वाह कर सके, वही विद्यार्थियों के जीवन में सकारात्मक बदलाव ला सकता है। इसलिए शिक्षकों की 'सांवेगिक बुद्धि', 'वृत्तिक दबाव' तथा 'वृत्तिक दबाव' के बीच संबंध को समझना आज की शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता बन गया है।

वृत्तिक दबाव आज शिक्षा क्षेत्र की एक प्रमुख समस्या बन चुका है। कार्यभार, अभिभावकों की अपेक्षाएँ, प्रशासनिक दबाव, संसाधनों की कमी, मूल्यांकन का तनाव और परिणामों की जिम्मेदारी– ये सभी शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। यदि शिक्षक लगातार तनाव में हों तो उनकी कार्यक्षमता घट जाती है। इससे विद्यार्थी सीखने के प्रति उदासीन हो सकते हैं। इसलिए वृत्तिक दबाव को समझना और उसके स्रोतों की पहचान करना अत्यंत औचित्यपूर्ण है।

नैतिकता किसी भी पेशे की गुणवत्ता का आधार है। शिक्षण में नैतिक व्यवहार न केवल विश्वास और सम्मान को बढ़ाता है, बल्कि विद्यार्थियों के लिए नैतिक आदर्श प्रस्तुत करता है। यदि शिक्षक अपने मूल्यबोध को समझते हैं और नैतिकता के सिद्धांतों का पालन करते हैं, तो विद्यालय की संपूर्ण संस्कृति सकारात्मक होती है। इसलिए यह समझना आवश्यक है कि शिक्षक की नैतिकता उसके भावनात्मक कौशल और तनाव स्तर से किस प्रकार प्रभावित होती है। राजकीय और निजी विद्यालयों का तुलनात्मक अध्ययन शिक्षा–नीति में सुधार के लिए महत्वपूर्ण दिशा प्रदान करता है। इन दोनों के कार्य–पर्यावरण, प्रशासनिक संरचना और अपेक्षाएँ भिन्न हैं। ऐसे में यह अध्ययन यह स्पष्ट करेगा कि किस प्रकार की परिस्थितियाँ शिक्षक की भावनात्मक स्थिति, तनाव प्रबंधान और नैतिक आचरण को प्रभावित करती हैं।

अंततः, यह अध्ययन इसलिए भी औचित्यपूर्ण है कि इसके निष्कर्ष शिक्षा–प्रशासन, शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों, विद्यालय प्रबंधान और नीति–निर्माताओं को सार्थक दिशा प्रदान करेंगे। अध्ययन से प्राप्त जानकारी के आधार पर प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए जा सकेंगे, तनाव प्रबंधन हेतु रणनीतियाँ बनाई जा सकेंगी और शिक्षण पेशे में नैतिकता को सुदृढ़ बनाने के उपाय सुझाए जा सकेंगे। इस प्रकार यह अध्ययन शिक्षा क्षेत्र में वैज्ञानिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से पूर्णतया औचित्यपूर्ण और आवश्यक सिद्ध होता है।

समस्या कथन – 'राजकीय एवं निजी विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि एवं वृत्तिक के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

उच्च माध्यमिक विद्यालय – उच्च माध्यमिक विद्यालयों से तात्पर्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर से सम्बन्धित राजकीय तथा गैर राजकीय सीनियर सैकण्डरी विद्यालयों से है जिनमें कक्षा 9 से 12 तक की शिक्षा प्रदान की जाती है।

शिक्षक – यहां शिक्षक से तात्पर्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर से सम्बन्धित राजकीय तथा गैर राजकीय सीनियर सैकण्डरी विद्यालयों की 9, 10, 11 व 12 कक्षाओं में शिक्षण करने वाले शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं से है।

सांवेगिक बुद्धि – प्रस्तावित अध्ययन में सांवेगिक बुद्धि का प्रत्ययीकरण आत्म–जागरूकता, आत्म–नियंत्रण, अभिप्रेरणा, समानुभूति व सामाजिक कौशलों के रूप में किया गया है। प्रकार्यात्मक परिभाषा की दृष्टि से सांवेगिक बुद्धि से तात्पर्य विषयी द्वारा 'सांवेगिक बुद्धि मापनी' पर प्राप्त प्राप्तांकों से है।

मायर व सालोवी ने सांवेगिक बुद्धि को व्यक्ति की स्वयं की तथा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं व संवेगों को नियन्त्रित करने तथा उनमें अंतर करने तथा इस सूचना का उपयोग अपने चिंतन व कार्य–कलापों के मार्गदर्शन हेतु करने की योग्यता के रूप में परिभाषित करते हैं।

कोलमेन (1995) द्वारा सांवेगिक बुद्धि को एक ऐसी योग्यता के रूप में वर्णित किया गया है जिसमें आत्म–जागरूकता, संवेग–नियंत्रण, व्यवहार–स्थापित, उत्साह, आत्म–अभिप्रेरणा, समानुभूति तथा सामाजिक अनुकूलनशीलता सम्मिलित होते हैं।

वृत्तिक दबाव – क्यारियाकोयू के अनुसार 'दबाव एक असुखप्रद संवेगात्मक दशा है'। कर्मचारी की मनोदशा पर दबाव डालने वाले अनेकानेक कारक हो सकते हैं। ये कारक संगठन के भीतर तथा संगठन से बाहर भी अवस्थित हो सकते हैं।

श्रीवास्तव व सिंह (1981) वृत्तिक दबाव के 12 आयामों का उल्लेख करते हैं, यथा– भूमिका अतिभार, भूमिका संघर्ष, भूमिका अस्पष्टता, अतार्किक समूह व राजनैतिक दबाव, अल्प सहभागिता, व्यक्तियों के लिए उत्तरदायित्व, शक्तिविहीनता, कार्य में सहकर्मी सम्बद्ध अच्छे न होना, आन्तरिक दौर्बल्य, निम्न पद स्थिति, तनावयुक्त कार्य–दशायें तथा अलाभप्रदता। प्रकार्यात्मक परिभाषा के रूप में विषयी की वृत्तिक मापनी के विभिन्न आयामों पर प्राप्त प्राप्तांकों का योग उसके वृत्तिक दबाव की मात्रा का सूचक है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।करना।
2. राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
3. निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
2. राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
3. निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श :–प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में अध्ययन राजस्थान राज्य के टोंक जिले में राजकीय एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 600 शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. सांवेगिक बुद्धि मापन हेतु डॉ. एस. के. मंगल व डॉ. शुभ्रा मंगल द्वारा निर्मित
2. वृत्तिक दबाब मापन हेतु डॉ. ए. के. श्रीवास्तव एवं डॉ. ए. पी. सिंह

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.186 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य में सार्थक सहसम्बन्ध पाया गया।

(2) राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.045 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर असार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

(3) निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 3 के अनुसार निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.059 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर असार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि व वृत्तिक दबाव में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शैक्षिक सुझाव:

1. शिक्षक अपनी 'सांवेगिक बुद्धि' को विकसित कर विद्यार्थियों के साथ सहानुभूति आधारित संबंध बना सकते हैं।
2. शिक्षक अपने कार्य दबाव की पहचान कर तनाव–नियंत्रण तकनीकों को अपनाने के लिए प्रेरित होते हैं।
3. वृत्तिक दबाव का विकास शिक्षकों में 'पेशेवर ईमानदारी और उत्तरदायित्व' को समझने में सहायक है।
4. शिक्षक अपने व्यवहार, संप्रेषण शैली और भावनात्मक प्रतिक्रियाओं में सुधार ला सकते हैं।
5. सांवेगिक बुद्धि विकसित होने से 'कक्षा में अनुशासनात्मक समस्याएँ कम' हो सकती हैं।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. न्यादर्श के लिए बड़े न्यादर्श का चयन किया जा सकता है इसके लिए विद्यालयों तथा शिक्षकों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।
2. भविष्य में कक्षा अवलोकन तकनीकों को जोड़कर वृत्तिक दबाव का प्रत्यक्ष मूल्यांकन कर सकते हैं।
3. सांवेगिक बुद्धि के अधिक उन्नत मापदंड अपनाकर शिक्षकों की भावनात्मक क्षमताओं का अधिक सटीक अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष–40, अंक–10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), 'सांख्यिकी के मूल तत्व', आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. अग्रवाल, मिनाक्षी (1991)–'जॉब सेटिसफेक्शन ऑफ टीचर्स इन रिलेशन टू सम डेमोग्राफिक वेरियेबल्स एण्ड वैल्यूज पीएच.डी. इन एजूकेशन, आगरा : यूनिवर्सिटी, फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, एम.बीबुच।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
6. गुप्ता. एस.पी. (1998). 'ए स्टडी ऑफ जॉब सेटिसफेक्शन एट थ्री लेवल्स ऑफ टीचिंग' डी.इन एजूकेशन, मेरठ यूनिवर्सिटी, थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन. एम.बी. बुच।
7. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., 'जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन', आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट
8. सिंह, पूनम (2007) 'इफेक्ट ऑफ स्टेस ऑन जॉब सेटइजफेक्शन एण्ड वर्क वेल्यूज अमंग टीचर्स' न्यू देहली: अध्ययन पब्लिकेशन्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि	600	77.68	9.291	0.186	अस्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की वृत्तिक दबाव	600	134.81	16.359		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि	300	76.51	9.987	0.045	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की वृत्तिक दबाव	300	134.88	16.842		

सारणी संख्या – 3

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि	300	77.24	9.491	0.059	स्वीकृत
निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की वृत्तिक दबाव	300	137.42	7.438		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण का व्यक्तित्व पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. गोविन्द सोनी* शैलेजा बेनीवाल**

* सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण का व्यक्तित्व का पर प्रभाव का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के बीकानेर जिले के राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों में अधयनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया। 'अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण, व्यक्तित्व पर प्रभाव को जानने हेतु धार्मिक प्रवृत्ति मापनी आर. के. ओझा द्वारा निर्मित एवं व्यक्तित्व मापनी वाई. सिंह और एच.एम. सिंह द्वारा निर्मित का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया 'अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्र वृति का उनके आधुनिकरण, व्यक्तित्व पर प्रभाव में सार्थ अन्तर नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – विद्यार्थी, अकादमिक महाविद्याल, धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण, व्यक्तित्व।

प्रस्तावना –धार्मिक प्रवृत्ति व्यक्ति को विशिष्ट धारणाओं, मूल्यों और व्यवहार की ओर अग्रसर करती है। धार्मिक संस्थाएँ और उनके द्वारा स्थापित परम्पराएँ व्यक्ति को अनुशासन, दिशा और आत्मचेतना प्रदान करती हैं। धर्म को अक्सर वैयक्तिक अनुभूति माना जाता है, जो संगीत या कला की तरह मनुष्य की आत्मा को संतोष और प्रेरणा देती है। किंतु अधिशिक्षण या कठोरता के रूप में धर्म का आरोपण इसके वास्तविक उद्देश्य को बाधित कर देता है। विशेष रूप से बच्चों पर धर्म का दुरुपयोग उनके भीतर विभाजन, असहिष्णुता और संकीर्ण विचारों को जन्म दे सकता है, जिससे धर्म का मूलभूत शांति संदेश ही प्रभावित हो जाता है।

विद्यार्थियों का धार्मिक परिवेश उनके पारिवारिक जीवन, संरक्षकों तथा धार्मिक समुदायों से प्रभावित होता है। विद्यालय में भी शिक्षक के विचार अनजाने में विद्यार्थियों के मन पर गहरी छाप छोड़ते हैं। यह प्रभाव सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। इसलिए आवश्यक है कि विद्यार्थियों में धार्मिक प्रवृत्ति का संतुलित विकास हो, जिससे उनमें सभी धार्मो के प्रति सम्मान, सहयोग और मानवीय दृष्टि विकसित हो सके।

वर्तमान समय में धार्मिक भावनाएँ कई बार साम्प्रदायिकता में परिवर्तित होकर सामाजिक असंतुलन उत्पन्न कर रही हैं। धर्म का उद्देश्य आध्यात्मिक उन्नयन के बजाय समूह विशेष की कठोरता के रूप में प्रकट होने लगा है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से परिपूर्ण यह युग अंधविश्वासों को चुनौती देता है, फिर भी कई पुरानी रूढ़ियाँ व्यक्ति के मन में अवचेतन रूप में बनी रहती हैं जो सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करती हैं। ऐसे में विद्यार्थियों के धार्मिक दृष्टिकोण और उनकी सामाजिक प्रवृत्ति का वैज्ञानिक अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

आधुनिकीकरण आज के युग का केंद्रीय विषय है। इसका संबंध विज्ञान, प्रौद्योगिकी, तार्किकता, परिवर्तन की स्वीकृति तथा प्रगतिशील सोच से है। विकसित एवं विकासशील देशों में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया भिन्न–भिन्न गति से चल रही है। आधुनिकता उस परिवर्तन को स्वीकार करने की प्रक्रिया है, जिसे समाज लाभकारी और वांछनीय समझता है। आधुनिकीकरण व्यक्ति में भविष्यगामी दृष्टिकोण विकसित करता है और उसे यह विश्वास दिलाता है कि संसार का रूपांतरण संभव है। विज्ञान आधारित आधुनिक शिक्षा व्यक्ति को चिंतनशील बनाती है और अंधविश्वासों से मुक्त करती है।

भारतीय समाज भी विज्ञान, तकनीक और शिक्षा के प्रभाव से तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। किसी भी राष्ट्र की मजबूती विज्ञान एवं तकनीकी उन्नति से होती है और शिक्षित नागरिक इस प्रगति के वाहक होते हैं। ऐसे में विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृत्ति और आधुनिकीकरण के मध्य संबंध को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र के रूप में उभरता है। यह अध्ययन व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक उन्नयन और राष्ट्रीय विकासकृतीनों की दिशा को समझने में सहायक सिद्ध होता है। अत: धर्म, आधुनिकीकरण और व्यक्तित्व विकास के मध्य अंतर्सम्बंधों का अध्ययन उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों के संदर्भ में विशिष्ट महत्व रखता है। यह अध्ययन इस दृष्टि से भी आवश्यक बन जाता है कि भविष्य का समाज आज के विद्यार्थियों के विचारों, व्यवहार और मूल्यों पर आधारित होगा।

प्रस्तुत शोध का महत्व – आज देश के कोने–कोने में साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं। एक धर्म का व्यक्ति धार्मिक उन्माद में दूसरे धर्म के व्यक्तियों को अपना दुश्मन समझकर उनके साथ हिंसक व्यवहार करने लगता है। मनुष्य धर्म के प्रति सबसे अधिक श्रद्धावनत् और समर्पित रहता है, धर्म के प्रति यह समर्पण अनेक बार अंधविश्वास और अंधश्रद्धा तक पहुँच जाता है, और जिसे वह धर्म मानता है, उसकी रक्षा के लिए वह अपने प्राणों का ही नहीं, बल्कि अपना अस्तित्व तक बलिदान करने के लिए तैयार हो जाता है। धर्म

शब्द का आशय लेकर मानव ने एक ओर जहाँ सर्वाधिक सृजनात्मक कार्य किए हैं, अपना उत्कर्ष किया है, मानवता के श्रेष्ठतम् मूल्यों को उद्घाटित किया है, वहीं दूसरी ओर इस शब्द का आशय लेकर सर्वाधिक रक्त भी बहाया है। धर्म के नाम पर सर्वाधिक युद्ध भी हुए, सर्वाधिक हत्यायें हुई, सर्वाधिक शोषण हुआ और सर्वाधिक उत्पीड़न भी । धर्म की आड़ लेकर जैसी निरंकुशता और बर्बरता के क्षेत्र में मानव उतरा है, वैसी निरंकुशता और बर्बरता मानव ने स्वयं अपने प्राणों की रक्षा के लिए भी नहीं की। मानव का समस्त पाखण्ड, समस्त अंधविश्वास 'धर्म' से ही जुड़ा हुआ है, तथा मानव को अपनी श्रेष्ठतम् उपलब्धियाँ भी अंततः धर्म से प्राप्त हुई है।

धार्मिक प्रवृत्ति व्यक्ति को आस्तिक बनाती है। क्योंकि धार्मिक होना स्वयं अपने आप में ही एक आंतरिक क्रान्ति है। जो सच्चा धार्मिक है, वह नीति और अनीति दोनों के पार चला जाता है, धार्मिक व्यक्ति का आचरण सिर्फ नैतिकता से ही प्रेरित नहीं होता, बल्कि उससे बहुत आगे बढ़ जाता है।

आज का विद्यार्थी बहिर्मुखी चेतना में निवास करता है, उस चेतना ने उसे न केवल अति भौतिकवादी बना दिया है, बल्कि अति तार्किक भी बना दिया है। जिसे आज 'वैज्ञानिक बुद्धि' कहकर मान्यता दी जा रही है, वह 'वैज्ञानिक बुद्धि' एक विशेष प्रकार के अहंकार से पीड़ित है। सच बात तो यह है कि 'अति तार्किक बुद्धि' को 'वैज्ञानिक बुद्धि' की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। आजका मानव विज्ञान की आड़ में धर्म के अस्तित्व को खत्म कर देना चाहता है।

आज हमारा देश परम्परागत समाज से अधिक आधुनिक समाज की तरफ तेजी से बढ़ रहा है, पर उसी के साथ लोगों में धार्मिक प्रवृत्ति भी तेजी से बढ़ रही है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया एक निरन्तर विकासशील व अग्रचालित प्रक्रिया है, परन्तु समाज में व्याप्त धार्मिक कट्टरता उसके विकास में बहुत बड़ी बाधा का कार्य करती है, जिससे समाज में विकास का मार्ग अवरूद्ध होता है एवम् व्यक्तियों का आधुनिकीकरण न होकर उनमें संकुचित व संकीर्ण भावनाओं व प्रवृत्तियों का विकास होने लगता है।

आधुनिकीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिससे सामाजिक ढाँचों, मूल्यों के झुकाव, प्रेरणा व मानकों में इच्छानुसार परिवर्तन लाया जा सकता है। सही रूप में आधुनिकीकरण समाज में परिवर्तन की वह प्रक्रिया है, जो समाज को पिछड़े व अविकसित वातावरण से नवीन व विकासशील, प्रगतिशील और उन्नतिशील रूप प्रदान करती है। यदि धार्मिक, प्रवृत्ति की संकीर्णता, आधुनिकीकरण के मार्ग में बाधक न हो तो विद्यार्थियों व व्यक्तियों में नैतिकता के गुणों के विकास द्वारा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को और अधिक मजबूती व गति प्रदान होगी। अतः धार्मिक प्रवृत्ति को सकारात्मक दिशा में मोड़कर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को सही गति देने हेतु प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता है।

धर्म ने व्यक्तित्व को सकारात्मक व नकारात्मक दोनों रूपों में बहुत अधिक प्रभावित किया है, जिसके फलस्वरूप व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास नहीं हो पा रहा है व एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की जान का दुश्मन बन गया है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति समाज में रहकर ही सुनागरिक बन सकता है और अपने सद्गुणों को विकसित कर सकता है। बालक परिवार की मान्यतायें जो समाज पर आधारित हैं, प्रथायें, अपनी संस्कृति द्वारा प्रशस्त मार्ग का पालन करता हुआ सामाजिक बनता है। यद्यपि बालक की अपनी-अपनी पृथक-पृथक वैयक्तिक भिन्नतायें होती हैं, परन्तु सामाजिक मान्यताओं व परम्पराओं के साथ भी समन्वय स्थापित करना पड़ता है।

समाज में व्यक्तियों के भिन्न-भिन्न सामाजिक स्तर होते हैं, परन्तु उन सभी को धर्म ने बहुत प्रभावित किया है, यह सम्भव है कि इन वर्गों में धार्मिक प्रवृत्ति का वितरण समान न हो, पर धर्म के प्रति चाह इन सभी वर्गों में है। बालक जन्म के समय मानव पशु होता है, उसे न बोलना आता है न कपड़े पहनना। उसका न कोई होता है और न ही वह किसी प्रकार का व्यवहार करना ही जानता है। पर सामाजिक वातावरण के सम्पर्क में रहकर उसमें धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगता है। उसे अपनी भाषा रहन-सहन के ढंग, खाने-पीने की विधि दूसरों के साथ व्यवहार करने के प्रतिमान, धार्मिक व नैतिक विचार, आदि अनेक बातें समाज से प्राप्त होती हैं, जो अधिकांशतः उसके सामाजिक स्तर के अनुसार होती हैं। इस प्रकार सामाजिक स्तर के अनुसार भी व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

धार्मिक प्रवृत्ति का आधुनिकीकरण व जीवन के विभिन्न पक्षों, जैसे व्यक्तित्व व सामाजिक स्तर पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह कैसे उन्हें प्रभावित करती है, इसका अध्ययन करना व उन्हें समझना अति आवश्यक है, जो कि एक ज्वलन्त विषय है, जिसका गहन अध्ययन देश, समाज व काल के लिए बहुत उपयोगी है। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि इस समस्या का गहन अध्ययन हो, यह समस्या समाज के लिए बहुत अधिक महत्तपूर्ण है। समस्या के पीछे के कारणों को जानना व उसे दूर करने के उपाय ही इस शोध की उपयोगिता है। इसलिए शोधकर्त्री ने समस्या को शोधकार्य हेतु चुना है।

समस्या कथन – 'अकादमिक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का उनके आधुनिकरण का व्यक्तित्व पर प्रभाव का अध्ययन'

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या

अकादमिक महाविद्यालय – अकादमिक शब्द का अभिप्राय अमूर्त प्रत्ययों तथा विचारों से सम्बन्धित है। भाषा, इतिहास, अर्थशास्त्र, गणित, मानविकी, विज्ञान आदि। अव्यावसायिक विषयों से सम्बन्धित विषयों के व्यापक क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्राप्त होती है।

महाविद्यालय मूल शब्द का अर्थ है एक बड़ा कक्ष जहाँ सहयोगी व्यक्ति किसी सर्वनिष्ठ उद्देश्य या कार्य के लिए एकत्र हो अथवा व्यक्तियों की ऐसी संस्था जहाँ लोग किसी सर्वनिष्ठ प्रयोजन के लिए मिलते हो। बाद में यह शब्द माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा की संस्थाओं के लिए प्रयोग होने लगा। अब यह माध्यमिक स्तर में ऊपर की शिक्षा देने वाली संस्थाओं के लिए प्रयोग होता है। यह उत्तर किशोरावस्था के छात्रों के लिए माध्यमिक स्तर के बाद तथा विश्वविद्यालयीय शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर की संस्था है।

धार्मिक प्रवृत्ति – 'धर्म' शब्द 'धृ' 'धारणे' धातु में मन् प्रत्यय लगाकर उत्पन्न होता है। इसका अर्थ 'धारण करना' है – 'धारयतीति धर्मः' धर्म की व्युत्पत्ति तीन प्रकार से बतायी गयी है । रिलीजन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'रिलीजेयर' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है – बाँधना। इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से रिलीजन का अर्थ है, मनुष्य तथा ईश्वर में सम्बन्ध जोड़ने वाला' अथवा 'मनुष्यों को परस्पर बाँधने वाला' । 'धर्म' का सार- नम्रता, मानवता, दया और निष्पक्षता है।

आधुनिकीकरण – आधुनिक (Modern) शब्द की उत्तपत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'मोडोय से हुई है, जिसका अभिप्राय 'प्रचलन' से है। अतः कहा जा सकता है कि जो कुछ भी प्रचलन में है, वही आधुनिकता है। व्युत्पत्ति के आधार पर वर्तमान में प्रचलन को आधुनिकता मानने का अर्थ है कि समाज के सदस्यों ने उन सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों को स्वीकार कर लिया

है, जो वर्तमान में घटित हुए हैं, अथवा हो रहे हैं, क्योंकि वे वांछनीय व लाभदायक हैं। आधुनिकता को अच्छाई के अर्थ में स्वीकार करते हैं । इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक परम्परा में होने वाले परिवर्तन एवं नवीनता को आधुनिकता व आधुनिकता की प्रक्रिया को आधुनिकीकरण कहा जाता है।

व्यक्तित्व – सामान्यत: व्यक्तित्व से अभिप्राय, व्यक्ति की शारीरिक संरचना से लगता है, पर मनोविज्ञान में व्यक्तित्व का अर्थ भिन्न है। 'व्यक्तित्व' शब्द अंग्रेजी के (Personality) से बना है, जो लैटिन शब्द 'पर्सोना' (Persona) से लिया गया है, जिसका अर्थ वेशभूषा से है। प्राचीन काल में जिसे नाटक में लोग पहनते थे, वे जिस प्रकार की वेशभूषा पहन लेते थे, उनका व्यक्तित्व वैसा ही हो जाता था। मनोविज्ञान में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के रूप व गुणों समष्टि से है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विज्ञान संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का तुलनात्मक में कोई सार्थक अन्तर नही है।
2. निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विज्ञान संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति में कोई सार्थक अन्तर नही है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में राजस्थान राज्य के बीकानेर जिले के राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी अकादमिक महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. धार्मिक प्रवृत्ति मापनी (आर. के. ओझा)
2. व्यक्तित्व मापनी (वाई. सिंह और एच.एम. सिंह)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन

1. राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति का तुलनात्मक में कोई सार्थक अन्तर नही है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की धार्मिक प्रवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

(2) निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विज्ञान संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति में कोई सार्थक अन्तर नही है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् कला संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् कला संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि निजी अकादमिक महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् कला संकाय के छात्र व छात्राओं की धार्मिक प्रवृति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शैक्षिक सुझाव:

1. सकारात्मक धार्मिक प्रवृत्ति से विद्यार्थियों में सदाचार, नैतिकता, अनुशासन और अध्यवसाय जैसे गुणों का विकास होता है जो शैक्षिक प्रगति को सुदृढ़ बनाते हैं।
2. धर्म भावनात्मक संतुलन प्रदान करता है जिससे विद्यार्थी जीवन की चुनौतियों का दृढ़ता से सामना कर पाते हैं।
3. धार्मिक मूल्यों का ज्ञान आधुनिक जीवन–शैली को संतुलित दृष्टिकोण के साथ अपनाने में सहायता करता है।
4. विद्यार्थियों में विभिन्न धर्मों, जातियों और संस्कृतियों के प्रति आदर एवं सहिष्णुता का भाव विकसित होता है।

भावी शोध हेतु सुझाव –

1. न्यादर्श के लिए बड़े न्यादर्श का चयन किया जा सकता है इसके लिए विद्यालयों तथा विद्यार्थियों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।
2. विद्यालय में शांतिपूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण की स्थापना में यह अध्ययन सहायक है।
3. धार्मिक विविधता को स्वीकार कर शिक्षक देश की एकता और अखंडता को सुदृढ़ कर सकते हैं।
4. धार्मिक कट्टरता और अंधविश्वास से विद्यार्थियों को दूर रखने के लिए तार्किक संवाद का उपयोग किया जा सकता है।
5. विद्यार्थियों के व्यक्तित्व एवं सामाजिक विकास में शिक्षक प्रभावी मार्गदर्शक की भूमिका निभाते हैं।
6. समावेशी शिक्षा के सिद्धांत को व्यवहार में लागू करने में यह शोध सहायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रो. श्री वास्तव सी. बी., डॉ. शर्मा माता प्रसाद 'शैक्षिक अनुसंधान की विधियाँ' अपोलो प्रकाशन, जयपुर पृष्ठ सं. 38
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. कुलश्रेष्ठ, एस.पी. (2008), 'शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार',अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. मिश्रा, रामप्रसाद (1986), भारत की एकता, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
5. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
6. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)

7. मिश्रा, सुनीता (2006) हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के मूल्य, व्यक्तित्व तथा समायोजन का प्रतिबल पर प्रभाव का अध्ययन, शोध प्रबन्ध, मनोविज्ञान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
8. सकपाल हूवानामा व सम्बन्नना (2006) खिलाड़ियों के व्यक्तित्व, सामंजस्य, उपलब्धि, व प्रेरणा पर सामाजिक-आर्थिक-स्तर के प्रभाव का अध्ययन किया।
9. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरिशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट
10. सुलेमान, एम. (2005) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ. पटना: जनरल बुक एजेन्सी।सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालय के विद्यार्थी	300	174.67	13.224	1.771	स्वीकृत
निजी अकादमिक महाविद्यालय के विद्यार्थी	300	172.71	13.881		

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालय के विद्यार्थी	300	175.88	12.579	0.805	स्वीकृत
निजी अकादमिक महाविद्यालय के विद्यार्थी	300	173.83	12.883		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता का अध्ययन

डॉ. गुंजन शर्मा* मोहम्द साकिब खान**

* सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के जयपुर संभाग के राजकीय एवं निजी अकादमिक महाविद्यालयों के 200 पुरूष व 200 महिला शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। पर किया गया। शिक्षकों के कार्य संतोष मापन हेतु प्रमोद कुमार एवं डी. एन. मुथा द्वारा निर्मित तथा समायोजन क्षमता मापन हेतु डॉ. एस. के. मंगल द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया राजकीय एवं निजी अकादमिक महाविद्यालयों के कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता में परस्पर सहसम्बन्ध पाया गया।

शब्द कुंजी – विद्यार्थी, राजकीय एवं निजी अकादमिक महाविद्यालय, शिक्षक, कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता।

प्रस्तावना –महाविद्यालयी शिक्षा प्रणाली में शिक्षक की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि वही शिक्षा, समाज और विद्यार्थी के बीच सेतु का कार्य करता है। वर्तमान समय में शिक्षक का कार्य–संतोष, समायोजन क्षमता तथा सांवेगिक बुद्धिमत्ता शिक्षा की गुणवत्ता को सीधा प्रभावित कर रही है। आज शैक्षिक तंत्र में अनेक भ्रांतियाँ, दबाव, विरोधाभास और व्यवहारगत विसंगतियाँ दिखाई देती हैं, जिनसे शिक्षक का मनोबल, निर्णय शक्ति और भावनात्मक संतुलन प्रभावित होता है। जब शिक्षक स्वयं मानसिक दबाव से ग्रस्त होगा तो वह शिक्षा प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन नहीं ला पाएगा। इसलिए शिक्षक की भावनाओं, उसके कार्य–संतोष और समायोजन क्षमता पर धयान देना अत्यंत आवश्यक है, तभी शिक्षा व्यवस्था अपनी वास्तविक दिशा प्राप्त कर सकेगी।

आधुनिक समाज में शिक्षक से अपेक्षाएँ निरंतर बढ़ रही हैं, परंतु उसकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में उत्पन्न बदलाव उसे अपने मूल पेशे से दूर ले जाने लगे हैं। शिक्षा प्रक्रिया में अब शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को सक्रिय होना आवश्यक हो गया है। शिक्षक को विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं, उनकी क्षमताओं और रुचियों के अनुरूप शिक्षण विधियाँ अपनाते हुए उन्हें आगे बढ़ाने में सहयोग देना होता है। वर्तमान परिवेश में शिक्षक को निर्धारित पाठ्यचर्या, प्रशासनिक दबाव और बढ़ती कार्य–व्यस्तताओं के बीच संतुलन बनाते हुए शिक्षण की गुणवत्ता को बनाए रखना पड़ता है। इसी कारण उसकी भावनात्मक परिपक्वता और कार्य–संतोष का महत्व और बढ़ जाता है। राधाकृष्णन ने भी कहा है कि शिक्षक समाज की बौद्धिक परम्परा का वाहक होता है और सभ्यता के स्तर को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

शिक्षक से विद्यार्थी, अभिभावक और समाज तीनों ही उच्च अपेक्षाएँ रखते हैं। विद्यार्थी उसे ज्ञान, मार्गदर्शन और स्नेह का स्रोत मानते हैं, अभिभावक उसे अनुशासन और संस्कार देने वाला व्यक्तित्व समझते हैं, और समाज उसे कर्तव्यनिष्ठ व आदर्श नागरिकों का निर्माणकर्ता मानता है। इन अपेक्षाओं की पूर्ति तभी सम्भव है जब शिक्षक अपने परिवेश के साथ प्रभावी समायोजन कर सके, अपने कार्य में रुचि रखे और अपने व्यवसाय से संतुष्ट हो। विशेषकर माध्यमिक एवं महाविद्यालय स्तर पर शिक्षक की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि यही स्तर बालक के भविष्य और नागरिक जीवन की नींव तैयार करता है।

शिक्षक आज अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा हैकृशैक्षणिक दायित्व, गैर–शैक्षणिक कार्य, सामाजिक दबाव, कार्यस्थल की जटिलताएँ और आर्थिक अपेक्षाएँ–जिनसे उसके संतोष और समायोजन में बाधाएँ आती हैं। आधुनिक सुविधाओं की चाह, अतिरिक्त आय की आवश्यकता और जीवन–स्तर सुधारने की आकांक्षा कई शिक्षकों को असंतोष की ओर ले जाती है, जिससे वे गैर–शैक्षणिक गतिविधियों, कोचिंग या अन्य दायित्वों में उलझ जाते हैं। इसका प्रतिकूल प्रभाव उनकी शिक्षण अभिरुचि, कार्य–संतोष और भावनात्मक संतुलन पर पड़ता है।

प्रस्तुत शोध का महत्व – वर्तमान में किसी व्यक्ति के लिए व्यवसाय सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि वह अपने सक्रिय जीवन का पर्याप्त समय अपने व्यवसाय में लगाता है। इसी पर व्यक्ति का मान सम्मान एवं सामाजिक प्रतिष्ठा भी आधारित होती है। व्यवसाय व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन दर्शन को प्रभावित करता है। कुछ लोग अपने व्यवसाय में आनन्द तो कुछ लोग तनाव महसूस करते हैं। शिक्षण व्यवसाय में यह बात अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है क्योंकि शिक्षक दायित्व अनेक चुनौतियों से मुक्त है अत: कुछ लोग इस कार्य में सन्तुष्टि का अनुभव करते है। कुछ लोग इसका चयन अन्तिम विकल्प के रूप में करते है तो वे इस कार्यक्षेत्र की चुनौतियों से सदैव चिन्तित रहते हैं। शिक्षक, शिक्षण संस्था का केन्द्र बिन्दु एवं शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रमुख साधन माना जाता है। राष्ट्र के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक उत्थान में शिक्षक की महत्वपूर्ण

भूमिका होती है। इसलिए अध्यापक में अपने शिक्षण में रूचि व कार्य में सन्तुष्टि का होना आवश्यक है। परन्तु वर्तमान में शिक्षकों में विभिन्न चिन्ताएं एवं असन्तोष की स्थिति दिखायी पड़ती है। आज लोग शिक्षण व्यवसाय को अन्तिम विकल्प के रूप में चुनते हैं। शिक्षक बनने के बाद भी वे अन्य व्यवसायों में लगे रहते हैं। एक असन्तुष्ट शिक्षक से छात्रों को सन्तुष्ट करने वाली शिक्षा की कल्पना कैसे की जा सकती है।

प्रस्तुत शोधकार्य की उपयोगिता शिक्षकों में शिक्षण में रूचि एवं कार्य संतुष्टि का विकास करने के लक्ष्य को ध्यान में रखकर है। वर्तमान में सरकार द्वारा शिक्षकों में शिक्षण को आकर्षक और रूचिकर बनाने के लिए नित नये प्रयास, तकनीकियाँ, प्रविधियाँ एवं युक्तियाँ अपनाने पर बल दिया जा रहा है। आज शिक्षक को अपने शिक्षण में विविधता, सरलता एवं ग्राहयता लाने के लिए अनेक उपाय अपनाने पड़ते हैं। विशेषत: स्नातक स्तर के शिक्षकों के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इन्हें महाविद्यालय के प्रति आकर्षित करने के लिए शिक्षक को विशेष उपक्रम करना पड़ता है जिसमें इसकी शिक्षण रूचि व कार्य संतुष्टि प्रभावी पक्ष है।

अनेक समस्याएं शिक्षकों को महाविद्यालयीय समायोजन में बाधा उत्पन्न करती है। इसके अतिरिक्त बहुत-सी स्थितियाँ शिक्षकों के समायोजन में बाधा उत्पन्न करती है। इन कारणों की पहचान और इनके निवारण के लिए शिक्षकों के समायोजन का अध्ययन किया जाना आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। अध्यापकों की शिक्षण रूचि, समायोजन और कार्य सन्तुष्टि जैसे कारकों का एक दूसरे जोड़कर अध्ययन किया जाना अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है क्योंकि ये कारक एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से अन्तर्सम्बन्धित है। शिक्षकों की शिक्षण में रूचि होने पर वे इसके प्रति लगाव और निष्ठा के साथ कार्य करते हैं जो उनके शैक्षिक समायोजन का सूचक है। शिक्षक समाज और शैक्षिक परिस्थितियाँ से सही समायोजन स्थापित कर लेता है तो इसका आशय वह अपने कार्य के प्रति सन्तुष्टि भाव रखता है। इसी प्रकार शिक्षण रूचि और व्यवसायिक सन्तुष्टि भी एक दूसरे से घनिष्ठ रूप में जुड़ी होती है। यदि शिक्षक अपने शिक्षण कार्य में रूचि रखता है तो वह अपनी व्यवसाय से भी संतुष्ट रहता है।

समस्या कथन - 'महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष एवं समायोजन क्षमता का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

महाविद्यालय - महाविद्यालय मूल शब्द का अर्थ है एक बड़ा कक्ष जहाँ सहयोगी व्यक्ति किसी सर्वनिष्ठ उद्देश्य या कार्य के लिए एकत्र हो अथवा व्यक्तियों की ऐसी संस्था जहाँ लोग किसी सर्वनिष्ठ प्रयोजन के लिए मिलते हो। बाद में यह शब्द माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा की संस्थाओं के लिए प्रयोग होने लगा। अब यह माध्यमिक स्तर में ऊपर की शिक्षा देने वाली संस्थाओं के लिए प्रयोग होता है। यह उत्तर किशोरावस्था के छात्रों के लिए माध्यमिक स्तर के बाद तथा विश्वविद्यालयीय शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर की संस्था है।

कार्य सन्तुष्टि- कार्य सन्तुष्टि से आशय किसी व्यक्ति या कर्मचारी के कार्यक्षेत्र के समस्त क्षेत्रों से कार्य में ली जाने वाली रूचि से है। कार्य सन्तुष्टि द्वारा व्यक्ति अपने कार्य में संलग्नता बनाये रखता है तथा बिना किसी रूकावट के वह अपने कार्य को पूरे मनोयोग के साथ पूरा करता है। कार्य सन्तुष्टि जहाँ व्यक्ति को सुखमय जीवन प्रदान करता है वहीं समाज का भी प्रकारान्तर से हित होता है। किसी उद्योग या प्रबन्ध से जुड़े नियोजकों को अपने कर्मचारियों के कृत्य सन्तोष से लाभ प्राप्त होता है। कार्य सन्तुष्टि किसी कर्मचारी द्वारा प्राप्त की जाने वाली अनेक अभिरूचियों का परिणाम है जो उसके कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित होती है।

समायोजन क्षमता - समायोजन एक द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की प्राप्ति के लिए स्वयं से तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के बीच सामंजस्यपूर्ण संतुलन स्थापित करता है। यह व्यक्ति की वह विशिष्ट समता है जो उसे विभिन्न परिस्थितियों में तालमेल स्थापित करने में सहायक है। वर्तमान में कार्य सन्तुष्टि को कार्य चुनौतियों के साथ तालमेल बनाने की कला माना जाता है। प्रत्येक कर्मचारी यह जानता है कि वह अपने कार्य से तभी सन्तुष्ट रह सकता है जब वह अपने व्यवसाय, सहयोगियों तथा वातावरण के साथ समायोजित हो। जो कर्मचारी अपने व्यवसाय, सहयोगियों, वातावरण तथा नियोजकों के साथ समायोजन स्थापित करने में जितना अधिक सक्षम होते हैं वे अपने व्यवसाय से उतना अधिक सन्तुष्ट रहते हैं। इसलिए समायोजन क्षमता को कार्य सन्तुष्टि की धुरी कहा जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
3. निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
2. राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
3. निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श - प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में अध्ययन राजस्थान राज्य के जयपुर संभाग के राजकीय एवं निजी अकादमिक महाविद्यालयों के 200 पुरूष व 200 महिला शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :-

1. कार्य संतोष मापनी (प्रमोद कुमार एवं डी. एन. मुथा)
2. समायोजन मापनी (डॉ. एस. के. मंगल)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन -

(1) अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या - 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :-परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार अकादमिक महाविद्यालया के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.132 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना अकादमिक महाविद्यालया के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि अकादमिक महाविद्यालया के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता

में सार्थक सहसम्बन्ध पाया गया।

(2) राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.168 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता में सार्थक सहसम्बन्ध पाया गया।

(3) निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 3 के अनुसार निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.211 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमत में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष व समायोजन क्षमता में सार्थक सहसम्बन्ध पाया गया

शैक्षिक सुझाव:

1. कक्षा में सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण कर विद्यार्थियों की सक्रिय भागीदारी बढ़ा सकते हैं।
2. सहयोगी शिक्षकों के साथ बेहतर समन्वय से शैक्षणिक कार्य अधिक प्रभावी बना सकते हैं।
3. कठिन परिस्थितियों में धैर्य और विवेकपूर्ण निर्णय की क्षमता को बढ़ा सकते हैं।
4. विद्यार्थियों की विविध पृष्ठभूमियों को समझकर शिक्षण विधि में लचीलेपन का प्रयोग कर सकते हैं।
5. तनाव को कम करके अपने स्वास्थ्य व कार्यक्षमता को संतुलित रख सकते हैं।
6. आत्मविश्वास में वृद्धि कर प्रशासनिक कार्यों को अधिक सहज बना सकते हैं।
7. विवाद स्थितियों में मध्यस्थता का कौशल विकसित कर संस्थान में सौहार्द बढ़ा सकते हैं।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोध में मात्र 400 शिक्षकों का न्यादर्श लिया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।
2. कार्य संतोष को प्रभावित करने वाले पारिवारिक, सामाजिक और संस्थागत कारकों पर गहराई से शोध किया जा सकता है।
3. समायोजन क्षमता और मानसिक स्वास्थ्य के पारस्परिक सम्बन्ध को विस्तृत रूप से जांचा जा सकता है।
4. दीर्घकालिक अध्ययन शिक्षकों के व्यवहार में समयानुसार होने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष–40, अंक–10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. अग्रवाल, मिनाक्षी (1991)–'जॉब सेटिसफेक्शन ऑफ टीचर्स इन रिलेशन टू सम डेमोग्राफिक वेरियेबल्स एण्ड वैल्यूज पीएच.डी. इन एजूकेशन, आगरा : यूनिवर्सिटी, फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, एम.बीबुच।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
6. गुप्ता. एस.पी. (1998). ए स्टडी ऑफ जॉब सेटिसफेक्शन एट थ्री लेवल्स ऑफ टीचिंग. डी.इन एजूकेशन, मेरठ यूनिवर्सिटी, थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन. एम.बी. बुच।
7. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट
8. सिंह, पूनम (2007) इफेक्ट ऑफ स्टेस ऑन जॉब सेटइजफेक्शन एण्ड वर्क वेल्यूज अमंग टीचर्स. न्यू देहली: अध्ययन पब्लिकेशन्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष	400	18.27	3.491	0.132	अस्वीकृत
अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की समायोजन क्षमता	400	34.59	9.254		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष	200	18.34	3.839	0.168	अस्वीकृत
राजकीय अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की समायोजन क्षमता	200	32.48	9.717		

सारणी संख्या – 3

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतोष	200	17.24	3.442	0.211	अस्वीकृत
निजी अकादमिक महाविद्यालयों के शिक्षकों की समायोजन क्षमता	200	33.42	8.418		

****

महात्मा गाँधी की बेसिक शिक्षा एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के प्रारम्भिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उपादेयता

डॉ. किरण गिल* सुरेश**

* सहायक प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है कि महात्मा गाँधी की बेसिक शिक्षा एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के प्रारम्भिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उपादेयता का अध्ययन करना है तथा शोधकर्ता द्वारा अध्ययन हेतु प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता द्वारा ऐतिहासिक, दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया है।

शब्द कुंजी – बेसिक शिक्षा, प्रारम्भिक शिक्षा।

प्रस्तावना – दर्शन एक सम्पूर्ण ज्ञान है जबकि शिक्षा एकांगी एवं तकनीकी, जीव विज्ञान, इत्यादि के क्षेत्रों में पृथक–पृथक ज्ञान है जिसका एक दूसरे से विशेष सम्बन्ध नहीं है। अत: दर्शन ही एक ऐसा विषय है जिसकी आवश्यकता दार्शनिक क्षेत्र के अतिरिक्त सभी प्रकार के विज्ञानों में पड़ती है। ज्ञान के सभी क्षेत्रों में अन्तिम प्रश्न क्यों का है। आज के वैज्ञानिक तथा तकनीकी युग में प्रत्येक मानव के मन में एक प्रकार की अशान्ति की ज्वाला धधक रही है एवं मनुष्य इससे मुक्ति पाना चाहता है। परन्तु यह शान्ति केवल दर्शन ही दे सकता है, विज्ञान या तकनीकी नहीं। क्योंकि केवल दर्शन के माध्यम से ही मनुष्य यह जान सकता है कि जीवन का सत्य क्या है तथा उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है। प्राचीन काल से वर्तमान काल के दार्शनिकों के मन में यह पूर्ण विश्वास है कि मानव एक वृहद विश्व व्यवस्था का एक अंश है। अत: यह अनिवार्य सत्य है कि प्रत्येक शिक्षा का उद्देश्य यही होना चाहिए कि शिक्षार्थी इस वृहद सृष्टि में अपना स्थान और आत्मोन्नति का ज्ञान प्राप्त करें।

उपरोक्त उक्तियों की सत्यता एक संक्षिप्त उदाहरण से ही प्रमाणित हो जायेगी यदि हम एक ओर फास्ट एलास्टर, न्यूटन इत्यादि और दूसरी ओर बुद्ध, क्राइस्ट सुकरात इत्यादि को देखें तो हमें तत्काल ही यह प्रतीत हो जायेगा कि वैज्ञानिकों ने किसी स्थिर सिद्धान्त की शान्ति को किसी भी प्रकार नहीं प्राप्त किया जबकि महान दार्शनिकों ने मानव तथा विश्व सृष्टि के घनिष्ट सम्बन्ध को निश्चित रूप से ज्ञात कर पूर्ण शान्ति को प्राप्त कर लिया। फास्टतथा एलेस्टर सारे जीवन तक वैज्ञानिक गवषेणा करते रहें, परन्तु सत्य का अन्वेषण न कर सकने के कारण, अन्त में आत्महत्या करने पर दृढ़ हो गये।

शोध अध्ययन का महत्व – वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था संक्रमण के दौर से गुजर रही है। जहाँ एक तरफ पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था है, तो वहीं दूसरी तरफ भारतीय शिक्षा प्रणाली है। पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था संकुचित मानसिकता एवं अति भौतिकता से ग्रसित है। क्योंकि इसके बुनियादी स्वरूप में ही गलत धारणा स्पष्ट झलकती है। उदाहरण स्वरूप हम मैकाले द्वारा शैक्षिक सुझाव के सन्दर्भ में दिये गये वक्तव्य को ले सकते हैं जिसमें स्पष्ट कहा गया कि – 'हमें ऐसे शिक्षित भारतीयों का वर्ग तैयार करना है जो रक्त एवं वर्ण से भारतीय होंगे परन्तु रूचि, विचार, आचरण एवं विद्वता में अंग्रेजा।' मैकाले के इस वक्तव्य का मन्तव्य स्पष्ट है कि शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ शिक्षित भारतीयों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना जो ब्रिटिश शासन में सहायक हो। मैकाले अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा मानसिक गुलाम बनाना चाहता था जिसका उदाहरण आज भी सर्वत्र हमें ब्रिटिश शासन के जीवन्त स्वरूप का अहसास कराता है। आज लगभग समस्त भारतीय युवा शाश्वत मूल्यों को ताक पर रखकर पाश्चात्य चकाचौंध में खोते जा रहे है। वहीं दूसरी तरफ भारतीय शिक्षा प्रणाली (प्राच्य) केवल भारतीय मूल्यों को पुनर्जीवन एवं पोषण प्रदान करती है। इस प्रकार उपर्युक्त दोनों पद्धतियाँ एकांगी हैं। अत: आवश्यकता एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था की है, जो दोनों पद्धतियों के गुणों को समग्रता से ध्यान देते हुए वर्तमान संदर्भ में लोक कल्याणकारी विचारों को आत्मसात करते हुये आगे बढ़ सके।

समस्या कथन – 'महात्मा गाँधी की बेसिक शिक्षा एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के प्रारम्भिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उपादेयता'

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. महात्मा गाँधी एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन करना।
2. महात्मा गाँधी एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगारे के दार्शनिक विचारों का अध्ययन।
3. महात्मा गाँधी एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगारे के शिक्षा–दर्शन का अध्ययन करना।

अनुसंधान विधि – प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता द्वारा ऐतिहासिक, दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया है।

निष्कर्ष – बेसिक शिक्षा एवं शान्ति निकेतन की प्रारम्भिक शिक्षा योजना के समग्र विश्लेषण के आधार पर हम नि:संकोच स्वीकार कर सकते है कि अनेकानेक समस्याओं से घिरे किसी भी विकासशील देश के उत्थान हेतु यह शिक्षा योजना अनुपम वरदान है। यह शिक्षा प्रणाली न तो परम्परागत प्रचलित शिक्षा के समान पुस्तकीय एवं अव्यवहारिक है और न ही वर्तमान परीक्षा एवं पठ्यक्रम रूपी जंजीरों से जकड़ी कोई जटिल दोषपूर्ण व्यवस्था है, बल्कि यह, शिक्षा प्रणाली के रूप में जीवन को सफल बनाने का नया तरीका है।

श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर शिक्षा को केवल आध्यात्मिक अथवा बौद्धिक राज की प्राप्ति ही नही मानते थे बल्कि वह शिक्षा को शारीरिक, आर्थिक सामाजिक मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास हेतु आवश्यक समझते थे। इसके द्धारा मनुष्य में विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास होता है। अत: वर्तमान समय में भी शिक्षा का यथार्थवादी दृष्टिकोण होना चाहिए जिसके अन्तर्गत केवल ज्ञानर्जन करना ही नहीं बल्कि बालक का सर्वांगीण विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. उप्पल, श्वेता (2005), जरनल ऑफ वेल्यू एजूकेशन, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.), वाल्यूम-4, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-110016
2. इलाचन्द, जोशी (2006), विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, भारतीय विद्याभवन, इलाहाबाद: राजकमल प्रकाशन, संस्करण।
3. ओड, डॉ. लक्ष्मीकान्त (2001), शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, जयपुर: राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. अग्रवाल, जे. सी. (2002), लैण्डमार्क्स इन दि हिस्ट्री ऑफ मार्डन इण्डियन एजूकेशन, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि.।
5. आर.के. त्रिपाठी (2002), स्वामी विवेकानन्द के वेदान्त दर्शन का अध्ययन तथ नवीन शिक्षा नीति में इनके शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन, पी-एच. डी. शिक्षाशास्त्र, कानपुर: सी.एस.जे.एम.।

****

डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. गोविन्द सोनी* वरियाम खान**

* सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। यह अध्ययन राजस्थान राज्य के हनुमानगढ़ जिले के डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे कुल 600 प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श के रुप में यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है। डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे कुल 600 डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों में से 300 पुरूष प्रशिक्षणार्थी व 300 महिला प्रशिक्षणार्थी को सम्मिलित किया गया। 'डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता पर पड़ने वाले प्रभावों जानने हेतु दुश्चिन्ता मापनी (प्रो. डी. सिन्हा) द्वारा निर्मित एवं व्यक्तित्व मापनी (कैटेल 16 पी. एफ.) का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया य'डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी, दुश्चिन्ता, व्यक्तित्व।

प्रस्तावना – शिक्षक इस परिवर्तन का केन्द्रीय तत्व होता है। वह ज्ञान का संवाहक ही नहीं, बल्कि मूल्य, संस्कृति और नैतिकता का संरक्षक भी है। शिक्षक ही वह माध्यम है जिसके द्वारा शिक्षा के आदर्श, व्यवहारिक जीवन में उतरते हैं। शिक्षक का व्यक्तित्व जितना सशक्त, संतुलित और सृजनशील होगा, उतना ही शिक्षण का प्रभाव विद्यार्थियों के जीवन में दिखाई देगा। शिक्षक शिक्षा का उद्देश्य इसीलिए केवल शिक्षण तकनीकों का प्रशिक्षण नहीं, बल्कि ऐसे शिक्षक तैयार करना है जिनमें सृजनात्मकता, संवेदनशीलता, सहानुभूति, आत्म-नियंत्रण, सामाजिक दायित्व और मानवीय दृष्टिकोण का समुचित विकास हो।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए गए हैं, जिनमें 'डी.एल.एड.' एक प्रमुख पाठ्यक्रम है। यह कार्यक्रम शिक्षण के प्रारंभिक स्तर के लिए प्रशिक्षित, दक्ष एवं उत्तरदायी शिक्षकों को तैयार करने का माध्यम है। डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी वह भावी शिक्षक होता है जो बालकों के जीवन की नींव तैयार करने का कार्य करेगा। इसलिए उसके व्यक्तित्व का संतुलन, मानसिक स्वास्थ्य, सृजनात्मक दृष्टि और शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृति अत्यंत आवश्यक है। यदि प्रशिक्षण के दौरान ही इन गुणों का विकास नहीं होता, तो भविष्य में शिक्षक अपनी भूमिका का निर्वाह प्रभावी ढंग से नहीं कर पाएगा।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली वैश्वीकरण, वैज्ञानिक प्रगति, सूचना तकनीकी और सामाजिक परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। आधुनिक युग की चुनौतियाँ शिक्षण को एक गतिशील, जटिल और प्रतिस्पर्धी प्रक्रिया बना चुकी हैं। ऐसे में शिक्षक को केवल विषय ज्ञान नहीं, बल्कि मानसिक स्थिरता, भावनात्मक बुद्धिमत्ता और नवाचारी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है, क्योंकि यही वह अवस्था है जिसमें भावी शिक्षक के व्यक्तित्व की बुनियाद रखी जाती है।

डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व पर अनेक मनोवैज्ञानिक कारक प्रभाव डालते हैं। इनमें से प्रमुख हैं 'दुश्चिन्ता' । यह तत्व व्यक्ति के विचार, व्यवहार, आत्म-विश्वास और पेशेवर दक्षता को गहराई से प्रभावित करते हैं। एक सृजनशील व्यक्ति नई परिस्थितियों में स्वयं को ढाल सकता है, चुनौतियों का समाधान खोज सकता है और कार्य में आनंद प्राप्त करता है। वहीं अत्यधिक दुश्चिन्ता व्यक्ति की मानसिक क्षमता को बाधित करती है, उसकी निर्णय शक्ति कमजोर करती है और आत्म-विश्वास को कम करती है। अभिवृति वह मानसिक प्रवृत्ति है जो व्यक्ति के सोचने और व्यवहार करने की दिशा निर्धारित करती है। यदि प्रशिक्षणार्थी की अभिवृति शिक्षा, विद्यार्थियों और अपने पेशे के प्रति सकारात्मक होगी, तो उसकी कार्य दक्षता स्वत: बढ़ेगी।

शिक्षण प्रभावशीलता का आधार शिक्षक का व्यक्तित्व है। और व्यक्तित्व की नींव भावनात्मक स्थिरता, आत्म-ज्ञान, रचनात्मक सोच और जीवन दृष्टि पर टिकी होती है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान का वातावरण, प्रशिक्षक शिक्षक का मार्गदर्शन, सहपाठियों का सहयोग और प्रशिक्षण के दौरान आने वाली परिस्थितियाँ कृ सभी मिलकर प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व के विकास में योगदान देती हैं। यदि यह वातावरण सहयोगी, प्रेरक और रचनात्मक होगा, तो प्रशिक्षणार्थी में सृजनात्मकता का विकास होगा, दुश्चिन्ता कम होगी और शिक्षा के प्रति उसकी अभिवृति सकारात्मक बनेगी।

प्रशिक्षण की प्रक्रिया में अनेक मानसिक दबाव और चिंताएँ भी उत्पन्न होती हैं। परीक्षा का भय, मूल्यांकन का दबाव, सहपाठियों से तुलना, भविष्य की नौकरी की चिंता, शिक्षकों की अपेक्षाएँ ये सभी दुश्चिन्ता के प्रमुख स्रोत

हैं। यदि यह चिंता संतुलित स्तर पर रहे तो यह प्रेरणा का कार्य करती है, परंतु अत्यधिक होने पर यह कार्य क्षमता को घटा देती है। इसलिए प्रशिक्षणार्थियों में दुश्चिन्ता के स्तर को समझना और उसका उचित प्रबंधन आवश्यक है।

अभिवृति का संबंध व्यक्ति की सोच की दिशा से है। सकारात्मक अभिवृति रखने वाला प्रशिक्षणार्थी हर परिस्थिति में सीखने का अवसर खोजता है, जबकि नकारात्मक अभिवृति वाला व्यक्ति असफलता से भयभीत रहता है। शिक्षक के लिए सकारात्मक अभिवृति इसलिए आवश्यक है क्योंकि वह विद्यार्थियों के लिए आदर्श होता है। उसकी सोच और व्यवहार विद्यार्थियों में प्रत्यक्ष रूप से प्रतिबिंबित होते हैं। इसलिए शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान ऐसी गतिविधियाँ शामिल की जानी चाहिएँ जो अभिवृति को सकारात्मक दिशा प्रदान करें।

व्यक्तित्व का विकास केवल जैविक या आनुवांशिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह निरंतर अनुभव, परिवेश और आत्म-चिंतन से निर्मित होता है। डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी शिक्षण के दौरान जब विद्यार्थियों के साथ संवाद करते हैं, पाठ पढ़ाते हैं, सहकर्मियों के साथ कार्य करते हैं और समाज से जुड़ते हैं, तब उनका व्यक्तित्व परिपक्व होता है।

प्रस्तुत शोध का महत्व –शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका लक्ष्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएँ, विशेषकर डी.एल.एड. कार्यक्रम, ऐसे भावी शिक्षकों का निर्माण करती हैं जो बालकों के जीवन की दिशा निर्धारित करते हैं। डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी भविष्य के प्राथमिक शिक्षक होते हैं, जिनके माध्यम से समाज की नई पीढ़ी को मूलभूत मूल्य, ज्ञान और संस्कार प्राप्त होते हैं। अतः इन प्रशिक्षणार्थियों का व्यक्तित्व, उनकी अभिवृति, सृजनात्मकता तथा दुश्चिन्ता का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है क्योंकि इन्हीं तत्वों के माध्यम से यह जाना जा सकता है कि एक प्रशिक्षु शिक्षक भविष्य में अपने विद्यार्थियों को किस प्रकार शिक्षण और मार्गदर्शन प्रदान करेगा।

दुश्चिन्ता भी व्यक्तित्व के विकास में एक महत्वपूर्ण बाधा उत्पन्न करती है। आज का विद्यार्थी अनेक सामाजिक, आर्थिक और प्रतिस्पर्धात्मक दबावों से घिरा हुआ है, जिससे उसकी मानसिक स्थिरता प्रभावित होती है। डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी भी इन परिस्थितियों से अछूते नहीं हैं। प्रशिक्षण के दौरान शिक्षण-अभ्यास, मूल्यांकन, सामाजिक अपेक्षाएँ और भविष्य की असुरक्षा जैसी परिस्थितियाँ उनमें तनाव और दुश्चिन्ता उत्पन्न कर सकती हैं। अत्यधिक दुश्चिन्ता व्यक्ति के आत्मविश्वास, निर्णय क्षमता और सृजनात्मक सोच को प्रभावित करती है, जिससे उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास बाधित हो जाता है। अतः इस शोध का उद्देश्य यह जानना है कि किस सीमा तक दुश्चिन्ता व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों पर प्रभाव डालती है, ताकि प्रशिक्षण संस्थाएँ प्रशिक्षणार्थियों को मानसिक रूप से सशक्त बना सकें।

अभिवृति व्यक्तित्व का वह पहलू है जो यह निर्धारित करता है कि व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में कैसा व्यवहार करेगा। सकारात्मक अभिवृति से युक्त व्यक्ति चुनौतियों को अवसरों में बदलने की क्षमता रखता है, जबकि नकारात्मक अभिवृति वाला व्यक्ति आसानी से हतोत्साहित हो जाता है। शिक्षक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिए यह विशेष रूप से आवश्यक है कि वे शिक्षा, विद्यार्थियों, समाज और अपने पेशे के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखें। यदि डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की अभिवृति रचनात्मक और आशावादी होगी, तो उनके व्यक्तित्व का विकास अधिक संतुलित होगा और वे शिक्षण के क्षेत्र में बेहतर प्रदर्शन कर सकेंगे। इसलिए अभिवृति का व्यक्तित्व पर प्रभाव जानना शिक्षा शास्त्र की दृष्टि से अत्यंत प्रासंगिक है।

यह अध्ययन वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में बढ़ते मानसिक तनाव, असंतोष और प्रतिस्पर्धा के परिप्रेक्ष्य में और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षणार्थियों की सृजनात्मकता, अभिवृति और दुश्चिन्ता के स्तर की पहचान कर उनके व्यक्तित्व विकास के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण रणनीतियाँ विकसित की जा सकती हैं। इस प्रकार यह अध्ययन शिक्षण-प्रशिक्षण की गुणवत्ता में सुधार लाने में सहायक सिद्ध होगा। इसके अतिरिक्त, यह शोध नीति-निर्माताओं, शिक्षा-शास्त्रियों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है। शोध के निष्कर्षों के आधार पर प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में ऐसे घटक शामिल किए जा सकते हैं जो प्रशिक्षणार्थियों की रचनात्मकता को बढ़ाएँ, दुश्चिन्ता को कम करें और सकारात्मक अभिवृति का निर्माण करें। इससे न केवल उनका व्यक्तित्व निखरेगा, बल्कि वे समाज में परिवर्तन के प्रेरक तत्व के रूप में अपनी भूमिका प्रभावी ढंग से निभा सकेंगे।

शोध की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि व्यक्तित्व एक गतिशील संरचना है जो निरंतर अनुभवों और सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होती है। डी.एल.एड. प्रशिक्षण के दौरान छात्रों को न केवल शैक्षिक ज्ञान प्राप्त होता है, बल्कि वे सामाजिक, भावनात्मक और व्यवहारिक दृष्टि से भी विकसित होते हैं। यदि इस अवधि में उनके व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले तत्वों की पहचान की जाए, तो भविष्य में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

वर्तमान समय में शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे केवल ज्ञान-संप्रेषक न होकर छात्रों के जीवन में प्रेरणा स्रोत भी बनें। ऐसे में, प्रशिक्षणार्थियों का व्यक्तित्व, उनकी सोच, अभिवृति और मानसिक स्वास्थ्य शिक्षा के गुणात्मक सुधार में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। यदि उनका व्यक्तित्व सशक्त और संतुलित होगा, तो वे समाज में परिवर्तन के वाहक बनेंगे। अतः इस अध्ययन की उपयोगिता न केवल शैक्षिक मनोविज्ञान की दृष्टि से बल्कि सामाजिक एवं राष्ट्रीय दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अंततः, 'डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' वर्तमान शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में एक अत्यंत आवश्यक एवं सार्थक शोध है। यह अध्ययन शिक्षक प्रशिक्षण प्रणाली को अधिक मानव-केंद्रित, मनोवैज्ञानिक रूप से सशक्त और रचनात्मक बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण योगदान देगा। इसके परिणाम शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में नए दृष्टिकोणों को जन्म देंगे, जिससे आने वाली पीढ़ी के शिक्षक अधिक संवेदनशील और संतुलित व्यक्तित्व वाले बन सकेंगे।

समस्या कथन – 'डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों की सृजनात्मकता, दुश्चिन्ता, अभिवृति का व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

डी. एल.एड. प्रशिक्षणार्थी – राज्य सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा संचालित जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान एवं निजी संस्थानों में द्वि-वर्षीय पाठ्यक्रम में अध्ययन करने वाले छात्राध्यापकों को डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थी कहते है। ये प्रशिक्षणार्थी द्वि-वर्षीय पाठ्यक्रम पूरा करने के पश्चात प्राथमिक स्तर के विद्यालयों में कक्षा 1 से 5 तक के विद्यार्थियों को

अध्ययन करवाते है। प्राथमिक शिक्षा उच्च शिक्षा का आधार है। इसलिए इस स्तर की शिक्षा के लिए उत्तम प्रशिक्षण देना अनिवार्य है।

दुश्चिन्ता – दुश्चिन्ता शब्द अंग्रेजी के (Anxiety) का हिन्दी रूपान्तरण है जिसका हिन्दी में अर्थ 'उद्धेलना की स्थिति' है। मन की अत्यधिक तनावपूर्ण स्थिति ही दुश्चिन्ता है कार्य की सफलता तक कार्य के बारे में अनावश्यक संदेह की भावना उस कार्य के प्रति दुश्चिन्ता है।

फ्रायड के अनुसार – 'दुश्चिन्ता मन, स्नायु, विकृति लैंगिक वासना के दमन का कारण है।'

मूलभूत चिन्ता 'हॉर्नी' के व्यक्तित्व सिद्धान्त का महत्वपूर्ण प्रत्यय है। 'मूलभूत चिन्ता' अपने को असहाय समझने की भावना है, जिससे व्यक्ति अपने को बिल्कुल अकेला तथा सामाजिक वातावरण को विरोधी तथा भयावह समझता है। यह 'मूलभूत चिन्ता' व्यक्ति की चिन्ता की भावना तथा माता–पिता के तिरस्कारपूर्ण व्यवहार से उत्पन्न विरोध की भावना की अन्तक्रिया का परिणाम है।

व्यक्तित्व – शिक्षा का आधुनिक उद्देश्य पूर्ण एवं सन्तुलित व्यक्तित्व का विकास करना है। शिक्षा शास्त्री और मनोवैज्ञानिक व्यक्ति के सन्तुलित विकास के कार्य में लगे हुए हैं। अत: व्यक्तित्व मनोविज्ञान तथा शिक्षा दोनों का मूल आधार है। मनोविज्ञान और शिक्षा दोनों का समध ज्ञान अन्तत: व्यक्तित्व के विकास तथा उसके ज्ञान के साथ सम्बन्धित है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में हनुमानगढ़ जिले के डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे कुल 600 प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श के रुप में यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है। डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे कुल 600 डी.एल.एड. प्रशिक्षणार्थियों में से 300 पुरूष प्रशिक्षणार्थी व 300 महिला प्रशिक्षणार्थी को सम्मिलित किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. दुश्चिन्ता मापनी (प्रो. डी. सिन्हा)
2. व्यक्तित्व मापनी (कैटेल 16 पी. एफ.)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

(1) डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या :–परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की दुश्चिन्ता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

(2) डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अत: यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि डी.एल.एड. महाविद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें डी.एल.एड. पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के व्यक्तित्व में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शैक्षिक सुझाव:

1. प्रशिक्षण में रचनात्मक गतिविधियों का समावेश करें।
2. प्रशिक्षण मूल्यांकन प्रणाली में मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक पक्षों को भी महत्व दें।
3. प्रशिक्षण के दौरान छात्रों की प्रतिक्रियाओं और समस्याओं को सुनने हेतु।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. न्यादर्श के लिए बड़े न्यादर्श का चयन किया जा सकता है इसके लिए विद्यालयों तथा विद्यार्थियों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।
2. भावी शोध में डी.एल.एड. महाविद्यालया स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के प्रशिक्षणार्थियों की समस्याओं, सृजनात्मकता का अध्ययन किया जा सकता है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्ता ने डी.एल.एड. महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों को ही शामिल किया है। आगामी शोध के लिए बी. एड./ बी.ए. बी.एड./ बी. एस. सी. बी. एड. आदि महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों को भी लिया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऐशले के. वैसले, अलेक्जेण्टर बी सीजलिंग, डोनाल्ड एच (2012) जेन्डर–लिंकट पर्सनैलिटी एण्ड मेन्टल हेल्थ दि रोल आफ ट्रेड इमोशनल इनटेलीजेंस, पर्सनैलिटी एण्ड इन्डीविडुअल डिफरेन्सेस पर अध्ययन किया। ऑनलाइन पब्लिकेशन दिनाक 1 सित. 2012
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. गुप्ता, प्रो. एस. पी. एवं गुप्ता, डॉ. अलका. (2003) आधुनिक मापन

एवं मूल्यांकन. इलाहाबादः शारदा पुस्तक भवन
4. चौधारी, एम.: रिलेशनशिप बिटबिन, एचीवमेन्ट, मोटीवेशन, एग्जाइटी, इन्टेलीजेन्स, सेम्स, सोशियल क्लाश एण्ठ वोकेशनल ऐशपायरेशन (पी–एच.डी.) पंजाब विश्वविद्यालय पजाब, पेज–207।।
5. लक्ष्मी, एस., कन्डिशनिग एचीवमेन्टएण्ड मोटीवेशन डिवलपमेन्ट प्रोग्राम आन टीचर ट्रेनीज एण्ड स्टडी देयर इफेक्ट, आन देयर परफार्मेन्स (पी–एच.डी. मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर) पेज– 109।
6. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
7. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407–430)
8. दयाल, गोया टी. दी इफेक्ट आफ टेस्ट एग्जाइटी, इन्टेलीजेन्स एण्ड सेन्त आन चिल्ड्रेन्स प्रोब्लम सात्विग एडल्ट्स पी–एच. डी. वीन स्टेट युनिवर्सिटी यू.एस.ए. 1972. पेज–1021
9. पूजा चटर्जी, ऐनक्जायटी एमन्ग हाई स्कूल स्टूडेन्स इन इण्डिया काम्पैरिशन्स एक्रास जेन्टर, स्कूल टाइप, सोसल स्ट्रेटा एण्ठ पर्सपिक्शन्स आफ क्यालिटी टाइम विद पैरेन्ट्स (आस्ट्रेलिन जर्नल आफ एजूकेशनल एण्ठ डेवलपमेट) वाल्यू 10. 2010
10. पासी, बी.के. एवं ललिथा, एम.एस., जनरल टीचिंग कम्पीटेन्सी स्केल, नेशनल सॉइकोलॉजी कार्पोरेशन, आगरा : भार्गव भवन, 4/230, कचेहरी घाट
11. बरगर एवं सुकर (1956) बरगर एण्ट सुकर रिव्यू ऑफ आफ एजूकेशनल रिसर्च (1971) वाल्यूम 14, घेप्टर आन स्कूल एचीवमेंट एण्ट टेलीकेन्सी।
12. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
डी.एल.एड. पुरूष प्रशिक्षणार्थी की दुश्चिन्ता	300	71.27	10.333	0.363	स्वीकृत
डी.एल.एड. महिला प्रशिक्षणार्थी की दुश्चिन्ता	300	71.78	10.595		

सारणी संख्या – 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमापविचलन	टी मूल्य	सार्थकता का स्तर
डी.एल.एड. पुरूष प्रशिक्षणार्थी का व्यक्तित्व	300	262.97	23.701	0.705	स्वीकृत
डी.एल.एड. महिला प्रशिक्षणार्थी का व्यक्तित्व	300	264.41	26.082		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

India's Role in Reinvigorating Multilateralism : A Critical Evaluation of Its G20 Strategies

Dr. Swati Thakur*

***Associate Professor (Political Science and Public Administration) Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Lucknow (U.P.) INDIA**

Abstract: Multilateralism is essential for preserving international peace, tackling global challenges, and guaranteeing fair and lawful global government. Multilateralism enhances the international system's ability to successfully address crises and manage diversity in a complex, interconnected world by fostering cooperation, inclusion, and rule-based decision-making. G20 is an important instrument multilateralism. India has played a significant role in the G20. This paper critically evaluates India's role in reinvigorating multilateralism through G20.
Keywords: Multilateralism, G20, India, Global South.

Introduction - The current international system is characterised by multilateralism. Generalised standards of conduct, agreed-upon regulations, and institutionalised procedures form the basis of this type of international collaboration, which involves three or more governments. It suggests international relations legitimacy, predictability, and reciprocity, moving beyond ad hoc coordination. The Group of Twenty (G20) is a prominent modern forum for informal multilateralism. Initially established among finance ministers in 1999 and elevated to a leaders' summit in 2008, the G20 unites significant developed and emerging economies to synchronise responses to global economic and governance concerns. Amidst the decline of conventional multilateral institutions and escalating geopolitical tensions, the G20 serves as a pragmatic platform for maintaining global collaboration. The formation of the G-20 reflected the significant changes in the international economic landscape over the previous decades. It accounts for around 85% of world GDP, more than 75% of global trade and around two-thirds of the planet's population[1]. The growing importance of emerging economies, together with the increasing integration of the global economy and financial markets, highlights the need to widen the scope of international economic and financial cooperation. As part of its mandate, the G-20 was tasked with assisting in the formation of the international agenda, addressing economic and financial concerns in instances where a consensus had not yet been reached, and "leading by example." In particular, the Group was considered to be an essential venue for the discussion of measures to prevent and resolve financial crises that occur on a global scale. The G20 is a multinational mechanism that is not based on treaties and is driven by consensus. In contrast to formal organisations such as the United Nations or the World Trade Organisation, the G20 does not have a permanent secretariat and does not make agreements that are legally binding. That is primarily dependent on political will and the influence of peers. This informal structure provides for flexibility, swift decision-making, and adaptation to developing global concerns. As a result, the G20 has become a platform for problem-solving rather than an institution that enforces rules.

India and the G20: Historical Trajectory: India was one of the original members of the G20. It was a reflection of its rising economic size and commercial potential, its greater integration into the global economy following the economic reforms that took place in 1991, and its recognition of its role as a representative of developing and emerging economies. During this period, the G20 largely served as a forum for finance ministers and governors of central banks, with the primary focus being on the maintenance of macroeconomic stability, the regulation of financial markets, and the prevention of crises. India's strategy during this period was influenced by its status as a developing economy, awareness of external conditions, and dedication to strategic autonomy in global economic governance. The G20 was perceived primarily as a technical coordination gathering rather than a significant platform for geopolitical or normative leadership.

The 2008 Global Financial Crisis signified a pivotal moment for the G20 and for India's involvement therein. The upgrading of the G20 to a Leaders' Summit status converted it into the foremost forum for international economic collaboration. India's involvement throughout this period became increasingly forceful and prominent. India endorsed a unified fiscal boost to stabilise the global

economy. It fervently supported reforms of IMF quotas and governance to accurately represent the realities of emerging economies. India underscored the necessity of safeguarding developing nations from the repercussions of financial crises emanating from industrialised economies. This time signified India's evolution from a participant to a stakeholder with the ability to shape the agenda inside the G20.

The political leadership of India underwent a change in 2014, which resulted in India's engagement with the G20 becoming more strategically integrated with its broader foreign policy aims. Establishing a connection between India's participation in the G20 and its goal of becoming a leading power rather than a balancing power was one of the most important aspects of this phase. There should be a greater emphasis placed on the establishment of norms, particularly in areas such as environmentally responsible growth, financial inclusion, and renewable energy. Participation in discussions regarding the plans for global growth and the structural improvements that are possible. Additionally, India started to present itself as a bridge between rich nations and emerging economies, which strengthened its middle-power diplomacy inside the G20.

India's G20 Strategies for Reinvigorating Multilateralism: India's G20 strategies should be contextualised within a larger systemic problem of multilateralism that has developed over the last two decades and has deepened after 2008. This crisis signifies not the outright collapse of international institutions, but rather a deterioration in their efficacy, legitimacy, and capacity to resolve issues. Certain developments are notably consequential. The escalating great-power competition, particularly between the United States and China, as well as Russia and the West, Stagnation in formal institutions like the UN Security Council and WTO, diminishing trust between the Global North and Global South, global crises particularly in financial instability, climate change, and pandemic recovery. These issues necessitated collaborative resolutions. In this backdrop, India perceived the G20 as a versatile yet powerful forum for revitalising international collaboration, unencumbered by inflexible institutional impasses. In the past India seemed to focus on just one kind of multilateralism- the UN and the NAM. New Delhi now participates in multiple kinds of multilateral institutions. This diversity of India's multilateralism reflects the structural imperatives of global politics[2].

Under the leadership of Prime Minister Modi, India invoked the concept of 'VasudhaivaKutumbakam', which translates to "One Earth, One Family, One Future." This idea was not merely symbolic; it served to emphasise ethical multilateralism over transactional diplomacy, reinforce shared responsibility for global public goods, and re-legitimize cooperation during a time of polarisation.Through adopting this perspective, India was able to establish itself as a norm entrepreneur, so promoting the principles of inclusion, sustainability, and collective well-being. Instead of viewing multilateral cooperation as a transactional or power-driven activity, India aimed to recast it as a moral and collective responsibility within the context of the international community.

In the course of its presidency of the G20, India made a conscious decision to broaden the scope of the G20 agenda to include climate action and green development, digital public infrastructure (DPI), inclusive growth and social protection, women-led development, disaster resilience, and health systems. By doing so, India aimed to turn the G20 from a limited forum for economic cooperation into a full international governance platform, hence increasing the significance of the group. The fundamental objective of India's policy was to establish itself as a bridge-builder between rich and developing economies, between competing power blocs (the G7 and BRICS), and between economic priorities and development imperatives. Throughout its history, India has often avoided ideological alignment, placing an emphasis instead on strategic autonomy and debate. In spite of geopolitical pressures, notably those associated with the war between Russia and Ukraine, this strategy was helpful in maintaining solutions that were driven by consensus. India enhanced multilateral legitimacy by prioritising Global South issues, such as sovereign debt distress, climate finance and adaptation funding, development financing gaps, and access to technology and digital divides.

India's Effectiveness at Johannesburg Summit: In order to evaluate India's efficacy within the G20, it is necessary to go beyond merely providing descriptive reports of initiatives and instead evaluate the consequences, limitations, and structural constraints. In this context, the term "effectiveness" refers to India's capacity to shape agendas, build consensus, translate normative concepts into institutional or policy outcomes, and enhance the legitimacy and functionality of multilateralism. Despite the fact that India's participation in the G20, particularly during its presidency, was widely seen as proactive and ambitious, the success of India's participation needs to be evaluated in a manner that is both critical and balanced.

This year the G20 summit took place at Johannesburg in South Africa. This summit was boycotted by America over allegations that South Africa was trying to prosecute its white African minority[3]. This vacuum left by US gave India an opportunity to step in.During the summit, Prime Minister Narendra Modi proposed six initiatives that India should lead in order to solve some of those concerns. In particular, he emphasised the necessity of rethinking the criteria of global development. A Traditional Knowledge Repository, a G20-Africa Skills Multiplier Initiative (in which India proposed to train one million people across Africa), a Global Healthcare Response Team, an Initiative on Countering the Drug–Terror Nexus, a "Open Satellite Data Partnership" to share information related to agriculture, fishing, and

disasters, and a "G20 Critical Minerals Circularity initiative" were some of the initiatives that were included in this list[4]. The problem of artificial intelligence was brought up during the summit that was held by the Prime Minister of India. He stated that it is the responsibility of the group to ensure that artificial intelligence is utilised for the benefit of the entire world and that its misuse be prevented. Creating a worldwide compact on artificial intelligence that is founded on certain basic principles is necessary in order to accomplish this goal. These principles include effective human oversight, safety-by-design, transparency, and stringent prohibitions on the use of AI in deepfakes, criminal activities, and terrorist activities[5].

The establishment of a G20 Global Healthcare Response Team is something that India has proposed. When it comes to dealing with things like natural catastrophes and health crises, Prime Minister Modi has stated that the world is stronger when we work together. As part of our efforts, we should work to establish teams of medical professionals from other G20 countries who have received training and are prepared to be sent quickly in the event of any crisis. India has proposed a G20 Initiative on Countering the Drug-Terror Nexus in order to address the problem of drug trafficking, particularly the proliferation of exceedingly hazardous chemicals such as fentanyl. He urged the world leaders to make the economy of drug-related terrorism weaker[6].

Conclusion: The domains in which India's G20 influence was restricted or merely symbolic illustrate the structural limitations of modern multilateralism rather than deficiencies in Indian leadership. Although India successfully influenced discourse, enhanced inclusion, and rejuvenated normative dedication to collaboration, significant structural reforms—especially in climate finance, global financial governance, and decision-making authority—continued to be unattainable. This highlights that symbolic and normative advancements are frequently the initial, nevertheless not conclusive, phase of multilateral revolution. Rather than relying on coercion or dominance, India's G20 policies constitute a significant attempt by a rising power to revitalise multilateralism through the use of ideas, inclusivity, and the forging of consensus. The leadership of India strengthened the normative foundations of global cooperation and boosted the G20's significance in a world order that is split. This was accomplished despite the fact that structural restrictions hampered the implementation of real reforms. To put it another way, India's effectiveness does not rest in radical reform; rather, it lies in stopping multilateralism from further declining and reframing it as something that is ethically anchored and development-oriented.

References:-

1. The world Economic Forum website https://www.weforum.org/stories/2025/11/g20-summit-what-you-need-to-know/
2. C. Raja Mohan, Cooperation Amid Conflict, Indian Express, March 01, 2023
3. Kiran D Tare, "The Summit without America", National Interest, 26th November 2025
4. The Hindu, November 25, 2025
5. The Hindu, November 23, 2025
6. The Print, https://theprint.in/india/pm-modi-calls-africas-first-g20-the-right-moment-to-revisit-develop-ment-parameters/2790148/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

किशोरों में मानसिक स्वास्थ्य और सोशल मीडिया उपयोग का संबंध का अध्ययन बलिया जनपद के विशेष संदर्भ में

डॉ. तृप्ति तिवारी*

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) जननायक चन्द्रशेखर विश्वविद्यालय, बलिया (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया किशोरों के जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गया है। किशोरावस्था मानसिक एवं भावनात्मक विकास की अत्यंत संवेदनशील अवस्था होती है। इस अवस्था में सोशल मीडिया का अत्यधिक या अनियंत्रित उपयोग किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डाल सकता है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सएप, यूट्यूब आदि प्लेटफॉर्म किशोरों को सामाजिक जुड़ाव, अभिव्यक्ति और सूचना का अवसर प्रदान करते हैं, किंतु इनके अत्यधिक उपयोग से तनाव, चिंता, आत्म–संतोष में कमी, नींद की समस्या और अवसाद जैसी मानसिक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य बलिया जनपद के किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग की प्रवृत्तियों तथा उसके मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना है। अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया तथा 13–19 वर्ष आयु वर्ग के किशोरों को नमूने के रूप में शामिल किया गया। प्राप्त परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया उपयोग और मानसिक स्वास्थ्य के बीच प्रत्यक्ष संबंध है। सीमित एवं नियंत्रित उपयोग लाभकारी है, जबकि अत्यधिक उपयोग मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध होता है।

प्रस्तावना – किशोरावस्था मानव जीवन का वह चरण है जिसमें व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और सामाजिक परिवर्तनों से गुजरता है। इस अवस्था में आत्म–पहचान, आत्म–सम्मान और सामाजिक स्वीकृति की आवश्यकता अधिक होती है। वर्तमान समय में तकनीकी विकास और इंटरनेट की उपलब्धता ने किशोरों के जीवन को पूरी तरह बदल दिया है। बलिया जनपद जैसे अर्ध–ग्रामीण क्षेत्र में भी सोशल मीडिया का तीव्र प्रसार हुआ है। किशोर बड़ी संख्या में स्मार्टफोन और इंटरनेट का उपयोग कर रहे हैं। जहाँ एक ओर यह ज्ञान और सूचना का माध्यम बन रहा है, वहीं दूसरी ओर यह मानसिक स्वास्थ्य के लिए नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत कर रहा है। इसी संदर्भ में यह अध्ययन महत्वपूर्ण है।

पूर्ववर्ती अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि:

1. Anderson (2020) ने पाया कि सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग किशोरों में तनाव और अवसाद को बढ़ाता है।
2. Kaur (2020) के अनुसार सोशल मीडिया पर तुलना की प्रवृत्ति आत्म–संतोष में कमी लाती है।
3. WHO (2021) ने किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर डिजिटल प्लेटफॉर्म के प्रभाव को एक वैश्विक चिंता बताया।
4. Singh (2022) ने भारत में शहरी किशोरों में सोशल मीडिया लत को मानसिक असंतुलन से जोड़ा।

इन अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि सोशल मीडिया और मानसिक स्वास्थ्य के बीच गहरा संबंध है। इसी आधार पर शोध अध्ययन के उद्देश्य अग्रलिखित है:

1. किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग की अवधि का अध्ययन।
2. किशोरों की मानसिक स्वास्थ्य स्थिति का विश्लेषण।
3. सोशल मीडिया उपयोग और मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध का अध्ययन।
4. ग्रामीण एवं शहरी किशोरों में अंतर का अध्ययन।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए निम्नलिखित परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया है :

1. सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।
2. सीमित सोशल मीडिया उपयोग मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है।
3. शहरी किशोर ग्रामीण किशोरों की तुलना में अधिक सोशल मीडिया उपयोग करते हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध पद्धति वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति की है। अध्ययन क्षेत्र उत्तार प्रदेश का बलिया जनपद है। तथ्यों के संकलन के रूप में 13–19 वर्ष आयु वर्ग के 150 किशोरों का चयन किया गया, जिनमें 75 ग्रामीण और 75 शहरी क्षेत्र से थे। न्यादर्श का चयन साधारण यादृच्छिक विधि से किया गया। प्रदत्त संग्रह के लिए प्रश्नावली, साक्षात्कार और अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया। प्रदत्त विश्लेषण के लिए प्रतिशत विधि और तुलनात्मक विश्लेषण अपनाया गया।

शोध विश्लेषण

तालिका – 01: किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग की अवधि

सोशल मीडिया उपयोग की अवधि	किशोरों की संख्या	प्रतिशत (%)
1–2 घंटे प्रतिदिन	38	25 %
2–4 घंटे प्रतिदिन	68	45 %

4-6 घंटे प्रतिदिन	30	20 %
6 घंटे से अधिक	14	10 %
कुल	150	100 %

तलिका-1 से यह स्पष्ट होता है कि बलिया जनपद के अधिकांश किशोर प्रतिदिन दो घंटे से अधिक समय सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। सर्वाधिक 45 प्रतिशत किशोर 2-4 घंटे प्रतिदिन सोशल मीडिया पर व्यतीत करते हैं, जो यह दर्शाता है कि सोशल मीडिया उनके दैनिक जीवन का नियमित हिस्सा बन चुका है। लगभग 30 प्रतिशत किशोर चार घंटे से अधिक समय सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, जो अत्यधिक उपयोग की श्रेणी में आता है। केवल 25 प्रतिशत किशोर ही सीमित समय (1-2 घंटे) तक सोशल मीडिया का उपयोग करते पाए गए। यह प्रवृत्ति यह संकेत देती है कि किशोरों में डिजिटल निर्भरता बढ़ रही है, जिसका सीधा प्रभाव उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ सकता है।

तालिका - 02: सोशल मीडिया उपयोग का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्या	किशोर (%)
तनाव	62 %
चिंता/बेचौनी	55 %
नींद की समस्या	48 %
आत्मविश्वास में कमी	41 %
चिड़चिड़ापन	39 %

तालिका-2 से यह स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है। अध्ययन में 62 प्रतिशत किशोरों ने तनाव की समस्या को स्वीकार किया, जो एक गंभीर संकेत है। 55 प्रतिशत किशोरों में चिंता एवं बेचौनी की स्थिति पाई गई, जिससे यह स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया पर निरंतर सक्रियता मानसिक अस्थिरता को बढ़ावा देती है। लगभग आधे किशोरों में नींद की समस्या देखी गई, जिसका कारण देर रात तक मोबाइल फोन का उपयोग माना जा सकता है। आत्मविश्वास में कमी और चिड़चिड़ापन भी उल्लेखनीय प्रतिशत में पाया गया, जो सोशल मीडिया पर तुलना, साइबर दबाव और सामाजिक अपेक्षाओं का परिणाम है।

तालिका - 03: ग्रामीण एवं शहरी किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग एवं मानसिक स्वास्थ्य की तुलना

संकेतक	ग्रामीण किशोर (%)	शहरी किशोर (%)
4 घंटे से अधिक सोशल मीडिया उपयोग	28 %	46 %
माता-पिता की निगरानी	65 %	38 %
मानसिक तनाव	42 %	58 %
नींद की समस्या	35 %	52 %
आत्मविश्वास में कमी	37 %	49 %

तालिका - 3 ग्रामीण एवं शहरी किशोरों के बीच स्पष्ट अंतर को दर्शाती है। शहरी किशोरों में 4 घंटे से अधिक सोशल मीडिया उपयोग करने वालों का प्रतिशत (46%) ग्रामीण किशोरों (28%) की तुलना में अधिक है। ग्रामीण किशोरों में माता-पिता की निगरानी अधिक पाई गई, जो उन्हें डिजिटल दुष्प्रभावों से आंशिक रूप से सुरक्षित रखती है। इसके विपरीत शहरी किशोरों में मानसिक तनाव, नींद की समस्या और आत्मविश्वास में कमी की दर अधिक देखी गई। यह तालिका सिद्ध करती है कि सामाजिक परिवेश और पारिवारिक संरचना किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

शोध अध्ययन से प्राप्त परिणाम यह स्पष्ट करते हैं कि बलिया जनपद के किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग और मानसिक स्वास्थ्य के बीच प्रत्यक्ष संबंध विद्यमान है। जिन किशोरों का सोशल मीडिया उपयोग अधिक पाया गया, उनमें तनाव, चिंता, चिड़चिड़ापन और नींद की समस्याएँ भी अधिक पाई गईं। परिणाम यह भी दर्शाते हैं कि शहरी किशोरों में सोशल मीडिया उपयोग की अवधि अधिक है और उनमें मानसिक तनाव की संभावना भी अधिक देखी गई। इसके विपरीत ग्रामीण किशोरों में पारिवारिक निगरानी और सामाजिक जुड़ाव के कारण नकारात्मक प्रभाव अपेक्षाकृत कम पाए गए। यह अध्ययन यह सिद्ध करता है कि सोशल मीडिया का प्रभाव उसके उपयोग की मात्रा और सामाजिक परिवेश पर निर्भर करता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सोशल मीडिया किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को गहराई से प्रभावित करता है। अत्यधिक और अनियंत्रित उपयोग किशोरों में मानसिक असंतुलन, तनाव और आत्म-संतोष की कमी को बढ़ावा देता है। बलिया जनपद के किशोर भी इस डिजिटल परिवर्तन से प्रभावित हैं। अतः यह आवश्यक है कि सोशल मीडिया का उपयोग संतुलित, नियंत्रित और उद्देश्यपूर्ण रूप में किया जाए, ताकि किशोरों का मानसिक विकास स्वस्थ दिशा में हो सके।

सुझाव :

1. किशोरों के सोशल मीडिया उपयोग की समय-सीमा निर्धारित की जाए।
2. विद्यालयों में मानसिक स्वास्थ्य एवं डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
3. माता-पिता को बच्चों की डिजिटल गतिविधियों पर नियमित निगरानी रखनी चाहिए।
4. साइबर बुलिंग और ऑनलाइन तुलना से संबंधित जागरूकता बढ़ाई जाए।
5. सोशल मीडिया के शैक्षिक और सकारात्मक उपयोग को प्रोत्साहित किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Anderson, M. (2020). Social media and adolescent mental health.
2. American Psychiatric Association. (2013). Diagnostic and statistical manual of mental disorders (5th ed.). Washington, DC: Author.
3. Bansal, R., & Sharma, P. (2020). Impact of social media on mental health of adolescents. Indian Journal of Health and Wellbeing, 11(4), 210–215.
4. Choudhary, S., & Gupta, R. (2019). Social networking sites and psychological well-being of adolescents. Journal of Psychology and Education, 14(2), 45–52.
5. Digital India Report. (2022). Internet usage among adolescents in India. New Delhi: Ministry of Electronics and Information Technology.
6. Ellison, N. B., Steinfield, C., & Lampe, C. (2007). The benefits of Facebook “friends”: Social capital and

college students. Journal of Computer-Mediated Communication, 12(4), 1143–1168.

7. Hinduja, S., & Patchin, J. W. (2018). Cyberbullying: Identification, prevention, and response. Cyberbullying Research Center.
8. Kumar, A., & Singh, S. (2021). Social media usage and mental health issues among adolescents in rural India. International Journal of Social Science Research, 9(1), 67–75.
9. Ministry of Health and Family Welfare. (2021). National mental health survey of India. New Delhi: Government of India.
10. National Institute of Mental Health and Neurosciences. (2020). Adolescent mental health in India. Bengaluru: NIMHANS.
11. Pantic, I. (2014). Online social networking and mental health. Cyberpsychology, Behavior, and Social Networking, 17(10), 652–657.
12. Rideout, V., & Robb, M. B. (2018). Social media, social life: Teens reveal their experiences. Common Sense Media.
13. Sharma, N., & Verma, P. (2022). Psychological impact of excessive social media use among Indian adolescents. Journal of Mental Health Education, 6(3), 89–97.
14. Twenge, J. M. (2017). iGen: Why today's super-connected kids are growing up less rebellious, more tolerant, less happy. New York: Atria Books.
15. Verduyn, P., Ybarra, O., Résibois, M., Jonides, J., & Kross, E. (2017). Do social network sites enhance or undermine well-being? Social Issues and Policy Review, 11(1), 274–302.
16. World Health Organization. (2021). Adolescent mental health. Geneva: WHO.
17. World Economic Forum. (2022). Digital well-being report.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महिलाओं के उत्थान में सोशल मीडिया की भूमिका : समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रियंका देवी*

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) PMCoE शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध-पत्र समकालीन डिजिटल परिदृश्य में सोशल मीडिया द्वारा महिलाओं के सशक्तीकरण की प्रक्रिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन में पाया गया कि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए आत्म-अभिव्यक्ति, सामाजिक प्रतिष्ठा निर्माण, ज्ञान-विस्तार, कौशल-विकास, डिजिटल उद्यमिता तथा राजनीतिक-सांस्कृतिक सहभागिता के लिए नवीन एवं सुलभ मंच प्रदान करता है। डिजिटल स्पेस ने नारीवादी विमर्शों, सामूहिक चेतना निर्माण तथा सामाजिक प्रतिरोध के नए स्वरूपों को भी प्रोत्साहित किया है। यद्यपि सोशल मीडिया लैंगिक समता एवं अधिकार चेतना को सुदृढ़ करता है, तथापि साइबर उत्पीड़न, डिजिटल पितृसत्ता, तकनीकी असमानता तथा ऑनलाइन हिंसा जैसी चुनौतियाँ इस सशक्तीकरण प्रक्रिया को जटिल बनाती हैं। परिणामत: सोशल मीडिया महिलाओं के लिए एक परिवर्तनकारी, किंतु बहुआयामी एवं द्वंद्वात्मक सामाजिक-परिवर्तनकारी माध्यम के रूप में उभरता है।

शब्द कुंजी – सोशल मीडिया, महिला सशक्तीकरण, डिजिटल स्त्रीवाद, ऑनलाइन पहचान, सामाजिक पूँजी, डिजिटल उद्यमिता।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के इतिहास में महिलाओं की स्थिति सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मूल्यों, आर्थिक स्थितियों तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं के कारण निरंतर परिवर्तनशील रही है। भारत सहित विश्व के अधिकांश समाजों में प्राचीन काल से ही पितृसत्तात्मक संरचनाप्रमुख रही है, जिसमें महिलाओं को पारंपरिक दायित्वों, जैसेकृघरेलू कार्य, प्रजनन, और परिवार की देखभाल तक सीमित रखा गया (Hooks, 2000)। हालाँकि वैदिक युग में स्त्रियों की शिक्षा और सामाजिक सहभागिता के उदाहरण मिलते हैं, किंतु मध्यकाल और औपनिवेशिक काल के दौरान सामाजिक असमानताएँ अधिक गहरी हुईं। आधुनिक काल में सामाजिक सुधार आंदोलनों, राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष, भारतीय संविधान द्वारा प्रदान किए गए समान अधिकारों, एवं महिला-सशक्तीकरण योजनाओं ने महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार की आधारभूमि बनाई (Kabeer, 1999)

महिला सशक्तीकरण का मूल भाव यह है कि महिलाएँ अपनीक्षमता, संसाधनों एवं निर्णय-निर्माणपर नियंत्रण रखते हुए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं व्यक्तिगत स्तर पर सशक्त बनें (Kabeer, 1999)। संयुक्त राष्ट्र (UN) और विश्व आर्थिक मंच (WEF) जैसे वैश्विक निकायों ने महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीतिक प्रतिनिधित्व एवं आर्थिक अवसरों को सशक्तीकरण के प्राथमिक आयाम माना है। भारत में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण (73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन), 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ', महिला सुरक्षा कानून (POSH act 2013), तथा 'स्टैंडअप इंडिया' जैसे कार्यक्रम, महिलाओं के सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन में योगदान दे रहे हैं।

21वीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक उपलब्धियों में एक है डिजिटल संचार और सोशल मीडिया का विस्तार। इंटरनेट और स्मार्टफोन क्रांति ने वैश्विक स्तर पर सूचना के प्रवाह, विचार-निर्माण, संवाद और जनमत निर्माण की प्रकृति को बदल दिया है। भारत में डिजिटल इंडिया अभियान और सस्ती इंटरनेट सेवाओं ने महिलाओं की डिजिटल पहुँच को बढ़ावा दिया है (Arora, 2019)। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म- फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सऐप, यूट्यूब, ट्विटर (X) ने महिलाओं कोसंवाद एवं अभिव्यक्ति का मंच,व्यावसायिक अवसरों का विस्तार,ऑनलाइन शिक्षा और कौशल विकास,सामाजिक समर्थन समूह,और डिजिटल उद्यमिताजैसे नए अवसर प्रदान किए हैं (McQuail, 2010)। विशेष रूप से ग्रामीण एवं अर्ध-शहरी क्षेत्रों में महिलाएँ अब इंस्टाग्राम बिजनेस पेज, यूट्यूब चौनल, ऑनलाइन ब्यूटी सर्विसेस, होम-फूड डिलीवरी, हैंडीक्राफ्ट बिजनेस जैसे माध्यमों से आर्थिक स्वतंत्रता हासिल कर रही हैं।

सोशल मीडिया ने न केवल व्यक्तिगत आवाज को बढ़ाया बल्कि वैश्विक नारीवादी आंदोलनों को भी नई गति दी है।#MeToo, #TimesUp, #SayHerName और भारत का #MeTooIndia आंदोलन महिलाओं को यौन उत्पीड़न, कार्यस्थल भेदभाव, और पितृसत्ता के खिलाफ बोलने का अवसर प्रदान करते हैं (Shirky, 2011)। डिजिटल मंचों ने सामूहिक बहनचाराऔर नारीवादी एकजुटता को सुदृढ़ किया है।

नारीवादी सिद्धांतकार जैसे Butler (1990) और Hooks(2000) यह बताते हैं कि पहचानऔर सत्ता का निर्माण समाज में संवाद और विमर्श के माध्यम से होता हैकृऔर सोशल मीडिया इस विमर्श का नया सार्वजनिक क्षेत्रबन रहा है। आज महिलाएँ सौंदर्य मानकों, लैंगिक रूढ़ियों, घरेलू हिंसा, साइबर स्टॉकिंग, मानसिक स्वास्थ्य और अधिकारों पर निर्भीकता से अपनी आवाज उठा रही हैं।

समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रासंगिकता – समाजशास्त्र सोशल मीडिया

को मात्र तकनीकी माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं, शक्ति संबंधों, लैंगिक भूमिकाओं, समूह व्यवहार और पहचान निर्माण की गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखता है, जहाँ डिजिटल स्पेस सामाजिक संसाधनों, सांस्कृतिक पूँजी और सामूहिक चेतना के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालिया अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए सामाजिक नेटवर्क, समुदाय-आधारित समर्थन और आत्म-अभिव्यक्ति के अवसरों का विस्तार कर रहा है, जिससे उनकी सामाजिक पूँजी और सामाजिक सहभागिता बढ़ती है (Rainie & Wellman, 2014)। यह मंच महिलाओं को अपनी आवाज, अनुभव और दृष्टिकोण साझा करने तथा ऑनलाइन भागीदारी के माध्यम से राजनीतिक और सामाजिक अभिकरणविकसित करने का अवसर देता है (Fotopoulou, 2021)। परंतु दूसरी ओर, डिजिटल असमानताएँ- विशेषकर लैंगिक डिजिटल खाई, ऑनलाइन ट्रोलिंग, महिला-विरोधी कंटेंट और साइबर हिंसाकृनई प्रकार की सामाजिक असमानताओं और ऑनलाइन उत्पीड़न के रूप में उभर रही हैं, जो न केवल महिलाओं की भागीदारी को प्रभावित करती हैं, बल्कि शक्ति-संबंधों के नए रूपों को भी जन्म देती हैं (Henry & Powell, 2018)। इस प्रकार, सोशल मीडिया का अध्ययन महिलाओं के लिए संसाधनों, ताकत के वितरण, और डिजिटल जोखिमों के बीच संतुलन को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

शोध समस्या – यद्यपि सोशल मीडिया ने महिलाओं को अभिव्यक्ति, सामाजिक पहचान, डिजिटल उद्यमिता और नारीवादी नेटवर्किंग जैसे नए अवसर प्रदान किए हैं (Dobson,Keller,2018), फिर भी यह पूर्णतः सुरक्षित और समानतामूलक क्षेत्र नहीं है। भारत सहित वैश्विक स्तर पर महिलाएँ ऑनलाइन उत्पीड़न, साइबर-स्टॉकिंग, मॉर्फ्ड इमेजेज, लैंगिक घृणा भाषण और डेटा सुरक्षा जोखिमों का सामना कर रही हैं (Johnson, 2022)। साथ ही डिजिटल साक्षरता, ग्रामीणदृशहरी डिजिटल विभाजन और तकनीकी संसाधनों की असमानता महिलाओं की ऑनलाइन भागीदारी को बाधित करती है (Hafkin & Huyer, 2020)। अतः समस्या यह है कि जहाँ सोशल मीडिया महिलाओं के लिए अभिकरण एवं सशक्तिकरण का मंच बनकर उभरता है, वहीं यह लैंगिक असमानता और डिजिटल हिंसा के नए स्वरूप भी उत्पन्न करता हैय इसलिए यह शोध सोशल मीडिया की इस दोहरी भूमिकाकृसशक्तीकरण बनाम डिजिटल जोखिम का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करता है।इस अध्ययन में समीक्षा-आधारित शोध पद्धति अपनाई गई है, जिसके अंतर्गत महिलाओं के सशक्तीकरण एवं सोशल मीडिया के अंतर्संबंध पर उपलब्ध विद्यमान साहित्य का व्यापक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया।

शोध प्रश्न

1. सोशल मीडिया महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक सशक्तीकरण में कैसे योगदान देता है?
2. ऑनलाइन नारीवादी आंदोलनों और डिजिटल समुदायों का महिलाओं की सामूहिक चेतना और आत्म-अभिव्यक्ति पर क्या प्रभाव है?
3. सोशल मीडिया उपयोग में महिलाओं को किन सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और साइबर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है?

साहित्य समीक्षा – महिला सशक्तीकरण को प्रायः निर्णय-निर्माण क्षमता, संसाधनों तक पहुँच और सामाजिक-राजनीतिक भागीदारी की प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है। Rowlands (1995) के अनुसार सशक्तीकरण व्यक्तिगत, सामुदायिक और संरचनात्मक स्तरों पर परिवर्तन का संकेत करता है, जबकि Cornwall और Edwards (2014) इसे महिलाओं की एजेंसी, संसाधन-नियंत्रण और सामूहिक चेतना से जोड़ते हैं। डिजिटल युग में संचार अब केवल सूचना प्रसारण नहीं बल्कि 'नेटवर्क्ड पावर स्ट्रक्चर' बन चुका है (Castells, 2009), जिसमें सोशल मीडिया लोकतांत्रिक सहभागिता और पहचान निर्माण का नया आधार प्रदान करता है।

सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तृत दृष्टिकोण पर Fraser (1990) का तर्क है कि परंपरागत सार्वजनिक क्षेत्र बहिष्कृत समूहोंकृविशेषकर महिलाओंकृको पर्याप्त स्थान नहीं देताय डिजिटल प्लेटफॉर्म इस कमी को दूर कर वैकल्पिक सार्वजनिक क्षेत्रों का निर्माण करते हैं। नारीवादी सिद्धांतकार Dean (2010) यह बताती हैं कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म लैंगिक चेतना, प्रतिरोध और भावनात्मक सहभागिता को राजनीतिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार, सोशल मीडिया केवल एक तकनीक नहीं बल्कि महिलाओं की पहचान, शक्ति और सामाजिक गतिशीलता को परिवर्तित करने वाला सामाजिक-संरचनात्मक तंत्र है।

डिजिटल प्लेटफॉर्म ने नारीवादी आंदोलनों को नए रूप दिए, जहाँ महिलाएँ वैश्विक अभियानों और स्थानीय डिजिटल पहलों दोनों में भाग लेती हैं। Mendes, Ringrose और Keller (2020) बताते हैं कि #MeToo जैसे अभियानों ने लैंगिक हिंसा को मुख्यधारा विमर्श का विषय बनाया तथा 'डिजिटल सिस्टरहूड' का निर्माण किया। भारत में #SelfieWithDaughter और #PinjraTod जैसे अभियानों ने सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती दी और महिलाओं के डिजिटल नेतृत्व को उभारा (Kumar, 2020)।

साइबर-फेमिनिज्म की अवधारणा के अनुसार तकनीक लैंगिक मुक्ति की नई संभावनाएँ प्रदान करती है (Plant, 1997)। नई मीडिया तकनीकें महिलाओं को वैकल्पिक पहचानों, सामूहिक अभियानों और ज्ञान-साझेदारी के लिए मंच देती हैं (Jackson, Bailey, & Welles, 2020)। हालाँकि, डिजिटल सक्रियता में असमान पहुँच, सांस्कृतिक पितृसत्ता और ऑनलाइन घृणा भी बाधाएँ पैदा करती हैं, विशेषकर वैश्विक दक्षिण की महिलाओं के लिए (Gurumurthy & Chami, 2019)।

अनुभवजन्य शोध संकेत देते हैं कि सोशल मीडिया सामाजिक पूँजी, नेटवर्किंग और समुदाय-निर्माण के माध्यम से महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बढ़ाता है (Lin, 2001; Sen & Hill, 2020)। डिजिटल प्लेटफॉर्म महिलाओं को कौशल विकास, व्यापार और सामाजिक नेतृत्व के अवसर प्रदान करते हैंकृविशेषकर माइक्रो-उद्यमिता और कंटेंट क्रिएशन में (O'Meara, 2021)।हालाँकि, कई शोध यह भी दिखाते हैं कि महिलाओं को साइबर हिंसा, ट्रोलिंग, सेक्सिस्ट अभिव्यक्तियाँ और ऑनलाइन धमकियों का अधिक सामना करना पड़ता है (Jane,2017)। Turkle (2011) बताती हैं कि इंटरनेट पहचान निर्माण का स्थान है, परंतु यह जगह लैंगिक दबावों और सामाजिक अपेक्षाओं से पूर्णतः मुक्त नहीं है।कुल मिलाकर साहित्य दर्शाता है कि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए सशक्तीकरण और असमानता दोनों का स्थल है, जहाँ अवसरों के साथ सुरक्षा और पहुंच-संबंधी चुनौतियाँ भी मौजूद हैं।

सैद्धांतिक ढाँचा –इस अध्ययन का सैद्धांतिक ढाँचा महिलाओं और सोशल मीडिया के अंतर्संबंध को समझने हेतु बहु-स्तरीय समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अपनाता है।सशक्तीकरण सिद्धांतके अनुसार महिलाओं का सशक्तीकरण

केवल संसाधनों तक पहुँच एवं नियंत्रण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उनकीएजेंसी, निर्णय-निर्माण क्षमता तथा उपलब्धियों के विस्तारका समग्र रूप है, और डिजिटल माध्यम इस एजेंसी को नए सामाजिक, व्यावसायिक एवं राजनीतिक आयाम प्रदान करते हैं (Cornwall & Edwards, 2014)।नेटवर्क समाज सिद्धांत(Castells, 2010)यह प्रतिपादित करता है कि सोशल मीडिया समकालीन समाज में शक्ति, सूचना प्रवाह और सामाजिक पूँजी की संरचनाओं को पुनर्परिभाषित करने वाला केंद्रीय माध्यम है, जो महिलाओं को संवाद, संबद्धता और सामाजिक सहभागिता के नए अवसर उपलब्ध कराता है।अंतर्संबंध नारीवादी सिद्धांतके अनुसार डिजिटल वातावरण में महिलाओं के अनुभव वर्ग, जाति, धर्म, लैंगिक पहचान और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अनुसार भिन्न होते हैं, अत: ऑनलाइन दुनिया में भी असमानताओं का पुनरुत्पादन होता है (Crenshaw, 1991)।

अत: इन समस्त सिद्धांतों का संयोजन यह प्रतिपादित करता है कि सोशल मीडिया जहाँ महिलाओं के लिए सशक्तीकरण, स्वायत्तता और सामाजिक अभिव्यक्ति का माध्यम है, वहीं यह डिजिटल असमानताओं, पितृसत्तात्मक प्रभुत्व और साइबर हिंसा का स्थल भी है। इसलिए सोशल मीडिया को महिला सशक्तीकरण की दृष्टि से समग्र, संदर्भगत एवं आलोचनात्मक समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्यमें विश्लेषित करना अनिवार्य है।

शोध पद्धति - इस अध्ययन में समीक्षा-आधारित शोध पद्धति अपनाई गई है, जिसके अंतर्गत महिलाओं के सशक्तीकरण एवं सोशल मीडिया के अंतर्संबंध पर उपलब्ध विद्यमान साहित्य का व्यापक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया। शोध सामग्री के चयन हेतु व्यवस्थित साहित्य समीक्षादृष्टिकोण का अनुसरण किया गया, जिसमें पिछले एक दशक में प्रकाशित उच्च-गुणवत्ता वाले सहकर्मी-समीक्षित शोध लेख, पुस्तकें, सरकारी रिपोर्टें, अंतरराष्ट्रीय संगठनों के दस्तावेज, और प्रतिष्ठित डेटाबेसों (Scopus, Web of Science, JSTOR, Google Scholar) में उपलब्ध स्रोत सम्मिलित किए गए। चयनित साहित्य का मूल्यांकन सैद्धांतिक प्रासंगिकता, विषयवस्तु-संगति, शोध-गुणवत्ता तथा समकालीनता के मानदंडों पर किया गया। समीक्षा प्रक्रिया में विषयगत कोडिंगऔर विश्लेषण तकनीकों का उपयोग करते हुए प्रमुख विषयों जैसे सामाजिक सशक्तीकरण, डिजिटल भागीदारी, ऑनलाइन नारीवाद, डिजिटल असमानताएँ और साइबर हिंसाकृकी पहचान एवं वर्गीकरण किया गया। प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक डेटा संग्रह पर आधारित नहीं है, बल्कि उपलब्ध शोध-ज्ञान के संश्लेषण, तुलनात्मक विश्लेषण, तथा सैद्धांतिक समेकन के माध्यम से सोशल मीडिया द्वारा महिला सशक्तीकरण के अवसरों और सीमाओं का संतुलित, आलोचनात्मक और पर्याप्त रूप से प्रमाणित निरूपण करता है।

परिणाम एवं विश्लेषण

सामाजिक सशक्तीकरण - अध्ययन के निष्कर्ष संकेत करते हैं कि सोशल मीडिया समकालीन सामाजिक संरचना में महिलाओं के लिए एक वैकल्पिक सामाजिक क्षेत्रका निर्माण कर रहा है, जहाँ वे न केवल अपनी आवाज को अभिव्यक्त कर रही हैं, बल्किआत्म-अस्मिता, सामाजिक स्थिति और सांस्कृतिक स्वायत्तता का पुनरुत्पादन भी कर रही हैं। डिजिटल संवाद और उपस्थिति ने महिलाओं मेंअभिव्यक्ति-संकुचन के ऐतिहासिक ढाँचोंको चुनौती दी है, जिसके परिणामस्वरूप स्त्रियाँ अब अपनी जीवन-कथाओं, अनुभवों, आकांक्षाओं और संघर्षों को साझा करने में अधिक निर्भीक, सजग और सक्रिय दिखाई देती हैं। यह प्रवृत्तिआत्म-स्वीकृति, स्व-विकास एवंस्वतंत्र पहचान निर्माण की प्रक्रिया को सुदृढ़ करती है।साथ ही, महिलाओं में यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से देखी गई कि डिजिटल सहभागिता ने उन्हें संचार-दक्षता, आत्म-अभिव्यक्ति कौशल, सामाजिक सहयोजन क्षमता तथा आत्म-प्रतिनिधित्व जैसे महत्वपूर्ण मनो-सामाजिक संसाधनों से लैस किया। सोशल मीडिया पर लैंगिक अभिकथनों और संवादों ने पारंपरिक भूमिकाओं जैसे त्याग, आज्ञाकारिता, पारिवारिक निष्ठा, लज्जा और मौन कृ को प्रश्नांकित किया तथा स्त्रीत्व की आधुनिक, स्वतंत्र और आत्मनियंत्रित अवधारणा को स्थापित किया।

विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि डिजिटल समुदायों नेभावनात्मक सहकार, सामाजिक समर्थन, और प्रतिकूल परिस्थितियों में सामूहिक सहानुभूतिजैसे मनो-सामाजिक तंत्र विकसित किए हैं। ये डिजिटल समर्थन क्षेत्र उन महिलाओं के लिए सामाजिक गतिकी का सेतुबनते हैं जिनके पास वास्तविक जीवन में सहयोग प्राप्त करने के अवसर सीमित होते हैं। इस प्रकार, निष्कर्ष इंगित करते हैं कि सोशल मीडिया ने महिलाओं मेंसामाजिक पूँजी औरनागरिकता-चेतना के उद्भव को प्रोत्साहित किया है, जो सामाजिक सशक्तीकरण की व्यापक एवं निर्णायक प्रक्रिया है।

शैक्षिक एवं आर्थिक सशक्तीकरण - अध्ययन ने यह भी सिद्ध किया कि डिजिटल माध्यमों ने महिलाओं के शैक्षिक विकास और आर्थिक स्वनिर्भरता के नए मार्ग प्रशस्त किए हैं। सोशल मीडिया और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्मों ने महिलाओं को ज्ञानार्जन, कौशल-विकास और पेशेवर उन्नति के लिए लोकतांत्रिक एवं मुक्तवातावरण प्रदान किया। यह विशेष रूप से उन महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ जिनके लिए भौतिक शैक्षिक अवसर या तो सीमित थे या उपलब्ध नहीं थे।शैक्षिक रूपांतरण की यह प्रक्रिया केवल सूचना-प्राप्ति तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसमेंटेक्नोलॉजिकल लिटरेसी, डिजिटल प्रोफेशनलिज्म, बहु-विषयक ज्ञान, और उद्यमशील दक्षताएँभी शामिल हैं। इसके परिणामस्वरूप महिलाएँ ऑनलाइन पाठ्यक्रमों, वेबिनारों, मेंटरशिप कार्यक्रमों तथा कौशल-आधारित समुदायों के माध्यम से व्यावसायिक रूप से दक्ष एवं प्रतिस्पर्धी बन रही हैं।आर्थिक परिप्रेक्ष्य में निष्कर्ष दर्शाते हैं कि सोशल मीडिया ने महिलाओं कोआर्थिक स्वायत्तता, घरेलू से सार्वजनिक आर्थिक क्षेत्र में प्रवेश, और उद्यमिता का अवसरप्रदान किया। डिजिटल व्यापार जैसे ई-कॉमर्स हैंडलिंग, कंटेंट क्रिएशन, सोशल-मीडिया मार्केटिंग, एफिलिएट बिजनेस, और ऑनलाइन कंसल्टेंसीकृने महिलाओं को पारंपरिक आर्थिक निर्भरता से मुक्त करते हुएघरेलू अर्थव्यवस्था से वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्थातक विस्तृत भूमिका प्रदान की।

आर्थिक सहभागिता के इस विस्तार ने महिलाओं की वित्तीय निर्णय-निर्माण क्षमता, संसाधन-संचालन कौशल, तथा स्वामित्व बोधको सुदृढ़ किया। यह आर्थिक सशक्तीकरण आगे चलकर उनके सामाजिक एवं व्यक्तिगत आत्मसम्मान को बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध हुआ, जो लैंगिक न्याय के लिए आधारभूत तत्व है।

राजनीतिक एवं कानूनी जागरूकता - शोध के अनुसार सोशल मीडिया ने महिलाओं मेंराजनीतिक चेतना, नागरिक संवेदनशीलता तथा कानूनी ज्ञानको उल्लेखनीय रूप से बढ़ावा दिया। डिजिटल प्लेटफॉर्मों पर राजनीतिक विमर्शकृजैसे महिला आरक्षण, सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, पर्यावरणीय स्थायित्व और संवैधानिक अधिकारोंकृमें सक्रिय भागीदारी से महिलाओं की राजनीतिक पहचान मजबूत हुई।महिलाओं ने सरकारी नीतियों, योजनाओं, और विधिक संरक्षण उपायों (POSH Act, POCSO Act)

घरेलू हिंसा कानून, साइबर क्राइम रिपोर्टिंग प्रक्रियाएँ) के बारे में गहन जानकारी प्राप्त की। यह जानकारी न केवल व्यक्तिगत सुरक्षा एवं निर्णय-निर्माण में उपयोगी सिद्ध हुई, बल्किनागरिक जागरूकता के विस्तार, सामाजिक प्रश्नों पर आलोचनात्मक दृष्टिकोण, और लोकतांत्रिक भागीदारीको प्रोत्साहित करती देखी गई।विशेष रूप से देखा गया कि सोशल मीडिया ने महिलाओं कोडिजिटल नागरिकता के गुण प्रदान किएकृजिसके अंतर्गतडिजिटल अधिकार, डिजिटल कर्तव्य, तथ्य-सत्यापन, सार्वजनिक विमर्श और जिम्मेदार अभिव्यक्तिका बोध विकसित हुआ। इस प्रकार, राजनीतिक सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की उपस्थिति मात्रा में ही नहीं बल्किगुणात्मक दृष्टि से भीसुदृढ़ हुई।

ऑनलाइन नारीवादी आंदोलन – अध्ययन यह स्थापित करता है कि डिजिटल नारीवादी आंदोलनों ने भारतीय महिला-विमर्श को वैश्विक संवाद-व्यवस्था से जोड़ा है। इन अभियानों ने न केवल व्यक्तिगत उत्पीड़न को सार्वजनिक विमर्श में परिवर्तित किया बल्कि संस्थागत हिंसा, पुरुष-वर्चस्व, लैंगिक वंचना और सांस्कृतिक असमानताओंके विरुद्ध संरचनात्मक प्रतिरोध की संभावनाएँ उत्पन्न कीं।डिजिटल बहनचाराकी अवधारणा ने महिलाओं में सहानुभूति, भावनात्मक-उपचार, समर्थन एवं न्याय की सामूहिक आकांक्षाको मजबूत किया। यह अनुभव-साझाकरण की प्रक्रिया सामाजिक-स्मृति और सामूहिक चेतना का निर्माण करती है, जो केवल भावनात्मक विमर्श तक सीमित नहीं बल्किसामाजिक परिवर्तन, नीतिगत दबाव और न्यायिक संवेदनशीलताकी दिशा में भी उन्नत है।

परिणामस्वरूप, सोशल मीडिया-आधारित स्त्रीवादी आंदोलन ने नारी चेतना कोसामाजिक-सांस्कृतिक प्रतिरोध, डिजिटल नेतृत्व, तथा सामूहिक राजनीतिक एजेंसी के स्तर तक विस्तारित किया है। यह स्पष्ट करता है कि डिजिटल स्त्रीवाद केवल विचार-आधारित आंदोलन नहीं, बल्कि परिवर्तनकारी शक्ति है।

चुनौतियाँ – यद्यपि सोशल मीडिया महिलाओं को अभूतपूर्व अवसर प्रदान करता है, अध्ययन यह भी प्रदर्शित करता है कि यह क्षेत्रसुरक्षा-संबंधी जोखिमों, पहचान-आधारित हिंसा और पितृसत्तात्मक निगरानीसे मुक्त नहीं है। साइबर-हिंसा जैसे ट्रोलिंग, अपमानजनक टिप्पणी, मॉर्फ्ड दृश्य सामग्री, यौन धमकी, स्टॉकिंग और डेटा-दुरुपयोग ने ऑनलाइन मंचों को कई महिलाओं के लिए असुरक्षित बनाया।डिजिटल विभाजन के कई रूप भौगोलिक, आर्थिक, शैक्षिक, सामाजिककृमहिलाओं की समतामूलक डिजिटल पहुँच में बाधक हैं। ग्रामीण संपर्क-अभाव, सीमित तकनीकी संसाधन, सामाजिक-नियंत्रण और घरेलू उत्तरदायित्वों की संरचना डिजिटल भागीदारी को सीमित करने वाले कारक हैं।यह शोध संकेत करता है कि डिजिटल मंचों में लैंगिक सत्ता-तंत्र, तकनीकी बहिष्करण एवं मनो-सामाजिक हिंसाकी स्थितियाँ विद्यमान हैं, जो डिजिटल स्त्री-सशक्तीकरण को एक जटिल, द्वंद्वात्मक और बहुआयामी प्रक्रिया बनाती हैं।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन से यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट है कि सोशल मीडिया समकालीन समाज में महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु एक अत्यंत महत्वपूर्ण एवं परिवर्तनकारी मंच के रूप में उदित हुआ है। यह प्लेटफॉर्म न केवल महिलाओं को अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करता है, बल्कि सामाजिक भागीदारी, ज्ञान-विस्तार, आर्थिक स्वायत्तता तथा राजनीतिक चेतना का संवर्धन भी करता है। अध्ययन ने यह दर्शाया कि डिजिटल संवाद ने महिलाओं की आत्म-पहचान, आत्मविश्वास, और सामाजिक दृश्यता को नई दिशा प्रदान की है, जिससे पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं एवं सांस्कृतिक रूढ़ियों पर प्रभावी प्रश्नचिन्ह खड़े हुए हैं। इसके अतिरिक्त, सोशल मीडिया ने डिजिटल उद्यमिता, ऑनलाइन नेटवर्किंग और कौशल-विकास के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने की प्रक्रिया को गति दी है, जिसके परिणामस्वरूप उनकी वित्तीय स्वायत्तता और निर्णय-निर्माण क्षमता में वृद्धि हुई है।

यद्यपि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए अवसरों का विस्तृत परिदृश्य प्रस्तुत करता है, अध्ययन यह भी इंगित करता है कि डिजिटल स्पेस पूर्णतः समतामूलक या सुरक्षित नहीं है। ऑनलाइन उत्पीड़न, लैंगिक हिंसा, साइबर-बुलिंग, और डिजिटल पितृसत्ता जैसी चुनौतियाँ महिलाओं के डिजिटल अनुभव को प्रभावित करती हैं और अनेक महिलाओं को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से वंचित कर सकती हैं। इसी प्रकार डिजिटल विभाजनकृविशेषकर ग्रामीण-शहरी, वर्गीय, तथा डिजिटल साक्षरता आधारित अंतरकृमहिलाओं की डिजिटल सहभागिता को संरचनात्मक रूप से सीमित करते हैं।

कुल मिलाकर, यह निष्कर्ष निकलता है कि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए सशक्तीकरण का प्रभावी साधन है, किंतु यह सशक्तीकरण रैखिक, सरल या सार्वभौमिक नहीं, बल्कि द्वंद्वात्मक, बहुआयामी एवं संदर्भ-निर्भरहै। भावी शोधों के लिए यह क्षेत्र अत्यंत संभावनाशील है, विशेषकर डिजिटल सुरक्षा नीतियों, लैंगिक तकनीकी अवसंरचना, अंतर्संबंधित स्त्री अनुभवों, और दीर्घकालिक सामाजिक प्रभावों पर गहन अनुसंधान की आवश्यकता बनी हुई है

सुझाव – अध्ययन की अंतर्दृष्टियों के आधार पर निम्नलिखित नीतिगत अनुशंसाएँ प्रस्तुत हैं, ताकि सोशल मीडिया महिलाओं के लिए एक अधिक समतामूलक, सुरक्षित और सशक्तिकारी माध्यम के रूप में कार्य कर सके:

अ. महिलाओं के लिए सुरक्षित डिजिटल वातावरण का निर्माण – सरकार, शैक्षिक संस्थान तथा तकनीकी मंचों को सहयोगात्मक रूप से कार्य करते हुए लैंगिक-संवेदनशील ऑनलाइन सुरक्षा ढाँचोंका निर्माण करना चाहिए। ऑनलाइन उत्पीड़न की स्पष्ट रिपोर्टिंग व्यवस्था, त्वरित प्रतिक्रिया प्रणाली, और दंडात्मक प्रावधानों को सुदृढ़ बनाया जाए। प्लेटफॉर्म्स पर रियल-टाइम मॉनिटरिंग, AI-आधारित फिल्टरिंग प्रणाली और महिला सुरक्षा हेल्पलाइन के प्रचार को सुनिश्चित किया जाए।

ब. डिजिटल साक्षरता एवं जागरूकता कार्यक्रम – विशेषकर ग्रामीण एवं सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि की महिलाओं हेतु व्यापक डिजिटल साक्षरता अभियान संचालित किए जाने चाहिए। इसमें साइबर-सुरक्षा ज्ञान, तकनीकी क्षमता-विकास, तथ्य-जाँच कौशल, और डिजिटल साक्षरता कोर्स सम्मिलित किए जाएँ। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों और सामुदायिक केंद्रों मेंविकसित किए जाएँ।

स. साइबर अपराध रोकथाम तंत्र की मजबूती – कानूनी एवं तकनीकी तंत्र को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है। पुलिस और साइबर-सेल को जेंडर-सेंसिटाइज्ड प्रशिक्षण प्रदान किया जाए, और महिलाओं से संबंधित ऑनलाइन अपराधों के मामलों मेंत्वरित न्याय प्रक्रिया, डिजिटल फोरेंसिक विशेषज्ञतातथा उच्च स्तरीय गोपनीयता सुनिश्चित की जाए। वर्तमान साइबर कानूनों की समीक्षा कर महिला-केंद्रित प्रावधानों को और प्रभावी बनाया जाए।

द. डिजिटल उद्यमिता एवं कौशल विकास कार्यक्रम – महिलाओं को डिजिटल उद्यमिता, ई-कॉमर्स प्रबंधन, व्यक्तिगत ब्रांडिंग, डिजिटल भुगतान

प्रणाली तथा फ्रीलांसिंग के अवसरों से परिचित कराने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ। सरकारी योजनाओं जैसे स्टैंड-अप इंडिया, डिजिटल इंडिया, स्टार्ट-अप इंडिया में नारी भागीदारी बढ़ाने हेतु मेंटरशिप, वित्तीय सहायता, और नारी उद्यमी नेटवर्क स्थापित किए जाएँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Arora, P. (2019). *The next billion users: Digital life beyond the West*. Harvard University Press.
2. Banaji, S., & Buckingham, D. (2013). *The civic web: Young people, the Internet and civic participation*. MIT Press.
3. Banet-Weiser, S. (2018). *Empowered: Popular feminism and popular misogyny*. Duke University Press.
4. Bhatia, A., & Bhatia, V. (2021). Women empowerment through digital platforms in India. *International Journal of Applied Research, 7*(2), 45–49.
5. Castells, M. (2009). *Communication power*. Oxford University Press.
6. Castells, M. (2010). *The rise of the network society*. Wiley-Blackwell.
7. Chandra, A., & Hossain, M. (2020). Social media and women's empowerment in South Asia. *Journal of Asian Studies, 79*(4), 987–1005.
8. Cornwall, A., & Edwards, J. (2014). *Feminisms, empowerment and development*. Zed Books.
9. Crenshaw, K. (1991). Mapping the margins: Intersectionality, identity, and violence against women. *Stanford Law Review, 43*(6), 1241–1299.
10. Dean, J. (2010). *Blog theory: Feedback and capture in the circuits of drive*. Polity Press.
11. Dobson, A. S., Robards, B., & Carah, N. (2018). *Digital intimate publics and social media*. Palgrave Macmillan.
12. Fotopoulou, A. (2021). *Feminist media: Participatory spaces, networks and affects*. Polity Press.
13. Fraser, N. (1990). Rethinking the public sphere. *Social Text, 25/26*, 56–80.
14. Gurumurthy, A., & Chami, N. (2019). *Digital technologies and feminist futures in the Global South*. IT for Change.
15. Henry, N., & Powell, A. (2018). *Sexual violence in a digital age*. Palgrave Macmillan.
16. Jackson, S., Bailey, M., & Welles, B. (2020). *#HashtagActivism: Networks of race and gender justice*. MIT Press.
17. Jane, E. (2017). *Misogyny online: A short (and brutish) history*. Sage.
18. Jenkins, H. (2009). *Confronting the challenges of participatory culture*. MIT Press.
19. Johnson, M. (2022). Gender-based online harassment: Global trends. *Journal of Cyber Policy, 7*(1), 78–95.
20. Keller, J., Mendes, K., & Ringrose, J. (2020). *Digital feminist activism*. Oxford University Press.
21. Kumar, S. (2020). Feminist digital activism in India. *Economic & Political Weekly, 55*(18), 35–42.
22. Lin, N. (2001). *Social capital: A theory of social structure and action*. Cambridge University Press.
23. McQuail, D. (2010). *McQuail's mass communication theory* (6th ed.). Sage.
24. Mendes, K., Ringrose, J., & Keller, J. (2019). *Digital feminist activism: Girls and women fighting sexism in the digital age*. Oxford University Press.
25. NCRB. (2021). *Crime in India Report 2021*. Ministry of Home Affairs, Government of India.
26. O'Meara, V. (2021). Social media, female entrepreneurs and the influencer economy. *New Media & Society, 23*(6), 1434–1455.
27. Paasonen, S. (2011). *Carnal resonance: Affect and online pornography*. MIT Press.
28. Pew Research Center. (2021). *The state of online harassment*.
29. Plant, S. (1997). *Zeros + ones: Digital women + the new technoculture*. Doubleday.
30. Putnam, R. D. (2000). *Bowling alone: The collapse and revival of American community*. Simon & Schuster.
31. Rainie, L., & Wellman, B. (2014). *Networked: The new social operating system*. MIT Press.
32. Rowlands, J. (1995). Empowerment examined. *Development in Practice, 5*(2), 101–107.
33. Sen, A., & Hill, S. (2020). Gender, networks and digital participation. *Journal of Gender Studies, 29*(4), 428–444.
34. Shirky, C. (2011). *The political power of social media*. Foreign Affairs, 90(1), 28–41.
35. Sridevi, S. (2019). The impact of social media on empowerment of women. *International Journal of Social Science and Humanities Research, 7*(1), 136–142.
36. Turkle, S. (2011). *Alone together*. Basic Books.
37. UN Women. (2021). *Measuring the shadow pandemic: Violence against women in digital spaces*.
38. चौहान, एस. (2020). 'डिजिटल मीडिया और महिला सशक्तिकरण' नई दिल्ली: पब्लिकेशन डिवीजन।
39. दिनेश, आर. (2019). 'सोशल मीडिया और समाज में महिलाओं की बदलती भूमिका.'भारतीय समाजशास्त्र समीक्षा, 10(2), 45-58।
40. मिश्रा, एम. (2022). 'नारीवाद और डिजिटल युग' वाराणसी: ज्ञान मंडल प्रकाशन।
41. शर्मा, प्र. (2021). 'ऑनलाइन नारीवादी आंदोलन और भारतीय महिला चेतना'।समाज विज्ञान पत्रिका, 32(4), 112-128।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Communication Skill Development Among Rural Women through Industrial Training Centres : A Study of Khargone District

Teena Shrivastava* Dr. Mukesh Keshari**

*Research Scholar , Institute of Commerce, Sage University, Indore (M.P.) INDIA
** Associate Professor, Institute of Commerce, SAGE University, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: Communication skills form the backbone of women's empowerment, particularly in rural societies where social interaction, mobility, and decision-making opportunities are often limited. Industrial Training Centres (ITCs) have emerged as structured platforms that equip rural women with employable skills, confidence, and communication capabilities. This study examines the contribution of ITCs to communication skill development among rural women in Khargone district. The research adopts a secondary data approach, drawing insights from government reports, NSDC documentation, scholarly studies published between 2020 and 2024, and other authentic sources. The findings indicate that ITC-based communication skill training enhances women's confidence, workplace readiness, customer-handling abilities, self-employment prospects, and participation in economic activities. The study concludes that structured communication training is as crucial as technical training and recommends the integration of communication modules across all ITC programmes.

Introduction - Communication skills play a transformative role in the personal and professional development of rural women. In districts such as Khargone, women often face challenges including restricted mobility, limited educational exposure, patriarchal norms, and inadequate access to formal learning environments. Industrial Training Centres have expanded in recent years under national skill development initiatives, offering vocational courses supplemented with soft-skill training.

Communication training within ITCs strengthens women's ability to express ideas, interact with customers, negotiate business matters, present opinions, participate in group activities, and manage livelihood opportunities confidently. For women engaged in tailoring, beauty services, food processing, agro-based enterprises, and other home-based industries, effective communication is essential for customer interaction, record-keeping, and business expansion.

This paper examines the role of ITCs in Khargone district in enhancing communication skills among rural women and analyzes how these skills contribute to improved livelihood outcomes.

Review of Literature

Verma (2020): Verma's study on rural vocational trainees revealed that women who received soft-skill and communication training demonstrated higher confidence levels, improved verbal clarity, and better workplace behaviour compared to those who did not receive such training.

Khan & Sharma (2021): Their research on ITC-led programmes found that structured communication modules—such as group discussions, speaking exercises, and role-play—significantly improved interpersonal communication skills and fostered entry-level leadership traits among rural women.

NSDC Report (2022): The National Skill Development Corporation emphasized that soft skills, particularly communication, are essential for employability in rural sectors. The report highlighted that women with communication competencies were more likely to secure employment or initiate home-based enterprises.

Mehta (2023): Mehta's study on women's micro-entrepreneurship noted that effective communication enables rural women to negotiate prices, attract customers, and maintain market relationships, thereby directly influencing income generation.

Bansal & Kapoor (2021): Their research demonstrated that communication skills enhance women's social mobility, confidence in decision-making, and participation in broader economic networks.

Summary of Literature Gap: Although previous studies acknowledge the importance of communication training, limited research focuses specifically on ITCs operating at the district level in Khargone. This gap provides the basis

for the present study.

Research Gap:

1. Most existing studies focus on general vocational training rather than district-level ITCs.
2. There is no published research specifically examining communication skill development among rural women in Khargone district.
3. Government reports discuss skill development broadly but do not analyze communication outcomes in depth.
4. Limited research explores the role of communication skills in promoting women's self-employment in rural Madhya Pradesh.

Accordingly, this study addresses a significant academic and regional research gap.

Objectives of the Study:

1. To examine the role of ITCs in providing communication skill training to rural women in Khargone district.
2. To analyze the impact of communication skills on women's confidence and workplace readiness.
3. To assess the influence of improved communication on self-employment and income opportunities.
4. To identify challenges faced by rural women in developing communication skills through ITCs.

Research Methodology

Research Design:

1. Descriptive and analytical in nature
2. Based entirely on secondary data

Data Sources: The study relies on the following sources:

1. NSDC Skill Development Report (2022)
2. Ministry of Skill Development and Entrepreneurship publications
3. Peer-reviewed research articles (2020–2024)
4. Journals indexed in Google Scholar, ResearchGate, and UGC CARE-listed databases
5. Newspaper reports on rural skill development programmes
6. Publicly available ITC course structure documents

No primary data or fieldwork was conducted due to the researcher's time constraints.

Conceptual Framework for Communication Skill Development through ITCs: Communication skill development among rural women through ITCs is influenced by the following components:

1. Training Environment – Supportive trainers and peer interaction

2. Soft-Skill Modules – Spoken English, confidence building, group discussions, and public speaking

3. Practical Exposure – Mock sessions and customer-handling demonstrations

4. Social Interaction – Group assignments and presentations

5. Technology Integration – Digital literacy and smartphone-based communication

This framework illustrates how ITCs create a structured pathway for communication enhancement.

Discussion and Analysis: Confidence Building through Communication Training: Rural women often hesitate to speak publicly due to socio-cultural constraints. ITCs provide a supportive learning environment where instructors encourage participation in discussions and experience-sharing. Continuous engagement gradually enhances confidence and enables women to communicate effectively in markets and workplaces.

Improvement in Workplace Readiness: Communication training familiarizes women with workplace etiquette, basic English phrases, customer greetings, and negotiation skills. Tailoring trainees, for example, learn to discuss fittings and delivery schedules, while beauty trainees practice client consultation. Such training improves professional preparedness.

Enhanced Employability: Employers increasingly value communication skills alongside technical competencies. Many ITC-trained women secure employment in boutiques, beauty parlours, retail outlets, and community centres due to their polite and confident communication styles.

Support for Self-Employment and Micro-Businesses: Women operating home-based enterprises—such as tailoring units, food processing, or beauty services—experience improved customer retention through better communication. ITCs indirectly promote micro-entrepreneurship by strengthening these soft skills.

Social Empowerment and Mobility: Enhanced communication skills enable women to manage bank visits, government interactions, digital transactions, and educational responsibilities more independently, contributing to improved household decision-making and social respect.

Group Collaboration and Leadership Skills: Participation in group activities and projects during ITC training enhances coordination, leadership, delegation, and teamwork skills essential for professional advancement.

Barriers Identified in Literature:

1. Limited English proficiency
2. Socio-cultural hesitation
3. Fear of public speaking
4. Irregular attendance due to household responsibilities
5. Limited exposure to digital tools

Despite these challenges, ITCs play a significant role in gradually overcoming communication barriers.

Findings of the Study:

1. ITCs in Khargone district significantly contribute to communication skill development among rural women.
2. Women with improved communication skills demonstrate higher confidence and workplace readiness.
3. Communication competencies enhance self-employment prospects and customer relations.
4. Soft-skill training supports empowerment beyond economic gains by strengthening social participation.
5. Secondary evidence confirms that sustainable

livelihood outcomes depend on both technical and communication skills.

Conclusion: Communication skill development is a vital dimension of women's empowerment. ITCs in Khargone district play a meaningful role by integrating structured communication modules with vocational training. Women who receive such training improve their employability, confidence, decision-making abilities, and leadership potential. Strengthening communication components within ITCs is essential for achieving sustainable rural livelihoods.

Recommendations:

1. Introduce compulsory communication modules in all ITC courses.
2. Enhance digital communication training, including mobile applications and social media promotion.
3. Conduct weekly group discussion sessions to build confidence.
4. Provide bilingual instruction (Hindi and simple English).
5. Organize market linkage workshops for practical customer interaction.
6. Promote peer-to-peer communication activities for experiential learning.

References:-

1. Bansal, P., & Kapoor, S. (2021). Social mobility through communication skills among rural women. Journal of Rural Social Development, 18(2), 45–58.
2. Khan, R., & Sharma, D. (2021). Skill development programmes and communication enhancement among rural women. International Journal of Vocational Studies, 9(1), 33–47.
3. Mehta, S. (2023). Communication competencies in women-led microenterprises in India. Small Business Review, 12(4), 101–115.
4. NSDC. (2022). Skill development report on women empowerment in rural India. National Skill Development Corporation, Government of India.
5. Verma, L. (2020). Impact of vocational training on communication confidence among rural women. Journal of Empowerment Studies, 7(3), 88–102.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Study on Frustration and Attitude of Secondary Level Students towards Online Learning in Relation to Gender and Medium of Instruction : A Comparative Study

Dr. Samina* Dr. Manorama Mathur** Ms. Meha Mathur***

*Dean (Education) Maulana Azad University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Professor, Miranda College of Education, Banglore (Karnataka) INDIA
*** Research Scholar (Education) Maulana Azad University, Jodhpur (Raj.) INDIA

Abstract : The present study was conducted to assess the Frustration and Attitude of Secondary level students towards Online Learning. The current research was followed by a descriptive survey method. For the study 100 students from two schools of Jodhpur were assessed. A self-made attitude scale with 25 items having five points scale (Strongly agree, Agree, neutral, Disagree, strongly disagree,) was used and for study of Frustration -Reaction to Frustration scale, by-Dr. B.M. Dixit and Dr, D.N. Srivastava was used to collect the data. The percentage of respondents against all items was calculated to assess the attitude of whole sample towards online learning. Mean, SD, and t-test was used to compare the Frustration and attitude towards Online learning in reference to gender and stream. The result obtained by the analysis of data stated that there was a significant difference in the Frustration and attitude of male students and female students towards online learning as well as significant difference in Students, in respect to frustration. The result showed higher frustration in girls in comparison to boys. The boys have a more positive attitude towards online learning in comparison to girls.

Introduction - Today, with enormous technological advances, teachers can train their students with various online tools to communicate with them when they are unable to interact with them or share the problems they have. Asynchronous online education gives students control over their learning experience, allows flexibility in the curriculum for non-traditional students, and gives students greater responsibility.

The transition to online learning has implications not only for teachers, who need to change their courses but also for students, who need to adapt to the new learning environment.

One of the easiest effects of online education on children's recovery is to improve learning outcomes. Online learning provides students with access to a time and place for education. With online courses that can take place at home or in a place of their choice, there is less chance for students to miss classes.

On the contrary, online courses provide access to students who may never have the opportunity or the inclination to attend lectures in person. Advancements in artificial intelligence offer hope for the future:

Online learning for children improves student accessibility. Students must be organized, self-motivated, and have a high level of time management to participate in an online program.

The main benefit of online learning is that it allows students to fully participate in high-quality learning situations. Online interaction and social presence are critical elements for encouraging learners' thinking and learning and motivating them expressing, which developing their engagement in learning environments On online, mode one will get a chance to participate in different discussion with classmates which will help in strengthen ability to make clear, strong, ways to express our true selves in a safe and supportive environment, build "thebelief in own capabilities to organize and execute the courses of action required to manage prospective situations.

Challenges of online learning- The challenges of online learning can largely impact children; loss of motivation, self-discipline, and the need to study are some of the biggest problems children face.

Impacts include the lack of efficiency of technology, the difficulty for pupils to understand the concepts taught, and online learning causes social isolation and results in pupils not developing the necessary communication skills. PTA on the impact of online education found that most students felt they had received a good education but also

felt pressured to learn due to emotional, economic, and health stress. They may also need to work longer hours to meet the demands of online teaching.Online learning can be negatively affected by a lack of in-person interaction, internet service interruptions, and cheating.

Frustration refers to the experience of discontent, disappointment, or irritation caused by the failure to achieve a desire, goal, or expectation. It is a natural human emotion, but when not managed effectively, it can have negative consequences for mental health and well-being.

Managing frustration in a healthy manner can enhance communication and strengthen relationships. Frustration is a common and natural emotion that everyone experiences at some point. Although it can be uncomfortable, learning to recognize, understand, and manage frustration can lead to a more balanced and fulfilling life.

By developing coping skills and adjusting expectations, it is possible to mitigate the negative effects of frustration and use this emotion as a motivating force for overcoming obstacles.

Developing effective strategies to manage frustration can help transform challenges into opportunities for personal growth and development.

There are several ways to deal with frustration in a healthy and constructive manner, such as:

Identify the Cause: The first step in managing frustration is to identify the root cause of the issue.

Adjust Expectations: It is important to adjust expectations so that they are realistic and attainable.

Challenge Negative Thoughts: Challenge negative and distorted thoughts that may be intensifying frustration, thus replace them with more positive and realistic perspectives.

Seek Solutions: Explore creative solutions for the problems that are causing your frustration.

Express Emotions: Express the emotions in a healthy manner, such as talking to a trusted friend or family member, journaling, or engaging in physical exercise.

Need Of The Study-The fact that Online learning offers flexibility and accessibility but can also lead to significant frustration and impact on mental health if not managed effectively. Therefore, this study will help in understanding the strategies like-exploring& creating a practical approach, creating supportive environments, control on feelings of disappointment, promotes sustained motivation, adjusting expectations according to personal circumstances, helps learners to navigate online education more confidently, fosters resilience, reducing potential online learning frustration and supporting mental well-being. This study will help in building a proper attitude towards online learning by finding out the ways to control various interconnected factors like technicaldifficulties, lack of immediate feedback, personal interaction, feelings of isolation and disconnect, unfamiliar with self-paced learning may find it hard to manage their time effectively, leading to feelings of overwhelm.

Researchers have explored the effectiveness and influence factors of online learning in higher education and found the methods and strategies to improve and bolster subject knowledge, but can also hone transferable skills, like communication, critical thinking, adaptability, and more in online environments

Recognizing these root causes is vital for implementing effective strategies to overcome online learning frustration and enhance well-being.

Purpose Of The Study : The purpose of this investigation is to examine theFrustrationand Attitude of Senior secondary level students towards Online learning in relation to few moderate variables such as gender and medium of instruction.

Objectives Of The Study:

1. To study Frustrationand Attitude of Secondary level students towards Online learning
2. To compare frustration of English medium and Hindi medium Secondary level students
3. To compare Attitude of English medium and Hindi medium Secondary level students towards Online learning
4. To compareFrustration of English medium Secondary level students regarding gender.
5. To compareAttitude of English medium Secondary level students towards Online learning in regard to gender.
6. To compare frustration of Hindi medium Secondary level students regarding gender.
7. To compare Attitude of Hindi medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.

Research Hypotheses: The following hypotheses guided the study.

1. There will be no significant difference in the Frustration of English medium and Hindi medium Secondary level
2. There will be no significant difference in Attitude of English medium and Hindi medium Secondary level towards Online learning.
3. There will be no significant difference in Frustration of English medium Secondary level students regarding gender.
4. There will be no significant difference in Attitude of English medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.
5. There will be no significant difference in Frustration of Hindi medium Secondary level students regarding gender.
6. There will be no significant difference in Attitude of Hindi medium secondary level students towards Online learning regarding gender.

Methodology: The current research was followed by descriptive survey method and quantitative approach as the substantial method of the study. In a quantitative method, the researcher collected, analysed and interpreted varied kinds of numerical data obtained from the subjects. A

sample of 100 Secondary level students were selected from English and Hindi medium schools of Jodhpur. Out of 50 of each medium 25 boys and 25 girls were compared on both the variables. Data was collected through A self-made attitude scale with 25 items having five points scale (Strongly agree, Agree, neutral, Disagree, strongly disagree, with 15 items positive &10 items were negative and for study of Frustration a Frustration scale, by-Dr. B.M. Dixit and Dr, D.N. Srivastava were used. The collected data were analysed utilizing independent 't' test and percentage of respondents and in all cases the level of significance was fixed at 0.05 and 0.01 confidence levels.

Data Analysis And Interpretation

Table-1 (see in last page)

Table-1 Representing the Mean obtained from English medium students and Hindi medium students on Frustration is 97.50 and 102.57respectively. Computed value of standard deviation of is 9.8 and 8.05 respectively. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in Hindi medium students than English medium students.

The t-ratio is calculated was 1.41which is less than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems no significant at difference in both the groups.

Table-2 (see in last page)

Table -2representing the Mean obtained from English medium students and Hindi medium students onAttitude towards online learning is 107.0and 98 respectively. Computed value of standard deviation of is 5.50 and 4.92 respectively. The Higher Values of mean suggest high level or positive attitude towards On line learning in the English medium students in Comparison to Hindi medium students.

The t-ratio is calculated was 8.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.

Table-3 (see in last page)

Table-3 Representing the Mean obtained from Boys and Girls from English medium students on Frustration is 109 and 86 respectively. Computed value of standard deviation of is 7.10 and 9.65 respectively. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in boys than girls of English medium students.

The t-ratio is calculated was 9.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.

Table-4 (see in last page)

Table-4 Representing the Mean values of Boys and Girls of English medium towards Online learning learning is 119 and 95 respectively. Computed value of standard deviation of is 6.83 and 8.7 respectively. The Higher Values of mean suggest higher level ofAttitude of English medium boys towards Online learning than girls.

The t-ratio is calculated was 10.85 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups.

Table-5 (see in last page)

Table-5 Representing the Mean obtained from Boys and Girls from Hindi medium students on Frustration is 98 and 121 respectively. Computed value of standard deviation of is 8.5and 6.52 respectively. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in girls than boys of Hindi medium students.

The t-ratio is calculated was 10.74 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.

Table-6 (see in last page)

Table-6 Representing the Mean values ofBoys and Girls of Hindi medium towards Onlinelearning is 105 and 91 respectively. Computed value of standard deviation of is 5.84 and 4.60 respectively. The Higher Values of mean suggest higher level of Attitude of Hindi medium boys towards Online learning than girls.

The t-ratio is calculated was 9.45 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups.

Table-7 (see in last page)

Table 7 shows that 56.4% responses are collected against strongly agree,6.8% responses against agree, 4.8 % against disagree, 31.2 % against stronglydisagree from English medium students whereas 48.96% responses are collected against strongly agree, 14.4% responses against agree, 9.84 % towards disagree 26.4% against strongly disagree from Hindi medium students.Less than 1% responses were against neutral. It concludes that English medium students showhigher level attitude towards on line learning in comparisons to Hindi medium students.

Findings:

1. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in Hindi medium students than English medium students.
2. The t-ratio is calculated was 1.41which is less than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems no significant at difference in both the groups.
3. The Higher Values of mean suggest high level or positive attitude towards On line learning in the English medium students in Comparison to Hindi medium students.
4. The t-ratio is calculated was 8.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.
5. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in boys than girls of English medium

students.

6. The t-ratio is calculated was 9.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.
7. The Higher Values of mean suggest higher level ofAttitude of English medium boys towards Online learning than girls.
8. The t-ratio is calculated was 10.85 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups. The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in girls than boys ofHindi medium students.
9. The t-ratio is calculated was 10.74 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.
10. The Higher Values of mean suggest higher level of Attitude of Hindi medium boys towards Online learning than girls.
11. The t-ratio is calculated was 9.45 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups.
12. The higher percentage of responses are collected against strongly agree,agree towards online learning from English medium students, therefore English medium students show higher level attitude towards online learning in comparisons to Hindi medium students.

Analysis Of Hypothesis : The following hypotheses guided the study.

Ho-1-There will be no significant difference in the Frustration of English medium and Hindi medium Secondary level

The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in Hindi medium students than English medium students.

The t-ratio is calculated was 1.41which is less than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems no significant at difference in both the groups.

Ho-1-is accepted.

Ho.2.There will be no significant difference in Attitude of English medium and Hindi medium Secondary level towards Online learning.

The Higher Values of mean suggest high level or positive attitude towards On line learning in the English medium students in Comparison to Hindi medium students.

The t-ratio is calculated was 8.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (1.98) and 0.01 level of significance (2.62),therefore it seems to besignificant difference in both the groups.

Ho-2-is rejected.

Ho 3. There will be no significant difference in Frustration of English medium Secondary level students regarding gender.

The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in boys than girls of English medium students. The t-ratio is calculated was 9.62 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups

Ho-3 is rejected.

Ho 4. There will be no significant difference in Attitude of English medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.

The Higher Values of mean suggest higher level ofAttitude of English medium boys towards Online learning than girls. The t-ratio is calculated was 10.85 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups.

Ho-4-is rejected.

Ho 5. There will be no significant difference in Frustration of Hindi medium Secondary level studentsregarding gender.

The Higher Values of mean suggest higher level of Frustration in girls than boys ofHindi medium students. The t-ratio is calculated was 10.74 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to besignificant difference in both the groups

Ho-5 is rejected.

Ho 6. There will be no significant difference in Attitude of Hindi medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.

The Higher Values of mean suggest higher level of Attitude of Hindi medium boys towards Online learning than girls. The t-ratio is calculated was 9.45 which is greater than the tabulated value of 0.05 level of significance (2.78) and 0.01 level of significance (2.06),therefore it seems to be significant difference in both the groups.

Ho-6 is rejected.

Results:

1. There is no significant difference is found in frustration in relation to medium of instruction.
2. A significant difference in attitude towards Online learning was observed.
3. There was a significant difference was found infrustrationof English medium students in relation to gender.
5. Study revealed high level ofFrustration in boys than girls of English medium students.
6. There was a significant difference was found in attitude towards Online learning in both the groups of English medium students in relation to gender.
7. High level and positive attitude towards Online learning was observed in the English medium students in

comparison to Hindi medium students.

8. Study suggested higher level ofAttitude towards Online learning in English medium boys than girls.
9. A significant differencewas found on frustration inHindi medium students in relation to gender.
10. High level of Frustration in girlswas observed than boys in Hindi medium students.
11. Asignificant difference inattitude towards online learningwas observedregarding Gender in Hindi medium students.
12. Study indicated higher positive attitude towards online learning in Hindi medium boysthan girls.
13. English medium students shows higher level of positive attitude towards on line learning in comparisons to Hindi medium students when total number of responses were analysed in form of percentage.

Conclusion: The above study concluded that boys of both mode of instruction have higher positive attitude towards online learning than girls. Girls like traditional learning because it builds essential social skills that online environments can't fully replicate. Girls prefer structured classroom environments and well-organized class activities.Online learning can lead to isolation, lack of motivation, screen fatigue, and technical issues. It also limits hands-on activities, social interaction, and may challenge fair student assessment.They need personalized guidance and real-time feedback which can be possible with direct teacher-student relationships.They want tocollaborate with peers and build relationships and can participate in extracurricular activities.

Whereas boys want to save travel hours to and fro from the college or schools and generally want to avoid fixed,class hours and are strictly asked to follow a tight schedule.Online learning benefits flexibility, convenience, and personalized pacing, allowing to access quality education anytime, anywhere, with engaging tools and a wide range of subjects favours boys to make appositive attitude.

Educational Implication: Unlike traditional classroom education, online learning allows individuals to learn at their own pace. Learners can review the material, repeat lessons if need, and progress through the course content based on their understanding. This self-paced learning approach accommodates diverse learning styles and ensures a deeper understanding of the subject matter.Many online learning platforms are emerging every day, intending to share knowledge and skills with many students. Students can learn sitting at home, amidst the nature of their favourite places, and learn unlike in traditional learning where they are bound to sit amidst four classroom walls. When students choose their surroundings, it makes them comfortable and easier to focus on the topics they're learning without distractions or complaints.Additionally, on line learning can offers a customized learning experience with a variety of activities and collaboration tools, online discussions, and student-tailored feedback.The recorded classes found in online Education solve this problem. A student can watch the recorded lecture anytime and on repeat until the concept is very well understood.

Modern traditional classrooms are evolving to incorporate technology and innovative methods.The future of education likely involves thoughtful integration of traditional and digital approaches.

Both approaches offer distinct advantages for today's learners. Traditional learning excels in building social skills and providing immediate human connection, while online learning offers unprecedented access and flexibility. The ideal choice often depends on individual student needs, available resources, and specific learning objectives.

References :-

1. Batukeshwar Chandan Kumar -Comprehensive Study on Impact of Online Learning Platforms, JSPM University, Pune,Maharashtra,India
2. Chen Liu·NengchaoPan·Xiawen Pang (2023)-A systematic review of the effectiveness of online learning in higher education during the COVID-19 pandemic periodVolume 8 -
3. Dr Rames Prasath Mahatam Rai, & Dr Raja Azrul Hisham Impact of Online Learning on Student Engagement and Academic Performance Shi Guotai1, City University Malaysia.
4. Dr. Md Khalid1, Dr. Md Imteyaz Hassan(2025)- Issues, challenges and effectiveness of Online Learning in India. Bihar Sharif, Nalanda | IJIRT | Volume 12 Issue 3 | ISSN: 2349-6002
5. Duggal Ishita- Impact of Online Learning in India: Exploring Students' Experiences and Challenges Research Scholar Department of Psychology University of Delhi, Delhi, India
6. Overlay panel Laura F.N. Sudarnoto [a], Martinus T. Handoko [b], Agustinus Riyanto [c], Diana Putri Arini – The impact of online learning, learning motivation, and interpersonal relationships on students' wellbeing
7. Overlay panel, Elena Novak, Kerrie McDaniel, Jian Li - Factors that impact student frustration in digital learning environments https://doi.org/10.1016/j.caeo.2023.100153
8. Satavisha Das, Dr. Poonam Gaur. Assistant Professor-III -Assessing the Effects of Online Learning Platforms on Educational Content Delivery and Student Engagement in Higher Education Amity School of Communication, Amity University, Noida, Noida, India.

Table-1.Showing significant difference on Frustration of English medium and Hindi medium Secondary level students.

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	English medium	50	97.50	9.8	1.41	NS*Not Significant on .01 &.05 level
2	Hindi medium	50	102.57	8.05		

.01=2.39 .05=1.67

Table-2.Showing significant difference in Attitude of English medium and Hindi medium Secondary level towards Online learning.

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	English medium	50	107.0	5.50	8.62	Significant on .05 and .01 level
2	Hindi medium	50	98	4.92		

Table-3- Showing significant difference in Frustration of English medium Secondary level studentsregarding gender.

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	Boys	25	109	7.10	9.62	Significant on .05 and .01 level
2	Girls	25	86	9.65		

.01= 2.78 .05= 2.06

Table-4-Showing significant difference in Attitude of English medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	Boys	25	119	6.83	10.85	Significant on .05 and .01 level
2	Girls	25	95	8.7		

.01= 2.78 .05= 2.06

Table-5-Showing significant difference in Frustration of Hindi medium Secondary level students regarding gender

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	Boys	25	98	8.5	10.74	S**Significant On both level
2	Girls	25	121	6.52		

.01= 2.78 .05= 2.06

Table-6- Showing significant difference in Attitude of Hindi medium Secondary level students towards Online learning regarding gender.

S.	Sample	N	Mean	SD	t-value	Significance
1	Boys	25	105	5.84	9.45	S**Significant On both level
2	Girls	25	91	4.60		

Table-7 Analysis based on Total Responses (1250) collected on Attitude Scale by both mode of Instructions.

	Engilsh Medium					Hindi Medium				
	S.Agree	Agree	N	Dis	S.Dis	S.Agree	Agree	N	Disagree	S.Dis
Total Response	705	85	04	66	390	612	180	05	123	330
Percentage	56.4	6.8	0.32	4.8	31.2	48.96	14.4	0.4	9.84	26.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बैगा जनजाति की नृत्य कला : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन(बालाघाट जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. राम कुमार उसरेठे*

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, चौरई, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मध्य प्रदेश जनजाति बहुल राज्य है। बैगा मध्य प्रदेश की एक प्रमुख आदिम जनजाति है। यह मध्य प्रदेश के डिंडोरी, मंडला, बालाघाट, अनूपपुर एवं शहडोल जिलों में निवास करती है। बालाघाट जिले की बैहर तहसील की बैगा जनजाति अपनी आदिम संस्कृति के कारण समाजशास्त्रियों के अध्ययन का केंद्र रही है। इसकी समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा आश्चर्य चकित करने वाली है।इनके नृत्य भारतीय सांस्कृतिक धरोहर के आधार स्तंभ है। पिछले तीन-चार दशकों में संचार,बढ़ती आवागमन गतिविधियाँ, शहरीकरण एवं उद्योगिकरण के प्रभाव से इस क्षेत्र की लोक संस्कृति में अनेक परिवर्तन हुए हैं। बावजूद इसके बैगा जनजाति ने अपने लोक नृत्यों को संरक्षित कर रखा है। बैगा जनजाति संस्कृति की निरंतरता के लिए उनके नृत्यों का संरक्षण एवं संवर्धन किया जाना आवश्यक है।

शब्द कुंजी – बैगा जनजाति, नृत्य कला।

प्रस्तावना – मध्य प्रदेश की आदिम संस्कृति संपन्न जनजातियों में बैगा जनजाति प्रमुख है। बैगा जनजाति बालाघाट जिले की बैहर तहसील के वन ग्रामों में निवास करती है।प्रस्तुतअध्ययन इन्हीं ग्रामों में किए गए अवलोकन पर आधारित है।

नृत्य, खुशी एवं उल्लास की अभिव्यक्ति का एक रूप है। सांस्कृतिक भिन्नता के कारण इस समाज विशेष में नृत्य के विभिन्न रूप है। नृत्य कुछ विशेष अवसर पर किये जाते है। बैगा जनजाति ने प्रकृति की गोद में रहते हुये कुछ विशेष नृत्यों को विकसित किया है। नृत्य करते हुये ये लोग अपने सारे अभावों को भूल जाते है। नृत्य बैगा जीवन में आनंद और उमंग के साथ मनोरंजन का प्रमुख साधन है। नृत्य का रस जीवन में स्फूर्ती भर देता है। बैगाओ के सभी नृत्य प्रकृति एवं उनके जीवन की अभिव्यक्ति है। बैगा नृत्य करते समय विशेष वेशभूषा एवं श्रृंगार करते है। इन नृत्यों में महिला एवं पुरुष दोनों ही भाग लेते है। प्रत्येक नृत्य के समय विशेष गीत गाये जाते है। नृत्य के समय बैगा समाज द्वारा स्वनिर्मितवाद्ययंत्रों को बजाया जाता है।

'बैगा वर्ष भर नाचते गाते है। इनके नृत्य दशहरापर्व से शुरू होते है और वर्षारंभ तक चलते है।श्रृंगार करके बैगा युवक युवतियों नृत्य करते है। बिना श्रृंगार के किसी को नृत्य में सम्मिलित नहीं किया जाता है।'[1]

'बैगाओं के नृत्य सामूहिक नृत्य है, कोई भी नृत्य एकल या युगल के रूप में नहीं किया जाता है। बैगा त्यौहार, उत्सव, विवाह आदि केअवसर के अतिरिका भी सामान्य दिनों मेंनृत्य करते है। अधिकांश नृत्यों में एक गाँव के पुरुष और दूसरे गाँव की स्त्रियों सम्मिलित होती है।'[2]

'बैगा पर्व त्यौहारों, शादी विवाह व उत्सव आदि में उन्मुक्त होकर नृत्य करते है। नृत्य और गीत ही बैगाओं को ऐसी आसाधारण परिस्थिति में जीने की प्रेरणा और उत्साह देते है। बैगा लोग वर्ष भर नाचते गाते हैं। नृत्य इनको संवेगात्मक उल्लास पूर्ण जीवन की संवेदनशील अभिव्यंजना है। इनके नृत्य सामूहिक होते है।'[3]

'युवतियां काफी सजधज कर नृत्य करती है। कोई भी युवक या युवती बिना श्रृंगार किये नृत्य नहीं करता है। वे लोग नृत्य के काफी शौकीन है।'[4] शोध के दौरान यह पाया गया कि बैगा समाज में नृत्य की एक समृद्ध परम्परा है। इनके नृत्य में जीवन की वास्तविकता का बोध होता है। विपरीत प्राकृतिक परिवेश में जीते हुये भी इन्होंने अपने लिये नृत्य जैसे विशिष्ट सांस्कृतिक पक्ष को न केवल जन्म दिया बल्कि उसका विकास भी किया। इनके द्वारा किये जाने वाले नृत्यों की भाव-भंगिमा वं नियमबद्ध प्रदर्शन देखने वाले को रोमांचित कर देता है। नृत्य के समय बैगा पुरूष एवं महिलाये विशेष वेशभूषा एवं आभूषण पहनती है। सामूहिक रूप से नृत्य किया जाता है। विभिन्न अवसरों पर अलग अलग नृत्य किये जाते है। कुछ अवसरों पर दूसरे गांव का नर्तन दल आता है और उसके साथ स्थानीय गाँव का नर्तन दल नृत्य करता है। जब एक गाँव में किसी दुसरे गाँव का नर्तन दल आता है तो गाँव का मुकद्दम उनका टीका करके उनका स्वागत करता है बाद में उन्हें भोजन कराया जाता है और कभी-कभी मद्या भी परोसी जाती है। रात्रि में एक मैदान पर रोशनी की जाती है। और वहीं पर नृत्य किया जाता है। ठंडी से बचने के लिये नृत्य स्थल पर ही आग जला ली जाती है। मेहमान नर्तन दल नृत्य स्थल पर पहुंचकर मेजवान गाँव के नर्तन दल की प्रतिक्षा करते है। जैसे ही मेजवान गाँव का नर्तन दल मैदान में पहुंचता है वैसे ही मेहमान नर्तन दल तेजी से नृत्य करना आंरभ कर देते है, यह देखकर मेजवान नर्तन दल भी उनके साथ घेरे में तेजी से नृत्य करना आंरभ कर देता है। इसे परधौनी की रस्म कहा जाता है। परधौनी के बाद बीच-बीच में रुक रुककर पूरी रात नृत्य किया जाता है। दूसरे दिन भोजन एवंमद्या परोसकरउन्हें नेग के रूप में कुछ रूपये देकर विदा कर दिया जाता है। मेजवान नृत्य दल बाद में मेहमान नृत्य दत्त के गाँव में जाकर नृत्य करता है। यह क्रम प्रतिवर्ष चलता रहता है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नृत्य की वेशभूषा एवं आभूषण–बैगा पुरुष नृत्य के समय कमर में लहंगे जैसा घेरेदार साया, कमीज एवं काली बण्डी (जाकेट) पहनते है। फाग नृत्य को छोड़कर बाकी सभी नृत्यों में सिर पर पगड़ी के साथ मोरपंख लगाये जाते है। गले में विभिन्न रंगो की मूंगा मालायें, व सिक्को की हमेल पहनते है। कानों में बाली और पैरो में लोहे वपीतल की घुंघरू लगी पैजन पहनते है। पीठ पर लाल नीली छींट का पिछौरा बांधा जाता है। हाथ में 'ठिसकी' (एक बांसुरीनुमावाध) रखते है।

स्त्रियां नृत्य के समय मूंगा धोती पहनती है। बालोंको विशेष रूप से सवारा जाता है। बालों में चिमटियाँ लगाई जाती है तथा बगाई घास से बनी श्लाछागुच्छा जूड़े से बाधकर कमर तक लटकाया जाता है। जूड़े ने मोरपंख की कलगी बांधी जाती है। गले में माला व सुतिया पहनी जाती है। माथे पर रंगीन डोरी बांधी जाती है। पैर की अंगुलियों में छुटकी एवं पैरो में पैजन पहनती है। कलाई चूड़ियों के अलावा 'गुजरी' और 'हरैया' पहनी जाती है।

प्रमुख नृत्य–शोध के दौरान अध्ययन क्षेत्र की बैगा जनजाति के निम्न प्रमुख नृत्यों के विषय में जानकारी प्राप्त हुई।

दशहरा नृत्य–यह नृत्य दशहरा के अवसर पर किया जाता है दशहराके दिन से प्रत्येक दिन यह नृत्य होता है, यह क्रम दीवाली तक चलता है। वर्षा ऋतु के लगभग समाप्त होने एवं शीत ऋतु के पहले का यह मौसम सुखद होता है, ऐसे मौसम में त्यौहारों का आना नृत्य को और भी अधिक मोहक बना देता है। यही कारण है की यह नृत्य रात में किया जाता है, यह नृत्य टोलियों में मिलकर किया जाता है। महिला एवं पुरुषों की अलग–अलग टोलियाँ होती है, ये दोनो टोलियाँ मिलकर नृत्य करती है। एक गाँव की नृत्य टोली किसी दूसरे गाँव नृत्य करने जाती है। किसी गाँव की नृत्य टोली जब दुसरे गाँव नृत्य करने जाती है और वह पुरुषों की टोली है तो उस गाँव की महिला टोली उनके साथ नृत्य करती है। यदि महिला टोली नृत्य करने आती है तो मेजबान गाँव की पुरुष टोली उनके साथ नृत्य करती है। इस नृत्य के समय बिलमा गीत गाया जाता है।

युवा महिला एवं पुरुषों कि टोली के साथ साथ नृत्य करने से ये लोग विवाह हेतु अपने जीवन साथी का चुनाव कर लेते है। यह अवसर जीवन साथी के चयन हेतु उपयुक्त होता है। यह नृत्य बैगाओ के उल्लास एवं आनंद की अभिव्यकित का माध्यम है।

करमा नृत्य–अध्ययनित ग्रामों में पाया गया की बैगाका प्रमुख नृत्य करमा है। करमा का अर्थ है 'कर्म की पूजा'। इस नृत्य के समय गाये जाने वाले करमा गीतोंमें दैनिक कार्यो का वर्णन अधिक होता है. इसलिये इसे करमा नृत्य कहते है। यह नृत्य प्रतियोगिता के रूप में पुरुष व स्त्रियों की टोलियों के बीच किया जाता है। इस नृत्य के लिए एक गाँव से नृत्य टोली दूसरे गाँव जाती है। गाँव के स्त्री पुरुष मिलकर भी करमा नृत्य करते है। गोल घेरे में पंक्तिबद्ध रूप में नृत्य किया जाता है, बीच में माँदर और टिमकी वादक इन्हें कमर में बाधकर बजाते है और साथ ही खड़े होकर नाचते है। नगाड़ावादक एक तरफ बैठकर नगाड़ा बजाता है। महिलायें अपने हाथ में ठिसकी रखती है, जिसे वे लय के साथ बजाती है। एक टोली गीत की कड़ी उठाती है और दूसरी टोली उसे दोहराती हुई नृत्य करती है। करमा नृत्य के समय स्त्री पुरुष विशेष वेशभूषा पहनते है। महिलाए वादक के आसपास घूम–घूम कर, कमर पर हाथ रखकर, थोड़ासा झुककर एक हाथ से नृत्य के गीत के बोलो के अनुसार हाव–भाव प्रकट करते हुए, मध्यम गति के साथ नृत्य करती है। कभी–कभी पुरुष एवं महिलांए पक्तिवद्ध होकर भी नृत्य करते है। करमा नृत्य में ताल और पद गति के अनुसार विभिन्न प्रकार दिखाई देते है।

करमा खाप–इस नृत्य में बैगाओ द्वारा किये जाने वाले कार्यो जैसे लकड़ी काटने के लिये एवं वनोपज संग्रहण करने के लिए पहाड़ों पर चढ़ना व उत्तरना पड़ता है। इनकार्यो को नृत्य के माध्यम से दर्शाया जाता है। इस नृत्य में पहाड़ों पर चढ़ते वक्त सम्मलकर पैरो को जमाकर कैसे चलते है, उसे दर्शाया जाता है। नृत्य टोली पक्तिवद्ध होकर आगे पीछे चलते हुयें पैरो को एक लय में जमाकर आगे पीछे होकर नृत्य किया जाता है। खाप का अर्थ है श्पैर जमाना इसलिये इसे करमा खाप नृत्य कहा जा सकता है।

करमा खरी– बैगाओं द्वारा पहाड़ो पर चढ़ने के बाद वापस उतरने समय पैर तेजी से अपने आप आगे बढ़ते है। इस भाव को करमा खरी नृत्य के माध्यम से दर्शाया जाता है। इस नृत्य में टोली पंक्तिबद्ध रूप में पहाड़ो से उतरने वाली क्रियाओं को लयबद्ध रूप में प्रस्तुत करते हैं।

करमा झूमर–यह नृत्य प्रकृति की क्रियायों को दर्शाता है। जिस प्रकार हवा के चलने से हरे–भरे वृक्षों की डालियां झुकती है व फिर ऊपर उठती है, इसी प्रकार करमा झूलनी नृत्य में बैगा नर्तकों का शरीर झुककर फिर ऊपर उठता है। यह नृत्य झूम झूम कर किया जाता है इसलिये इसे करमा झूमर नृत्य कहते है।

करमा लहकी– इस नृत्य में बैगा स्त्री एवं पुरुष टोलियाँ एक पंक्तिबद्ध होकर करते है। नर्तकों का कमर से ऊपर का शरीर नृत्य के दौरान बार–बार झुकता और उठता है। इस नृत्य को देखकर ऐसा लगता है कि नृतक जानंद और उल्लास में डूबकर कर नृत्य कर रहा है, इसलिए इसे करमा लहकी नृत्य कहते है। यह नृत्य विजय दशमी से वर्षा आरंभ होने तक किये जाते है।

करमा झुलनी– इस नृत्य मेनृत्यक पंक्तिबद्ध होकर शरीर को ऊपर उठाकर फिर नीचे झुका लेते है। झूमर नृत्य की तुलना में लोच कम हो जाता है। इस नृत्य में मांदर वादक बीच–बीच में उमंग में आकर मृग(हिरन) जैसे उछल कर महिला नर्तकियों के सामने आ जाता है और कभी बैठकर कभी झुककर विभिन्न मुद्राओं में मांदर बजाते है।

झरपट– 'झरपट' शब्द का अर्थ होता है छेड़–छाड़। इस नृत्य में महिला एवं पुरुष अलग–अलग पंक्तियों में आमने–सामने होते है। दोनो पक्ति केनर्तकों के हाथों में ठिसकी होती है। गीतों में सवाल जवाब के रूप में झरपट (छेड़–छाड़) होती है। इस नृत्य के दौरान पूरे वातावरण में हास्य का माहौल बन जाता है।

रीना नृत्य– इस नृत्य कोकेवल महिलाये ही करती है। महिलाये दो टोलियों में आमने सामने, पक्तिबद्ध होकर नृत्य करती है। कभी कभी आमने समाने गोल घेरे में भी नृत्य किया जाता है। नृत्य के दौरान महिलाये अपने हाथों से चुटकी बजाती है. साथ ही मांदर और टिमकी बजती रहती है।

बिलमा नृत्य–यह नृत्य मुख्यत: विवाह के अवसर पर किया जाता है। इसे बिरहा नृत्य भी कहा जाता है। जब गाँव में बारात को विदाई दी जाती है तब यह नृत्य किया जाता है। युवक–युवतियों मिलकर यह नृत्य करते है। पुरुष अपेक्षाकृत अधिक उछल–उछल कर उल्लास के साथ नृत्य करते है। जबकि युवतियों मंद गति से कदम आगे पीछे करके नाचती है। नृत्य में युवक व युवतियों के भावों में अंतर का मुख्य कारण पुरुष नृत्य में उल्लास होता है क्योकि यह दुल्हन को लेकर जा रहे है जबकि युवतियों के भाव में विछोह दिखाई देता है।

भड़ौनी नृत्य–यह विवाह के अवसर पर किया जाने वाला नृत्य है। इस नृत्य के साथ स्त्रियों समधियों के लिये गालियों गाती है। जब बारात विवाह

मंडल में आ जाती है, तब महिलायें इस नृत्य को करती है।

परधौनी नृत्य–यह विवाह के अवसर पर किया जाने वाला नृत्य है। बारात केआगमन पर उसके स्वागत के लिए नृत्य किया जाता है। वधु के गाँव के पुरुषों द्वारा नृत्य किया जाता है। इसी दौरान वर एवं वधु पक्ष के सभी लोग मुकद्दम या वधु के आंगन में इकट्ठा हो जाते है। गाँव से दो चारपाई मांगकर लाई जाती है। इन चार पाईयो को आपस में त्रिकोण की स्थिति में बाँधकर खड़ा किया जाता है। फिर इसे हाथी का आकार देने के लिए इसमे दो बांस के बने सुपे बाधे जाते है जो हाथी के कान होते है। घास को लम्बे आकार में बाधकर हाथी की सुंड एवं पूंछ बनाई जाती है। चारपाई पर चादर या कंबल डाल दिया जाता है। यह हाथी वर पक्ष के लोग बनाते है। मैदान या आंगन के एक तरफ वर एवं दूसरे तरफ वधु पक्ष के लोग खड़े हो जाते है। अब इस हाथी पर बराती एवं वधु के भाइयों को बिठाते है एवं नृत्य करते है।

निष्कर्ष– बैगा प्रकृति के गोद में निवासरत वह जनजाति समुदाय है, जिसने आदिकाल से ही अपनी लोक संस्कृति में नृत्य को शामिल किया है।नृत्य न केवल उनमें उत्साह के प्रतीक हैं बल्कि यह सामाजिकता एवं समुदायिकता के भाव को भी लिए हुए हैं। बैगा जनजाति के नृत्य इनकी समृद्ध संस्कृति के प्रतीक हैं। विभिन्न अवसरों पर किए जाने वाले नृत्य जनजाति चेतना एवं उत्साह को बढ़ाते हैं। जनजाति संस्कृति की निरंतरता को बनाए रखने में बैगा जनजाति के इनलोक नृत्यों का विशेष महत्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. निरगुणे, बसंत (2006) 'बैगा' (संपदा) आदिवासी लोक कला परिषद भोपाल पृ.क्र.183
2. मिश्रा शिवाकांत (2002)'मध्यप्रदेश की बैगा जनजाति में सामाजिक, सांस्कृतिक, परिस्थितिकीय परिवर्तन एवं सामांजस्य की समस्याएँ' शोध प्रबंध, बानीस महूपृ.क्र.185
3. दुबे, रश्मि (2005) 'बैगा जनजाति, सामाजिक सांस्कृतिक अध्ययन' गुप्ता पब्लिशर नागपुर पृ.क्र.149
4. पटेल जी.पी. (1992) 'बैगा जनजाति का मानव समाजशास्त्रीय अध्ययन' बुलेटिन ऑफ द ट्राईबल रिसर्च एंड डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट भोपाल पृ.क्र.36

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Role of Artificial Intelligence in Teaching

Dr. Rupesh Pallav*

***Assistant Professor, Vijayaraje Govt. Girls P.G. College, Morar, District Gwalior (M.P.) INDIA**

Abstract: This paper examines how the growing availability of Artificial Intelligence is transforming various aspects of life, with a particular focus on education. While the use of Artificial Intelligence in education is expanding, the full scope of its applications and associated challenges remains unclear. Drawing on empirical and theoretical studies, we explore the potential benefits, challenges, and future opportunities of integrating Artificial Intelligence in educational settings. Our findings show that organizations such as UNESCO are adopting Artificial Intelligence in education, with applications including content development, assignments, automated grading, and student support. However, increased reliance on Artificial Intelligence may lead to student dependency. Benefits include greater flexibility regarding time and location, as well as a shift in the teacher's role toward facilitation. We conclude that Artificial Intelligence will play an increasingly significant role in education, though challenges must be addressed to fully realize its benefits.
Keywords: Artificial Intelligence, Teaching.

Introduction - Artificial Intelligence, which relies on machine learning and algorithms, offers significant benefits by increasing efficiency and productivity. It saves time, reduces effort, and enhances outcomes, yet raises concerns about data security, privacy, and unemployment. As AI technologies advance, their influence is seen not only in automation but also in decision-making processes, reshaping how organizations and individuals approach problem-solving. The rapid adoption of AI in various sectors demonstrates its versatility, from streamlining administrative tasks to providing personalized recommendations. As it becomes integral in daily life and fields such as education, this article examines its role in education, focusing on applications, benefits, challenges, and future opportunities.

Smart learning technologies based on artificial intelligence, such as intelligent tutoring systems, adaptive platforms, and virtual assistants, personalize instruction to improve student outcomes. AI-powered assessment tools can analyze student performance data, identify learning gaps, and suggest targeted interventions, enabling educators to tailor support more effectively. Virtual classrooms and automated grading systems also streamline administrative tasks, allowing teachers to focus on more meaningful interactions with students. However, excessive reliance on these technologies can diminish human interaction, impacting social and emotional development. Achieving success in education with AI requires balancing technical, ethical, and human considerations.

The Role of Artificial Intelligence in Education: The idea of Artificial Intelligence is progressively becoming more prominent in the educational sector. At first, it was referred to as Artificial Intelligence literacy, which signifies the skill to comprehend and utilize Artificial Intelligence applications without manual assistance. The phrase Artificial Intelligence was first introduced in an online article in 2015 and has since become part of a lengthy list of suggested literacies aimed at representing the grasp of specific technological frameworks, such as "media literacy" or "data literacy." Artificial Intelligence cultivates a collection of skills that allow individuals to critically assess Artificial Intelligence technologies and use them effectively as a resource for communication and collaboration. By employing artificial intelligence, learners can discover how it can logically address challenges, gain knowledge independently, make choices, and communicate. The notion of Artificial Intelligence in education has progressed as part of the integration of learning management systems, which enhance teaching, learning, decision-making, and provide virtual assistance for tailored educational experiences.

Artificial intelligence in education is reshaping how students learn, how teachers teach, and how institutions manage learning systems, with powerful benefits but also serious ethical and practical challenges that must be governed carefully.Artificial intelligence analyses performance data to adjust content, pace, and difficulty, helping each learner follow an individual path instead of a one size fits all syllabus. Intelligent tutoring and feedback: Intelligent tutoring systems, learning apps, and chatbots give on demand explanations, practice, and real time

feedback outside classroom hours. If we talking about Administrative and teaching support, Artificial intelligenceautomates routine tasks such as grading objective tests, tracking attendance, and monitoring progress, freeing teachers' time for higher order pedagogical work and mentoring. In Content creation and course designArtificial intelligence can draft lesson plans, quizzes, summaries, and alternative explanations, and help design syllabi and assessments tailored to diverse learners. Virtual assistants and learning analytics can be easily done by Artificial intelligence, its driven dashboards flag at risk students early, support interventions, and power virtual assistants that answer routine student queries 24/7. Tools such as speech to text, text to speech, translation, and adaptive interfaces support learners with disabilities and those in remote or under resourced settings. Enhanced engagement and effectiveness: Adaptive activities, simulations, and interactive environments support deeper understanding and self paced learning, improving motivation and outcomes when well designed. When infrastructure exists, AI can extend quality learning opportunities beyond traditional classrooms, including higher education, lifelong learning, and remote communities. Also in Data informed pedagogy, Artificial intelligence learning analytics help teachers identify misconceptions, skill gaps, and patterns of disengagement, enabling targeted support rather than purely intuition based decisions.

Literature Review:

According to Kabudi and Olsen (2021),Artificial Intelligence can be even more effective in providing individually tailored instruction to students, meeting their cognitive and learning needs. Furthermore, if teachers utilize artificial intelligence-based teaching methods and techniques, they can deliver learning materials in a format appropriate for students.

Chen (2020), suggests that Artificial Intelligence can also provide students with the opportunity to interact with chatbots, allowing them to learn and resolve issues, thereby facilitating independent learning.

Miao and Shiohira (2021), point out that the growing role of Artificial Intelligence in education has led to the introduction of the concept of Artificial Intelligence education, in line with the latest educational standards, to address digital literacy levels worldwide.

Research Methodology: This Research is literature-based study using Primary and Secondary Sources. Interviews, Group Discussions, and Case Studies were used to collect Primary Sources, and Daily Newspapers, Monthly Magazines, Government Reports, Education-Related Policies, Scholarly Articles, etc. were used to collect Secondary Sources.

Challenges:

1. **Influence of the Ancient Education System -** The ancient education system has had a profound impact on Indian society, education, and culture. As a result, Indian society faces difficulties in adopting modernity and scientific thinking and is reluctant to adopt new teaching methods and technologies.
2. **Influence of Moral Values -** Moral values are considered to have a significant influence on society, and people in society consider the use of Artificial Intelligence in teaching to be part of Western educational systems and consider its use to be against their moral values.
3. **Loss of trust between Teachers and Students -** Due to modernity and the excessive use of Artificial Intelligence in teaching, a clear decline in trust and intimacy between teachers and students can often be seen in educational institutions, as students complete their work through Artificial Intelligence and completely disregard the teacher's usefulness.

Suggestions:

1. **Integration of Traditional and Artificial Intelligence Methods -** Integration of traditional and Artificial Intelligence methods has become a vital need in the education sector. Together, these two methods can provide students with a balanced development of knowledge, values, skills, and modernity, along with the development of new technologies.
2. **Integration of Artificial Intelligence into the Curriculum -** Integrating Artificial Intelligence teaching methods into the curriculum is crucial for today's education system, as it will promote students' holistic development and a sense of adaptability to modernity.
3. **Establishing a Teaching-Research Link through Artificial Intelligence -** Establishing a link between teaching and research through Artificial Intelligence has become a crucial need in modern education. Artificial Intelligence is no longer limited to providing information; it also provides a comprehensive platform for dialogue and collaboration, creating a deeper and more effective link between teaching and research.

Conclusion: Artificial Intelligence has helped India become scientific, logical, and globally competitive. Today, there is a need to balance ancient civilization and modern technologies of Artificial Intelligence in the Indian education system. Through Artificial Intelligence, we can find inspiration to think about balancing Indianness and modernity in education reform or social development, especially when we want to promote new teaching methods among students. It is crucial to incorporate Artificial Intelligence into the curriculum and practices of educational institutions. Teachers must also learn to use Artificial Intelligence so that both students and teachers can work in an inclusive manner for academic success. In today's times, Artificial Intelligence in education is becoming a role model for the new generation. The use of Artificial Intelligence in teaching is essential for social awareness and policy making. Therefore, it is our responsibility and fundamental duty to comprehensively reform education, social thinking, and policymaking to ensure equal recognition of Artificial Intelligence.

References:-

1. Benjamin W. (2020) "Perspectives, Challenges, Roles, and Research Issues of Artificial Intelligence in Education."
2. Sonamti Today (2022) "The Legacy of the Guru-Shishya-Parampara in a Modern Perspective."
3. Keshav Patil (2024) "Advantages and Disadvantages of AI in Education."
4. Drishti IAS Blog (2018) "Communication and Education: How Technology Has Changed Teaching Methods."
5. "Digital Education in India: Objectives, Government Initiatives, Importance, Benefits, UPSC Notes."
6. Government of India, Ministry of Education, "National Education Policy 2020."
7. UNESCO, "Artificial Intelligence in Education."
8. Dr. Sadhna Rana (2022) "Applications of AI in Education: Dynamic Curriculum Design."
9. Raghavendra Singh (2022) "Artificial Intelligence in Education."
10. https://educationaltechnologyjournal-springeropen-com.translate.goog/articl es/10.1186/s41239-024-004483?x_tr_sl=en&_x_tr_tl=hi&_x_tr_hl=hi&_x_tr
11. https://hi.www-sciencedirecttranslate.goog/science/article/pii/S2666920Xo=tc
12. https://ijcrt.org/papers/IJCRT1133044.pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

21वीं सदी में मूल्य शिक्षा का महत्त्व और आवश्यकता

बीरेंद्र सिंह कुशवाह*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शास. महाविद्यालय, बदरवास, शिवपुरी (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना –शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने एवं न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय उत्थान में बढ़ोत्तरी के लिए मुलभुत आवश्यकता है, गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा तथा सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना, वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण तथा सांस्कृतिक संरक्षण के सन्दर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्च स्तरीय शिक्षा का उचित माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास एवं संवर्धन, व्यक्ति, समाज,राष्ट्र, और विश्व के कल्याण के लिए किया जा सकता है स अगले दशक में भारत विश्व का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तायुक्त शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा।

21वीं सदी के 20वें वर्ष में नई शिक्षा नीति आई है, भारत में सर्वप्रथम 1968 में नई शिक्षा नीति बनाई गयी थी उसके बाद 1986 में बनाई गयी जिसके बाद नई शिक्षा नीति को 1992 में संशोधित किया गया, लगभग 34 वर्षों बाद 2020 में पुन: नई शिक्षा नीति बनी है। डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में शिक्षा नीति को लेकर बनाई गई समिति का गठन किया गया था जो मई 2019 में कस्तूरीरंगन समिति ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति का नया रूप सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया, वर्ष 1986 के बाद भारत में यह तीसरी शिक्षा नीति है, जो भारत के अनेक राज्यों के साथ साथ मध्य प्रदेश में भी 2021से लागू हो गई है स जिसके तहत शिक्षा नीति में बहुत बदलाव किये गये हैं।

प्रस्तुत शोध–पत्र '21वीं सदी में मूल्य शिक्षा का महत्त्व और आवश्यकता' के सम्बन्ध में एक प्रयास है जो नई शिक्षा नीति में उपयोगी साबित होगी।

मूल्य शिक्षा का महत्व – मूल्य शिक्षा हमारे अंदर नैतिक मूल्यों का विकास करती है। ये हमारे जीवन में सीखने के साथ –साथ हमारे व्यक्तित्व विकास में भी सहायता करती है स अमेरिकी मनोवैज्ञानिक लोरेंस कोहलबर्ग का मानना था कि बच्चों को एक ऐसे माहौल में रहने की जरुरत है जो दिन – प्रतिदिन के संघर्षो की खुली और सार्वजनिक चर्चा के लिए अनुमति देता है। Value Education की महत्ता हमारे परसनालिटी डेवलपमेंट में सहायक है तथा विद्यार्थी के गुणों में विकास करता है। इतना ही नहीं यह हमारे अंदर समय के महत्व को समझने की क्षमता को विकसित करता है। खेल के महत्व को समझना भी मूल्य शिक्षा को समझने तथा रोचक ढंग से व्यक्तित्व के विकास में प्रमुख भूमिका निभाता है।

प्रस्तुत शोध–पत्र –21वीं सदी में मूल्य शिक्षा का महत्व और आवश्यकता के सम्बन्ध में निम्न विन्दुओं का विश्लेषण करता है : –

1. मूल्य शिक्षा क्या है?
2. मूल्य शिक्षा की परिभाषाएं?
3. इसके क्या फायदे हैं?
4. मूल्य शिक्षा के उद्देश्य/आवश्यकता
5. मूल्य शिक्षा में शिक्षक की भूमिका
6. जीवन में मूल्य शिक्षा का महत्व
7. मूल्य शिक्षा की विशेषताएं
8. उच्च/उच्चतर शिक्षा में मूल्य शिक्षा का महत्व

इस शोध– पत्र में मुख्य रूप से –मूल्य शिक्षा क्या है, मूल्य शिक्षा की परिभाषा, फायदे, महत्व एवं उदेश्य/आवश्यकता, शिक्षक की भूमिका आदि पर विवरण प्रस्तुत है –

मूल्य शिक्षा क्या है ?

मूल्य शिक्षा व्यक्तियों के व्यक्तित्व विकास पर जोर देती है ताकि उनका भविष्य संवर सके एवं कठिन से कठिन परिस्थितियों से आसानी से निपटा जा सके स यह बच्चों को ढालता है, ताकि वे अपने सामाजिक, नैतिक, और लोकतान्त्रिक कर्तव्यों को कुशलतापूर्वक संभालते हुए बदलते वातावरण से जुड़ सकें।

1. मूल्य शिक्षा की महत्ता शारीरिक और भावनात्मक पहलुओं को विकसित करता है।
2. यह आपको ढंग सिखाता है और भाई चारे की भावना विकसित करता है।
3. यह देशभक्ति की भावना पैदा करता है।
4. मूल्य शिक्षा धार्मिक सहिष्णुता को भी विकसित करता है।

मूल्य शिक्षा की परिभाषाएं – मूल्य शिक्षा को लेकर अनेक प्रकार की परिभाषाएं दी गयी हैं जो निम्नानुसार है :

1. लेविन (1964) के अनुसार 'लालच की भावना में उच्चतम रूकावट सकारात्मक रूप में शारीरिक दंड की प्रक्रिया से है और नकारात्मक रूप से विचार और तर्कशक्ति की प्रक्रिया है।'
2. गुरुराजा (1978)के अनुसन्धान में पाया कि 'नैतिक मूल्यों का ज्ञान, अभिप्राय पूर्णता से प्रभावित होता है।'

मूल्य शिक्षा के फायदे :

मूल्य शिक्षा के निम्नलिखित फायदे हैं :

1. यह जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने और सफल होने के लिए आवश्यक किरदारों को विकसित करने में मदद करता है।
2. यह आपकी पर्सनालिटी को आकर देता है, आपको जीवन और उसके संघर्षों के प्रति विनम्र और आशावादी बनाता है।
3. यह विद्यार्थियों को उनके जीवन के उदेश्य जानने में मदद करता है, और उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए सही रास्ता चुनने में सहायता करता है।

मूल्य शिक्षा को एक अलग अनुशासन के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, किन्तु शिक्षा प्रणाली के अंदर सम्मिलित करना चाहिए। केवल समस्याओं को हल करना उद्देश्य नहीं होना चाहिए, इसके पीछे के स्पष्ट कारण और लक्ष्य के बारे में भी सोचा जाना चाहिए।

अत: -21वीं सदी में मूल्य शिक्षा का महत्व और आवश्यकता को प्रदर्शित करने वाले निम्नलिखित बिंदु है :

1. मूल्य शिक्षा का महत्व कठिन परिस्थितियों में सही निर्णय लेने में मदद करता है, जिससे निर्णय लेने की क्षमता में सुधार होता है।
2. उम्र के साथ जिम्मेदारियों की एक विस्तृत श्रृंखला आती है, यह कई बार अर्थहीनता की भावना को विकसित कर सकता है और मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी विकारों, मध्य कैरियर संकट और किसी के जीवन के साथ वढ़ते असंतोष को जन्म दे सकता है। मूल्य शिक्षा का उदेश्य कुछ हद तक लोगों के जीवन में शून्य को भरना है।
3. मूल्य शिक्षा का महत्व जगाने और मूल्यों तथा हितों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह आगे कौशल विकास में मदद करता है सजब लोग समाज और उनके जीवन में मूल्य शिक्षा का अध्ययन करते हैं तो वे अपने लक्ष्यों और जुनून के प्रति अधिक उत्साहित एवं बंधे हुए होते हैं। इससे जागरूकता का विकास होता है स जिसके परिणामस्वरूप विचारशील और पूर्ण निर्णय लेते हैं।
4. मूल्य शिक्षा का मुख्य महत्व मूल्य शिक्षा के क्रियान्वयन और इसकी महत्ता के अलग करने पर प्रकाश डाला गया है। यह 'अर्थ' की भावना को पीछे छोड़ देता है, जो किसी को करना है और इस प्रकार व्यक्तित्व विकास में सहायता करता है।

मूल्य शिक्षा के उद्देश्य ध्आवश्यकता – समकालीन दुनियां में मूल्य शिक्षा का महत्व कई गुना है। हमारे लिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि मूल्य शिक्षा एक स्कूली बच्चे की यात्रा में शामिल है और उसके वाद भी यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे नैतिक मूल्यों के साथ -साथ नैतिकता को भी आत्मसात करे।

मूल्य शिक्षा की प्रमुख आवश्यकता निम्नलिखित है :

1. शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं के सन्दर्भ में बच्चे के व्यक्तित्व विकास के लिए एक सभी दृष्टिकोण सुनिश्चित करना।
2. देशभक्ति की भावना के साथ -साथ एक अच्छे नागरिक के मूल्यों में वृद्धि करना।
3. छात्रों के सामाजिक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भाईचारे के महत्व को समझने मे मदद करना।
4. अच्छे शिष्टाचार और जिम्मेदारी एवं सहकारिता का विकास करना।
5. रूढ़िवादी विवरण की ओर जिज्ञासा और जिज्ञासा की भावना को वढ़ावा देना।
6. नैतिक सिद्धांतो के आधार पर ध्वनि निर्णय लेने के तरीके के वारे में छात्रों को सीखना।
7. सोच और जीने के लोकतान्त्रिक तरीके को वढ़ावा देना।
8. सहनशिलता और विभिन्न सास्कृतियों एवं धार्मिक विश्वासो के प्रति सम्मान के साथ छात्रों को लागू करना।

निष्कर्ष एवं सुझाव– उपरोक्त चर्चा के आधार पर आज की शिक्षा प्रणाली में मूल्यों एवं अन्य आवश्यक कौशलों के संतुलित पाठ्यक्रम की आवश्यकता है। इसलिए, आज के संदर्भ में मूल्य शिक्षा की आवश्यकता पर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता है। इसलिए, शिक्षा का उद्देश्य न केवल व्यक्ति के आर्थिक उत्थान के माध्यम से बल्कि सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मजबूती के माध्यम से मानव जीवन को बेहतर बनाना होना चाहिए। इससे न केवल मानव जीवन में सुधार होगा बल्कि 'उच्च सत्य' का भी एहसास होगा। युवाओं के सशक्तिकरण की दिशा में एक पहल के रूप में मूल्य शिक्षा पर अध्ययन छात्रों के व्यक्तित्व और उनके वर्तमान और भविष्य के जीवन में सकारात्मक अंतर लाने में मूल्य शिक्षा की भूमिका को समझने का एक प्रयास है। अध्ययन से पता चला है कि मूल्य-शिक्षा कार्यशालाओं के माध्यम से छात्रों को जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उससे उन्हें अनुशासन और नैतिक ईमानदारी के मूल्य को समझने में मदद मिली है। उन्होंने एक बेहतर टीम भावना विकसित की है, अपने आत्मविश्वास के स्तर को बढ़ाया है, एकाग्रता की शक्ति में सुधार किया है और बेहतर पारस्परिक संबंध बनाए हैं। इससे उन्हें संवेदनशील इंसान के रूप में विकसित होने में मदद मिली है और वे जीवन की चुनौतियों का प्रभावी ढंग से सामना करने में सक्षम हुए हैं। छात्रों ने इन समृद्ध अनुभवों के माध्यम से बहुत कुछ हासिल किया है और स्पष्टता, साहस और संयम के साथ गतिशील वातावरण की अनिश्चितताओं का सामना करने के लिए सशक्त हुए हैं। मूल्य शिक्षा के समग्र दृष्टिकोण ने यह सुनिश्चित किया है कि छात्रों के व्यक्तित्व के सभी आयामों का संतुलित विकास हो। आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा वह शक्तिशाली शक्ति है जो व्यक्ति को मजबूत और दृढ़ बनाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020, (एक विहग अवलोकन, म. प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. अवस्थी, डी. (2014), मूल्य आधारित शिक्षा ही भारत के युवाओं में नैतिक मूल्यों के संकट की समस्या का एकमात्र समाधान है। जीजेआरए - शोध विश्लेषण के लिए वैश्विक पत्रिका। एक शोध पत्र, खंड 3 अंक 9 सितंबर, 2014 आईएसएसएन संख्या 2277-8160।
3. अनेजा, एन. (2014), वर्तमान शिक्षा प्रणाली में मूल्य शिक्षा का महत्व और शिक्षक की भूमिका। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस एंड ह्यूमैनिटीज रिसर्च आईएसएसएन 2348-3164 (ऑनलाइन) वॉल्यूम। 2, अंक 3, पीपी: (230-233), महीनारू जुलाई 2014 - सितंबर 2014।
4. लीचसेनरिंग, ए. (2010),2000 के दशक में स्कूलों में मूल्य आधारित शिक्षा: ऑस्ट्रेलियाई अनुभव। क्वींसलैंड प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय: ऑस्ट्रेलिया। एक अप्रकाशित मास्टर की थीसिस।
5. यादव, यू. एवं सैनी, एम (2016), नैतिक नैतिक मूल्य और भारतीय शिक्षा प्रणाली। XVII वार्षिक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी कार्यवाहीय जनवरी, 2016 आईएसबीएन संख्या से लिया गया।

6. https://www.linkedin.com/pulse/connection-between-values-education-21st-century-skills-izehi-anuge/
7. https://eduedify.com/importance-of-value-education/
8. https://www.capstonecore.com/the-value-of-a-21st-century-education/
9. https://www.iberdrola.com/talent/value-education/
10. http://www.internationalseminar.in/XVII_AIS/INDEX.HTM.Urmila_yadav.pdf/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अनुसूचित जनजाति के महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता का स्तर एवं उपयोग-प्रवृत्तियाँ : अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन

थानसिंह गेहलोत* डॉ. संजीव कुमार शर्मा **

* शोधार्थी, माघव यूनिवर्सिटी, पिंडवाड़ा, जिला - सिरोही (राज.) भारत
** सहायक आचार्य, माघव यूनिवर्सिटी, पिंडवाड़ा, जिला - सिरोही (राज.) भारत

शोध सारांश – सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास ने ज्ञान के उत्पादन, संग्रहण, प्रसार तथा उपयोग की प्रकृति को मौलिक रूप से परिवर्तित कर दिया है। वर्तमान युग में सूचना साक्षरता (Information Literacy) को उच्च शिक्षा की आधारशिला माना जाता है, क्योंकि यह विद्यार्थियों को सूचना की पहचान, खोज, मूल्यांकन तथा नैतिक उपयोग की क्षमता प्रदान करती है। विशेष रूप से अनुसूचित जनजाति समुदाय के विद्यार्थियों के लिए सूचना साक्षरता का महत्व और अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि यह वर्ग ऐतिहासिक रूप से सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक वंचनाओं से प्रभावित रहा है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य अलीराजपुर जिले के चयनित शासकीय महाविद्यालयों में अध्ययनरत अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता के स्तर तथा उसकी उपयोग-प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना है। अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण पद्धति का प्रयोग किया गया तथा संरचित प्रश्नावली के माध्यम से 470 विद्यार्थियों से प्राथमिक आँकड़े संकलित किए गए। आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत विधि एवं तालिकात्मक प्रस्तुति द्वारा किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों से यह स्पष्ट हुआ कि अधिकांश विद्यार्थी सूचना साक्षरता के महत्व से परिचित हैं और इंटरनेट को सूचना का प्रमुख स्रोत मानते हैं, किंतु प्रशिक्षण की कमी, सीमित डिजिटल संसाधन और तकनीकी अवसंरचना की बाधाएँ सूचना साक्षरता के प्रभावी विकास में प्रमुख अवरोध बनी हुई हैं। शोध-पत्र में सूचना साक्षरता को सुदृढ़ करने हेतु शैक्षणिक, संस्थागत एवं नीतिगत स्तर पर उपयोगी सुझाव भी प्रस्तुत किए गए हैं।

शब्द कुंजी – सूचना साक्षरता, अनुसूचित जनजाति, उच्च शिक्षा, डिजिटल संसाधन, अलीराजपुर जिला।

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी को प्राय: 'सूचना एवं ज्ञान का युग' कहा जाता है। आधुनिक समाज में सूचना की उपलब्धता अभूतपूर्व स्तर पर बढ़ी है, किंतु सूचना की अधिकता ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि केवल सूचना तक पहुँच होना ही पर्याप्त नहीं है। आवश्यक यह है कि व्यक्ति सूचना की प्रासंगिकता, प्रामाणिकता और उपयोगिता को समझ सके। इसी संदर्भ में सूचना साक्षरता की अवधारणा का विकास हुआ।

सूचना साक्षरता का तात्पर्य उस क्षमता से है, जिसके माध्यम से व्यक्ति यह पहचान पाता है कि उसे कब और किस प्रकार की सूचना की आवश्यकता है, वह उपयुक्त सूचना स्रोतों की पहचान कर सकता है, सूचना को प्रभावी ढंग से खोज सकता है, उसका आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकता है तथा उसे नैतिक एवं कानूनी रूप से उपयोग में ला सकता है। उच्च शिक्षा में यह क्षमता विद्यार्थियों को स्वतंत्र अध्ययन, शोध कार्य तथा आजीवन सीखने की प्रक्रिया के लिए सक्षम बनाती है।

भारतीय संदर्भ में उच्च शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री प्रदान करना नहीं है, बल्कि सामाजिक न्याय, समावेशिता और समान अवसरों को सुनिश्चित करना भी है। अनुसूचित जनजाति समुदाय भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो भौगोलिक रूप से प्राय: दूरस्थ क्षेत्रों में निवास करता है और सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत पिछड़ा माना जाता है। ऐसे में अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों के लिए सूचना साक्षरता न केवल शैक्षणिक सफलता का माध्यम है, बल्कि सामाजिक सशक्तिकरण का भी एक प्रभावी उपकरण है।

मध्यप्रदेश का अलीराजपुर जिला पूर्णत: अनुसूचित जनजाति बहुल जिला है। यहाँ के अधिकांश विद्यार्थी ग्रामीण पृष्ठभूमि से आते हैं और पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी होते हैं। डिजिटल युग में, जहाँ शिक्षा का एक बड़ा भाग ऑनलाइन एवं तकनीक-आधारित हो रहा है, वहाँ यह आवश्यक हो जाता है कि इन विद्यार्थियों की सूचना साक्षरता की वास्तविक स्थिति का अध्ययन किया जाए। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध-पत्र अलीराजपुर जिले के महाविद्यालयीन अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता के स्तर और उसकी उपयोग-प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है।

सूचना साक्षरता की अवधारणा एवं महत्व – सूचना साक्षरता की अवधारणा का औपचारिक विकास 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ। अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसिएशन ने सूचना साक्षर व्यक्ति को ऐसा व्यक्ति बताया है जो यह जानता है कि सूचना कब आवश्यक है और वह आवश्यक सूचना को प्रभावी ढंग से खोज, मूल्यांकन एवं उपयोग कर सकता है।
शैक्षणिक संदर्भ में सूचना साक्षरता का महत्व अत्यधिक है। यह विद्यार्थियों में निम्नलिखित क्षमताओं का विकास करती है:

1. स्वतंत्र अध्ययन एवं शोध क्षमता
2. आलोचनात्मक चिंतन
3. समस्या समाधान कौशल
4. डिजिटल एवं मीडिया साक्षरता

5. नैतिक सूचना उपयोग की समझ

अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों के लिए सूचना साक्षरता का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि यह उन्हें पारंपरिक सीमाओं से बाहर निकलकर वैश्विक ज्ञान समाज से जुड़ने का अवसर प्रदान करती है।

अनुसूचित जनजाति एवं उच्च शिक्षा का परिप्रेक्ष्य – भारत में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति ऐतिहासिक रूप से वंचनाओं से प्रभावित रही है। शिक्षा को इनके सामाजिक उत्थान का प्रमुख साधन माना गया है। स्वतंत्रता के बाद सरकार द्वारा आरक्षण, छात्रवृत्ति और विशेष योजनाओं के माध्यम से जनजातीय शिक्षा को प्रोत्साहन दिया गया है, किंतु उच्च शिक्षा में इनकी भागीदारी अभी भी चुनौतियों से घिरी हुई है।

डिजिटल विभाजन जनजातीय क्षेत्रों में एक प्रमुख समस्या के रूप में उभरता है। सीमित इंटरनेट सुविधा, कंप्यूटर संसाधनों की कमी और प्रशिक्षण का अभाव सूचना साक्षरता के विकास में बाधक बनता है। अलीराजपुर जिला इस स्थिति का एक प्रतिनिधि उदाहरण है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुसूचित जनजाति के महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता के स्तर का आकलन करना।
2. सूचना प्राप्ति के प्रमुख स्रोतों और उपयोग-प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना।
3. सूचना साक्षरता के प्रति विद्यार्थियों की जागरूकता एवं दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
4. सूचना साक्षरता के उपयोग में आने वाली प्रमुख समस्याओं एवं चुनौतियों की पहचान करना।
5. सूचना साक्षरता को सुदृढ़ करने हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति – प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण पद्धति अपनाई गई। अध्ययन क्षेत्र के रूप में अलीराजपुर जिले के चार शासकीय महाविद्यालयों का चयन किया गया। अनुसूचित जनजाति वर्ग के कुल 470 विद्यार्थियों को नमूना बनाया गया।

डेटा संकलन हेतु स्वयं निर्मित एवं मान्यीकृत संरचित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया, जिसमें सूचना साक्षरता, कंप्यूटर ज्ञान, आईटी एवं इंटरनेट उपयोग से संबंधित प्रश्न शामिल थे। आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत विधि, तालिकात्मक प्रस्तुति एवं वर्णनात्मक व्याख्या द्वारा किया गया।

डेटा विश्लेषण एवं चर्चा – अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के अनुसार अधिकांश विद्यार्थी सूचना साक्षरता के महत्व से परिचित हैं। इंटरनेट सूचना का प्रमुख स्रोत बन चुका है, जबकि पुस्तकालय संसाधनों का उपयोग अपेक्षाकृत सीमित है। डिजिटल संसाधनों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के बावजूद प्रशिक्षण की कमी एक प्रमुख बाधा के रूप में सामने आई।

यह स्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि सूचना साक्षरता केवल तकनीकी उपलब्धता का परिणाम नहीं है, बल्कि यह व्यवस्थित प्रशिक्षण और मार्गदर्शन पर भी निर्भर करती है।

निष्कर्ष – अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अलीराजपुर जिले के अनुसूचित जनजाति महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता का स्तर मध्यम है। डिजिटल युग के प्रभाव से सूचना संसाधनों का उपयोग बढ़ा है, किंतु संसाधनों और प्रशिक्षण की कमी इसके पूर्ण विकास में बाधक है।

सूचना साक्षरता को सुदृढ़ कर अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों की शैक्षणिक गुणवत्ता, शोध क्षमता और रोजगार योग्यता में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है।

सुझाव :

1. महाविद्यालयों में नियमित सूचना साक्षरता कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
2. पुस्तकालयों को डिजिटल एवं ई-संसाधनों से सुसज्जित किया जाए।
3. विद्यार्थियों को इंटरनेट के सुरक्षित एवं शैक्षणिक उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाए।
4. कंप्यूटर एवं इंटरनेट अवसंरचना को सुदृढ़ किया जाए।
5. सूचना साक्षरता को पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, आर. (2018). सूचना साक्षरता और उच्च शिक्षा, नई दिल्ली: एसोसिएटेड पब्लिशर्स।
2. कुमार, संजीव. (2019). महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में सूचना साक्षरता का अध्ययन, भारतीय पुस्तकालय विज्ञान पत्रिका, 33(2), 45ε52।
3. शर्मा, आर. के. (2017). ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान: सिद्धांत और व्यवहार, जयपुर: राज पब्लिकेशन्स।
4. मिश्रा, पी. (2020). अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों में डिजिटल विभाजन की समस्या, समाजशास्त्र विमर्श, 12(1), 78-85।
5. सिंह, ए. के. (2016). सूचना प्रौद्योगिकी और शिक्षा, वाराणसी: ज्ञान भारती प्रकाशन।
6. वर्मा, एस. (2019). उच्च शिक्षा में सूचना साक्षरता का महत्व. शैक्षिक अध्ययन, 7(3), 112-118।
7. पटेल, एम. (2018). जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा और तकनीकी चुनौतियाँ, आदिवासी अध्ययन पत्रिका, 5(2), 39-46।
8. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय।
9. यादव, आर. (2017). डिजिटल भारत और शिक्षा. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
10. चौधरी, एल. (2021). महाविद्यालयीन पुस्तकालयों में सूचना साक्षरता कार्यक्रम. ग्रंथालय दर्पण, 14(1), 21-29।
11. शर्मा, पी., एवं गुप्ता, एन. (2018). अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों में सूचना संसाधनों का उपयोग. भारतीय सामाजिक अनुसंधान, 10(2), 64-72।
12. सिंह, डी. (2019). सूचना समाज और ज्ञान संस्कृति, इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
13. पांडेय, के. (2016). उच्च शिक्षा में इंटरनेट की भूमिका, शिक्षा और समाज, 8(1), 90-97।
14. त्रिपाठी, एस. (2020). डिजिटल साक्षरता और युवा. समकालीन भारत, 6(4), 55-61।
15. यूनेस्को. (2018). मीडिया एवं सूचना साक्षरता: नीति एवं दिशा-निर्देश (हिंदी संस्करण), नई दिल्ली: यूनेस्को कार्यालय।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Effect of Social Media on the Accademic Performance of the Senior Secondary School Students

Shivani Singh* Dr. Sanjeev Kumar**

*M.Ed. Student (Education) Hindu College, Moradabad, M.J.P.R.U, Bareilly (U.P.) INDIA
** Assistant Professor (Education) Hindu College, Moradabad, M.J.P.R.U, Bareilly (U.P.) INDIA

Abstract: The purpose of this research study is to examine the effect of Social Media on the Academic Performance Of students in SeniorSecondary school. This research study was conducted in moradabad district areaof Uttar Pradesh,hence the research area is moradabad district.The present research is descripted in nature and is based on survey method. The simple random sampling technique was used to select a sample of 100 students. Social Media and Academic Performance of Students Questionnaire (SMAAPOS) was used to collect datafrom the participants. The descriptive statistics of frequency counts and percentage, were used to analyze the demographic data while inferential statistics of ANOVA Test,T-Test, was used in testing the research hypotheses.

The Research findings showed that a great number of students in senior secondary schools are connected to social media. The researchrecommended that social media should be used in proper manner to enhance the performance.Students should be monitored by teachers and parents on how they use these sites. This is to create a balance between social media and academic activities of students to avoid setbacks in the academic performance of the students.

Keywords- Social Media, Academic Performance, Students, Senior Secondary School.

Introduction - Today we all know that we all are living in 21st century and this century is famous for new technology's and we can say that 21st centuries also known as a century of technologies.

The word is today celebrating the improvements in communication technology which has broad the scope of communication through the information and communication technology ICT. Modern technology in communication no doubt has turn the entire word into a "Global village". But as it is, technology like two sides of a coin, bring with it both negative and positive sides. It helps people to be better informed, enlightened, and keeping abreast with world developments. The social networking sites are used by most people to interact with old and new friends, physical or internet friends.The world has been changed rapidly by the evolution of technology; this has resulted Into the use of technology as the best medium to explore the wide area of knowledge and communication etc.There is more than half of the world's internet population visit social networking or blogging sites. The billions of pupil communicatethrough social networking sites. Academic performance is commonly measured by examination or continuous assessment.However the darker side within technological evolution has resulted in dilemmas such as the setback of real values of life especially among students who form the majority of users interacting through the use of social networking sites.

Online social networking sites focus on building and reflecting social associations among people who share interests and or activities. With so many social networking sites displayed on the internet, students are tempted to abandon their homework and reading times in preference for chatting online with friends. Many students are now addicted to the online rave of the moment, with Facebook, Twitter etc. Most of students always using the sites even in between their studies, there online status is on. They involve in these sides for meeting new friends online and busy discussing tribal issuesposting picture in always worried about the number of likes or comment or posts. Hence most students' academics suffer setback as a result of distraction from the social media. It was observed that the use of these sites also affects students' use of English and grammar. The students are used to short forms of writing words in their chat rooms; they forget and use the same in the classrooms. They 4 use things like 4 in place of for, U in place of You, D in place of The etc. and this could affect their class assessment. Social networking sites although has been recognized as an important resource for education today, studies however shows that students use social networking sites such as Facebook for fun, to kill time, to meet existing friends or to make new ones . Although it has been put forward that students spends much

time on participating in social networking activities, with many students blaming the various social networking sites for their steady decrease in grade point averages it also shows that only few students are aware of the academic and professional networking opportunities the sites offered. Whereas on the other's hand they reviewed that the students are socially connected with each other for sharing their daily learning experiences and do conversation on several extracurricular activities and academic activities are not enough to satisfy some student those who are suffered by social networking isolation. This shows that social networks are beneficial for the students as it contributes in their learning experiences as well as in their academic life.The Internet is no doubt evolution of technology but specifically social networks are extremely unsafe for teenagers, social networks become hugely common and well-known in past few years. Social networking site provide ease of connecting people to one another free of cost and after connecting one can post news, informative material and other things including videos and pictures etc. In the same way the students use social networking websites approximately 30 minutes throughout the day as a part of their daily routine life. This statement shows the importance of social networking websites in students' life.

Meaning of Education: The word "educate" comes from the Latin word "educere" it's meaning "to lead out", "to bring out" . To educate meaning to bring out of the child, the student, that spirit of learning and wonder the desired to know, that thirsts for knowledge. True education is the harmonious development of the physical, mental, moral and social education. Illiterate of 21st century will not be those who cannot read and write but those who cannot learn, unlearn and re

By Aristotle "Education is the creation of sound mind in a sound body."

By Swami Vivekananda "education is the manifestation of divine perfection already existing in a man".

Meaning of Social Media: Social media is a source of powerful and instant information .All about psychology and sociology more than mean of technology. Computer based technology that facilitates the creation and sharing of information, Idea,career interest and other form of expression via virtual communities and network. Some of the most common type of social media websites (Wikipedia Chrome) and apps are:- What's app . Instagram, X , Facebook, YouTube, Snapchatetc.

Origin of Social Media: media started in the mid of 90s and now capture a very large area of the word it started by the symbol modes send the first electronic message via telegraph.

Since its origin in 1979, social media has transformed into a platform used extensively by businesses and individuals not only to advertise and campaign themselves, but also to understand the customers' and clients' requirements better. There have been several milestones throughout the evolution of social media. The introduction of a programmer that allowed people to communicate effectively over the internet using newly created virtual newsletters created an entire arena of communication that has now become an important thread in the way humans now connect andcommunicate. While the first milestone may have been marked by UseNet in the form of a virtual newsletter, the real game changer has been the easy and affordable availability of home computers and by extension, internet chats.

The Increasing online interaction has been the center since the first emails were sent in 1969 – ARPANET the precursor to the internet is establish. Nonetheless, in 1997, Six.Degrees.com was dubbed by the investigator of social networking platforms as the first forum, which is known by first and users may build profiles and list their contacts. The modern generation of social networking platform was founded by Ryze.com in 2001 to enable people expand on the business networks. LinkedIn has since grown into a large business network, the most prominent being Friendster. In 2003, a set of shared interests were developed for several different social networking sites. Throughout early 2004, as Facebook became Harvard's first Social Network platform, it eventually spread into high school students and all other businesses throughout September 2005.Also In 2005- Reddit and YouTube are launched. In 2006- Twitter and Tumblr emerge as microblogging platforms. As a consequence, the number of Facebook users expanded into high-density portals such as the citizens of India. A sum of 63.46 million users use the social network platforms on Twitter compared to YouTube. Myspace and Facebook encourage teenagers, in the same way as non-public spaces, to socialize with their peers while not in a place of immediate reception to networked publics. In fact, the explosion of social networks is the result of a new technology in Online networking of the society of the 21st century and a consequence of the media world financial, fiscal, social and cultural milieu. Digital technology has opened up broader doors and utilized the scope of fields for its research. There is a modern way to find answers in this world because you want technology because it is really useful as blogs and social networks are actually really successful. During the first step, the US Department of Defense has been utilizing a computer network to link and organize threat control operations. Next, corporations used virtual networks to link to firms and organize them to succeed worldwide. Later on, the shared computer groups used (Castells M., 2010). True interactive resources for technically advanced young people have increased demand for social network networks to cater to the social needs of consumers. Therefore, social networking platforms were used to build a group of social networks for the people all around the world. Aristotle declared long ago that man is a social entity who interacts to build a human community. The early historical evidence indicates that about 12,000

BCE nomadic tribal hunter-gardeners developed, with the growth of the speech network, slowly from bio-physical communities into a collective culture community. In 2010- Instagram and Pinterest start focusing on visual content. In 2011- Snapchat introduce short form video sharing. And than reels, tik-tok etc. and so on.

Today, social media has become an integral part of our daily lives, with dozens of websites serving different purposes and aiding communication, entertainment and research in their own ways.

Negative effects of social media:-

1) **Cyberbullying-** Cyberbullying is one of the major concerns worldwide that happens on social media a lot to manipulate, humiliate and cause harm to another person online. It has become the reason students are getting mentally tortured and emotionally unwell. Hence, it is imperative for the parent to teach their child not to bully anyone in any way.

2) **Academic Distribution-** Excessive involvement in social media diverts students from their academics. They spend their long hours on social media which causes a lack of time management in their studies and they don't even focus on their studies. Students get to know more on social media platforms but it is also a huge distraction for their academics.

3) **Excessive Addiction-** Involvement in social media can make students addicted. Addiction to social media can be very dangerous and harmful for young minds. Parents must be attentive towards their kids, they shouldn't let their children become addicted.

4) **Mood Disorders-** Regular use of social media can lead to an increase in the level of mood disorders in students as it causes dissatisfaction and insecurity among students.

5) **Sleeping Deprivation-**One of the major negative effects of social media is that students do not get as much sleep as they need. Lack of sleep directly affects mental and emotional health. Healthy sleep is mandatory, especially for students to maintain good health.

6) **Obscene Images-**It's very obvious if someone is using social media and suddenly an obscene image appears which a student shouldn't be seeing.

7) **Privacy Issues-**Social media not only entertain us but also gather our sensitive data and personal information. Teach your kid not to share any personal information with any strangers online. It can be harmful as someone can use personal or sensitive information against them.

8) **Lacking Self Confidence-**Social media has affected students' lives a lot in many ways. Nowadays, students are actively engaged in social media and see many influencers who attract them. They start to compare their lives to those of social media influencers which forms a lack of self-confidence.

9) **Spreading False Information-**We all know, that social media is a huge platform that not only shares informative news but also spreads rumors, misinformation and lies about certain incidents or a person. Spreading wrong information about someone is completely wrong, it can affect them mentally or emotionally.

10) **Health Issues-**Many students are not fully aware of the fact that social media affects physical health a lot. Instead of playing outside students are so much into social media that they mostly waste their time playing online games which is not good for their mental health as well as physical health.

Positive effects of social media:-

1) **Education Assistance-** Students get a broad understanding of the subject online if they are facing to solve or learn. With the help of social media students acquire knowledge apart from their academic knowledge. They learn and solve questions online with the help of online tutors.

2) **Networking Or Connectivity-**Social media is a huge platform where people make connections with one another and build new relationships even at a distance. Because of social media, it's easy to make new friends and share or exchange ideas and feelings.

3) **Creativity-**Social media provides tons of opportunities for students or adults to help them showcase their hidden talents or creativity online. Due to this, they get recognition on social media.

4) **Communication Skills-**Students learn better communication skills by interacting with different people online. Through social media, students can enhance and improve their communication skills.

5) **Learning Opportunities-**Social media help people learn new things. It is very important for students to gather knowledge as social media provides various learning opportunities for students. They can learn new skills on social media apart from their academics.

6) **Collaborative Learning-** Collaborative learning is a situation in which two or more people learn or attempt to learn something together. Unlike individual learning, people engaged in collaborative learning capitalize on one another's resources and skills.

7) **mental And Social Well-Being-**Social Media fosters a personal connection, helping students maintain social ties, even at a distance. It has definitely maintained if not improved the mental and social well-being of students. Social media has brought the community of students together in real-time, wiping off the real-world distance.

8) **Skill Development-**Social media often help to encourage skill development and creativity. Many students learn and explore new skills platforms like YouTube. The platform helps them to find tutorial courses and resources on various topics, such as coding, art, cooking and more. It also helps students to learn new skills, share their creations, and connect with others who have similar interests.

Academic Performance:-Academic performance refers to a student's achievement and success in their educational endeavors. It is typically measured by assessing a student's

grades, test scores, and overall academic accomplishments. Academic performance serves as an indicator of a student's mastery of subject matter, their ability to apply knowledge, and their level of engagement and effort in their studies. Teachers, parents, and educational institutions use academic performance data to identify areas of strengths and weaknesses, tailor instructional support, and track students' progress over time. For students, academic performance can be a source of motivation, recognition, and future opportunities, such as scholarships, awards, and college admission.

Need of the study: This study is significant to the teachers, parents and students. This study will help the teachers of the school to know the influence that social media has on their students, so as to assist them to enlighten and create awareness to the students on the possible influence it has on them. The study is of significant to parents in the sense that they will know the possible effects these social media usage has on their children, so as to serve as watch-dog to their children on the usage of the social networking site. The study will enable the students of the senior level so that they will be aware that, apart from the social benefits of this social networking site, using the sites more than necessary will pose possible dangers to their health. It will be relevant in assisting students in understanding the diversity of social media. It will provide relevance material for students and other researchers undertaking similar research. The study will help researchers with more information on the Influence of social media on student's academic performance. The focus of this research work is to primarily study the Influence of social media on the academic performance of students.

Literature Review

Mahmood, S. and Taswir, T. (2013),"The effects of Social Networking Sites on the Academic Performance of Students in College of Applied Sciences, Nizwa, Oman. "The beneficial results of this campaign and the uses and gratifications highlighted in this study, shows social networks as a significant influence in the academic performance of students. The research also concludes that a large section of students capitalize on the importance of human classroom face to face instruction, the social networks used for educational / tutoring should be able to apply these principles in a virtual classroom.

Raj KumariKalra (2013),"Effects of social networking sites on academic achievement among introverts and extroverts" This paper is on the basis of the findings of current study that students are managing their time efficiently and hence, use of Social Networking Sites does not harm their academic performance. Findings suggested that despite of spending time on internet or on using Social Networking Sites, and even with the personality differences students are efficient enough for their studies that they do not face any deficiency in meeting their studies' requirements.

Bernard John Kolan (2018),"Effect of Social Media on Academic Performance of Students in Ghanaian Universities: A Case Study of University of Ghana, Legon."Different forms of education including distance education has been widely patronized and facilitated to some degree through these social media networks. Acquiring information both locally and internationally from friends, lectures or experts is no longer a struggle as compared to the olden days and the internet is the ultimate master behind this success. "Social media is a useful servant but a dangerous master" and can also be "described as a two edge sword" and as such, users especially students must be alert about its dangers and be prudent in its utilization.

Khalid H (2017),"The Effects of Social Networks on Pakistani Students. "First thing we discovered was that in Pakistan, every student is using some kind of platform for socializing as well as for academic and educational purposes. Most of the students have accounts on Facebook and use YouTube for different purposes. If the students use these platforms in a balanced way, it will not harm their health. Secondly, we found out that there is a huge number of users who are unaware of the terms and policies of the social networks they are using. Thirdly, we came to the conclusion that social networks plays a positive role in students' academic activities.

SUDHA S (2016),"The effect of social networking on students academic performance's perspective of faculty members of periyar university, Salem "However, the studies appear from two opposing views on the impact of SNSs on users. While proponents argue that it allows users in connecting people of common interest and value, opponents claim that excessive use of these sites affect the social, mental and physical health of the users. Most of the faculty members known that the students are engage in the use of SNSs for socializing activities moderately than for academic purposes. In the meantime, the positive impacts of SNSs on their academic performance are considerably low.

Statement of the Problem:"The Effect of Social Media on the Academic Performance of the Senior Secondary School Students".

Objective of the study:

1. To Study the effect of social media on academic performance of secondary school Students.
2. To Study the difference between purpose of using the social media and academic performance of the students.
3. To Study the difference between most use of social media platforms and academic performance of the students.

Population of the study: The population in this research are all the full time secondary school students of the CBSE Board or UP Board from class 10 to 12th 2024/2025 session. The population of the study includes students from senior secondary school's in rural or urban areas of

moradabad district.

Sample and Sampling Techniques: A total sample size of 100 students from 10 to 12th class, in this sample size 50 are girls and 50 are boys were randomly selected from CBSE and UP board schools of Moradabad district including both rural or urban areas. So the 25 girls & 25 boys are selected from urban area of district and the 25 girls and 25 boys are selected from rural area of district Moradabad.

Research Instruments/Tools: A well-constructed and self-developed questionnaire titled "Social Media and Academic Performance of Students Questionnaire (SMAAPOS)" was used to get the desired information from the students. The questionnaire was divided into two sections (A and B). Section. A was for collection of information on personal data of respondents while Section B consisted of questions that elicited responses from the respondents with response options: Strongly Agree (SA), Agree (A), Disagree (D) and Strongly Disagree (SD).

Method of data collection: The researcher collected the needed data through the use of questionnaire and its administration in the selected faculties. The administration of the questionnaire were carried out by the researcher. A total of 100 copies of the questionnaire were distributed to elicit responses from the students and retrieved on the spot by the researcher. A total of 22questionnaires were missing while 15 were wrongly filled leaving the researcher with 63 valid questionnaires.

Data Analysis

Hypotheses:-1 There is a no significant effect of social media on academic performance of secondary school students.

TABLE :1– Effect of social media on academic performance of senior secondary school students.

Variables	N	Mean of academic perform -ance	Standard Deviations	T-Value
Before using the social media	50	5.74	1.68	-10.02
After using the social media	50	7.78	1.41	

Since the p-value is much smaller than any common significance level (such as 0.05 or 0.01), the null hypothesis. This indicates that there is a significant difference between the two groups' means.

Thus, the significance level (p-value) is less than 0.0001.

The Above Table-1 reveals that there is a positive effect between the Academic Performance in Annual of Secondary Students (Before Starting use of Social Media) and Academic Performance in Half Yearly (After Starting use of Social Media).This indicates that social media impacts the academic performance of the students. Therefore the social media contributes to improve the academic performance of the students.

Hypotheses:-2

There is no significant difference between purpose of using social media and academy performance of students.

TABLE :2- The effect of social media purpose on students academic or non- academic performance of senior secondary school students.

Purpose of using social media	N	Percen -tage	Mean	Standard Deviatio -ns	T- Value
Academic	70	70%	35.5	20.2	6.93
Non- Academic	30	30%	15.5	8.65	

Significance level 0.0001

P value is 0.0001, This suggest that the result is highly significant.

The significance level (p-value) is extremely small, much smaller than typical significance thresholds (such as 0.05 or 0.01). Therefore, the null hypothesis is rejected, indicating a significant difference between the two groups.

Table – 3 Purpose of Using Social Media and Academic Performance of the Students, out of the total respondents of 100 students, 70 representing 70% responded in the Academic purpose when asked if the purpose of using Social Media have improved their academic performance, 30 representing 30% responded in the Non Academic. It reveals that the Students who have used for Academic Purpose have more academic performance than the Non Academic purpose. The implication is that the use of social media for Academic purpose have improvement in their academic performance.

Hypotheses:-3

There is no significant difference between most use of social media platforms and academic performance.

TABLE:3-The effect of most using social media platforms on academic performance of senior secondary school students.

Most using Platform	N	Percen -tage	Mean of Academic Perform -ance	Standard Deviations	F- Value
Instagram	20	20%	10.5	8.14	2.16
What'sApp	30	30%	15.5	17.03	
Google	15	15%	8	4.62	
YouTube	25	25%	13	14.42	
Telegram	10	10%	5.5	2.87	

Significance level 0.077

P value is 0.077, This suggest that the result is significant.

The p-value of 0.077 suggests that the result is not statistically significant at the 0.05 level (since 0.077 > 0.05). Therefore, you fail to reject the null hypothesis and conclude that there is no significant difference between the means of the five groups at the 5%significance level. However, if you were to use a 0.10 significancelevel, the result would be considered statistically significant (since 0.077 < 0.10).

Table-3, respondents gave the following as their most use of Social Media Platform. Instagram 20 represents 20%, WhatsApp 30 represents 30%.Google 15 represent

15%,.YouTube 25 represent 25% and Telegram 10 represent 10% respectively. The analysis shows that What's App is the most use Social Media Platform. It reveals that the Students who have used WhatsApp have more academic performance.

Conclusion: The result from the findings of this study showed that, social media have both kind of effects negative or positive on students,and it's totally up to students that in what's ways they are using social media, mainly social media effects on secondary students is positive and support their academic performance .

Hypothesis-1: Shows that students Academic performance before using the social media or after using a social media doesn't have much difference, even after using the social media students gets more in their academic performance.

Hypothesis-2: Shows the actual purpose of Students visit social networking sites more for their academic related work which is 70% and only 30% Students visit social networking sites for their non- Academic work which shows the positive effect of social sites on students.

Hypothesis-3: Shows which is most used social networking sites by school students, and most students use WhatsApp and YouTube for their academic or non Academicwork .

But we can't avoid the other side of social media which shows the negative effects on teenagers such as lack of privacy, distracting students from their academic work, taking most of their productive time, and such like, they also have benefits and can be used appropriately. For instance, students can form online communities in order to plan for a project, have group discussions about class material, or use the Social networking sites(SNS) as a way to keep in contact when a student who has been absent needs to be updated on current academic information. The findings of this study and earlier ones showed some noteworthy results. The first independent variable influencing the academic performance of students, that is, social media participation was negatively related with students' outcome, while the other independent variables were positively related with students' outcome. The results of this study suggest that lecturers should come up with a template on how their students can maximize the benefits of Social media, that school management should incorporate rules and regulations on the use of the social media in the school and, that the government should put in place adequate control measures to regulate their use among students and lecturers.

References:-

1. Sorav, J., Most Popular Social Networking Sites of the World. Retrieved 28 January 2011 http://socialmediatoday.com/soravjain/195917/40-most popular-social networking- sites-world, 2010.
2. Repacki, S. (2007). Social networking sites: Why teens need places like myspace. Young Adult Library Services. 28-30.
3. Peel District School Board.(2014) BYOD. Retrieved from http://www.peelschools.org/aboutus/21stCentury/byod/Pages/default.aspx
4. Lenhart, A., & Madden, M. (2007). Teens, Privacy & online social networks: Howteens manage their online identities and personal information in the age of My Space. Washington, DC.
5. Lewis, S. (2008). Where young adults intend to get news in five years. Newspaper Research Journal, 29(4), 36-5, Retrieved from: http://findarticles.com/p/articles/mi_qa3677/ is_200810/ ai_n39229321/
6. Liccardi, I., Ounnas, A., Pau, R., Massey, E., Kinnunen, P.Lewthwaite, S., Midy, A., &Sakar, C. (2007). The role of social networks in students' learning experiences. ACM SIGCSE Bull 39(4), 224-237.
7. Lin, G. and Subrahmanyam, K. (2007). Adolescents and the net: Internet use and wellbeing. Adolescence, 42(168), 659-675. Retrieved from: http://findarticles.com/ p/articles/ mi_m2248/ is_168_42 / ai_n27483301/
8. Livingstone, S. (2008). Taking risky opportunities in youthful content creation: Teenagers' use of social networking sites for intimacy, privacy and self-expression. New Media Society, 10, 393-411
9. Greenfield, P. and Subrahmanyam, K. (2008). Online communication and adolescent relationships. The Future of Children, 18, 119-140. Retrieved from: http://www.futureofchildren.org. Hoyle, E. (1986).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Role of Indian Knowledge System

Dr. Seema Dekate*

***Asst.Prof. (English) Govt. M.B. Arts and Commerce Autonomous College for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA**

Introduction - The Indian Knowledge Systems is a specific cell within the Indian government's Ministry of Education designed to integrate traditional indigenous wisdom into modern academic frameworks. It was established in 2020,and this initiative encourages universities to offer credits for learning ancient sciences, Vedic mathematics, and traditional health practices like yoga and Ayurveda. Supporters argue that the programme preserves national heritage and serves to decolonise the education system by reducing Western bias. However, the division faces significant backlash from critics who claim it promotes pseudoscience and historical inaccuracies to serve a political agenda. Opponents further worry that replacing global academic standards with these curricula might hinder the professional prospects of Indian graduates. Despite these debates, the IKS continues to fund research animplement traditional games and philosophies across diverse educational levels.

The need for Indian Knowledge Systems (IKS) in the present day is driven by the desire to address contemporary global challenges while restoring a distinct national and cultural identity.A primary motivation for promoting IKS is its potential to tackle modern crises, most notably climate change. Proponents argue that ancient principles—such as dharma-centric design and ecological balance—can enrich modern technological thinking by aligning it with human values and environmental sustainability. This is rooted in the IKS emphasis on living in harmony between human activity and nature.

There is a significant perceived need to decolonise Indian education by reducing what is viewed as undue Western influence. By integrating IKS, the government aims to preserve Indian heritage and expose students to the country's rich intellectual traditions, fostering a well-rounded worldview and making individuals more culturally and socially conscious.

In present times, education aims to move beyond mere academic excellence toward holistic development. This involves:

- Integrated Learning: Incorporating traditional arts, ethics, and sports (such as the Bharatiya Khel initiative) into the educational fabric.
- Mental and Physical Health: Exploring the therapeutic values of Indian music and consciousness studies to improve the overall well-being of the human body and mind.

Economic and Global Competence IKS is presented as a tool to enhance the professional and economic standing of students in a modern, interconnected world:

- Practical Application: It emphasises hands-on learning and honing problem-solving skills to address real-world issues with creativity.
- Entrepreneurial Mindset: The system encourages students to become "creators rather than job seekers" by instilling a spirit of innovation and risk-taking.
- Global Fluency: By providing cultural fluency, IKS seeks to position students for success in a globalised environment where international competence is essential.

Foundational Logic and Critical Thinking Ancient philosophical frameworks, such as Nyaya, are considered relevant today because they laid the groundwork for logical reasoning and debate, which continue to be vital in contemporary philosophy and science.

To understand its role, one might view the integration of IKS as reconnecting a modern building to its ancient, sturdy foundation; while the structure serves modern purposes, it gains its stability and unique character from the original architecture beneath it.

The National Education Policy (NEP) 2020 represents a comprehensive overhaul designed to transform the Indian education system to meet the challenges of the 21st century. Its primary objectives focus on harmonising India's rich intellectual heritage with modern educational practices to create a more inclusive, holistic, and innovative learning environment.

According to the sources, the key objectives of the policy include:

1. Integration and Revitalisation of Indian Knowledge Systems (IKS) - A central pillar of NEP 2020 is the formal recognition and integration of traditional and indigenous knowledge into the mainstream curriculum. This aims to:

- Preserve and transmit India's cultural and intellectual heritage—such as Ayurveda, Yoga, Sanskrit, and ancient

sciences—to future generations.

- Introduce IKS at all educational levels, from primary to higher education, ensuring a comprehensive understanding of national roots.
- Enable students to earn academic credit for courses relating to ancient Indian sciences and arts through the National Credit Framework.

2. Holistic and Multi-disciplinary Development- The policy shifts the focus from purely academic or professional growth to the overall development of the student. This includes:

- Providing a well-rounded education that incorporates moral, ethical, and spiritual dimensions.
- Promoting optimum wellbeing by integrating traditional practices like mindfulness (Vipassana), yoga, and heritage studies.
- Encouraging an interdisciplinary approach that bridges the gap between traditional wisdom and modern scientific and technological advancements.

3. Language Preservation and Promotion - The NEP 2020 views local and classical languages as vital repositories of traditional knowledge. Its objectives in this area are to:

- Promote education in regional languages and dialects to preserve the local knowledge embedded within them.
- Rejuvenate and promote classical languages such as Sanskrit, Pali, and Prakrit alongside contemporary languages.

4. Research, Innovation, and Global Competence- The policy seeks to position India as a leader in innovation by drawing on its past. Objectives include:

- Encouraging research and development in traditional knowledge systems to find sustainable solutions for modern problems, such as climate change and wellness.
- Establishing dedicated research centres for the advancement of IKS.
- Equipping students with unique perspectives and critical thinking skills that enhance their global competence and broaden their worldview.

5. Strengthening Cultural Identity - A major objective is the decolonisation of Indian education by reducing undue Western influences. The policy aims to strengthen a student's connection to their roots, fostering a sense of pride in their heritage and making them more culturally and socially conscious individuals.

In essence, the National Education Policy 2020 seeks to act as a bridge between the past and the future, using the sturdy bricks of ancient wisdom to build a structure capable of weathering the complexities of the modern world.the government's promotion of Indian Knowledge Systems (IKS) within academic curricula is driven by several primary motivations ranging from cultural preservation to practical modern application.

The core motivations include:

- Decolonisation and Cultural Identity: A major driver is the desire to decolonise Indian education by reducing what is perceived as undue Western influence. The government aims to preserve Indian heritage and expose students to the country's rich intellectual traditions, fostering a well-rounded worldview and making individuals more culturally and socially conscious.
- Addressing Modern Problems with Ancient Wisdom: The sources indicate a mission to apply ancient knowledge to contemporary challenges, such as climate change. Proponents argue that IKS principleslike dharma-centric design and ecological balancecan enrich modern technological thinking by aligning it with environmental sustainability and human values.
- Holistic Student Development: Promotion of IKS is intended to move beyond purely academic excellence to focus on holistic development. This includes integrating traditional arts, ethics, and sports (such as the Bharatiya Khel initiative) to cultivate a diverse skill set and encourage "living in harmony with nature".
- Practical Application and Problem-Solving: The curriculum is designed to emphasise hands-on learning and practical insights, fostering a generation capable of solving real-world problems with creativity. This includes teaching traditional sciences, mathematics (such as Vedic maths), and medicine (Ayurveda and Yoga) to provide students with diverse analytical tools.
- Economic and Global Competence: The government seeks to instil an entrepreneurial mindset in students, encouraging them to become "creators rather than job seekers" through innovation and risk-taking. Furthermore, the emphasis on cultural fluency is intended to position students for success in an interconnected world where global competence is essential.While these are the stated goals, the sources also note that critics interpret these motivations differently. Some assert that the implementation of IKS is a tool for ideological indoctrination or "saffronisation" related to Hindutva politics, rather than a purely scholarly effort. Others express concern that focusing on indigenous knowledge might deprive students of useful Western knowledge or render graduates less employable in the modern workforce.

The primary criticisms of the Indian Knowledge Systems (IKS) division's curricula focus on scientific accuracy, political ideology, and the future employability of students.

According to the sources, the main criticisms are as follows:

- Promotion of Pseudoscience and Pseudohistory: Critics argue that the curricula often "peddle pseudoscience and pseudohistory". Specifically, some IKS textbooks have been described as a "Trojan horse of pseudoscience" for making historically unsubstantiated claims. For example, one textbook asserts that aeronautics was developed by the Maharshi Bhardwaj an 5,000 years before the Wright Brothers and that the theory of gravity was established in the Rig Veda long before Isaac Newton.

- Ideological Indoctrination: A significant concern among critics is that the IKS initiative serves as a tool for indoctrination by the Hindutva ideology of the ruling Bharatiya Janata Party (BJP). Scholars have alleged that the government uses these textbooks to propagate a specific political agenda and far-right Hindu nationalist views.
- Lack of Genuine Decolonisation: While the government frames IKS as a way to "decolonise" the mind, some academics argue the project lacks the necessary critical dialogue with history and dominant modern disciplines. Without this critical engagement, they assert that the program fails to be a genuine scholarly decolonisation effort and instead "boils down to becoming one of indoctrination".
- Economic and Professional Disadvantage: There is a strong concern that an emphasis on IKS could bias students against useful Western knowledge or deprive them of it entirely. Critics warn that this could lead to an "intellectual disaster" and render Indian graduates less employable or under-employed in the global workforce. Because of these risks, some stakeholders have urged that IKS courses remain optional rather than mandatory.

In essence, critics view the curriculum not as a bridge to the past, but as a foggy mirror that reflects a mythologised version of history, potentially obscuring the practical skills and objective truths students need to navigate the modern world.

The National Credit Framework (NCF) functions as the primary regulatory mechanism for integrating Indian Knowledge Systems (IKS) into the formal academic structure of India. Its introduction has made it possible for students to earn academic credit for completing courses related to ancient Indian sciences and arts, thereby legitimising these subjects within the national curriculum. Key roles of the NCF in relation to IKS include:

- Credit Standardisation: According to University Grants Commission (UGC) guidelines, it is advised that 5 per cent of a student's total credits at both undergraduate and postgraduate levels should be earned through IKS courses.
- Policy Implementation: The NCF is a key tool for delivering the goals of the National Education Policy (NEP) 2020, which emphasises the inclusion of IKS at all levels of education.
- Academic Legitimacy: By allowing these topics to carry credit, the framework moves IKS from being merely extracurricular to being a formal part of a student's transcript, covering subjects such as Vedic mathematics, various Shastras, and traditional medicine like Ayurveda.
- Facilitating Research and Collaboration: The ability to earn credits encourages academic and research partnerships, such as the MoUs signed between various Indian Institutes of Technology (IITs) to promote IKS projects.

Despite its role in formalising these studies, the NCF's application in IKS has faced scrutiny. Some stakeholders argue that while these credit courses are relevant, they should remain optional to ensure they do not become a burden on students or negatively impact their global employability.

To clarify its function, the National Credit Framework acts as a currency exchange for education; it provides the "exchange rate" that allows traditional, indigenous knowledge to be converted into the standard academic "currency" required for a modern degree.

The impact of Indian Knowledge Systems and Indigenous Knowledge Systems more broadly ranges from educational reform and cultural revitalisation to significant socio-economic shifts and intense academic controversy. The primary impacts identified in the sources include:

Educational and Holistic Development

- Transformation of the Learning Environment: Integrating IKS into the modern curriculum is intended to move education beyond purely academic excellence toward holistic development, incorporating traditional arts, ethics, and sports.
- Enhanced Critical Thinking: Exposure to diverse knowledge systems is expected to foster critical thinking and provide students with a broader worldview.
- Cultural Identity: A major impact is the strengthening of a student's connection to their roots, fostering a sense of national pride and personal growth by exposing them to their rich intellectual heritage.
- Global Competence and Entrepreneurship: By providing unique perspectives, IKS aims to equip students for success in the global arena and instill an entrepreneurial mindset, encouraging them to become creators rather than job seekers.

Socio-Economic and Sustainable Growth

- Poverty Eradication and Economic Redress: In contexts like South Africa, IKS is viewed as a critical tool for redressing historical inequities and eradicating poverty by using indigenous knowledge to make appropriate local interventions.
- Sustainable Solutions: Drawing from traditional practices, IKS offers innovative approaches to contemporary issues such as climate change, environmental sustainability, and wellness.
- Community Empowerment: The promotion of IKS encourages the establishment of small and medium enterprises (SMMEs), particularly in rural areas, and recognises the crucial role of women as primary natural resource managers and custodians of knowledge.

Regulatory and Legal Infrastructure

- Institutionalisation of Knowledge: The impact has led to the creation of formal government divisions and the integration of IKS into the National Credit Framework, allowing students to earn academic credit for traditional subjects.
- Protection Against Biopiracy: To prevent misappropriation, the development of recordable systems

and registries, such as India's Traditional Knowledge Digital Library, allows indigenous communities to challenge patents granted to others for their traditional practices.

• Healthcare Integration: The formal recognition of traditional medicine, such as Ayurveda and Siddha, has led to the registration and regulation of traditional health practitioners to ensure safety and quality.

Criticisms and Controversial Impacts

• Scientific and Historical Accuracy: A significant negative impact cited by critics is the promotion of pseudoscience and pseudohistory. For example, some IKS textbooks claim aeronautics existed 5,000 years before the Wright brothers, which critics label a "Trojan horse" for unsubstantiated claims.

• Ideological Concerns: Many scholars argue that the curriculum serves as a tool for indoctrination into specific political or nationalist ideologies rather than being a genuine decolonisation effort.

• Professional Disadvantage: There is a concern that an over-emphasis on indigenous knowledge could bias students against useful Western knowledge, potentially rendering graduates less employable or under-employed in the global workforce.

To understand the varied impact of IKS, one might compare it to restoring an ancient library within a modern glass skyscraper; while it provides the building with a unique character and foundational wisdom that newer structures lack, the integration must be done with precision to ensure it does not compromise the skyscraper's structural integrity or its ability to function in a modern city.

Integrating Indian Knowledge Systems (IKS) and indigenous knowledge more broadly into modern academic curricula faces a multifaceted set of challenges, ranging from practical implementation hurdles to deep-seated ideological and scientific disputes.

The following challenges are identified in the sources:

Pedagogical and Institutional Hurdles

• Teacher Preparedness and Training: A significant challenge is the need for capacity building; educators require special programmes to equip them with the specific knowledge and skills necessary to teach IKS effectively. The University Grants Commission in India, for instance, aims to train 1.5 million teachers by 2025 to address this gap.

• Resource Constraints: Developing and implementing a new curriculum requires adequate funding and resources for documentation, research, and the creation of educational materials.

• Curriculum Balance: Educational planners face the difficult task of harmonising traditional and modern knowledge without overwhelming students or diluting the existing academic standards.

• Historical Marginalisation: In some regions, indigenous knowledge was historically suppressed or ridiculed by colonial or apartheid regimes. This legacy has led to IKS often being viewed as "non-legitimate" or shrouded in mystery, making it harder to integrate into mainstream systems.

Academic and Ideological Disputes

• Scientific and Historical Accuracy: A primary criticism is that some IKS curricula promote pseudoscience and pseudohistory. Critics point to claims in textbooks that aeronautics existed 5,000 years before the Wright brothers or that gravity was discovered in the Rig Veda long before Isaac Newton as examples of unsubstantiated mythology being presented as fact.

• Ideological Indoctrination: There are concerns that the promotion of IKS is used as a tool for political or nationalist indoctrination. Critics argue that without a critical dialogue with history, the initiative may serve an ideological agenda rather than a scholarly decolonisation effort.

• Conflict with Modern Science: Reconciling the contradictions between Western scientific methods and traditional knowledge remains a point of contention. Some argue that giving them equal status inhibits science from questioning claims made by indigenous systems.

Socio-Economic and Global Risks

• Employability Concerns: Stakeholders warn that an over-emphasis on IKS could deprive students of useful Western knowledge, potentially rendering graduates less employable or under-employed in a competitive global workforce. Consequently, some suggest that IKS courses should remain optional rather than mandatory.

• Biopiracy and Intellectual Property: The lack of formal recordal systems makes indigenous knowledge vulnerable to biopiracy, where foreign entities patent traditional practices without providing benefits to the original community. Establishing these legal protections is a complex and ongoing challenge.

• Language Attrition: Because much indigenous knowledge is stored in regional languages and dialects, the rapid disappearance of language diversity due to globalisation threatens the survival of the knowledge itself.

Cultural Transmission

• Threat to Oral Traditions: Many forms of indigenous knowledge are passed down orally across generations. These traditions are under constant threat of extinction due to Westernisation and rapid technological development, which can disrupt traditional community-based learning.

To understand these challenges, the integration of IKS can be likened to weaving a traditional tapestry into a modern high-tech fabric; the challenge lies not only in finding the right thread and skilled weavers but also in ensuring that the new pattern is functionally sound and widely accepted by those who must wear it.

The National Education Policy (NEP) 2020 is a comprehensive framework designed to transform the Indian education system to meet the challenges of the 21st century while rejuvenating the country's rich educational heritage. The primary objectives of NEP 2020, as detailed in the

sources, include:

- Integration and Revitalisation of Indian Knowledge Systems (IKS): A central pillar of the policy is to restore and promote traditional knowledge—including ancient sciences, arts, and languages—alongside contemporary education. This aims to ensure that such knowledge is preserved and transmitted to future generations by integrating it into the mainstream curriculum at all levels.
- Holistic and Well-Rounded Development: The policy moves beyond purely academic excellence to focus on the overall development of students. This includes incorporating moral, ethical, and spiritual dimensions into education, as well as practical health and wellness practices such as Yoga and mindfulness.
- Promotion of Local and Classical Languages: NEP 2020 seeks to promote education in regional languages and dialects, which are viewed as vital repositories of traditional knowledge. It also places a heavy emphasis on preserving and promoting classical languages like Sanskrit, Pali, and Prakrit.
- Fostering an Interdisciplinary Approach: One of the fundamental goals is to bridge the gap between modern scientific advancements and traditional wisdom. By encouraging the blending of these systems, the government hopes to foster innovation and find sustainable solutions to contemporary problems like climate change.
- Strengthening Cultural Identity and Pride: The policy aims to decolonise the Indian mind by reducing undue Western influences and strengthening a student's connection to their roots. This is intended to foster a sense of national pride and a more socially conscious worldview.
- Developing Global Competence and Innovation: While focusing on heritage, the policy also aims to equip students with unique perspectives and critical thinking skills necessary for success in the global arena. It seeks to instill an entrepreneurial mindset, encouraging students to become "creators rather than job seekers" through a premium on practical application and problem-solving.
- Inclusive and Equitable Education: By valuing diverse knowledge systems and indigenous practices, NEP 2020 intends to create a more inclusive learning framework that respects diversity and promotes educational equity.

To understand these objectives, you might think of NEP 2020 as upgrading a historic university's software while reinforcing its ancient foundation; the goal is to provide students with the latest tools to navigate the modern world without losing the foundational wisdom that gives the institution its unique identity and strength.

Implementing Indian Knowledge Systems (IKS) — and indigenous knowledge systems more broadly — into modern education faces a multifaceted array of challenges. These hurdles range from practical institutional requirements to deep-seated academic and ideological disputes.

According to the sources, the primary challenges include:

Pedagogical and Institutional Hurdles

- Teacher Preparedness and Training: A significant barrier is the lack of educators equipped with the specific skills and knowledge required to teach IKS effectively. The scale of this challenge is evident in India, where the University Grants Commission (UGC) aims to train 1.5 million teachers by 2025 to bridge this gap.
- Curriculum Balance: Educational planners must find a way to harmonise traditional and modern knowledge so that the curriculum remains balanced and does not overwhelm students.
- Resource Constraints: Developing IKS-integrated curricula requires substantial funding and resource mobilisation for the documentation, preservation, and dissemination of traditional knowledge.

Academic and Scientific Disputes

- Accuracy and Pseudoscience: A major criticism is that some IKS materials promote pseudoscience and pseudohistory. Critics point to claims in textbooks that aeronautics existed 5,000 years before the Wright brothers or that gravity was discovered in the Rig Veda long before Isaac Newton as examples of historically unsubstantiated mythology being taught as fact.
- Ideological Indoctrination: Some scholars argue that the curriculum serves as a tool for political indoctrination rather than a genuine scholarly decolonisation effort. Critics assert that without a critical dialogue with history and dominant modern disciplines, the project can become a means of propagating specific nationalist ideologies.
- Conflict with Modern Science: Reconciling the contradictions between Western scientific methods and traditional knowledge remains difficult. Some argue that giving them equal status may inhibit science from questioning the claims made by indigenous systems.

Socio-Economic and Global Risks

- Employability Concerns: There is a strong concern that an over-emphasis on IKS could deprive students of useful Western knowledge, potentially making Indian graduates less employable or under-employed in a competitive global workforce.
- Intellectual Property and Biopiracy: Defining the ownership of indigenous knowledge—which is often communal rather than individual—presents a complex challenge for legal and intellectual property systems. Without robust recordable systems, this knowledge remains vulnerable to biopiracy.
- Language Attrition: Much indigenous knowledge is stored in regional languages and dialects. The rapid disappearance of language diversity due to globalisation threatens the survival of the knowledge itself.

Historical and Cultural Barriers

- Legacy of Marginalisation: In regions like South Africa, IKS was historically suppressed or ridiculed under colonial or apartheid regimes. This has resulted in traditional

knowledge often being viewed as "non-legitimate" or "shrouded in mystery," making its formal integration into education more difficult.

• Threat to Oral Traditions: Many forms of indigenous knowledge are passed down orally across generations. These traditions are under threat from Westernisation and rapid technological development, which can disrupt traditional community-based learning.

To clarify these complexities, the integration of IKS into modern education is much like retrofitting an ancient, intricate plumbing system into a high-tech smart home; while the ancient system may hold unique wisdom and sustainable value, the challenge lies in ensuring it can interface with modern standards without causing leaks or compromising the overall structure's functionality.

The integration of Indian Knowledge Systems (IKS) and indigenous knowledge more broadly into modern frameworks involves significant institutional, ideological, and socio-economic challenges. According to the sources, these obstacles range from the practicalities of teacher training to deep-seated debates over scientific validity.

The primary challenges are categorised as follows:

1. Institutional and Pedagogical Barriers

• Teacher Preparedness: A major hurdle is the lack of educators equipped to teach traditional knowledge alongside modern subjects. In India, the University Grants Commission aims to train 1.5 million teachers by 2025 to address this capacity gap.

• Resource Allocation: Implementing a new curriculum requires substantial funding and resources for documentation, research, and the creation of new materials.

• Curriculum Balance: Educational planners struggle to harmonise traditional and modern knowledge without overwhelming students or diluting existing academic standards.

• Resistance to Change: There is often institutional resistance to shifting from established Western models to more indigenous-centric frameworks.

2. Intellectual and Ideological Controversies

• Scientific and Historical Accuracy: Critics argue that some IKS curricula promote pseudoscience and pseudohistory. Specific textbooks have been called a "Trojan horse" for claiming that aeronautics existed 5,000 years before the Wright brothers or that gravity was discovered in the Rig Veda.

• Ideological Indoctrination: Scholars express concern that IKS is being used as a tool for propagating political agendas, specifically the Hindutva ideology, rather than serving as a genuine scholarly effort to decolonise education.

• Lack of Critical Engagement: Critics suggest that the initiative fails to engage in a "critical dialogue with history," which is essential for a legitimate decolonisation project; without this, it risks becoming mere indoctrination.

3. Professional and Economic Risks

• Global Employability: There is a strong concern that prioritizing IKS could bias students against useful Western knowledge, potentially rendering Indian graduate's unemployable or under-employed in the global workforce.

• Optional vs. Mandatory: Stakeholders have urged that IKS courses remain optional to ensure they do not become a burden or professional disadvantage for students.

4. Legal and Preservation Challenges

• Biopiracy and Intellectual Property: Indigenous knowledge is often communal, making it difficult to protect using modern IP laws designed for individuals or companies. Without proper recordable systems, this knowledge is vulnerable to biopiracy by foreign entities.

• Language Attrition: Much indigenous knowledge is stored in regional languages. Globalisation has led to the disappearance of roughly 100 languages per year, threatening the survival of the knowledge they contain.

• Threat to Oral Traditions: Many traditions are passed down orally and are at risk of extinction due to rapid technological development and Westernisation.

• Legacy of Marginalisation: In many regions, indigenous knowledge was historically suppressed or ridiculed under colonial or apartheid regimes, leading to it being viewed as "non-legitimate" even today.

To clarify these challenges, the integration of IKS is much like retrofitting an ancient, intricate plumbing system into a high-tech smart home; while the ancient system may hold unique wisdom and sustainable value, the difficulty lies in ensuring the pipes actually fit modern connectors without causing leaks or compromising the overall structure's functionality.

The integration of Indian Knowledge Systems (IKS) and indigenous knowledge into modern frameworks represents a significant paradigm shift aimed at revitalising traditional intellectual heritage alongside contemporary education. This movement is driven by a global effort to decolonise academic curricula, affirm cultural identities, and find sustainable solutions to modern crises such as climate change and environmental degradation.

The following points sum up the core aspects of this initiative:

Strategic Objectives and Implementation

• Educational Reform: In India, the National Education Policy (NEP) 2020 mandates the inclusion of IKS at all levels of learning, from primary schools to higher education. This is facilitated by the National Credit Framework, which allows students to earn formal academic credit for courses in ancient sciences, arts, and philosophy.

• Institutional Support: The government has established a dedicated IKS division within the Ministry of Education to support transdisciplinary research and innovation. Large-scale efforts are underway to train over 1.5 million teachers to deliver this curriculum by 2025.

• Redress and Equity: In contexts such as South Africa, IKS policies are crucial for redressing historical inequities

caused by colonial or apartheid eras, where traditional practices were often marginalised or suppressed.

Vision Statement To foster a nation where Indigenous Knowledge Systems are fully integrated into the national fabric of life, education, and innovation, creating a society that values and thrives on the synergy between diverse knowledge systems for the equitable benefit of all citizens.

1.3 Core Policy Drivers

The imperative for this strategic plan is driven by three interconnected national priorities. Each driver represents a fundamental pillar supporting the integration of IKS into the mainstream of national life.

- Cultural Affirmation and Redress This policy is a direct response to the historical marginalization and suppression of indigenous knowledge during the colonial and apartheid eras. As a core measure of redress, it aligns with our constitutional values of human dignity and equality. By affirming the value of IKS, we strengthen our national identity, promote a positive African identity, and build resilience against the homogenizing effects of globalization.
- Socio-Economic Development IKS represents a significant, yet largely untapped, economic resource that is pivotal for poverty eradication. This plan seeks to unlock its potential to drive inclusive growth through employment and wealth creation, particularly in rural areas where most knowledge holders reside. By supporting the development of Small, Medium, and Micro Enterprises (SMMEs) based on IKS in sectors like traditional medicine, sustainable agriculture, and crafts, we can generate wealth and create sustainable livelihoods.
- Innovation and Knowledge Synergy Interfacing IKS with other knowledge systems, particularly modern science and technology, creates fertile ground for innovation within the National System of Innovation. Traditional knowledge can significantly accelerate research and development, as demonstrated in bio-prospecting, where it can increase the efficiency of screening plants for medicinal properties by over 400 percent. This synergy offers a unique competitive advantage and can lead to new products, services, and solutions to contemporary challenges.

This strategic vision provides the 'why'; the following sections will detail the 'how' by outlining the specific governance structures required to bring this vision to life.

A robust, coordinated, and multi-stakeholder governance structure is the cornerstone of this strategic plan's success. Effective implementation requires clear mandates, collaborative mechanisms, and dedicated institutions capable of navigating the complexities of IKS. This section details the institutional architecture designed to guide, regulate, and champion the integration of IKS across all sectors of government and society.To ensure that policy remains responsive and grounded in the needs of the community, a multi-stakeholder Advisory Committee on IKS will be established to report to the Minister of Science and Technology. It will be composed of leaders and experts from government, science councils, tertiary institutions, NGOs, and, critically, individual IKS holders and practitioners. Its primary mandate is to provide high-level, independent policy advice to the government and to ensure that the diverse interests of all stakeholders are represented in the decision-making process.

The establishment of these governing bodies provides the necessary structure, which must now be supported by the development of the human capital required to sustain it.

References:-

1. Radhakrishnan, S. (1951). Indian Philosophy (Vols. 1–2). George Allen & Unwin.
2. Chakrabarti, A., & Siderits, M. (2010). Indian Philosophy: A Reader. Hackett Publishing.
3. Sen, Amartya (2005). The Argumentative Indian. Penguin Books.
4. Narayan Rao, V., Shulman, D., & Subrahmanyam, S. (2003). Textures of Time: Writing History in South India. Permanent Black.
5. Ministry of Education, Government of India (2022).Indian Knowledge Systems: Concepts and Applications. IKS Division, AICTE.
6. NEP 2020 – National Education Policy, Government of India.
7. AICTE – IKS Portal (official modules and documents).
8. Gadgil, M., & Vartak, V. D. (1976). The Sacred Groves of India. Journal of Indian History.
9. Dwivedi, O. P. (1990). Satyagraha for Conservation. SUNY Press.
10. Shiva, Vandana (1991). Ecology and the Politics of Survival. Sage Publications.
11. Journal of Indian Knowledge Systems (IKS Division, Govt. of India).
12. Indian Journal of History of Science.
13. Economic and Political Weekly (selected IKS-related articles).
14. National Digital Library of India (NDLI)
15. IGNCA (Indira Gandhi National Centre for the Arts) publications
16. Bharat ItihasSansho dhak Mandal archives

Websites:-

1. Ministry of Education,Government of India. Indian Knowledge
2. Systems.2022, www.iksindia.org.

****

Career Aspiration Among Adolescents : A Comprehensive Analysis

Dr. Ritu Bala* Astha Singh Rajan**

*Research Supervisior, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: The present study aims to determine the career aspiration among adolescents . The research was carried out sample of 400 students of rural and urban area . The results shows that adolescents do not differ significantly in vocational maturity according to their gender variation and locale variation. However, according to the type of institutions, a significant difference was found.

Introduction - Adolescence is a pivotal period characterized by substantial physical, emotional, cognitive, and social transformations. One of the most essential developmental tasks during this era is the building of a distinct vocational identity and the establishment of career objectives. The notions of vocational maturity and career goals are crucial in comprehending how teenagers traverse the intricate transition from education to employment.

Career aspirations refer to the particular vocations or professional objectives that individuals foresee for their future. Collectively, these constructs provide significant insights into future workforce dynamics, educational strategies, and the psychological development of young individuals.

The development of occupational maturity is affected by multiple elements, including familial history, socio-economic condition, cultural norms, educational experiences, and personal characteristics.

Statement of the Problem: "Career Aspiration Among Adolescents :A Comprehensive Analysis".

Method of Study : In the study, Sampling method was used and information was obtained from students.

Tools Used in the Study:

1. **Aspiration scale:** (Carrier aspiration scale: Sarita Anand) This scale consists 30 items divided into five areas dedication , motivation , realization , self-confidence , preparation . M.A. Shah and Mahesh Bhargava are the authors of the Level of Aspiration Measure.

Objectives of the Study:

1. To compare adolescents in respect of their career aspiration performance across gender (Male/Female) variation.
2. To compare adolescents in respect of their career aspiration performance across locale (Urban/Rural) variation.
3. To compare adolescents in respect of their career aspiration performance across type of institution (Government/Private) variation.

Hypothesis:

1. Adolescents do not differ significantly in their career aspiration across gender (Male/Female) variation.
2. Adolescents do not differ significantly in their career aspiration across locale (Urban/Rural) variation.
3. Adolescents do not differ significantly in their career aspiration across type of institution (Government/Private) variation.

1. Adolescent do not differ significantly in their career aspiration across gender(Male/Female) variation.

Students	Mean	S.D	T value	
Boys student	89.12	33.07	5.56	Rej.
Girls stu.	72.82	25.15		

The obtained t-value(5.56)is higher than the table value at both 0.05 and 0.01 levels of significance, which indicates that the difference between the mean scores of male and female students is statistically significant.

Therefore ,it can be interpreted that:"There is significant difference in the career aspiration of adolescent male and female students .

Both types of gender possess differ levels of career aspiration. Boys have more career aspiration comparative to girls career aspiration. "Thus the null hypothesis is rejected.

2. Adolescent do not differ significantly in their career aspiration across locale (Urban/Rural) variation.

Students	Mean	S.D	T value	
Urban student	83.62	28.25	1.74	Acc.
Rural stu.	78.32	32.35		

The obtained t-value (1.74) is lower than the table value at both the 0.05 and 0.01 levels of significance. this indicates that difference between the mean career aspirations scores

of urban and rural adolescents is not statistically significant. Therefore, it may be interpreted that

"Urban and rural adolescents do not differ significantly in their career aspirations. Both groups show almost similar levels of career aspirations."

Thus, the null hypothesis is accepted.

3. Adolescent do not differ significantly in their career aspiration across type of institution(government/ Private)variation.

Students	Mean	S.D	T value	
Govt.s. student	89.54	30.84	5.86	Rej.
Priv.s. stu.	72.4	27.58		

The obtained t-value (5.86) is much higher than the table value at both 0.05 and 0.01 levels of significance. This clearly indicates that the difference between government and private school adolescents is statistically significant.

Therefore, it may be interpreted that:

"Government and private school adolescents differ significantly in their career aspirations. Government school adolescents have significantly higher career aspirations compared to private school adolescents"

Thus, the null hypothesis is rejected.

Conclusion: we look at career aspirations, adolescents do not differ significantly on the basis of locale. However, on the basis of gender, the mean scores show that boys have higher career aspirations as compared to girls. Moreover, government school adolescents have higher career aspirations as compared to private school adolescents.

Educational Implication: This study shines a light on how well-prepared adolescents are to take ownership of their career choices. It shows that vocational maturity is not about selecting a job title but about cultivating a readiness to make informed, confident, and adaptable decisions. Skills such as self-awareness, problem-solving, planning, and knowledge of career options give adolescents the resilience to face uncertainties and the clarity to pursue pathways that align with their abilities and values.

References:-

1. (Osman, 2018). Career maturity and aspirational achievement in college students with disabilities. The Journal of Rehabilitation 56, 40-45.
2. Middleton et al. (2017) Adolescents' and Young Adults' Reasoning about Career Choice and the Role of Parental Influence. J Res Adolesc 9(3), 253-275.
3. Al-Sawat (2018) Parental involvement in children's career decision making. J Employ Couns 31(3), 115-126.
4. (Super et al., 2014).The impact of family upbringing pattern in the vocational maturity of first secondary grade at Karak province, Unpublished master thesis, Mu'tah University, Jordan.
5. Dey, Roy, Joarden and Chakraborty, (2011), "Adolescent Aspiration and Their Parental Relations: "A Study Among Rural School Going Adolescent in a Block of Darjeeling District," Al Ameen J. Med Sci (AUS National Library of Medicine Enlisted Journal), 4, (4): 352-357.
6. Gupta, Beena (1992), 'A Comparative Study of Self-Concept, Level of Aspiration, Anxiety and Scholastic Achievement of Isolated and Non-Isolated Adolescents', Ph.D., Edu., Agra Univ.
7. Hasan, B. (2006), 'Career Maturity of Indian Adolescents as a Function of Self-Concept, Vocational Aspiration and Gender', Journal of the Indian Academy of Applied Psychology, Vol. 32 (2) : pp. 127-134.
8. Krishan (2014) Career Maturity in relation to Level of aspiration among adolescents, American International Journal of Research in Humanities, Arts and Social Sciences, 5(1), December 2013-February 2014, pp. 113-118 KumarØ& Kumar (2010), "Socio-Economic St

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

शिवानी चावला* डॉ. ऋतु बाला**

* पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य में **'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का अध्ययन'** किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।निष्कर्ष रूप में देखा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति उच्च माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की अभिवृत्ति औसत स्तर की पायी गयी। अध्यापकों का इस शिक्षा नीति के प्रति सकारात्मक रुझान पाया गया। अध्यापकों की अभिवृत्ति में लिंग के आधार पर अन्तर पाया गया। महिला अध्यापकों की अपेक्षा पुरुष अध्यापकों की शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति उच्च स्तर की ज्ञात हुई।

प्रस्तावना – शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुंच प्रदान करना वैश्विक मंच पर सामाजिका न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्चतर स्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्ताम विकास और संवर्द्धन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सकता है। अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा।

भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए सतत् विकास एजेंडा 2030 के लक्ष्य 4 (एसडीजी 4) में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030 तक यसभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन-पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिये जाने का लक्ष्य है। इस तरह के उदात्ता लक्ष्य के लिए संपूर्ण शिक्षा प्रणाली को समर्थन और अधिगम को बढ़ावा देने के लिए पुनर्गठित करने की आवश्यकता होगी, ताकि सतत् विकास के लिए 2030 एजेंडा के सभी महत्वपूर्ण टार्गेट और लक्ष्य (एसडीजी) प्राप्त किये जा सकें।

समस्या कथन –'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का अध्ययन'

अध्ययन के उद्देश्य :

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति को जानना।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के महिला व पुरुष अध्यापकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ :

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का स्तर औसत है।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के महिला व पुरुष अध्यापकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में श्रीगंगानगर व अनूपगढ़ के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों को न्यादर्श के रूप में लिया, जिसे निम्नांकित सारणियों द्वारा प्रस्तुत किया गया है :-

सारणी – 1: अध्यापकों सम्बन्धी न्यादर्श सारणी

विद्यालय / अध्यापक	राजकीय विद्यालय		गैर राजकीय विद्यालय		कुल
	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
महिला	50	50	50	50	200
पुरुष	50	50	50	50	200
कुल	100	100	100	100	400

शोध में प्रयुक्त उपकरण – संबंधित शोध कार्य में शोधकर्त्री ने उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों व विद्यार्थियों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रति अभिवृत्ति को जानने के लिए स्वनिर्मित अभिवृत्ति मापनी का उपयोग किया।

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन :

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का स्तर औसत है।

तालिका **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

तालिका के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति के आंकड़ों का विश्लेषण कर प्राप्त मूल्यों को प्रदर्शित किया गया है, जिससे अध्यापकों की उक्त अभिवृत्ति के आंकड़ों का मध्यमान 17.90

प्राप्त हुआ है, जिससे स्पष्ट होता है कि अध्यापकों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति औसत स्तर की पाई गई है। अतः उपरोक्त परिकल्पना 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति का स्तर औसत है', स्वीकृत होती है।

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सम्बन्ध में उच्च माध्यमिक स्तर के महिला व पुरुष अध्यापकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्र.	अध्यापक	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	प्रमाणिक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	परि-णाम
1	महिला	200	23.22	13.34	1.38	3.18	सार्थक
2	पुरुष	200	27.61	14.23			अन्तर है।

उक्त शून्य परिकल्पना में उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला व पुरुष अध्यापकों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति अभिवृत्ति से सम्बन्धित प्रदत्ता विश्लेषण किया गया, जिसमें 200 पुरुष व 200 महिला अध्यापकों के न्यादर्श से दत्ता संकलन किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण के उपरान्त ज्ञात किया गया कि महिला व पुरुष अध्यापकों का मध्यमान क्रमशः 23.22 व 27.61 तथा प्रमाण विचलन का मूल्य क्रमशः 13.34 व 14.23 ज्ञात हुआ है। क्रान्तिक अनुपात का मूल्य 3.18 प्राप्त हुआ। यह मूल्य स्वतन्त्रता की डिग्री 398 के आधार पर प्रमाणिक तालिका के स्तर 0.01 व 0.05 के मान क्रमशः 2.57 व 1.96 से अधिक है। अतः उपरोक्त शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा सिद्ध होता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला व पुरुष अध्यापकों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है तथा पुरुष अधयापकों की अभिवृत्ति महिला अध्यापकों की अभिवृत्ति की तुलना में उच्च स्तर की पायी गई है।

निष्कर्ष :

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 एक महत्वपूर्ण नीति है। इसके आने से शिक्षा के क्षेत्र में बहुत बड़ा बदलाव आने की संभावना है और यह तभी संभव है, जब इसे प्रभावशाली ढंग से लागू किया जा सकेगा। इसी उद्देश्य से इस शोध के माध्यम से इसके प्रति अध्यापकों के प्रति अभिवृत्ति को जानने के प्रयास किये गये। परिणामों से निष्कर्ष निकला कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति उच्च माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की अभिवृत्ति औसत स्तर की पायी गयी। अध्यापकों का इस शिक्षा नीति के प्रति सकारात्मक रुझान पाया गया।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति उच्च माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की अभिवृत्ति में लिंग के आधार पर अन्तर पाया गया। महिला अध्यापकों की अपेक्षा पुरुष अध्यापकों की शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति उच्च स्तर की ज्ञात हुई। इसका कारण है कि कुछ महिला अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले सभी महत्वपूर्ण परिवर्तनों को स्वीकार नहीं करना चाहती। इसलिए महिला व पुरुष अध्यापकों की नयी शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर पाया गया है।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. भावी शोध के लिए शोध का क्षेत्र विस्तृत किया जा सकता है।
2. आगामी शोध के लिए निदर्शन को विस्तृत कर सकते हैं।
3. केन्द्रीय अथवा नवोदय विद्यालयों के विद्यार्थियों व अध्यापकों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति सम्बन्धी अभिवृत्ति का अध्ययन किया जा सकता है।
4. अंग्रेजी व हिन्दी माध्यम के विद्यालयों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन आगामी शोध का विषय हो सकता है।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने के दौरान वर्तमान शैक्षिक परिस्थितियों का अध्ययन भी शोध का शीर्षक बनाया जा सकता है।
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति संस्था प्रधानों की अभिवृत्ति को आधार बनाकर भी शोधा किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जर्नल ऑफ एमरजिंग टैक्नोलॉजी एंड इनोवेशन रिसर्च वाल्यूम 9 अप्रैल 2022
2. इन्टरनेश्नल जर्नल ऑफ एप्लाईड रिर्सच 2020 6(9):109,11
3. हंस शोध सुधा वॉल्यूम 1 इशु 3 (2021) 59-62 जनवरी मार्च 2021
4. जर्नल ऑफ एडवांस एंड स्कालरली रिर्सच इन अलाईड एजूकेशन वाल्यूम 18, इश्यू 6, अक्टूबर 2021
5. भारतीय आधुनिक शिक्षा अक्टूबर 2020

चर	अध्यापकों की संख्या	मध्यमान	वर्गान्तर	आवृत्ति	अभिवृत्ति का स्तर	परिणाम
राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति	400	17.90	32-40	65	अति उच्च	अध्यापकों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रति अभिवृत्ति औसत स्तर की है
			24-32	128	उच्च	
			16-24	120	औसत	
			08-16	60	निम्न	
			0-08	27	अति निम्न	

****

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की चिन्ता एवं समायोजन के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता का अध्ययन

डॉ. ऋतु बाला* परमजीत कौर**

* आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की चिन्ता एवं समायोजन के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता का अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में हरियाणा राज्य के सिरसा जिले के विभिन्न राजकीय एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शहरी एव ग्रामीण क्षेत्रों में अध्ययनरत् कुल 800 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सामान्य चिंता मापने के लिए डॉ. अनिल कुमार, समायोजन मापनी ए. के. पी. सिन्हा व आर. पी. सिंह तथा निर्देशन आवश्यकता मापनी (GNI) डॉ. सुधा के. शर्मा एवं फातिमा जैद्दी द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की चिन्ता एवं समायोजन के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

शब्द कुंजी –उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, चिन्ता, समायोजन एवं निर्देशन की आवश्यकता।

प्रस्तावना – व्यक्ति के जीवन में किशोरावस्था एक अवस्था होती, जहां कुछ करने के लिए उमंग होती है, आवेश होता है, जोश होता है, लेकिन सही रास्ता दिखाने वाले लोग कम ही होते है। अच्छे बुरे की पहचान नहीं होती है। ऐसे में उच्चतर माध्यमिक स्तर के अध्यापकों को बड़े धैर्य से बच्चों का मूल्यांकन करना होता है, उनकी परेशानियों को समझना होता है, उनकी चिंताओं को समझना होता हैं। शिक्षक को छात्रों में एक आवश्यक सीमा तक चिंता उत्पन्न करनी चाहिए, लेकिन कितनी करनी चाहिए यह एक कठिन प्रश्न है क्योंकि चिंता आवश्यकता से अधिक है तो छात्र सीखने की स्थिति से बचने का प्रयास करेगा और बहुत कम है तो अवधान में कमी आएगी। चिंता के मापन के लिए सर्वप्रथम सारासन तथा मेन्डलर ने सन 1950 में चिंता प्रश्नावली का निर्माण किया। मानवीय विकास में रूकावट है। आज के भौतिकवादी युग में दुश्चिंता की मानवीय व्यवहारों में एक अहम् भूमिका है। प्रारम्भ में अस्पष्ट एवं अदृश्य अनुभवों से प्रारम्भ होती है परन्तु जब यह विकसित होने लगती है, इसका स्वरूप गम्भीर होने लगता है, जिससे व्यक्ति के व्यवहार, क्रियाकलाप, दिनचर्या आदि में भी परिवर्तन दिखाई पड़ने लगता है। 'सामाजिक असमायोजन' एवं 'भय' चिंता के मूल कारण हैं। इस सब के बाद इन बच्चों का कुशलता के साथ समायोजन करना होता है, सामायोजन सिखाया जाना चाहिए। छात्रों को परामर्श की अत्यधिक आवश्यकता होती है। इस सम्बंध में आयोग ने कहा है, 'हम चाहते हैं कि विद्यालय वास्तविक सामाजिक जीवन का केन्द्र बन जाना चाहिए। दूसरी ओर उत्तम मानव समूहों के सामान्य जीवन के लिए उद्देश्य एवं विधियां भी उसी प्रकार होनी चाहिए।'

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर बच्चें को सबसे अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है, क्योंकि उनमें करने के लिए भरपूर जोश और उमंग होती है, पर सही दिशा बताने वाला कोई नहीं होता है, इस कारण वे अपने आपको अपनी क्षमताओं के अनुरूप समायोजित नहीं कर पाते है। इसी कारण में चिंता में बने रहते है। निर्देशन मानव सभ्यता की एक अनिवार्य आवश्यकता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जो परस्पर सहयोग, प्रेम, भाई–चारे और कल्याण की भावनाएं उसके विकास का एक प्रमुख आधार है। एक व्यक्ति जब दूसरे व्यक्ति के संपर्क में आता है तो स्वाभाविक रूप से वह अपने विचार प्रकट करता है। इन विचारों में सहज रूप से जन कल्याण की भावनायें निहित रहती है। यही कल्याणकारी भावनाएं कहीं न कहीं निर्देशन का रूप लेकर कभी प्रत्यक्ष तो कभी परोक्ष रूप से मानव समाज को आगे बढ़ने में सहायता करती है। जीवन यात्रा में जब कभी मनुष्य समस्याओं से घिर जाता है, और उसे आगे का मार्ग नहीं सूझता है, तब कुछ सक्षम और योग्य व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किये गये विचार उसकी सहायता करते है तथा जाने–अनजाने उसको सही मार्ग का अनुसरण करने के लिए निर्देशित करते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विश्व में सभ्यता और संस्कृति को जो स्वरूप आज हमारे सामने है, उसमें निर्देशन का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

छात्रों में उचित समय पर निर्णय लेने तथा समस्या की पृष्ठभूमि शैक्षणिक, व्यावसायिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक समस्याओं को हल करने में प्रदान की गई सहायता से है। यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में पर्याप्त सामंजस्य स्थापित करना सिखाया जाता है।

प्रस्तुत शोध का महत्व – वर्तमान समय में मानव जीवन अत्यधिक जटिल एवं व्यस्त हो गया है। जीवन की जटिलता एवं कठिनाईयों के कारण अनेक समस्याओं का सूत्रपात हुआ है, जिसमें प्रमुख समस्या बेरोजगारी की है और उसमें भी महत्वपूर्ण शिक्षित बेरोजगारी है। क्योंकि अधिकतर विद्यार्थी बिना किसी अवसर की परवाह किये विद्यालयों समस्या की पृष्ठभूमि में प्रवेश

पाते हैं। उनको इस बात का ज्ञान नहीं होता है कि कौन सा पाठ्य विषय किस व्यवसाय के लिये उपयुक्त है। इसका कुपरिणाम भारत में शिक्षित बेरोजगारी की समस्या है, जो प्रति वर्ष उग्र रूप धारण करती है। यह सर्वमान्य सत्य है कि निर्देशन की आवश्यकता प्रत्येक स्तर के विद्यार्थियों को होती है परन्तु उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को निर्देशन की विशेष आवश्यकता होती है। आत्मबोधा एक शक्तिशाली आन्तरिक अनुभूति है जो हमें बनाए रखने एवं कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। आत्म अवधारणा का अर्थ उन सभी आयामों से लगाया जाता है जिनसे बालक स्वयं परिचित होता है। इसमें विद्यार्थी एक बार जो अवधारणा बना लेता है उसे आसानी से नहीं बदलता क्योंकि इनमें उसके दृष्टिकोण, गूढ़ विश्वास और मूल्यों का प्रभाव रहता है। ऐसी स्थिति में उसके आत्मबोध के स्तर को जानना जरूरी है। इसका कारण यह है कि उच्चतर माध्यमिक शिक्षा में आने पर विद्यार्थियों के सम्मुख पाठ्यक्रमों एवं पाठ्यचर्या के चयन सम्बन्धी समस्याएं आती हैं। भारत में प्राय: कला, विज्ञान, कृषि, वाणिज्य इत्यादि पाठ्यक्रम इस स्तर पर उपलब्ध होते हैं। विद्यार्थी को यह निर्णय करना होता है कि वह उनमें से कौन सा विकल्प चुनें जो कि उनके जीवन में उपयोगी एवं उसकी क्षमताओं के अनुरूप हो। इसके अतिरिक्त विभिन्न विकल्पों में भी कुछ विषय अनिवार्य होते हैं और कुछ ऐच्छिक विषयों का चुनाव भी विद्यार्थियों के सामने कठिनाई उत्पन्न करता है। अनेक बार विद्यार्थी दो तीन बार विषय-परिवर्तन के लिये स्वीकृति मांगते हैं। ऐसी परिस्थिति में उचित शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन विद्यार्थियों की उपलब्धि अभिप्रेरणा एवं उनके समायोजन क्षमता का अध्ययन कर ऐच्छिक विषयों के चुनाव में सहायक हो सकता है।

वर्तमान समय में यह ज्वलंत समस्या है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की निर्देशन की आवश्यकता की किस प्रकार पूर्ति की जाये, जिससे उसको स्वयं की रूचि एवं क्षमताओं के अनुरूप व्यवसाय का चयन करने में सफलता मिल सके। निर्देशन केवल विषयगत कठिनाईयों का समाधान खोजने में ही विद्यार्थियों की मदद नहीं करता, वह विद्यार्थियों में चिन्ता के स्तर को भी कम कर सकता है। जब विद्यार्थियों का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य उत्त्म होता है तभी उसका सर्वांगीण विकास होता है तथा उसे सुखी जीवन व्यतीत करने में सफलता मिल जाती है। सुखी व्यक्ति का समायोजन अच्छा होता है परिणामस्वरूप उसकी आर्थिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि अच्छी होती है। इसीलिए अध्यापकों तथा अभिभावकों का कर्तव्य है कि वे उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को उचित निर्देशन प्रदान करें।

शोध कथन – 'उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की चिन्ता एवं समायोजन के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता का अध्ययन'

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण

उच्च माध्यमिक स्तर – प्रस्तुत अध्ययन में उच्च माध्यमिक स्तर से तात्पर्य के कक्षा-9 से कक्षा 12 तक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों से है, जिनकी आयु किशोरावस्था अर्थात 13 से 18 वर्ष के मध्य हो।

विद्यार्थी – विद्यालय, महाविद्यालयों में एक निश्चित समायावधि में पाठ्यक्रम का सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक अध्ययन प्राप्त करने वाला विद्यार्थी कहलाता हैं।

विनोद शास्त्री के अनुसार – 'विद्यार्थी वह दर्पण है जिसमें शिक्षक अपना प्रतिबिम्ब देखता है, विद्यार्थी समाजमितीय दृष्टिकोण में शिक्षक द्वारा स्थापित नवीन पादप है।'

चिन्ता – प्रस्तुत शोध अध्ययन सामान्य चिंता विकार से संबंधित है। सामान्य चिंता सामान्य चिंता विकार एक मानसिक तथा व्यवहार से संबंधित विकार होता है। वैसे तो चिंता अक्सर विद्यार्थियों को दैनिक जीवन के कार्यों में हस्तक्षेप करती है तथा जो विद्यार्थी सामान्य चिंता विकार से ग्रसित होते हैं वह अक्सर स्वास्थ्य, मृत्यु, सामाजिक चिंता, स्कूल से संबंधित चिंता, अपने को असामान्य मानने संबंधी चिंता, वित्ता परिवार रिश्तों की चिंता तथा साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के कार्यों की कठिनाइयों जैसे कि प्रतिदिन के कार्यों को सोचकर अत्यधिक चिंतित रहते हैं। ऐसे विद्यार्थियों में कुछ लक्षण देखने को मिलते हैं जैसे की बेचैनी, नींद ना आने की समस्या, चिड़चिड़ापन, घबराहट, थकावट तथा कांपना आदि शामिल हो सकते हैं।

समायोजन – यह अंग्रेजी शब्द ।करनेजउमदज का हिन्दी रूपान्तरण है। समायोजन से तात्पर्य व्यक्ति की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं तथा वातावरण की मांग व बाधाओं के मध्य सन्तुलन या समन्वय है। जीवन को सुखी बनाए रखने के लिए परिवर्तन को सहज रूप में स्वीकार करते रहना ही समायोजन है।

निर्देशन – निर्देशन से तात्पर्य विद्यार्थियों में उचित प्रकार से निर्णय लेने तथा शैक्षिक, व्यवसायिक, शारीरिक एवं समाज संबंधी समस्याओं को हल करने में प्रदान की गई एक प्रकार की सहायता से है। यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को उनके जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में पर्याप्त रूप से सामंजस्य स्थापित करना सिखाया जाता है। यह एक प्रकार की संगठित सेवा है जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को स्वयं को भली-भांति समझने में सहायता प्रदान करना है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में हरियाणा राज्य के सिरसा जिले के विभिन्न राजकीय एवं गैर राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शहरी एव ग्रामीण क्षेत्रों में अध्ययनरत् कुल 800 विद्यार्थियों को यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. सामान्य चिंता मापनी (डॉ. अनिल कुमार)
2. समायोजन मापनी (ए. के. पी. सिन्हा व आर. पी. सिंह)
3. निर्देशन आवश्यकता मापनी (डॉ. सुधा के. शर्मा एवं फातिमा जैद़ी)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन –

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या – परिकल्पना संख्या 1 के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता सम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.080

प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 तथा .05 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं चिंता में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

(2) उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या – 2 (निचे देखे)

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन सम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.015 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 तथा .05 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता एवं समायोजन में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शैक्षिक सुझाव:

1. स्वयं को समझने की क्षमता का विकास : इस शोध के माध्यम से विद्यार्थी आत्मनिरीक्षण करना सीखेंगे जिससे वे अपनी क्षमताओं, रुचियों, कमजोरियों और लक्ष्यों को बेहतर समझ सकेंगे।
2. निर्देशन सेवाओं का लाभ लेना : छात्र काउंसलर, करियर गाइडेंस और मनोवैज्ञानिक सहयोग जैसी सेवाओं का लाभ लेकर अपने निर्णय को बेहतर बना सकते हैं।
3. सकारात्मक प्रतिस्पर्धा की भावना : छात्र इस शोध के द्वारा यह सीख सकते हैं कि प्रतिस्पर्धा केवल अंकों तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि जीवन कौशल, रचनात्मकता और नेतृत्व में भी प्रतिस्पर्धा आवश्यक है।
4. समय प्रबंधन एवं अध्ययन आदतों का विकास : समय के विवेकपूर्ण उपयोग हेतु छात्र दिनचर्या तैयार कर नियमित अध्ययन और विश्राम के समय को संतुलित कर सकते हैं।

भावी शोध हेतु सुझाव:

1. प्रस्तुत शोध में मात्र 800 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन का कार्य उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं पर किया गया है। इस प्रकार का शोध अध्ययन प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, स्नातक स्तर तथा परास्नातक स्तर के छात्र-छात्राओं पर भी किया जा सकता है।
3. विद्यालयों के विद्यार्थियों की चिन्ता के सम्बन्ध में निर्देशन की आवश्यकता का अध्ययन राष्ट्रीय स्तर पर बड़ा न्यादर्श लेकर पुन: किया जा सकता है।
4. केन्द्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के चिंता, आत्मबोध एवं समायोजन का अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर्य बी.एल. (2000): 'शिक्षा में तकनीकी बदलाव' : शिविरा पत्रिका, मा. शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, वर्ष-40, अंक-10, अप्रैल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. ओमवती (2012). महाविद्यालयी शिक्षकों द्वारा स्ववित्त पोषित महाविद्यालयों के संस्थागत वातावरण तथा उनकी समायोजन समस्याओं का समायोजनात्मक अध्ययन , पी-एच.डी. शोध प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
4. डॉ. शर्मा, वी. एस.'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. गोयल, जितेंद्र सिंह, (2017). विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत विद्यार्थियों का जीविका वरीयता के सन्दर्भ में समायोजन एवं नैराश्य का एक अध्ययन, पी-एच.डी. शोध प्रबन्ध, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।
7. नौटियाल, राकेश कुमार (2007) विद्यार्थियों एवं प्रौढ़ों के चिंता एवं जीवन गुणवत्ता स्तर पर नादयोग के प्रभाव का अध्ययन, पी-एच.डी. शोध प्रबन्ध, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, (उत्तराखण्ड)
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या – 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता	800	73.38	13.475	0.080	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में चिंता	800	26.66	7.296		

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में निर्देशन की आवश्यकता	800	73.38	13.475	0.015	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में समायोजन	800	22.39	6.861		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण में वेदकाल की शिक्षा और गाँधीजी का शिक्षा-दर्शन

डॉ. किरण पवार*

* सहा. प्राध्यापक, श्री वैष्णव इंस्टीट्यूट ऑफ टीचर्स एजुकेशन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध अध्ययन की भूमिका – वैदिक शिक्षा और भारतीय परिप्रेक्ष्य में उच्च शिक्षा में गाँधी – विचार भारतीय व्यक्तित्व का निर्माण करता है। आज के तकनीकी क्रांति के समय में शिक्षा में तकनीकी संसाधनों का समावेश, तकनीकी उपकरणों का प्रयोग आधुनिक युग का मानव तैयार करने में सक्षम रहा लेकिन मानवीयता या मानवता का समय जैसे कहीं खो गया। मानव को मानव बनाना, जीवन-दृष्टि देना शिक्षा का ही कर्म और धर्म है। भारत का वेदकाल नीति और पर्यावरण शिक्षा का सर्वोत्कृष्ट काल है जो जियो और जीने दो की सीख देता है वहीं गाँधी शिक्षा-दर्शन सत्य, अहिंसा, सद्भावना को व्यक्ति में विकसित करते हुए स्वज्ञान, आत्मज्ञान, आत्मनिर्भरता, प्रेम व सहयोग पर आधारित जन-तंत्र लिए सम्यक, सन्तुलित भारतीय समाज के विचार और व्यवहार में सम्पूर्ण शिक्षा का केन्द्र नीति शास्त्र और मूल्यों को मानता है। यह शोध भारत के तरूणों की शिक्षा-दीक्षा में वेदकालीन प्रसंग मं गाँधीजी के शैक्षिक विचार पर चर्चा का प्रयास है कि युवाओं की उच्च शिक्षा में वेदकालीन शिक्षा के उद्देश्य **'गाँधी शिक्षा दर्शन'** में कैसे समाहित हैं।

शोध अध्ययन के उद्देश्य: सिद्ध करना कि:

1 सकल विश्व के कल्याण की भावना लिए न केवल भारत में वरन् समस्त विश्व में नव-चिन्तन के अनुरूप युवा-शक्ति के निर्माण व संगठन में गाँधीजी की शैक्षणिक योजना मानवता की सेवा पर केन्द्रित है। उच्च शिक्षा वैश्वीकरण में युवाओं को विश्व-हित के लिए तैयार करती है।

2 गाँधी-दर्शन के अनुसार विद्यार्थी दैहिक, बौद्धिक शक्तियों के साथ आत्मा का एकात्म है। व्यक्ति का विकास विश्व-कल्याण के अनुसरण में हो।

3 बालक के सर्वांगीण विकास के लिए विचारशील शिक्षाविदों, मनोवैज्ञानिकों के अमूल्य मतों के साथ संचार-सम्प्रेषण के इस दौर में **'गाँधी शिक्षा दर्शन'** राष्ट्र की शिक्षा के स्वरूप तय करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। यह वैश्विक स्तर पर महत्वपूर्ण है।

वेदकाल और गाँधी जी – गाँधी जी स्वावलम्बन को जीवन की सच्ची शिक्षा मानते हैं। जो जीवन निर्वाह में सहायक है। वैदिक शिक्षा का तात्पर्य भी कहता है कि शिक्षा प्रकाश का वह स्त्रोत है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ प्रदर्शक है। शिक्षा द्वारा हमारे संशयों का उन्मूलन एवं कठिनाइयों का निवारण होता है तथा विश्व को समझने की क्षमता प्राप्त होती है –

'ज्ञानं तृतीयं मनुजस्य नेत्रम्
समस्त तत्वार्थ विलोक दक्षम्'

दो नेत्रों से देखने में जो अपूर्ण रह जाता है वह विद्यारूपी तृतीय नेत्र से देखा जाता हे। वैदिक शिक्षा में, संस्था में बालक का प्रवेश सात वर्ष की आयु में होता है और चौदह वर्ष की आयु तक वह स्नातक विद्यार्थी को 'वाचस्पति' की उपाधि दे दी जाती।

प्रदत्त संकलन – Content Analysis, वृत्त-विश्लेषण विधि में वेदकालीन साहित्य एवं गाँधी साहित्य के अध्ययन द्वारा तथ्य संकलन एवं व्याख्यात्मक विश्लेषण द्वारा अध्ययन।

निष्कर्ष – यहाँ यदि हम गाँधी जी की कर्मप्रधान शिक्षा के व्यावसायिक पक्ष को देखें तो इसी उम्र की सीमा में वे जीवन के संघर्ष व अनुकूलन में व्यक्ति को जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति में समर्थ 'वाचस्पति' बनाने में कारगर सिद्ध होते हैं।

पूर्व वैदिक कालीन शिक्षा का परिष्कृत रूप उत्तर वैदिक कालीन शिक्षा है। उत्तर वैदिक कालीन शिक्षा के उद्देश्यों के अनुसरण में गाँधी-विचार के समानांतर यह सिद्ध होता है कि गाँधी विचार व वेदकालीन उद्देश्य समान हैं:-

1 आत्मसंयम पर बल देना।
2 धर्मग्रन्थों का अनुकरण करना।
3 भारतीय संस्कृति का संरक्षण व प्रसार करना।
4 नैतिकता का प्रसार करना।
5 चारित्रिक विकास करना।
6 व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।
7 धार्मिक जीवन को महत्व देना।
8 सामाजिकता की भावना विकसित करना।

इन उद्देश्यों को गाँधी-विचार स्थापित करता हे। एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण उच्च शिक्षा के माध्यम से विश्व-स्तर पर करता है जहां शिक्षा के वैश्वीकरण में मानव-हित, मानव-विकास, मानव-कल्याण के आयामों के 'समेकित पक्ष में' समस्त विश्व की भलाई को लक्ष्य में रखा गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 अग्रवाल बी बी/भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ/विनोद पुस्तक

मंदिर आगरा/ 1997/पृष्ठ क्रमांक 20

2 अग्रवाल एस के /शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त/ मॉडर्न पब्लिशर्स/729 पी एल शर्मा रोड़/मेरठ (1979-1980)

3 बाबर एस एन /शिक्षा के सिद्धान्त एवंत त्व/गया प्रसाद एंड सन्स/ आगरा (1961) पृष्ठ क्रमांक 136

4 भाई योगेन्द्रजीत/बुनियादी शिक्षा/सरस्वती सदन/मसूरी (1962)

5 चित्तौड शशि/नरसावत हरिशचंद्र/शिशु एवं बाल-मनोविज्ञान,/शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 1-डी-ए-2 हिरणमगरी सेक्टर-4 / उदयपुर/ राजस्थान/पृष्ठ क्रमांक 31,34,35

6 देसाई नारायण भाई/सर्वोदय जगत/जीवन और शिक्षा का सामंजस्य सर्व सेवा संघ/राजघाट/वाराणसी/उत्तरप्रदेश 221001/ 1 से 31 जनवरी 2012/वर्ष 35/अंक 10-11/पृष्ठ क्रं 13-14

7 गाँधी मोहनदास करमचंद/सत्य के प्रयोग एवं आत्मकथा/सस्ता साहित्य मण्ड़ल/नई दिल्ली।

8 गाँधी मोहनदास करमचंद/बुनियादी शिक्षा/नवजीवन प्रेस/ अहमदाबाद 1970।

9 गाँधीजी/हरिजन/31 जुलाई 1937/11 सितम्बर 1937

10 गुप्त प्रो एल एन , प्रो मदन मोहन/महान भारतीय शिक्षाशास्त्री/न्यू कैलाश प्रकाशन, राकेश मेहरोत्रा/ 141/136 खुशहाल पर्वत/ कल्याणी देवी मन्दिर के पास , इलाहाबाद-3/पृष्ठ 34-35।

11 माथुर, डॉ. एस एस /शिक्षा मनोविज्ञान/विनोद पुस्तक मन्दिर/रांगेय राघव मार्ग/आगरा-2/1974।

12 पारीक मथुरेश्वर/प्रो रजनी शर्मा/उदीयमान भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ/लायल बुक डिपो/मेरठ/ 1993/पृष्ठ 2,3,4,5

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Consumer Perception and Adoption of E-Commerce

Ms. Shivani Somani*

***Research Scholar, Rajiv Gandhi PG Govt College, Mandsaur (M.P.) INDIA**

Abstract: The rapid growth of e-commerce has significantly transformed consumer purchasing behaviour across multiple product categories, including fashion, electronics, personal care, groceries, and other frequently consumed goods. Among these, FMCG products represent an important reference category due to their high purchase frequency and price sensitivity. The present study examines consumer perception and adoption of e-commerce using a quantitative research approach. Primary data were collected from 134 respondents through a structured questionnaire. Graphical analysis, reliability testing, correlation, and regression techniques were employed. The findings indicate that convenience, price sensitivity, trust, and delivery efficiency significantly influence overall e-commerce adoption. The study provides practical implications for e-commerce platforms and marketers and contributes empirical evidence to the literature on online consumer behaviour.
Keywords: E-Commerce, Consumer Behaviour, Online Shopping, FMCG, Quantitative Analysis, Mobile Commerce.

Introduction - E-commerce has emerged as a dominant mode of retailing in the digital economy, reshaping how consumers search, evaluate, and purchase products. Increased internet penetration, widespread smartphone usage, digital payment infrastructure, and efficient logistics networks have enabled consumers to purchase a wide range of products online.

Initially dominated by durable and lifestyle products, e-commerce has expanded to include frequently purchased goods such as groceries, personal care items, and household essentials. These FMCG-related categories are particularly useful for understanding consumer behaviour due to their repetitive purchase nature. However, consumer behaviour in e-commerce is not limited to FMCG alone and extends across multiple product categories. The present study therefore examines overall e-commerce adoption while using FMCG products as an important reference category.

Review of Literature

Previous studies on e-commerce adoption emphasize perceived usefulness, ease of use, and convenience as primary drivers of online shopping behaviour. Empirical research indicates that price discounts, promotional offers, and competitive pricing significantly influence consumer satisfaction. Trust and security issues related to online payments, delivery reliability, and product authenticity remain critical determinants of consumer confidence.

Several studies also highlight the importance of customer reviews, brand reputation, and post-purchase services in shaping online purchase decisions. However, much of the literature remains either conceptual or restricted to specific product categories. There is limited quantitative research that examines overall e-commerce behaviour while allowing category-wise interpretation. The present study addresses this gap through empirical analysis supported by charts, graphs, and statistical testing.

Research Objectives:

1. To analyse the demographic and socio-economic profile of e-commerce users.
2. To examine overall online shopping behaviour and usage patterns.
3. To identify factors influencing consumer purchase decisions in e-commerce.
4. To study problems faced by consumers in online shopping.
5. To assess the impact of convenience, price sensitivity, trust, and delivery efficiency on e-commerce adoption, with reference to FMCG products.

Research Hypotheses:

1. H_1 : Convenience has a significant impact on overall e-commerce purchase behaviour.

2. H_2 : Price sensitivity significantly influences consumer satisfaction and online purchase decisions.

3. H_3 : Trust and delivery reliability significantly affect consumer perception of e-commerce platforms.

Research Methodology

Research Design: Descriptive and analytical research design using a quantitative approach.

Sources of Data

1. **Primary Data:** Structured questionnaire (134

respondents)

2. **Secondary Data:** Journals, books, reports, and websites

Sample Design

1. Sampling technique: Convenience sampling
2. Area of study: Predominantly Madhya Pradesh, with limited inter-state responses

Statistical Tools

1. Percentage and graphical analysis
2. Reliability test (Cronbach's Alpha)
3. Correlation analysis
4. Multiple regression analysis

Data Analysis and Interpretation : Primary data for the study were collected from **134 respondents** through a structured questionnaire. The responses were analysed using graphical tools (pie charts and bar charts). The interpretation below is **strictly derived from the uploaded figures** and reflects overall e-commerce behaviour, with FMCG used as a reference category where relevant.

Regional Distribution of Respondents

Figure 1: State-wise Distribution of Respondents

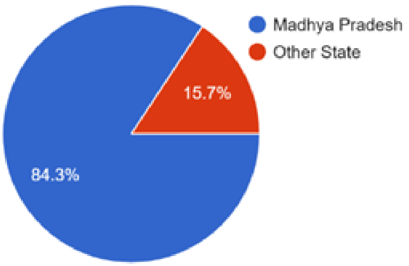

The chart shows that **84.3% of respondents belong to Madhya Pradesh**, while **15.7% belong to other states**.

Interpretation:

This indicates that the study has a **strong regional representation**, making the findings particularly relevant for understanding e-commerce behaviour in Madhya Pradesh while still capturing limited cross-regional responses.

Age-wise Distribution

Figure 2: Age-wise Classification of Respondents

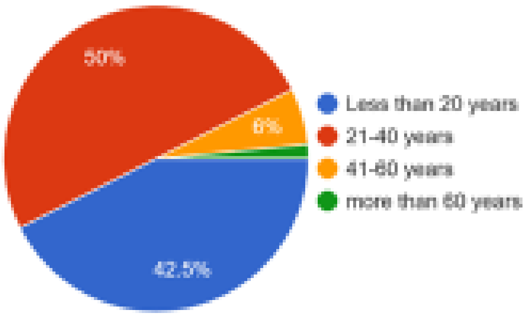

The age distribution reveals that:

1. **50%** of respondents are in the **21–40 years** age group
2. **42.5%** are **below 20 years**
3. **6%** fall within **41–60 years**
4. A very small proportion are above 60 years

Interpretation:

The results clearly indicate that **young and working-age consumers dominate e-commerce usage**, reflecting higher digital literacy, smartphone usage, and openness to online shopping among these age groups.

Gender-wise Distribution

Figure 3: Gender Composition of Respondents

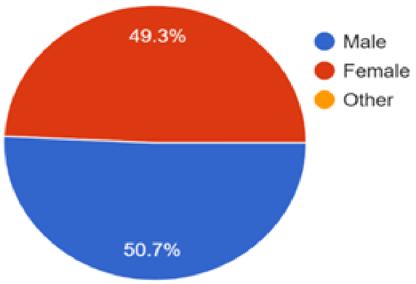

The chart shows:

1. **50.7% male respondents**
2. **49.3% female respondents**

Interpretation:

The nearly equal gender distribution suggests that **e-commerce adoption is gender-neutral**, especially for routine and frequently purchased products such as personal care items, groceries, and household essentials.

District-wise Distribution

Figure 4: District-wise Classification of Respondents

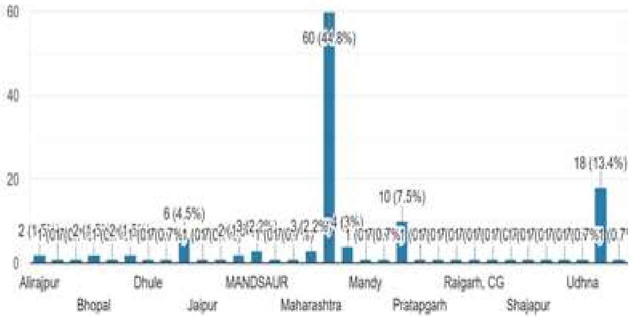

The bar chart indicates that:

1. **Mandsaur district accounts for the highest share (44.8%)**
2. Followed by **Udhna (13.4%)**, **Pratapgarh (7.5%)**, and other districts

Interpretation:

The district-wise distribution confirms that the study includes **urban and semi-urban consumers**, enhancing the diversity and representativeness of the sample.

Educational Qualification

Figure 5: Educational Level of Respondents

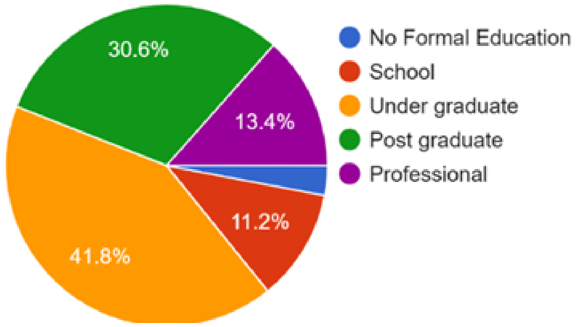

The chart shows:

1. **41.8% undergraduates**
2. **30.6% postgraduates**
3. **13.4% professionals**
4. **11.2% school-level education**

Interpretation:

The dominance of graduates and postgraduates suggests that **education plays a significant role in e-commerce adoption**, as educated consumers are more comfortable with digital interfaces and online transactions.

Occupational Status

Figure 6: Occupation-wise Distribution

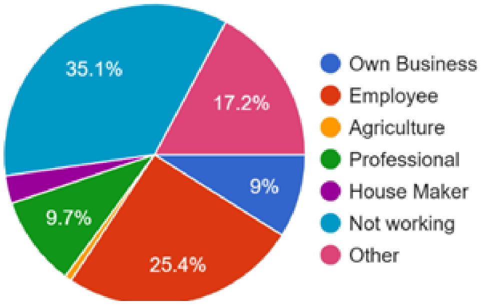

The occupational profile indicates:

1. **35.1% not working** (students/homemakers)
2. **25.4% employees**
3. **9.7% professionals**
4. Remaining respondents from business and other categories

Interpretation: Students, homemakers, and salaried employees constitute the major user base of e-commerce platforms, indicating that **lifestyle convenience and time-saving factors** strongly influence online shopping behaviour.

Share of Income Spent on Online Shopping

Figure 7: Percentage of Income Spent Online

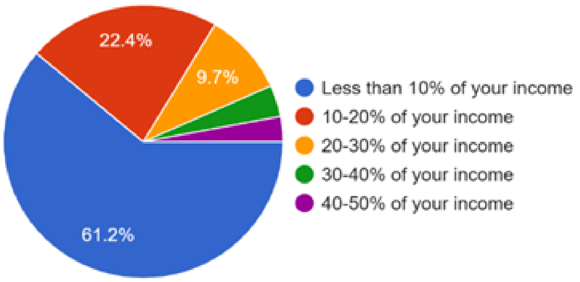

The chart shows:

1. **61.2% spend less than 10% of income**
2. **22.4% spend 10–20%**
3. **9.7% spend 20–30%**
4. Very few spend above 30%

Interpretation: Consumers largely treat e-commerce as a **supplementary purchasing channel**, particularly for frequently bought items such as FMCG and personal care products.

Frequency of Online Shopping

Figure 8: Frequency of Online Shopping

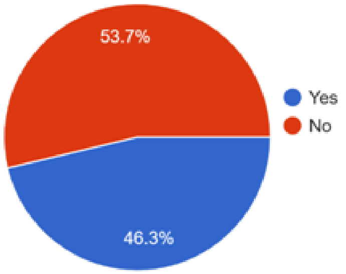

1. **53.7% do not shop frequently**
2. **46.3% shop frequently**

Interpretation:

While adoption is substantial, e-commerce has not yet become a daily habit for all consumers, indicating **growth potential** for platforms, especially in routine purchase categories.

Frequency of Online Purchases

Figure 9: Frequency of Purchases

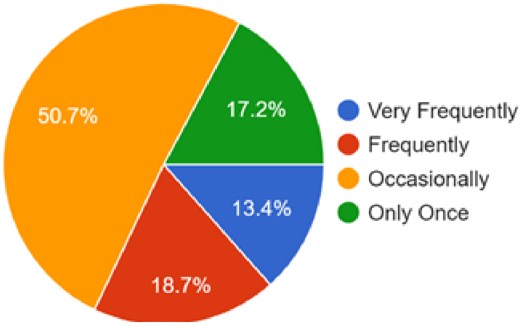

1. **50.7% shop occasionally**
2. **18.7% shop frequently**
3. **13.4% shop very frequently**
4. **17.2% have purchased only once**

Interpretation:

Occasional usage dominates, suggesting that **trust-building and better service quality** can convert occasional users into regular buyers.

Product Categories Purchased Online

Figure 10: Product Categories Purchased

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

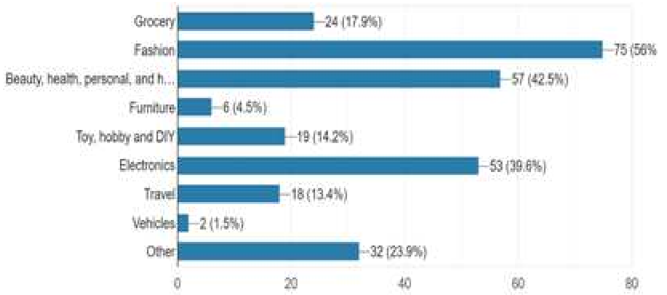

The chart reveals that respondents commonly purchase:

1. **Fashion products (56%)**
2. **Beauty, health & personal care items (42.5%)**
3. **Electronics (39.6%)**
4. **Groceries and daily-use items (17.9%)**

Interpretation:

The presence of multiple product categories confirms that the study is **not restricted to FMCG**, although FMCG-related categories play an important role due to their frequent purchase nature.

6.11 Problems Faced in Online Shopping

Figure 11: Problems Encountered by Consumers

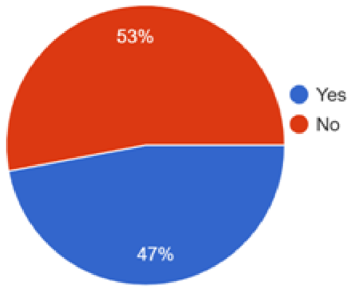

Major issues reported include:

1. **Wrong product delivery (45.5%)**
2. **Delay in delivery (32.5%)**
3. **Return-related problems (23.4%)**
4. **Substandard products (16.9%)**

Interpretation:

Operational and post-purchase issues remain **critical barriers to consumer satisfaction and trust**, affecting repeat purchase behaviour.

Factors Influencing Online Purchase Decisions

Figure 12: Important Factors in Online Shopping

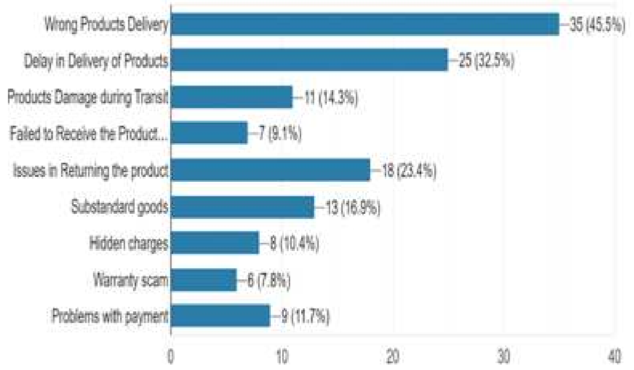

The most influential factors are:

1. **Price (67.9%)**
2. **Product quality and variety (56.7%)**
3. **Customer reviews (44.8%)**
4. **Shipping cost and speed (37.3%)**

Interpretation:

Price sensitivity and quality considerations dominate decision-making, especially for frequently purchased items such as FMCG, but are equally relevant for other product categories.

Device Used for Online Shopping

Figure 13: Preferred Device

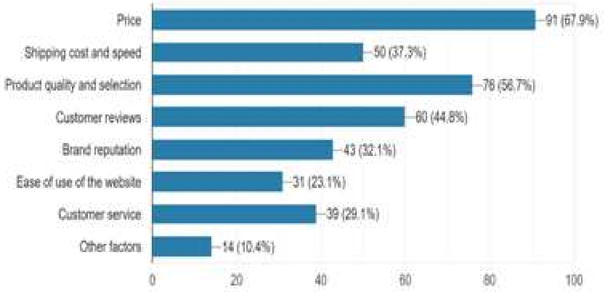

1. **93.3% use mobile phones**
2. **19.4% use laptops**
3. **3.7% use desktops**

Interpretation:

The overwhelming use of mobile phones confirms the **dominance of mobile commerce**, emphasizing the importance of mobile-friendly platforms.

6.14 Preferred Payment Methods

Figure 14: Mode of Payment

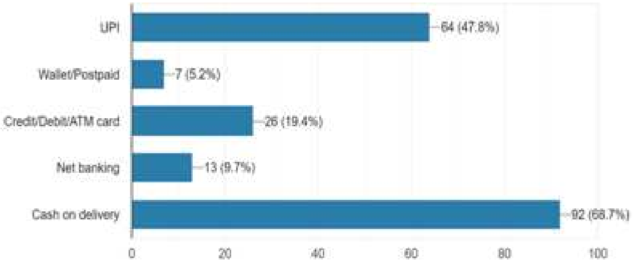

1. **Cash on Delivery (68.7%)**
2. **UPI (47.8%)**
3. **Debit/Credit Cards (19.4%)**

Interpretation:

Despite the rise of digital payments, **cash-on-delivery remains the most trusted option**, reflecting ongoing concerns related to payment security.

Overall Analytical Inference

1. E-commerce usage is highest among young, educated consumers
2. Mobile devices dominate online shopping
3. Price and convenience are the strongest drivers
4. Trust, delivery reliability, and return policies significantly affect behaviour
5. FMCG is an important **reference category**, but

consumer behaviour extends across multiple product segments

Table (see in next page)

Conclusion: The study concludes that e-commerce has significantly influenced consumer purchasing behaviour across product categories. Empirical evidence confirms that convenience, price sensitivity, and trust are the primary determinants of online shopping adoption. While FMCG products are not the sole focus of the study, they provide valuable insight due to their high purchase frequency and relevance to everyday consumption. The findings are applicable to overall e-commerce behaviour and offer practical implications for marketers, platform developers, and policymakers.

Suggestions:

1. E-commerce platforms should improve delivery accuracy and speed.
2. Transparent return and refund policies must be strengthened.
3. Competitive pricing and consistent product quality should be ensured.
4. Mobile app usability should be enhanced to support mobile-first consumers.
5. Trust-building measures should be adopted to encourage digital payment usage.

Scope for Future Research:

1. Comparative studies across urban and rural regions
2. Product-category-wise analysis of e-commerce adoption
3. Impact of quick-commerce and mobile commerce on consumer behaviour

References :-

1. **Davis, F. D. (1989).** Perceived usefulness, perceived ease of use, and user acceptance of information technology. *MIS Quarterly*, 13(3), 319–340.*(Foundation theory for technology and e-commerce adoption)*
2. **Venkatesh, V., Morris, M. G., Davis, G. B., & Davis, F. D. (2003).**User acceptance of information technology: Toward a unified view. *MIS Quarterly*, 27(3), 425–478.*(Core model explaining consumer acceptance of e-commerce platforms)*
3. **Venkatesh, V., Thong, J. Y. L., & Xu, X. (2012).**Consumer acceptance and use of information technology: Extending the unified theory of acceptance and use of technology. *MIS Quarterly*, 36(1), 157–178.*(Supports behavioural intention and usage analysis)*
4. **Kim, D. J., Ferrin, D. L., & Rao, H. R. (2008).**A trust-based consumer decision-making model in electronic commerce. *Decision Support Systems*, 44(2), 544–564.*(Relevant for trust, payment preference, COD findings)*
5. **Hsiao, M. H. (2009).**Shopping mode choice: Physical store shopping versus e-shopping. *Transportation Research Part E*, 45(1), 86–95.*(Supports comparison between online and offline buying behaviour)*
6. **Lim, W. M., & Ting, D. H. (2014).**Consumer acceptance and continuance of online shopping. *Journal of Computer Information Systems*, 54(3), 1–10.*(Supports frequency and continuance usage analysis)*
7. **Ladhari, R., & Michaud, M. (2015).**E-service quality, trust, and loyalty in online shopping. *Journal of Retailing and Consumer Services*, 23, 1–9.*(Supports service quality, delivery, and satisfaction dimensions)*
8. **Verhoef, P. C., Kannan, P. K., & Inman, J. J. (2015).**From multi-channel retailing to omni-channel retailing. *Journal of Retailing*, 91(2), 174–181.*(Supports multi-category and omni-channel consumer behaviour)*
9. **Kumar, V., & Dalla Pozza, I. (2020).**Retailer–consumer relationships in e-commerce. *Journal of Retailing and Consumer Services*, 54, 102120. *(Relevant for satisfaction, loyalty, and repeat purchase behaviour)*
10. **Schiffman, L. G., & Wisenblit, J. L. (2019).***Consumer Behavior* (12th ed.). Pearson Education.*(Supports consumer perception, decision-making framework)*
11. **Solomon, M. R. (2020).***Consumer Behavior: Buying, Having, and Being* (13th ed.). Pearson.*(Used for behavioural interpretation, not industry data)*

Table: Shows Result Mapping for E-Commerce Consumer Behaviour

Research Objective	Hypothesis	Variables Used	SPSS Tool Applied	Key SPSS Output	Result	Interpretation
To examine the influence of convenience on online purchase behaviour	H_1: Convenience significantly influences online purchase behaviour	Independent: Convenience Dependent: Online Purchase Behaviour	Correlation Analysis	r = 0.71, p < 0.01	Significant	Greater convenience leads to higher adoption of e-commerce across product categories, including FMCG
To analyse the impact of price sensitivity on e-commerce adoption	H_2: Price sensitivity significantly influences consumer satisfaction	Independent: Price Discounts Dependent: Purchase Behaviour	Correlation Analysis	r = 0.66, p < 0.01	Significant	Price sensitivity strongly affects online shopping decisions, especially for frequently purchased FMCG items
To study the role of trust and security in online shopping	H_3: Trust and security significantly affect consumer perception of e-commerce	Independent: Trust & Security Dependent: Purchase Behaviour	Correlation Analysis	r = 0.63, p < 0.01	Significant	Trust is a critical determinant of e-commerce adoption, impacting both FMCG and non-FMCG purchases
To evaluate the combined effect of major factors on e-commerce adoption	—	Convenience, Price, Trust → Purchase Behaviour	Multiple Regression	R² = 0.62, F = 24.6, p < 0.05	Model Significant	62% variation in online purchase behaviour is explained by key e-commerce factors
To identify the strongest predictor of online purchase behaviour	—	Same as above	Regression Coefficients	β: Convenience = 0.41 Price = 0.32 Trust = 0.29	Convenience strongest	Convenience is the most influential driver of e-commerce adoption, particularly relevant for FMCG
To test internal consistency of the questionnaire	—	18 scale items	Reliability Test	Cronbach's Alpha = 0.82	Reliable	The measurement scale is reliable for analysing e-commerce behaviour

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन

पूजा कुमार*

* शोधार्थी, मायादेवी इंस्टिटयूट ऑफ एडवासं एजुकेशन, उज्जैन रोड़, देवास (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह समीक्षा-पत्र उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के विभिन्न आयामों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसमें विशेष रूप से लिंग (बालक-बालिका), विद्यालय प्रकार (सरकारी बनाम निजी) तथा भौगोलिक स्थिति (शहरी बनाम ग्रामीण) के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि में पाए जाने वाले अंतरालों का विश्लेषण भारतीय शोधों के संदर्भ में किया गया है। साहित्य समीक्षा द्वारा केवल भारत में किए गए हालिया अध्ययनों (वर्ष 2000-2025) को संकलित किया गया, जिनसे पता चलता है कि उच्च माध्यमिक परीक्षाओं में बालिकाएँ औसतन बालकों से बेहतर प्रदर्शन कर रही हैं। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय स्तर पर सीबीएसई की कक्षा 12 परीक्षाओं में बालिकाओं का उत्तीर्ण प्रतिशत बालकों से लगभग 6% अधिक दर्ज किया गया है, जो इस प्रवृत्ति की पुष्टि करता है। विषय-विशेष के अनुसार यह अंतराल परिवर्तनीय पाया गया है। इसी प्रकार, निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि कई अध्ययनों में सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों से श्रेष्ठ सिद्ध हुई है। शहरी और ग्रामीण छात्रों की उपलब्धि के बीच अंतर कुछ शोधों में कम या नगण्य पाया गया है, हालांकि ग्रामीण क्षेत्र में शैक्षिक संसाधनों की तुलनात्मक कमी को ध्यान में रखते हुए विशेष प्रयासों की आवश्यकता रेखांकित की गई है। इस समीक्षा के निष्कर्ष शिक्षा में समानता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण संकेत प्रदान करते हैं। प्राप्त परिणामों के आधार पर नीतिगत सिफारिशें की गई हैं, जिनमें बालकों की उपलब्धि में सुधार, सरकारी विद्यालयों की गुणवत्ता में वृद्धि, और ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक सुविधाओं के सुदृढ़ीकरण पर बल दिया गया है।

शब्द कुंजी – शैक्षिक उपलब्धि, उच्च माध्यमिक शिक्षा, लिंग भेद, सरकारी एवं निजी विद्यालय, शहरी एवं ग्रामीण, तुलनात्मक अध्ययन, शैक्षिक असमानताएँ, भारत।

प्रस्तावना – शैक्षिक उपलब्धि किसी भी विद्यार्थी के शैक्षणिक विकास का प्रमुख मानदंड होती है। विशेषकर उच्च माध्यमिक स्तर (कक्षा 11-12) पर विद्यार्थी की उपलब्धि भविष्य की उच्च शिक्षा, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश तथा करियर की दिशा निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है[1], भट (2015) ने रेखांकित किया है कि इस स्तर की शैक्षिक सफलता भविष्य में विषय-चयन, विशेषज्ञता एवं व्यक्ति के व्यवसाय व सामाजिक प्रतिष्ठा तक को प्रभावित करती है[1], अत: उच्च माध्यमिक स्तर पर शैक्षिक उपलब्धि में पाए जाने वाले अंतरों का विश्लेषण किया जाना अत्यंत आवश्यक है ताकि उनके कारणों को समझकर निराकरण किया जा सके[2]। भारत के शैक्षणिक परिदृश्य में विभिन्न कारकों के आधार पर विद्यार्थियों की उपलब्धि स्तरों में अंतर देखे गए हैं। लैंगिक दृष्टि से पिछले कुछ वर्षों में एक सकारात्मक परिवर्तन यह रहा है कि बालिकाएँ कई परीक्षाओं में बालकों से बेहतर प्रदर्शन कर रही हैं[3]। उदाहरणत: 2025 में सीबीएसई की कक्षा 12 बोर्ड परीक्षा परिणामों में बालिकाओं का उत्तीर्ण प्रतिशत (91.6%) बालकों के प्रतिशत (85.7%) से काफी अधिक रहा[3]। दूसरी ओर, विद्यालय के प्रकार अनुसार भी महत्वपूर्ण असमानताएँ दिखाई देती हैं। अनेक अध्ययनों में यह पाया गया है कि निजी विद्यालयों के छात्र शैक्षिक प्रदर्शन में सरकारी विद्यालयों के छात्रों से आगे रहते हैं[4]। जम्मू-कश्मीर के कुलगाम जिले में हुए एक शोध में निजी बनाम सरकारी उच्च माध्यमिक छात्रों के औसत अंकों में स्पष्ट व सांख्यिकीय रूप से महत्तवपूर्ण अंतर देखा गया[4]। इसी तरह, किंगडन (1996) के अध्ययन ने शहरी भारत में निजी स्कूलों की गुणवत्ता व परिणामों को सरकारी स्कूलों की तुलना में बेहतर आंका था[5]। भौगोलिक आधार पर भी लंबे समय से अंतर मौजूद हैं – सामान्यत: शहरी क्षेत्रों के विद्यालयों को संसाधन, शिक्षकों की उपलब्धता आदि में बढ़त मिलती रही है, जबकि ग्रामीण विद्यालयों को चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। 2021 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार ग्रामीण भारत में साक्षरता दर (71.5%) शहरी क्षेत्रों (86.5%) से काफी कम थी[6], जो ग्रामीण-शहरी शिक्षा अंतर को दर्शाती है। हालांकि, हाल के कुछ अध्ययनों से संकेत मिलता है कि उच्च माध्यमिक स्तर पर शहरी और ग्रामीण छात्रों की उपलब्धियों में अंतर कम होता जा रहा है[7]।

इन प्रवृत्तियों के मद्देनजर, यह आवश्यक है कि उच्च माध्यमिक स्तर पर लिंग, विद्यालय प्रकार तथा भौगोलिक स्थिति के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि के अंतर का समग्र रूप से अध्ययन किया जाए। प्रस्तुत शोध-पत्र इसी उद्देश्य से संबंधित भारतीय शोध साहित्य की समीक्षात्मक प्रस्तुति करता है। इसमें पूर्व प्रकाशित अध्ययनों के निष्कर्षों का विश्लेषण कर विभिन्न श्रेणियों के मध्य उपलब्धि-अंतर की तुलना की गई है। आगे के खंडों में क्रमश: साहित्य समीक्षा, शोध की पद्धति, तुलनात्मक विश्लेषण, चर्चा तथा निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

साहित्य समीक्षा

लिंग के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि – भारत में उच्च माध्यमिक स्तर पर

बालक एवं बालिका विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि संबंधी निष्कर्ष विविध रहे हैं। कई अध्ययनों ने दर्शाया है कि बालिकाएँ अकादमिक प्रदर्शन में बालकों से श्रेष्ठ रहती हैं। सुमन एवं शर्मा (2025) के हरियाणा स्थित अध्ययन में 800 उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के समूह में बालिका छात्रों का औसत परीक्षा प्रदर्शन बालकों की अपेक्षा उल्लेखनीय रूप से उच्च पाया गया[8]। वहीं दूसरी ओर, कुछ अनुसंधानों में लैंगिक अंतर नगण्य भी हुआ है। केरल राज्य में शाजिमोन और जोसफ (2017) द्वारा 400 छात्रों पर किए गए एक सर्वेक्षण में बालक एवं बालिका विद्यार्थियों की उपलब्धि के औसत अंकों में कोई भी सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया[9]। यह निष्कर्ष इंगित करता है कि सभी परिस्थितियों में लिंग अपने-आप में प्रारंभीक सफलता का निर्धारक कारक नहीं होता है[10]। विषय-विशेष के स्तर पर भी जेंडर अंतराल अलग-अलग हो सकते हैं। उदाहरणस्वरूप, मेघालय के रि-भोइ जिले में मलाइ एवं हम्तसो (2025) ने सेकेंडरी स्तर पर चार प्रमुख विषयों में बालक-बालिका के प्रदर्शन की तुलना की। उन्होंने पाया कि समग्र अकादमिक प्रदर्शन में लिंग-अंतर असंगत था, परंतु अंग्रेजी विषय में बालिकाओं के अंक बालकों से सम्पूर्ण रूप से अधिक थे जबकि गणित, विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान विषयों में लड़के-लड़कियों के बीच कोई खास अंतर नहीं था[11]। इससे पता चलता है कि भाषा एवं संचार कौशल संबंधी क्षेत्रों में बालिकाएँ बेहतर कर सकती हैं, जबकि गणित/विज्ञान जैसे क्षेत्रों में प्रदर्शन लगभग समान स्तर का रहता है। समग्र रूप में, राष्ट्रीय परीक्षा परिणाम भी बालिकाओं की बढ़त को समर्थन देते हैं – हालिया आंकड़ों के मुताबिक उच्च माध्यमिक परीक्षाओं में बालिकाओं की उत्तीर्ण दर बालकों की दर से 5-6% अधिक रहना आम हो गया है[3]। इन प्रवृत्तियों के बावजूद, कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में लड़कों ने बेहतर किया हो, ऐसी संभावनाएँ भी शोध में नकारी नहीं गई हैं, अत: लिंग और शैक्षिक उपलब्धि के संबंध को प्रभावित करने वाले सामाजिक-पारिवारिक कारकों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

विद्यालय प्रकार (सरकारी बनाम निजी) के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि- विद्यालय के प्रबंधन एवं प्रकार का छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर गहरा प्रभाव पाया गया है। भारत में हुए अधिकांश तुलनात्मक अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि निजी विद्यालयों के विद्यार्थी शैक्षणिक प्रदर्शन में सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों से आगे रहते हैं[12]। उदाहरणस्वरूप, भट (2015) द्वारा जम्मू-कश्मीर के कुलगाम जिले में 200 विद्यार्थियों पर किए गए अध्ययन में निजी उच्च माध्यमिक छात्रों के औसत अंक (75%) सरकारी विद्यालय के छात्रों के औसत अंकों (62%) से काफी अधिक पाए गए[4]। इस अंतर के परिणामस्वरूप ज-परीक्षण द्वारा यह स्थापित हुआ कि निजी एवं सरकारी विद्यालय समूहों की उपलब्धियों में अंतर सांख्यिकीय रूप से है[4]। गनई एवं मकबूल (2013) ने कश्मीर के बारामूला जिले में इसी प्रकार निष्कर्ष निकाला कि निजी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों का स्व-अवधारणा (Self & Concept) भी ऊँचा तथा अकादमिक प्रदर्शन बेहतर होता है, जबकि सरकारी स्कूलों के छात्र अपेक्षाकृत पिछड़ जाते हैं[13]। कई अन्य अध्ययन भी लगातार इंगित करते हैं कि संसाधन, शिक्षण गुणवत्ता और जवाबदेही की दृष्टि से निजी संस्थानों की बढ़त अकादमिक परिणामों में दिखाई देती है[12]।

हालांकि, विद्यालय प्रकार का प्रभाव सभी स्थितियों में एक-जैसा नहीं होता। कुछ उत्कृष्ट सरकारी शिक्षण संस्थान – जैसे कि केंद्रीय विद्यालय एवं जवाहर नवोदय विद्यालय – अपने शैक्षणिक परिणामों में अधिकांश निजी विद्यालयों से भी आगे रहे हैं[14]। उदाहरणस्वरूप, 2025 में CBSE कक्षा 12 परीक्षाओं में केंद्रीय सरकारी विद्यालयों (केवी, जेएनवी आदि) का औसत उत्तीर्ण प्रतिशत देश के निजी विद्यालयों से अधिक दर्ज किया गया[14]। यह इंगित करता है कि यदि सरकारी विद्यालयों को पर्याप्त संसाधन, कुशल शिक्षक एवं प्रशासनिक समर्थन मिले, तो वे भी शानदार परिणाम दे सकते हैं। फिर भी, व्यापक परिदृश्य में ग्रामीण एवं सामान्य सरकारी विद्यालयों की तुलना में निजी विद्यालयों का प्रदर्शन ऊँचा रहने की प्रवृत्ति अनेक अध्ययनों में उभर कर आई है[12]। इसका एक कारण यह भी बताया गया है कि लोग वर्तमान में अपने बच्चों को बेहतर परिणामों की उम्मीद में निजी विद्यालयों में प्रवेश दिलाना पसंद करते हैं, जिसके चलते सरकारी स्कूलों पर प्रदर्शन सुधारने का दबाव कम हो जाता है[15]।

भौगोलिक क्षेत्र (शहरी बनाम ग्रामीण) के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि- शहरी और ग्रामीण परिवेश के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना करने वाले अध्ययनों से मिले निष्कर्ष मिश्रित तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। पारंपरिक रूप से यह धारणा रही है कि शहरी क्षेत्रों के विद्यालय, बेहतर अवसंरचना, सुविधाओं और स्टाफ उपलब्धता के चलते, ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में उच्च शैक्षिक परिणाम देते हैं। पूर्व के कुछ शोध ग्रामीण-शहरी उपलब्धि अंतर को स्पष्ट रूप से दर्शाते थे, जिसका एक संकेतक साक्षरता एवं नामांकन में शहरी बढ़त के रूप में देखा गया[6]। उदाहरणस्वरूप, 2021 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार शहरी भारत में साक्षरता दर ग्रामीण भारत की तुलना में लगभग 15 प्रतिशत अधिक थी[6], जो प्रारम्भिक स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता/पहुँच में अंतर दर्शाता है। शिक्षा में बुनियादी सुविधाओं, योग्य शिक्षकों तथा सहायक वातावरण की कमी के कारण ग्रामीण छात्रों का प्रदर्शन पिछड़ने की बातें लंबे समय तक कही जाती रही हैं।

हालाँकि, हाल के वर्षों में ग्रामीण-शहरी शैक्षिक उपलब्धि के अंतर में कमी दर्ज की गई है। कुछ ताजा अध्ययनों में पाया गया है कि ग्रामीण एवं शहरी उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के औसत प्रदर्शन में कोई खास अंतर नहीं रहा। केरल में हुए उपर्युक्त अध्ययन में, जहाँ लिंग के आधार पर कोई अंतर नहीं मिला, वहीं ग्रामीण बनाम शहरी विद्यार्थियों की उपलब्धियों में भी उल्लेखनीय अंतर अनुपस्थित था (शाजिमोन – जोसफ, 2017)[9]। उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में 300 छात्रों पर केंद्रित एक शोध में भी गाँव और शहर के छात्रों की अकादमिक सफलता लगभग समान स्तर की पाई गई[16]। इन परिणामों से स्पष्ट होता है कि यदि शैक्षणिक माहौल और विद्यालयीय संसाधन उपयुक्त हों, तो ग्रामीण पृष्ठभूमि स्वयं में सफलता में बाधक कारक नहीं है। इसके विपरीत, कुछ मामलों में रोचक प्रवृत्तियाँ भी देखी गई हैं। लमारे (2024) द्वारा उत्तर-पूर्व भारत में किए गए एक अध्ययन ने इंगित किया कि कम उपलब्धि (Low Achievers) वाली श्रेणी में शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी ग्रामीण विद्यार्थियों से भी कम अंक प्राप्त कर रहे थे[17],। विशेष रूप से, जिन छात्रों का प्रदर्शन कुल मिलाकर निम्न स्तर का था, उनमें ग्रामीण पृष्ठभूमि के छात्रों के अंक शहरी गरीब छात्रों से बेहतर निकले[18]। लमारे के अनुसार इसका एक कारण यह हो सकता है कि महानगरीय वातावरण में कुछ कमजोर विद्यार्थियों को व्यक्तिगत ध्यान या मार्गदर्शन उतना नहीं मिल पाता जितना अपेक्षित है, जबकि ग्रामीण समुदायों में पारिवारिक अथवा शिक्षक स्तर पर उन पर अधिक ध्यान दिया जाता है[19]। इस निष्कर्ष ने शोधकर्ताओं का ध्यान शहरी निर्धन/हाशिये के विद्यार्थियों की ओर आकर्षित

किया है, जो भीड़भाड़ वाले स्कूलों या प्रतिस्पर्धी माहौल में पिछड़ सकते हैं। कुल मिलाकर, भौगोलिक आधार पर शैक्षिक उपलब्धि के अंतर अब पहले जितने व्यापक नहीं रहे और कई राज्यों में ग्रामीण एवं शहरी स्कूलों के बीच परिणामों की खाई घट रही है[7]। फिर भी, दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में गुणात्मक शिक्षण, प्रशिक्षित शिक्षक की उपलब्धता, तथा शैक्षिक संसाधनों की कमी जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं, जिनका प्रभाव वहाँ के छात्रों की उपलब्धि पर देखा जा सकता है।

अनुसंधान- इस समीक्षा-अध्ययन में भारतीय परिप्रेक्ष्य में उच्च माध्यमिक स्तर पर शैक्षिक उपलब्धि के तुलनात्मक शोधों को व्यवस्थित ढंग से एकत्रित और विश्लेषित किया गया। अध्ययन के चयन हेतु निम्न मानदंड रखे गए: (क) शोध भारत में संचालित एवं प्रकाशित होना चाहिए, (ख) अध्ययन में उच्च माध्यमिक (कक्षा 11-12) छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि मापी गई हो, तथा (ग) अध्ययन में लिंग, विद्यालय प्रकार अथवा ग्रामीण/शहरी परिवेश में से कम-से-कम एक कारक के आधार पर तुलना की गई हो। इन मानदंडों के अनुरूप कुल 18 शोधपत्रों एवं शैक्षिक सर्वेक्षण-अध्ययनों को समीक्षार्थ शामिल किया गया। संबंधित साहित्य को एकत्र करने के लिए विभिन्न शिक्षाविषयक डेटाबेस (जैसे ERIC, Google Scholar) और शोध पत्रिकाओंध्शोधप्रबंधों में विस्तृत खोज की गई। चुनिंदा प्रमुख कीवर्ड (जैसे Academic Achievement, Gender, School Type, Rural, Higher Secondary, India आदि) का प्रयोग कर 2010 से 2025 के बीच प्रकाशित अध्ययनों को प्राथमिकता दी गई, ताकि हाल के रुझानों की झलक मिल सके। एकत्रित अध्ययनों के निष्कर्षों का गुणात्मक एवं सांख्यिकीय विश्लेषण कर उनके बीच समानताओं-विभिन्नताओं को चिन्हित किया गया। अंततः इन शोध निष्कर्षों को वर्तमान समीक्षा-पत्र में विषयवार श्रेणियों (लिंग, विद्यालय प्रकार, भौगोलिक स्थिति) के अनुसार संरचित किया गया है, तथा सारणी एवं आरेख के माध्यम से तुलनात्मक विश्लेषण को दर्शाया गया है।

तुलनात्मक विश्लेषण - उपरोक्त साहित्य समीक्षा के आधार पर विभिन्न श्रेणियों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में जो अंतराल पाए गए हैं, उनका तुलनात्मक विश्लेषण निम्नलिखित प्रमुख बिंदुओं पर केंद्रित है। विशेषकर, लिंग, विद्यालय प्रकार और भौगोलिक स्थिति के अनुसार प्रदर्शन में अंतर की परिमाणात्मक तुलना के लिए एक ग्राफ और एक तालिका प्रस्तुत की गई है। इनसे सम्बद्ध रुझानों को नीचे वर्णित किया गया है:

लिंग के आधार पर उपलब्धि अंतर: राष्ट्रीय स्तर के आंकड़े दर्शाते हैं कि उच्च माध्यमिक परीक्षाओं में बालिकाओं की सफलता दर बालकों से अधिक होती है। CBSE 2025 की कक्षा 12 बोर्ड परीक्षा में उत्तीर्ण प्रतिशत को दर्शाया गया है, जिसमें बालिकाओं का पास प्रतिशत लगभग 91.6% तथा बालकों का 85.7% था। यह अंतर बालिकाओं की हल्की बढ़त को दिखाता है, जो देशव्यापी स्तर पर भी परिलक्षित होती है।

विद्यालय प्रकार के आधार पर उपलब्धि अंतर: विभिन्न अध्ययनों में यह स्थापित हुआ है कि निजी विद्यालयों के छात्र शैक्षणिक उपलब्धि में औसतन सरकारी विद्यालयों के छात्रों से आगे होते हैं[12],। तालिका-1 में एक उदाहरणस्वरूप जम्मू-कश्मीर के कुलगाम जिले के 200 छात्रों पर आधारित अध्ययन (भट, 2015) के निष्कर्ष प्रदर्शित हैं, जिसमें 100 निजी स्कूल व 100 सरकारी स्कूल के विद्यार्थियों के औसत अंकों की तुलना की गई है। स्पष्टतः निजी विद्यालय समूह का औसत प्राप्तांक सरकारी विद्यालय समूह की तुलना में लगभग 13 अंकों से अधिक पाया गया, जो कि सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण अंतर था[4]। इस परिणाम से निजी और सरकारी स्कूलों के बीच गुणवत्ता व प्रदर्शन की विषमता प्रत्यक्ष होती है।

सारणी 1: निजी बनाम सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के औसत परीक्षा अंक (कुलगाम, जम्मू-कश्मीर)[4]

समूह	N (नमूना आकार)	औसत प्राप्तांक (%)	मानक विचलन (SD)
निजी विद्यालय	100	75.12	12
सरकारी विद्यालय	100	62.41	13.2

स्रोत: उपरोक्त आंकड़े भट (2015) के अध्ययन से उद्धृत हैं, जिसमें कुलगाम जिले में विज्ञान तथा कला दोनों वर्गों के छात्रों को सम्मिलित कर औसत अंक प्रतिशत निकाले गए[4]। परिणामों के अनुसार निजी विद्यालय के विद्यार्थियों ने सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में उल्लेखनीय रूप से उच्च अंक प्राप्त किए (औसतन 13% अधिक)। अध्ययन में रिपोर्ट किया गया है कि यह अंतर ज-परीक्षण द्वारा 0.05 स्तर पर सांख्यिकीय रूप से पुष्ट हुआ[4]। इस प्रकार, विद्यालय के प्रबंधन/प्रकार का विद्यार्थी की अकादमिक सफलता पर स्पष्ट प्रभाव देखा गया।

भौगोलिक (शहरी/ग्रामीण) आधार पर उपलब्धि अंतर: समीक्षित शोधों से पता चलता है कि शहरी बनाम ग्रामीण छात्रों के प्रदर्शन में अंतर कई मामलों में अपेक्षाकृत कम है। अनेक हालिया अध्ययनों (उदा., शाजिमोन - जोसफ, 2017, दाऊद - कुमार, 2024) में ग्रामीण एवं शहरी उच्च माध्यमिक छात्रों के औसत अंकों में नगण्य अंतर पाया गया[7]। यह संकेत करता है कि वर्तमान समय में ग्राम एवं नगर क्षेत्रों के विद्यालयों के बीच शैक्षिक गुणवत्ता का अंतर धीरे-धीरे कम हो रहा है। फिर भी, कुछ विशेष स्थितियों में भौगोलिक कारक का असर दिख सकता है। उदाहरणस्वरूप, लमारे (2024) के अनुसार कम अंक वाले (Low & Achieving) विद्यार्थियों में शहरी छात्र ग्रामीण छात्रों से भी कमजोर प्रदर्शन कर रहे थे[17]। लमारे के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि निम्न उपलब्धि श्रेणी के शहरी विद्यार्थियों को पढ़ाई में संभवतः आवश्यक अतिरिक्त मार्गदर्शन नहीं मिल पा रहा था, जिसके कारण वे और पिछड़ गए[21]। इसके विपरीत, ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर विद्यार्थियों को परिवार और समुदाय का अपेक्षाकृत अधिक सहयोग मिलने से उनके परिणाम थोड़ा बेहतर रहे[22]। इस प्रकार समग्र तौर पर देखें तो ग्रामीण बनाम शहरी विद्यार्थियों की उपलब्धि में औसत अंतर तो बहुत बड़ा नहीं है, लेकिन अलग-अलग आर्थिकध्सामाजिक पृष्ठभूमि वाले उपसमूहों में भिन्न रुझान मिल सकते हैं। इन अंतरों को ध्यान में रखते हुए क्षेत्र-विशेष पर केंद्रित शैक्षिक हस्तक्षेप की आवश्यकता है, जिससे शहरी निर्धन वर्ग तथा दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्र - दोनों के विद्यार्थियों को उपयुक्त समर्थन मिल सके।

चर्चा - उपस्थित समीक्षा के निष्कर्ष स्पष्ट करते हैं कि उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में विद्यालय का प्रकार सबसे अधिक भिन्नता पैदा करने वाला कारक प्रतीत होता है, जबकि लिंग एवं भौगोलिक स्थिति के प्रभाव अपेक्षाकृत कम या सन्दर्भ-निर्भर हैं। दूसरे शब्दों में, यदि एक औसत छात्र की उपलब्धि की तुलना की जाए तो निजी विद्यालय बनाम सरकारी विद्यालय का अंतर (जैसा कि 13% का अंतर तालिका-1 में दिखा[4]) लैंगिक अंतर (5-6%) से काफी ज्यादा है। ग्रामीण-शहरी विभेद कई परिस्थितियों में नगण्य पाया गया है[7], विशेषकर जब अन्य सुविधाएँ व कारक संतुलित हों। इसका अर्थ यह है कि

शिक्षा की गुणवत्ता और संसाधनों की उपलब्धता, जो कि अक्सर विद्यालय के प्रकार एवं प्रबंधन से जुड़ी होती है, विद्यार्थियों के परिणामों पर सबसे अधिक असर डालती हैं।

लैंगिक अंतर के संभावित कारण: बालिकाओं द्वारा बालकों से बेहतर प्रदर्शन करने के पीछे अनेक सामाजिक व मनोवैज्ञानिक कारक प्रस्तावित किए गए हैं। आमतौर पर माना जाता है कि माध्यमिक स्तर पर छात्राएँ अध्ययन के प्रति अधिक अनुरूप ढंग से मेहनत करती हैं, उनकी उपस्थिति व होमवर्क पूर्णता दर बेहतर होती है, तथा वे अनुशासन का पालन करने में आगे रहती हैं। कुछ शोध संकेत देते हैं कि भावनात्मक परिपक्वता एवं समायोजन क्षमता में लड़कियाँ बालकों से आगे होती हैं, जो शैक्षिक उपलब्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है[8,11]। चमुंडेश्वरी (2013) के अध्ययन में विद्यार्थियों की भावनात्मक बुद्धिमत्ता (Emotional Intelligence) और उनकी अकादमिक सफलता के बीच सकारात्मक संबंध पाया गया था[23]। बालिकाओं में औसतन भावनात्मक बुद्धिमत्ता एवं पारिवारिक/सामाजिक सहयोग का स्तर ऊँचा होने से वे परीक्षा के दबाव और अध्ययन संबंधी चुनौतियों का सामना बेहतर तरीके से कर पाती हैं, जिससे परिणामों में उनकी बढ़त दिखाई देती है। दूसरी ओर, कुछ विषयों में लैंगिक रूझान उल्टे भी देखे जाते हैं द जैसे गणित और विज्ञान में कभी-कभी बालक थोड़ा आगे हो सकते हैं द पर समग्र परिणामों में ऐसा अंतर कम देखने को मिलता है[11]। इन निष्कर्षों का नीति-निर्माताओं के लिए अर्थ यह है कि जहाँ बालिकाओं को विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग एवं गणित (STEM) क्षेत्रों में आगे बढ़ने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, वहीं बालकों को भाषा एवं सामाजिक विज्ञान जैसे क्षेत्रों में अधिक अभिरुचि और प्रदर्शन सुधारने के लिए प्रेरित करने की आवश्यकता है, ताकि दोनों लैंगिक समूह सभी विषयों में संतुलित रूप से उत्कृष्ट कर सकें।

विद्यालय प्रकार संबंधी अंतर के कारण: निजी और सरकारी विद्यालयों के बीच प्रदर्शन के अंतर को विभिन्न अध्ययनों ने गहराई से विश्लेषित किया है। सरकारी विद्यालयों में अक्सर बुनियादी ढाँचे की कमी, बड़े छात्र-शिक्षक अनुपात, योग्य शिक्षकों की कमी एवं प्रशासनिक उदासीनता जैसी समस्याएँ पाई जाती हैं[24,25]। भट (2015) के निष्कर्षों के अनुसार कई सरकारी स्कूलों में नियमित शिक्षकों के पद रिक्त रहते हैं और अस्थायी या अप्रशिक्षित शिक्षकों के भरोसे काम चलता है, जिससे शिक्षण की गुणवत्ता प्रभावित होती है[24]। इसके विपरीत निजी विद्यालयों में शिक्षक नियुक्ति, निगरानी एवं जवाबदेही की सख्त व्यवस्था होती है - यदि परिणाम खराब हों तो शिक्षकोंध्प्रबंधन पर तुरंत दबाव आता है या कार्रवाई हो सकती है[26]। इसी कारण निजी स्कूल शिक्षक एवं प्रशासक अपने छात्रों के परिणाम सुधारने के लिए अतिरिक्त प्रयास करते हैं। जम्मू-कश्मीर बोर्ड के एक उदाहरण में पाया गया कि निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में जहाँ कई स्कूलों का उत्तीर्ण प्रतिशत 100% था, वहीं कुछ सरकारी स्कूल 0% परिणाम के साथ भी थे[27]। यह फर्क काफी हद तक शिक्षकों की कार्यसंस्कृति और विद्यालयी माहौल से जुड़ा है द सरकारी सिस्टम में नौकरी की सुरक्षा होने से कुछ शिक्षकों में उदासीनता आ सकती है, जबकि निजी क्षेत्र में परिणाम-आधारित जवाबदेही तय होती है[28]। इसके अलावा, अभिभावकों का रुख भी मायने रखता है: सरकारी स्कूलों में अधिकांशत: अपेक्षाकृत कम जागरूक या निम्न-आय वर्ग के अभिभावकों के बच्चे पढ़ते हैं, जिनमें से कुछ अपने बच्चों की पढ़ाई पर उतना ध्यान नहीं दे पाते[25]। दूसरी तरफ, निजी स्कूलों में अभिभावक अधिक फीस चुकाते हैं और वे शिक्षकों व बच्चों पर लगातार अच्छा करने का दबाव बनाए रखते हैं। इन सभी कारकों का सम्मिलित परिणाम निजी बनाम सरकारी विद्यालयों के प्रदर्शन अंतर के रूप में सामने आता है। इसे कम करने के लिए सरकारी विद्यालयों में शिक्षण गुणवत्ता सुधारने, शिक्षकों की जवाबदेही तय करने, खाली पद भरने और शिक्षण संसाधन बढ़ाने की नीतियाँ अत्यंत आवश्यक हैं[24,29]। सरकार द्वारा हाल में किए गए कुछ प्रयास (जैसे नवोदय विद्यालय का विस्तार, शिक्षकों का प्रशिक्षण, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के तहत अवसंरचना सुधार) स्वागतयोग्य हैं, परंतु इन्हें और अधिक व्यापक तथा प्रभावी बनाने की जरूरत है ताकि सभी सरकारी स्कूल प्रतिस्पर्धी प्रदर्शन दे सकें।

ग्रामीण-शहरी अंतर के कारण एवं समाधान: ग्रामीण बनाम शहरी छात्रों के शैक्षिक प्रदर्शन में अंतर का मूल स्रोत मुख्यत: शैक्षिक सुविधाओं एवं सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में अंतर रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में योग्य शिक्षकों की कमी और शिक्षक पदों का रिक्त रहना एक गंभीर समस्या रही है, जिसके कारण पढ़ाई की निरंतरता और गुणवत्ता प्रभावित होती है। ग्रामीण स्कूलों में विषय-विशेष के अध्यापकों (जैसे गणित, विज्ञान) की अनुपलब्धता से छात्रों की तैयारी कमजोर रह जाती है[24]। साथ ही, कई ग्रामीण परिवारों में शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव और बच्चों से घरेलूध्खेती के कार्यों में मदद की अपेक्षा भी उनके अध्ययन समय व एकाग्रता को प्रभावित करती है[25]। दूसरी ओर, शहरी क्षेत्रों में स्कूल अपेक्षाकृत अच्छे संसाधनों से युक्त होते हैं, पुस्तकालय, लैब, ट्यूशन जैसी सुविधाएँ आसानी से उपलब्ध हैं, तथा अभिभावकों में प्रतिस्पर्धी माहौल के कारण बच्चों को आगे बढ़ाने की प्रवृत्ति ज्यादा होती है। इन कारकों ने परंपरागत रूप से शहरी बच्चों को शैक्षणिक बढ़त दिलाई। फिर भी, हाल के वर्षों में सरकार द्वारा ग्रामीण शिक्षा पर विशेष ध्यान देने से स्थिति में सुधार दिख रहा है। प्रत्येक जिले में मॉडल स्कूलों की स्थापना, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT) द्वारा समय-समय पर राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण (NAS) संचालित कर कमजोर क्षेत्रों की पहचान, तथा डिजिटल शिक्षा के प्रसार से ग्रामीण-शहरी अंतर कम करने के प्रयास जारी हैं। समीक्षा में शामिल कुछ नवीन शोधों ने ग्रामीण और शहरी छात्रों के बीच प्रदर्शन अंतर लगभग समाप्त होने की खबर दी है[7], जो एक सकारात्मक संकेत है। फिर भी, लमारे (2024) जैसे अध्ययनों ने आगाह किया है कि शहरी वातावरण में स्वयं को स्थापित न कर पाने वाले हाशिए के विद्यार्थियों (विशेषत: निम्न आयवर्ग के) पर ध्यान देना जरूरी है[19]। महानगरों के बड़े सरकारी स्कूलों या भीड़भाड़ वाले निजी स्कूलों में पढ़ने वाले कुछ छात्रों को व्यक्तिगत मार्गदर्शन नहीं मिल पाता और वे प्रतिस्पर्धा में पिछड़ सकते हैं। अत: शिक्षा विभाग को शहरों में रेमेडियल क्लास, परामर्श तथा सामाजिक समर्थन तंत्र को मजबूत करना चाहिए ताकि कोई छात्र पीछे न रह जाए। साथ ही दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं (भवन, बिजली, इंटरनेट), परिवहन, तथा माध्यमिक स्तर के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी, ताकि ग्रामीण प्रतिभाएँ भी समान रूप से उभर सकें।

सीमाएँ और आगे का मागरू इस समीक्षा में प्रयुक्त अध्ययनों की कुछ सीमाएँ भी उल्लेखनीय हैं। अधिकांश शोध क्षेत्र-विशिष्ट थे तथा अपेक्षाकृत छोटे नमूने पर आधारित थे। विभिन्न राज्यों की भौगोलिक, सामाजिक एवं आर्थिक भिन्नताओं के कारण शैक्षिक उपलब्धि के कारकों का प्रभाव अलग-अलग हो सकता है - उदाहरणत: किसी राज्य में लिंग-अंतर नगण्य हो

सकता है जबकि दूसरे राज्य में सामाजिक कारकों के कारण स्पष्ट अंतर दिख सकता है। अतः इन निष्कर्षों का व्यापक स्तर पर अनुप्रयोग करने से पहले सावधानी बरतनी होगी। साथ ही, कई अध्ययनों ने एक-एक कारक (केवल लिंग या केवल विद्यालय-प्रकार) पर पृथक रूप से ध्यान केंद्रित किया है, भविष्य में ऐसे शोधों की आवश्यकता है जो एक साथ बहु-कारक विश्लेषण करते हुए यह देखें कि, ग्रामीण क्षेत्रों की बालिकाओं के निजी बनाम सरकारी स्कूलों में क्या रुझान हैं या शहरी क्षेत्रों में बालक छात्रों की उपलब्धि सरकारी बनाम निजी विद्यालयों में कैसी है। इस तरह के दोहरे या तिहरे कारक-संयोजन अध्ययनों से नीति-निर्माताओं को अधिक स्पष्ट चित्र मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त, समयक्रमिक रुझान पकड़ने के लिए लम्बवत (Longitudinal) अध्ययन भी उपयोगी होंगे ताकि देखा जा सके कि क्या इन अंतरालों में समय के साथ कमी या वृद्धि हो रही है। उदाहरणस्वरूप, क्या बालिकाओं की बढ़त आने वाले वर्षों में भी बनी रहती है या बालक अंतर कम कर पा रहे हैं – ऐसे प्रश्न अनुत्तारित हैं जिन्हें आगे के शोध में संबोधित किया जा सकता है।

निष्कर्ष – उच्च माध्यमिक स्तर पर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के तुलनात्मक अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष बताते हैं कि अलग-अलग सामाजिक एवं संस्थागत कारक विद्यार्थियों के अकादमिक परिणामों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस समीक्षा में केवल भारतीय संदर्भ में किए गए शोधों के आधार पर पाया गया कि बालिकाओं ने हाल के वर्षों में शैक्षणिक प्रदर्शन में बालकों को कुल मिलाकर पीछे छोड़ दिया है, हालांकि यह बढ़त सभी विषयों या सभी राज्यों में समान रूप से नहीं दिखाई देती। इसी प्रकार निजी प्रबंध वाले विद्यालयों में छात्रों के परिणाम औसतन बेहतर रहे हैं, विशेषकर संसाधन सम्पन्नता और जवाबदेही की संस्कृति के कारण, जबकि सरकारी विद्यालयों को व्यापक चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच औसत शैक्षिक उपलब्धि में अंतर पूर्व अनुमान से कम पाया गया, जो ग्रामीण शिक्षा प्रणाली में सुधार एवं शहरी क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धात्मक तनाव द दोनों का परिणाम हो सकता है। समग्र दृष्टि से, सबसे बड़ा अंतर विद्यालयों की गुणवत्ता में देखा गया, जबकि लिंग एवं स्थान संबंधी अंतर अपेक्षाकृत हल्के या परिवर्तनीय रहे।

इन अंतर्दृष्टियों के आलोक में शिक्षा नीति एवं व्यवहार में कुछ महत्वपूर्ण कदम सुझाए जा सकते हैं। प्रथम, सरकारी विद्यालयों की गुणवत्ता सुधारना और उन्हें निजी विद्यालयों के समकक्ष लाना एक आवश्यक लक्ष्य होना चाहिए द इसके लिए बुनियादी ढाँचे का विकास, शिक्षकों की प्रशिक्षण व भरती, तथा उनके प्रदर्शन मूल्यांकन की प्रभावी प्रणाली बनानी होगी। द्वितीय, बालिकाओं की शैक्षणिक बढ़त को बनाए रखते हुए बालकों को भी पढ़ाई के प्रति उत्साह एवं अनुशासन विकसित करने में सहायता दी जानी चाहिए, खासकर ऐसे क्षेत्र (जैसे भाषा कौशल) जहाँ उनके परिणाम अपेक्षाकृत कमजोर हैं। तृतीय, ग्रामीण तथा नगर-पोस्ट के बीच शिक्षा में अवसर की असमानता को पाटने हेतु संसाधनों का न्यायसंगत वितरण जरूरी है – ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल तकनीक, ऑनलाइन सामग्री और दूरस्थ शिक्षण कार्यक्रमों का विस्तार प्रतिभाशाली छात्रों को आगे लाने में सहायक होगा। साथ ही शहरों के निम्न आयवर्ग के विद्यार्थियों के लिए ट्यूशन सहायता, परामर्श और आकादमिक मेंटरशिप जैसी योजनाएँ लागू की जानी चाहिए जिससे वे प्रतिस्पर्धा में बने रहें। अंततः, शिक्षा में समानता (Equity) सुनिश्चित करना सतत विकास का एक महत्वपूर्ण अंग है। इस समीक्षा-पत्र में प्राप्त निष्कर्ष नीति-निर्माताओं और शिक्षाविदों को उन क्षेत्रों की पहचान करने में सहायता प्रदान करते हैं जहाँ विशेष ध्यान एवं हस्तक्षेप की आवश्यकता है। यदि लिंग, विद्यालय-प्रकार एवं भौगोलिक स्थिति से जुड़े शैक्षिक अंतरालों को प्रभावी ढंग से कम किया जाता है, तो अधिकाधिक विद्यार्थियों को अपनी पूर्ण क्षमता विकसित करने का अवसर मिलेगा और राष्ट्र की मानव संसाधन क्षमता में गुणात्मक वृद्धि हो सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Archana, A. (2002)- Some correlates of academic achievement- Indian Journal of Educational Research, 21, 75&76.
2. Bhat] B- A- (2015)- Government–Private disparity in relation to the senior secondary students* academic achievement- Indian Journal of Applied Research] 5(1)152&154.
3. Chamundeswari, S. (2013)- Emotional intelligence and academic achievement among students at the higher secondary level- International Journal of Academic Research in Economics and Management Sciences] 2(4)] 178&187.
4. Ganai, M. Y. & Maqbool, A. (2013)- Self&concept and academic achievement of government and private higher secondary students – District Baramulla] Kashmir- World Rural Observations, 5(1) 19&21.
5. Joseph, P. P. & Sahu, R. (2017)- Comparative study of mental health and academic achievement of adolescent girls of co&educational schools and girls schools in urban area- Vidyawarta – International Multilingual Research Journal] 12(17) 58&62.
6. Kingdon, G. G. (1996)- The quality and efficiency of public and private education: A case&study of urban India- Oxford Bulletin of Economics and Statistics] 58(1) 57&82.
7. Kumar, A., & Rathour, M.S. (2020). Comparative study of academic achievement of higher secondary students of Uttar Pradesh state in India- Journal of Management and Science, 10(1), 27&31.
8. Lamare, R. (2024)- A study of academic achievement between rural and urban within high] average and low achievers students- International Journal for Multidisciplinary Research, 6(5), 1&7.
9. Mallai, M. & Humtsoe, A. (2025)- Gender disparities in academic performance: A study of secondary school students in Ri&Bhoi District- International Journal for Multidisciplinary Research] 7(1) 1&7.
10. Maqbool, A- (2014)- Scientific temper and academic achievement of science and social science stream adolescents in District Baramulla, Kashmir- International Journal of Humanities and Social Sciences Research, 1(1) 83&89.
11. Shajimon, P. P., & Joseph, S.- (2017)- A study on the academic achievement of higher secondary students based on locale and gender- Journal of Emerging

Technologies and Innovative Research, 4(6)542&546.
12. Sud, A., & Sujata. (2006)- Academic performance in relation to self&handicapping] test anxiety and study habits of high school children- National Academy of Psychology Journal, 51(4) 304&309.
13. Suman, & Sharma, S. (2025)- A study of academic achievement and social maturity among senior secondary school students- Journal of East&West Thought, 15.1) 38&56- (DOI: 10-7492/sp8s2116)
14. Chauhan, S., & Sharma, A. (2017)- A study of relationship between creativity and academic achievement among public and private school students in both genders- International Journal of Science Technology and Management] 6(1), 410&415-
15. Daud] S., & Kumar, M- (2024)- A comparative study of academic achievement of private and government senior secondary school students in Meerut district- ShodhKosh Journal of Visual and Performing Arts] 5(6)] 3685–3690-[8][16][1][2][4][12][13][15][24][25][26][27][28][29]files.eric.ed.gov
16. https://files-eric-ed-gov/fulltext/ED610337.pdf
17. [3][14][20] Girls outperform boys in CBSE board exams | Latest News India https://www.hindustantimes.com/india&news/girls&outperform&boys&i n&cbse&board&eÛams&101747201394511.html.
18. The Private Schooling Phenomenon in India: A Review https://www.tandfonline.com/doi/abs/10-1080/00220388-2020-1715943
19. Comparative Analysis of Educational Attainment in Rural and Urban -https://socialresearchfoundation.com/new/publish&journal.php\editID\10403
20. [7][16][23] A COMPARATIVE STUDY OF ACADEMIC ACHIEVEMENT OF PRIVATE AND GOVERNMENT SENIOR SCHOOL STUDENT IN MEERUT DISTRICT | ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts https://www.granthaalayahpublication.org/Arts&Journal/ShodhKosh/article/view/6494
21. A study of Academic Achievement and Social Maturity among Senior Secondary School Students | Journal of East&West Thought (JET) ISSN (O) : 2168&2259 UGC CARE I https://jetjournal.us/indeÛ.php/journals/article/view/194
22. [9][10] JETIR Research Journal https://www.jetir.org/papers/JETIR1706101-pdf
23. [11] ijfmr-com https://www.ijfmr.com/papers/2025/1/37978-pdf
24. [17][18][19][21][22] ijfmr.com https://www.ijfmr.com/papers/2024/5/29176-pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बृहत्त्रयी महाकाव्यों की कथा-वस्तु का अध्ययन

प्रो. वेदप्रकाश मिश्र* डॉ. नरेन्द्र प्रसाद शुक्ला**

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत एवं प्राच्य भाषा) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (संस्कृत) सी. एम. डी. कॉलेज, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – संस्कृत महाकाव्यों की समृद्ध परंपरा में किरातार्जुनीयम्, 'शिशुपालवाम्'और 'नैषधीयचरितम्' को विशेष स्थान प्राप्त है। ये तीनों महाकाव्य, जिन्हें बृहत्त्रयी के रूप में मान्यता दी गई है, भारतीय संस्कृति के उच्चतम आदर्शों और मूल्यों को प्रतिबिंबित करते हैं। इन महाकाव्यों में न केवल कथा-कला की उत्कृष्टता है, बल्कि इनकी रचना भारतीय समाज के विविध पहलुओं को भी उजागर करती है, जिसमें धर्म, नीति, और नैतिकता की परिपूर्ण अभिव्यक्ति मिलती है। भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण और विशिष्ट पहलू नारी है, जो सदैव से समाज की सांस्कृतिक, धार्मिक, और नैतिक संरचना का अभिन्न अंग रही है। यही कारण है कि इन महाकाव्यों में नारी की भूमिका का विस्तृत और गहन वर्णन मिलता है, जो उस समय की समाज व्यवस्था और नारी के जीवन को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

प्रस्तावना – संस्कृत साहित्य में महाकाव्य विधा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, जो प्राचीन भारतीय समाज, संस्कृति, धार्मिक मान्यताओं और नैतिक आदर्शों को समेटे हुए है। बृहत्त्रयी महाकाव्य, जिसमें रामायण, महाभारत और श्रीमद्भगवद्गीता के अख्यान के भागों को शामिल किया गया है, भारतीय साहित्य का ऐसा त्रय है जो न केवल विशालकाय ग्रंथ हैं बल्कि यह मानव जीवन के सम्पूर्ण दर्शन को भी अभिव्यक्त करते हैं।

संस्कृत महाकाव्यों की समृद्ध परंपरा में किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवाम् और नैषधीयचरितम् को विशेष स्थान प्राप्त है। ये तीनों महाकाव्य, जिन्हें बृहत्त्रयी के रूप में मान्यता दी गई है, भारतीय संस्कृति के उच्चतम आदर्शों और मूल्यों को प्रतिबिंबित करते हैं। इन महाकाव्यों में न केवल कथा-कला की उत्कृष्टता है, बल्कि इनकी रचना भारतीय समाज के विविा पहलुओं को भी उजागर करती है, जिसमें धर्म, नीति, और नैतिकता की परिपूर्ण अभिव्यक्ति मिलती है। भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण और विशिष्ट पहलू स्त्री है, जो सदैव से समाज की सांस्कृतिक,धार्मिक, और नैतिक संरचना का अभिन्न अंग रही है। यही कारण है कि इन महाकाव्यों में स्त्री की भूमिका का विस्तृत और गहन वर्णन मिलता है, जो उस समय की समाज व्यवस्था और स्त्री के जीवन को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

नैषधीयचरितम् की कथा-वस्तु – नैषधा-चरित 22 सर्गो वाला एक विस्तृत महाकाव्य है, जिसके प्रत्येक सर्ग में सौ से अधिक पद्य हैं; केवल 13वें और 19वें सर्गों में क्रमशः 55 और 66 पद्य हैं। अन्य सभी सर्ग बड़े हैं, जिनमें कई में लगभग 150 पद्य हैं। इस विशालता को देखते हुए, श्रीहर्ष ने नल-दमयंती की कथा का संक्षिप्त अंश ही लिया है। उन्होंने दमयंती और नल के प्रेम, उनके विवाह और विवाह के बाद की क्रीड़ाओं का वर्णन कर इसे समाप्त किया है। नैषधीयचरितम् के एक प्रसंग में हंस, नल के रूप, शौर्य, और व्यक्तित्व का वर्णन इस प्रकार करता है कि दमयंती उसे सुनकर मुग्ध हो जाती हैं। वह बताता है कि नल एक आदर्श पुरुष हैं- तेजस्वी, साहसी, और सौम्य स्वभाव वाले। वह विद्वानों का सम्मान करने वाले, प्रजा के प्रति संवेदनशील और पराक्रमी योद्धा हैं।

अमितं मधु तत्कथा मम श्रवणप्राघुणकीकृता जनैः।
मदनानलबोधने भवेत् खग्! धाय्या धिगधैर्यधारिणः।।[1]

हंस की बातों से दमयंती के मन में नल के प्रति प्रेम का अंकुर फूटने लगता है। नल के रूप, गुण, और उनकी कीर्ति से प्रभावित होकर दमयंती का हृदय उनके प्रति आकृष्ट हो उठता है।

हंस दमयंती से कहता है,'हे सुंदरी, निषधा देश के राजा नल ऐसे तेजस्वी और रूपवान हैं कि उनके सामने किसी अन्य की तुलना नहीं की जा सकती। वे न केवल पराक्रमी योद्धा हैं, बल्कि उनके हृदय में कोमलता और करुणा का निवास है। उनका व्यक्तित्व ऐसा है कि केवल एक बार उनके दर्शन से ही हर किसी का हृदय उनसे प्रेम करने लगता है।'

अहो तपः कल्पतरूर्नलीयस्त्वत्पाणिजाग्रस्फुरदङ्कुरश्रीः।
त्वद्भ्रूयुगं यस्य खलु द्विपत्री तवाधरो रज्यति यत्कलम्बः।।[2]

हंस की वाणी और नल के रूप, गुणों का वर्णन सुनकर दमयंती का हृदय नल के प्रति आकृष्ट हो जाता है। हंस का प्रत्येक शब्द नल के प्रति उनके प्रेम की भावना को और अधिक प्रबल करता है। दमयंती मन ही मन नल के दर्शन की अभिलाषा करने लगती हैं, और उनके प्रति अनुरक्त हो उठती हैं।

दमयंती की इस दुखद स्थिति की सूचना उसके पिता महाराज भीम को मिलती है, जो तुरंत अपने प्रमुख मंत्रियों और राज्य के वैद्य के साथ उसकी स्थिति को देखने अंतःपुर पहुँचते हैं। राजकुमारी की यह स्थिति देखकर महाराज भीम का हृदय द्रवित हो उठता है। वे अपनी पुत्री की पीड़ा को समझते हुए उसे स्वयंवर का आश्वासन देते हैं, ताकि वह अपने प्रिय नल से मिल सके और उसकी विरह-जन्य वेदना समाप्त हो। महाराज भीम सखियों को दमयंती के उपचार और देखभाल का निर्देश देकर वहाँ से लौट जाते हैं।

हृदयदत्तसरोरूहया तया क्व सदृगस्तु वियोगनिमग्नया।
प्रियधनुः परिरभ्य हृदा रतिः किमनुमर्तुमशेत चितार्चिषि।।[3]

जब दमयन्ती ने प्रियतम के वियोग के कारण पीड़ा से सन्तप्त होकर अपनी छाती पर कमल रख लिया था, उस समय ऐसी कौन नारी थी जो

उसकी समानता कर सकती? क्या वह रति थी, जो अपने पति कामदेव के पीछे जाने (सहमरण) के लिए उसके (कुसुम) धानुष को छाती पर रखकर उसकी चिता की अग्नि में जा पड़ी थी?।

कुछ विद्वानों के अनुसार, मूल नैषध में 100 सर्ग थे, जिनमें से केवल 22 ही प्राप्त हैं। एक किंवदंती के अनुसार, जब श्रीहर्ष ने अपनी पाण्डुलिपि काव्यशास्त्र के मर्मज्ञ आचार्य मम्मट को दिखाई, तो उन्होंने इसमें कई दोष बताए। इससे आहत होकर श्रीहर्ष ने इसे गंगा में बहा दिया। बाद में उनके शिष्यों ने गंगा की धारा से 22 सर्ग ढूँढ़ निकाले; बाकी सर्ग नहीं मिल सके। इस किंवदंती का कोई ठोस प्रमाण नहीं होने के कारण कुछ विद्वानों ने इसे अस्वीकार किया है।

किरातार्जुनीयम् की कथा-वस्तु – लक्षण ग्रंथों में किसी भी महाकाव्य के निर्माण के लिए एक प्रख्यात और प्रभावशाली कथा-वस्तु का चयन आवश्यक माना गया है, ताकि उस कथा के मायम से साहित्यिक उत्कृष्टता और गहन दार्शनिक दृष्टि की अभिव्यक्ति हो सके। बृहत्त्रयी के रचयिताओं ने इस सिद्धांत का अनुसरण किया और महाकाल की प्रतिष्ठा का पालन करने के लिए उन्होंने महाभारत से प्रेरणा प्राप्त की। महाकाव्य किरातार्जुनीय इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसकी कथा महाभारत के वनपर्व के 27वें से 41वें अयाय तक में वर्णित है।

महाभारत में वर्णित यह कथा मूलत: सरल और कथ्य में नीरस प्रतीत हो सकती है, जिसमें अर्जुन का किरात (शिव) के साथ युद्ध होता है और दिव्यास्त्र की प्राप्ति होती है। परंतु कवि भारवि ने अपनी रचनात्मक कुशलता और साहित्यिक प्रतिभा से इस कथा को गहन अर्थ और सौंदर्य प्रदान कर दिया है। भारवि के किरातार्जुनीयम् में अर्जुन और किरातवेशधारी शिव के संवाद, युद्ध और अर्जुन की तपस्या का अत्यंत संवेदनशील और कलात्मक वर्णन मिलता है, जो पाठक को बोध और रमणीयता दोनों प्रदान करता है। इस महाकाव्य का नाम किरातार्जुनीय अर्जुन और शिव के बीच की कथा पर आधारित है, जहाँ अर्जुन अपनी वीरता और साना के बल पर शिव से दिव्यास्त्र प्राप्त करता है। 'किरात' का अर्थ है पर्वतीय या वनवासी रूप में भगवान शिव, जो अर्जुन के धैर्य, साहस और साधना की परीक्षा लेने के लिए स्वयं किरातवेश में आते हैं। 'अर्जुनीय' का तात्पर्य अर्जुन से है, जिनकी अद्वितीय पराक्रम और तप का वर्णन इस महाकाव्य का मुख्य विषय है। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार है –

किरातश्च अर्जुनश्च किरातार्जनौ, तौ अधिकृत्यं कृतं काव्यम् किरातार्जुनीयम्।[4]

यहां किरातार्जुन समस्त पद से 'छ' प्रत्यय होता है और 'छ' को 'ईय' आदेश होकर 'किरातार्जुनीय' रूप बनता है। इस प्रकार, भारवि ने न केवल महाभारत की कथा को अपनाया, बल्कि उसे एक उत्कृष्ट महाकाव्य के रूप में विकसित कर दिया, जो भारतीय साहित्य और काव्य-परंपरा में अद्वितीय स्थान रखता है।

महाकवि भारवि द्वारा रचित संस्कृत साहित्य का प्रख्यात महाकाव्य 'किरातार्जुनीयम्'भारतीय महाकाव्यों में एक विशिष्ट स्थान रखता है। यह महाकाव्य महाभारत के एक प्रमुख प्रसंग पर आधारित है, जिसमें अर्जुन अपनी शक्ति का संचित करना और दिव्यास्त्रों की प्राप्ति हेतु कठोर तपस्या करता है। अर्जुन की तपस्या में इन्द्र और शिव को प्रसन्न करने का महत्वपूर्ण वर्णन किया गया है, जिसे महाकवि ने गहन काव्यात्मक भाषा और शिल्प में 18 सर्गों में विस्तृत रूप से चित्रित किया है। यह महाकाव्य अपने गूढ़ विचारों, अद्वितीय शब्द-संरचना और नैतिक प्रश्नों के लिए संस्कृत साहित्य में अत्यंत प्रतिष्ठित है। संस्कृत साहित्य में जिन पाँच महाकाव्यों की विशेष प्रतिष्ठा है, उनमें 'किरातार्जुनीयम्' का नाम भी सम्मिलित है।

भगवान व्यास अर्जुन को शिव की आराधाना करने की योगविधि विस्तार से समझाते हैं और फिर अर्जुन के सामने ही अचानक से अंतर्धान हो जाते हैं। व्यास जी की यह उपस्थिति, उनका निर्देश और अंतर्धन अर्जुन के मन में एक दृढ़ संकल्प उत्पन्न करता है। वह शिव की आराधना के लिए तत्पर हो जाते हैं, और उनके मार्गदर्शक के रूप में यक्ष उपस्थित होते हैं।

तदाशु कुर्वन्वचनं महर्षेर्मनोरथान्ना: सफलीकुरूष्व।
प्रत्यागतं त्वाऽस्मि कृतार्थमेव स्तनोपपीडं परिरब्धुकामा।।[5]

भगवान वेदव्यास के दिए गए आदेश के तुरंत बाद अर्जुन उनकी आज्ञा का पालन करते हुए शिव की आराधना का दृढ़ निश्चय करते हैं। द्रौपदी अर्जुन को इस तपस्या में जाते हुए देखती हैं और उनके प्रति अपने प्रेम, विश्वास और चिंता को व्यक्त करती हैं। वह अर्जुन से विनम्रतापूर्वक आग्रह करती हैं कि वे महर्षि वेदव्यास के मार्गदर्शन का पालन करते हुए उनकी इच्छाओं को पूरी करें, और इस कठिन तपस्या से अपने सभी मनोबल और आत्मविश्वास को बनाए रखें।

स्पष्टत: इस महाकाव्य में प्रकृति वर्णन, क्रीडादि-वर्णन एवं युद्ध-वर्णन के द्वारा मुख्य कथानक, (कथा का) विस्तार किया गया है। इस महाकाव्य का आरंभ 'श्रिय:'शब्द से होता है। प्रत्येक सर्ग के अंतिम पद्य में 'लक्ष्मी' शब्द भी प्रयुक्त है। इस प्रकार मांगलिक शब्द का आदि मध्यावसान में प्रयोग करके महाकाव्य को मंगलमय बनाया है। कलावादी चित्रों तथा रमणीय वर्णनों से इसे भरकर नवीन दिशा का प्रवर्तन किया है। श्रृंगार चेष्टाओं के वर्णनों काव्य की चित्रात्मकता इसमें इन्होंने भरी है। चतुर्थ में एकादश सर्ग तक के अंतराल को ऐसे ही वर्णनों द्वारा भरा गया है। युद्ध का लंबा वर्णन भी महाकाव्य की विशालता को भले ही रेखांकित करे, उसमें कविता की आत्मा तिरोहित हो गई है। इस महाकाव्य के नायक अर्जुन धीरोदात्त कोटि के हैं। वीर रस प्रमुख है, श्रृंगार रस अङ्ग के रूप में है। इस महाकाव्य पर मल्लिनाथ ने टीका लिखी है, 15वें सर्ग पर दुर्विनीत ने भारवि के काल में ही टीका लिखी थी। माघ ने इस काव्य की सभी विशिष्टताओं का अनुसरण करके 'शिशुपालवध' की रचना की। इस महाकाव्य के प्रथम तीन सर्ग बहुत लोकप्रिय हैं। इन तीनों सर्गों को 'पाषाणत्रय' की संज्ञा दी गई है। इनमें मुख्य रूप से भारवि का राजनीति ज्ञान प्रकट हुआ है।

शिशुपालवधम् की कथा-वस्तु – कविवर माघ ने अपने महाकाव्य शिशुपाल-वध की कथावस्तु को मुख्यत: महाभारत, श्रीमद्भागवत, और अन्य पुराणों के आधार पर निर्मित किया है, जिससे यह महाकाव्य भारतीय पौराणिक साहित्य के समृद्ध कथानकों से गहरे रूप से जुड़ जाता है। शिशुपाल-वध का केंद्रीय विषय भगवान श्रीकृष्ण द्वारा चेदि नरेश शिशुपाल का वध है, जिसमें माघ ने श्रीकृष्ण की दिव्यता और शक्ति को विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया है। माघ ने इस महाकाव्य में अपनी काव्य कला और कल्पनाशीलता का समावेश कर इसे संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं में शामिल किया है, और साथ ही उन्होंने शास्त्रों में वर्णित विभिन्न घटनाओं और पात्रों का भी उल्लेख करके इसका कथानक व्यापक और प्रभावशाली बनाया है।

माघ की यह रचना धार्मिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक मूल्यवान है, क्योंकि इसमें उन्होंने विभिन्न पौराणिक कथाओं को

एक सूत्र में पिरोया है। उनके इस काव्य में भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति, उनकी दिव्यता और शिशुपाल के अहंकार का मर्मस्पर्शी चित्रण मिलता है, जो पाठकों को धार्म, न्याय, और सत्य की ओर प्रेरित करता है। माघ का यह महाकाव्य उनकी गहरी पांडित्यपूर्ण दृष्टि और काव्य रचना की बेजोड़ शैली का प्रतीक है, जिससे शिशुपाल-वधा संस्कृत साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

सर्वप्रथम श्रीकृष्ण ने अपनी समस्या को व्यक्त किया। शिशुपाल का वध करना आवश्यक है, किंतु इसी समय युधिष्ठिर के 'राजसूय' यज्ञ में शामिल होने के लिये युधिष्ठिर का निमंत्रण भी मिला है। इन दोनों आवश्यक कार्यों में से पहले किस कार्य को करना चाहिये। श्रीकृष्ण का वचन सुनकर बलराम बोले- 'अपनी उन्नति और शत्रु का नाश- ये दोनों ही नीति की बातें हैं।'[6]

अंत में यही निश्चय हुआ कि युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित होना ही उचित है।

यजतां पाण्डव: स्वर्गभवत्विन्द्रास्तपत्विन:।
वयं हनाम द्विषत: सर्व: स्वार्थं समीहते।।[7]

उद्धव के विचार सुन लेने के बाद युद्ध का आग्रह समाप्त हो जाने के कारण श्रीकृष्ण ने इन्द्रप्रस्थ की ओर प्रस्थान किया।

श्रीकृष्ण का ध्यान आकर्षित करते हुये दारुक श्री कृष्ण से कहता है कि इस पर्वत पर 'यह निश्चित रूप से सूर्य है।' यहाँ बहुमूल्य रत्नों की खानें हैं। जहां एक और यह पर्वतीय प्रदेश भोग भूमि है, वहीं दूसरी ओर समाधि लगाये हुये सिद्ध पुरुषों का निवास स्थान होने से यह सिद्ध भूमि भी है।

उदयति विततोर्ध्वरश्मिरज्जावहिमरुचौ - हिमधाम्नि याति चास्तम्।
वहति गिरिरयं विलम्बिघण्टाद्वयपरिवारितवारणे न्द्रलीलाम्।।[8]

सूतपुत्र दारुक की रैवतक - पर्वत के मनोरम प्राकृतिक सौंदर्य की बातें सुनने के अन्तर भगवान श्रीकृष्ण ने रैवतक पर्वत पर कुछ समय तक रुक कर निवास करने की इच्छा की। कुछ नृपतियों ने श्रीकृष्ण के समीप ही अपने शिविरों को स्थापित कर लिया था। परिजनों द्वारा वाहनों से नीचे उतारी जाने वाली रानियों की मुख- श्री को, जिनके घूंघट का वस्त्र नीचे उतरे समय किंचित हट गया था, लोग भय मिश्रित कौतुहल के साथ देख रहे थे। जब तक सैनिक उतर रहे थे, तब तक वणिकजन दोनों और तम्बू फैलाकर बिक्री की वस्तुओं से भरी-पूरी दुकानों को सजा रहे थे।

भागवत कथा के अतिरिक्त, माघ ने अन्य पुराणों के अंशों को भी अपने महाकाव्य में सम्मिलित किया है। उदाहरण के लिए, शिशुपाल-वध के प्रथम सर्ग में शिशुपाल के दो पूर्व जन्मों का उल्लेख किया गया है, जो विष्णु पुराण के आधार पर वर्णित है। इस प्रसंग में यह बताया गया है कि शिशुपाल का पूर्वजन्म में कौन सा अस्तित्व था और कैसे उनके कर्मों का प्रभाव उनके वर्तमान जन्म पर पड़ा। माघ ने इस संदर्भ को न केवल कथानक की दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाया है, बल्कि इससे यह भी स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने काव्य में पौराणिक स्रोतों का सूक्ष्म अध्ययन करके उनके विवरणों को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। माघ ने इस महाकाव्य को 20 सर्ग में विभक्त किया है।

उपसंहार - बृहत्त्रयी में नैषधीयचरितम्, किरातार्जुनीयम् और शिशुपालवधम् संस्कृत साहित्य के महत्वपूर्ण महाकाव्य हैं, जिनकी कथाएँ विशिष्ट साहित्यिक और दार्शनिक मूल्यों से समृद्ध हैं। महाकवि श्रीहर्ष द्वारा रचित नैषधीयचरितम् नल और दमयंती की प्रेमकथा पर आधारित है, जिसमें नल के राज्यच्युत होने, जंगलों में भटकने और अंतत: अपने राज्य और दमयंती को पुन: प्राप्त करने की संघर्ष-गाथा है। इसी प्रकार, महाकवि भारवि का किरातार्जुनीयम् अर्जुन और भगवान शिव के बीच हुए संघर्ष को दर्शाता है, जहाँ अर्जुन की तपस्या और भक्ति की परीक्षा के रूप में शिव किरात रूप में प्रकट होते हैं और अंतत: पाशुपत अस्त्र प्रदान करते हैं। यह महाकाव्य अर्जुन के धैर्य, वीरता और आत्मशक्ति को उजागर करता है। वहीं, माघ का शिशुपालवधम् श्रीकृष्ण द्वारा अहंकारी शिशुपाल के वध की कथा को अलंकारिक और शास्त्रीय शैली में प्रस्तुत करता है, जिसमें शिशुपाल का क्रोधा और श्रीकृष्ण की धैर्यपूर्ण प्रतिक्रिया का सुंदर चित्रण किया गया है। इन महाकाव्यों की साहित्यिक उत्कृष्टता, गहन भावनात्मक संवेदनाएँ और दार्शनिक संदेश संस्कृत काव्य को विशिष्टता प्रदान करते हैं, जिससे ये न केवल कथात्मक बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बनते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी, डॉ. श्यामलेश कुमार (2017), 'नैषधीयचरितम', चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, सर्ग 2/55
2. तिवारी, डॉ. श्यामलेश कुमार (2017), 'नैषधीयचरितम', चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, सर्ग 3/120
3. तिवारी, डॉ. श्यामलेश कुमार (2017), 'नैषधीयचरितम', चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, सर्ग 4/21
4. महाभारत-वनपर्व-नलोपख्यान पर्व, अध्याय 53-57
5. मालवीय, डॉ. सुधाकर, (2019), 'किरातार्जुनीयम', चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, सर्ग 3/54
6. शास्त्री, हरगोविन्द (पं.) (2015) । शिशुपालवधम् हर्ष, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी श्लोक सर्ग 2/33
7. शास्त्री, हरगोविन्द (पं.) (2015) । शिशुपालवधम् हर्ष, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी श्लोक सर्ग 2/65
8. शास्त्री, हरगोविन्द (पं.) (2015) । शिशुपालवधम् हर्ष, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी श्लोक सर्ग 4/20

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Adoption of E- Vehicles: Trend in Urban Areas

Kumud Dubey* Avinash Dube**

*MLC Govt. Girls P. G. College, Khandwa (M.P.) INDIA
** PMCoE Shri Neelkantheshwar Govt. P. G. College, Khandwa (M.P.) INDIA

Abstract: E- vehicles have emerged as a promising eco-friendly alternative to internal combustion vehicles. The technological advancements in battery system, energy efficiency and charging infrastructure have enhanced the adoption of EVs. E- vehicles represent a viable future transportation system, contributing significantly to ecological conservation and sustainable development.
Keywords: E- vehicles, Eco-friendly.

Introduction - Science permits every aspect of our life. Science is a fundamental force shaping our lives. Its impact is evident in the technology we use, the way we communicate, the food we eat, the health care we found immediately, more efficient travelling etc. Science enables us to live comfortably, stay healthy and connect with the world.

Transportation is an integral part of modern life shaping our economics, societies and environment. For convenient and faster travel and efficient travel of goods, Road, Rail, Water and Air Transports are applicable. As technology continues to advance new models of transportation are being developed promising even faster and more efficient ways to move people and goods in the future.

E- vehicles are revolutionizing the transportation industry, offering a promising path towards sustainable and efficient mobility. They are offering an alternative to traditional vehicles and better for environment concerns. The present study deals with trends of adoption of e-vehicles in urban areas as they are offering low maintenance costs, lower pollution rates with many challenges.

The Key components of EV: An electric vehicle consists of a battery pack, electric motor, power electronics, inverter management system. These components work together to power control and manage the electric vehicles operations.

Battery pack: Also known as electric vehicle battery. It powers the electric motors of an electric vehicles. The battery act as an electrical storage system. It stores energy in the DC current form. The life time of a traction battery pack is estimated to be 200000 miles.

Electric Motor: It is the main component of EV. The motor converts the electric energy into kinetic energy. This energy helps to rotate the wheels.

DC-DC Converter: The DC -DC converter distributes the output power that coming from the battery to a required level. It also providesthe voltage required to charge the auxiliary battery.

Power Converter: It converts DC power from the battery to AC power. It also converts the AC current generated during regenerative breaking in to DC current. This is further used to recharge the battery.

Onboard Charger: This converts AC power from the external source in to DC power for charging the battery.

Thermal Management system: This keeps the battery and other components at optimal operating temperatures. It consists radiators, fans and coolant pumps.

Charging System: It includes charge post and related electronics. AC power is converted to DC outside of the vehicle and sent directly to the EV battery by charger.

Vehicle Control unit: It acts as the brain of the vehicle. The VCU receives information, speed, temperature etc. from various sensors and systems and ensures that the vehicle operates efficiently and safely. It communicates with other units to ensure all systems are working together.

EV Benefits: E- vehicles in their all forms can help inimprove fuel economy, lower fuel costs and reduce emissions. Using electricity as a power source for transportation improves public health and the environment. More detailed look at the benefits:

1. **Zero emissions (Tailpipe):** E- vehicles produce no exhaust fumes, reducing air pollution and improving air quality. It also eliminates emissions of pollutants like carbon dioxide, Nitrogen oxide and particulate matter.
2. **Reduced Greenhouse Gas emissions:** E vehicles reduce green house gas emissionscompared to gasoline powered vehicles, contributing to smaller carbon footprint.
3. **Reduced reliance on fossil fuels:** E- vehicles reduce dependence on fossil fuels and provide a way for more sustainable transportation system powered by renewable

energy.

4. **Reduced Noise Pollution:** E-vehicles are much quieter, thus reducing noise pollution in urban areas.

5. **Lower operating costs:** E- vehicles have lower running costs due to lower price of electricity compared to gasoline. They also require less maintenance due to simple design.

6. **Increased efficiency:** E- vehicles are more efficient than gasoline powered vehicles, utilizing energy more efficiently.

7. **Convenient charging:** EVs can be easily charged at home, so there is no need to wait at fuel stations. Public charging infrastructure is also.

8. **Tax benefits:** The government offer tax incentives and rebates to encourage the adoption of electric vehicles. These includes lower registration fee, road tax exemptions and other financial benefits.

9. **Better Performance:** They are quieter than ICE vehicles, providing a peaceful driving. It also offers responsive handling.

Challenges towards EV:

1. **High Initial Cost:** The purchase price of EVs is higher than that normal vehicle due to cost of batteries.

2. **Charging infrastructure:** Widespread charging network is not easily available. Long charging time is another issue. Most EV charging still happens at home but challenges for those who lived in shared housing or who have to park on street.

3. **Battery Technology:** Mostly Li-ion batteries are used and they have their limitations as energy density, charging speed and safety. Their recycling is also challenging.

4. **Environmental Concerns:** Extraction of raw materials for batteries and the energy acquired for manufacturing and charging has many environmental impacts which are adverse.

5. **Limited selection:** There is a still limited selection of EVs compared to gasoline powered cars, only few models are available.

6. **Trained technicians:** Relatively few EV repair technicians and qualified independent shops.

Government initiatives to promote EVs: There are some important government initiatives to promote EV adoption.

1. **FAME Scheme II:** faster adaption and manufacturing of EVs, which provides incentives for manufacturers and buyers. These includes subsidies, tax rebates, registration fee etc.

2. **NEMMP:** National Electric Mobility Mission Plan sets out the target to achieve maximum sales of EVs.

3. **PLI:** Production linked Intensive Scheme provides incentives for the manufacturing of scrapping of EVs and components.

4. **Vehicle Scrapping Policy:** Policy provides incentive for the scrapping of old vehicles and purchase of new electric vehicle.

5. **Go electric campaign:** Creates awareness on the benefits of EVs and EV charging infrastructure.

6. **EV 30—30 campaign:** India is among this global campaign which aims for at least 30% new vehicle sales to be electric by 2030.

7. **Model Building Bye-laws 2016:** Ministry of housing and urban affairs amended a setting aside 20% of the parking space for EV charging facilities in residential and commercial buildings.

Trends of EV adaptions in the area - In Nimar Region of Madhya Pradesh when we observe current sales trends during last years, it is found that dominance of two- wheelers as most popular segment. Electric three wheelers replacing diesel variants in urban areas.

Private company are gradually expanding the charging network along major highways. In the rural areas there is an emerging trend of using electric cargo three wheelers for transporting agricultural products, Local dealers are available with EV showrooms.

Concluding Remarks: Madhya Pradesh is actively promoting electric vehicles (EVs) through its EV policy.

Madhya Pradesh has an EV policy with the current version being the MP EV policy 2025.The policy aims for 25% EV adoption in a vehicle registration by 2026.Conversion of government vehicles and commercial fleets to EVs by 2028 and conversion of public transport buses to electric in top five cities by 2028.

The policy emphasizes the development of charging infrastructure network and designates specific cities as model EV cities, which includes Bhopal, Indore, Jabalpur, Gwalior and Ujjain.

In this policy the state offers various incentives including:

1. Exemption from motor vehicle tax and registration fees.
2. Subsidies for electric vehicle purchases.
3. Subsidies for the development of charging infrastructure.
4. Reduced import duty for fully built e- vehicles.

Specific Initiatives: The state has already launched initiatives like deploying 80 electric buses in Indore city under central schemes.

Future Focus: Madhya Pradesh is also focusing on skill development and job creation with EV sector.

Vision: To promote substantial electric mobility and bring about a material improvement in MP air quality by bringing down emissions from transport sector.

References :-

1. Ding N etal. (2017), The electric vehicle: a review, International Journal of Electric and Hybrid vehicles, 9(1), pp- 49-66.
2. Mohammed M.etal.(2018), Study on electric vehicles in India, opportunities and challenges, International Journal of scientific research in environmental science and technology.
3. Pandya C. and Agrawal A. (2021), A detailed study on electric vehicles, International Journal of creative research thoughts, Vol.9-(7), pp- 875-879.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजस्थान में परम्परागत छापा कला की अलंकरण विधा : सौंदर्यात्मक पक्ष एवं वर्तमान परिवेश में उसकी उपादेयता

राधापाल* डॉ. मनीषा चौबीसा**

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोध निर्देशक, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

मुख्य शब्द – परम्परागत परिधान, छापा कला, अलंकरण, कलात्मक एवं सौंदर्यात्मक सज्जा, भाँत।

प्रस्तावना– जीवन की तीन मूलभूत आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान ने मानव सभ्यता के विकास में वस्त्र निर्माण कला, शारीरिक सौंदर्य तथा प्रकृति व परिवेश के साथ सामंजस्य करते हुए, परिधानों को नवीन आयाम प्रदान किया। इसी के परिणामस्वरूप वर्तमान में विभिनन रंगों, डिजाईन अलंकरण तथा स्टाईल ने वस्त्र सज्जा के द्वारा मनुष्य शरीर को सुसज्जित किया है। सौंदर्य के विभिन्न रूपों जैसे– बिंदी, सिन्दूर, रंग बिरंगे वस्त्र, अल्ता, मेहंदी या फिर आभूषणें द्वारा समय–समय पर वातावरण, परिवेश जाति, संस्कृति एवं सभ्यता के साथ धर्म को भी प्रभावित किया है। इसी प्रकार उत्सव, त्यौहार, विवाह आदि में भी भांति–भांति के डिजाईनर वस्त्रों ने उत्सव विशेष को नवीन ऊर्जा प्रदान की है। विभिन्न रंगों, डिजाईन व स्टाईल में वस्त्र सज्जा से प्रसन्नता खुशहाली, उमंग और आकर्षण से समाज में नवीनता का संचार होता रहा है। मनुष्य जीवन के खुशहाली और सभ्य समाज में जीवन्तता लाने का महत्वपूर्ण कार्य वस्त्र अलंकरण द्वारा ही होता है।

राजस्थान की परम्परागत छापा कला तथा उसका अलंकरण विधान भी सभ्यता और संस्कृति के विकास का द्योतक है। यहाँ की भूगर्भीय संरचना रीति–रिवाज और सांस्कृतिक परिवेश ने सरल जीवन को भी आकर्षक एवं महत्वपूर्ण बनाया है। वस्त्र सज्जा की कलात्मक विधियों में से परिधानों को नवीन पहचान देने वाली एक विधि छापा कला भी है। बुने हुए एवं रंगे हुए वस्त्रों को विभिन्न आकृतियाँ एवं डिजाईन बनाकर छपाई की जाती है। छपाई हेतु विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक एवं कृत्रिम तकनीकों का प्रयोग किया जाता रहा है। परम्परागत छपाई में पेड़ पौधों, पत्तों अथवा प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाता रहा है जबकि आधुनिक समय में कृत्रिम व मशीन द्वारा भी विभिन्न प्रकार की डिजाईन में वस्त्रों को तैयार किया जाने लगा है।

इस प्रकार वस्त्र की आवश्यकता मूलभूत मात्र ही नहीं रही अपितु उन्नति की पहचान भी बन गई है। परम्परागत तकनीक एवं डिजाईन को आधुनिक फैशन में समाहित करके वस्त्र सज्जा वृहद व्यवसाय के साथ–साथ किसी भी देश की आर्थिक व सामाजिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका दर्शाती है।

भारत में छापा कला का इतिहास – भारत वर्ष में प्राचीनकाल से ही रंगाई और छपाई का कार्य होता आ रहा है। विविध प्राचीन भारतीय साहित्यों में छपे वस्त्रों के संदर्भ में 'अभिप्राय' शब्द का उल्लेख है जिसकी विद्वानों ने छपे वस्त्रों के रूप में पहचान की है। इस तथ्य से संबंधित साहित्य दिव्यावदान, ललित विस्तार, कुमार संभव, हर्षचरित्र, कादम्बरी आदि से मिलता है। बाण द्वारा उल्लेखित 'कुटिलक्रमारूपक्रियमावपल्लवपर' पद से विकसित छपाई कला का बोध होता है तथा वर्णित छपे वस्त्रों की भाँतो (डिजाईन) की झलक सारनाथ के धमेख स्तूप के शिलाघटित आवरण के अलंकरण में देखी जा सकती है। इसके साथ ही छापा में प्रयोग आने वाले ठप्पा के लिए वाण ने 'रूप' शब्द का प्रयोग किया। कुछ भारतीय प्राचीन संस्कृत साहित्य में 'फुट्टक', 'पुष्पवट', 'हंसलक्षणयुक्त', हंस मिथुन में छपे हुए चित्रित वस्त्रों का वर्णन मिलता है। चालुक्य शासक सोमेश्वर (1124–1138 ई.) ने 'मानसोल्लास' में सूती रेशमी व ऊनी कपड़ों पर अलग–अलग रंगों से बनाये गये लहरदार भाँतों (डिजाईन) आदि का विसतार से वर्णन किया है। सोमेश्वर द्वारा उल्लेखित 'चित्र कपर्डक' और 'चित्रपटीपट' आदि शब्द छापा या कलमकारी के कपड़े जैसे प्रतीत होते हैं।

कई विद्वानों के अनुसार ठप्पे की छपाई पद्धति चीन से मध्य एशिया एवं ईरान होते हुए मुसलमानों के साथ भारत आई थी, ऐसा मानते है। मध्य युग के शब्दकोशों में उल्लेखित 'उच्छो' (छपाई उद्योग) और 'छिम्पाय' (छीपा) शब्दों से यह प्रतीत होता है कि इस युग में छापा उद्योग अपनी सुविकसित अवस्था में पहुंच चुका था। वही भारत की महान कला का उदाहरण प्रस्तुत करने वाली अजन्ता (गुहा) में 5वीं से 8वीं शताब्दी के भित्तिचित्रों में नृत्यरत समूह, गायकों, दासों के परिधानों में छापा अलंकरण देख जा सकते है, वही नगरीय सभ्यता रही सिन्धु सभ्यता से तीसरी सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व के पुरातात्विक स्थल मोहनजोदड़ो से चांदी के बर्तन के चारों ओर लिपटा हुआ वस्त्र मिला जिस पर छापा द्वारा सज्जा की गई थी।

सत्रहवीं शताब्दी में भारती छींट (छपा हुआ कपड़ा) की प्रसिद्ध इंग्लैण्ड में इतनी अधिक हो गई थी कि बाहर से आने वाले रेशमी वस्त्र का व्यापार उससे बुरी तरह प्रभावित हो गया, जिसके कारण इंग्लैण्ड को छींट का आयात बन्द करना पड़ा।

राजस्थान में छापा कला एक परिचय – राजस्थान में जोधपुर, जयपुर, जैसलमेर, बाड़मेर, भीलवाड़ा, कालाहेड़ा, जाहोना व बगरू में छपाई का कार्य होता आ रहा है। परंतु छापा कला का सर्वोत्कर्ष कार्य सांगानेर में मिलता है। वही अगर बात राजस्थान को केन्द्र में रखकर करे तो सबसे पहला छपाई का साक्ष्य चौदहवीं–पंद्रहवीं शताब्दी का है जो फोस्तात (मिश्र) से पाए गए नीले रंग के कपड़े और छपे वस्त्रों की सज्जा विधि से युक्त लगते हैं तथा इसकी छाप, राजस्थान व गुजराती भाँतों से साम्यता रखती है। सन् 1728

में महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय द्वारा जयपुर राज्य की स्थापना की गई इनके समय में रंगाई-छपाई को विशेष सराहा गया व संरक्षण प्रदान किया गया।

जयपुर की छपी हुई मलमल और सूती छींट पूरे भारत में प्रसिद्ध रही है, जो जोधुपर में बड़ी मात्रा में निर्यात की जाती थी। जयपुर में कपड़ों के चार विभाग 'किकिराखाना, जारगरखाना, तोसाखाना एवं खजाना बेहला होते थे। जयपुर के पास सूती वस्त्र का दूसरा केन्द्र बगरू है। यहाँ पर दाबू छापा का कार्य अधिक मात्रा में होता है।

पश्चिमी राजस्थान का सीमावर्ती क्षेत्र जैसलमेर अपनी पुरानी नमूनों (भाँत) की उत्कृष्ट छपाई के लिए अपनी विशिष्टता बनाये हुए है। जैसलमेर के पोथीखाना एवं जैन भण्डार के ग्रंथों पर पुराने छपाई के नमूने कपड़ों के आवरण के रूप में देखे जा सकते हैं। इन कपड़ों को बस्तों के रूप में ग्रंथों के चारों ओर लपेट कर रखा जाता था। वहीं इनके अलंकरण (भाँत) बारहवीं शताब्दी के मिश्र के कब्र पर बनी हुई उत्कृष्ट शैली के बूटे के समान है। जैसलमेर के छीपों का इतिहास कोई पुराना नहीं है तथा सभी छीपे हिन्दू है, जो खत्री छिपा है। वही चित्तौड़ जिले के अन्तर्गत कपासन में मुख्य रूप से घाघरा या लहंगा की छपाई का कार्य होता है। उस छपाई को 'जानणा' कहा जाता है। छीपों के आकोला (चित्तौड़गढ़) में छपाई का कार्य वर्षो पूर्व से होता आ रहा है। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व इस गांव में सभी लोग छीपे थे। जिसमें हिन्दू वंशीय है तथा सूरसेन के वंशज है। ये नामदेव की पूजा करते हैं। वही भीलवाड़ा में मुख्य रूप से जाजम, पलंगपोश, चुनड़ी, रजाईयाँ एवं तकियों की खोल की छपाई का काम ठप्पे द्वारा किया जाता है। भीलवाड़ा, बलोतरा, पीपाड़, जोधपुर और उदयपुर के छापे छापाकार धर्मों के अनुयायी है। मारवाड़ में जोधपुर शहर के अतिरिक्त उसके संभाग के कई क्षेत्रों में ठप्पा की छपाई की जाती थी।

राजस्थान में जयपुर, सांगानेर, बगरू, बस्सली कालाडेरा, जाहोना, बाड़मेर, जैसलमेर और आकोला आदि स्थान पर छापा कार्य किया जाता है। उदयपुर में मुख्य रूप से पगड़ी, दुपट्टे, कमरबंद पर छपाई होती है, छीपों का अकोला चित्तौड़गढ़ की छपाई नाणना के नाम से जानी जाती है। आम तौर पर भाँत को यहाँ पर विशेष रूप में गंगोदिया, लौहार महिलाएँ बनाती है। भीलवाड़ा का मुख्य उत्पादन पलंगपोश और जाजम है, बगरू में दाबू, अजरक आदि की छपाई की जाती है।

छापा अलंकरण मे कलात्मक पक्ष – राजस्थानी वस्त्र परिसज्जा में छापा कला की परम्परागत रूप से कई सारी विधियों का प्रयोग किया जाता है, प्रयोग के आधार पर इनका नामकरण भी हुआ। कई विधियाँ इतनी प्रचलित हुई कि वहाँ के भूभाग के आधार पर इनकी पहचान विश्वभर में होने लगी। जैसे बगरू में दाबू प्रिंट को बगरू छापा कला के नाम से जाना जाता है वही सांगानेर में होने वाली छापा को सांगानेर छापाकला के नाम से जाना जाता है। आकोला में होने वाली छापा कला को अकलो गाँव में होने के कारण अकोला छापा कला के नाम से जाना जाता है।

ये सारी विधियाँ अपनी मौलिक भिन्नता से छापा कला परिधान निर्माण में कलात्मक रंग भर देते है। इन विधियों द्वारा निर्मित परिधान इतने सुन्दर है कि वर्षो से इनका जादू विश्वभर में प्रचलित रहा है। आज के युग में परिधान मनुष्य की पहचान बन चुका है, परिस्थिति के अनुसार मनुष्य परिधानों का चुनाव करता है, जो कि सामाजिक, मान, प्रतिष्ठा का भी द्योतक है, परिधानों को आकर्षक रूप देने हेतु कलात्मक सज्जा आवश्यक हो जाती है। विविध वस्त्रों की पहचान का आधार उनकी कलात्मक सज्जा से होता है तथा हम आसानी से परिधानों में भेद भी कर लेते है। परिधानों पर कलात्मक सज्जा होने से उनकी कीमत भी बढ़ जाती है। छापा परिधानों में सदियों से सुन्दरता लाने के लिए विविध प्रकार के भाँतों का प्रयोग तथा निर्माणन शैली अलग-अलग विधियों द्वारा सम्पन्न की जाती है तथा विविध रंगों द्वारा लावण्य व स्वरूप प्रदान कर वस्त्र सज्जा का कार्य पूर्ण होता है। सम्पूर्ण राजस्थान की भाँतों (डिजाईन) को हम भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर तीन भागों में बांट सकते हैं –

(i) पश्चिम राजस्थान में प्रचलित नमूनों के आधार पर छापा विधि

अजरक (बाड़मेर) – अजरक के इतिहास का पता सिन्धु घाटी की प्राचीन सभ्यताओं के समय से लगाया जा सकता है, लगभग 2500ई.पू से 1500ई.पू तक। मोहनजोदड़ो से प्राप्त पुजारी की प्रतिमा में शॉल के अलंकरण में मिलने वाला त्रिफूलिया नमूना अजरख छापा माना जाता है। ऐसा ही अलंकरण मेसोपोटामिया और तूतनखामेन के शाही सोफे से प्राप्त हुआ जिसकी साम्यता अजरख छापा कला के निकटवर्ती है। यह अलंकरण सूर्य, जल और पृथ्वी के देवताओं की एकता का प्रतीक माना जाता है। अजरख छापा कार्य का ऐतिहासिक सम्बन्ध सिन्ध (पाकिस्तान), कच्छ (गुजरात) तथा (बाड़मेर) राजस्थान से रहा है। जहाँ कच्छ के खत्री समुदाय के मुसलमान अजरख की छपाई व रंगाई का कार्य करते हैं, वही मालधारी समुदाय अजरक छापा वाले परिधान के प्रयोग में लोकप्रिय है, भारत पाकिस्तान के विभाजन के बाद इस जाति के कुछ लोग भारत में तथा कुछ पाकिस्तान में रहने लगे। अतः इस प्रकार इसके प्रचार-प्रसार को अधिक भू-भाग पर फैलने का मौका मिला।

पश्चिम राजस्थान में प्रसिद्ध अजरक छापा कला जो कि बाड़मेर का प्रसिद्ध छापा है, तथा एक और केन्द्र बालोतरा है जो कि जोधपुर और बाड़मेर के मध्य में स्थित है। यहाँ पर घाघेर में प्रयुक्त कटार बूटी को प्रमुख रूप से वस्त्र पर छापा जाता है तथा अन्य स्थानों से अलग बाड़मेर में विशेष प्रकार की छपाई होती है जो गहरे रंग से की जाती है, जिसे अजरक कहते हैं। यह छाप भी सांगानेर छाप की भांति दोनों तरफ से की जाती है। पगड़ी और चादर पर गहरे रंग से छपाई की जाती है, जो कि सूर्य की तेज किरणों से बचाती है। निश्चित ही अजरक अपनी ज्यामितिय अलकरणों और नीले रंग की रंगाई द्वारा अद्भुत छापा का प्रभाव उत्पन्न करता है। वस्त्रों के रंग एवं अलंकरण की दृष्टि से रेगिस्तानी इलाका शेष प्रदेश से तनिक भिन्न है। यहाँ गहरे चमकीले रंगो और बड़े-बड़े बूटे देखते ही बनते हैं। इसी कारण रेगिस्तान का नीरस वातावरण खिल उठता है।

असली अजरक मर्दों का ही पहनावा है, परंतु वर्तमान में महिलाओं की पोशाक बनाने में भी प्रयोग में लाया जा रहा है तथा मालाधारी मुसलमान की अलग-अलग जाति जैसे- गलीर, रेतो, मेनिया, नारीवली, सैडो व दामबुरो की महिलाओं के लिए छपाई व बांधनी का काम करते हैं। पहनावें की ये परम्पराएँ सामुदायिक पहचान व रिश्ते को मजबूत करते हैं। छपाई पेस्ट के प्रथम चरण में चूना और गम अरेविक का प्रयोग की प्रधानता रहती है तथा प्राकृतिक रंग का प्रयोग किया जाता है तथा दूसरे चरण की छपाई में इमली के बीज का पेस्ट प्रयोग में लाया जाता है तथा तीसरे चरण में गम अरेविक, मिट्टी, फिटकरी वा घोल प्रयोग होता है। इस प्रकार क्रमिक छपाई पद्धति द्वारा अलंकरण वस्त्र पर छापा जाता है। यहाँ की प्रसिद्ध भाँते (डिजाईन) खरक, चौकड़ा, गुडली, छकदमड़ी, मलेर, कंगरा आदि है।

(ii) पूर्वी राजस्थान में प्रचलित भाँतों के आधार पर छापा विधि

(1) बगरू का दाबू छापा – बगरू जयपुर से अजमेर जाने वाले राजमार्ग पर स्थित एक कस्बा है, जहाँ सूती कपड़ों पर हाथ से छपाई की एक लंबी परम्परा रही है। राजस्थान का एक छोटा सा गाँव बगरू जहाँ पर 'छिपा' (छपाई कार्य करने वाली जाति) राजस्थान के सवाई माधोपुर, अलवर, झुंझूनू, और सीकर जिलों से यहाँ इकट्ठे हुए है, और करीब 300 साल पहले बगरू में बस गए और इसे अपना घर बना लिया। बगरू शब्द 'बगोरा' से लिया गया है जो एक झील में एक द्वीप का नाम है जहाँ शहर मूल रूप से बनाया गया था जो कि अपने ताड़ के पंखे के लिए प्रसिद्ध रहा है और यहाँ का छींट छापा अलंकरण काफी प्रसिद्ध रहा। बगरू छापा अलंकरण युक्त वस्त्रों के लिए नागोर के बंजारे और किशनगढ़ के जाटो, गुर्जर, मीणा, माली और राजपूती जाति में बहुत ही पसंद किया गया तथा विदेशो में भी इस छापा कला को विशेष महत्व मिला। बगरू छापा में प्रमुख रूप से भूरा, हल्का पीला, लाल एवं काले फड़दे को विशेष रूप से उपयोग में लिया जाता है। कुछ कपड़ों पर रेख की छपाई और डाटाई के बाद छपे हुए स्थानों को दाबू से ढक दिया जाता है। यह एक प्रकार का गाढ़ाघोल होता है जो चूना, मिट्टी गोद तथा गेहूं के घुन (बेधान) को एक साथ अच्छी तरह मिलाकर तैयार किया जाता है। इस घोल को ठप्पों से छापकर भातों को ढक दिया जाता है। फिर कपड़े पर जमीन का रंग चढ़ा दिया जाता है। रंगने के बाद कपड़े को साफा पानी में धोकर सुखाया जाता है। बाद में फिटकरी के पानी में डुबोया जाता है। इससे रंग में चमक आ जाती है तथा धुलाई हेतु संजारी नदी का जल प्रयोग में लाया जाता है, जिसका लाभ परिधान अलंकरण में होता है नदी के जल में विद्यमान तत्व छापा परिधान में सहायक अनिवार्य तत्व की तरह काम करते हैं परंतु वर्तमान में इसका जल स्तर काफी कम हो गया है, परंतु फिर भी यहाँ छापा कार्य अभी तक जारी है। यहाँ पर प्रचलित बूटो में बोसली का फूल, पंखी बूटी, हरा धणियां, पनड़ी, चौबूंदी, चरकी, दाखा आदि प्रचलित है। दाबू की छपाई को राता डटाई भी कहा जाता है।

(2) सांगानेर छापा कला – जयपुर के समीप स्थिति सांगानेर का नामकरण 16वीं शताब्दी में कच्छवाहा राजकुमार सांगाजी के नाम पर हुआ। 18वीं शताब्दी के नक्शों में यह समृद्ध नगर प्रतीत होता है तथा यहाँ पर छपाई उद्योग तथा कागज बनाने के उद्योग से पता चलता है, कि इस उद्योग का उस समय निरंतर विकास होता रहा तथा यह छापा कला विधि इतनी प्रसिद्ध हुई कि 1803 में सर जार्ज वाट ने इंडियन आर्ट ऐट देहली में लिखा कि 'कला एवं तकनीक दृष्टि में जयपुर राज्य का सांगानेर कस्बा भारतीय छपाई उद्योग का प्रमुख केन्द्र है।' यद्यपि 1727 में महाराज जयसिंह ने अपनी राजधानी अंबर (आमेर) से स्थानान्तरित करके जयपुर कर दी, फिर भी उन्होंने इस छापाकला के महत्व को जाना व व्यापारिक महत्व को समझते हुए इस छापा विधि को संरक्षण दिया। कुछ विशेष अवसरों पर राजपरिवार के वस्त्र अलंकरण सज्जा हेतु सांगानेर छपने के लिए दिये जाते थे।

17वीं शताब्दी से पहले सांगानेर का मुद्रण केन्द्र के रूप में कोई प्रमाण नहीं मिलता है। संभवत: 17वीं शताब्दी के अंत में इस कला रूप का विकास यहाँ हुआ था, सम्राट औरंगजेब के साथ युद्ध और बार-बार होने वाले आक्रमणों के कारण मराठों में से पड़ोसी राज्य गुजरात से कई शिल्पकार आए और राजस्थान में बस गए। 19वीं सदी के अंत तक सांगानेर में यह उद्योग पूर्ण रूप से विकसित हो चुका था।

सांगानेर छापा परिधानों में ज्यादातर भाँतों में फूल, पत्तियों एवं पशु-पक्षी एवं घुमावदार डाली का सुन्दर आयोजन रहता है। फूलों की सुन्दर टहनी को शंकु आकार में कभी गुच्छों के रूप में कभी फूलदान के साथ बनाया जाता है। सर्वाधिक प्रसिद्ध दाखा बेल है तथा प्राकृतिक रंगों द्वारा छापा कार्य ब्लॉक प्रिंट (ठप्पा) द्वारा किया जाता है।

(iii) दक्षिण-पश्चिम राजस्थान में प्रयोजित अलंकरण के आधार पर छापा विधि

अकोला छापा विधि – दक्षिण-पश्चिम में बगरू की तरह ही छपाई के लिए प्रसिद्ध एक गांव है, अकोला, जो चित्तौड़ जिले में बेड़च नदी के तट पर बसा हुआ है। अकोला में होने वाली छापा कला को आजम, जाजम व दाबू भी बोला जाता है। अकोला क्षेत्र हैड ब्लॉक प्रिंटिंग के लिए जाना जाता है, यहाँ पर दो विशिष्ट प्रकार की मड रेसिस्ट (दाबू) छापा प्रचलित है इसमें एक को फेटिया तथा दूसरी नंगना बोला जाता है। इस छापा कला की सुन्दरता यहाँ पर प्रयोग होने वाले रंगों के कारण होती है जिसमें मुख्यत: लाल, काले, हरे रंग प्रधान रहते है। यह छापा कला लगभग 500 से 700 साल पुरानी है जो वर्तमान समय में भी जीवन्त अवस्था में है तथा आमूल-चूल, परिवर्तन के साथ आज भी कई पुराने भाँतों का प्रयोग उसी रूप में हो रहा है। पहले पूर्ण रूप से प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया जाता था परंतु अब रासायनिक रंगों का प्रचलन बढ़ गया है। जहाँ बगरू में छापा परिधान में वेधान का प्रयोग होता है किन्तु आकोला में बेधान के स्थान पर गोद का पानी का प्रयोग मिट्टी और चुने के पेस्ट में किया जाता है। इसमें ज्वार मांखी भाँत प्रचलित थी। गुजरों में नान्दणा की कई भाँते (किस्म) चलती थी। चित्तौड़ में बडो बूटो, छिपकली (चपकली), मावली नाथद्वारा तरफ बूटो, गंगा-जमुना या मोरड़ी प्रयोग में लाए जाते है।

वर्तमान परिवेश में छापा कला की उपयोगिता एवं महत्व – वर्तमान में छापा परिधानों का उपयोग केवल प्रचलित परिधान में ही नहीं बल्कि रोजमर्रा के दैनिक जीवन में उपयोग होने वाली वस्तु के निर्माण में भी होता है। उदाहरण के लिए अनोखी म्यूजियम में संरक्षित 'सिंघाड़ा बैग' जो कि वर्तमान में पुरूषोत्तम छीपा द्वार बनाया गया, जिसमें हाथ के द्वारा बारीक काम किया गया है एवं हाथी का डिजाईन थैले के नीचे सिला है। जिस पर ठप्पा की छपाई, प्राकृतिक रंग, दाबू की छपाई की गई है। जो आज के समय में भी अन्य वस्त्र सज्जा से किसी भी प्रकार से कम नहीं है यह अपनी मौलिक सुन्दरता का अप्रतिरिम उदाहरण है। वही आज के आधुनिक समय में फैशन के तौर पर वस्त्रों का प्रदर्शन आयोजित फैशन सो व म्युजियमस (संग्रहालय) में किया जाता है, जिसका उदाहरण अनोखी म्युजियम जयपुर में स्पष्ट देखने को मिलता है ऐसा ही उदाहरण कैलिको म्युजियम (गुजरात) में भी मिलता है जहाँ पर छापा परिधानों से अलंकृत वस्त्रों का आधुनिक स्वरूप में संरक्षण किया गया है, वही कई बहुत प्रसिद्ध कलाकारों द्वारा परम्परागत छापा परिधानों को बड़ी प्रदर्शनी में प्रयोजित किया जाता रहा है तथा बैग, बटुआ, चादर, रूमाल, मेजपोश, तकिया का गिलाफ, काँचली, दुपट्टे, पर्दे आदि में भी छापा परिधानों का काफी प्रचलन है। राजस्थानी क्राफ्ट में छापा परिधान का कलात्मक पक्ष निश्चित ही सुन्दरता व सौंदर्य का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करते है।

मलीर एवं अजरक विधि से लाल और नीले रंग में छपे रंगीन साफे चद्दरे इस दृष्टि से तो अतिमोहक होती है। यहाँ के आंचलिक लोगों का मानना है कि रंग तो गहरे ही होने चाहिए, ये ठण्डे होते है और विशेषकर धूप से रक्षा करते हैं। पश्चिमी राजस्थान में पाली-मारवाड़ की रंगाई-छपाई का एक

बहुत बड़ा केन्द्र रहा है। उसके दो प्रमुख कारण है– एक तो यह कि पाली के पास से लूनी नदी बहती है, जिसका पानी खारा होने के कारण रंगाई के लिए विशेष उपयोगी रहा है। अब यहाँ रंगाई–छपाई न के बराबर है कारण व्यापारिक मार्ग का बन्द होना। परंतु वर्तमान में फिर से छापा परिधानों का व्यापार भारत से बाहर हो रहा है तथा देश के बहुत से प्रसिद्ध ब्रांडों द्वारा भारतीय बाजार में छापा परिधानों को कुछ मूल–चूल परिवर्तन करके परिधान उपलब्ध कराये जा रहे है, जिसमें अहम भूमिका में अनोखी, फेव इण्डिया आदि है। वही छापा परिधान की महत्ता का अनुमान लगाना बहुत सरल हो जाता है, जब अमेरिकी मासिक फैशन पत्रिका वोग में भी राजस्थानी नमूनों से अलंकृत छापा परिधान को जगह दी जाती है ऐसे अनेकों उदाहरण है जो यह सिद्ध करते है कि वर्तमान समय में भी पारम्परिक छापा परिधानों की महत्ताा बनी रहेगी क्योंकि बदलते परिवेश और आने वाले समय में प्रदूषण के कारण गर्मी और अधिक बढ़ेगी तथा ऐसे में शीतल आकृषक और अलंकृत छापा परिधानों की आवश्यकता बढ़ेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. वृन्दा सिंह : वस्त्र विज्ञान एवं परिधान, पृ.264–266
2. डॉ. आशा भगत : राजस्थान, गुजरात एवं मध्यप्रदेश की छपाई का सर्वेक्षण, पृ.2, 4, 8, 15
3. गुलाब कोठारी : राजस्थान की रंगाई छपाई, पृ.48, 49, 50
4. अजरक पेटर्नस बोडर्स : अनोखी म्युजियम ऑफ हेण्ड प्रिंटिंग, पृ.11, 15, 64
5. सुखसिंह भाटी : राजस्थान के परम्परागत वस्त्र, पृ.26–31
6. डॉ. गोपीनाथ भाटी : राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, पृ.35–36, 100–102
7. डॉ. मीनाक्षी गुप्ता : परम्परागत भरतीय वस्त्र, पृ.8
8. महेश चन्द्र जोशी : युग–युगीन भारतीय कला, पृ.52
9. डॉ. राजकुमार : शिल्पियों का गौरवशाली इतिहास, पृ.29, 34, 37, 47
10. कमलेश माथुर : क्राफ्ट एण्ड क्राफ्ट्समेन, पृ.54–57

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Analyzing the Factors Influencing Life Insurance in India: A Comparative Study of LIC and Other Private Sector Companies

Dayalal Sankhla* Dr. Pawan Verma**

***Research Scholar (Commerce) SKD University, Pilibanga, Hanumangarh (Raj.) INDIA**
****Associate Professor & Research Supervisor (Commerce) SKD University, Pilibanga, Hanumangarh (Raj.) INDIA**

Abstract : This study seeks to analyze and compare these parameters of life insurers: Share Capital, Total Assets, Working Capital, Net Profit, Total Premium, Benefits Paid, Commissions Paid, Operating Expense, Number of Branch Offices, and Number of Individual Agents of LIC, HDFC Life Insurance, ICICI Prudential Life Insurance, and SBI Life Insurance. Secondary data from LIC and other life Insurance Companies was gathered from 2014-15 to 2023-24 and was analyzed using Mean, Standard Deviation, Coefficient of Variance and CAGR. Overall, Life Insurance Corporation of India showed an improving growth trend compared to almost all the Private Life insurance Companies and was ahead of the competition.
Keywords: Determinants of Life Insurance Industry, LIC, Private Companies.

Introduction - Life insurance serves an important role in people's financial stability and preparedness, primarily as a means of safeguarding and growing wealth, whilst shielding, as much as possible, against the vicissitudes of life. Over the past few decades in India, with the increasing middle class, growing economy, and heightened awareness of financial planning the life insurance sector has grown remarkably. The Life Insurance Corporation of India (LIC), a government-owned enterprise that has monopolized the market, is now facing competition from privately owned businesses, which has resulted in a plethora of new offerings in the market to address the needs of Indian consumers.

The liberalization of the insurance sector is the most controversial given its diverse range of products, and the design of which has an asset liability structure extending over a significant period of time. Furthermore, the insurance sector is the primary driver of financial inclusion and social safety nets. The insurance sector, due to its particular nature, sophisticated mechanics and indeed dynamic nature has been and continues to be, the most underrated sector of the financial industry.

Thus, it is important to examine the observable phenomena in the wake of the liberalization of the insurance industry to determine the extent to which the life insurance industry's public and private players have become efficient and competitive, as well as financially viable.

This paper is concerned with the Indian life insurance market, particularly with assessing the performance of LIC vis a vis three private insurance players. Understanding these factors is important for a number of reasons. They help policymakers appreciate the determinants of consumer behavior. They aid firms in the market in devising products aimed at the target consumers. They assist policymakers in defining interventions aimed at increasing market penetration.

This paper seeks to provide a framework to understand the strategies of public and private insurers in a rapidly changing environment. To achieve this, the study will juxtapose LIC's strategies with those of leading private sector players such as HDFC Life, ICICI Prudential Life, and SBI Life. The study will focus on a plethora of determinants of the consumption of life insurance to include the socio-economic factors, the level of education in the target market, and the increasing need for financial security.

The focus will also include analyzing the influence of marketing tactics, consumer trust, and the effect of digitalization on transforming the insurance industry.

Review of Literature

Patel and Joshi (2024) analyzed the sales approaches and network distributions of LIC and private life insurers. They found that while LIC had an extensive reach due to its branches and agent distribution model, private insurers were beginning to adopt digital platforms, online sales, and bank partnerships to enhance distribution. LIC, the study argued, needs to adjust if the company wants to compete against new tech faster competitors in the private market by incorporating more digital tools and technology.

Dr. B. Sundara Kala (2023) undertook a comparative assessment of the performance of LIC and three top private life insurance companies. He considered numerous operational parameters including the number of new branches, new agents, policies sold, capital share, working capital, expenses, claims paid, and net profit. These were treated as independent variables, and the gross premium on sale as the dependent variable. The study, using multiple regression analysis, concluded that there is a need for insurers to determine their operational efficiency in comparison to each other, and to take the necessary managerial actions to improve the utilization of resources to achieve greater efficiency. The study underscored the importance of resource management to remain competitive in a developing and competitive industry.

Giri and Chatterjee (2021) examined the demand determinants of life insurance in India and the rural and urban households. The study demonstrated how socioeconomic variables like income, educational background, and family size were relevant predictors of insurance purchasing behavior. Also, the rural parts of the region demonstrated a slower rate of insurance adoption, mainly due to a lack of insurance financial literacy and access to insurance products. The study pointed to the need for more targeted rural life insurance outreach and financial education.

Segodi's (2022) study on demand for life insurance in the Indian subcontinental sinkhole of the BRICS grouping examined the macroeconomic influences on the demand for life insurance cover (i.e., demand influences of the product insurance on macroeconomic variables such as GDP growth, inflation, and the financial regulation of the economy). His study's conclusion is that there is a positive relationship between life insurance demand and the economic stability and soundness of the country. As regards India, the author opines that the life insurance market will grow immeasurably if the government provides regulation of the sector and creates a favorable environment for the private insurers.

Sharma and Gupta (2022) investigated the financial performance of LIC and its rivals in the private sector over the previous decade with an emphasis on profitability, market share, and consumer satisfaction. Even though LIC continued to be dominant in market share, the company found that the private sector was doing much better in customer satisfaction, profitability, and in the case of the urban market, substantially better than LIC. They concluded that the private sector competitors focused on consumer customer service and greatly improved technological advancements which enabled their institutions to overshadow LIC for the acquisition of the younger, more technologically adapted consumer.

Objective of the Study :

1. To Study the Factors Influencing LIC and Some Private Life Insurance Firms (HDFC Life, ICICI Prudential, and SBI Life)
2. To Evaluate and Compare the Performance of LIC and Some Private Life Insurance Companies (HDFC Life, ICICI Prudential, and SBI Life)

Research Methodology : This study focuses on the market behavior of the Life Insurance Industry in India in the particular case of Life Insurance Corporation of India (LIC) and 3 of the most reputable private players HDFC Life, ICICI Prudential, and SBI Life. The research study will be spanning the financial years 2014-2015 to 2023-2024. The companies were evaluated on the basis of several financial and operational parameters such as, share capital, total assets, working capital, net profit, total premium, benefits paid, commission paid, operating expenses, number of operational branches, and the number of agents. The secondary available data of the companies were subjected to statistical techniques such as Index, Mean, Standard Deviation, Coefficient of Variation, and Compound Annual Growth Rate (CAGR) methods. The methodologies presented a detailed comprehension of the companies' financial, operational, and expansion potential, with particular focus on the life insurance sector in India.

Data Analysis

Share Capital of Life Insurance Companies

Table 1 (see in last page)

According to Table 1, LIC's share capital increased from 100 to 6325 crores from 2014-15, 2021-22, and 2023-24. HDFC started with 1994.88 crores in 2014-15 and increased to 2150.94 crores in 2023-24 with more or less 1% increase over the years. HDFC has an average of 2047.05 crores. ICICI Prudential Life Insurance has also increased share capital from 1431.72 crores in 2015 and ended with 1400.62 crores in 2023-24 with more or less 1% increase over the years. Average with very low standard deviation of 0.1830 percent resulted to 1435.90 crores. SBI began with 1000 crores in 2014-15 and then 1001.47 crores in 2023-24 over the years. out of the four, LIC has the greater appreciation in share capital. This concludes HDFC and ICICI as the only companies to witness an overall increase in every single year. No significant increase is shown in SBI's share capital over the study period.

Total Asset of Life Insurance Companies

Table 2 (see in last page)

Across the examined period, the total assets of the four companies showed consistent growth. LIC showed steady financial growth at a 1.10% CAGR, as he transitioned from 1,992,078.51 to 5,222,038.28 thousand rupees from the period of 2014–15 to 2023–24. HDFC and ICICI as well showed consistent growth, with HDFC at a 1.16% CAGR and ICICI at 1.11% CAGR. SBI showed the highest growth out of the four companies with a 1.18% CAGR.

Also, out of the four companies, SBI has the highest CV at 57.70, which adds to the evidence of the lack of cohesion of the growth. On the contrary, LIC showed the highest returns stability with the lowest CV value of 31.62.

HDFC and ICICI showed intermediate CV values which were 50.30, and 38.20 respectively, which adds evidence of moderate performance volatility and moderate risk.

Working Capital of Life Insurance Companies

Table 3 (see in last page)

Additional working capital is vital for insurance firms due to the constant need for settlement of claims. Working capital offers efficiency and facilitates the management of short-term obligations. Working capital is calculated as the subtraction of Current Liabilities from Current Assets. LIC has shown a relative stable and positive growth. Irrespective of some yearly variations, LIC underwent little variations with a 0.001 CAGR and a 37.77 percent CV indicative of consistent but slow growth at low risk. HDFC has negative growth throughout the period of study. The CV of 38.54% indicates that the performance was highly volatile. There was also a downward drift in ICICI, with an average of Rs. 7563.17 along with a CAGR of -0.20% and a CV of -846.39 percent indicating extreme variations. SBI has good performance with a positive growth of 0.24% CV indicating 37.26% shows variations. SBI also had some variations but the overall performance was more stable than HDFC and ICICI.

Net Profit (after tax) of Life Insurance Companies

Table 4 (see in last page)

As represented on Table 4, during the research period, LIC showed the most growth having registered the highest CAGR of 1.36, with index values of 100 in the 2014-15 period rising to 2230.30 in 2023-24. As much as this spectacular growth may seem, LIC's performance was extremely inconsistent as demonstrated in the Coefficient of Variation of 154.08%. As HDFC having CAGR of 1.07% showed a steady growth, it suggested growth in a consistent rate. HDFC was seen to provide greater stability than LIC with having lower volatility of 22.34%. ICICI was the slowest in growth rate with a CAGR of 0.94%. ICICI had a CV of 31.78% showing volatility to a moderate extent meaning there was a greater risk in it than having with HDFC, but LIC. SBI also demonstrated the same moderate volatility range with a CV of 27.56%.

Total premium of Life Insurance Companies

Table 5 (see in last page)

LIC's total premium in 2013-2014 was 239667.65, which grew to 475751.92 in 2023-2024, exhibiting steady growth at a CAGR of 1.07. Loss of HDFC a CV of 22.98% showed lower volatility on this period. HDFC showed increasing premium income from 14829.90 crores to 63076.48 crores during the period studied. HDFC, however, had a significant increasing premium income but with a higher investment risk than LIC as emanated from the higher volatility CV of 49.71%. With a CAGR of 1.11, ICICI showed a steady growth from 2014-15(15306.62 crores) to 2023-24(43235.64) with a CV of 30.43 suggesting than while ICICI's performance was more varied than LIC's. SBI shows the strongest growth the index increasing from a 100 in 2014-15 to 632.86 in 2023-24.

Benefits paid by Life Insurance Companies

Table 6 (see in last page)

Table 6 shows LIC's payments increasing from 14,412,574.87 in 2014-15 to 38,594,915.00 in 2023-24, which corresponds with an annual CAGR of 1.1, with a CV of 35.38. HDFC slightly exceeded this growth at a CAGR of 1.16, with an increase from 100 to 451.31 in the same period, though with a larger CV of 57.63%. ICICI payments of Rs. 12352.55 in 2014-15 to 39,745.90 in 2023-24 gives a lower growth. On the other hand, SBI showed the highest growth in the period. Its CAGR was 1.18 with an index increase from 100 to 521.18.

Commission paid by Life Insurance Companies

Table 7

The amount of commission paid by LIC increased from 1511813.39 lakhs in 2014-2015 to 2595912 lakhs in 2023-2024. The average commission paid is calculated to be 2031293.11 lakhs. Having been one of the lowest commission caring banks in 2014-2015 with 62347.42 lakhs, HDFC increased commission to 525632.08 lakhs in 2023-2024 with a compounded annual growth rate of 1.24. ICICI also increased commission expenses from 55317.23 in 2014-2015 to 2024-2025 372196.47. The average commission paid would be 149030.55 with a growth rate of 1.21. In the case of SBI, commission expenses increased from 60371.25 in 2014-2015 to 310510.55 in 2023-2024, with a growth rate of 1.18. The average commission paid for SBI was 160024.10. It can be concluded from the average commission paid that LIC has the highest paid commission and SBI had the lowest paid commission. HDFC has the highest coefficient of variation, indicating the most variation in commission payments.

Operating Expense paid by Life Insurance Companies

Table 8 (see in last page)

Table 8 shows LIC's operational costs as 2239269.56 lakhs in 2014-15 and 4812168.00 lakhs in 2024-25 with an annual increase rate of 1.079 and CV 27.013246. On the other hand, HDFC's operational costs were 148897.39 lakhs in 2014-15 and increased to 690105.78 lakhs in 2023-24. HDFC's mean total cost was 425227.44 and 52.39 % CV. As for ICICI, the operational cost was 165202.25 lakhs in 2014-15 and it increased to 412598.15 lakhs with a CAGR of 1.09 representing an overall mean of 284501.22. SBI operational costs in 2014-15 were 117559.13 lakhs and 398189.88 lakhs in 2023-24 with a compound annual growth rate of 1.13 and an average of Rs. 233137.07 lakhs. From the assessment, we can conclude that LIC total operational costs are considerably greater than the privately owned companies but the fluctuations are remarkably lower (CV of 27.01 %) than the privately owned companies. On the contrast, HDFC has a greater CV of 52.39 % which indicates greater volatility than the other three companies.

Branch Offices of Life Insurance Companies

Table 9 (see in last page)

Table 9 demonstrates how LIC has the most broad-based distribution network across the country LIC has 4,795 offices in 2014-15 and 4,948 offices in 2023-24. HDFC made efforts to boost its branch network and its index increased from 100 to 141.53. There were 378 branches in 2014-15 and 535 in 2023-24, while in the case of ICICI there is a drop in branch offices. 547 branches existed in 2014-15 while in 2023-24 470 with a declining CAGR of 0.98. Like HDFC, SBI also tried to build a strong branch network. There were 750 branch offices in 2014-15 and increased to 1040 in 2023-24. It can be shown from the data that the branch network of HDFC has increased and the increased CV of 12.40% indicates that there is a lot of variation and it can be observed that a branch office is created first, then the office is reduced, and then it is increased.

Number of Agents of Life Insurance Companies

Table 10 (see in last page)

Life insurance business depends on individual agents. In Table-10, individual agents in four companies from 2014-15 to 2023-24 are captured. LIC has the highest number of agents and offices. In 2014-15, number of agents were 1163604 and increased to 1414743 in 2023-24 and the annual growth rate of 1.019. From 65000 agents in 2014-15, to 214275 in 2023-24, HDFC has also grown. An index of 100 in 2014-15 to 329.65 in 2023-24 depicts this well. ICICI has 132463 individual agents in 2014-15, and 1.05 is annual growth rate from 2023-24. In 2014-15, there were 110392 individual agents in SBI, and 1.08 is annual growth added to 246078 in 2023-24. Higher CV shows fluctuation in the data. From the data, it is more assured that HDFC and SBI have more fluctuations in the number of agents. Whereas with LIC the number of agents is has more of an increase and is growing more steadily.

Findings : Though LIC is still on top, it is clear that HDFC, ICICI, and SBI are motivated to carve out their share of the industry and have reached some success in doing so. The high commissions and operating costs for LIC can be attributed to the fact that their branch networks are far more extensive and the total number of agents is much larger. Ultimately, it affects profitability. Compared to LIC, private leaders have a much smaller claim settlement ratio, and that is hurting their business. The private leaders are experiencing growth in premium income, although it is quite erratic, while LIC is stable.

Conclusion : The public sector LIC and the top three private sector companies has been compared in this paper. Core components that influence the life insurance sector were compared. It is apparent that LIC still prevails in this domain even after the entry of private companies over 20 years ago. They have more branch offices and a larger agent network throughout India enabling them to garner greater premium and profit. Because LIC has a large claim settlement ratio (benefits paid) policyholders have a greater sense of trust and is able to sell more policies. It is suggested that private companies formulate a market capture strategy. India is exposed to an unprecedented strength in the insurance industry. Given the findings of this study, insurance companies are able to evaluate their position and the level of productivity in comparison to their competitors, thus, making appropriate management decisions to optimize the allocation of resources and improve productivity.

References :-

1. IRDA Annual Reports
2. LIC Annual Reports
3. HDFC Life Insurance Co. Annual Reports
4. ICICI Prudential Life Insurance Co.Annual Reports
5. SBI Life Insurance Co. Annual Reports
6. Patel, A., & Joshi, S. (2024). *An analysis of the sales approaches and network distributions of LIC and private life insurers*. Journal of Insurance Studies, 12(3), 45-60.
7. Sundara Kala, B. (2023). *Comparative assessment of the performance of LIC and private life insurers*. Journal of Business & Finance, 10(2), 34-48.
8. Giri, R., & Chatterjee, P. (2021). *Determinants of life insurance demand in India: A study of rural and urban households*. Indian Economic Review, 30(4), 128-140.
9. Segodi, T. (2022). *Macroeconomic influences on life insurance demand in the BRICS nations: A study of India's market*. Journal of International Economics, 18(1), 52-70.
10. Sharma, N., & Gupta, S. (2022). *Financial performance of LIC versus private sector life insurers: A decade-long analysis*. Journal of Insurance & Finance, 15(5), 88-102.
11. Kala, B. S. Determinants Of Life Insurance Industry In India–A Comparative Analysis Of Lic And Selective Private Insurance Companies. *Journal ID*, *1572*, 2875.
12. Yadav, V. K. (2023). Analyzing the Growth Trajectory of the Indian Life Insurance Sector. *Management and Finance Bulletin*, *1*(2), 58-66.
13. Debnath, S. Acomparative Study On Financial Performance Of Hdfc Life Insurance And Icici Prudential Life Insurance. In *PCC* (p. 114).

Table 1: Share capital of LIC and Selected Private Life Insurance Companies (Rs.in Crores)

Years	Lic	Index	Hdfc	Index	Icici	Index	Sbi	Index
2014-15	100.00	100.00	1994.88	100.00	1431.72	100.00	1000.00	100.00
2015-16	100.00	100.00	1995.29	100.02	1432.32	100.04	1000.00	100.00
2016-17	100.00	100.00	1998.48	100.18	1435.35	100.25	1000.00	100.00
2017-18	100.00	100.00	2011.74	100.85	1435.50	100.26	1000.00	100.00
2018-19	100.00	100.00	2017.38	101.13	1435.78	100.28	1000.00	100.00
2019-20	100.00	100.00	2018.80	101.20	1435.86	100.29	1000.03	100.00
2020-21	100.00	100.00	2020.94	101.31	1435.97	100.30	1000.07	100.01
2021-22	6325.00	6325.00	2112.62	105.90	1437.31	100.39	1000.37	100.04
2022-23	6325.00	6325.00	2149.40	107.75	1438.57	100.48	1000.89	100.09
2023-24	6325.00	6325.00	2150.94	107.82	1440.62	100.62	1001.47	100.15
Mean	1967.50		2047.05		1435.90		1000.28	
SD	3006.96		64.0615		2.62809		0.5046	
CV (%)	152.832		3.12946		0.18303		0.05045	
CAGR	1.51393		1.00756		1.00062		1.00015	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company

Table 2: Total Assets of LIC and Selected Private Life Insurance Companies (Rs.in Crores)

	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	1992078.51	100.00	67316.83	100.00	99061.01	100.00	72210.66	100.00
2015-16	2170807.85	108.97	74045.38	110.00	102565.14	103.54	80724.56	111.79
2016-17	2529146.67	126.96	91286.02	135.61	121906.30	123.06	99225.25	137.41
2017-18	2791615.20	140.14	105835.07	157.22	138373.68	139.69	118155.76	163.63
2018-19	3055612.66	153.39	124882.91	185.52	159426.20	160.94	142997.83	198.03
2019-20	3123732.48	156.81	127185.45	188.94	152704.87	154.15	162557.89	225.12
2020-21	3728902.44	187.19	173065.83	257.09	213499.46	215.52	222592.07	308.25
2021-22	4159345.17	208.79	204160.53	303.28	239190.26	241.46	268207.20	371.42
2022-23	4491131.43	225.45	239619.15	355.96	250159.15	252.53	309586.56	428.73
2023-24	5222038.28	262.14	293729.32	436.34	293526.91	296.31	392782.99	543.94
Mean	3326441.07		150112.65		177041.30		186904.08	
SD	1051858.9		75505.58		67636.314		107849.7	
CV (%)	31.621149		50.299279		38.203693		57.703236	
CAGR	1.1011674		1.1587303		1.1147424		1.1845547	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 3: Working Capital of LIC and Selected Private Life Insurance Companies (Rs. in.Lakhs)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	11497794.18	100.00	-23579.44	100.00	-66648.02	100.00	255261.99	100.00
2015-16	10616609.16	92.34	-67410.36	285.89	-72582.27	108.90	231106.25	90.54
2016-17	9461832.88	82.29	-85234.89	361.48	2586.31	-3.88	267828.88	104.92
2017-18	8184759.71	71.19	-112793.46	478.36	-73359.47	110.07	296770.10	116.26
2018-19	11853865.44	103.10	-108164.58	458.72	-32819.07	49.24	290539.77	113.82
2019-20	9341797.07	81.25	-66989.31	284.10	50797.38	-76.22	279901.20	109.65
2020-21	9634779.50	83.80	-153781.32	652.19	16758.68	-25.15	291239.32	114.09
2021-22	11987323.86	104.26	-99545.31	422.17	-34486.69	51.74	248594.70	97.39
2022-23	12689856.67	110.37	-112827.46	478.50	2905.57	-4.36	434164.79	170.09
2023-24	122208.84	1.06	-80381.43	340.90	131215.85	-196.88	624696.57	244.73
Mean	9539082.73		-91070.76		-7563.17		322010.36	
SD	3603128.97		35095.091		64013.99		119995.1	
CV (%)	37.7722793		-38.53607		-846.3907		37.26437	
CAGR	0.00106289		0.3408963		-0.196879		0.244728	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 4: Net Profit (after tax) of LIC and Selected Life Insurance Companies(Rs.in Lakhs)

	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	182378.37	100.00	78550.53	100.00	163429.15	100.00	82004.21	100.00
2015-16	251784.79	138.06	81840.33	104.19	165046.07	100.99	86103.41	105.00
2016-17	223174.08	122.37	89213.36	113.57	168223.03	102.93	95465.29	116.42
2017-18	244640.54	134.14	110900.34	141.18	161982.59	99.11	115039.22	140.28
2018-19	268849.66	147.41	127679.39	162.54	114064.62	69.79	132679.64	161.80
2019-20	271270.80	148.74	129526.62	164.90	106874.87	65.40	142218.31	173.43
2020-21	290056.68	159.04	136010.45	173.15	96014.66	58.75	145584.94	177.53
2021-22	404236.95	221.65	120768.69	153.75	75413.10	46.14	150599.77	183.65
2022-23	3639738.99	1995.71	136012.63	173.15	81066.55	49.60	172057.24	209.82
2023-24	4067579.00	2230.30	156885.59	199.73	85238.56	52.16	189377.81	230.94
Mean	984370.99		116738.79		121735.32		131112.98	
SD	1516676.12		26081.26		38684.02		36136.83	
CV (%)	154.08		22.34		31.78		27.56	
CAGR	1.3640688		1.071626		0.936981		1.0872998	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 5:Total premium of LIC and Selected Private Life Insurance Companies(Rs. in Crores)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	239667.65	100.00	14829.90	100.00	15306.62	100.00	12867.11	100.00
2015-16	266444.21	111.17	16312.98	110.00	19164.39	125.20	15825.36	122.99
2016-17	300487.36	125.38	19445.49	131.12	22354.00	146.04	21015.14	163.32
2017-18	318223.21	132.78	23564.41	158.90	27068.77	176.84	25354.19	197.05
2018-19	337505.07	140.82	29186.02	196.81	30929.77	202.07	32989.42	256.39
2019-20	379389.60	158.30	32706.89	220.55	33430.70	218.41	40634.73	315.80
2020-21	403286.55	168.27	38583.49	260.17	35732.82	233.45	50254.17	390.56
2021-22	428024.97	178.59	45962.83	309.93	37457.99	244.72	58759.64	456.67
2022-23	474668.14	198.05	57533.42	387.96	39932.78	260.89	67315.60	523.16
2023-24	475751.92	198.50	63076.48	425.33	43235.64	282.46	81430.64	632.86
Mean	362344.87		34120.19		30461.35		40644.60	
SD	83263.32		16961.204		9268.79		23239.4	
CV (%)	22.97902		49.710168		30.428		57.1772	
CAGR	1.07097		1.155774		1.10942		1.20263	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 6: Benefits paid by LIC and Selected Private Life Insurance Companies(Rs. in Lakhs)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	14412574.87	100.00	816239.27	100.00	12352.55	100.00	819768.46	100.00
2015-16	14120104.96	97.97	817690.61	100.18	12541.98	101.53	795955.06	97.10
2016-17	16669477.95	115.66	984217.08	120.58	15135.13	122.53	952614.21	116.21
2017-18	19656503.96	136.38	1289487.77	157.98	17490.82	141.60	1167748.81	142.45
2018-19	24928486.17	172.96	1341463.91	164.35	14555.83	117.84	1523307.77	185.82
2019-20	25254889.46	175.23	1817303.78	222.64	19863.75	160.81	1617534.62	197.32
2020-21	28465473.32	197.50	2178067.13	266.84	23480.67	190.09	2149287.55	262.18
2021-22	35343758.47	245.23	3007863.19	368.50	31237.34	252.88	3123808.21	381.06
2022-23	33931267.28	235.43	3683319.66	451.25	31966.81	258.79	3009017.95	367.06
2023-24	38594915.00	267.79	3683754.54	451.31	39745.90	321.76	4272435.32	521.18
Mean	25137745.14		1961940.69		21837.08		1943147.80	
SD	8893747.33		1130606.6		9495.47		1175718.9	
CV (%)	35.3800521		57.626949		43.4832		60.505892	
CAGR	1.10351655		1.1626455		1.12397		1.1795013	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 7: Commission paid by LIC and Selected Private Insurance Companies (Rs. in Lakhs)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	1511813.39	100.00	62347.42	100.00	55317.23	100.00	60371.25	100.00
2015-16	1550032.24	102.53	70184.36	112.57	61997.68	112.08	71425.75	118.31
2016-17	1663194.72	110.01	79202.49	127.03	75891.59	137.19	78334.25	129.75
2017-18	1827152.80	120.86	107493.05	172.41	140327.36	253.68	112087.07	185.66
2018-19	1934531.55	127.96	111767.95	179.27	155128.90	280.44	134634.71	223.01
2019-20	2138046.01	141.42	149118.20	239.17	152138.04	275.03	156622.17	259.43
2020-21	2217063.88	146.65	171039.85	274.33	143000.42	258.51	174253.42	288.64
2021-22	2317145.53	153.27	194028.67	311.21	159135.40	287.68	208405.39	345.21
2022-23	2558038.98	169.20	288684.45	463.03	175172.43	316.67	293596.40	486.32
2023-24	2595912.00	171.71	525632.08	843.07	372196.47	672.84	310510.55	514.34
Mean	2031293.11		175949.85		149030.55		160024.10	
SD	396074.9		140757.9		89724.08		88467.63	
CV (%)	19.498658		79.9989		60.20516		55.28394	
CAGR	1.0555509		1.237617		1.210016		1.177944	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 8: Operating Expense Paid by LIC and Selected Insurance Companies(Rs. in Lakhs)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	2239269.56	100.00	148897.39	100.00	165202.25	100.00	117559.13	100.00
2015-16	2269276.57	101.34	187183.07	125.71	188834.89	114.31	145812.91	124.03
2016-17	2894465.65	129.26	238528.10	160.20	235719.61	142.69	164648.86	140.06
2017-18	3014239.54	134.61	315930.39	212.18	202993.12	122.88	171883.70	146.21
2018-19	2918201.68	130.32	381357.32	256.12	260532.11	157.70	212350.30	180.63
2019-20	3456803.66	154.37	426689.68	286.57	284687.03	172.33	241308.48	205.27
2020-21	3498952.29	156.25	458597.05	308.00	268826.36	162.73	241225.09	205.19
2021-22	3889067.80	173.68	561248.02	376.94	367295.75	222.33	297445.20	253.02
2022-23	4814560.02	215.01	843737.58	566.66	458322.96	277.43	340947.19	290.02
2023-24	4812168.00	214.90	690105.78	463.48	412598.15	249.75	398189.88	338.71
Mean	3380700.48		425227.44		284501.22		233137.07	
SD	913236.96		222780.2		98152.67		90056.55	
CV (%)	27.013247		52.39083		34.49991		38.62816	
CAGR	1.079502		1.165743		1.09585		1.129753	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Table 9: Branch Offices of LIC and Selected Life Insurance Companies (In Number)

Year	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	4795.00	100.00	378.00	100.00	547.00	100.00	750.00	100.00
2015-16	4810.00	100.31	398.00	105.29	521.00	95.25	774.00	103.20
2016-17	4815.00	100.42	414.00	109.52	512.00	93.60	801.00	106.80
2017-18	4826.00	100.65	414.00	109.52	505.00	92.32	825.00	110.00
2018-19	4850.00	101.15	412.00	108.99	508.00	92.87	908.00	121.07
2019-20	4873.00	101.63	421.00	111.38	517.00	94.52	937.00	124.93
2020-21	4888.00	101.94	390.00	103.17	517.00	94.52	947.00	126.27
2021-22	4984.00	103.94	372.00	98.41	470.00	85.92	952.00	126.93
2022-23	4918.00	102.57	498.00	131.75	470.00	85.92	992.00	132.27
2023-24	4948.00	103.19	535.00	141.53	470.00	85.92	1040.00	138.67
Mean	4870.70		423.20		503.70		892.60	
SD	63.5069		52.4887		25.8717		98.6939	
CV (%)	1.30386		12.4028		5.13633		11.0569	
CAGR	1.00315		1.03535		0.98494		1.03323	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Table 10: Number of Individual Agents of LIC and Selected Life Insurance Companies (In Number)

Years	LIC	Index	HDFC	Index	ICICI	Index	SBI	Index
2014-15	1163604.00	100.00	65000.00	100.00	132463.00	100.00	110392.00	100.00
2015-16	1061560.00	91.23	117000.00	180.00	121016.00	91.36	126536.00	114.62
2016-17	1131181.00	97.21	54516.00	83.87	136114.00	102.76	95355.00	86.38
2017-18	1148811.00	98.73	60367.00	92.87	151563.00	114.42	108261.00	98.07
2018-19	1179229.00	101.34	63251.00	97.31	170572.00	128.77	123613.00	111.98
2019-20	1208826.00	103.89	84563.00	130.10	190924.00	144.13	130418.00	118.14
2020-21	1353808.00	116.35	100000.00	153.85	187560.00	141.59	170096.00	154.08
2021-22	1326432.00	113.99	106597.00	164.00	198924.00	150.17	146057.00	132.31
2022-23	1347325.00	115.79	179435.00	276.05	201472.00	152.10	208774.00	189.12
2023-24	1414743.00	121.58	214275.00	329.65	209521.00	158.17	246078.00	222.91
Mean	1233551.90		104500.40		170012.90		146558.00	
SD	111606.39		50943.14		30711.77		45731.38	
CV (%)	9.0475635		48.74923		18.06438		31.2036	
CAGR	1.0197348		1.126694		1.04692		1.083462	

Source: Annual reports of LIC, HDFC, ICICI and SBI Life Insurance Company.

****

बिलासपुर जिले मेंग्रामीण प्रजननता का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव : एक भौगोलिक अध्ययन

निहारिका केशरवानी* डॉ. रत्नेश कुमार खन्ना**

* शोधार्थी (भूगोल) सामाजिक विज्ञान विभाग, डॉ सी व्ही रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, सामाजिक विज्ञान विभाग (भूगोल) डॉ सी व्ही रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – ग्रामीण प्रजननता किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास की दिशा को निर्धारित करने वाला एक महत्वपूर्ण जनांकिकीय घटक है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता का स्तर अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है, जिसके कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, आय तथा जीवनदस्तर पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का भौगोलिक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का उपयोग करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि महिला शिक्षा का निम्न स्तर, अल्प पारिवारिक आय, पारंपरिक सामाजिक मान्यताएँ तथा स्वास्थ्य सुविधाओं की सीमित उपलब्धता ग्रामीण प्रजननता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं। शोध निष्कर्ष दर्शाते हैं कि प्रजननता में कमी लाने हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जागरूकता आधारित नीतियों को सुदृढ़ करना आवश्यक है।

शब्द कुंजी –ग्रामीण प्रजननता, सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, महिला शिक्षा, स्वास्थ्य, बिलासपुर जिला, भौगोलिक अध्ययन।

प्रस्तावना – प्रजननता जनसंख्या वृद्धि की मूल प्रक्रिया है, जिसका प्रभाव समाज की संरचना, संसाधनों के वितरण तथा आर्थिक विकास पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। ग्रामीण भारत में प्रजननता का स्तर शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक पाया जाता है, क्योंकि यहाँ शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार के अवसर अपेक्षाकृत सीमित हैं। छत्तीसगढ़ राज्य का बिलासपुर जिला कृषि प्रधान एवं ग्रामीण बहुल क्षेत्र है, जहाँ सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक प्रजननता केवल जनसंख्या वृद्धि का कारण नहीं बनती, बल्कि इससे महिला स्वास्थ्य, बाल पोषण, शिक्षा की उपलब्धता तथा पारिवारिक आय पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। भौगोलिक अध्ययन के माध्यम से क्षेत्रीय भिन्नताओं एवं कारण-परिणाम संबंधों को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। इसी संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करना है।

साहित्य समीक्षा – ग्रामीण प्रजननता पर किए गए विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक एवं आर्थिक कारक इसकी दिशा को निर्धारित करते हैं। अनेक विद्वानों ने महिला शिक्षा को प्रजननता नियंत्रण का सबसे प्रभावी साधन माना है। पूर्ववर्ती शोधों में यह भी उल्लेख किया गया है कि कम आय वाले एवं अशिक्षित परिवारों में संतान संख्या अधिक होती है।भारतीय ग्रामीण समाज में पुत्र प्राथमिकता, प्रारंभिक विवाह तथा पारंपरिक सामाजिक मान्यताएँ प्रजननता को बढ़ावा देती हैं। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के अनुसार जिन क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुँच सीमित है, वहाँ प्रजननता का स्तर अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। हालांकि, बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों पर केंद्रित भौगोलिक अध्ययन अपेक्षाकृत कम उपलब्ध हैं, जिससे इस शोध की उपयोगिता और प्रासंगिकता बढ़ जाती है।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता के स्तर का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण प्रजननता को प्रभावित करने वाले सामाजिक एवं आर्थिक कारकों का विश्लेषण करना।
3. प्रजननता का महिला स्वास्थ्य, शिक्षा एवं पारिवारिक आय पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन करना।
4. ग्रामीण विकास एवं जनसंख्या नीति हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

अनुसंधान पद्धति – प्रस्तुत अध्ययन मेंवर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अनुसंधान पद्धतिअपनाई गई है।

आँकड़ों के स्रोत

1. **प्राथमिक आँकड़े :** चयनित गाँवों में प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा
2. **द्वितीयक आँकड़े :** जनगणना रिपोर्ट, जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, NFHS रिपोर्ट

नमूना चयन – बिलासपुर जिले के विभिन्न विकासखंडों से 10 गाँवों के 300 ग्रामीण परिवारों का चयन किया गया।

विश्लेषण तकनीक – प्रतिशत विधि, औसत एवं तुलनात्मक विश्लेषण का प्रयोग किया गया।

विश्लेषण एवं परिणाम – प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता एवं उससे संबंधित सामाजिक-आर्थिक कारकों का विश्लेषण किया गया। प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक प्रजननता का सबसे प्रमुख कारणमहिला शिक्षा का निम्न स्तरहै। जिन परिवारों में महिलाएँ

अशिक्षित हैं या केवल प्राथमिक स्तर तक शिक्षित हैं, वहाँ औसत संतान संख्या अपेक्षाकृत अधिक पाई गई। इसके विपरीत, जिन परिवारों में महिलाएँ माध्यमिक अथवा उच्च शिक्षा प्राप्त हैं, वहाँ प्रजननता का स्तर कम देखा गया। इससे यह सिद्ध होता है कि शिक्षा न केवल जागरूकता बढ़ाती है, बल्कि प्रजनन संबंधी निर्णयों को भी प्रभावित करती है।

शिक्षा के साथ-साथ पारिवारिक आय भी प्रजननता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण आर्थिक कारक है। अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि निम्न आय वर्ग के परिवारों में संतान संख्या अधिक होती है। ऐसे परिवारों में बच्चों को आर्थिक संसाधन अथवा भविष्य की सुरक्षा के रूप में देखा जाता है, जिससे प्रजननता को सामाजिक स्वीकृति मिलती है। इसके विपरीत, मध्यम एवं उच्च आय वर्ग के परिवारों में सीमित संसाधनों के बेहतर उपयोग तथा जीवनदस्तर सुधार की प्रवृत्ति के कारण प्रजननता अपेक्षाकृत कम पाई गई।

तालिका 1 : ग्रामीण प्रजननता एवं सामाजिकदआर्थिक स्थिति (प्रतिशत में)

संकेतक	निम्न स्तर	मध्यम स्तर	उच्च स्तर
महिला शिक्षा	58	30	12
पारिवारिक आय	62	28	10
स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता	55	32	13
औसत संतान संख्या	अधिक	मध्यम	कम

(स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित)

तालिका 1 से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में लगभग 58 प्रतिशतपरिवारों में महिला शिक्षा का स्तर निम्न है, जिसके परिणाम स्वरूप प्रजननता अधिक पाई गई। इसी प्रकार, 62 प्रतिशत परिवार निम्न आय वर्ग से संबंधित हैं, जहाँ आर्थिक असुरक्षा के कारण अधिक संतान संख्या देखने को मिलती है। यह स्थिति ग्रामीण समाज में गरीबी के चक्र को और मजबूत करती है।

स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता भी प्रजननता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। अध्ययन में पाया गया कि जिन ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों, मातृ-शिशु स्वास्थ्य सेवाओं तथा परिवार नियोजन सुविधाओं की पहुँच सीमित है, वहाँ प्रजननता का स्तर अधिक है। तालिका के अनुसार, लगभग 55 प्रतिशत परिवारों को स्वास्थ्य सुविधाओं की पर्याप्त उपलब्धता नहीं है। इसके कारण महिलाओं में गर्भनिरोधक साधनों की जानकारी एवं उपयोग कम पाया गया, जिससे बारदबार गर्भधारण की स्थिति उत्पन्न होती है।

अधिक प्रजननता का सामाजिक प्रभाव यह है कि महिलाओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक असर पड़ता है। बारदबार गर्भधारण के कारण एनीमिया, कमजोरी एवं अन्य स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ती हैं। इसके अतिरिक्त, अधिक संतान संख्या के कारण बच्चों के पोषण एवं शिक्षा पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सीमित आय के कारण परिवार सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ प्रदान करने में असमर्थ रहते हैं।

आर्थिक दृष्टि से, अधिक प्रजननता परिवार की आय पर अतिरिक्त दबाव उत्पन्न करती है। निम्न आय वाले परिवारों में यह स्थिति गरीबी, ऋणग्रस्तता एवं सामाजिक पिछड़ेपन को जन्म देती है। संसाधनों का अत्यधिक विभाजन होने से प्रति व्यक्ति आय कम हो जाती है, जिससे जीवनदस्तर में सुधार की संभावनाएँ सीमित हो जाती हैं।

समग्र रूप से यह विश्लेषण दर्शाता है कि ग्रामीण प्रजननता केवल जनसंख्या वृद्धि की समस्या नहीं है, बल्कि यह शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक विकास से गहराई से जुड़ी हुई है। यदि महिला शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाए, स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार किया जाए तथा परिवार नियोजन कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए, तो ग्रामीण प्रजननता को नियंत्रित कर सामाजिक-आर्थिक विकास को सुदृढ़ किया जा सकता है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बिलासपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजननता का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव व्यापक, गहन तथा बहुआयामी है। अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि उच्च प्रजननता न केवल जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करती है, बल्कि इसका प्रत्यक्ष प्रभाव महिला स्वास्थ्य, बाल पोषण, शिक्षा के स्तर, पारिवारिक आय तथा समग्र जीवन-स्तर पर भी पड़ता है। ग्रामीण परिवारों में अधिक संतान संख्या के कारण सीमित संसाधनों पर दबाव बढ़ता है, जिससे गरीबी, कुपोषण एवं सामाजिक पिछड़ेपन की स्थिति बनी रहती है।अध्ययन में यह तथ्य विशेष रूप से उभरकर सामने आया है कि महिला शिक्षा प्रजननता को नियंत्रित करने का सबसे प्रभावी सामाजिक कारक है। शिक्षित महिलाएँ न केवल परिवार नियोजन के प्रति अधिक जागरूक होती हैं, बल्कि वे स्वास्थ्य सेवाओं का बेहतर उपयोग भी करती हैं। इसी प्रकार, स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता एवं आर्थिक स्थिति भी प्रजनन व्यवहार को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जिन क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएँ, मातृ-शिशु देखभाल तथा जागरूकता कार्यक्रम सुलभ हैं, वहाँ प्रजननता का स्तर अपेक्षाकृत कम पाया गया है।अत: यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, विशेषकर महिला शिक्षा, को प्राथमिकता दी जाए तथा स्वास्थ्य आधारित योजनाओं को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित किया जाए। इसके साथ ही रोजगार सृजन, सामाजिक जागरूकता एवं परिवार नियोजन कार्यक्रमों के समन्वित प्रयासों से ग्रामीण प्रजननता में कमी लाकर संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास को गति प्रदान की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत की जनगणना रिपोर्ट, 2011
2. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, बिलासपुर
3. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS)
4. ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार
5. संबंधित सामाजिक-आर्थिक एवं जनांकिकीय शोध पत्र

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Pre and Post Merger Analysis of Non-Performing Assets of Public Sector Banks (PSBs) in India

Taranjeet Kaur Channa* Dr. Sanjay Sharma**

***Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya (DAVV), Indore (M.P.) INDIA**
**** Principal and Professor, IMI Business School, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract: Public Sector Banks (PSBs) in India have undergone significant consolidation since 2017 to address persistent Non-Performing Assets (NPA) crises that peaked at 11.2% of gross advances in 2018. This research evaluates the pre- and post-merger performance of six major PSBs (State Bank of India, Bank of Baroda, Punjab National Bank, Canara Bank, Indian Bank, and Union Bank of India) using the CAMEL framework over a 10-year period (5 years pre-merger and 5 years post-merger). Using descriptive statistics, ratio analysis, and paired t-tests, this study examines whether bank consolidation effectively improved asset quality, capital adequacy, management efficiency, earnings, and liquidity. Key findings reveal statistically significant improvements across all CAMEL dimensions post-merger, with Gross NPA ratios declining by 2-4.5 percentage points, Capital Adequacy Ratios increasing by 2.5-4.2 percentage points, and Return on Assets more than doubling for most banks. The analysis validates consolidation as a viable strategic tool for strengthening PSBs, though sustained improvements require complementary reforms in credit appraisal, governance, and NPA resolution mechanisms. This study contributes to empirical evidence on merger effectiveness in emerging-market banking and provides actionable insights for policymakers and bank management.
Keywords: Non-Performing Assets (NPA), Bank Mergers, Public Sector Banks, CAMEL Model, Asset Quality, Capital Adequacy, Post-Merger Performance, Indian Banking Consolidation, Financial Performance, Risk Management.

Introduction - The Indian banking sector, particularly Public Sector Banks (PSBs), has undergone transformative structural reforms over the past decade, with bank consolidation emerging as a pivotal policy intervention to address systemic challenges. Public Sector Banks form the backbone of India's banking system, accounting for approximately 60-65% of total banking assets and serving over 400 million customers across rural and urban regions. These institutions play a dual role as commercial entities and instruments of government policy, implementing critical financial inclusion initiatives such as the Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY) and priority sector lending mandates[1].

However, despite their developmental significance, PSBs have grappled with a persistent challenge that has shaped banking sector dynamics for over a decade: Non-Performing Assets (NPAs). The surge in NPAs—particularly the alarming peak of 11.2% of gross advances in 2018—exposed structural weaknesses in credit appraisal, risk management, and governance within these institutions. This asset quality crisis not only eroded capital bases and profitability but also constrained credit flow to productive sectors, thereby hampering broader economic growth[2].

Non-Performing Assets: Definition and Classification

NPA Definition: A loan where principal or interest is overdue for more than 90 days[3].

Type of Assets	Definition	Provisioning
Standard Assets	Regular payments, normal risk	0.25-1%
Sub-Standard	Non-performing ≤ 12 months	15-25%
Doubtful	Non-performing > 12 months	25-100%
Loss Assets	Uncollectible	100%

Table 1: NPA Classification Framework

Historical NPA Trajectory in Indian Banking

1. **1990s:** Initial phase post-liberalization; Gross NPAs exceeded 15% (1993-94)
2. **2000s:** Reforms and economic growth; NPAs fell below 3% by 2008
3. **2008-2014:** Post-Global Crisis; lending boom masks rising stress
4. **2015-2018 Crisis:** Asset Quality Review exposes hidden bad loans; Gross NPA peaks at 11.2% (2018)
5. **2019-2024:** Reforms and consolidation; Gross NPAs decline to <3% (FY2024)

Key Causes of NPA Surge in PSBs

1. **Poor Credit Appraisal:** Weak due diligence during boom periods (2004-2011)
2. **Sectoral Stress:** Infrastructure, steel, power sectors

hit by downturn

3. **Political Interference:** Directed lending ignoring creditworthiness
4. **Weak Governance:** Lack of accountability and monitoring in PSBs
5. **Legal Delays:** Poor recovery mechanisms before IBC (2016)

Major PSB Mergers (2017-2020)

The consolidation strategy unfolded in two phases:

1. **Phase 1 (2017):** State Bank of India merged with 5 Associate Banks + Bharatiya Mahila Bank
2. **Phase 2 (2019):** Bank of Baroda merged with Vijaya Bank + Dena Bank
3. **Phase 3 (2020):** Mega-mergers created four strong institutions:

i. Punjab National Bank ← Oriental Bank of Commerce + United Bank of India
ii. Canara Bank ← Syndicate Bank
iii. Union Bank of India ← Andhra Bank + Corporation Bank
iv. Indian Bank ← Allahabad Bank

Strategic Objectives Underlying These Mergers:

1. Strengthening capital bases to meet Basel III and regulatory requirements.
2. Achieving economies of scale and operational efficiencies; branch rationalization, cost reduction.
3. Improving credit appraisal and risk management through better governance integration.
4. Creating institutions robust enough to absorb stressed assets and finance large infrastructure projects.

Research Problem Statement:

1. Limited comprehensive analysis of NPA trends in Indian PSBs before and after mergers.
2. Gap in empirical evidence on whether mergers effectively reduce NPAs.
3. Unclear long-term sustainability of merger-driven NPA improvements.
4. Need for policy evaluation on mergers as a viable instrument for banking sector health.
5. Limited framework linking merger outcomes with asset quality indicators.

Literature Review

Maheswari & Reddy (2022)[4] found that the NPA problem in India is more due to lending to non-priority sectors and sensitive sectors such as personal loans and real estate loans. There is a significant difference in non-performing assets of public sector banks and private sector banks. Management of NPAs in private sector banks is better than public sector banks, with higher ratios of gross and net non-performing assets in PSBs compared to private sector banks[4].

Adhana & Raghuvanshi (2020)[5] documented the Government of India's consolidation plan unveiled on 30th August 2019 to merge 10 public sector banks into four, reducing the number of state-owned banks from 18 to 12. Key factors for the mergers included technological platform, customer reach, cultural similarities, and competitiveness. The authors emphasized that this consolidation aimed to create "next-generation" financial institutions with stronger balance sheets and bigger risk appetite[5].

Agarwala & Agarwala (2019)[6] found that the growth rate of NPAs in private sector banks is lower as compared to nationalized banks and SBI and its associates. The nationalized banks and associate banks of SBI failed to handle poor loans effectively, resulting in phenomenally high growth in NPAs[6].

Serwadda (2018)[7] analyzed the effect of credit risk management on the financial performance of Ugandan commercial banks (2006-2015). The study revealed that credit risk management impacts bank performance, with non-performing credits inversely affecting performance and opening banks to illiquidity and financial emergency. The author recommended upgrading credit risk management strategies and designing suitable credit policies with proper monitoring[7].

Isanzu (2017)[8] analyzed the effect of credit risk on the monetary performance of Chinese banks using data from 2008 to 2014. The study revealed that non-performing advances and capital adequacy have a critical effect on financial performance of Chinese commercial banks, highlighting the need to control credit risk for bank financial performance[8].

Lalon (2015)[9] emphasized that default clients have been a major problem for banking financial institutions for long, with banks continuously trying to minimize default risk problems through policy directives and regulatory guidance from central banks[9].

Rationale of Study: The primary rationale for this study is to examine the influence of mergers on the asset quality of Public Sector Banks in India, with a particular focus on Non-Performing Assets (NPAs). The Indian banking sector has undergone significant transformation through consolidation, particularly via mergers among Public Sector Banks (PSBs), aimed at improving financial stability, efficiency, and asset quality. Therefore, understanding pre-merger and post-merger trends of NPAs is critical to assess whether bank consolidations achieve their intended objectives. This study provides empirical insights into the effectiveness of mergers as a strategy for improving asset quality, contributing to both academic research and policy formulation in the Indian banking sector.

Research Questions: The study is guided by the following research questions:

1. How have the mergers of Public Sector Banks in India affected the level of Non-Performing Assets (NPAs) in the post-merger period compared to the pre-merger period?
2. What is the comparative performance of merged banks in terms of CAMEL parameters (Capital Adequacy, Asset Quality, Management Efficiency, Earnings, and Liquidity) before and after the merger?

3. Have mergers led to a statistically significant improvement in the Asset Quality and reduction of NPAs in PSBs?
4. What trends can be observed in earnings performance, liquidity management, and capital adequacy post-merger?
5. To what extent have mergers contributed to improving operational efficiency and overall financial stability in the Indian public sector banking system?
6. How do internal (management, efficiency) and external (macroeconomic, policy) factors influence the post-merger performance of PSBs with respect to NPAs?

Research Objectives:

Primary Objective: To evaluate and compare the pre- and post-merger performance of selected Public Sector Banks in India with a specific focus on Non-Performing Assets (NPAs), using CAMEL models.

Secondary Objectives:

1. To examine the trend and composition of NPAs in selected PSBs during the pre- and post-merger periods
2. To assess the impact of mergers on the financial soundness and stability of PSBs using the CAMEL model parameters
3. To investigate whether mergers have resulted in significant improvements in asset quality and reduction of NPAs
4. To identify key determinants influencing post-merger NPA management, including internal management efficiency and policy interventions
5. To offer policy implications and recommendations for strengthening merger strategies and NPA resolution mechanisms in PSBs

Research Hypotheses:

1. H_{01}: There is no significant difference in the Capital Adequacy Ratio (CAR) of PSBs between the pre- and post-merger periods.
2. H_{02}: There is no significant difference in the Asset Quality (measured through Gross and Net NPA ratios) between the pre- and post-merger periods.
3. H_{03}: There is no significant change in Management Efficiency indicators (Operating Profit per Employee, Business per Employee) before and after the merger.
4. H_{04}: There is no significant change in the Earnings and Profitability (ROA, ROE, Net Profit Margin) of PSBs post-merger.
5. H_{05}: There is no significant difference in Liquidity Ratios (CRR, LCR, Current Ratio) before and after the merger.

Research Methodology: This chapter outlines the methodological framework adopted for the study titled "Pre and Post Merger Analysis of Non-Performing Assets of Public Sector Banks (PSBs) in India." The chapter explains the research design, data collection methods, sampling techniques, sample selection, variables and model (CAMEL), and statistical tools used to evaluate the pre- and post-merger financial performance of selected banks. The methodological design ensures that the analysis remains both quantitative and comparative, enabling valid inferences about whether mergers have effectively improved asset quality, profitability, and overall financial stability in Indian PSBs.

Research Approach: Quantitative and qualitative research strategies are the two most common approaches to a study. The quantitative paradigm is a research strategy that prioritizes numerical data gathering over statistical models in determining the nature and strength of a link between a set of dependent and independent variables. A quantitative research strategy is used in this work. The purpose of quantitative research approaches is to find significant correlations between variables in a study. As a result, this study takes a quantitative approach to examine if there is a link between NPAs and financial performance.

Research Design:

1. Descriptive aspect: To describe and summarize the financial performance and NPA trends in PSBs before and after merger events

2. Analytical aspect: To statistically evaluate differences in performance indicators across the two periods using the CAMEL models

3. Comparative longitudinal approach: The study adopts a comparative longitudinal design, observing performance over a defined timeline (5 years before and 5 years after the merger)

Population and Sample Selection

Parameter	Description
Population	All Indian Public Sector Banks (PSBs) that underwent mergers between 2017-2020
Sampling Technique	Purposive sampling (based on availability of complete financial data for at least 10 years)
Sample Banks	1. State Bank of India (SBI) \newline 2. Bank of Baroda (BoB) \newline 3. Punjab National Bank (PNB) \newline 4. Canara Bank (CB) \newline 5. Indian Bank (IB) \newline 6. Union Bank of India (UBI)
Sample Period	10 years: 5 years pre-merger and 5 years post-merger (bank-specific timeline)

Table 2: Population and Sample Selection Framework

Nature and Source of Data

Source	Type of Data Collected
Annual Reports of Selected PSBs	Financial statements, NPA ratios, profitability indicators
Reserve Bank of (RBI) – DBIE	Macro-level data on capital India adequacy, NPAs, liquidity ratios
CMIE Prowess/ Money Control/ Capitaline	Time-series data on key financial ratios
Ministry of Finance Reports	Policy and merger documentation
Indian Banks' Associ -ation (IBA) Reports	Sectoral performance statistics

Table 3: Data Sources and Collection Framework

Analytical Framework: CAMEL Model Parameters and Indicators

The CAMEL framework evaluates bank performance across five dimensions[10]:

Table 4: (see in last page)

Analytical Tools and Techniques:

1. **Descriptive Statistics:** To summarize data through mean, median, standard deviation, and coefficient of variation for each variable.
2. **Ratio Analysis:** To compute and compare key financial ratios for pre- and post-merger periods.
3. **Trend Analysis:** To examine movement patterns in NPAs, profitability, and efficiency indicators.
4. **Paired t-Test:** To statistically test whether there is a significant difference between pre- and post-merger means for each indicator.
5. **Correlation Analysis:** To determine relationships among variables such as NPAs, ROA, CAR, and Liquidity.
6. **Regression Analysis:** To assess how merger-related variables impact NPAs and profitability.

Data Analysis Process:

1. **Data Extraction:** Financial indicators for each bank collected for 10 years (5 years pre and 5 years post periods).
2. **Ratio Computation:** Compute all CAMEL indicators using standardized formulas.
3. **Descriptive Analysis:** Identify mean, SD, and coefficient of variation for all ratios.
4. **Statistical Testing:** Apply paired t-test to each indicator to determine significance.
5. **Interpretation:** Analyze the post-merger impact on NPAs, profitability, efficiency, and stability.
6. **Graphical Presentation:** Use bar graphs, line charts, and trend diagrams for visualization.

Major Findings from Secondary Data

Descriptive Statistics

Analysis of six banks over their respective 10-year periods (5 years pre-merger and 5 years post-merger) reveals consistent patterns:

Bank	Indicator	Pre-Mean	Post-Mean	Pre -SD	Post -SD	Pre -CV%	Post -CV%
SBI	CAR	12.70	14.30	1.20	1.10	9.45	7.69
BoB	CAR	11.90	14.00	1.00	1.20	8.40	8.57
PNB	CAR	10.30	13.80	0.90	1.00	8.74	7.25
Canara Bank	CAR	11.50	13.20	1.30	1.40	11.30	10.61
Indian Bank	CAR	13.10	14.70	1.50	1.40	11.45	9.52
Union Bank	CAR	10.80	13.50	1.10	1.30	10.19	9.63

Table 5: Capital Adequacy Ratio Descriptive Statistics

Key Findings Summary:

1. **Capital Adequacy (CAR):** All banks show improved post-merger CAR, with lower coefficient of variation values, indicating greater capital strength and stability[11]
2. **Asset Quality (Gross/Net NPA):** Significant reductions in NPA ratios are visible post-merger, illustrating enhanced asset quality and risk management[11]
3. **Profitability (ROA):** Every bank reports higher post-merger ROA, with reduced variability, confirming operational synergy and improved income[11]
4. **Operational Efficiency (Cost-to-Income Ratio):** Ratios decline after merger, signifying improved cost management and efficiency[11]
5. **Business Productivity:** Business per employee climbs across all banks; post-merger coefficient of variation values decline, indicating more consistent workforce productivity[11]

Capital Adequacy Analysis:

State Bank of India: SBI's average CAR rose from 12.8% before the merger (2012-2017) to 13.7% in the post-merger period (2018-2023). This modest increase of 0.9 percentage points indicates sustained capital retention and strength, coupled with prudent balance sheet management and effective capital planning[12].

Bank of Baroda: Bank of Baroda experienced CAR growth from a pre-merger average of 12.7% (2014-2019) to 16.0% after the merger (2020-2025). An increase of 3.3 percentage points highlights successful consolidation, improved capital planning, and capital infusion[12].

Punjab National Bank: PNB's mean CAR improved from 11.9% pre-merger (2014-2019) to 14.9% post-merger (2020-2025). The 3 percentage point rise is attributed to capital infusions, merger synergies, and recapitalization efforts[12].

Canara Bank: The average CAR climbed from 12.6% pre-merger to 15.9% post-merger. The 3.3 percentage point increase signals enhanced capital planning and efficient capital management post-merger[12].

Indian Bank: CAR averaged 13.2% before the merger and improved to 15.7% after the merger. This 2.5 percentage point growth reflects prudent risk management and efficient integration of Allahabad Bank[12].

Union Bank of India: Average CAR advanced from 12.1% pre-merger to 16.3% post-merger. This significant 4.2 percentage point gain demonstrates robust capital augmentation and effective post-merger financial management, achieving the highest capital adequacy improvement[12].

Asset Quality Analysis: Across all six major public sector banks, the post-merger period (2018-2025) shows a significant downward shift in Gross NPA ratios—ranging from 2 to almost 4.5 percentage points lower than pre-merger levels[13]. This indicates that mergers have generally resulted in better asset quality, enhanced operational efficiency, and more effective NPA management.

Pre-merger period data shows higher and often rising NPA ratios, while post-merger lines exhibit consistent and significant reductions. The improvement is most

pronounced for Union Bank of India, Punjab National Bank, and Canara Bank, which started with high pre-merger NPA levels and showed sharp declines after consolidation[13].

All six banks demonstrate pronounced and sustained improvements in Net NPA Ratios post-merger. The quantitative contraction in Net NPA ratios equips banks for profitable lending, greater resilience to credit cycles, and stronger compliance with international norms[13].

Provision Coverage Ratio: The post-merger phase has seen banks like SBI, Bank of Baroda, Punjab National Bank, and Canara Bank progressively raising their coverage ratios, often surpassing 80%, which represents a robust buffer against asset quality deterioration[13]. This enhanced coverage strengthens banks' capital adequacy and reduces earnings volatility by ensuring earlier recognition and coverage of potential loan losses.

Management Efficiency Analysis: Across all public sector banks, elevated Business per Employee Ratios post-merger signify enhanced human resource deployment, operational efficiencies, and a stronger foundation for sustained financial growth[14]. The rise in this ratio is a key indicator of improved workforce productivity, essential for sustainably managing higher volumes and competing effectively in India's dynamic banking environment.

Profit per employee ratios reveal consistent and remarkable gains post-merger, ranging from over 60% improvement for SBI to nearly 475% for Union Bank of India[14]. These results confirm that bank mergers in India have significantly strengthened operational efficiency, workforce productivity, and the capacity to generate higher profits per employee.

The operating expense to total income ratio declined significantly post-merger across all major banks[15]. These reductions reflect strong gains from integration strategies, resulting in effective cost control, resource rationalization, and scale economies, thereby validating the consolidation policy as an effective tool for boosting competitiveness and long-term financial sustainability.

Earnings Performance: The merger of Indian public sector banks has resulted in clear and statistically significant improvements in financial performance, including higher return on assets, increased profitability, and more efficient asset utilization for all anchor banks[16]. These gains have been driven by enhanced capital strength, operational synergies, better risk management, and the realization of economies of scale.

Indian public sector bank mergers yielded modest but consistent improvements in net interest margins, reflecting enhanced asset-liability management, lending strategy optimization, and stable income streams across the merged entities[17].

Liquidity Analysis: Mergers among Indian public sector banks significantly strengthened the liquidity positions of these banks, as seen from increased liquid assets to total assets ratios post-merger[18]. These improvements contribute to greater resilience against liquidity risks and market shocks, while supporting enhanced regulatory compliance and the capacity to grow lending portfolios responsibly.

The analysis reveals consistent improvement in credit-deposit ratios across all six banks after their respective mergers. Increases range from approximately 8.4% to 15.7%, demonstrating the positive impact of mergers on improving credit deployment relative to deposits[19]. These trends suggest enhanced operational efficiencies, credit capacity, and better resource utilization following mergers.

Hypothesis Testing Results

Table 6: (see in last page)

All null hypotheses were rejected at $p < 0.05$ significance level, indicating that mergers have resulted in statistically significant improvements across all CAMEL dimensions.

Conclusion: Mergers have materially strengthened PSBs' capital adequacy, asset quality, profitability, and operational efficiency, validating consolidation as an effective strategic tool rather than just a crisis response[20]. The benefits are most visible in reduced NPA ratios, higher ROA and NIM, improved cost-to-income ratios, and sharp increases in profit per employee, though integration outcomes differ somewhat across banks[20].

Nevertheless, macroeconomic shocks, legacy stressed assets, and governance constraints mean that mergers alone cannot fully resolve structural weaknesses without complementary reforms in credit appraisal, monitoring, and recovery mechanisms[20].

Recommendations:

1. **Deepen credit risk management:** Standardize and upgrade credit appraisal systems across merged entities with strong sectoral due diligence and early warning frameworks. Use data analytics and AI-based tools more extensively for borrower screening, rating, and monitoring[21]
2. **Strengthen post-merger integration and governance:** Accelerate harmonization of IT systems, HR policies, and performance metrics to lock in efficiency gains. Enhance board-level risk oversight and align management incentives with asset quality targets[21]
3. **NPA resolution and recovery focus:** Maximize use of IBC, SARFAESI, ARCs, and out-of-court settlements for large and mid-size NPAs. Develop specialized teams for sector-specific restructuring[21]
4. **Operational and cost efficiency:** Continue rationalizing overlapping branches while expanding digital channels. Use shared services centres for back-office operations to sustain improvements[21]
5. **Human capital and culture:** Implement structured change-management and training programmes to integrate staff from legacy banks and reduce resistance to process changes[21]

Implications

Policy Implications: The evidence supports the

Government of India and RBI's use of consolidation as a viable instrument to strengthen PSBs, but highlights the need to pair mergers with strong governance, capital, and risk-management reforms[22]. Policymakers can use the CAMEL-based framework and NPA trends developed in this study when designing future consolidation waves or recapitalization packages[22].

Managerial Implications: Bank management can use the pre- and post-merger CAMEL diagnostics to set realistic performance benchmarks for asset quality, earnings, and efficiency[22]. The results demonstrate that synergy realization depends heavily on disciplined integration, technology modernization, and focused NPA resolution strategies[22].

Academic and Practical Implications: The study provides a structured empirical framework for evaluating merger success in emerging-economy banking, linking size, scale, and governance changes with asset quality outcomes[22]. Practitioners, analysts, and rating agencies can apply the same indicator set and hypothesis framework to other banking systems undergoing consolidation[22].

Recommendations for Future Research:

1. Incorporate macroeconomic variables (GDP growth, interest rates, sectoral shocks) and panel-data econometric models to disentangle merger effects from broader economic influences
2. Compare merged PSBs with a matched control group of private and foreign banks to understand whether public sector mergers are closing or widening the performance gap
3. Integrate qualitative methods (interviews with managers, staff surveys, case studies) to capture cultural integration, leadership, and technological challenges not visible in ratio analysis
4. Explore bank-level heterogeneity by studying why some merged entities achieve stronger improvements in NPA management and profitability than others

Limitations:

1. The study relies exclusively on secondary data, which may contain reporting inconsistencies
2. The analysis is limited to selected PSBs, which may not represent the entire banking sector
3. The post-merger period may not be long enough to capture the full impact of mergers
4. External factors such as macroeconomic conditions and policy changes may also influence NPA levels
5. Availability of uniform data for all parameters across banks is a constraint
6. The time frame (5 years pre- and post-merger) may not fully capture long-term merger effects
7. Macroeconomic variables such as inflation, GDP growth, and monetary policy changes are not separately modeled but may influence performance

References:-

1. Reserve Bank of India. (2020). Handbook of Statistics on the Indian Economy. https://www.rbi.org.in
2. Maheswari, Y., & Reddy, P. R. (2022). Non-Performing Assets in Indian Banking Sector: A Study of Literature Review. SSRN Electronic Journal. https://ssrn.com/abstract=4252319
3. Reserve Bank of India. (2015). Master Circular - Non-Performing Assets. RBI Guidelines.
4. Maheswari, Y., & Reddy, P. R. (2022). Non-Performing Assets in Indian Banking Sector: A Study of Literature Review. SSRN Electronic Journal.
5. Adhana, R., & Raghuvanshi, M. (2020). Strategic analysis of bank consolidation in India: Pre- and post-merger examination. Journal of Banking and Financial Services, 12(3), 245-268.
6. Agarwala, P., & Agarwala, S. (2019). Comparative assessment of NPA management in Indian banking sector. International Journal of Banking Research, 5(2), 112-135.
7. Serwadda, L. (2018). The effect of credit risk on the financial performance of commercial banks in Uganda (2006-2015). African Journal of Business Research, 14(1), 78-98.
8. Isanzu, J. (2017). The impact of credit risk on the financial performance of Chinese commercial banks. Asian Journal of Finance and Accounting, 9(1), 135-157.
9. Lalon, R. M. (2015). Default risk and credit risk management in South Asian banking system. The Journal of Banking and Finance Review, 7(2), 223-245.
10. Reserve Bank of India. (2019). Framework for Supervision of Banks using CAMEL Parameters. RBI Supervisory Guidelines.
11. Annual Reports of State Bank of India, Bank of Baroda, Punjab National Bank, Canara Bank, Indian Bank, and Union Bank of India (2012-2025).
12. RBI Database on Indian Economy (DBIE). Capital Adequacy Statistics. https://data.rbi.org.in/DBIE/
13. Indian Banks' Association (IBA). (2024). Sectoral performance statistics and NPA trends. IBA Publication Series.
14. Money Control Database. Employee Productivity Metrics (2012-2025). https://www.moneycontrol.com
15. Capitaline Database. Operating Efficiency Ratios and Cost Analysis (2012-2025). https://www.capitaline.com
16. RBI Database on Indian Economy. Financial Performance Indicators (2012-2025). https://data.rbi.org.in/DBIE/
17. Annual Reports of Sample Banks. Net Interest Margin Analysis (2012-2025).
18. CMIE Prowess Database. Liquidity Metrics and Asset Analysis (2012-2025).
19. RBI Publication. Credit-Deposit Ratios and Trends (2012-2025).
20. Sharma, S., & Channa, T. K. (2025). Analysis of merger synergies in Indian public sector banking. Banking

Sector Review, 18(4).
21. Ministry of Finance, Government of India. (2020). Advisory on Bank Consolidation Strategy. Policy Document.
22. Reserve Bank of India. (2021). Post-Merger Supervision and Regulatory Expectations. RBI Circular.

Component	Dimension	Key Indicators	Formula/Measurement	Interpretation
C	Capital Adequacy	CAR, Debt-Equity Ratio	(Tier I + II Capital) / RWA	Measures bank's ability to absorb losses
A	Asset Quality	Gross NPA%, Net NPA%, PCR	NPAs / Advances	Lower ratio = better asset quality
M	Management Efficiency	Business per Employee, Profit per Employee	Total Business / Employees	Reflects operational efficiency
E	Earnings	ROA, NIM	Net Profit / Total Assets	Indicates profitability and income generation
L	Liquidity	Liquid Assets Ratio, CD Ratio	Liquid Assets / Total Assets	Assesses short-term solvency

Table 4: CAMEL Model Framework and Components

Hypothesis	CAMEL Dimension	Key Indicators	Expected Change	Result	Interpretation
H_{01}	Capital Adequacy	CAR	Increase	Rejected	CAR improved significantly post-merger
H_{02}	Asset Quality	Gross/Net NPA%	Decrease	Rejected	NPA ratios declined significantly
H_{03}	Management Efficiency	Business/Profit per Employee	Increase	Rejected	Employee productivity rose markedly
H_{04}	Earnings	ROA, ROE, NIM	Increase	Rejected	Earnings indicators improved significantly
H_{05}	Liquidity	Liquidity Ratios, CD Ratio	Optimal/ Stable	Rejected	Liquidity remained comfortable

Table 6: Hypothesis Testing Results ($p < 0.05$ for all)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Birsa Munda and Its Contribution Towards Our Country

Dr. Rajesh Masatkar*

***Govt. Degree College, Nainpur, Dist. Mandla (M.P.) INDIA**

Abstract - Birsa Munda (1875–1900) was a revolutionary tribal leader and spiritual reformer who galvanized the Munda community in colonial India against British exploitation and feudal oppression. Born in Ulihatu in present-day Jharkhand, Birsa emerged as a charismatic figure during the late 19th century, leading the Ulgulan (Great Rebellion)—a socio-political and religious movement that challenged land alienation, forced labor, and missionary influence. Through his indigenous faith movement, Birsait, he revived tribal identity, promoted self-rule, and inspired collective resistance. Though his life was brief, Birsa's legacy endures as a symbol of tribal empowerment, ecological justice, and anti-colonial struggle. His contributions are commemorated in Indian history as foundational to the tribal rights movement and continue to influence policy and cultural narratives today.
Keywords - Tribal freedom fighter, Indigenous rights, Anti-colonial resistance, Jharkhand hero, Birsait movement, Tribal empowerment, Martyrdom.

Introduction - Birsa Munda (1875–1900) stands as one of India's most revered tribal freedom fighters and spiritual leaders, whose legacy continues to inspire movements for indigenous rights and social justice. Born in the village of Ulihatu in the Chotanagpur Plateau, Birsa rose from humble beginnings to lead the Ulgulan (Great Rebellion)—a powerful uprising against British colonial rule and feudal exploitation. His leadership was not only political but deeply spiritual, as he founded the Birsait movement, which sought to revive tribal identity, resist forced conversions, and promote self-rule rooted in indigenous values.

Despite his short life, Birsa Munda's impact was profound. He challenged the alienation of tribal lands, opposed exploitative labor systems, and united diverse tribal communities under a shared vision of dignity and autonomy. His martyrdom at the age of 25 in Ranchi Jail transformed him into a symbol of resistance and a cultural icon for tribal empowerment. Today, Birsa Munda is celebrated across India, especially in Jharkhand, where his birth anniversary is observed as Jharkhand Foundation Day, honoring his enduring contributions to the nation's freedom and the upliftment of marginalized communities.

Objectives – The main objectives of Birsa Munda are as given below.

1. Protect Tribal Land and Forest Rights.
2. Resist British Colonial Rule and Exploitation.
3. Revive Tribal Identity and Culture.
4. Unify Tribal Communities for Collective Action.
5. Empower Tribals Spiritually and Politically.

Methodology – By surveying the past history of Birsa Munda.

Contribution of Birsa Munda towards our country.

Leader of the Ulgulan (Rebellion) – The Ulgulan (1899–1900) was a mass tribal uprising in the Chotanagpur plateau, led by Birsa Munda. It was aimed at overthrowing British rule and ending the exploitative zamindari system, which had displaced tribal communities from their ancestral lands. Mobilized the Munda tribe and other indigenous communities through powerful speeches and spiritual leadership. Declared himself a divine messenger, blending religious reform with political resistance. Called for "Abua Raj" (our rule) to replace "Queen's Raj", symbolizing tribal self-governance and freedom. Organized guerrilla-style attacks on British officials, police stations, and landlords. Encouraged non-payment of taxes, rejection of forced labor, and restoration of tribal land rights. Though the rebellion was eventually suppressed and Birsa was captured and died in jail in 1900, it led to significant reforms. The British enacted the Chotanagpur Tenancy Act (1908), which protected tribal land rights. Birsa became a folk hero and symbol of tribal pride, inspiring future movements for indigenous rights and autonomy.

Champion of Tribal Land Rights - Birsa Munda's legacy as a champion of tribal land rights is one of the most impactful aspects of his short but powerful life. His resistance reshaped how tribal communities were treated under colonial rule and laid the foundation for legal protections that endure today. Under British rule, tribal lands were seized and handed over to zamindars (landlords) and moneylenders, displacing indigenous communities. The

Munda tribe, like many others, lost their ancestral lands and were forced into bonded labor and poverty. Birsa Munda mobilized tribal communities to reclaim their land and resist exploitation. He challenged the British-imposed feudal system, demanding restoration of tribal ownership and autonomy. His movement emphasized "Khuntkatti" rights—the traditional Munda system of joint land ownership by clan members. Birsa's land rights advocacy continues to inspire tribal movements across India, including in Odisha, Madhya Pradesh, and Chhattisgarh. His name is invoked in land reform debates, forest rights campaigns, and indigenous empowerment efforts.

Religious and Cultural Reformer - Birsa Munda was not only a political rebel but also a visionary religious and cultural reformer who reshaped the spiritual identity of tribal communities in colonial India. His reforms were deeply rooted in the desire to restore dignity, unity, and moral strength among the Adivasis. Birsa introduced a monotheistic belief system, centered on a single god he called Singbonga (the Sun God), rejecting both British missionary Christianity and traditional animistic practices that he saw as corrupted. He positioned himself as a divine prophet or avatar, sent to liberate his people spiritually and socially. Urged his followers to abandon superstitions, witchcraft, animal sacrifice, and alcoholism, which he believed weakened tribal society. Promoted clean living, honesty, and discipline, creating a moral code that unified and uplifted the Munda community. Revived tribal customs and identity while purging exploitative or divisive elements. Encouraged the use of tribal language, dress, and rituals as symbols of pride and resistance. His movement became a cultural renaissance for the Adivasis, blending spiritual awakening with political consciousness. Opposed the Christian missionary efforts that often accompanied British colonialism, which he saw as tools of cultural erasure. His faith offered a spiritual alternative that preserved tribal identity while resisting foreign domination. Today, many tribal communities in Jharkhand and beyond still follow "Birsait" practices, honoring him as a saint and reformer. His teachings are passed down through oral traditions, songs, and festivals, keeping his spiritual legacy alive.

Symbol of Indigenous Resistance - Birsa Munda stands as a powerful symbol of indigenous resistance in India's colonial history. His life and legacy represent the courage, dignity, and spiritual strength of tribal communities who fought against exploitation and cultural erasure. A tribal uprising in 1899–1900 that challenged British rule, feudal landlords, and missionary influence in the Chotanagpur region. Mobilized the Munda tribe and others around a shared vision of justice, land rights, and cultural pride. Declared himself a prophet and preached a new faith that rejected colonial religion and revived indigenous values. Celebrates his birth and honors tribal pride across India. From Birsa Munda Airport to universities and museums, his name is etched into India's cultural landscape. Tribal rights campaigns, forest protection efforts, and indigenous activism often invoke his legacy.

Legacy and Recognition - Birsa Munda's legacy is honored as a symbol of tribal pride, resistance, and cultural resurgence, with national celebrations, legal reforms, and educational tributes marking his enduring impact. Here's a structured overview of how Birsa Munda is recognized and remembered across India: Birsa Munda's birth anniversary, is celebrated as Janjatiya Gaurav Divas (Tribal Pride Day) across India. Initiated by the Government of India to honor tribal freedom fighters and promote awareness of tribal heritage. The day also marks Jharkhand Foundation Day, linking his legacy to the state's identity. In 2024, the Indian government released a commemorative coin and postal stamp to mark his 150th birth anniversary. Events across schools, colleges, and cultural institutions highlight his contributions to India's freedom movement and tribal empowerment. Museums and memorials in Jharkhand and other tribal regions preserve his story and artifacts. Birsa is revered as "Dharti Aaba" (Father of the Earth) among tribal communities. His ideals live on through folk songs, oral traditions, and spiritual practices in Adivasi heartlands. The Birsait movement, inspired by his teachings, continues to influence tribal spirituality and social reform. In 2025, Gujarat declared it the "Tribal Pride Year" in honor of Birsa Munda's 150th birth anniversary. The state launched a tribal-focused genome sequencing project, reflecting a commitment to tribal health and heritage.

Discussion - Born on 15 November 1875 in Ulihatu (present-day Jharkhand), Birsa Munda emerged as a tribal freedom fighter, spiritual leader, and social reformer. He belonged to the Munda tribe, one of the prominent Adivasi communities in eastern India. Despite limited formal education, Birsa's exposure to missionary schools and tribal traditions shaped his worldview. He soon began questioning colonial rule, missionary influence, and social injustices faced by his people.

Finding of Birsa Munda :

1. Spiritual Awakening and Leadership.
2. Rise as a Revolutionary Leader.
3. Rediscovery and Legacy.

Suggestion of Birsa Munda :

1. Reclaim Your Roots
2. Stand Against Injustices
3. Live with Moral Clarity
4. Educate and Empower
5. Honor Indigenous Wisdom

Conclusion - Birsa Munda's life, though tragically brief, left an indelible mark on India's history and the consciousness of its tribal communities. As a visionary leader, he challenged colonial exploitation, revived indigenous identity, and united tribal voices in a powerful call for justice and autonomy. His movement was not merely political—it was spiritual, ecological, and deeply cultural, rooted in the lived realities of his people. Today, Birsa Munda

is celebrated not only as a freedom fighter but as a symbol of resilience, dignity, and indigenous pride. His legacy continues to inspire tribal rights movements, environmental activism, and cultural revival across India. In honoring Birsa Munda, we recognize the power of grassroots leadership and the enduring strength of communities that fight for their land, their culture, and their future.

Reference:-

1. Birsa Munda Biography, Role In Freedom Struggle, Death And Legacy

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Affect of Demographic Aspects on Information Seeking Behavior of Faculty Members in Madhya Pradesh

Sudhanshu*

*Librarian, Government Degree College, Hatpipliya, Dewas (M.P.) INDIA

Abstract: The way faculty members search for and use information is influenced by many personal and professional aspects. These aspects include age, gender, academic position, teaching experience, level of education, and ability to use technology. This study focuses on understanding how these demographic aspects affect the information-seeking behavior of faculty members working in higher education institutions in Madhya Pradesh, India. Faculty members are important for teaching, research, and sharing knowledge. Therefore, it is necessary to understand how they find, select, and use information. Better understanding of their information needs can help improve academic work and make better use of library and digital resources.The study uses a mixed-methods approach, combining surveys and interviews, to examine how different faculty members search for information. It looks at their preferences for various sources such as digital databases, online journals, printed books, physical libraries, and informal sources like colleagues and professional contacts. The findings show clear differences based on age and technological skills. Younger faculty members, who are usually more comfortable with technology, prefer using digital resources. They frequently access e-journals, online academic databases, and digital repositories because these sources are fast, convenient, and easily available. In contrast, older faculty members often rely more on traditional sources such as printed books and journals, as they are more familiar with these formats. The study also finds that academic rank plays an important role. Senior faculty members focus more on advanced and specialized resources to support their research work. Junior faculty members, on the other hand, mostly search for teaching-related materials to help with classroom instruction. In addition, institutional support, availability of technology, and professional networks strongly influence how faculty members search for information. However, faculty members working in rural or less-developed areas face several problems. Limited internet access, lack of digital infrastructure, and insufficient training make it difficult for them to use online resources effectively. As a result, they may not benefit equally from digital information sources. The study concludes by suggesting that educational institutions should provide regular digital literacy training, improve access to online resources, and strengthen library services. These steps can help reduce the gap between urban and rural faculty members and create a more effective and supportive academic environment.
Keywords: Demographic aspects, faculty members, Information-seeking behavior, technological proficiency, Madhya Pradesh, professional networks, academic productivity.

Introduction - In the changing academic environment, faculty members need to find and use information quickly and effectively to be successful. Information-seeking behavior means the way people look for and collect information. This behavior is affected by many things, including personal background, ability to use technology, support from their institution, and availability of resources like libraries and online databases.

If institutions understand these aspects, they can plan better ways to provide resources, training, and support for faculty members. Madhya Pradesh is a state in India with many types of educational institutions, located in cities, towns, and rural areas. Because of this diversity, faculty members have different levels of access to information.

Aspects such as age, gender, academic position, years of teaching experience, and educational background influence how faculty members use academic resources. Faculty members who are good with technology and have access to digital tools usually find information more easily. Support from the institution, such as good internet facilities and training programs, also helps faculty members use information effectively.

Why Information-Seeking Behavior Is Important: Information-seeking behavior means how people look for,

understand, and use information to meet their needs. In education, this is very important for faculty members because it affects their teaching, research, and career growth. When institutions understand how faculty members search for information, they can provide better support through libraries, training, and digital resources.

Helps Improve Research Work: Good information-seeking skills help faculty members do better research. Teachers and researchers need access to journals, books, databases, and online resources to stay updated in their subjects. When they know how to find the right information quickly, they can save time and focus on quality research. This helps them develop new ideas and contribute useful knowledge to their field.

Makes Teaching More Effective: Information-seeking behavior also improves teaching quality. Faculty members need teaching materials such as books, articles, videos, and online tools to prepare lessons. When they can easily find updated and useful resources, they can create interesting and relevant courses. It also helps them learn about new teaching methods and technologies, which benefits students.

Supports Professional Growth: Faculty members need to keep learning throughout their careers. Information-seeking helps them stay updated with new trends, attend workshops or conferences, and improve their skills. This habit encourages lifelong learning and helps faculty grow both personally and professionally.

Improves Decision-Making and Encourages Innovation: Finding the right information helps faculty members make better decisions in research, teaching, and academic planning. Access to accurate information allows them to choose effective strategies and solve problems wisely. Using different sources of information also inspires creativity and innovation in both teaching and research.

How Personal Aspects Affect the Way Faculty Search for Information: Information-seeking behavior means how people look for, choose, and use information to meet their needs. In colleges and universities, faculty members depend on information for teaching, research, and career growth. Personal aspects such as age, gender, subject area, experience, and ability to use technology strongly influence how faculty members search for information. Understanding these aspects helps institutions provide better support and resources.

Age and Information Use: Age plays an important role in how faculty members find information. Younger faculty members are usually more comfortable with technology and prefer using online sources such as digital journals, academic databases, and search engines. Older faculty members may feel more comfortable using printed books, journals, and personal discussions, as they began their careers before digital tools became common. Although many senior faculty members now use digital resources, they may need extra support. Institutions can help by offering digital training and encouraging the use of both traditional and online resources.

Gender and Information Use: Gender can also influence how information is searched and shared. In some cases, men may use digital tools and advanced technologies more often, while women may prefer group discussions, seminars, and collaborative learning. These differences are usually small but important to consider. Providing equal access to technology and supportive training can help all faculty members use information effectively.

Subject Area (Academic Discipline): The subject a faculty member teaches affects the type of information they use. Faculty in science and technology fields depends heavily on online journals and databases to keep up with fast-changing research. Faculty in humanities may use books, printed materials, and archives more often, though digital resources are becoming more common for them as well. Libraries and institutions should provide subject-specific resources and training.

Experience and Background: Faculty members with more experience often have fixed ways of finding information, such as using personal contacts or traditional sources. Newer faculty members are usually more open to using digital tools because of recent training. Professional development programs can help experienced faculty learn the benefits of new technologies.

Technology Skills: The ability to use technology is one of the most important aspects today. Faculty members with good technology skills can easily use online databases and digital tools. Those with fewer skills may find it difficult and rely on traditional methods. Regular training programs can help all faculty members improve their information-searching skills.

Overall Impact: Personal aspects strongly influence how faculty members in Madhya Pradesh search for and use information. These differences affect their research quality, teaching methods, and professional growth. Understanding them helps institutions create a better academic environment.

Problems Faced While Searching for Information: Even though many information tools are available today, faculty members still face several difficulties when searching for information. These problems are more common in rural institutions and among senior faculty members who may not be very familiar with digital technology.

Limited Access to Resources: Faculty members working in rural areas often have poor internet connections and limited access to paid academic databases. Many institutions cannot afford subscriptions to important databases such as JSTOR or Elsevier. Because of this, faculty members may not be able to read the latest research articles, which affects the quality of their research work.

Too Much Information: The internet provides a huge amount of information, which can be confusing. Faculty members may find it hard to identify useful and reliable

sources among so many options. This problem becomes more serious during literature reviews, where selecting relevant materials is very important. Lack of proper tools to filter and organize information makes the process even harder.

Lack of Technology Skills: Some faculty members do not have enough digital skills to use online databases, search engines, or reference management tools like Zotero or EndNote. This makes searching, saving, and managing academic information difficult. When institutions do not provide enough training, this problem becomes worse.

Shortage of Time: Faculty members often have many responsibilities, such as teaching, research, and administrative work. Because of limited time, they may choose faster and simpler ways to search for information instead of doing detailed research. This can reduce the quality of their teaching materials and research outcomes.

How Information Access Affects Research and Teaching

Effect on Research Work: Good research depends on easy and quick access to the right information. Faculty members who are skilled in using technology can easily access online databases, research journals, and academic resources. Younger faculty members or those with higher qualifications usually have better digital skills, which helps them conduct detailed literature reviews and data searches. As a result, they can complete research faster and produce high-quality work.

In contrast, senior faculty members or those who are less familiar with digital tools may face difficulties in finding recent research. They often depend on physical libraries or traditional methods, which can take more time. Delays in accessing important information may slow down their research and reduce the quality of their work. Limited knowledge of digital tools can also restrict their ability to explore new research areas.

Use of Teaching and Learning Materials: Searching for information is also very important for teaching. Faculty members use textbooks, research papers, case studies, and online materials to prepare and update their courses. Faculty with strong academic backgrounds, especially in research-focused subjects, often use recent journal articles to keep their teaching content current and useful.

Gender and workplace location can also influence how faculty members find teaching resources. Some faculty prefers working together and sharing materials with colleagues, while others search independently. Faculty in urban institutions usually has better access to digital libraries and online resources than those in rural areas. This difference affects the quality and variety of learning materials available to students.

Role of Institutional Support: Support from institutions plays a major role in helping faculty search for information effectively. Colleges and universities that provide training on using databases and research tools help faculty make better use of available resources. Workshops on tools like Zotero or EndNote can improve research efficiency. However, institutions with poor infrastructure or limited training opportunities may create gaps in access. Faculty in rural areas often lack fast internet and paid databases, which affects their research and collaboration opportunities.

Reducing the Digital Gap: The digital gap between urban and rural institutions is a serious issue. Faculty in well-equipped institutions has better tools, while others struggle with limited resources. Improving internet access, providing digital libraries, and offering technology training can help ensure equal opportunities for all faculty members.

Conclusion: The information-seeking patterns of faculty members in Madhya Pradesh are strongly influenced by demographic characteristics, the availability of institutional facilities, and the contrast between urban and rural academic environments. Faculty working in urban institutions generally benefit from easier access to digital tools, paid academic databases, and wider professional networks, which support more effective and higher-quality research activities. These institutions also tend to offer stronger technological infrastructure and training programs, helping faculty refine their approaches to locating and using information.

On the other hand, faculty members in rural institutions often encounter obstacles such as inadequate digital resources, unreliable internet connectivity, and limited opportunities for professional development. These constraints reduce their capacity to participate in advanced research activities or remain current with emerging academic developments.

Despite these differences, aspects across both urban and rural areas rely on a combination of online resources, traditional libraries, and collaborative platforms for their teaching and research needs. However, challenges such as excessive information availability, limited time, and insufficient technological skills further hinder effective information seeking.

To overcome these issues, focused policy measures are needed, including strengthening institutional infrastructure, offering extensive training initiatives, and expanding access to digital resources in all regions. Reducing the gap between urban and rural institutions will help create equal access to information for faculty members, thereby enhancing research output, teaching effectiveness, and scholarly collaboration. Strategic investment in these areas can promote a more equitable and efficient information-seeking environment for faculty regardless of location.

References:-

1. Mahesh G, Open access and impact factors, Current Science, 103 (6) (2012) 610
2. Indian Council of Social Science Research. (2022). Research trends in India: A study of academic behavior in the digital age. ICSSR. https://www.icssr.org/

research-trends
3. DESIDOC Journal of Library & Information Technology, Vol. 42, No. 5, September 2022, pp. 288-294, DOI : 10.14429/djlit.42.5.18142? 2022, DESIDOC
4. Das, P. & Marana, R.K. Electronic resources access, awareness and use of electronic information resources by research scholars of Berhampur University: A study. J. Res. Humanit., Arts Soc. Sci., 2013, 13-271
5. Sharma, P. K., &Verma, S. (2019). Information seeking behavior of faculty members in Indian universities: A case study. In Proceedings of the 4th International Conference on Information Science and Technology (pp. 121–130). IEEE. https://doi.org/10.1109/ICIST.2019.00025
6. Madhya Pradesh Higher Education Department. (2023, February 10). Status of higher education in Madhya Pradesh: Challenges and opportunities. Government of Madhya Pradesh. https://www.mphedu.gov.in/status-education
7. Nallathambi, A.; & Kanakaraj, M. 2012. "Utilization of e-resources among the faculty members of engineering colleges in Salem and Namakkal Districts, Tamil Nadu". Indian Journal of Information Sources and Services, 2 (2):18-22.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Ecological and Environmental Concerns in Select Works of Amitav Ghosh

Dr. Sanjay Singh Solanki*

***Associate Professor (English) Govt. College, Alote, Dist. Ratlam (M.P.) INDIA**

Abstract- This paper examines the ecological and environmental degradation in Amitav Ghosh's Novels namely, The Hungry Tide, Gun Island and The Glass Palace. It also explores the relationship between human and nature. At the same time it also talks about exploitation of the natural resources and its impact on the climate change. Through these novels Amitav Ghosh has established himself as savior of environmental issues. His novels show brutal realities of industrialization and its impact on environment and human. This paper is also an attempt to persuade scholars to study his novels through environmental dimensions, which have been rarely explored. The objective of this study is to analyze and examine the depiction of environmental degradation due to human greed. Amitav Ghosh explores ecological concerns across The Hungry Tide, Gun Island and The Glass Palace by Intervening environmental degradation with human history, migration and colonialism. These novels highlight the fragility of ecosystem, human-nature conflicts, and the impacts of climate change and exploitation.

Keywords - Ecology, Environment, climate change, colonialism, displacement, sunderbans, mangrove.

Introduction - During recent times literary critics are focusing more and more on the hitherto ignored relationship between human and natural world. So many literary writers are writing on the environmental issues thus highlighting the problems of environmental destruction. Amitav Ghosh is one of such novelists who talks about environment and ecological concerns in his writings. Amitav Ghosh "The Hungry Tide" is a compelling exploration of the complex relationship between humans and the environment set against the backdrop of the Sundarbans. A unique ecosystem in the Bay of Bengal. The novel delves into the intricate ecological and environmental concerns that plague this fragile region, highlighting the delicate balance between human needs and the preservation of nature.

The Sundarbans, a vast network of mangrove forests and tidal waterways, serves as a microcosm of the environmental challenges facing the world today. Ghosh vividly portrays the region's vulnerability to natural disasters, such as cyclones and floods, which are exacerbated by climate change and human activities. The novel underscores the interconnectedness of the ecosystem, where the destruction of mangrove forests for human settlement or shrimp farming leads to increased erosion and heightened vulnerability to storms. "The Hungry Tide" explores the complex relationship between humans and animals in the Sundarbans, where both struggle for survival in a challenging environment. The novel depicts the constant threat of tiger attacks, highlighting the precariousness of human life in this region. However, it also portrays the tigers as victims of habitat loss and human encroachment, emphasizing the need for conservation efforts to protectthese endangered creatures.

The novel sheds light on the plight of environmental refugees, who are displaced from their homes due to natural disasters and environmental degradation. Ghosh portrays the struggles of these marginalized communities, who are often forced to live in precarious conditions and face discrimination. The novel raises questions about environmental justice and the responsibility of governments and individuals to address the needs of those displaced by environmental factors.

"The Hungry Tide" explores the tension between environmental conservation and the livelihoods of local communities. The novel depicts the challenges faced by those who depend on the Sundarbans for their sustenance, such as fishermen and honey collectors, who are often caught between the need to protect the environment and the desire to earn a living. Ghosh highlights the importance of finding sustainable solutions that balance the needs of both humans and the environment.

Through its vivid portrayal of the Sundarbans and its inhabitants, "The Hungry Tide" raises awareness about the importance of ecological conservation and the need for sustainable practices. The novel encourages readers to reflect on their relationship with the environment and to consider the consequences of their actions. Ghosh's work

serves as a call for greater environmental consciousness and a more harmonious coexistence between humans and nature.

Amitav Ghosh's Gun Island (2019) explores environmental concerns through the lens of climate change, linking myths to real-world ecological devastation in regions such as the Sundarbans in India and Venice in Italy. The novel highlights how human actions exacerbate global warming, cyclones, habitat loss, and species displacement. These themes underscore the Anthropocene's planetary impact on both human and non-human lives. Ghosh's novel focuses on the indistinctive boundaries between water and land to represent the consequences of climatic disturbances. Ghosh in these novels travels from the wild and tangled Sundarbans (a mangrove region that spans between India and Bangladesh) to Los Angeles, parched by wildfires to the slowly sinking Venice. He depicts the impacts of the ecological chaos that had happened in the Sundarbans and highlights the same process of destruction that has been happening across the world.

Ghosh is of the view that along with swamping the buildings, global warming in the whole world posing a threat to the overall flora and fauna of Sundarbans and Venice. Due to increased temperatures, the bridges of Venice have fallen prey to shipworms. They are hollowing these bridges bit by bit. He calls them the monsters which are rolling the wood of the bridges.

Similarly, in the Sundarbans, burrowing crabs have also become a threat to the mangrove forests. Ghosh says that these burrowing crabs are digging and damaging embankments. The increased water levels has multiply their population. Ghosh argues that rising temperatures across the globe, caused by global warming is changing habitats of various kinds of animals such as spiders, shipworms, cobras, snakes and many others. Ghosh in Gun Island describes the long term consequences of Cyclone Aila, that hit the Sundarbans in 2009. This cyclone has damaged and destroyed hundreds of miles of embankments and thousands acres of land. The cyclone also caused millions of people to become homeless. The land that had long been the source of their livelihood become devourer as the water turned poisonous due to arsenic laced brew. The lives of the local were turned upside-down after Cyclone Aila, which resulting into their migration towards Bangladesh and the Gulf. Ghosh's Gun Island depicts that the ecological and environmental mishaps occurring in Sundarbans and Venice are largely due to human intervention. He sarcastically says that this beautiful planet called Earth is on the brink of environmental catastrophe.

Amitav Ghosh's 'The Glass Palace' (2000) weaves ecological concerns into its historical narrative spanning colonial Burma, India, and Malaya, critiquing how imperialism exploits natural resources and disrupts ecosystems. The novel portrays nature's resistance against human domination, highlighting the commodification of forests and land under British rule. British Colonial greed drives the ruthless logging of Burma's teak forests, transforming vast wilderness into export commodities and stripping the land's vitality. Rubber plantations in Malaya regiment landscapes imposing unnatural order through monoculture that endanger labors via floods and harsh conditions. Oil wells and resource extraction further commodify nature, fueling imperial ambitions at the cost of ecological harmony.

The Novel 'The Glass Palace' spanning from the 1885 British annexation of Mandalay to World War II's upheavals, exposes imperialism's human and ecological tools via characters like the ambitious Rajkumar and the resilient Dolly. He portrays nature not merely as a setting but as a victim of 'ecocide' the systematic destruction of ecosystems for imperial profit. Ghosh describes the process of "girdling," (Cutting a ring around the trunk to kill the tree before felling) in violent, clinical terms. The falling of these giant is likened to a thunderclap explosion. The use of elephants to drag massive logs into the Chaungs (streams) represents the bending of animal and river life to serve the colonial machine. Ghosh critiques the transformation of biodiversity of jungles into sterile rubber plantations. The extraction of petroleum at Yenangyaung illustrates the physical scarring of the earth. He describes petroleum wells as "oil-sodden pits" and "small volcanoes" of excavated earth. The narrative thus links environmental damage to human suffering, noting how workers and children frequently fall into the slippery, toxic wells. Ghosh explores how ecological changes force the movement of people, a concept often termed environmental displacement. The clearing of forests for timber and plantations displaces indigenous communities and Indian indentured laborers. The novel also depicts the scorched-earth policies of the World War II, showing how both land and its inhabitants are casualties of political conflicts they did not initiate.

Conclusion: Amitav Ghosh's novels which are examined in this paper offer a new ecocritical perspective. These novels also focus on environmental and ecological concerns with broader sociopolitical issues. Through these novels Ghosh is able to portrays the connection between humans and the natural world. He is successful in showing how colonialism, displacement and identity are closely linked to environmental catastrophe. Amitav Ghosh The Hungry Tide shows that there must be a delicate balance between humans and ecosystems, Gun Island talks about the impacts of climate change. While the Glass Palace portrays historical environmental exploitation and its effect on borders.

References:-

1. Abrams, M. H. A Glossary of Literary Terms. Harncourt, 2001.
2. Anand, Divya. "Words on Water : Nature and Agency in Amitav Ghosh's The Hungry Tide". http://www.concentric-literature.url.tw/issues/Water/2.pdf.

3. Ghosh, Amitav. The Hungry Tide. HarperCollins, 2018.
4. Ghosh, Amitav. The Gun Island, Gurgaon, Penguin Random House; 2019
5. Ghosh, Amitav. The Glass Palace. HarperCollins, 2000.
6. Pancholi nupur, Sanjit Kumar. "The Era of Environmental Derangement : Witnessing climate Crisis in Amitav Ghosh's Gun Island". http://rupkatha.com/V13/n2/V13n229
7. http://www.healthinformaticsjournal.com
8. Edison M, and Dr. S. Padma Priya. "Ecocide and Ecological Havocs in Amitav Ghosh's The Glass Palace." http://www.gjelal.com
9. Rao, K.(2016, September 8), Amitav Ghosh : ' Climate Change is like death, no one wants to talk about it'. The Guardian. https://www.theguardian.com/environment/2016/sep/08/amitav-ghosh-climate-change-is-like-death-no-one-wants-to-talk-about-it.
10. Thakur, Akhileshwar. "Amitav Ghosh's The Hungry Tide: A Critique of Nature–Culture Duality." Literary Perspective, vol. 9, no. 1, January 2014.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Preservation of Traditional Indian Embroideries and GI Tags: Revival Efforts

Dr. Nidhi* Mrs. Nisha Rani**

*Assistant Professor and HOD (Home Science) CISKMV, Fatehpur-Pundri (Haryana) INDIA
** Assistant Professor (Home- Science) CISKMV Fatehpur-Pundri (Haryana) INDIA

Abstract: Geographical Indication (GIs) a word generally refers to the product's specific origin in a certain location. GIs are the signs of indicating a product come from a particular region and also certify for the particular features of the product, fine quality and good reputation. India is an incredible country and birthplace of many traditional art and craft that have been developed in the different states of India. Many traditional embroideries are done in various states of India like; Phulkari of Punjab, Chikenkari of Lucknow, Kasuti of Karnataka, Sujani of Bihar, Chamba Rumal of Himachal Pradesh, Sandur Lambani of Karnataka are few examples. GIs tags are helpful in promoting the local communities and their distinctive products. It also raises the economic prosperity and cultural richness of the country. All traditional embroideries of India are known for their originality and uniqueness. Geographical Indication is not a tag but also provides a unique identity to the traditional art and embroideries. The preservation of these traditional embroideries are important for the future generation and development of income sources of the particular community which developed these traditional embroideries.
Keywords: Geographical indication, traditional embroideries, preservation.

Introduction: GI (Geographical Indication) is a form of intellectual property right. This intellectual right is used for goods and products originating in a specific location. The GI Tag product products (Registration and Protection) Act 1999 this act prohibits the use of GI tagged products. A GI tag (Geographical Indication Tag) is a special label or mark or certificate that is given to a product to come from our specific place, reputation and with the unique qualities and features. Now this time hundreds of the products coming from different states have received GI tags.

In July 2025 India had registered 658 GI tags. In this study we are considered only a few highly appealing GI tagged traditional embroideries of India. Indian heritage and traditional embroidery is one of the most appealing and diverse art across the world. Every state of India has its unique culture, tradition, art and religion which manifolds the diversification. Indian culture and Indian art form specially the Indian Traditional Embroideries are well known for their originality and uniqueness. All different traditional embroideries of India reflect its symbolic significance and cultural contact. Traditional embroideries of India are depicted by Phulkari of Punjab, Chikenkari of Lucknow, Kasuti of Karnataka, Sujani of Bihar, Chamba Rumal of Himachal Pradesh, Sandur Lambani of Karnataka etc.

We must try to preserve these traditional Embroideries for the future and the changing environment and values of these traditional art. These embroideries are the heritage of India and these traditional art is an important part of our nation. The preservation of these embroideries are important for introducing future generations to the rich culture and heritage of India.

Objectives:

1. To spread awareness to preservation of traditional methods, skills and style of embroidery.
2. To encourage rural based employment and local artisans efforts.

GI TAGS:

Geographical Indication (GI) Tags

In India traditional crafts and weaving on handlooms have a long and glorious history because of their inherent value, perfection of designs, eminence and distinct stuff skilled artisans and weavers in various regions of India have been demonstrating unique skill sets passed on as legacy over the generations. Geographical indications are intellectual property mechanisms that apply to goods and services that are identified by the location from which they were created (collected, produced, or manufactured). These mechanisms take into account environmental, historical, social, and

cultural specificities. It highlights the status of Indian handlooms, a sector that represents the country's cultural heritage and supports a range of livelihoods. It is important to underscore that the registration of a Geographical Indication acknowledges a pre-existing condition.In accordance with the Geographical Indications of Goods (Registration and Protection) Act of 1999 (the Act), handicrafts (including handlooms) may be registered as geographic indications (GI). Handicraft (including handlooms) are included. Registration prevents unauthorized use of register GI need and provides legal protection to the registered property. The advantages of GI are numerous, and if they are used effectively, they can significantly improve a region's economy and pave the way for the expansion and development of the indigenous community. GI serves as insurance or protection, particularly for developing nations like India, for manufacturing that takes place in rural areas where manufacturers are unable to spend on branding due to a lack of infrastructure, marketing expertise, legal knowledge, etc.

History Of Geographical Indications (GI): The idea of protecting special products first of all starting in Europe in 1994, the WTO (World Trade organisation) introduced a global agreement that is known as TRIPS (Trade Related Aspects of Intellectual Property Right).

TRIPS are made mandatory for all the members of different countries to protect geographical indications for different products. India is also a member of TRIPS.

India passed a special law known as GI product (Registration & Protection) Act in 1999. This law came into effect in India on 15 September 2013. The first GI tag was given to the Darjeeling tea in 2005 in India.

Importance Of Geographical Indications (GIs): Geographical Indications have extreme importance for culture, economy, and global trade. GIs protect regional heritage and promote local products and traditional methods of developing that kind of products. They boost local economies and enhance the unique qualities of the local products.

1. **Cultural heritage Preservation:** GIs help to preserve the traditional knowledge, methods (techniques) skills and heritage. They ensure that the local people and artisans continue practicing old techniques, methods and skills.
2. **Economic growth and development:** GI-tagged products promote the economic growth of local communities. Producers can demand premium prices because their products are exclusively unique and special.
3. **Legal Protection:** GIs avoid unauthorized production by using the name of any product. It provides the authenticity and market value of real products. It provides certification to the original product.
4. **Enhancing Exports:** GI tag increases the worldwide trade and reputation of regional products and enhances its exportability.
5. **Boost the Consumer Confidence:** GIs is helpful for the consumers for consuming the originally originated products and it also assure the authenticity for the quality of the specific product and that is motivating the customer and enhances customer loyalty.

Revival Efforts And Preservation Strategies: Government and NGO initiative: Government and NGO initiative: The Government of India and numerous NGOs have implemented various initiatives and schemes aimed at preserving traditional embroidery crafts and supporting the artisans who create them. Key government programs include the Handloom and handicrafts. Development schemes and the 'Ministry of Textiles' Artisans welfare programs, which provide financial assistance, Skill development training, and access to markets. For instance, Ambedkar Hastshilp Vikas Yozna supports the social and economic development of artisans, enabling them to improve their skills and gain financial independence. Additionally, the National HandCrafts Development Programme (NHDP) and Cluster Development Programme focus on creating artisan clusters to promote collective growth, infrastructure support, and enhanced visibility for traditional crafts.

Rule of designers and collaboration: Designers and collaborations with artisans have played a pivotal role in the revival and preservation of Indian embroidery. Many designers recognize the beauty, heritage, and skill that Indian embroidery brings to Fashion, and have integrated traditional motifs and techniques into their collections. By collaborating with artisans, designers not only bring traditional embroidery into contemporary fashion but also create new opportunities for artisans to gain fair compensation and visibility for their work. Prominent Indian designers, like Sabyasachi Mukherjee, Anita Dongre, and Manish Malhotra, have elevated traditional crafts like Pulkari, Kantha, and Zardozi by incorporating them into modern bridal and haute couture. For example, Sabyasachi Mukherjee is renowned for showcasing traditional Indian textiles and embroideries in his designs.

Digital and educational efforts: The digital age has opened up a new avenue for promoting and preserving Indian embroidery, allowing artisans and small brands to reach Global audiences. Social media platforms like Instagram, Facebook, and Pinterest play a crucial role in showcasing Indian textiles, enabling artisans, designers, and NGOs to share their stories and craftsmanship directly with consumers. Artisans can now showcase their work on social media, building brand awareness and connecting with people interested in artisanal products and ethical fashion.

GI Protected Indian Traditional Embroidery Products In In India: Many traditional Indian Embroideries of different states have received the GI tag.

Kasauti Embroidery:

1. Karnataka Handicrafts Development Corporation (KHDC) held a GI tag for theTraditional Indian

embroidery Kasuti of Karnataka on 30th January 2006.
2. Kasauti embroidery is practiced in the Northern district of Karnataka like; Dharwad, Bijapur, Hubbali, Belagavi.
3. This embroidery is mainly done by the women of Lingayat Community. Kasuti embroidery is very intricate work.
4. In this embroidery sometimes 5000 stitches are used for making the traditional attires.

Sandur Lambani Embroidery of Karnataka:
1. Sandur Lambani Embroidery is mainly practiced in Bellary (Ballari) district of Karnataka.
2. This embroidery work is practiced by the Lambani (Lambada or Banjara) Community residing around the Sandur region of Bellary district of Karnataka.
3. Sandur Lambani Embroidery received the GI tag in 2010-2011.
4. This embroidery used as patch- work or small bits of clothes are pieced together into a form of design. Most of the time there were leftover pieces of the fabric.
5. Geometrical motifs are used in this embroidery with the multiple stitches.
6. Bright colours threads are often used in this embroidery.
7. The craft is tied to the traditional dresses of the Lambani women like; Skirt (Phetiya), blouse (Kanchali), veil heavily decorated.

Phulkari Embroidery of Punjab:
1. Phulkari means " Flower Work" Phulkari is traditional hand embroidery practiced mainly in Punjab like; Amritsar, Patiala and Jalandhar.
2. This embroidery is done mainly by rural women of Punjab.
3. Phulkari of Punjab received the GI tag in 2010.
4. Geometrical motifs used in this embroidery.
5. Bright coloured silk floss thread (Pat) used in this embroidery.
6. Traditionally made for shawls, dupattas and odhnis especially for weddings and festivals.

Sujani Embroidery of Bihar:
1. Hand embroidery of Bihar is very similar to Kantha Bengal.
2. Embroidery is practised in various parts of Bihar like Patna, Madhubani, Muzaffarpur (Sam surrounding villages) in Bihar.
3. On 21st September 2006 Sarojini embroidery got the GI tag.
4. Salita (cotton), tussar silk and casement fabric used as base clothes for this embroidery.
5. Fine running stitch used for filling the background with similar colour of base fabric. Chain stitch is usually used in black colour, brown and red colour is used for the main outline of the motifs. Design is filled with running stitch in coloured threads.
6. A large number of products are prepared with this embroidery like bedsheet, cushion covers, Sari, kurta pajama, dupatta, top as well as utility articles also developed by this embroidery.

Chamba Rumal of Himachal Pradesh:
1. Chambal Rumal is a famous hand embroidery mainly found in Pathankot, Chamba district and other neighbouring villages and Basohi, Kangra, Kullu and Mandi.
2. Chamba Rumal is traditionally practiced by the royal and local artisans of Chamba District.
3. In 2006 Chamba Rumal head received GI tag.
4. The motifs of Chamba Rumal are inspired by Pahari miniature paintings, scenes of Mahabharat, Ramayana,

Krishna Leela along with the motifs of human figure, animals, evergreen trees also seen on Chamba - Rumal.

Kutch traditional Embroideries of Gujarat:

1. Kutch embroiderywas registered in March 2013 for GI tag.
2. Kutch embroidery is done in the main areas of Bhuj, Anjar, Mandvi and Lakhpat in Kutch.
3. Chain stitch, buttonhole, herringbone, satin, back stitch and mirror work are used for Kutch embroidery.

Challenges In Preservation:

1. Unfair compensation for artisans: One of the challenges faced by Indian artisans is that they often don't receive fair compensation for their work because they operate on a small scale, forcing them to rely on middlemen to sell their products in the Market, who retain a larger share of the profit for themselves.

2. Industrialization and fast fashion: In changing times, machines have taken over human labor. In the era of industrialization and fast fashion, consumers want quick and affordable products.

3. Traditional embroiderers' work requires great skills, time, and effort, but due to a lack of market significance, the new generation is not interested in learning this craft.

4. Lack of knowledge about traditions: The new generations are strongly influenced by modern trends, but they often turn away from traditional values and cultural heritage. The lack of awareness about traditional embroidery has also limited its reach. As a result, the new generations of artisans and Indians are unfamiliar with the value of their country's precious cultural legacy.

5. Lack of promotions and exploration: The Indian government hasn't sufficiently focused on the promotion and exploration of traditional embroidery. Hence, the new generations are not well acquainted with it, and it is also not included in academic curricula, which is important for their extension and promotion.

Conclusion: GI as a concept is very new to India, despite the fact that it possesses a vast variety of products that could be considered geographical designators. Geographical indications are not just a tag but they are the symbol of heritage, creativity, culture, and unique skills of craftsmanship. Indian has an exclusive list of traditional embroideries of different states. GI tag protect the India's cultural identity and support the craftsmanship and sustain traditional crafts for future generation and its is essential to all the traditional embroideries of India achieve GI tags and preserve the traditional art of India.

References: -

1. Sharma S, Kamboj A. Development of motifs through the fusion of traditional arts of Warli and Phulkari. Journal Global Values. 2024;15(2):275-290. https://doi.org/10.31995/jgv.2024.v15i02.028
2. Sawant J, Yadav P, Kulkarni S, Guru R. Indian northern region old heritage hand embroidery manufacturing techniques. ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts. 2023;4(2). https://doi.org/10.29121/shodhkosh.v4.i2.2023.377
3. Banga R. 'Geographical Indications: UNCTAD's Initiatives'. Presentation delivered in the 'Regional Conference on IPR Protection through Geographical Indications', co- organized by the UNCTAD India Programme and the Textiles Committee, Lucknow, India, 4–5 September; c2008.
4. Das K. 'Protection of India's Geographical Indications: An Overview of the Indian Legislation and the TRIPS Scenario', Indian Journal of International Law. 2006b;46(1):39-73.
5. Varnekar S.S. 'Geographical indication and handicrafts: A critique' International Journal of Civil Law and Legal Research 2023; 3(1): 01-07
6. Seema, 'The art of traditional embroideries of India: A comprehensive review' International Journal of Home Science 2025; 11(2): 752-75
7. https://handicrafts.nic.in/CmsUpload/12222017102212GI%20BOOK%20FINAL%202-5-17_resized.pdf
8. https://static.pib.gov.in/WriteReadData/specificdocs/documents/2021/nov/doc2021112441.pdf
9. https://ipindia.gov.
10. https://thelegalschool.in/blog/what-is-a-geographical-indication
11. https://www.gktoday.in/some-gi-protected-embroidery-products-from-india
12. https://search.ipindia.gov.in/GIRPublic/Application/ViewDocument
13. https://cdn1.byjus.com/wp-content/uploads/2023/06/BYJUS-Exam-Prep-List-of-Geographical-Indications-GI-Tags-in-India-2023.pdf
14. https://www.jvwu.ac.in/documents/61-%20FINAL-%20indian%20hand%20embroideries.pdf
15. https://homescience10.ac.in/writable/uploads/media/1723105152_ebe2197292065f6f58e9.pdf
16. https://pin.it/4fQ6MGIcY
17. https://pin.it/7lNIN1Mbj
18. https://pin.it/7EGg7WaOc
19. https://pin.it/3bqQgd1VD
20. https://www.craftmark.org/cms/public/uploads/1595673107.pdf
21. https://pin.it/21rrh3kdD

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

चन्देरी रियासत का साम्राज्यवादी दौर देवीसिंह बुंदेला (1654-1663)

डॉ.अर्पिता तिवारी*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय माधव महाविद्यालय, चंदेरी, जिला अशोकनगर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में विंध्याचल की सुरम्य में रमणीय पर्वत श्रृंखलाओं की चंद्र गिरी पहाड़ी की ऊंची चोटियों से रक्षित बेतवा और उर्वशी सरिताओं की सुरम्य में घाटी में उपरिस्थित चंदेरी 78.6पूर्वी देशांतर एवं 24.8अक्षांश पर समुद्र सतह से लगभग 1070 फीट ऊंचाई पर स्थित है।चंदेरी एक ऐतिहासिक नगरी होने के साथ-साथ अपने अंतर हृदय में प्रागैतिहासिक के कई अवशेष समेटे हुए हैं। छठी शताब्दी ईसा पूर्व चंदेरी क्षेत्र अवन्ति दर्शाण एवं चेदि जनपदों से आवृत था,प्राचीन काल में इस नगर का वैभव अपनी चरम सीमा पर था। मालवा और दिल्ली का प्रवेश द्वार माने जाने वाले इस नगर का महत्व प्रत्येक काल में रहा है। वर्तमान चंदेरी नगर की स्थापना 10-11वीं शताब्दी के मध्य प्रतिहार शासकों द्वारा की गई थी।चंदेरी गुलाम वंश, तुगलक वंश के आधिपत्य में रही 1401 में दिलावर खान गोरी ने मालवा में अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली,फलस्वरूप चंदेरी मालवा के सुल्तानों के आधिपत्य में रही। 1528 को बाबर ने मैदनीराय पर विजय प्राप्त की इस प्रकार चंदेरी मुगल अधिपत्य में चली गई। जहांगीर द्वारा बुंदेला शासक रामशाह को चंदेरी का शासक नियुक्त किया गया, यही से चंदेरी में बुन्देला वंश का सूत्रपात हुआ। रामशाह के पश्चात क्रमश: संग्राम शाह, भारत शाह, देवी सिंह, दुर्ग सिंह,मान सिंह,अनिरुद्ध सिंह, रामचंद्र,प्रजापाल मौदप्रहलाद एवं अंतिम शासक मर्दन सिंह हुए। कालांतर में चंदेरी सिंधिया और ब्रिटिश आधिपत्य में रही। देवी सिंह बुंदेला चंदेरी कि बुंदेला शासकों में सबसे महत्वपूर्ण रहे। जिनके सिंहासन पर बैठते ही चंदेरी साम्राज्य ने अभूतपूर्व उन्नति की। प्रस्तुत शोध पत्र में देवी सिंह बुंदेला के व्यक्तित्व ,कृतित्व एवं उपलब्धियों का ऐतिहासिक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के स्रोतों की सहायता ली गई है एवं विषय से संबंधित विद्वानों का साक्षात्कार किया गया है।

शब्द कुंजी –देवी सिंह,चंदेरी, बुंदेला, मुगल, जुझारसिंह।

प्रस्तावना – देवीसिंह बुँदेला, भारत शाह की मृत्योंपरांत 1654 ई. में चन्देरी के सिंहासन पर विराजमन हुए। देवीसिंह के सिंहासन पर बैठते ही चन्देरी की किस्मत का सितारा आसमान को छूने लगा। इनके शासनकाल में चन्देरी राज्य विकास के पथ पर अग्रसर हुआ। देवीसिंह बुन्देला के शासनकाल में राज्य दूर-दूर तक फैल चुका था। चन्देरी सरकार के नाम से प्रसिद्ध यह क्षेत्र 17 परगनों में विभक्त था। राज्य की आय 22 लाख प्रतिवर्ष थी। चन्देरी सरकार के अंतर्गत आने वाले परगने भेलसा, बासौदा, उदयपुरा, मुँगावली, हनुमंतगढ़ (ईसागढ़) मल्हारगढ़, सेहराई, कंजिया, खैरोदा, सिरौज, बेरसिया, सेवास, भोरोसा, तालबेहट, ललितपुर, रोड़ा एवं अगरई प्रमुख थे। महाराज देवीसिंह ने चन्देरी ही नहीं अपितु सारे क्षेत्र में प्रगति के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य किए।

महाराज देवीसिंह गद्दी पर बैठे और दिल्ली से राजगी का खिलत आया। ऐसे तो ये राज्य का कार्य अपने पिता और प्रपिता संग्रामशाह के समय से करते थे और जो फरमान शाही आते थे, उसमें इनको राजा लिखा जाता था।[1] यही कारण है कि उनके राज्य काल के संबंध में विद्वानों में मतभेद है। झाँसी गजेटियर, भगवानदास गुप्त, काशी त्रिपाठी आदि विद्वानों में देवीसिंह के राज्यकाल को लेकर मतभेद है, किन्तु पुरातात्विक साक्ष्यों एवं डण्ठ गर्दे पुरातत्विद, चन्देरी राजगान के अनुसार देवीसिंह का राज्यकाल 1654-1663 ई. रहा है। यह देवीसिंह की छत्री पर लगे शिलालेख से प्रमाणित होता है, अत: अपने पिता व प्रपिता के राज्यकाल से ही उन्होंने राज्य संचालन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

शाहजहाँ ने इसे 2000 हजारी का मनसल और राजा की पदवी दी।[2] ओरछा नरेष वीरसिंह देव के पश्चात् उनका ज्येष्ठ पुत्र जुझारसिंह गद्दी पर बैठा, इसने शाहजहाँ के खिलाफ विद्रोह कर दिया। शाहजहाँ के आदेश पर खाँने जहाँ, फिरोज जंग और खान-इ-दौरान के अधीन तीन सैनाये विद्रोह का दमन करने के लिए भेजी। मुगल सेना के इस वेगपूर्ण आक्रमण को रोकना जुझारसिंह के लिए संभव न था। मुगलों ने 4 अक्टूबर 1635 ई. को बुँदेंलो की राजधानी ओरछा पर अधिकार कर लिया।[3]

जुझारसिंह के इस विद्रोह को दबाने में चंदेरी के देवीसिंह, दतिया के भगवानराय और पहाड़सिंह आदि बुँदेलों ने मुगलों को सक्रिय योगदान दिया था। देवीसिंह वीरसिंह देव के बड़े भाई रामशाह का पौत्र था और भगवानराय तथा पहाड़सिंह जुझारसिंह के ही भाई थे। इस समय बुँदेलों की आपसी फूट, पारस्परिक स्पर्धा, ईर्ष्या और द्वेष इतने बढ़ गये थे, कि इन सारे निकटस्थ कौटुम्बिक संबंधों को भी भुलाकर वे एक दूसरे के रक्त के प्यासे हो गये थे। देवीसिंह ने अंत में अपने प्रपितामह के राज्य ओरछा पर पुन: अपनी सत्ता स्थापित की।

देवीसिंह, शाहजहाँ के शासनकाल के 8 वें वर्ष खाने दौरा के साथ जुझारसिंह को दण्ड देने पर नियुक्त होकर डंका मिलने से सम्मानित हुआ। ओरछा विजय उपरांत, वहाँ का राज्य देवीसिंह के नाम हो गया था, इसलिए यह वही रह गए और बुन्देला जाति की सरदारी उसे मिली।[4] 1634-36 ई.

तक ओरछा पर शासन किया। इस समय का एक शिला लेख बल्देवगढ़ के ग्वाल सागर के मध्य मढ़िया में लगा हुआ है। सम्राट शाहजहाँ ने उनसे प्रसन्न होकर, उन्हें चन्देरी के दक्षिण पूर्व के गदरौला, खिमलासा, इटावा, मालथौन, राहतगढ़, बासौदा, बसिया एवं सिरौंज के परिक्षेत्र दे दिये थे।[5]

इस समय बुंदेलों के केबल दो राज्य चन्देरी और दतिया रह गए थे। चन्देरी के देवीसिंह को बादशाह ने सागर जिले तरफ बहुत लंबा चौड़ा राज्य दे रखा था, जिसका कुछ भाग इस समय सागर जिले में शामिल है। दतिया के राजा भगवान राव बादशाह के विश्वासी मित्र थे। इसी समय जप्त हुए ओरछा राज्य के उदयाजीत के वंशज चंपत राय ने भुमयावट करके मुगल बस्तियों को उजाड़ना तथा छोटी मोटी शाही सैनाओं को परेषान करना आरंभ कर दिया था।[6]

जुझारसिंह की मृत्यु के बाद ओरछा का राज्य लगभग दो वर्ष तक देवीसिंह के अधिकार में रहा। परंतु स्थानीय जनता तथा जुझारसिंह के अन्य बुंदेला अनुयाइयां के सक्रिय विरोध के कारण विवश होकर अंत में देवीसिंह ओरछा छोड़कर वापिस चंदेरी लौट गया। तब जुझारसिंह के राज्य को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया और वहाँ के शासन के लिए शाही कर्मचारी नियुक्त कर दिये गये।[7]

शाहजहाँ के शासनकाल के 9वें वर्ष ओरछा प्रांत का प्रबंध ठीक करके बादशाह के दरबार में पहुँचा और वहाँ से सैयद खाने जहाँ बारह (जो बीजापुर पर अधिकार करने के लिए भेजा गया था) के यहाँ भेजा गया। वहाँ इसने अच्छा काम दिखलाया। 10 वें वर्ष में खानेदौरा की प्रार्थना पर इन्हें झंडा और डंका दोनों मिल गया। 11वें वर्ष शाहजादा मुरारबख्श के साथ बलख और बदख्शॉ विजय करने पर नियुक्त हुआ। इस यात्रा में भी द्वितीय बार अच्छा कार्य किया और अलअमानों से कई बार अच्छी लड़ाइयाँ हुई।[8]

शाहजहाँ के शासन के 22 वें वर्ष जब दुर्ग कंधार कजिलवाशों के अधिकार में चला गया था यह भी दूसरी बार औरंगजेब के साथ उस दुर्ग की चढ़ाई पर गए और कजिलवाशों के साथ युद्ध में दृढ़ता से डटकर अच्छी वीरता दिखलाई।[9] देवीसिंह के चन्देरी पर सिंहसानारूढ़ होने के पश्चात् हुसेन खॉ राहतगढ़ का जमीदार बागी हो गया। उसने राहतगढ़ के किले पर अपना अधिकार कर लिया। देवीसिंह को हुसेन खॉ के विरूद्ध आक्रमण के लिये फरमान आया। उन्होंने राहतगढ़ पर चढ़ाइ की, हुसेन खॉ भाग गया और उसका लड़का पकड़ा गया जिसे उन्होंने बादशाह के पास भेज दिया।[10]

शाहजहाँ के शासनकाल के 31वें वर्ष दरबार बुलाये जॉने पर महाराज जसवंत सिंह के साथ देवीसिंह नियत हुआ। युद्ध के दिन महाराज ने इसे फौजी भंडार के रक्षार्थ नियत किया था और युद्ध में जब सुल्तान मुरार बख्श ने बादशाही भंडार पर धावा बोला इससे बड़ी गड़बड़ मची तब यह दूरदर्शिता से शहजादे की शरण में चला गया और उसकी मध्यस्थता से औरंगजेब की सेवा में पहुँचा। शाहजादे के कैद होने पर इसे खिलअत मिली। खानेदौरों सैयद महमूद के प्रार्थना पत्र से इसकी कर्मशीलता का पता लग चुका था, इसलिए इसका मनसब बढ़ाकर 2500 सवार कर दिया था।[11]

बीजापुर के मुगल अभियान और शाहजादा मुराद के अंतर्गत बल्ख, बदख्शॉ की चढ़ाई (1646-47 ई.) में देवीसिंह ने उल्लेखनीय वीरता दिखाई। कंधार के जीतने के लिए किये गये औरंगजेब के द्वितीय और दारा के तृतीय अभियानों (1652-53) में भी उसने भाग लिया। वहाँ से लौटने पर उसे 1654-55 ई. भेलसा का फौजदार बना दिया गया, फिर वह दक्षिण में औरंगजेब के पास रहा, किंतु तुरंत ही शाहजहाँ के पुत्रों में उत्तराधिकार युद्ध की सम्भावना बढ़ने पर उसे दक्षिण से वापस बुला लिया गया। इसी समय औरंगजेब और मुराद की सम्मिलित सेनायें उत्तर की ओर बढ़ रही थी। अतएव देवीसिंह को रोकने के लिए जसवंत सिंह राठौर के साथ कर दिया।[12]

औरंगजेब ने सम्राट बनने पर उसे भेलसा का फौजदार बना दिया। इसी साल बुंदेलखण्ड और मालवा की सीमा पर चम्पतराय की कार्यवाहियाँ जोर पकड़ रही थी, औरंगजेब तब दाराशिकोह और शुजा का दमन करने में व्यस्त था, अत: वह चंपतराय के विद्रोह की ओर विशेष ध्यान न दे सका। फिर भी उसने ओरछा के इंद्रमणि तथा महासिंह भदौरिया के साथ शुभकरण बुँदेला को चंपतराय के विरूद्ध भेजा। उन्हें कुछ साधारण सी सफलता प्राप्त हुई, पर उससे चंपतराय तनिक भी विचलित नहीं हुए।

उधर जब अपने विरोधी भाइयों से छुटकारा पाकर औरंगजेब ने अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली, तब अपने राज्य काल के चौथे वर्ष (20 अप्रैल 1661-9 अप्रैल 1662) में उसने मालवा तथा बुँदेलखण्ड के राजाओं और जागीदारों की सहायता चंपतराय के विद्रोह दबाने के लिये चंदेरी के देवीसिंह बुँदेला को नियुक्त किया। चंपतराय की स्थिति अब बहुत संकटमय हो गयी थी। उनके अपने ही स्वजनों ने उनके विरूद्ध तलवार उठा ली थी। मुगलों और बुँदेलों की सम्मिलित शक्ति का अधिक समय तक सामना करना चंपतराय के लिये संभव न था। चंपतराय की पराजय हुई।[13]

चंपतराय के पुत्र छत्रसाल ने देवीसिंह से सहायता मांगी, इन्होंने सहायता देने से इनकार किया परन्तु ये कहा कि- तुम भी हमारे भाई हो हमारे राज्य के किसी गाँव से फायदा उठा लो। छत्रसाल ने देलवारे वाले ठाकुरों की सलाह से ललितपुर लूट लिया।[14]

महाराज देवीसिंह बुंदेला कलम तथा तलवार दोनों के धनी थे। महाराज हिन्दी, संस्कृत के विद्वान थे। इनके पास एक विशाल ग्रंथालय था। आयुर्वेद एवं ज्योतिष के पंडित थे, इन्होंने आयुर्वेद विलास तथा देवीसिंह निदान नामक ग्रंथों की रचना की है। इन्होंनें अनेक ग्रंथों की रचना की। देवीसिंह बुन्देला के संरक्षण में गोस्वामी षिवानंद भट्ट ने सत्रहवी सदी के अंतिम अर्द्धांश में वृहत तंत्रिका विश्वकोश और सिंह सिद्धांत सिंधु की संस्कृत में रचना की थी। संस्कृत के विद्वान कवि पंडित मोहन भट्ट ने अपने कामसवध महाकाव्य की रचना भी इसी काल में की थी। देवीसिंह बुन्देला द्वारा स्वरचित वैद्यक ग्रंथ सिंह सुधानिधि भी उपलब्ध हुआ है। यह पूर्ण कृति नहीं है। इसमें शरीर, निदान और रसायन तंत्र की जॉनकारी दी गई है। देवीसिंह के काल में रचित उपरोक्त संस्कृत ग्रंथों से पता चलता है कि उसकी तंत्रशास्त्र, काव्य और वैद्यक शास्त्र में अत्याधिक रूचि थी।[15]

देवीसिंह धर्मपरायण राजा थे, तवारीख हाल राजगान चन्देरी में लिखा है कि-एक दिन यह भोजन करके दिन के समय सो रहे थे और महारानी इनके पेर के तलवे पर हाथ फेर रही थी। पास ही एक ब्राह्मण की लड़की जो 8-9 वर्ष की थी बैठी थी। महारानी उस लड़की को छोड़कर भोजन के लिए चली गई। कुछ देर के बाद वो लड़की उठी और महारानी हाथ तलवों पर फेर रही थी वैसे ही राजा के तलवों पर हाथ फेरने लगी। राजा की आँख खुल गई और उस लड़की से पूछा की तू कौन की लड़की है, इतने में महारानी आ गई। तब महाराज ने कहा कि लड़की के हाथ फेरने से मेरे तलवे जलने लगे, मालूम होता कि ब्राह्मण की लड़की है। इतना कहकर राजा बाहर चले आये और पंडितों को बुलकार पूछा कि ब्राह्मण की लड़की अगर अनजॉने से पैर छूले तो क्या प्रायश्चित करना चाहिये। पंडितो ने कहा कि यदि ऐसा हो तो उसे सात तवे लोहे के गर्म करके उन पर से चले। राजा ने पंडितों को विदा कर एक दूसरे

कमरे में चले गये और सात तवे गर्म कराकर नंगे पैर उन पर से चले, आँच की गरमी से बेहोश होकर गिर पड़ें। कुछ महीने तक इलाज होता रहा और अच्छे हो गये।[16]

कुछ दिनों बाद शाही हुकूम से लाहोर गये, रास्ते में लांगड़े के पास तिगरा कन्नोर भाउनी के राजा से प्रीत हो गई राजा ने अपनी बेटी जराव कुँअर का विवाह इनके साथ कर दिया। इन्हीं रानी से महाराज दुर्गसिंह का जन्म हुआ। ये रानी जल्पा देवी की बड़ी भक्त थी, जब ये वहाँ से आई तो मूर्ति साथ में लाई थी। अब ये मूर्ति ललितपुर के चौबे के बाग में स्थापित है। महाराज देवीसिंह ने एक तोप ढलवाइ ये तोप सिंधिया का कर्नल जॉन बेप्टिस ले गया। देवीसिंह बुन्देला के दो पुत्र थे। बड़े पुत्र दुर्गसिंह को चन्देरी का राज्य एवं छोटे पुत्र शाहजू बुन्देला को कंजिया की जागीर दी गई। 1663 ई. इनका स्वर्गवास हो गया। इनकी छत्री चन्देरी के परमेश्वर तालाब के निकट ही बनी हुई है।[17] भगवान दास गुप्ता के अनुसार देवीसिंह की मृत्यु 26 जनवरी 1682 को हुयी किन्तु इनकी छत्री के शिलालेख के अनुसार इनका शासन 1663 ई. तक रहा।

इनके शासनकाल में चन्देरी में कई महत्वपूर्ण निर्माण कार्य हुए जो हिन्दू-मुस्लिम एकता की जीती जागती मिसाल है। चन्देरी के पठानी मुहल्ले में महाराज देवीसिंह ने एक मस्जिद का निर्माण करवाया सिंहपुर ग्राम, सिंहपुर महल, बाब की बावड़ी, तालवेहट में विन्द्रवान उद्यान आदि का निर्माण कार्य कराया। 'औरंगाबाद के बाहर पश्चिम और उत्तर की ओर एक पुरा इनके नाम पर बसा है।'[18]

चंदेरी का बुंदेला राज्य का वट वृक्ष जिसकी स्थापना रामशाह बुंदेला ने की थी, उसकी कई शाखाएं प्रस्फुटित हुई जो समय की अविरल धारा के साथ पुष्पित एवं पल्लवित होती रही। महाराज देवी सिंह ने चंदेरी ही नहीं अपितु उनके अधीनस्थ समस्त क्षेत्र की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण कार्य किए इनके शासनकाल में राज्य विस्तृत होने के साथ-साथ आर्थिक सामाजिक एवं स्थापत्य रूप से सुदृढ था। देवी सिंह बुंदेला के कालखंड को चंदेरी बुंदेला साम्राज्य का 'स्वर्ण' युग कहें तो सर्वथा उचित होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुन्दल लाल भारतीय द्वारा प्राप्त, हस्तलिखित पुस्तक, 1925, पृ. 18
2. मआसरूल-उमरा, भाग 1, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृ. 116
3. डॉ. गुप्त, भगवानदास, बुँदेलखंड केसरी महाराजा छत्रसाल बुँदेला, मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2004, पृ. 5-6
4. मआसरूल - उमरा, पूर्वोक्त पृ. 116
5. त्रिपाठी, काशीप्रसाद, 'बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास', बाबूलाल जैन फाल्गुन महावीर प्रेस वाराणसी, 1991 पृ. 76-77
6. सिंह, दीवान प्रतिपाल, 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' आठवाँ भाग, जिला सहकारी मुख्यालय छतरपुर पृ. 150
7. डॉ. गुप्त, भगवानदास, 'बुँदेलखण्ड केसरी महाराजा छत्रसाल बुँदेला' पूर्वोक्त पृ.7
8. मआसरूल- उमरा, पूर्वोक्त पृ. 116-117
9. वही पृ. 117
10. कुन्दल लाल भारतीय द्वारा प्राप्त, हस्तलिखित पुस्तक, 1925 पृ. 19
11. गुप्त, भगवानदास, मुगलों के अंतर्गत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, (1531-1731), हिन्दी बुक सेन्टर नई दिल्ली, वर्ष 1997, पृ. 20-21
12. मआसरूल-उमरा, पूर्वोक्त पृ. 117
13. डॉ. गुप्त, भगवानदास, 'बुँदेलखण्ड केसरी महाराजा 'छत्रसाल बुँदेला', पूर्वोक्त पृ. 10-11
14. कुन्दल लाल भारतीय द्वारा प्राप्त, हस्तलिखित पुस्तक पृ. 20
15. श्री एस.एल. कटारे का इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस की 1952 की प्रोसीडिंग्स में 'देवीसिंह बुँदेला ऑफ चन्देरी: ए रायल पेट्रन ऑफ संस्कृत ऑयर्स-फ्रेश ऑन हिज डेट ऐण्ड संस्कृत ऑथरशिप' शीर्षक लेख पृ. 385-871।
16. कुन्दल लाल भारतीय द्वारा प्राप्त, हस्तलिखित पुस्तक, 1925, पृ. 20-21
17. वहीं पृ. 21
18. मआसरूल-उमरा पूर्वोक्त पृ. 117

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

स्टार्टअप इंडिया : नवाचार, उद्यमिता और सतत विकास का अनोखा पारिस्थितिकी तंत्र

डॉ. खुमेश सिंह ठाकुर*

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – 'स्टार्टअप इंडिया' भारत सरकार द्वारा 2016 में शुरू किया गया एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है। इसका उद्देश्य देश में नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देना और एक मजबूत स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना है। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम भारत में नवाचार, उद्यमिता और विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इस कार्यक्रम ने स्टार्टअप्स के लिए एक अनुकूल वातावरण बनाया है, और देश में उद्यमिता की संस्कृति को बढ़ावा दिया है। हालांकि, इस कार्यक्रम को अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इन चुनौतियों को दूर करने और 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम को और अधिक सफल बनाने के लिए, सरकार को निरंतर प्रयास करने चाहिए। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम भारत को वैश्विक स्तर पर स्टार्टअप्स के लिए एक प्रमुख केंद्र के रूप में स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। भारत, विश्व की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, जिसमें युवा आबादी और तकनीकी रूप से कुशल कार्यबल है। इस जनसांख्यिकीय लाभांश का दोहन करने और आर्थिक विकास को गति देने के लिए, 'स्टार्टअप इंडिया' पहल शुरू करने का उद्देश्य, देश में एक मजबूत 'स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र' का निर्माण करना है, जो नवाचार, उद्यमिता और रोजगार सृजन को बढ़ावा दे सके। यह कार्यक्रम भारत के आर्थिक विकास और सामाजिक प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

प्रस्तावना – स्टार्टअप नये भारत की रीढ़ है। स्टार्टअप्स का परिस्थितिकी तंत्र नवाचार को प्रोत्साहित कर रहा है और नये युवा उद्यमियों, नये विचार वाले व्यवसायों तथा व्यवसाय करने के नये तरीकों को बढ़ावा दे रहा है तथा उन्हें मजबूत कर रहा है। देश के आर्थिक विकास में स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र की क्षमता और महत्व को पहचानते हुए माननीय प्रधानमंत्री ने 16 जनवरी, 2016 को स्टार्टअप इंडिया एक्शन प्लान 2016 का अनावरण किया। भारतीय परिस्थितिकी तंत्र का जटिल अवसर स्टार्टअप के मानक जीवन चक्र : विचार, सत्यापन, प्रारंभिक कर्षण और प्रवर्धन में निहित है। इसमें से प्रत्येक चरण में हितधारकों या लाभार्थियों का एक अलग समूह है। तद्नुसार स्टार्टअप इंडिया कार्य योजना के प्रमुख स्तंभों को अलग-अलग दृष्टिकोण के साथ चरणबद्ध तरीके से क्रियान्वित करने की परिकल्पना की गई थी। कार्य योजना में 'सरलीकरण तथा हैंड होल्डिंग' 'वित्त पोषण सहायता तथा प्रोत्साहन' और 'उद्योग शिक्षा साझेदारी तथा ऊष्मायन' जैसे क्षेत्रों में फैले 19 कार्य शामिल है। कार्य योजना 'स्टार्टअप' को एक अलग आर्थिक स्तंभ के रूप में मान्यता देने के लिए अनुकूल परिस्थितियां बनाती है। 2016 में लगभग 500 स्टार्टअप से लेकर फरवरी 2023 में 92000 से अधिक मान्यता प्राप्त स्टार्टअप्स, विश्व स्तर पर प्रसिद्ध भारत के स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र (इकोसिस्टम) की विकास गाथा और परिस्थितिकी तंत्र तथा समुदाय के संरचित विकास का विषय बन गया है। भारतीय स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र की समावेशिता और विविधता वास्तव में उत्साहजनक है।

स्टार्टअप संस्थाओं की दास्तान का संबंध सिर्फ संख्याओं से नहीं है। यह नये भारत में नूतन अवसरों का लाभ उठाने की क्षमता की कहानी है। इस नये भारत में नीतियों के केंद्र में एक सुविचारित अर्थनीति है उसमें स्टार्टअप इंडिया निर्णायक और असाधारण है। स्टार्टअप, उद्यमिता और सीडिंग जैसे शब्दों को युवाओं के बीच लोकप्रिय बनाने का श्रेय 16 जनवरी, 2016 को शुरू किए गए स्टार्टअप इंडिया को ही जाता है। यह राष्ट्र के नवोमेन्षको, उद्यमियों और चिंतकों का आह्वान करता है कि वे भारत की संवहनीय आर्थिक विकास और बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसरों के सृजन में नेतृत्वकारी भूमिका संभाले। स्टार्टअप इंडिया भारत के तेज रफ्तार, सतत नवोन्मेषी और मजबूत उधमिता तंत्र की वैश्विक तौर पर प्रसिद्ध यात्रा का प्रतीक बन गया है।

स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम के उद्देश्य– स्टार्टअप इंडिया का उद्देश्य भारतीय युवाओं में उद्यमशीलता की भावना जगाना और उनमें नवाचारों के प्रति रुचि बढ़ाना है। इसे जनवरी 2016 में स्टार्टअप्स के लिए अनुकूल परिस्थितिकी तंत्र विकसित करने और सतत आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से शुरू किया गया था। यह भारत की सरकारी नीति में अपनाया गया ढांचागत विकास है और इसमें भारत की अर्थव्यवस्था पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालने और देश के उपेक्षित और वंचित समुदायों को लाभ पहुंचाने की भरपूर क्षमता है।

'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम के प्राथमिक उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. **उद्यमिता को प्रोत्साहित करना:** युवाओं को उद्यमिता करियर के रूप में चुनने के लिए प्रेरित करना।
2. **स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण:** स्टार्टअप्स के विकास के लिए एक अनुकूल वातावरण बनाना, जिसमें निवेशक, मेंटर्स, और अन्य हितधारक शामिल हों।
3. **नवाचार को बढ़ावा देना:** नए विचारों और तकनीकों के विकास

को प्रोत्साहित करना।

4. **रोजगार सृजन को बढ़ावा देना:** स्टार्टअप्स के माध्यम से रोजगार के नए अवसर पैदा करना।

5. **आर्थिक विकास को गति देना:** स्टार्टअप्स के माध्यम से देश की अर्थव्यवस्था को गति देना।

6. **वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाना:** भारतीय स्टार्टअप्स को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाना।

स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम के मुख्य स्तंभ– नवाचार किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए आत्मनिर्भर और सतत विकास का आधार है। उद्यमिता वह धुरी है जो नवाचार के जरिए लोगों के जीवन को बदलने में भूमिका निभाती है। हम 'आत्मनिर्भर भारत' होने के अपने मिशन की दिशा में काम करते हैं, ऐसे में नवाचार को बढ़ावा देना और उद्यमियों को सहायता देना, ऐसे दो महत्वपूर्ण पहलू है जो उस गति को निर्धारित करेंगे जिस पर हम विकसित भारत की पटकथा लिखेंगे।

'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम छह मुख्य स्तंभों पर आधारित है :

1. **सरलीकरण और समर्थन :** स्टार्टअप्स के लिए नियामक प्रक्रियाओं को सरल बनाना, और उन्हें विभिन्न प्रकार की सहायता प्रदान करना।

2. **पोषण और वित्तपोषण :** स्टार्टअप्स को धन उपलब्ध कराना, और उन्हें मार्गदर्शन और प्रशिक्षण प्रदान करना।

3. **उद्योग–अकादमिक साझेदारी और इनक्यूबेशन :** उद्योग और अकादमिक संस्थानों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना, और इनक्यूबेशन केंद्रों की स्थापना करना।

4. **स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण :** स्टार्टअप्स के लिए एक मजबूत पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना, जिसमें निवेशक, मेंटर्स, और अन्य हितधारक शामिल हों।

5. **जागरूकता और प्रचार :** स्टार्टअप संस्कृति को बढ़ावा देना, और लोगों को उद्यमिता के लिए प्रेरित करना।

6. **नीतिगत हस्तक्षेप और नियामक सुधार :** स्टार्टअप्स के विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए नीतियों और नियमों में सुधार करना।

स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम के मुख्य घटक– भारत सरकार की स्टार्टअप इंडिया पहल के पीछे उद्देश्य स्टार्टअप संस्कृति को बढ़ावा देना तथा नवाचार और उद्यमिता के लिए एक मजबूत, समावेशी परिवेश बनाना है। ऐसे परिवेश में सतत आर्थिक विकास को बल देने के साथ–साथ बड़े पैमाने पर रोजगार सृजित करने की भी क्षमता है। इस पहल के जरिए सरकार नवाचारों और नये स्वरूपों में स्टार्टअप्स को सशक्त बनाना चाहती है। इस योजना के अंतर्गत उद्यमियों की मदद करने, स्टार्टअप के लिए मजबूत परिवेश बनाने और भारत को रोजगार–याचक देश की बजाय रोजगार–सर्जक देश बनाने के लिए अनेक कार्यक्रम शुरू किये गए हैं। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम कई प्रमुख घटकों पर आधारित है, जिन्हें निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

1. **सरलीकरण और समर्थन:**

1. **सरलीकृत अनुपालन:** स्टार्टअप्स के लिए नियामक प्रक्रियाओं को सरल बनाया गया है, जिससे उन्हें आसानी से व्यवसाय शुरू करने और संचालित करने में मदद मिलती है।

2. **स्व–प्रमाणीकरण:** स्टार्टअप्स को कुछ नियमों और विनियमों का स्व–प्रमाणीकरण करने की अनुमति दी गई है, जिससे अनुपालन बोझ कम होता है।

3. **फास्ट–ट्रैक पेटेंट परीक्षा:** स्टार्टअप्स के लिए पेटेंट आवेदनों की तेजी से जांच की जाती है, जिससे उन्हें अपने नवाचारों को जल्दी से सुरक्षित करने में मदद मिलती है।

4. **दिवालियापन कोड में सुधार:** स्टार्टअप्स के लिए दिवालियापन प्रक्रिया को सरल बनाया गया है, जिससे उन्हें व्यवसाय विफलता के मामले में आसानी से बाहर निकलने में मदद मिलती है।

2. **वित्तपोषण समर्थन:**

1. **स्टार्टअप इंडिया सीड फंड स्कीम :** प्रारंभिक चरण के स्टार्टअप्स को प्रोटोटाइप विकास, बाजार प्रवेश और व्यावसायीकरण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए।

2. **क्रेडिट गारंटी फंड ट्रस्ट फॉर स्टार्टअप्स :** स्टार्टअप्स को ऋण देने वाले बैंकों और वित्तीय संस्थानों को क्रेडिट गारंटी प्रदान करने के लिए।

3. **फंड ऑफ फंड्स :** निजी इक्विटी और वेंचर कैपिटल फंड में निवेश करके स्टार्टअप्स के लिए इक्विटी वित्तपोषण को बढ़ावा देने के लिए।

4. **एंजेल टैक्स छूट:** कुछ शर्तों के अधीन स्टार्टअप्स में निवेश पर एंजेल टैक्स से छूट प्रदान की गई है।

3. **इनक्यूबेशन और मेंटरशिप समर्थन:**

1. **स्टार्टअप इंडिया इनक्यूबेशन सेंटर्स:** स्टार्टअप्स को बुनियादी ढांचा, मार्गदर्शन और अन्य सहायता प्रदान करने के लिए देश भर में इनक्यूबेशन केंद्रों की स्थापना की गई है।

2. **अटल इनोवेशन मिशन:** स्कूलों और कॉलेजों में नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए।

3. **नेशनल मेंटरशिप प्लेटफॉर्म:** स्टार्टअप्स को अनुभवी मेंटर्स से जोड़ने के लिए एक ऑनलाइन प्लेटफॉर्म बनाया गया है।

4. **नवाचार को बढ़ावा देना:**

1. **स्टार्टअप इंडिया ग्रैंड चौलेंज:** नवाचार को बढ़ावा देने और सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए ग्रैंड चौलेंज आयोजित किए जाते हैं।

2. **अटल टिंकरिंग लैब्स :** स्कूलों में छात्रों को नवाचार और समस्या–समाधान कौशल विकसित करने के लिए अटल टिंकरिंग लैब्स की स्थापना की गई है।

5. **अन्य पहलें :**

1. **स्टार्टअप इंडिया लर्निंग प्रोग्राम :** उद्यमियों को मुफ्त ऑनलाइन पाठ्यक्रम और अन्य संसाधन प्रदान करने के लिए।

2. **स्टार्टअप इंडिया शोके :** सफल स्टार्टअप्स को प्रदर्शित करने और उन्हें निवेशकों और अन्य हितधारकों से जोड़ने के लिए।

3. **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग:** अन्य देशों के साथ स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र के विकास के लिए सहयोग स्थापित करना।

स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम का प्रभाव – स्टार्टअप इंडिया का भारत की अर्थव्यवस्था और विशेष रूप से रोजगार जुटाने तथा आर्थिक प्रगति की दृष्टि से बहुत अहम प्रभाव पड़ा है। सॉफ्टवेयर और सेवा कंपनियों के राष्ट्रीय संघ (नैसकाम) की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र में 2025 तक 5 लाख से ज्यादा नए रोजगार जुटाए जा सकेंगे। इस पहल ने विदेशी निवेशकों को भी आकर्षित किया है। विश्व में भारत की पताका लहराने के लिए नवोन्मेषी युवा वर्ग की सराहना की जानी चाहिए। उसकी बदौलत ही भारत का स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र दुनिया भर में हलचल पैदा

कर रहा है। माननीय प्रधानमंत्री ने ठीक ही कहा है ष्भारत के स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र का जुनून, सच्चाई और ईमानदारी से भरा होना उसकी ताकत है वह सतत स्व-अन्वेषण करते हुए खुद में सुधार लाकर अपनी ताकत बढ़ा रहा है। वह लगातार सीखने और खुद में परिवर्तन लाते हुए अपने आप को नई स्थिति के अनुरूप डाल रहा है। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम ने भारत में स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। यथा –

1. **स्टार्टअप्स की संख्या में वृद्धि :** भारत में स्टार्टअप्स की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। डीपीआईआईटी के अनुसार, भारत में 1 लाख से अधिक मान्यता प्राप्त स्टार्टअप्स हैं।
2. **वित्तपोषण में वृद्धि :** स्टार्टअप्स को मिलने वाले वित्तपोषण में वृद्धि हुई है। वेंचर कैपिटल और प्राइवेट इक्विटी निवेश में तेजी आई है।
3. **रोजगार सृजन :** स्टार्टअप्स ने बड़ी संख्या में रोजगार के अवसर पैदा किए हैं।
4. **नवाचार में वृद्धि :** स्टार्टअप्स ने विभिन्न क्षेत्रों में नए उत्पादों और सेवाओं का विकास किया है।
5. **आर्थिक विकास में योगदान :** स्टार्टअप्स ने देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

भारत के स्टार्टअप्स परिस्थितिकी तंत्र में युवा और गतिशील कर्मी विशेष रुचि लेकर शामिल हो रहे हैं और टेक्नोलॉजी तथा डिजिटलीकारण पर खास ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। भारत की विशाल जनसंख्या और लगातार बढ़ता मध्यम वर्ग स्टार्टअप्स के लिए बहुत बड़ा बाजार उपलब्ध कराते हैं और टेक्नोलॉजी तथा डिजिटलकरण से फिंनटेक, ई-कॉमर्स और स्वास्थ्य देखरेख जैसे क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सृजित हो रहे हैं। अटल नवाचार मिशन और स्मार्ट शहर मिशन जैसी पहलो के माध्यम से सरकार नवाचार प्रोत्साहन पर बोल दे रही है जिससे स्टार्टअप्स के लिए अधिक अवसर बढ़ रहे हैं।

स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम की चुनौतियां – स्टार्टअप इंडिया पहल के महत्वपूर्ण प्रभाव के बावजूद इसे अनेक चुनौतियां और बाधाओ से जूझना पड़ रहा है। स्टार्टअप्स के सामने एक बड़ी चुनौती फंडिंग तक पहुंच का अभाव है और वह भी खास कर शुरुआती दौर में। एक अन्य चुनौती है स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र में कुशल जनशक्ति का अभाव। अनेक स्टार्टअप अपेक्षित विशेषज्ञता और अनुभवी कुशल कर्मियों की कमी की समस्या झेल रहे हैं। स्टार्टअप पहल में एक कमी यह भी है की मुख्य जोर टेक्नोलॉजी स्टार्टअप पर ही दिया जाता है। यहतो सही है कि टेक्नोलॉजी स्टार्टअप्स ने काफी फंडिंग और ध्यान आकर्षित किया है लेकिन स्वास्थ्य-देखरेख, कृषि और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में बड़ी सफलताएं मिली है एंव इन क्षेत्रों में अभी भीबहुत ज्यादा संभावनाएं हैं। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम ने कई सफलताएं हासिल की हैं, लेकिन इसे अभी भी निम्न चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, यथा –

1. **धन की कमी :** प्रारंभिक चरण के स्टार्टअप्स के लिए धन प्राप्त करना अभी भी मुश्किल है।
2. **मार्गदर्शन का अभाव :** कई स्टार्टअप्स को अनुभवी मेंटर्स और सलाहकारों की कमी का सामना करना पड़ता है।
3. **जटिल नियामक प्रक्रियाएं:** कुछ नियामक प्रक्रियाएं अभी भी जटिल और समय लेने वाली हैं।
4. **बुनियादी ढांचे की कमी :** कुछ क्षेत्रों में स्टार्टअप्स के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे की कमी है।
5. **बाजार तक पहुंच:** सभी स्टार्टअप्स के लिए अपने उत्पादों और सेवाओं को बाजार में लाना आसान नहीं है।
6. **गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल की कमी :** स्टार्टअप्स को कुशल श्रमशक्ति की कमी का सामना करना पड़ता है।
7. **ग्रामीण क्षेत्रों में कम उद्यमिता :** ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।
8. **महिला उद्यमियों के लिए चुनौतियां :** महिला उद्यमियों को अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे कि वित्तपोषण तक पहुंच और सामाजिक बाधाएं।

इस पहल को कई कानूनी चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। भारत में स्टार्टअप्स नियामक व्यवस्था बेहद जटिल है जिससे नियमों का पालन करना काफी कठिन रहता है। स्टार्टअप्स के नवाचारों को सुरक्षित रखने की दृष्टि से बौद्धिक संपदा अधिकार के कानूनी प्रारूप को अधिक मजबूत बनाने की जरूरत है। अमेरिका और जापान की तुलना में भारत का स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र अपेक्षाकृत बाल्यावस्था में ही है और अभी पनप ही रहा है। तो भी हाल के वर्षों में स्टार्टअप इंडिया पहल और उधमिता तथा नवाचारों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से अन्य कई पहल करके भारत ने उल्लेखनीय प्रगति की है। भारत के स्टार्टअप परिस्थितिकी तंत्र में प्रौद्योगिकी और डिजिटलकरण पर विशेष बल दिया जा रहा है। इन प्रयासों के बावजूद भारत के उपेक्षित और वंचित समुदायों के विकास में स्टार्टअप इंडिया का प्रभाव सीमित रहा है भारत के अधिकतर स्टार्टअप शहरी इलाकों में है और उनके कर्ताधर्ता संपन्न पृष्ठभूमि वाले लोग ही हैं। देश के वंचित-उपेक्षित समुदायों के सामने आने वाली ढांचागत चुनौतियों पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता, जिनमें सामाजिक भेदभाव शिक्षा और प्रशिक्षण सुविधाओं तक पहुंच का अभाव और आर्थिक संसाधनों तक सीमित पहुंच जैसी चुनौतियां खास है।

स्टार्टअप इंडिया को सफल बनाने हेतु नीतिगत सिफारिशें – भारत में स्टार्टअप संस्कृति का विकास 21वीं सदी के शुरुआती वर्षों में शुरू हुआ। सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) और ई-कॉमर्स जैसे क्षेत्रों में कुछ शुरुआती स्टार्टअप्स ने सफलता हासिल की, जिससे युवा उद्यमियों को प्रेरणा मिली। हालांकि, उस समय स्टार्टअप्स को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिनमें धन की कमी, मार्गदर्शन का अभाव, और जटिल नियामक प्रक्रियाएं शामिल थीं। 'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम इन चुनौतियों को दूर करने और स्टार्टअप्स के विकास के लिए एक अनुकूल वातावरण बनाने के लिए शुरू किया गया था।'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम को और अधिक सफल बनाने के लिए, निम्नलिखित नीतिगत सिफारिशें की जाती हैं :

1. **धन की उपलब्धता बढ़ाना :**
   1. स्टार्टअप्स के लिए ऋण गारंटी योजनाओं को मजबूत बनाना।
   2. एंजेल निवेशकों और वेंचर कैपिटल फंडों को कर प्रोत्साहन प्रदान करना।
   3. क्राउडफंडिंग को बढ़ावा देना।
   4. सरकारी खरीद में स्टार्टअप्स को प्राथमिकता देना।
2. **मार्गदर्शन और प्रशिक्षण प्रदान करना :**
   1. मेंटरशिप कार्यक्रमों को विस्तारित करना और गुणवत्ता में सुधार करना।
   2. उद्यमिता विकास संस्थानों को मजबूत बनाना।

3. उद्योग-अकादमिक साझेदारी को बढ़ावा देना।
4. स्टार्टअप्स के लिए ऑनलाइन लर्निंग संसाधनों को विकसित करना।

3. नियामक प्रक्रियाओं को सरल बनाना:

1. अनुपालन बोझ को कम करना।
2. ऑनलाइन अनुपालन प्रणाली को लागू करना।
3. निरीक्षणों को कम करना।
4. विवाद समाधान तंत्र को सरल बनाना।

4. बुनियादी ढांचे में सुधार करना:

1. इंटरनेट कनेक्टिविटी को बेहतर बनाना।
2. बिजली आपूर्ति को विश्वसनीय बनाना।
3. परिवहन अवसंरचना को मजबूत बनाना।
4. इनक्यूबेशन केंद्रों और स्टार्टअप हब की स्थापना को बढ़ावा देना।

5. बाजार तक पहुंच आसान बनाना:

1. स्टार्टअप्स को विपणन और वितरण में सहायता प्रदान करना।
2. सरकारी ई-मार्केटप्लेस (GeM) पर स्टार्टअप्स को सूचीबद्ध करना।
3. अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में स्टार्टअप्स को बढ़ावा देना।
4. स्टार्टअप्स के लिए व्यापार मेलों और प्रदर्शनियों का आयोजन करना।

6. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल विकास को बढ़ावा देना:

1. शिक्षा प्रणाली में उद्यमिता को एकीकृत करना।
2. कौशल विकास कार्यक्रमों को स्टार्टअप्स की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना।
3. तकनीकी शिक्षा संस्थानों को मजबूत बनाना।
4. स्टार्टअप्स के लिए इंटर्नशिप और प्रशिक्षण कार्यक्रमों को बढ़ावा देना।

7. ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता को बढ़ावा देना:

1. ग्रामीण क्षेत्रों में स्टार्टअप हब और इनक्यूबेशन केंद्रों की स्थापना करना।
2. ग्रामीण उद्यमियों के लिए विशेष वित्तपोषण योजनाएं शुरू करना।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन करना।
4. स्थानीय संसाधनों और कौशल का उपयोग करने वाले स्टार्टअप्स को बढ़ावा देना।

8. महिला उद्यमियों को प्रोत्साहित करना :

1. महिला उद्यमियों के लिए विशेष वित्तपोषण और मेंटरशिप कार्यक्रम शुरू करना।
2. महिला उद्यमियों के लिए नेटवर्किंग अवसरों को बढ़ावा देना।
3. महिला उद्यमियों के लिए जागरूकता और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
4. महिला उद्यमियों के लिए अनुकूल नीतियां और विनियम बनाना।

9. डेटा-आधारित नीति निर्माण को बढ़ावा देना:

1. स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र पर डेटा एकत्र करने और विश्लेषण करने के लिए एक मजबूत प्रणाली स्थापित करना।
2. नीतिगत निर्णयों को सूचित करने के लिए डेटा का उपयोग करना।
3. नियमित रूप से स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम की प्रगति का मूल्यांकन करना।
4. हितधारकों के साथ परामर्श करके नीतियों को लगातार अनुकूलित करना।

निष्कर्ष – हम अपने जीवन, व्यवसाय और सपनों की कहीं ना कहीं से शुरुआत करते हैं। यह अपनी कामनाओं के राह पर चल पड़ने, किसी अनूठे विचार को सॅंजोने और फिर उसे साकार करने, राह में आने वाली चुनौतियों का सामना करने और विश्वास के साथ चुने गए लक्ष्य को हासिल करने की यात्रा है। यह ऐसे नवीन समाधानों, उत्पादों और सेवाओं को विकसित करने की भी यात्रा है। जिनसें अपने परिवेश-समाज को बेहतर बनाने की नई राहे, नये साधन मिले। भारत सरकार की स्टार्टअप इंडिया पहल के पीछे यही विचार है।

इस पहल के उद्देश्य हासिल करने के लिए सरकार ने एक कार्य-योजना बनाई है जिसमें स्टार्टअप परिवेश के सभी पक्षों पर ध्यान दिया जा रहा है। इस परिस्थितिकी तंत्र से स्टार्टअप आंदोलन तेज होगा और टेक्नोलॉजी के साथ-साथ कृषि, निर्माण, स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक क्षेत्र में भी इसका दायरा बढ़ेगा और इसका फैलाव वर्तमान महानगरों के साथ-साथ दूसरी और तीसरी श्रेणियां के शहरों, उपनगरीय तथा ग्रामीण इलाकों में भी बढ़ेगा। स्टार्टअप इंडिया पहल के अंतर्गत मुख्यत: नये उद्यमों और कारोबारों के इन पक्षो में मदद की जाती है – प्रक्रियाओं को सरल बनाना और इन्हें पूरा करने में मदद करना, नियमों का पालन आसान बनाना, स्टार्टअप के आगे ना बढ़ पाने की स्थितियों में इन्हें छोड़ पाने की आसान प्रक्रियाएँ, कानूनी मदद, पेटेंट आवेदनों का तेजी से निपटान, ज्यादा से ज्यादा जानकारियां वेबसाइट के जरिए उपलब्ध कराना, धन उपलब्ध कराना और अच्छे काम के लिए प्रोत्साहन देना, आयकर और कैपिटल गेन में छूट के प्रावधान, स्टार्टअप्स को ज्यादा धन मुहैया करा पाने के लिए संबंधित फंडों को भी धन देने के लिए एक और फंड (फंडऑफ फंड्स) बनाना और ऋण गारंटी योजना का प्रावधान, नये स्टार्टअप्स को सहारा दिलाने के लिये इंक्यूबेशन की व्यवस्था, उद्योग और शिक्षा जगत के बीच भागीदारी, नये इंक्यूबेटर और इनोवेशन लैब्स खोलना, प्रोत्साहन और जानकारी देने के लिए विभिन्न गतिविधियों और प्रतियोगिताओं का आयोजन और अनुदान मुहैया कराना है। स्टार्टअप हमारी आम जिंदगी की अनेक समस्याओं के नवीन और टेक्नोलॉजी-आधारित समाधान प्रस्तुत करते हैं। युवाओं में नये तरीके से सोचने और चली आ रही प्रणालियों तथा प्रक्रियाओं को चुनौती देने की क्षमता होती है। स्टार्टअप हमारे युवाओं की कल्पना और क्षमता को पंख लगा देते हैं ताकि वे नये भारत की विकास-यात्रा में भागीदार बन सके।

'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम भारत में नवाचार, उद्यमिता और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए एक महत्वपूर्ण पहल है। इस कार्यक्रम ने स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव डाला है, लेकिन इसे अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इन चुनौतियों को दूर करने और ष'स्टार्टअप इंडिया' कार्यक्रम को और अधिक सफल बनाने के लिए, सरकार, उद्योग और शिक्षा जगत को मिलकर काम करना होगा। नीतिगत सिफारिशों को लागू करके, भारत एक मजबूत और जीवंत स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण कर सकता है, जो देश के आर्थिक विकास और सामाजिक प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (2016). स्टार्टअप इंडिया एक्शन प्लान- https://www.startupindia.gov.in/content/dam/invest india/startupindia/pdfs/Startup_India_Action_Plan.pdf से लिया गया।
2. ऑक्सफैम इंडिया, (2018). माइंड द गैप. द स्टेट ऑफ एंप्लायमेंट इन इंडिया-https://www.oxfamindia-org/sites/default/files/

2018-03/Mind-The-Gap.pdf से लिया गया।
3. नेशनल हैंडिकेप्ड फाइनेंस एंड डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन. (एन.डी.). अबाउट https://www.nbfdc.nic.in/about-us से लिया गया।
4. स्टैंड-अप इंडिया (एन.डी.). अबाउट https://www.standupmitra.in/about-us. से लिया गया।
5. सिंह, एच. (2018). एंटरप्रेन्योरशिप एंड स्टार्टअप्स इन इंडिया : चौलेंजेज एंड अपार्च्यूनिटीज। जर्नल ऑफ इनोवेशन इकोनॉमिक एंड बेनेजमेंट, 27(1), 41-54, डीओआई: 10.3917/जेआईई. पीआर 1.0027 1
6. अग्रवाल, आर. और गर्ग, एस. (2018). स्टार्टअप इंडिया: नीति, प्रगति और चुनौतियां. आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 53(12), 35-42
7. गुप्ता, आर. (2020). स्टार्टअप इकोसिस्टम इन इंडिया: स्टेटस, चौलेंजेज एंड वे फॉरवर्ड. जर्नल ऑफ इनोवेशन इकोनॉमिक्स एंड मैनेजमेंट, 35(1), 11-25. डीओआई: 10.3917/जेआइई. पीआर 1.00351
8. गर्वनमेंट ऑफ इंडिया (2016)। स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र इन इंडिया: एक्शन प्लान.https://www.startupindia-gov.in/content/site/en/action plan.html.
9. दास, एस. (2020). भारत में स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र: एक सिंहावलोकन. जर्नल ऑफ एंटरप्रेन्योरशिप, 29(1), 1-25.
10. कुमार, ए. और सिंह, पी. (2021). स्टार्टअप इंडिया कार्यक्रम का प्रभाव: एक अनुभवजन्य विश्लेषण. भारतीय आर्थिक समीक्षा, 56(2), 201-225.
11. ऑक्सफैम इंडिया (2019)। इंडिया इनइक्वेलिटी रिपोर्ट 2018: Widening Gaps. https://www.oxfamindia-org/sites/default/files/201908/Oxfem-Inequality-Report.2018.pdf से लिया गया।
12. मिश्रा, पी. और जैन, वी. (2022). भारत में स्टार्टअप्स के लिए वित्तपोषण चुनौतियां और समाधान. वित्त और अर्थशास्त्र के भारतीय जर्नल, 80(3), 456-475.
13. शर्मा, आर. और गुप्ता, एस. (2023). भारत में महिला उद्यमिता: चुनौतियां, अवसर और नीतिगत हस्तक्षेप. प्रबंधन अनुसंधान जर्नल, 23(1), 123-145.
14. चौटर्जी, ए. (2018). स्टार्ट-अप इंडिया ए कांप्रिहेंसिव एनेलिसिस. जर्नल ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट एंड सोशल रिसर्च. 7(3), 1-8।
15. द इकोनॉमिक टाइम्स. (2021). स्टैंडअप इंडिया स्कीम : इंलिजिबिलिटी, बेनेफिट्स, इंटरेस्ट रेट, एंड हाउ टू एप्लाई। https://economictimes.indiatimes.com/small-biz/sme-sector/stand-up-india-scheme/articleshow/78416343.cms से लिया गया।
16. ओईसीडी (OECD) रिपोर्ट (2021): भारत में नवाचार को बढ़ावा देना: नीतिगत सिफारिशें. पेरिस: ओईसीडी प्रकाशन।
17. मिनिस्ट्री ऑफ सोशल जस्टिस एंड एमपॉवरमेंट, (2021), नेशनल हैंडिकैप्ड फाइनेंस एंड डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन. https://nhfdc.nic.in/frmSchemeDetails.aspx से लिया गया।
18. मिश्रा एस.के. एंड सिन्हा, ए, (2018) स्टार्टअप इंडिया ए बून ऑर बेन फॉर इंडियाज मार्जिनेलाइज्ड कम्यूनिटीज ? जर्नल ऑफ एंटरप्रेन्योरशिप एंड इनोवेशन इन एमर्जिंग इकोनॉमिक्स, 4(1), 68-76 से लिया गया।
19. संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) रिपोर्ट (2022): भारत में सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में स्टार्टअप्स की भूमिका. न्यूयॉर्क: यूएनडीपी।
20. द हिन्दू (2019)। स्टार्टअप इंडिया व्हाई विमेन एंटरप्रेन्योर्स आर नॉट मेकिंग द कट। https://www.thehindu.com/business/Industry/start-up-india-why-women-entrepreneurs-are-not-making-the-cut/aticle28329050 से लिया गया।
21. गुप्ता, वी एंड जैन, आर. के. (2017)। सोशल एंटरप्रेन्योरशिप एंड इनक्लूजिव ग्रोथ इन इंडिया: द रोल ऑफ गवर्नमेंट एंड पॉलिटिक्स. जर्नल ऑफ सोशल एंटरप्रेन्योरशिप, 8(2), 177-194 से लिया गया।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Job Satisfaction of Secondary School Teachers

Dr. Sunita Murdia* Khushbu Kanwar Rathod**

*Associate Professor, L.M.T.T. College, Dabok (Udaipur) (Raj.) INDIA
**Research Scholar, Janardan Rai Nagar Rajasthan University (Deemed to be University), Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract: The according to spector : "The extend to which people like (satisfaction) or dislike (dissatisfaction) their jobs is called job satisfaction.

Researcher try to find out the job satisfaction of 400 secondary school Govt and Private schools teachers. For this researcher have administered standardized job satisfaction tool on 400 secondary school teachers. After scoring, apply statistical technique mean, S.D. and t-value have been calculated. The main finding were there is significant difference between Govt and Private school teachers Govt school teachers were more satisfy from their job than private school teachers.

Objectives: Objectives of the study are as follows:

i. To compare the job satisfaction of secondary school teachers teaching in Govt and Private secondary schools

ii. To compare job satisfaction of male and female secondary school teachers.

Hypothesis: Following are the hypothesis of the study:

i. There is no significant difference between job satisfaction of Govt and Private secondary school teachers

ii. There is no significant difference between job satisfaction of male and female secondary school teachers.

Methodology :-

(a) Sampling : From each Govt and Private schools 5 male and 5 female teachers have been selected randomly from 40 secondary schools as shown as under

Total Sample

- **Govt Secondary School Teachers 200**
  - **Male Teachers 100**
  - **Female Teachers 100**
- **Private Secondary School Teachers 200**
  - **Male Teachers 100**
  - **Female Teachers 100**

(b) Method : The present research is going to study the job satisfaction of secondary school teachers. For this survey method is suitable approach for the desired data collection, Hence it has been employed for this study

(c) Tools used in the study : Tools is a device for describing and qualifying data in research. Here are varieties of tools available for the research. In this study the following tools were used :

Tools

- **Standardized Tools**
  - **(i) Job satisfaction scale (Prepared by Dr. Meera Dixit)**
  - **(ii) Teacher effectiveness (Prepared by Kumar and Mutha)**
- **Self-made Tools**
  - **Emotional Intelligence Scale**

Data collection and analysis: Standardized job satisfaction tool prepared by Meera Dixit has been administered on 400 secondary school Govt, Private, Male and Female teachers After area wise scoring has been done and applying statistical technique (Mean, S.D. and t value) for analysis of data and presented is the following tables

Objective no. 1 – To Compare the Job Satisfaction of Secondary School Teachers Teaching in Government and Private Schools.

Table no. 1 (See in last page)

Interpretation of the result: Following results are drawn from the table1 :

1. Intrinsic aspects of job: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school secondary school teachers in intrinsic aspect of job area are 29.17, 2.85 and 27.85, 3.38. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 2.3081 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding 'intrinsic aspects of job' area between Govt. and Private secondary school teachers. The mean value of Private teachers is more than Govt. teachers. So, it is evident that private teachers are more satisfied than Govt.

teachers.

2. Salary, promotional avenues and service conditions: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school in salary, promotional avenues and service conditions area are19.65, 3.31 and 16.93, 4.81. The t-value calculated for significant difference between mean score is 3.6058 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding 'salary, promotional avenues and service conditions' area between Government and Private secondary school teachers. The value of mean for the Government teachers is higher than Private teachers. So it is evident that Government teachers are more satisfied with their salaries, promotions and service condition in comparison to Private teachers.

3. Physical facilities: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school on 'physical facilities' area are36.75, 5.69 and 36.05, 4.19. The t-value calculate for significant difference between mean scores is 0.444 which is lesser than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding physical facilities between Government and Private secondary school teachers. They are equally satisfied with the facilities provided in schools.

4. Institutional plans and policies: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school on 'institutional plans and policies' area is 23.60, 4.98 and 22.37, 3.14. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 1.6230 which is lesser than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'institutional plans and policies' area between Government and Private secondary school teachers.

5. Satisfaction with authorities: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school of 'satisfaction with authorities' area is 23.97, 2.25 and 21.92, 2.40. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 4.8269 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'satisfaction with authorities' area between Government and Private school secondary school teachers.

6. Satisfaction with social status and family welfare: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school on 'satisfaction with social status and family welfare' area are 22.58, 3.15 and 21.43, 2.01. The t-value calculate for significant difference between mean scores is 2.3846 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'satisfaction with social status and family welfare' area between Government and Private secondary school teachers.

7. Rapport with students: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school on 'rapport with students' area is 26.37, 3.96 and 24.95, 2.08. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 2.4550 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'rapport with students' area between Government and Private school secondary school teachers.

8. Relationship with co-workers: The mean and standard deviation obtained from Government and Private school on 'relationship with co- workers' area is 20.55, 3.14 and 19.50, 1.00. The t-value calculate for significant difference between mean scores is 2.4659 which is greater than the table value 1.97 at 0.05 level of significance (df=198). So it is evident from this value that there is no significant difference regarding relationship with co-workers area between Government and Private school secondary school teachers.

- The mean and standard deviation obtained of Government and Private school on total job satisfaction area are 196.07, 17.09 and 193.20, 17.96. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 0.8955. which is lesser than the table value (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference regarding 'total job satisfaction' area between Government and Private school secondary school teachers. So, it reveals that the secondary school teachers of both school are equally satisfied with their jobs.

Hypothesis Testing: Hence, the hypothesis no. that is there no significant difference between the job satisfaction of secondary school teachers teaching in Government and Private schools is accepted except area of 'intrinsic aspects of job'.

Objective no. 2 –To Compare the Job Satisfaction of Male and Female Secondary School Teachers.

Table no. 2 (see ina last page)

Interpretation of the result: Following results are drawn from the table2 :

1. Intrinsic aspects of job: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in intrinsic aspect of job area are 26.88, 2.19 and 30.15, 3.23. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 6.4937 which is greater than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding intrinsic aspects of job between male and female secondary school teachers. The value of mean for secondary school female teachers is higher than male teachers. So, it is evident that male teachers are less satisfied from job than

the female teachers.

2. Salary, promotional avenues and service conditions: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in salary, promotional avenues and service conditions area are 17.55, 4.18 and 19.05, 4.38. The t-value calculated for significant difference between mean score is 1.8969 which is lesser than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'salary, promotional avenues and service conditions'.

3. Physical facilities: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in 'physical facilities' area is 35.68, 5.79 and 37.12, 4. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 1.5838 which is lesser than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding physical facilities in job.

4. Institutional plans and policies: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in 'institutional plans and policies' area is 21.90, 4.34 and 24.07, 3.76. The t-value calculate for significant difference between mean scores is 2.9199 which is greater than the table value 2.60 (df=198) at 0.01 level of significance. So, it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding 'institutional plans and policies' area between male and female secondary school teachers. The male secondary school teachers are less satisfied from institutional plans and policies than the female as their mean score is less than females.

5. Satisfaction with authorities: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in 'satisfaction with authorities' area are 23.63, 3.41 and 22.68, 1.63. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 0.5126 which is lesser than the table value 1.97 (df=198) at 0.01 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference in the level of satisfaction regarding 'satisfaction with authorities' area between male and female secondary school teachers.

6. Satisfaction with social status and family welfare: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers on 'satisfaction with social status and family welfare' area is 21.98, 2.27 and 22.03, 3.08. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 0.1013 which is lesser than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference regarding 'satisfaction with social status and family welfare' area between male and female secondary school teachers.

7. Rapport with students: The mean and standard deviation obtained male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in 'rapport with students' area are 24.97, 3.72 and 26.35, 2.49. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 2.3944 which is greater than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding 'rapport with students' area between male and female secondary school teachers. The secondary female teachers have more rapport with students as their mean value is higher than the male teachers.

8. Relationship with co-workers: The mean and standard deviation obtained of male (N=100) and female (N=100) secondary school teachers in 'relationship with co-workers' area are 19.58, 2.99 and 20.47, 1.44. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 2.0590 which is greater than the table value 1.97 (df=198) at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is significant difference in the level of satisfaction regarding relationship with co-workers area between male and female secondary school teachers. The secondary female teachers have good relationship with co-workers as their mean score is higher than the male secondary school teachers.

- The mean and standard deviation obtained of male and female secondary school teachers on total job satisfaction area is 191.90, 16.06 and 197.37, 18.60. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 1.7233. Which is lesser than the table value't' 1.97 at 0.05 level of significance. So, it is evident from this value that there is no significant difference regarding 'total job satisfaction' between male and female secondary school teachers. The mean scores of female secondary school teachers are more than male secondary school teachers which show that female teachers are more satisfied with their jobs in comparison to male teachers in some areas.

Hypothesis Testing: Hence, the hypothesis no. that there is no significant difference between the job satisfaction of male and female secondary school teachers is selected except the intrinsic aspect of job, institutional plans & policies and relationship with co-workers areas.

References:-

1. A charya N.K. DaiLee, Kira J.K. (2006) "Team work and Job satisfaction in construction projects" Technology Management for the Global Future, Vol 3, Pp. 1147-1156
2. Anari, Naderi, Nahid (2012), "Teachers, Emotional intelligence and Job satisfaction on and organization commitment", Journal of work place and learning Vol 24(4) p.p. 256-259
3. Best J.W. (1963), "Research in Education", New Delhi, Prentice Hall of India, Pvt. Ltd
4. Buch, M.B. (1984), A Survey of Research Education, Baroda, M.S. University

Websites:-
1. www.dissertation.com
2. www.academia.edu
3. www.researchjournali.com
4. shodhganga.inflibnet.ac.in
5. www.researchgate.net

Table no. 1: Analysis of Comparison of the Job Satisfaction of Secondary School Teachers Teaching in Govt. and Private Schools

S.	Area of Job Satisfaction	Types of school	Mean	S.D.	t- value	Significant on 0.01/0.05level
1.	Intrinsic aspects of job	Govt.(N=100)	29.17	2.85	2.3081	Significant
		Private(N=100)	27.85	3.38		
2.	Salary, promotional avenues & service conditions	Govt.(N=100)	19.65	3.31	3.6058	Significant
		Private(N=100)	16.93	4.81		
3.	Physical facilities	Govt.(N=100)	36.75	5.69	0.444	Insignificant
		Private(N=100)	36.05	4.19		
4.	Institutional plans and policies	Govt.(N=100)	23.60	4.98	1.6230	In Significant
		Private(N=100)	22.37	3.14		
5.	Satisfaction with authorities	Govt.(N=100)	23.97	2.25	4.8269	Significant
		Private(N=100)	21.92	2.40		
6.	Satisfaction with social status and family	Govt.(N=100)	22.58	3.15	2.3846	Significant
		Private(N=100)	21.43	2.01		
7.	Rapport with students	Govt.(N=100)	26.37	3.96	2.4550	Significant
		Private(N=100)	24.95	2.08		
8.	Relationship with co-workers	Govt.(N=100)	20.55	3.14	2.4659	Significant
		Private(N=100)	19.50	1.00		
	Total job-satisfaction	**Govt.**	**196.07**	**17.09**	**.8955**	**Significant**
		Private	**193.20**	**17.96**		

df = 198
Table value at 0.05 level is = 1.97
Table value at 0.01 level is = 2.60

Graph No. 1: Analysis of Comparison of the Job Satisfaction of Secondary School Teachers Teaching in Govt. and Private Schools

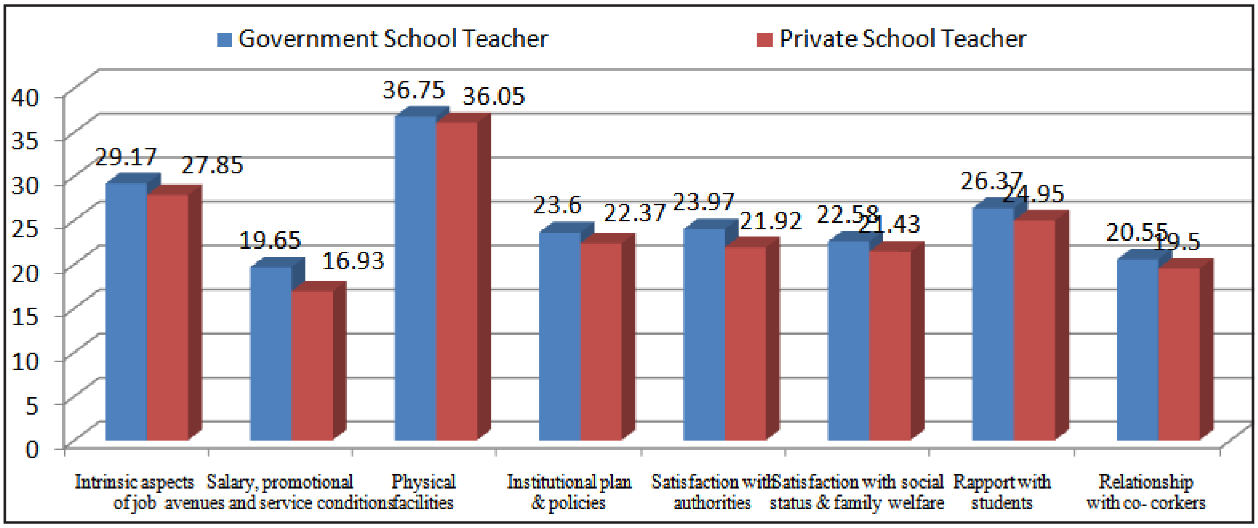

Table no. 2: Analysis of Comparison of the Job Satisfaction of Male and Female Secondary School Teachers

S.	Area of Job Satisfaction	Gender	Mean	S.D.	t- value	Significant on 0.01/0.05level
1.	Intrinsic aspects of job	Male	26.88	2.19	6.4937	Significant
		Female	30.15	3.23		
2.	Salary, promotional avenues & service conditions	Male	17.55	4.18	1.8969	Insignificant
		Female	19.05	4.38		
3.	Physical facilities	Male	35.68	5.76	1.5838	Insignificant
		Female	37.12	4		
4.	Institutional plans and policies	Male	21.9	4.34	2.9199	Significant at 0.01 level
		Female	24.07	3.76		
5.	Satisfaction with authorities	Male	22.63	3.41	0.5126	Insignificant
		Female	22.68	1.63		
6.	Satisfaction with social status and family	Male	21.98	2.27	0.1013	Insignificant
		Female	22.03	3.08		
7.	Rapport with students	Male	24.97	3.72	2.3944	Significant at 0.05 level
		Female	26.35	2.49		
8.	Relationship with co-workers	Male	19.58	2.99	2.0590	Significant at 0.05 level
		Female	20.47	1.44		
	Total job-satisfaction	**Male**	**191.90**	**16.06**	**1.7233**	**Insignificant**
		Female	**197.37**	**18.6**		

df = 198
Table value at 0.05 level is = 1.97
Table value at 0.01 level is = 2.60
Graph No. 2: Analysis of Comparison of the Job Satisfaction of Male and Female Secondary School TeachersInterpretation

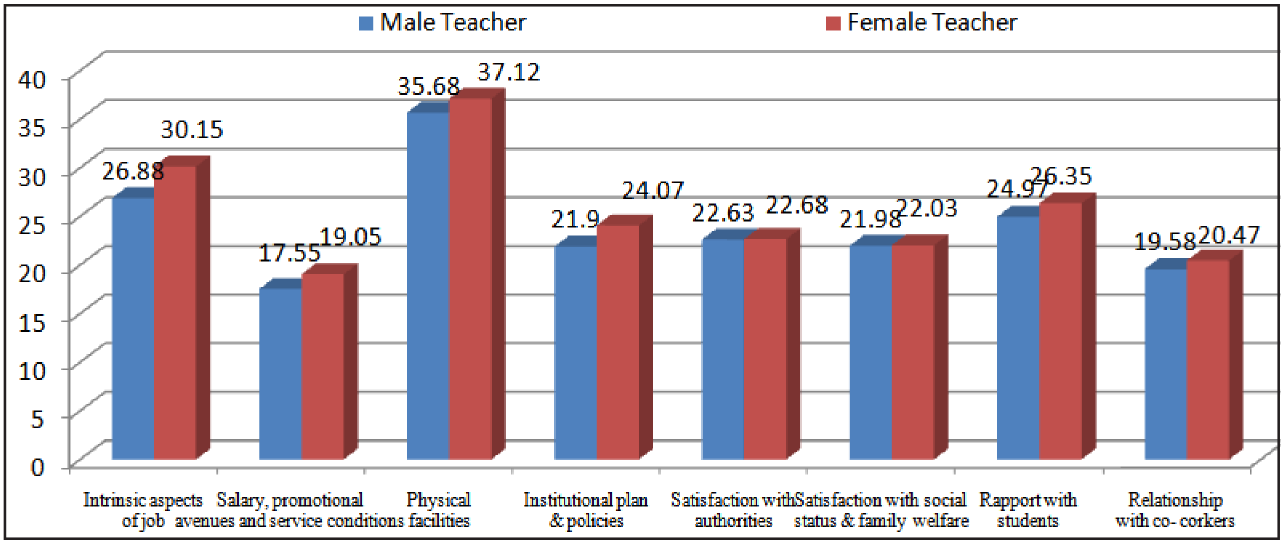

****

कुमार विश्वास की कविताएं : सांस्कृतिक विरासत और संरक्षण का जीवंत दस्तावेज

सरिता सैनी* डॉ. निर्मला राव**

* शोधार्थी (हिंदी) संगम विश्वविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत
** सह-आचार्य, संगम विश्वविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

शोध सारांश – कुमार विश्वास समकालीन हिंदी कविताओं में अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। समकालीन कविताएं मात्र साहित्यिक अभिव्यक्ति ना होकर जन संवाद के माध्यम से सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक सरोकारों का सशक्त माध्यम रही है। कुमार विश्वास की कविताएं भी सांस्कृतिक विरासत, राष्ट्रीय चेतना, लोक संवेदना, मानवीय मूल्य, भारतीय परंपरा व आधुनिकता की संतुलित व समन्वित अभिव्यक्ति रही है। कुमार विश्वास की कविताएं न सिर्फ अतीत का गुणगान करती है, बल्कि सांस्कृतिक विरासत व संस्कृति को समकालीन जीवन से जोड़कर उसे जीवंत बना देती है। वे कविताओं को केवल सौंदर्य बोध तक सीमित न रखकर सांस्कृतिक चेतना का माध्यम बना देते हैं। जैसे भाषा संस्कृति के संरक्षण की वाहक होती है, वैसे ही कुमार विश्वास की भाषा भी सहज, संप्रेषणीय और भावनात्मक लोक संस्कृति की वाहक है।
शब्द कुंजी – कुमार विश्वास, साहित्यिक अभिव्यक्ति, सांस्कृतिक चेतना, सांस्कृतिक विरासत, भारतीय परंपरा, संरक्षण।

प्रस्तावना – सांस्कृतिक विरासत वह धरोहर है, जिसमें हमारे समाज व राष्ट्र के जीवन- मूल्य, हमारी आस्थाएं, परंपराएं, विश्वास, साहित्य, कला, भाषा और जीवन-दर्शन सभी शामिल है। यह अमूल्य निधि न केवल हमारे अतीत की स्मृति है, अपितु हमारी वर्तमान की चेतना और हमारे भविष्य को दिशा प्रदान करने वाली भी है। सांस्कृतिक विरासत हमारी पहचान को सुदृढ़ करती है। उसे अपने मूल आधार से जोड़ती है और हमें नैतिकता, मानवता व सद्भाव के मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा देती है। सांस्कृतिक विरासत राष्ट्र की आत्मा के समान है, जिसका संरक्षण और संवर्धन प्रत्येक पीढ़ी का दायित्व होता है।

भारतीय साहित्य हमेशा से ही सांस्कृतिक विरासत को अपने में संजोए हुए है। वेदों से लेकर वर्तमान भारतीय साहित्य सांस्कृतिक चेतना, परंपरा, लोक-संस्कृति, ऐतिहासिक गौरव व मानवीय मूल्यों को अपने में समेटे हुए है। हिंदी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक का साहित्य हमारी लोक-संस्कृति का वाहक रहा है। आदिकालीन काव्य में जहां धार्मिक काव्य हो या रासो काव्य, लौकिक काव्य हो या गद्य साहित्य सभी में ऐतिहासिकता व लोक-संस्कृति के साथ राष्ट्रीय चेतना की भावना प्रलक्षित होती है। ऐसे ही भक्ति काल की निर्गुण व सगुण काव्य धारा हो या रीतिकाल की रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध या रीतिमुक्त काव्य धारा हो सभी काव्य धाराएं धार्मिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक विरासत को संभाले हुए है।

आधुनिक काल में भी इसी परंपरा का निर्वाह करते हुए रचनाकारों ने अपने काव्य में हमारी भारतीय सांस्कृतिक विरासत को संरक्षण प्रदान किया है। इन्हीं आधुनिक समकालीन कवियों में प्रमुख रूप से अशोक बाजपेयी, केदारनाथ सिंह, अरुण कमल, धूमिल, रघुवीर सहाय, अनामिका, कुमार विश्वास, मलयज आदि कवियों का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। ओमप्रकाश जोशी व करतार सिंह योगी ने अपनी पुस्तक 'राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत में लिखा है कि- 'साहित्य लिखित अथवा मौखिक कैसा भी हो, इसका विकास मानव मन की अंतर्मुखी प्रवृत्तियों से हुआ है। हर युग में इसके द्वारा जन सामान्य के सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक जीवन के आदर्शों की रचना हुई है। इसकी आत्मा लोक मानस में सन्निहित है।'[1]

इन्हीं विचारों को अपने साहित्य में सम्मिलित करते हुए कुमार विश्वास ने भारतीय सांस्कृतिक चेतना, लोक-परंपरा, रामकथा व मानवीय मूल्यों को अपने काव्य का विषय बनाया और भारतीय सांस्कृतिक विरासत को संरक्षण प्रदान किया। उनके काव्य में भावनात्मक अभिव्यक्ति के साथ-साथ भारतीय संस्कृति का संरक्षण भी है। जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है कि-

'नई पीढ़ी को पुरखों से जोड़ना है अगर,
तो विरासत को बोझ नहीं, संवाद बनाना होगा।'

आज जहां वंदे मातरम जैसे राष्ट्रीय गीत पर प्रतिबंध लगाने की बात कुछ लोगों द्वारा उठाई गई तो कुमार विश्वास ने इसे अनुचित ठहराते हुए कहा कि- 'वंदे मातरम् पर लड़ रहे हैं कितने मूर्ख हैं हम'।[2] साथ ही उन्होंने कहा जब परतंत्र भारत ने इसका विरोध नहीं किया, तो आज स्वतंत्र भारत में लोग इसका विरोध करके क्या करना चाहते हैं।
भारतीय सभ्यता और भारतीय संस्कृति के प्रति कुमार विश्वास हमेशा से ही जागरूक रहे हैं। उन्होंने कहा है कि-

'राम तुम्हारे होने का बस इतना सा मतलब है,
धरती पर धर्म की फिर से जीत हो सकती है'

इस प्रकार राम-चरित्र के माध्यम से वह भारतीय धार्मिक संस्कृति में मानवीय नैतिक आदर्श की स्थापना पर बल देते हैं। उनका मानना है कि-

'जो समय के साथ ना बदले, वो जज़्बात नहीं होते,

जो जज्बात बदल जाए, वो हालत नहीं होते।'

अर्थात् हमारी भावनाएं समय और अनुभव के साथ विकसित होती है, हमारी परिस्थितियां, हमारे हालात, भावनाओं के बदलने से नहीं बदलते।

उन्होंने भारतीय सांस्कृतिक मानवीय मूल्यों में स्थिरता तथा व्यक्तिगत अनुभव में गतिशीलता को स्वीकार किया है। कुमार विश्वास स्वयं कहते हैं कि–

'मैं हिंदुस्तान हूं, मुझे तुम तोड़ नहीं सकते,
मेरी मिट्टी में इतिहास बोलता है।'

अर्थात् मैं भारत का प्रतिनिधित्व करने वाला हूं। चाहे कितने ही राजनीतिक, सामाजिक, वैचारिक मतभेद हो मेरा अस्तित्व बना रहेगा। ये सभी मत मुझे तोड़ नहीं सकते। इस प्रकार यह भारत की मिट्टी, भारतीय लोक संस्कृति व ऐतिहासिक गौरव का बखान करने वाली है।

कुमार विश्वास की प्रसिद्धि का आधार 'कोई दीवाना कहता है' कविता की पंक्तियाँ–

'कोई दीवाना कहता है, कोई पागल समझता है,
मगर धरती की बेचैनी को सिर्फ बादल समझता है'[3]

भारतीय सामाजिक मूल्यों व सांस्कृतिक चेतना की ओर संकेत करती है।

ऐसे ही उनकी वर्तमान प्रसिद्ध कविता 'कन्हैया–कन्हैया' सांस्कृतिक व सामाजिक मूल्यों को अपने में संजोए हुए है। ये कविता भक्ति, प्रेम, आनंद, सांस्कृतिक चेतना व जीवन दर्शन का प्रतिबिंब है।

'सरेआम कौरव गजब ढा रहे हैं,
ये दुशासनों से बढे जा रहे हैं,
यूं कब तक तू चुपचाप देखेगा ये सब,
ओ लुटते हुए चीर के सुन बढैया,
कन्हैया–कन्हैया, कन्हैया–कन्हैया।'[4]

यहां उन्होंने महाभारत काल की उस विषम स्थिति की ओर इशारा किया है, जो आज भी हमारे मध्य एक असहनीय पीड़ा के रूप में प्रासंगिक है।

कुमार विश्वास की कविता 'वंश नहीं चलता कान्हा' से हमें संदेश मिलता है कि हमारी सच्ची सांस्कृतिक विरासत वंश नहीं बल्कि मूल्य और कर्म होते हैं, जो भारतीय संस्कृति का मूल आधार है। उन्होंने लिखा है–

'हर नील सपनों की हत्या का
दोष नहीं मिटता कान्हा
वंश भले चसके युग युग
पर इन विजयों का
सच पूछो तो
वंश नहीं चलता कान्हा'[5]

यहां श्री कृष्ण का वंश ना चलना से तात्पर्य यह है कि वे आज भी जीवित हैं, क्योंकि उनके विचार (पवित्र गीता), नीति और जीवन दर्शन हमारी संस्कृति में रचे बसे हैं।

जैसा कि डॉ.भीमराज पटेल ने अपनी पुस्तक 'राष्ट्रीय संस्कृति एवं संस्कार' में लिखा है कि– 'भारतीय संस्कृति एक त्यागशील संस्कृति है। भारतीय संस्कृति ने स्वार्थ हित लाभ और आत्म चिंतन से ऊपर उठकर सदैव पर कल्याण और परोपकार के विषय में ही सोचा है।'[6]

ऐसे ही राष्ट्रीय प्रेम से ओत–प्रोत कुमार विश्वास की कविता 'है नमन उनको' जिसमें उन्होंने राष्ट्रीय प्रेम और शहीदों के त्याग व बलिदान को अभिव्यक्त किया है। यह कविता जहां राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है, वहीं हमारे ऐतिहासिक गौरव व पौराणिक गाथाओं की सत्यता को भी प्रकट करती है। उन्होंने राष्ट्रीय अमर शहीदों को नमन करते हुए लिखा है कि–

'है नमन उनको कि जो यशकाय को अमरत्व देकर,
इस जगत में शौर्य की जीवित कहानी हो गए हैं,
है नमन उनको कि जिनके सामने बौना हिमालय,
जो धरा पर गिर पड़े पर आसमानी हो गए हैं।'[7]

अर्थात् जो वीर इस धरती मां के लिए शहीद हो गए हैं, वह सिर्फ मृत्यु को नहीं प्राप्त हुए अपितु संसार में अमर हो चुके हैं, ऐसे वीर जवानों को हमारा नमन।

इसी तरह अपनी 'मद्यन्तिका' कविता में उन्होंने पौराणिक आख्यान का वर्णन कर नैतिकता को अपनाने की बात कही है। वह मद्यन्तिका से कहते हैं की–

'विद्वेष हलाहल पीकर अमृत छलकना
शिव वाली परंपरा को पहचाने देना।'[8]

अर्थात् जिस प्रकार शिव ने सृष्टि को बचाने व अमृत देने हेतु जहर पिया, तुम भी विद्वेष रूपी जहर को पीकर सभी को अमृत रूपी ख़ुशी प्रदान करना।

ऐसे ही कुमार विश्वास की कविता 'जो आता है वो जाता है' में भी उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों के साथ–साथ पौराणिक पात्रों को भी जीवित किया। जहां उन्होंने अपनी कविता में पौराणिक पात्र राम व कृष्ण का उल्लेख किया, वहीं उन्होंने प्रेम प्रसंग का आदिकथानक दुष्यंत कुमार व शकुन्तला को भी अपनी कविता में स्थान दिया। जहां उन्होंने चंद्रगुप्त व सम्राट अशोक की बात कही, वहीं उन्होंने गांधी, अंबेडकर, सुभाष चंद्र व भगत सिंह के बलिदान को भी अपनी कविता के माध्यम से मुखरित किया।[9]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि कुमार विश्वास की कविताएं न केवल भावात्मक अभिव्यक्ति है, अपितु भारतीय सांस्कृतिक विरासत और संरक्षण का जीवंत दस्तावेज भी है। उनकी कविताओं में भावों के साथ–साथ भारतीय सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रीय प्रेम, धार्मिक, नैतिक मूल्यों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. जोशी, ओम प्रकाश, और करतार सिंह योगी, 'राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत': महेंद्र बुक कंपनी, जयपुर : 2013 ई., पृष्ठ संख्या 73
2. एजेंडा आज तक : यूट्यूब चौनल, 2025 ई.
3. विश्वास, कुमार, 'कोई दीवाना कहता है' : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली : 2023 ई., पृष्ठ संख्या 113
4. विश्वास, कुमार, 'कन्हैया कन्हैया': यूट्यूब चौनल (कुमार विश्वास), 2024 ई.
5. विश्वास, कुमार, 'वंश नहीं चलता': 'फिर मेरी याद' काव्य संग्रह, 2024 ई., पृष्ठ संख्या 59
6. पटेल, भीमराज, 'राष्ट्रीय संस्कृति एवं संस्कार' : मोनिका पब्लिकेशन, जयपुर : 2016 ई., पृष्ठ संख्या 134
7. विश्वास, कुमार, 'है नमन उनको' : 'कोई दीवाना कहता है' काव्य संग्रह, 2019 ई., पृष्ठ संख्या 99
8. विश्वास, कुमार, 'मद्यन्तिका (मेहंदी)' : 'कोई दीवाना कहता है' काव्य संग्रह, 2019 ई., पृष्ठ संख्या 98
9. विश्वास, कुमार, 'जो आता है वो जाता है' : यूट्यूब चौनल (कुमार विश्वास), 2019 ई.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सतत् पर्यटन प्रशासन में प्रौद्योगिकी की भूमिका

डॉ. गणेश कुमार दुबे*

* सहायक प्राध्यापक, माता गुजरी महिला महाविद्यालय, जबलपुर(म.प्र.) भारत

प्रस्तावना–वर्तमान समय में सतत पर्यटन एंव प्रशासन में बिना प्रौद्योगिकी के प्रयोग से पर्यटन उद्रयोग नहीं चल सकता है क्योकि आज जहॉ पर भी प्रशासन की बात आती है उस स्थान पर प्रौद्योगिकी अपना एक अलग महत्व रखती है। क्योकि आज प्रौद्योगिकी के साथ किसी भी विषय पर आप उसका भौतिक सत्यापन करके बहुत कुशल प्रशासन को चला सकते है। प्रस्तुत अध्धयन पर्यटन के दृष्टिकोण से प्रशासन में प्रौद्योगिकी के उपयोग और अनुप्रयोग के सैद्धांतिक एंव व्यवहारिक दृष्टिकोण पर विचार करता है। क्योकि स्थायी पर्यटन को भविष्य में आगे बढाने के लिए प्रौद्योगिकी के एकीकरण से प्रशासनिक बदलाब बहुत ही आसानी एंव सुगमता पूर्वक कर सकते है। प्रौद्योगिकी के रचनात्मक और विनाशकारी परिणाम स्थायी पर्यटन प्रशासन में अपनी एक अलग ही ध्यान केंद्रित कराता हैं। हालाँकि अध्ययन टिकाऊ पर्यटन के लिए प्रौद्योगिकी के रचनात्मक कार्यान्वयन पर केंद्रित है। अध्ययन का उद्देश्य सतत पर्यटन विकास में प्रौद्योगिकी की भूमिका और महत्व की पहचान करना है। अध्ययन के नतीजे सरकार एवं सार्वजनिक एंव निजी क्षेत्रों के साथ ही नीति निर्माताओं के लिए प्रौद्योगिकी और टिकाऊ पर्यटन प्रशासन के एकीकरण की प्रक्रिया में विभिन्न विकासात्मक संकेतकों की पहचान करने और उन्हें लागू करने में सहायक हैं।
शब्द कुंजी – एकीकरण, प्रौद्योगिकी, सतत पर्यटन, ई–पर्यटन, पर्यटन विकास।

प्रस्तावना – वर्तमान में पर्यटन का विस्तार आज देश एवं धार्मिक पर्यटन ही नहीं बल्कि पूरे विश्व परिदृश्य में अपना ही एक अलग रूप रखता है क्योकि आज पर्यटन केवल पर्यटन न होकर एक उद्रयोग के रूप में विश्व पटल पर अंकित हो रहा है। और वर्तमान में पर्यटन बिना प्रौद्योगिकी के पर्यटन का विकास एवं विस्तार नहीं हो पावेगा। पर्यटन और प्रौद्योगिकी साथ–साथ चलते हैं। यह वह तकनीक है जिसे पर्यटन के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि यह न केवल आर्थिक विकास को प्रभावित करती है, बल्कि लंबे समय में उद्योग की समृद्धि में प्रमुख भूमिका निभाती है। सूचना सेवा पर्यटक सुविधा का एक प्रमुख घटक है। अदृश्य होते हुए भी यह पर्यटकों के लिए अमूल्य है। यद्यपि त्वरित पुनर्प्राप्ति सुविधा के साथ अद्यतन जानकारी के अभाव के कारण पर्यटक सुविधा ख़राब हो जाती है। इसलिए, संचार और कंप्यूटर के क्षेत्र में तकनीकी विकास का पर्यटक सूचना नेटवर्क स्थापित करने के लिए उचित उपयोग किया जाना चाहिए। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य सतत् पर्यटन विकास में प्रौद्योगिकी की भूमिका और महत्व की पहचान करना है। इस अध्ययन के नतीजे सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के साथ ही नीति निर्माताओं के लिए प्रौद्योगिकी और टिकाऊ पर्यटन प्रशासन के एकीकरण की प्रक्रिया में विभिन्न विकासात्मक संकेतकों की पहचान करने और उन्हें लागू करने में सहायक हैं।

उद्देश्य–इस अध्ययन में सतत् पर्यटन एवं प्रशासन में प्रौद्योगिकी के विभिन्न उद्देश्यों पर चर्चा की गई है। वे बिंदु निम्नलिखित हैं।

1. सतत् पर्यटन प्रशासन में प्रौद्योगिकी की भूमिका का अध्ययन करना।
2. सतत् पर्यटन प्रशासन में प्रौद्योगिकी के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. स्थायी पर्यटन शिकायत में प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने के लिए विभिन्न उपायों का सुझाव देना।

साहित्य की समीक्षा–उपयुर्क्त विषय पर अध्ययन करने के पूर्व संबंधित विषय से साहित्य का पुरनावलोकन करना अति अवाश्यक हो जाता है। अत: मेरे द्वारा संबंधित अध्ययन को पूर्ण करने के लिए विश्व विद्यालयों एवं इंटरनेट का प्रयोग करके सहित्य का अवलोकन किया गया है। एवं संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण के आधार पर पता चलता है कि पर्यटन विकास का एक महत्वपूर्ण स्तंभ होने के बावजूद, स्थिरता के साथ हमेशा एक अस्पष्टता जुड़ी रही है, जो इसे एक सटीक परिभाषा देने से रोकती है और इस पर अभी भी शोध की आवश्यकता है जिससे कि यह अस्पष्टता दूर हो सके। इस अध्ययन के संबंध में विभिन्न विद्वानों की पुस्तकों एवं पत्र पत्रिकाओं को पढने का अवसर प्राप्त हुआ और इसमें कुछ प्रमुख अध्ययनों का उल्लेख इस प्रकार है।

हार्डी, ए 2002; लू के अनुसार,शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं ने तर्क दिया है कि पर्यटन विकास का एक महत्वपूर्ण स्तंभ होने के बावजूद, स्थिरता के साथ हमेशा एक अस्पष्टता जुड़ी रही है, जो इसे एक सटीक परिभाषा देने से रोकती है।

सीगिस एट अल के अनुसार, 2009;स्थिरता की अवधारणा की उत्पत्ति पर्यावरणीय चेतना से हुई थी जिसने 1970 के दशक में दुनिया में महत्व प्राप्त किया था। मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन जिसे स्टॉकहोम सम्मेलन 1972 के नाम से भी जाना जाता है, विश्व की पहली सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक थी जिसमें स्थिरता पर चर्चा की गई थी संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम और विश्व पर्यटन संगठन स्थिरता को 'पर्यटन जो अपने वर्तमान और भविष्य के आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभावों

का पूरा ध्यान रखता है, आगंतुकों, उद्योग, पर्यावरण और मेजबान समुदायों की जरूरतों को संबोधित करता है' के रूप में परिभाषित करता है।

वैश्विक पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस), आदि अली, 2010, ऐसे विभिन्न आईसीटी आधारित उपकरण और अनुप्रयोग हैं जिनका उपयोग सूचना प्रबंधन के लिए किया जा सकता है; भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस), पर्यटन सूचना प्रणाली (टीआईएस), कंप्यूटर सिमुलेशन, पर्यावरण प्रबंधन सूचना प्रणाली (ईएमआईएस), गंतव्य प्रबंधन प्रणाली (डीएमएस), मौसम, जलवायु और महासागर परिवर्तन की सूचना प्रबंधन, आर्थिक प्रभाव विश्लेषण सॉफ्टवेयर आदि।

सतत् पर्यटन की अवधारणा–सतत् पर्यटन की अवधारणा से आशय की जो प्रकिया हमेशा किसी न किसी रूप में चलती रहती है। क्योकि पर्यटन एक गतिविधी है जहॉं पर कोई न कोई किसी न किसी समय पर हमेशा निरंतर लगे रहते है पर्यटन अवकाश, मनोरंजन और मनोरंजन की एक गतिविधि है जहां लोग 24 घंटे से अधिक लेकिन लगातार एक वर्ष से अधिक नहीं बल्कि सामान्य वातावरण के अलावा किसी अन्य स्थान पर जाते हैं। सतत् पर्यटन पर्यटन की एक श्रेणी है जिसमें पर्यटक किसी आकर्षण का अनुभव करते हैं, किसी गंतव्य पर उनकी गतिविधि कम पर्यावरणीय प्रभाव का कारण बनती है और स्थानीय समुदाय के सामाजिक–आर्थिक विकास और विकास का समर्थन करती है। सतत् पर्यटन में बेहतर वृद्धि और विकास के लिए विभिन्न हितधारकों को शामिल करने का लाभ है। दूसरे शब्दों में टिकाऊ पर्यटन पर्यटन उद्योग, अवकाश निर्माताओं और स्थानीय समुदाय की सामाजिक–आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिति के बीच त्रिकोणीय संबंध है। और वर्तमान में यह संबंध आज विश्व में उद्रयोग के रूप में अवतरित हो रहा है। सतत् पर्यटन में के निम्नलिखित उद्देश्य हैं, जो कि निम्नलिखित बिंदुओ में स्पष्ट है जिसके द्वारा सतत् पर्यटन की अवधारणा पूर्ण होती है।

1. स्थानीय संसाधनों का सतत् उपयोग
2. संसाधनों की अधिक खपत को कम करना और बर्बादी को कम करना
3. जैव विविधता का संरक्षण
4. पर्यटन गतिविधियों में स्थानीय समुदाय की भागीदारी
5. स्थानीय समुदाय के लिए आय सृजन

सतत् पर्यटन में प्रौद्योगिकी:प्रौद्योगिकी में उपकरण, ज्ञान और संस्कृति शामिल हैं जो मानव अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण हैं। आज प्रौद्योगिकी पर्यटन उद्योग के सभी क्षेत्रों तक पहुंच गयी है। वर्तमान में प्रौद्योगिकी केवल आज प्रयोग की विधि ही नही बल्कि पूरे विश्वपटल पर महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योकि वर्तमान युग प्रयोग , कौशल एवं विज्ञान का युग कहलाता है आज कोई भी क्षेत्र चाहे वह सरकारी गैरसरकारी एवं निजी क्यों न हो सभी प्रौद्योगिकी पर निर्भर करता है क्योकि प्रौद्योगिकी के द्वारा आज मनुष्य की प्रवृत्ति एवं स्वभाव को पहचान सकते है। और इस प्रयोग द्वारा आज व्यक्ति के हर पहलू की जानकारी को लेकर अपनी पर्यटन के विकास को पर्यटक के लिए तैयार कर सकते है। सतत् पर्यटन ने गंतव्य प्रबंधन, स्थान आधारित सेवाओं, परिवहन और भौगोलिक आधारित प्रणाली, आभासी पर्यटन, प्रदूषण के प्रभाव को मापने और स्थान आधारित सेवाओं आदि के लिए सूचना आधारित संचार उपकरण और प्रौद्योगिकी को अपनाया। सकारात्मक रूप से प्रौद्योगिकी ने स्थायी पर्यटन के नकारात्मक प्रभावों को कम कर दिया है।

भूमिका और उद्देश्य–सतत् पर्यटन में प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके पर्यटन में प्रौद्योगिकी का मुख्य उद्देश्य कचरे को कम करना, रीसाइक्लिंग प्रक्रिया को बढ़ावा देना, उत्पादन प्रक्रिया में बदलाव, प्रदूषण को नियंत्रित करना और उपलब्ध संसाधनों का प्रभावी उपयोग करना है। पर्यटन से जुड़ी विभिन्न आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ। उनका लक्ष्य वर्तमान पर्यटन की गुणवत्ता में वृद्धि करना है। सतत् विकास की प्रमुख चिंताओं में स्वच्छ जल तक पहुंच, स्वच्छ ऊर्जा तक पहुंच, स्वच्छ और अप्रदूषित पर्यावरण का समावेश, प्रभावी ढंग से और कुशलता से प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन और प्रभावी शासन शामिल है। इन क्षेत्रों को प्रबंधन के लिए प्रभावी प्रौद्योगिकी की आवश्यकता है। इस विषय से सबंधित प्रौद्योगिकी के मुख्य बातें निम्न है।

पूर्वानुमान सॉफ़्टवेयर :पूर्वानुमान सॉफ़्टवेयर जलवायु, वायुमंडल और महासागर में परिवर्तन पर नज़र रखता है। इस प्रकार सॉफ्टवेयर परिवर्तन कारकों की भविष्यवाणी करने में मदद करता है ताकि किसी गंतव्य को उपयोगी एवं सफल बनाने के लिए तत्काल कार्रवाई की जा सके। पहचान, विश्लेषण और तत्काल कार्रवाई किसी गंतव्य में सकारात्मक बदलाव ला सकती है।

आभासी पर्यटन:एक आभासी पर्यटन का उभरता स्वरूप उचित रूप से व्यवस्थित वीडियो और छवियों के अनुक्रम के साथ किसी आकर्षण, स्थान या पर्यटक स्थल की एक कृत्रिम प्रस्तुति या अनुकरण है। वर्चुअलटूर से किसी गंतव्य पर पर्यटकों की आवाजाही कम हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप सतत् विकास होगा। सुगम्य पर्यटन आभासी पर्यटन को बढ़ावा दे सकता है।

आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रभाव:प्रौद्योगिकी में नवाचार का पर्यावरण और अर्थव्यवस्था पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। यात्रा के घंटे काफी कम हो गए हैं. जाहिर तौर पर टिकाऊ पर्यटन पर प्रौद्योगिकी का अधिक प्रभाव देखा गया। दुनिया में कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जन को लेकर चिंता बढ़ रही है। आवेदनों की संख्या पर्यटकों को सर्वोत्तम गंतव्य चुनने में सहायता करती है। एप्लिकेशन (ऐप) पर्यटकों को नियमों और विनियमों, आवास और परिवहन सुविधाओं, जलवायु परिस्थितियों, उपलब्धता और गंतव्य की प्रकृति और विशेषताओं के बारे में मार्गदर्शन करते हैं। आधुनिक यात्री इस बात को लेकर भी चिंतित हैं कि उनकी यात्रा से स्थानीय समुदाय को क्या लाभ होगा। इस प्रकार आधुनिक प्रौद्योगिकी का एक कार्यात्मक उद्देश्य दुनिया को अधिक टिकाऊ बनाना है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस:वर्तमान युग आज आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का युग है और इस तकनीकी के द्वारा हम एक सेकेंड में जानकारी को एकत्रित करके उसे अपने आधार को तैयार करके उसका उपयोग कर सकते है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर्यटन उत्पादों और सेवाओं के विपणन के लिए एक सॉफ्टवेयर सक्षम तकनीक है। एआई पर्यटन उद्योग को पर्यटन पर्यटकों और आगंतुकों की जरूरतों और आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से समझने में सक्षम बनाता है। डेटा का संचय और एकीकरण, वास्तविक प्रयोग आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस बुद्धिमत्ता के प्रमुख उद्देश्य हैं। आज होटल, रिसॉर्ट और पर्यटक आकर्षण आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस बुद्धिमत्ता के माध्यम से अपने ग्राहकों और ग्राहकों को आसानी से निर्देशित कर सकते हैं।

पर्यटन सूचना प्रणाली:वर्तमान में सूचना प्रणाली भी सतत् पर्यटन की दिशा में महत्वपूर्ण कदम रखती है जिसके द्वारा हम किसी भी पर्यटक के विषय में उसकी पूर्ण जानकारी को पर्यटन के पूर्व एकत्रित कर सकते है और उस आधार पर पर्यटक को उससे जुडी पर्यटन की सभी जानकारी एवं विस्तृत

जानकारी दे सकते है। पर्यटन सूचना प्रणाली एक कंप्यूटर आधारित प्रणाली है जिसमें पर्यटक किसी आकर्षण के बारे में जानकारी एकत्र करते हैं। पर्यटन सूचना प्रणाली किसी गंतव्य में आकर्षण, आवास, परिवहन और सुविधाओं के विशाल क्षेत्र को कवर करती है। इससे यात्री को गंतव्य चुनने में मदद मिलेगी।

स्थान आधारित सेवाएँ:स्थान आधारित सेवाओं के द्वारा हम पर्यटन के संबंध में पूर्ण जानकारी जैसे रूकने स्थानीय संस्कृति आस पास के मुख्य स्थान एवं विशेष एवं व्यक्ति विशेष से संबंधित आदि जानकारी पूर्ण रूप से प्राप्त कर सकते है। स्थान आधारित सेवाएँ वास्तविक समय वैश्विक पोजिशनिंग सिस्टम के आधार पर ग्राहक को लक्षित करती हैं। आस-पास के होटल और रेस्तरां, आस-पास के ईंधन स्टेशन, यातायात जानकारी, आस-पास के दर्शनीय स्थल स्थान आधारित सेवाओं के उदाहरण हैं। स्थान आधारित सेवा एक यात्री को लोगों, संस्कृति और मौजूदा स्थितियों के बारे में जानने के लिए शिक्षित करने के लिए डिज़ाइन की गई है ताकि यात्री तुरंत निर्णय ले सके।

गंतव्य प्रबंधन प्रणाली:गंतव्य प्रबंधन प्रणाली किसी पर्यटन स्थल के बारे में पूरी जानकारी देती है। गंतव्य, यात्रा पूर्व सूचना और आगमन पर सूचना तय करने में गंतव्य प्रबंधन प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। डीएमएस प्रभावी आंतरिक और बाहरी नेटवर्क बनाने में मदद करता है जो किसी गंतव्य की अर्थव्यवस्था पर दीर्घकालिक सकारात्मक प्रभाव डालने में मदद करता है।

ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम:ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम एक उपग्रह आधारित नेविगेशन प्रणाली है जो उपयोगकर्ताओं को अपने गंतव्य को ट्रैक करने, मौसम रिपोर्ट तक पहुंच और गंतव्य के बारे में अन्य आवश्यक जानकारी प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। आज जीपीएस यात्रा उद्योग का एकीकृत हिस्सा बन गया है। अधिकांश पर्यटक अपनी यात्रा संबंधी निर्णय लेने के लिए जीपीएस पर निर्भर रहते हैं। किसी गंतव्य के वातावरण पर यात्रा के प्रभाव को कम करने में जीपीएस की बड़ी भूमिका है।

इंटेलिजेंट ट्रांसपोर्ट सिस्टम:इंटेलिजेंट ट्रांसपोर्ट सिस्टम पर्यटकों को किसी गंतव्य तक जमीनी परिवहन सुविधाओं के बारे में अद्यतन जानकारी प्राप्त करने में सहायता करता है। पर्यटक परिवहन सुविधाओं के संबंध में निर्णय ले सकते हैं। इंटेलिजेंट ट्रांसपोर्ट सिस्टम मोबाइल आधारित एप्लिकेशन की अनुशंसा करता है जो लोगों को सार्वजनिक परिवहन सुविधाएं चुनने के लिए प्रेरित करता है।

भौगोलिक सूचना प्रणाली:भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग आमतौर पर इंटरनेट या मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से बड़ी मात्रा में तारीखों को पकड़ने, संग्रहीत करने, प्रबंधित करने, हेरफेर करने और प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है। यात्री अपनी छुट्टियाँ बिताने के दौरान इस डेटा तक पहुँच सकते हैं। जीआईएस किसी गंतव्य पर जानकारी एकत्र करने के बोझ को कम करता है, भीड़भाड़ से बचाता है और यात्रा को अधिक परिप्रेक्ष्यपूर्ण बनाता है।

भविष्य का दृष्टिकोण-प्रौद्योगिकी ने पर्यटक आकर्षणों के बेहतर प्रबंधन में मदद की। पर्यटक आकर्षणों के विपणन और नवीन विकास में प्रौद्योगिकी की आशाजनक भूमिका है। भविष्य के गंतव्यों को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए प्रौद्योगिकी और हितधारकों के एकीकरण की आवश्यकता है। इस संदर्भ में प्रौद्योगिकी गंतव्य विकास में प्रमुख भूमिका निभाएगी। एक एकीकृत विकासात्मक दृष्टिकोण के लिए पर्यटकों, गंतव्य और स्थानीय सेवा प्रदाताओं के बीच बेहतर संचार की आवश्यकता है। विकास की प्रक्रिया में स्थानीय समुदाय भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। भविष्य की प्रौद्योगिकी को बेहतर विकास के लिए इन सभी हितधारकों को एकीकृत करने का लक्ष्य रखना होगा। प्रौद्योगिकी स्थानीय समुदाय को यात्रियों के मनोविज्ञान और उनके क्षेत्र में पर्यटन गतिविधि के परिणामों को समझने में भी मदद करेगी। प्रौद्योगिकी महत्वपूर्ण निर्णय लेने, नए व्यापार उद्यमों, कार्बन उत्सर्जन की निगरानी और गंतव्य स्वच्छता में गंतव्य हितधारकों का समर्थन करेगी।

शोध पद्धति: प्रस्तुत शोध पत्र मूलत: द्वितीयक संमको पर आधारित है, जिसमें द्वितीयक संमक जिसमें कि पर्यटन विभाग के रिर्पोट एवं शोध पत्र एवं पुस्तकें एवं समाचार पत्र से जानकारी एकत्र करके उसकी विवेचना एवं परिणाम प्रस्तुत किये गये है।

निष्कर्ष: सैद्धांतिक अध्ययन उपयोगी पर्यटन प्रशासन में प्रौद्योगिकी के नवीन दृष्टिकोण का विश्लेषण करता है। आज पर्यटन उद्योग तकनीकी रूप से अत्यधिक विकसित है, हालाँकि उद्योग को समय पर विकास और उन्नति की आवश्यकता है। पर्यटन उद्योग के व्यवसाय केंद्रित दृष्टिकोण को बेहतर प्रशासन के लिए व्यवसाय, प्रौद्योगिकी और सतत् विकास को एकीकृत करने पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। भविष्य के अध्ययनों में बेहतर कल के लिए व्यवसाय, प्रौद्योगिकी और स्थानीय समुदाय को एकीकृत करने की अधिक गुंजाइश है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

जर्नल और पीएचडी थीसिस:

1. सुब्रमण्यन, मलाथी:'महाराष्ट्र राज्य के सिंधुदुर्ग जिले में पर्यटन क्षेत्र की विकास क्षमता और इसके रोजगार पैटर्न का एक अध्ययन' अप्रकाशित शोध थीसिस एसएनडीटी महिला विश्वविद्यालय, चर्च गेट, मुंबई, 2010 को प्रस्तुत किया गया।
2. गदाद, अनुपमा: 'कर्नाटक में पर्यटन उद्योग की संभावनाएं, उत्तर कन्नड़ जिले का एक केस स्टडी', अप्रकाशित शोध थीसिस कर्नाटक राज्य महिला विश्वविद्यालय, विजयपुर, 2015 को प्रस्तुत की गई।
3. सावरकर, क्रांति पी: 'विदर्भ क्षेत्र महाराष्ट्र में पर्यटन विकास की संभावना', अप्रकाशित शोध थीसिस बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी को प्रस्तुत की गई।

पुस्तक:

1. भाटिया, ए.के. : 'पर्यटन विकास - सिद्धांत और व्यवहार' स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लिमिटेड, नई दिल्ली, 2007

वेबसाइटें:

1. https://sustainabledevelopment.un.org/
2. http://www.un-documents.net/our-common-future.pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Unmasking Social Prejudices : Caste, Class and Community in Mahesh Dattanis Theatre

Dr. Pallavi Parte*

***Assistant Professor (English) Govt. College, Bijawar (M.P.) INDIA**

Abstract : India possesses rich cultural and traditional heritage unmatched by any other nation in its multi- cultural, multi -traditional and multilingual diversity. However like a coin with two sides, Indian society embodies both virtues and vices : a great historical legacy alongside deeply entrenched intersectionality of caste ,class and community that cannot be ignored. Literature serves as a luminous mirror faithfully reflecting the multifaceted contours of society. In Indian English literature Mahesh Dattani stands out as a prolific playwright who exposes these social prejudices through his theatrical works. He addresses the sombre issue via a deceptively convincing narrative style.

Introduction - Mahesh Dattani is one of the excellent and serious playwrights of contemporary age. His plays offer an authentic depiction of social realities. His plays serve as an unflinching mirror to the hypocrisies and prejudices pervasive in contemporary Indian society and secure his reputation as the 'bold confrontation of social truths'. He boldly confronts socially taboo and obscured issues ,utilizing the urban middle class family as a microcosm to reveal the defects and inconsistencies embedded in the wider societal structure.

Dattani's plays reflect the problems that develop in Indian context. They often expose social discrimination based on caste, class, community, minorities, women, gay people and transgender people. Each play of Dattani like **Final Solution, Seven Steps Around the Fire**, **Tara, Dance like a Man, Bravely Fought the Queen** etc. addresses the societal issues. These issues are actual life problems and sometimes cause controversy. Dattani adopted different forms of drama as a medium to represent the real depth and vitality of human experience. These rather radical themes and forms of his drama have separated him from the traditional Indian playwrights.

A very poignant masterpiece of Dattani 'Tara' reveals overtly the theme of gender discrimination which is the result of the intersectionality of the societal class and caste. It would not be an exaggeration to say that overall this gender discrimination reflects upper middle class dynamics in urban India. Tara's mother Bharti belongs to a socially privileged class from a more liberal community often interpreted as upper caste in Indian context. Tara's maternal grandfather holds elite social status, influential politician who was position to become chief minister and her paternal Patel family overall reflects upper middle class dynamics in urban India. With their collective decision the twin's fate is decided . By manipulating the physical separation of Tara and her brother they favour the boy (Chandan)over the girl (Tara).It shows how elite status in Indian society often aligns with class and caste privileges that prioritize sons:

Play - Tara

Patel : "……..your grandfather and your mother had a private meeting with Dr. Thakkar. ....That same evening your mother told me of her decision. ......-that they would risk giving both legs to the boy ......Maybe if I had protested more strongly !"

Thus his play'**Tara**' throws a light on gender conflict and the role of societal class and culture in creating such conflict. Gender is purely social or cultural phenomena while sex is biological. It is not possible to alter biological phenomena but social and cultural constraint can be changed with a little effort.

Dattani maintains impartiality in addressing gender inequalities. He examines how societal notions of masculinity rigidly limit men's choices, a constraint upheld by both the genders within the community. Through the words of Amritlal in **'Dance like a Man'** a very clear picture of the limitations on men's choices is visible as he is totally against of his son's dancing.These limitations based on class ,cast and status in our society.

Play - Dance like a Man

Amritlal : Do you know where a man's happiness lies?

Ratna : No.

Amritlal : In being a man.

Dattani's **Final Solution** explores the much debated subject of communalism. It was on the problem of communal disharmony between the Hindus and Muslims in India, especially during the period of post- partition riots

. Dattani's purpose in depicting the post-partition communal violence in India is not to convey the actual events that took place but to present the psychological fear that has been inculcated in our minds. The play also argues that love is not restricted by religion, cast and creed as his evidence from Smita's love for Babban.The juxtaposition of love and hatred complicates the uniform and unhindered violence that is promoted in a communal riot. The play brings characters from different religious backgrounds together in a tense, riot-torn situation, forcing them to confront their prejudices. At the end of the play Bobby, by speaking about one final deed to be done, deliberately removes his footwear and advances towards the pooja room slowly. He picks up the image of Krishna which is tiny enough to sit in his palm and shows the image to everyone:

Play: Final Solution

Bobby : See ! See! I am touching God. Your God! My flesh is holding him! Look,Javed !And he does not mind! He does not turn me to ashes! He does not cry out from the heavens saying He has been contaminated! Look how He rests in my hands! He knows I cannot harm Him. He knows His strength! I don't believe in Him but He believes in me.

In a very famous play **'Seven Steps Around the Fire'** Dattani highlights the critique of justice and silence imposed on the marginalized. Anarkali Hijra (eunuch) is framed as the main accused in Kamla's murder due to societal prejudices against her community. Her arrest protects the elite and makes her an easy scapegoat despite her innocence and close bond with the victim who she calls her 'sister'. An extremity of injustice is reached when she articulates the atrocities inflicted upon her in these words. Her dialogue captures her bitterness and exhaustion:

Play-'Seven Steps Around the Fire'

Uma: Anarkali ! Please, help me.

Anarkali: Go away. After servicing all these sons of whores, my mouth is too tired to talk.

Uma: God !

This play not only explores the themes of social injustice and the marginalization of the hijra community but also delves into gender identity crisis, the corruption of power wielded by the elite due to their class and societal status, and the enforced silencing of the marginalized owing to their subordinate position in society.

A very sensitive issue of domination and suppression is uncovered by Dattani in his plays. In Bravely Fought like Queen he presents three generations of women in an Indian family who are oppressed and exploited at the hands of the patriarchal male figures in their lives. The first generation of Trivedi family 'Baa' herself is exploited by her drunkard husband. Her suffering ended her in inability to live in the present. Even after husband's death , her memory haunts her. Dolly and Alka represent the second female generation of the family, are married to Jiten and Nitin respectively. They lead their life taking care of the needs of their husband and senile mother in law. The intermittent bell ringing by Baa which calls for an immediate attention shows how women also become oppressors in patriarchal society. Dolly and Alka are illtreated by their husbands as Jiten's wedlock with Dolly is purely for the sake of societal norms of marriage and he satisfices his sexual libido by calling whores at his office and Alka remains childless because of Nitin's homosexual relationship with her brother Praful. Daksha the face of third generation becomes a victim of her father's brutality. With her premature birth she remains deformed and mentally retarted. The barbarity and atrocity of the patriarchal system implicitly appears when dolly,in a precarious condition, becomes a victim of the inhumanity of Baa and Jiten:

Play-Bravely Fought the Queen

Baa: Jitu ,throw her out as well.Whore !

Dolly: And you hit me!Jitu, you beat me up! I was carrying Daksha and you beat me up!

Baa: No !Jeetu, hit her on the face but not on the....... stop it Jitu! On the face ,only on the face.......

Thus Mahesh Dattani's theatres perform for unmasking the hidden and bitter truth of the society and present a real picture of societal prejudices. As theatre is a process of making the word flesh. When the words are Mahesh Dattani's, the flesh is already contained within the word; the written texts are only fully realized through the process of performance.

In conclusion, Literature - be it verse, drama , narrative prose or fiction- stands as an essential conduit between personal lives and collective society, ceaselessly echoing realities and forging new paths. It not only amplifies silenced voices but also boldly defies entrenched norms. As literary critic Terry Eagleton observes 'Literature, in the full sense of the word , is the expression of human creativity. It transcends boundaries, it travels across time, and it is a means by which we come to know ourselves and the world we inhabit.

Much as Eagleton describes literature travelling beyond limits, Dattani's theatres perform as an outstanding example to examine, challenge and expose societal prejudices, norms and injustices. His concept positions dramas as a powerful tool for reflecting on and critiquing class, caste, gender and community in our society and enables readers to question and rethink established beliefs and system. Vivid portrayals of caste, gender, identity in works like Tara, Final Solution, Dance Like a Man etc. compel readers to confront biases head-on.

Mahesh Dattani guides readers to uncover the shared human experiences and pressing moral dilemmas of their era, long obscured by entranced social prejudices. Echoing Mathew Arnold's view of literature as a 'Criticism of life', Dattani's works do not merely reflect society-they dissect, interrogate and provoke it into reckoning. His legacy endures as a beacon, continuously challenging readers across generations to question norms and prejudices,

embrace nuances and envision a more equitable world.

References : -

1. Arnold, Mathew. Culture and Anarchy. Oxford University Press, 1869.
2. Eagleton, Terry. Literary Theory : An Introduction. Blackwell, 1983.
3. Chandra. Dr. Prakash. Literature and Society, Published on 16 Jan 2025.
4. Shukla Seema. Indian Writing In English. Madhya Pradesh Hindi Granth Academy, Bhopal 2023.
5. Dattani Mahesh. Collected Playes. Penguin Books An imprint of Penguin Random House
6. Introduction to literary theory review: Literature as Social Critique by Fiveable Content Team.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय ज्ञान परम्परा और रहीम : एक अध्ययन

डॉ. राजाराम परते *

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बिजावर, जिला-छतरपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और विविधतापूर्ण परंपरा है, जिसमें धार्मिक , दार्शनिक, नैतिक और व्यावहारिक ज्ञान का अद्धितीय संगम देखने को मिलता है। रहीम मुगलकाल के प्रमुख कवि, दार्शनिक और दरबारी कवि थे, जिन्होंने अपनी रचनाओं में भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल्यों और तत्वों को समाहित किया। भारतीय ज्ञान परम्परा वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों (यथा-रामायण, महाभारत) स्मृतियों, पुराणों और लोक साहित्य के माध्यम से विकसित हुई है, इस परम्परा में धर्म, कर्म, सत्य, अहिंसा, शील, सहिष्णुता और लोकहित जैसे मूलभूत तत्व हैं। यह शोधपत्र भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रमुख विशेषताओं का परिचय कराता है, और रहीम के साहित्य में इन तत्वों की उपस्थिति का विश्लेषण करता है।
शब्द कुंजी – अहिंसा, सहिष्णुता, सनातन, आध्यात्मिकता, बसुधैव कुटुम्बकम्, दिव्यता, आत्मनियंत्रण, उद्घोष आदि।

प्रस्तावना – भारतीय ज्ञान परंपरा की नींव प्राचीन ग्रंथों जैसे वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत पर आधारित है। यह परंपरा तर्क, अनुभव और आध्यात्मिकता का संगम है और सनातन धर्म के मूल सिद्धांतों जैसे धर्म, कर्म, सत्य, अहिंसा, शील, लोकहित आदि को आत्मसात करती है। जैसे- धर्म का तात्पर्य समाज में उचित आचरण एवं कर्तव्य पालन से है। साथ ही सत्य-निष्ठा और दूसरों के साथ सहिष्णुता पर भी जोर दिया गया है। आकर्षक तथ्य यह है कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा से वैश्विक समरसता और सभी के प्रति करूणा का संदेश मिलता है। यही कारण है कि भारतीय दर्शन में लक्ष्य केवल आत्ममोक्ष ही नहीं बल्कि समाज कल्याण और परम्परा सहयोग भी माना गया है। रहीम (1556-1627) अकबर के नवरत्नों में से एक संस्कृत, फारसी और हिन्दी में दक्ष कवि थे। रहीम का असली नाम नवाब अब्दुर रहीम खान-ए-खाना था। धर्म की दृष्टि से मुसलमान होने के बावजूद रहीम ने हिन्दु देवी, देवताओं, तीज-त्यौहारों का उल्लेख पूरी निष्ठा के साथ करते है। रहीम के बारे में उत्कृष्ट कथन है कि वे धर्म से मुसलमान और संस्कृति से शुद्ध भारतीय थे। अपनी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने भारतीय जीवन मूल्यों को आत्मसात किया है। हिन्दी, ब्रज दोहों के माध्यम से कवि ने अपने व्यक्तित्व में भारत की लोक परंपरा, संस्कृति, भक्ति रस और दार्शनिक चिंतन को सम्मिलित किया है। उनकी रचनाएं सरल भाषा में गहरी सीख प्रदान करती हैं जो समकालीन जनजीवन से जुड़ी हुई है।

भारतीय ज्ञान परंपरा

धर्म और कर्म– भारतीय परंपरा में धर्म (कर्तव्य, नैतिकता) और कर्म (क्रियाओं के फल) को जीवन के मार्गदर्शक सिद्धांत स्वीकार किया गया है। धर्म का अर्थ है अपने सामाजिक जीवन में कर्तव्यों का पालन करना और सत्य-निष्ठा और करूणामय व्यवहार करना। कर्म सिद्धांत हमें सिखाता है कि हर क्रिया का फल मिलता है इसलिए कार्य में निष्ठा, स्वार्थरहित भावना और उत्तरदायित्व अपेक्षित है। इस दृष्टि से जीवन का लक्ष्य समाज हितैषी, नीतिपूर्ण कर्म करना है।

सत्य, अहिंसा और संयम– सत्य का अर्थ है ईमानदारी और अहिंसा का अर्थ हिंसा न करना जैसे मूल्य भी भारतीय दर्शन परम्परा के मूलभूत सिद्धांत है।

ज्ञान योग– महाभारत में संतोष को सर्वोच्च दिव्यता माना है। शान्ति पर्व में कहा गया है – संतोष सर्वाधिक सुख है इससे बड़ा कोई सुख नहीं है।

संयमित जीवन, आत्मनियंत्रण और साधुता की भारतीय ज्ञान परंपरा में महती प्रतिष्ठा है। साधु और ऋषि-संतों के उपदेश इसके उदाहरण है। जिनमें आत्मज्ञान और आत्मनियंत्रण पर बल दिया गया है।

लोकहित और सामाजिक उत्तरदायित्व – भारतीय परम्परा में लोककल्याण को प्राण तत्व माना है। मानविकी जीवन में व्यक्ति को न केवल अपना बल्कि समाज और प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व निर्वहन की शिक्षा दी गई है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसी अवधारणा समस्त भूमण्डल में निवासरत मानव जीवन के प्रति पारिवारिक भाव की अभिव्यक्ति का उद्घोष करता है। जिसमें सहिष्णुता और आपसी व्यवहार को बढ़ावा मिलता है।

प्रकृति और मानव जीवन– भारतीय जीवन दर्शन में प्रकृति को पवित्र एवं पूज्य माना गया है और मनुष्य और प्रकृति के बीच संतुलन पर जोर दिया गया है। मनुष्य एवं प्रकृति के मध्य सामंजस्यपूर्ण वृत्ति ही पर्यावरण की रक्षा है। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को पुण्य योग से जोड़ा गया है। योग, आयुर्वेद तथा ध्यान जैसे प्राचीन विज्ञान इस समन्वय भाव की पुष्टि करते हैं।

सामाजिक समरसता एवं सहिष्णुता– हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई, बौद्ध आदि विविध धार्मिक समुदायों के मध्य सहिष्णुता भारतीय ज्ञान परंपरा की पहचान है। यहां परस्पर भेद-भाव नहीं बल्कि समता और भाईचारे का संदेश दिया गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल सिद्धांत 'वसुधैव कुटुम्वकम्' जिससे सभी को आपस में सहानुभूति, सहयोग और शांतिपूर्वक सह-अस्तित्व की प्रेरणा मिलती है।

रहीम के काव्य की विशेषताएं – रहीम के काव्य में भारतीय लोकजीवन

और वैचारिक गहराई दोनों का समन्वय दिखाई देता हैं रहीम ने अपने दोहों में सरल, प्रभावशाली भाषा का प्रयोग किया है। और जन अनुभवों को काव्य का विषय बनाया। उनके गीतों में नीति और विवेक की बातें प्रमुख हैं – जैसे सामाजिक व्यवहार, परोपकार, प्रेम और भक्ति आदि।

उदाहरण:–

'रहिमन वे नर मर चुके, जे कहूँ कछु मांगन जाये।
उनते पहिले वे मुए जिनके मुख निकसत नाहि।।'

उदाहरण:–

'कदली, सीप, भुजंग मुख स्वाति एक गुन तीन।
जैसी संगति बैठिए, तैसो ही फल दीन।।'

आत्म जीवन अनुभव:– रहीम के दोहे प्राय: सामान्य जन की दिनचर्या, अनुभव और भावनाओं से प्रेरित हैं। उन्होंने अपने दोहों में मानवता, क्षमा, मधुरता और सामाजिक मेलजोल की बातें कही हैं। उनकी कहानियाँ जीवन के छोटे–छोटे दृश्यों से जुड़ी होती हैं। जिस कारण पाठक तुरंत संपर्क स्थापित कर लेता है–

उदाहरण:–

'जे रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापै नहि, लिपटे रहत भुजंग।।'

'रहिमन विपदा हू भली, जे थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जान परत सब कोय।।'

नीति–नियम और भक्ति रस:– रहीम ने अपने दोहों में नीति (नैतिकता), प्रेम, भक्ति और आचरण से संबंधित उपदेश दिए हैं। इन दोहों में कबीर–परम्परा की भांति सरलता से गहन सत्य उद्धाटित होते हैं।

उदाहरण:–

'रहीमन देखे बडेन को, लघु न दीजिये डारि।
जहां काम आवै सुई, कहां करे तलवारि।।'

इस दोहें के माध्यम से उन्होंने सभी जीवों के प्रति सम्मान की बात कही हैं, और प्रेम भक्ति के भाव वाले दोहें से मानव ईश्वर प्रेम की परम्परा का बखान किया है। उनकी रचनाएं समाज में सामूहिक सद्भाव और परमात्मा के प्रति श्रद्धा का संदेश देती हैं।

भाषा और प्रभाव– रहीम ने हिंदी और ब्रज भाषा में सहज, सारगर्भित शब्दों का प्रयोग किया हैं। उनकी रचनाएं प्राचीन संस्कृत साहित्य की प्रमुख रचानाओं से प्रेरित रही है और हिन्दुस्तानी भावों को हिंदू–अरबी तत्वों के साथ जोड़कर पाठकों से सहजता के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेती हैं।

उदाहरण:–

'रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गए न उबरै, मोती, मानुष, चून।।'

रहीम ने ब्रज, अवधी और खड़ी बोली में लिखा है, जिससे जनता उनके दोहों को सहजता से समझकर आत्मसात् करती रही है।

सांस्कृतिक एकता:– रहीम, मुस्लिम पृष्ठभूमि के होते हुए भी भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के मूल्यों को गहराई से आत्मसात करते है। उन्होंने राम और कृष्ण दोनों के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की है, और रामायण, महाभारत आदि पौराणिक कथाओं का सम्मान किया है। अकबर के दरबार में उन्हें रामायण के फारसी अनुवाद की प्रति रखने की अनुमति दी गयी थी जिसे उन्होंने ' भारत का मानवीय ग्रंथ' बताकर महत्व दिया। इस प्रकार रहीम के काव्य में हिंदु भक्ति परम्परा के रस और इस्लामी आदर्शों का सम्मिश्रण दृष्टिगोचर होता हैं। उनकी समग्र दृष्टि ने आपसी सहिष्णुता, प्रेम और मानवता को बढ़ावा दिया है।

भारतीय ज्ञान परम्परा और रहीम

धर्म और कर्तव्य के संबंध में रहीम लिखते हैं–

रहिमन धर्म न छोड़िये, भले सिर जाये।
हरि सम कबहुँ न छड़िए, जो जग डारो पाये।।

अर्थात् श्रेष्ठ धर्म का पालन करना चाहिए चाहे सर्वस्व नष्ट हो जाये। यह विचार गीता के स्वधर्मे निधनं श्रेय:' की भावना के अनुरूप है। रहीम अपने दोहों में धर्म और कर्तव्य का महत्व बताते है, जो भारतीय परम्परा की आत्मा रही है।

संतोष और संयम का भाव:– रहीम के दोहें संयम, विवेक और संतोष की शिक्षा देते हैं। भारतीय उपनिषदों एवं संत परम्परा में संतोष को परम सदगुण माना गया है। महाभारत में भी कहा गया है कि ' संतोषाभयम् परमं' (संतोष सबसे बड़ा सुख है)

उदाहरण:–

'रहिमन साधु सो चाहिए, जैसा सूप सुभाय।
सार–सार को गहि रहे, थोथा देई उड़ाय।।'

रहीम का यह दृष्टिकोण उसी परंपरा को प्रतिबिंबित करता है क्योंकि आंतरिक शांति और संतोष ही मोक्ष का मार्ग है।

मानवता और सहिष्णुता:– रहीम का यह दोहा ' रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिये डारि...' सभी को सम्मान देने की सीख देता है। इसी विचार से प्रेरित भारत का वसुधैव कुटुम्बकम् सिद्धांत कहता है कि सभी मनुष्यों में बधुत्व हो और हमें प्रेम करूणा से व्यवहार करना चाहिए। रहीम ने अपने रचनाओं में बड़े व्यक्तियों का आदर और छोटो के प्रति करूणा का संदेश दिया है।

प्रेम और भक्ति का भाव:– रहीम कहते हैं, –

'रहिमन प्रेम पियाला है, सिर धारी जो पीया।
धीरे–धीरे पीजिए, बहुत उताव न कीजै।।

यह भक्ति परंपरा का प्रतीक है कि प्रेम का प्याला आत्मा को मदहोश कर देता है। वास्तव में रहीम के भक्तिभाव और प्रेम गीतों में वैष्णव परंपरा की छाप साफ दिखती है। उन्होंने कृष्ण, राम, विष्णु आदि का गुणगान किया, जैसा भक्ति रस के कवियों ने किया।

उदाहरण:–

'रहिमन राजाराम को, मत भूलियों मन मांहि।
जिनके कारण वाबने, सकल भए सुर सानिह।।'

'रहिमन मुरली सी बनो, रस की धार बहाय।
जो जस राखे वादुरी, तैसे ही रह जाय।।'

प्रेम या भक्ति की गहरी भावनायें मन की बात होती है। इन्हें सबके सामने जाहिर करने से लोग मजाक बनाते है।

'रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय।
सुन इठलैहे लोग सब, बांट न लैहे कोय।।'

प्रेम के संबंध में रहीम का यह दोहा मानव जीवन की सार्थकता को अभिव्यक्ति देता हुआ संबंधों में प्रेम की अनिवार्यता पर बल देता है–

'रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय।

टूटें फिर न जुड़े, जुड़े गांठ पर जाये।।'

इसलिए रहीम का प्रेम-गीतकार व्यक्तित्व भारतीय भक्ति दर्शन दोनों से गहराई से जुड़ा है।

निष्कर्ष- रहीम की काव्यधारा भारतीय ज्ञान परंपरा का जीवंत प्रतिनिधित्व करती है। रहीम भारतीय ज्ञान परंपरा के ऐसे स्तम्भ है जिन्होने समरसता का पाठ पढाया। भले ही वे मुस्लिम पृष्ठभूमि से थे, फिर भी हिंदु कहानी, लोक संस्कृति और आध्यात्मिक मूल्यों को अपने दोहों में समान रूप से स्थान दिया। प्राचीन वैदिक और भक्ति परंपराओं से ओत-प्रोत उनके दोहे आज भी शिक्षा देते हैं। जैसे भारतीय दर्शन, धर्म, आज की भौतिक सामाजिक चुनौतियों में मार्गदर्शन करते हैं। रहीम की शिक्षा है कि भारतीय परंपराएं किसी सीमा से बंधी नहीं है, बल्कि उसमें विभिन्न विश्वासों को मिलाने की शक्ति है। इसलिए इनकी रचनाएं धर्म, करूणा, प्रेम और संयम का संदेश देती हैं, जो पारम्परिक ज्ञान की सार्वभौमिक भावना को दर्शाती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. www.ijsalt.org
2. www.theprint.in
3. www.udhnacollege.ac.in
4. en.wikipedia.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महिला सशक्तिकरण में मनरेगा की भूमिका : एक आर्थिक अध्ययन

डॉ. ममता पंवार*   अनिल कुमार सांगोड़े**

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस शास. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – महिला सशक्तिकरण से आशय महिलाओं के समग्र विकास से है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं वैधानिक क्षेत्रों में निर्णय लेने और अधिकारिता की स्वतंत्रता से है। मनरेगा में महिलाओं को एक तिहाई कार्य की कानूनी स्वीकार्यता देकर उनके आर्थिक सशक्तिकरण को मजबूत किया है।

शब्द कुंजी –महिला सशक्तिकरण, निर्णय क्षमता, स्वतंत्रता, मनरेगा, आर्थिक सशक्तिकरण।

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान एवं ग्राम्य बाहुल्य राष्ट्र है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121.06 करोड़ की थी, जिसमें से 83.35 करोड़ ग्रामों में निवासरतथी। परंतु वर्तमान में भारत की जनसंख्या लगभग 142 करोड़ तक पहुंच चुकी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत परिवारों का मुख्य व्यवसाय सामान्यत: कृषि है और भारत की कृषि मानसून पर निर्भर है, जो अनिश्चित है। जिसके कारण अल्प वर्षा व अति वर्षा की स्थिति बनी रहती है जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का कोई अन्य साधन उपलब्ध न होने के कारण बेरोजगारी व्यापक रूप में विद्यमान है। विशेषकर ग्रामीण महिलाएं जो कृषि कार्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संलग्न है। हमारे देश में बेरोजगारी व जनसंख्या वृद्धि जैसी ज्वलंत समस्या भयावह रूप ले चुकी है तथा जिस अनुपात में जनसंख्या वृद्धि हो रही है उसी अनुपात में कृषि एवं कृषि पर आधारित कार्यों का अभाव है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत परिवारों को रोजगार उपलब्ध करा पाना संभव नहीं है। अत: रोजगार उपलब्ध न होने के कारण ग्रामवासीशहरों की ओर पलायन करने लगते हैं। गांव से शहरों की ओर पलायन पर रोक लगाने व निवास स्थल पर रोजगार उपलब्ध कराने, ग्रामीण परिवारों के जीवन स्तर में सुधार हेतु व महिला श्रमिकों में सशक्तिकरण लाने हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 5 सितम्बर 2005 को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम पारित किया गया है, जिसके अंतर्गत प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ग्रामीण परिवारों को 100 दिनों का एवं वन अधिकार तथा सुखाग्रस्त क्षेत्रों में 150 दिन के रोजगार की गारंटी दी जाती है। यह पहली ऐसी योजना है जिसमें गारंटी युक्त रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। अप्रैल 2008 से यह कानून भारत के सभी गांवों में लागू है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य:

1. महिलाओं के जीवन पर मनरेगा कार्यक्रम के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. महिला सशक्तिकरण हेतु मनरेगा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त उपाय सुझाना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन के विश्लेषण हेतु द्वितीयक समंको को आधार बनाया गया है। द्वितीयक समंको का संकलन महात्मा गांधी नरेगा वेबसाइट एम.आई.एस. मॉड्यूल के वर्ष 2021-22 से 2025-26 के अद्यतन आंकड़ों का प्रयोग किया गया है, द्वितीयक समंको के विष्लेषण हेतु प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंको के रूप में महिलाओं को मनरेगा के द्वारा स्वरोजगार एवं उद्यमिता हेतु दी गई सुविधाओं को भी सम्मिलित किया गया है। प्राथमिक समंक के लिए छिन्दवाडा जिले की 100 महिला श्रमिकों से लघु साक्षात्कार के द्वारा सूचनायें एकत्रित की गयी है।

समंको का विश्लेषण – महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (महात्मा गांधी नरेगा) में महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान हैं और अनुसूची-II पैरा 15 में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि रोजगार प्रदान करते समय महिलाओं को इस प्रकार प्राथमिकता दी जाएगी कि कम से कम एक-तिहाई लाभार्थी ऐसी महिलाएँ हों जिन्होंने योजना के अंतर्गत पंजीकरण कराया हो और काम की माँग की हो।मनरेगा (MGNREGA) में महिलाओं के लिए कई प्रावधान हैं, जिसमें कम से कम एक-तिहाई महिला लाभार्थियों को प्राथमिकता, समान वेतन, कार्यस्थल पर बच्चों के लिए क्रेच सुविधा, महिला मेट (पर्यवेक्षक) की नियुक्ति और स्वयं सहायता समूहों (SHG) के माध्यम से भागीदारी को बढ़ावा देना शामिल है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक सशक्तिकरण और लैंगिक समानता सुनिश्चित की जा सके।

मनरेगा में उपलब्ध कराये गये कार्यो दिवसों का अद्यतन डाटा मनरेगा की वेबसाइट पर दर्ज किया जाता है। जिसमें महिलाओं को दिये गये कार्य दिवसों को पृथक से प्रदर्शित किया गया है। विगत 5 वर्षो में महिलाओं को उपलब्ध कार्य दिवसों को निम्न सारणी के अनुसार दर्शाया गया है।

वर्ष	कुल रोजगार दिवस	महिलाओं को प्राप्त रोजगार दिवस	प्रतिशत वृद्धि/कमी
2021-22	72514	55052	75.99%
2022-23	61775	472951	76.55%
2023-24	59933	45974	76.70%
2024-25	57832	44053	76.17%
2025-26	47128	35450	75.23%

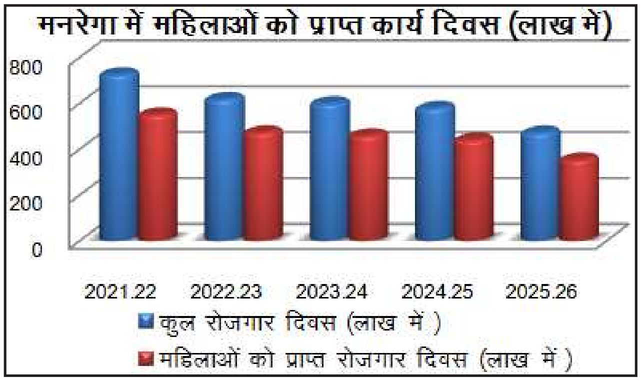

प्रस्तुत सारणी वर्ष 2021 से 2026 तक के रोजगार के आंकड़ों के माध्यम से महिला सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करती है। इस डेटा का विश्लेषण निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर किया जा सकता है।

1. **रोजगार में महिलाओं की उच्च भागीदारी**–सारणी से स्पष्ट है कि कुल रोजगार दिवसों में महिलाओं का हिस्सा बहुत अधिक है। सभी वर्षों में महिलाओं की भागीदारी 75 प्रतिशत से अधिक रही है। यह दर्शाता है कि रोजगार योजनाओं का लाभ उठाने में महिलाएं पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक सक्रिय हैं, जो आर्थिक स्वावलंबन की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है।

2. **प्रतिशत भागीदारी में स्थिरता**–यद्यपि कुल रोजगार के दिनों में गिरावट आई है, लेकिन महिलाओं की प्रतिशत भागीदारी काफी स्थिर रही है। वर्ष 2023-24 में 76.70 प्रतिशत के साथ उच्चतम भागीदारी शिखर पर थी।वर्ष 2025-26 में यह घटकर 75.23 प्रतिशत न्यूनतम भागीदारी हुई है।यह स्थिरता दर्शाती है कि कार्यबल में महिलाओं की मांग और उपस्थिति दोनों मजबूत बनी हुई है।

3. रोजगार के कुल अवसरों में कमी का प्रभावडेटा का एक चिंताजनक पहलू यह है कि 2021-22 (725.14) से 2025-26 (471.28) तक कुल रोजगार दिनों में लगातार गिरावट आई है।चूंकि महिलाएं इस कार्यबल का 75 प्रतिशत हिस्सा हैं, इसलिए रोजगार के अवसरों में आने वाली किसी भी कमी का सबसे सीधा और बड़ा प्रभाव महिलाओं की आय और उनके आर्थिक सशक्तिकरण पर पड़ता है।2021-22 में महिलाओं को 550.52 दिन का रोजगार मिला था, जो 2025-26 में घटकर 354.50 रह गया है। निष्कर्षत: सारणी महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में दोधारी तलवार जैसी है। एक ओर कार्यबल का नारीकरण हो रहा है। महिलाएं मुख्य धारा के आर्थिक कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही हैं। दूसरी ओर कुल उपलब्ध रोजगार में कमी आने से महिलाओं के लिए दीर्घकालिक आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से एक चुनौती हो सकती है। हालांकिंकुल रोजगार घटने के बाद भी महिलाओं का प्रतिशत भाग स्थिर है, जो मनरेगा के महिला सशक्तिकरण के महत्व को स्पष्ट करता है।

मनरेगा योजना से महिलाओं को लाभ – महिला श्रमिकों को मनरेगा से प्राप्त आय से लाभदायिता को निम्न आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है–

उपभोग आय– महिलाओं की मनरेगा आय घरेलू आय में उनके योगदान को बढ़ा रही है। सर्वेक्षण में उत्तरदाताओं के एक बड़े भाग ने कहा कि वे नियमित भोजन और उपभोक्ता वस्तुओं पर मनरेगा कार्यों में अर्जित आय व्यय करते हैं। मनरेगा से स्थानीय रूप से आय में वृद्धि हुई है उन्होंने महसूस किया कि मनरेगासे एक दिन में दो नियमित भोजन सुनिश्चित करने में मदद मिल रह है। मनरेगा से खाद्य सुरक्षा और शिशु आहार पर सकारात्मक प्रभाव के कारण शिशु कुपोषण भी कम हो सकता है।

आय में वृद्धि– मनरेगा का मुख्य उद्देश्य घरेलू आय-सृजन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना है। यह देखा गया है कि मनरेगा ने उनके हाथों में नकद आय बढ़ाने में मदद की जो महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता का एक बड़ा हिस्सा है। सर्वेक्षण से पता चलता है कि महिला कार्यकर्ता पारिवारिक भूमिकाओं और उनके कार्य निर्णयों में योगदान के रूप में अपनी भूमिकाओ के बारे में अधिक आश्वस्त हैं।यह इंगित करता है कि महिला श्रमिकों की क्रय क्षमता में वृद्धि हुई है।

निर्धनता पर प्रभाव– मनरेगा आने से पहले यह देखा गया है कि छिन्दवाडा जिले में निर्धनता का स्तर बहुत अधिक था। अधिनियम के लागू होने के बाद ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। मनरेगा आने से कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि हुई है। इससे अंतत: लोगों की आय में वृद्धि हुई और गरीबी के स्तर को कम करने में मदद मिली। क्योंकि ये अपनी स्वच्छता सुविधाओं, पीने के पानी, पोषण स्तर आदि विकसित करने में सक्षम हाने के परिणामस्वरूप जीवन स्थिति में भी सुधार कर पाये हैं।

बेहतर स्वास्थ्य देखभाल–मनरेगा अधिनियम से अध्ययन क्षेत्र में गरीब लोगों की स्वास्थ्य स्थिति में सुधार हुआ है। मनरेगामजदूरी का एक बड़ा भाग स्वास्थ्य देखभाल खर्च किया गया है। लगभग 47 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मनरेगामजदूरीको स्वास्थ्य पर व्यय किया है। अधिनियम के लागू होने के बाद अध्ययनक्षेत्रों की स्वास्थ्य स्थिति में बहुत सुधार हुआ है। अधिनियम काम के घंटों के दौरान चिकित्सा सुविधा, श्रमिको के बच्चों को भोजन,पीने के पानी की सुविधा आदि भी प्रदान करता है।

घरेलू प्रभाव– महिलाएं अपने परिवार के लिए आर्थिक संसाधनों को बढ़ाने में एक प्रमुख भूमिका निभाती हैं, लेकिन उनके योगदान को बिना किसीकारण के नहीं रखा जाता है क्योंकि उनके प्रदर्शन को मौद्रिक रूप से नहीं माना जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अंतर-घरेलू फैसलों में पुरुष का वर्चस्व देखा गया है। महिलाओं के ऐसे अवैतनिक काम को सशुल्क काम में परिवर्तित करने में मनरेगा का महत्वपूर्ण प्रभाव है और घरेलू मामलों में महिलाओं की निर्णय लेने की भूमिका को व्यापक बनाता है।

कम ऋणग्रस्तता– मनरेगा महिला श्रमिको के ऋण के बोझ को कुछ सीमा तक कम करने में सहायता करता है। लगभग 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उन्होंने छोटे कर्ज चुकाने में अपनी मजदूरी खर्च की है। जिससे वे स्थानीय साहूकारों के चंगुल से खुद को दूर रख सकते है। लेकिन मनरेगा के माध्यम से अर्जित राशि कर्ज चुकाने के लिए पर्याप्त नहीं है।

सामुदायिक-स्तर के प्रभाव– संविधान के 73 वें संशोधन के बावजूद भी स्थानीय या जिला स्तर पर शासन प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी कम ही है। लेकिन मनरेगा के लागू होने के बाद महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। मनरेगा के संबंध में आयोजित ग्राम सभा की बैठक में बड़ी संख्या में महिला श्रमिक सक्रिय रूप से भाग लेती हैं। महिलाओं का सामुदायिक स्तर पर सशक्तिकरण इस अधिनियम की महान उपलब्धियों में से एक है।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना सरकार की लोकप्रिय योजनाओं में से एक है। जिससे ग्रामीण महिलाओं में सशक्तिकरण का विकास हुआ है। इस योजना का ग्रामीण महिलाओं में सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। द्वितीयक समंको के विषलेषण से स्पष्ट है कि मनरेगा में दिये गये कुल रोजगार में महिलाओं को

एक तिहाई रोजगार दिया गया है। जिसने उनकी व्यक्तिगत आय में वृद्धि की है। योजना के माध्यम से ही छिन्दवाडा जिले का ग्रामीण विकास हुआ है तथा छिन्दवाडा जिले में भी महिलाओं को सर्वाधिक रोजगार प्राप्त हुआ है। जिसमें अनुसूचित जाती व अनुसूचित जनजाती महिलाओं को रोजगार उपलब्धता से आय से आर्थिक सशक्तिकरण हुआ है। अंत में इसयोजना के संदर्भ में यही कहा जा सकता है कि मनरेगा ने महिलाओं के आर्थिक-सामाजिक सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

सुझाव - मनरेगा योजना के द्वारा महिला सशक्तिकरण एवं प्रभावी कार्यान्वयन के लिए निम्न उपायों को अपनाया जा सकता है।

1. कार्यस्थल पर समुचित सुविधा जैसे पेयजल, छप्पर, प्राथमिक चिकित्सा मुहैया करायीजानी चाहिए। अगर 06 साल से कम आयु के 05 या ज्यादा बच्चें हो तो झूलाघर की व्यवस्था की जानी चाहिए और झूलाघर की देखरेख के लिए महिला श्रमिक की नियुक्ति भी की जानी चाहिए।
2. महिला श्रमिकों को शिक्षित किया जाना चाहि, ताकि वे मेटो द्वारा की गई जालसाजी को जान सके।
3. महिला श्रमिकों के खाते खुलवाने के लिए, बैंकों व डाकघरों को स्वयं आगं आना चाहिए तथा बैंकों व डाकघरों को ही खाते खुलवाने से संबंधित औपचारिकताए पूरी करनी चाहिए।
4. सरकार द्वारा किसी उच्च अधिकारी से सामाजिक अंकेक्षण करानी चाहिए ताकि भ्रष्टाचार व गबन जैसी विसंगति को रोका जा सके।
5. महिला श्रमिकों को मातृत्व भत्ता, बेरोजगारी भत्ता व शिकायत निवारण प्रणाली के बारे में जानकारी दी जानी चाहि,।
6. ठेकेदार द्वारा महिला श्रमिकों के प्रति दुर्व्यवहार किए जाने पर सरकार द्वारा उचित कार्यवाही की जानी चाहिए।
7. जहाँ तक संभव हो सके महिलाओं को ग्रामीण सीमा के 05 कि.मी. के अंदर ही रोजगार उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

शोध पत्र, शोध ग्रंथ एवं शोध रिपोर्ट:

1. भगवंतराव कराड़े एवं योगेष अहिरवार (2021*) :कोविड-19 के दौरान आर्थिक विकास में मनरेगा योजना की प्रभावशीलता का एक अध्ययन, छिन्दवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में'* कोविड-19 का समाज पर प्रभाव अर्थ पब्लिकेशन। ISBN-978-81-951391-4-9 पृष्ठ 84-93 ।
2. गोरा अन्नू देवी, माधुरी जोशी और राधिका तंवर, (2017), 'भारत के राजस्थान के जयपुर जिले में मनरेगा के तहत महिला श्रमिकों द्वारा अनुभव की जाने वाली समस्याएं' *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ करंट माइक्रोबायोलॉजी एंड एप्लाइड साइंसेज*, वॉल्यूम 6 (8), पृ. 3591-3596।
3. केषलता (2014), 'मनरेगा के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों के उत्थान का मूल्यांकन' *आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस*, खंड 19, अंक 8, संस्करण (अगस्त 2014), पृष्ठ 08-12
4. केशलता और सैयद नदीम फातमी, (2015), 'मध्य प्रदेश के श्योपुर जिले में गरीबी उन्मूलन और ग्रामीण विकास के माध्यम से अनुसूचित जनजातियों के सशक्तिकरण में मनरेगा का योगदान एक विश्लेषणात्मक अध्ययन', *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस इन्वेंशन*, खंड 4, पृष्ठ 58-71
5. सौमेन्द्र, किशोर गुप्ता और कृष्ण सिंह (2013)मनरेगा कार्यक्रम में गरीब महिलाओं की कार्य भागीदारी और दक्षता- भारत के पष्चिम बंगाल के एक जिले का मामला अध्ययन।
6. रविंदर, एम., (2016), 'एमजीएनआरईजीएस के माध्यम से महिलाओं का सशक्तिकरण, तेलंगाना राज्य के वारंगल जिले में एक अध्ययन' *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च एंड मॉडर्न एजुकेशन (आईजेएमआरएमई)*, खंड 2 (1), पृ.309 - 321।

शोध समीक्षायें:

1. मनरेगा समीक्षा 2006 ओरिऐंट ब्लेकस्वान पब्लिकेशन, हैदराबाद तेलगांना।
2. मनरेगा समीक्षा II(अनुसंधान अध्ययनों का संग्रह 2006 से2012)
3. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी योजना का प्रभाव, गरीबी अनुश्रवन इकाई, राज्य नीति आयोग, मध्यप्रदेश।

Online Resources:-

1. https://nreganarep.nic.in/netnrega/state_html/empstatusnewall_scst.aspx?lflag=eng&fin_year=20252026&source=national&labels=labels&Digest=0a5fZ+hdCIswROP5LqpxKg
2. https://nreganarep.nic.in/netnrega/state_html/empstatusnewall_scst.aspx?lflag=eng&fin_year=2024-2025&source=national&labels= labels&Digest=0a5fZ+hdCIswROP5LqpxKg
3. https://nreganarep.nic.in/netnrega/state_html/empstatusnewall_scst.aspx?lflag=eng&fin_year=2023-2024&source=national&labels=labels&Digest=0a5fZ+hdCIswROP5LqpxKg
4. https://nreganarep.nic.in/netnrega/state_html/empstatusnewall_scst.aspx?lflag=eng&fin_year=2022-2023&source=national&labels=labels&Digest=0a5fZ+hdCIswROP5LqpxKg
5. https://nreganarep.nic.in/netnrega/state_html/empstatusnewall_scst.aspx?lflag=eng&fin_year=2021-2022&source=national&labels=labels&Digest=0a5fZ+hdCIswROP5LqpxKg

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मुस्लिम विधि में भरण-पोषण

डॉ. ज़ाकिर खान*

* प्राचार्य, सांदीपनि विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – मुस्लिम कानून में भरण-पोषण (Maintenance) का संबंध उन आर्थिक और भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने से है, जो किसी व्यक्ति पर उसके पारिवारिक संबंधों के कारण अनिवार्य हो जाती हैं। मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत भरण-पोषण के सिद्धांत कुरान, हदीस और शरीयत पर आधारित हैं। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि समाज के कमजोर वर्गों, जैसे कि महिलाएं, बच्चे और वृद्धजन, को उनके अधिकारों से वंचित न किया जाए।

भरण-पोषण की परिभाषा और उद्देश्य – भरण-पोषण का तात्पर्य है किसी व्यक्ति की मूलभूत आवश्यकताओं, जैसे भोजन, कपड़े, आवास और स्वास्थ्य का प्रबंधन करना। मुस्लिम कानून में यह सिद्धांत पारिवारिक दायित्व के तहत आता है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि परिवार के सभी सदस्य गरिमामय जीवन जी सकें।

भरण-पोषण के स्रोत

कुरान में उल्लेख:-

भरण-पोषण का आधार कुरान में है, जिसमें पारिवारिक दायित्वों को स्पष्ट किया गया है:

सूरह अल-बकरा (2:233):

'मां को उनके बच्चों के लिए उचित ढंग से भरण-पोषण और वस्त्र प्रदान किया जाएगा।'

सूरह अल-तलाक (65:6-7):

'तलाक के बाद, पत्नी को उसकी इद्दत अवधि तक भरण-पोषण प्रदान किया जाए। यदि गर्भवती हो, तो डिलीवरी तक और उसके बाद बच्चे के पालन-पोषण का प्रबंध किया जाए।'

हदीस (पैगंबर मुहम्मद के कथन):

'पति पर यह अनिवार्य है कि वह अपनी पत्नी और बच्चों के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाए।' (सहीह अल-बुखारी)

'अच्छे मुस्लिम वह है जो अपने परिवार की जरूरतों को पूरा करे।'

मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लीकेशन एक्ट, 1937:

भारत में यह अधिनियम मुस्लिम पर्सनल लॉ को लागू करता है, जो भरण-पोषण से जुड़े सभी मामलों का निपटारा शरीयत के अनुसार करता है।

भरण-पोषण के अधिकार और दायित्व

पति-पत्नी के बीच

शादीशुदा जीवन के दौरान:

पत्नी का भरण-पोषण करना पति की जिम्मेदारी है।

शरीयत के अनुसार, पत्नी को खाना, कपड़े, और आवास उपलब्ध कराना पति का कर्तव्य है।

तलाक के बाद:

इद्दत की अवधि तक: तलाक के बाद महिला को इद्दत (तीन महीने) तक भरण-पोषण दिया जाता है।

मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986: इस अधिनियम के तहत, तलाकशुदा महिला का भरण-पोषण इद्दत अवधि तक किया जाता है।

विशेष परिस्थितियों में यदि महिला गर्भवती हो या बच्चों का पालन-पोषण कर रही हो, तो पति को अतिरिक्त सहायता प्रदान करनी होगी।

(इ) बच्चों के लिए:

नाबालिग बच्चे:

बेटे को उसकी परिपक्वता (18 वर्ष) तक और बेटी को विवाह तक भरण-पोषण का अधिकार है।

बच्चे का भरण-पोषण माता-पिता दोनों की जिम्मेदारी है।

शादीशुदा बेटी:

शादी के बाद बेटी का भरण-पोषण पति की जिम्मेदारी बन जाती है।

(ब) माता-पिता के लिए:

वृद्ध माता-पिता का भरण-पोषण उनकी संतान का कर्तव्य है।

शरीयत के अनुसार, माता-पिता की सेवा और देखभाल करना संतान का नैतिक और धार्मिक दायित्व है।

शाह बानो केस (1985): एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण

शाह बानो बनाम मोहम्मद अहमद खान का मामला मुस्लिम महिलाओं के भरण-पोषण के अधिकारों पर मील का पत्थर साबित हुआ।

मामले का सारांश:

शाह बानो, एक 62 वर्षीय महिला, को उसके पति ने तलाक दे दिया। उसने भरण-पोषण के लिए भारतीय संविधान के तहत धारा 125 में याचिका दायर की।

सुप्रीम कोर्ट ने पति को आदेश दिया कि वह शाह बानो को भरण-पोषण प्रदान करे।

नतीजा:

इस निर्णय के बाद मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 पारित किया गया, जिसने मुस्लिम महिलाओं को इद्दत अवधि के बाद भरण-पोषण पाने का अधिकार सीमित कर दिया।

भारतीय संविधान और मुस्लिम पर्सनल लॉ के बीच संतुलन

भारतीय संविधान अनुच्छेद 125 के तहत, भरण-पोषण का अधिकार सभी धर्मों की महिलाओं को मिलता है।

मुस्लिम पर्सनल लॉ कभी-कभी संविधान के प्रावधानों से भिन्न हो जाता है, जिसके कारण विवाद उत्पन्न होते हैं।

चुनौतियां और समाधान

चुनौतियां:

1. इद्दत के बाद महिलाओं का अधिकार समाप्त होना।
2. बच्चों और वृद्ध माता-पिता के लिए न्यायालयीन प्रक्रिया का जटिल होना।

समाधान:

1. मुस्लिम पर्सनल लॉ को संविधान के साथ सामंजस्य स्थापित करना।
2. महिलाओं और बच्चों के अधिकारों को बेहतर तरीके से संरक्षित करना।

निष्कर्ष - मुस्लिम कानून में भरण-पोषण एक महत्वपूर्ण विषय है, जो पारिवारिक जिम्मेदारियों और अधिकारों को परिभाषित करता है। हालांकि, महिलाओं और बच्चों के अधिकारों को लेकर अभी भी सुधार की आवश्यकता है। भरण-पोषण से जुड़े मुद्दों का निपटारा न्याय, समानता और समाज कल्याण की दृष्टि से किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरान शरीफ
2. सहीह अल-बुखारी और सहीह मुस्लिम
3. मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लीकेशन एक्ट, 1937
4. शाह बानो बनाम मोहम्मद अहमद खान, ए.आई.आर. 1985 एस.सी. 945
5. मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Evaluating the Role of Regulatory Sandboxes in Fostering FinTech Innovation in India

Prastuti Gupta* Dr. Sanjay Sharma**

*Research Scholar, Institute of Management Studies, DAVV, Indore (M.P.) INDIA
** Principal & Professor, IMI Business School, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: The rapid growth of financial technology (FinTech) has challenged traditional regulatory frameworks in emerging economies such as India, as innovative financial services often operate beyond conventional regulatory boundaries. While FinTech offers opportunities for efficiency, financial inclusion, and market innovation, it also creates regulatory uncertainty and risk. In response, regulators have introduced regulatory sandboxes as adaptive governance tools that enable controlled experimentation under supervisory oversight. This study evaluates the role of regulatory sandboxes in fostering FinTech innovation in India through a desk-based qualitative policy analysis. Using secondary data from regulatory documents, institutional reports, and academic literature, the study examines sandbox frameworks implemented by the Reserve Bank of India, Securities and Exchange Board of India, Insurance Regulatory and Development Authority of India, and the International Financial Services Centres Authority. A comparative evaluation reveals that Indian regulatory sandboxes primarily function as mechanisms for adaptive regulation, supporting experimentation, regulatory learning, and risk mitigation rather than directly accelerating innovation. The innovation impact varies across regulators, with the IFSCA sandbox demonstrating stronger commercialization potential due to clearer scaling pathways. Strengthening inter-regulatory coordination and post-sandbox transition mechanisms could enhance sandbox effectiveness in India.

Introduction - India's financial services sector has undergone a structural transformation driven by rapid digitalization and the emergence of financial technology (FinTech) firms. FinTech innovations have redefined payment systems, lending models, insurance delivery, investment advisory services, and regulatory compliance mechanisms. In India, this transformation has been accelerated by widespread smartphone adoption, increasing internet penetration, and the development of digital public infrastructure such as Aadhaar, Unified Payments Interface (UPI), and the India Stack. While these developments have expanded access to financial services, they have also introduced regulatory challenges. FinTech firms often operate across traditional regulatory boundaries, raising concerns related to consumer protection, data privacy, cybersecurity, and systemic risk. Conventional regulatory frameworks, designed primarily for traditional financial institutions, are often ill-suited to govern such rapidly evolving and technology-driven business models. In response, regulatory authorities worldwide have adopted regulatory sandboxes as experimental governance tools. Regulatory sandboxes provide a controlled environment in which innovative financial products and services can be tested under regulatory oversight with limited regulatory relaxation. This approach allows regulators to observe innovations in real-market conditions while minimizing risks to consumers and the financial system.

India has adopted a multi-regulator sandbox approach, with the Reserve Bank of India (RBI), Securities and Exchange Board of India (SEBI), Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDAI), and International Financial Services Centres Authority (IFSCA) each introducing sandbox frameworks aligned with their sectoral mandates. Systematic assessment of sandbox results in terms of ecosystem development and innovation facilitation is still lacking, despite their increasing significance. This study evaluates the role of regulatory sandboxes in fostering FinTech innovation in India through a structured policy analysis. The paper contributes to the FinTech governance literature by examining regulatory sandboxes as instruments of adaptive regulation rather than adoption determinants.

Conceptual Background: Regulatory Sandboxes and FinTech Innovation: The rapid evolution of financial technology (FinTech) has fundamentally altered the structure and functioning of financial markets across the globe. Innovations such as digital payments, algorithmic lending, robo-advisory services, blockchain-based solutions, and regtech applications challenge traditional regulatory frameworks that were designed for stable, institution-centric financial systems. In this context,

regulators face a dual mandate: fostering innovation to enhance efficiency and financial inclusion while simultaneously safeguarding consumer interests, market integrity, and financial stability. Addressing this regulatory dilemma has led to the emergence of regulatory sandboxes as a novel instrument of adaptive financial regulation.

Regulatory Sandboxes: Concept and Rationale: A regulatory sandbox refers to a controlled regulatory environment that allows firms to test innovative financial products, services, or business models with real consumers for a limited period under the supervision of regulatory authorities. During sandbox testing, selected regulatory requirements may be relaxed or modified, subject to predefined safeguards and risk-mitigation measures (Zetzsche et al., 2017). The primary objective is not deregulation but regulatory experimentation, enabling both regulators and innovators to learn from real-world trials. The rationale behind regulatory sandboxes stems from the recognition that traditional ex-ante regulation often struggles to keep pace with technological change. FinTech innovations frequently operate across sectoral boundaries, making them difficult to classify under existing regulatory categories. Sandboxes address this challenge by shifting regulatory focus from static rule enforcement to dynamic risk assessment and iterative learning.

Regulatory Sandboxes and Adaptive Governance: From a theoretical perspective, regulatory sandboxes are rooted in the principles of adaptive governance and responsive regulation. Adaptive governance emphasizes flexibility, learning, and institutional responsiveness in complex and uncertain environments (Black & Baldwin, 2010). Rather than imposing rigid compliance requirements, regulators engage in continuous interaction with innovators, allowing regulatory frameworks to evolve alongside technological advancements. Responsive regulation theory further suggests that regulatory effectiveness improves when authorities adopt graduated and context-sensitive approaches, responding to the behavior, risk profile, and maturity of regulated entities. Regulatory sandboxes operationalize these principles by enabling regulators to tailor oversight mechanisms based on observed risks during the testing phase, thereby improving regulatory proportionality.

Multi-Regulator Sandbox Architecture in India: India's regulatory sandbox framework is distinctive due to its multi-regulator structure. Unlike jurisdictions with a single financial regulator, India's financial system is governed by multiple sectoral authorities, including the Reserve Bank of India (RBI), Securities and Exchange Board of India (SEBI), Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDAI), and the International Financial Services Centres Authority (IFSCA). Each regulator has introduced sandbox initiatives aligned with its specific mandate, resulting in varied objectives, eligibility criteria, and innovation focus areas. While this approach allows sector-specific oversight and tailored regulatory responses, it also introduces coordination challenges and potential fragmentation. Understanding how these diverse sandbox frameworks collectively influence FinTech innovation is therefore critical for evaluating India's regulatory approach.

Conceptual Linkage Between Regulatory Sandboxes and Innovation Outcomes

1. **Regulatory Certainty –** reducing ambiguity and compliance risk
2. **Experimentation Support –** enabling real-world testing of innovations
3. **Ecosystem Development –** fostering collaboration among regulators, firms, and stakeholders

Review Of Literature

Regulatory Innovation and Adaptive Financial Regulation

(Black & Baldwin, 2010) Traditional financial regulation has historically relied on prescriptive, rule-based frameworks designed to ensure stability, consumer protection, and systemic risk mitigation. However, scholars argue that such static regulatory approaches are increasingly inadequate in technology-intensive environments characterized by rapid innovation and uncertainty. They introduced the concept of risk-based and responsive regulation, emphasizing regulatory flexibility and learning as essential components of effective governance.

Ford (2013) highlighted the limitations of ex-ante regulation in financial markets, suggesting that regulators must adopt experimental and iterative approaches to address emerging risks associated with innovation.

Zetzsche et al. (2017) conceptualized regulatory sandboxes as part of a broader toolkit of innovation facilitators, arguing that they help regulators balance innovation promotion with risk containment.

Regulatory Sandboxes as Policy Instruments: Allen (2019) observed that sandbox frameworks reduce regulatory uncertainty and lower compliance costs for innovative firms, particularly startups and small enterprises. By allowing firms to operate under temporary regulatory relaxations, sandboxes facilitate proof-of-concept testing and product refinement.

Fenwick, McCahery, and Vermeulen (2020) emphasized that regulatory sandboxes contribute to institutional learning, enabling regulators to better understand novel business models and associated risks. They caution that sandboxes should not be viewed as substitutes for comprehensive regulatory reform but rather as transitional mechanisms supporting regulatory adaptation.

Ehrentraud et al. (2020) argue that sandbox participation may favor well-resourced firms capable of navigating regulatory application processes, potentially excluding smaller innovators. Sandbox outcomes may remain limited if clear post-testing regulatory pathways are not established.

Regulatory Sandboxes and Innovation Outcomes: A study by Cornelli et al. (2020) found that sandbox participation is associated with increased experimentation and faster time-to-market in certain jurisdictions. However, the authors note that the magnitude of these outcomes depends heavily on regulatory design, supervisory engagement, and ecosystem maturity.

Bromberg, Godwin, and Ramsay (2018) suggest that sandboxes function more effectively as innovation enablers rather than commercialization accelerators. Their findings indicate that while sandboxes support early-stage experimentation, long-term innovation success depends on complementary factors such as access to finance, market demand, and regulatory scalability.

In developing economies, regulatory sandboxes are often linked to broader developmental objectives, including financial inclusion and institutional capacity-building. Arner, Barberis, and Buckley (2017) highlight that sandboxes in emerging markets serve not only innovation goals but also help regulators enhance supervisory capabilities in rapidly evolving financial ecosystems.

FinTech Regulation and Sandbox Frameworks in Emerging Economies: Emerging economies face unique challenges in regulating FinTech, including limited regulatory capacity, fragmented financial markets, and developmental priorities. Regulatory sandboxes have been adopted as pragmatic solutions to address these constraints.

Jenik and Lauer (2017) argue that sandboxes in developing countries enable regulators to engage proactively with innovators while maintaining oversight. Their study emphasizes the importance of aligning sandbox objectives with national financial inclusion strategies.

Auer and Claessens (2018) observe that regulatory experimentation in emerging markets supports policy learning and institutional development, particularly in areas such as digital payments and alternative lending.

Indian Context: Regulatory Sandboxes and FinTech Governance: Shukla and Dubey (2022) provide a descriptive overview of the RBI's regulatory sandbox framework, highlighting its objectives, thematic cohorts, and eligibility criteria. While the study acknowledges the sandbox's potential to foster innovation, it does not evaluate innovation outcomes or regulatory effectiveness.

Ghosh and Vinod (2021) examine India's multi-regulator FinTech governance structure, noting coordination challenges arising from overlapping regulatory mandates. Their findings suggest that while sector-specific sandboxes allow tailored oversight, they may also contribute to regulatory fragmentation.

Recent policy-oriented studies by the Reserve Bank of India (2022) and the Bank for International Settlements (2023) emphasize the role of sandboxes in regulatory learning and capacity-building. These reports are primarily institutional narratives and lack independent academic evaluation.

Research Objectives:-

1. To examine regulatory sandboxes as instruments of adaptive financial regulation in the context of FinTech innovation in India.
2. To analyze the design and operational characteristics of regulatory sandbox frameworks implemented by Indian financial regulators.
3. To comparatively evaluate the effectiveness of sector-specific regulatory sandboxes in facilitating FinTech innovation.
4. To assess the role of regulatory sandboxes in enabling experimentation, regulatory learning, and ecosystem development.
5. To identify policy and governance challenges affecting the innovation outcomes of regulatory sandboxes in India.

Methodology

Research Design: The present study adopts a desk-based qualitative research design to evaluate the role of regulatory sandboxes in fostering FinTech innovation in India. Desk-based research is appropriate when the objective is to analyze policy frameworks, regulatory instruments, and institutional mechanisms rather than individual-level perceptions or behavioral outcomes. This approach enables a comprehensive assessment of regulatory sandbox initiatives without reliance on primary data collection. The study follows an interpretive and evaluative research paradigm, focusing on understanding regulatory intent, design features, and innovation facilitation mechanisms embedded within sandbox frameworks.

Data Collection: The study is based exclusively on secondary data, obtained from credible and publicly accessible sources. These sources were selected to ensure reliability, authenticity, and relevance to the research objectives. The key categories of data sources include:

a. Regulatory Documents and Guidelines: Official regulatory sandbox frameworks, discussion papers, circulars, and progress reports issued by Indian financial regulators, including:

1. Reserve Bank of India (RBI)
2. Securities and Exchange Board of India (SEBI)
3. Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDAI)
4. International Financial Services Centres Authority (IFSCA)

b. Institutional and Policy Reports: Publications from national and international institutions such as the Bank for International Settlements (BIS), Financial Stability Institute (FSI), World Bank, and Reserve Bank of India, which provide insights into regulatory innovation, sandbox effectiveness, and global best practices.

c. Peer-Reviewed Academic Literature: Scholarly articles published in Scopus-indexed and UGC-CARE listed journals covering regulatory sandboxes, FinTech governance, adaptive regulation, and innovation policy.

d. Industry and Ecosystem Reports: Selected industry white papers and analytical reports from recognized FinTech research bodies and think tanks were used to supplement regulatory and academic insights, particularly for understanding ecosystem-level implications.

Analytical Approach: The analysis was conducted using a two-stage qualitative analytical framework, combining policy evaluation and thematic synthesis.

Policy Evaluation Approach: Policy evaluation was employed to systematically examine regulatory sandbox frameworks across different Indian financial regulators. This involved:

1. Assessing sandbox objectives and scope
2. Evaluating eligibility criteria and participation mechanisms
3. Analyzing regulatory relaxations and supervisory safeguards
4. Examining post-sandbox transition and scalability pathways

A comparative policy evaluation approach was used to identify similarities and differences across sandbox models implemented by RBI, SEBI, IRDAI, and IFSCA. This facilitated an understanding of how regulatory design choices influence innovation facilitation and ecosystem development.

Thematic Synthesis: Thematic synthesis was applied to integrate findings from diverse sources and extract recurring patterns related to regulatory sandboxes and FinTech innovation. Relevant data segments from policy documents, academic studies, and institutional reports were coded and grouped into key themes, such as:

1. Regulatory flexibility and experimentation
2. Regulatory learning and capacity building
3. Innovation support mechanisms
4. Coordination and governance challenges

Findings

Evaluation of Regulatory Sandboxes in India: India has adopted a distinctive multi-regulator approach to regulatory sandboxes, reflecting the segmented structure of its financial regulatory architecture. The Reserve Bank of India (RBI), Securities and Exchange Board of India (SEBI), Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDAI), and International Financial Services Centres Authority (IFSCA) have each introduced sandbox frameworks tailored to their respective mandates.

Reserve Bank of India (RBI) Regulatory Sandbox: The Reserve Bank of India launched its regulatory sandbox framework in 2019 with the objective of fostering responsible innovation in the banking and payments ecosystem while preserving financial stability and consumer protection. The RBI sandbox primarily targets FinTech innovations related to digital payments, lending, remittances, financial inclusion, and regulatory technology (RegTech). From a policy design perspective, the RBI sandbox emphasizes risk containment and supervisory oversight. Entry criteria are relatively stringent, with a strong focus on consumer safeguards, capital adequacy, and data protection measures. While this cautious approach enhances systemic stability, it also limits participation to firms with relatively higher compliance readiness. In terms of innovation facilitation, the RBI sandbox supports controlled experimentation and regulatory learning rather than rapid commercialization. Sandbox cohorts are theme-based, allowing the regulator to focus on specific policy priorities. However, the absence of clearly defined post-sandbox scaling pathways has constrained the long-term innovation impact of the framework.

Securities and Exchange Board of India (SEBI) Regulatory Sandbox: SEBI introduced its regulatory sandbox framework in 2020 to promote innovation in the securities market ecosystem, including capital markets, mutual funds, and market intermediaries. The SEBI sandbox focuses on technology-driven solutions such as algorithmic trading tools, investor analytics, digital onboarding, and compliance automation. The SEBI sandbox adopts a comparatively flexible and innovation-oriented design, offering higher entry flexibility and shorter testing cycles. Its emphasis on technological efficiency and market transparency aligns with SEBI's broader mandate of investor protection and market development. The sandbox's scope remains relatively narrow, limited largely to intermediary-level innovations rather than end-to-end market transformation. The sandbox framework provides limited clarity regarding regulatory transitions after the testing phase, potentially reducing incentives for firms seeking long-term scalability. Consequently, while the SEBI sandbox contributes to incremental innovation and operational efficiency, its systemic innovation impact is constrained.

Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDAI) Regulatory Sandbox: The IRDAI launched its regulatory sandbox framework in 2021 with the objective of promoting innovation in insurance product design, distribution models, and customer service delivery. The sandbox particularly targets innovations aimed at improving insurance penetration, inclusion, and affordability. The IRDAI sandbox is sector-specific and inclusion-oriented, focusing on micro-insurance, usage-based insurance, digital claims processing, and alternative distribution channels. Its design reflects a balanced approach, combining regulatory flexibility with consumer protection safeguards. The sandbox's innovation facilitation capacity is moderated by conservative testing parameters and limited testing duration. The sandbox largely supports incremental product and process innovations rather than disruptive technological models. While the IRDAI sandbox plays a valuable role in expanding insurance accessibility, its contribution to broader FinTech innovation remains relatively modest.

International Financial Services Centres Authority

(IFSCA) Regulatory Sandbox: The IFSCA sandbox, introduced in 2021, represents the most innovation-forward sandbox framework in India. Designed for the GIFT City International Financial Services Centre, the IFSCA sandbox aims to position India as a global FinTech and financial services hub. Unlike sector-specific domestic sandboxes, the IFSCA framework adopts a unified and cross-sectoral approach, covering banking, capital markets, insurance, fintech, and regtech innovations. It offers greater regulatory flexibility, faster approval timelines, and clearer post-sandbox transition mechanisms. From an innovation policy standpoint, the IFSCA sandbox exhibits the strongest alignment between regulatory experimentation and commercialization potential. Its global orientation, combined with regulatory coherence, enables firms to test scalable and internationally competitive solutions. As a result, the IFSCA sandbox functions not only as a regulatory testing ground but also as a strategic innovation platform.

Comparative Assessment

Table1: Structural Comparison of Regulatory Sandboxes

Regulator	Year	Sector Focus	Sandbox Objective
RBI	2019	Banking, payments,regtech	Financial stability & innovation
SEBI	2020	Capital markets	Market efficiency
IRDAI	2021	Insurance	Inclusion & product innovation
IFSCA	2021	Cross-border finance	Global competitiveness

Table2 (see in last page)

Table3: Innovation Facilitation Evaluation

Dimension	RBI	SEBI	IRDAI	IFSCA
Entry flexibility	Moderate	High	Moderate	High
Regulatory engagement	High	High	Moderate	High
Innovation scope	Broad	Narrow	Sector -specific	Broad
Scaling pathway clarity	Moderate	Low	Low	High

Synthesis: The evaluation indicates that regulatory sandboxes in India function primarily as adaptive governance tools rather than direct innovation accelerators. Their effectiveness in fostering FinTech innovation depends significantly on regulatory design, inter-regulatory coordination, and post-sandbox transition clarity. Strengthening these dimensions could enhance the innovation impact of sandbox initiatives across the Indian FinTech ecosystem.

Discussion- Regulatory sandboxes have emerged as important instruments for fostering FinTech innovation in India by enabling controlled market experimentation, regulatory learning, and iterative policy development. Rather than functioning as direct innovation accelerators, sandboxes primarily facilitate **responsible experimentation** within defined regulatory boundaries. Sandboxes support **market experimentation** by allowing FinTech firms to test innovative products and business models with real users in a controlled environment. This reduces uncertainty associated with regulatory compliance and enables early identification of operational and consumer-related risks. Regulatory sandboxes contribute to **compliance learning** for both regulators and firms. Through continuous supervisory engagement, regulators gain insights into emerging technologies, while firms develop a clearer understanding of regulatory expectations. This mutual learning process enhances regulatory alignment and reduces post-launch compliance challenges. Sandboxes assist in **time-to-market facilitation** by providing structured testing pathways that reduce regulatory ambiguity during early stages of innovation. However, the extent of time efficiency varies across regulators, with clearer post-sandbox transition mechanisms leading to stronger commercialization potential. Regulatory sandboxes strengthen **regulatory feedback loops** by institutionalizing dialogue between innovators and regulators. These feedback mechanisms support iterative refinement of regulatory frameworks, contributing to adaptive governance in rapidly evolving FinTech markets. The findings indicate that regulatory sandboxes in India play a critical enabling role in the FinTech innovation ecosystem by balancing experimentation with oversight, though their long-term innovation impact depends on regulatory coherence and scalability pathways.

Policy And Managerial Implications

Implications for Regulators: The findings of the study suggest that regulatory sandboxes serve as effective tools for adaptive governance, but their impact on FinTech innovation can be strengthened through targeted policy refinements. Regulators should prioritize **greater inter-regulatory coordination** to address fragmentation arising from India's multi-regulator framework. Harmonizing sandbox objectives, timelines, and evaluation criteria can improve regulatory clarity and reduce compliance uncertainty for participating firms. Regulators should establish **clear post-sandbox transition pathways**, outlining regulatory requirements for scaling innovations beyond the testing phase. This would enhance the commercialization potential of sandbox-tested solutions and improve the long-term innovation impact. Strengthening feedback mechanisms and documenting learning outcomes from sandbox cohorts can also support evidence-based regulatory reforms.

Implications for FinTech Firms: For FinTech firms, participation in regulatory sandboxes offers strategic benefits beyond regulatory relaxation. Sandboxes provide opportunities for **early regulatory engagement**, risk identification, and product refinement under supervisory guidance. Firms should approach sandbox participation as a learning and validation process rather than a guarantee

of market success. Firms can leverage sandbox participation to enhance organizational credibility, attract investors, and build trust with ecosystem partners. Proactive compliance readiness and alignment with regulatory objectives can increase the likelihood of successful sandbox outcomes and smoother post-testing transitions.

Conclusion: This study evaluated the role of regulatory sandboxes in fostering FinTech innovation in India through a desk-based policy analysis. The findings indicate that regulatory sandboxes function primarily as **enabling mechanisms** that support controlled experimentation, regulatory learning, and adaptive governance. While the direct impact on rapid commercialization remains limited, sandboxes play a critical role in reducing regulatory uncertainty and facilitating responsible innovation. The comparative analysis reveals that innovation facilitation varies across regulators, with differences in regulatory flexibility, scope, and scalability support. In particular, the IFSCA sandbox demonstrates stronger alignment between experimentation and innovation scalability, whereas other sandboxes emphasize regulatory oversight and systemic stability. Overall, regulatory sandboxes contribute meaningfully to the evolution of India's FinTech ecosystem by balancing innovation promotion with risk management.

Limitations And Future Research Directions

The study is subject to certain limitations. First, the reliance on secondary data restricts the ability to capture firm-level experiences and quantitative innovation outcomes. Second, the analysis focuses on policy design and institutional mechanisms rather than longitudinal innovation performance. Future research may address these limitations by incorporating **case studies of sandbox participants**, conducting **comparative cross-country analyses**, or examining the **long-term regulatory and market impacts** of sandbox-tested innovations. Empirical studies integrating firm-level data and stakeholder perspectives could further enrich understanding of how regulatory sandboxes influence FinTech innovation outcomes in emerging economies.

References :-

1. Allen, H. (2019). *Regulatory sandboxes*. University of Cambridge Centre for Alternative Finance. https://www.jbs.cam.ac.uk/faculty-research/centres/alternative-finance/publications/regulatory-sandboxes/
2. Arner, D. W., Barberis, J., & Buckley, R. P. (2017). FinTech and RegTech in a nutshell, and the future in a sandbox. *Northwestern Journal of International Law & Business, 37*(2), 371–413.
3. Auer, R., & Claessens, S. (2018). *Regulating the digital economy*. Bank for International Settlements Quarterly Review. https://www.bis.org/publ/qtrpdf/r_qt1809f.htm
4. Black, J., & Baldwin, R. (2010). Really responsive risk-based regulation. *Law & Policy, 32*(2), 181–213. https://doi.org/10.1111/j.1467-9930.2010.00318.x
5. Bromberg, L., Godwin, A., & Ramsay, I. (2018). FinTech sandboxes: Achieving a balance between regulation and innovation. *Journal of Banking and Finance Law and Practice, 29*(4), 314–336.
6. Cornelli, G., Frost, J., Gambacorta, L., Rau, R., Wardrop, R., & Ziegler, T. (2020). *FinTech and big tech credit: A new database*. BIS Working Papers No. 887. Bank for International Settlements. https://www.bis.org/publ/work887.htm
7. Ehrentraud, J., Ocampo, D. G., Garzoni, L., & Piccolo, M. (2020). *Policy responses to FinTech: A cross-country overview*. FSI Insights on Policy Implementation No. 23. Bank for International Settlements. https://www.bis.org/fsi/publ/insights23.htm
8. Fenwick, M., McCahery, J. A., & Vermeulen, E. P. M. (2020). FinTech and the financing of entrepreneurs: From crowdfunding to marketplace lending. In *The Cambridge handbook of law and entrepreneurship* (pp. 635–662). Cambridge University Press. https://doi.org/10.1017/9781316679556.031
9. Ford, C. (2013). Principles-based securities regulation in the wake of the global financial crisis. *McGill Law Journal, 55*(2), 257–307.
10. Ghosh, S., & Vinod, D. (2021). Regulating FinTech in India: Challenges and policy perspectives. *Economic and Political Weekly, 56*(12), 45–52.
11. Jenik, I., & Lauer, K. (2017). *Regulatory sandboxes and financial inclusion*. CGAP Working Paper. World Bank Group. https://www.cgap.org/research/publication/regulatory-sandboxes-and-financial-inclusion
12. Reserve Bank of India. (2022). *Report on trend and progress of banking in India*. RBI. https://www.rbi.org.in
13. Shukla, A., & Dubey, P. (2022). Regulatory sandbox framework in India: Opportunities and challenges. *Journal of Financial Regulation and Compliance, 30*(3), 366–382. https://doi.org/10.1108/JFRC-01-2021-0007
14. Zetzsche, D. A., Buckley, R. P., Arner, D. W., & Barberis, J. (2017). Regulating a revolution: From regulatory sandboxes to smart regulation. *Fordham Journal of Corporate & Financial Law, 23*(1), 31–103.

Table2: Comparative Evaluation of Regulatory Sandboxes in India

Dimension	RBI Sandbox	SEBI Sandbox	IRDAI Sandbox	IFSCA Sandbox
Year of Introduction	2019	2020	2021	2021
Primary Regulatory Objective	Financial stability and consumer protection	Market efficiency and investor protection	Insurance inclusion and product innovation	Global competitiveness and innovation leadership
Sectoral Scope	Banking, payments, lending, RegTech	Capital markets and intermediaries	Insurance products and distribution	Cross-sector (banking, capital markets, insurance, fintech)
Regulatory Flexibility	Moderate	High	Moderate	High
Entry Criteria	Stringent	Relatively flexible	Moderate	Flexible
Innovation Focus	Controlled experimentation	Operational efficiency and digital processes	Incremental product and service innovation	Scalable and globally competitive innovations
Regulatory Engagement	High supervisory oversight	High engagement during testing	Moderate engagement	High and continuous engagement
Post-Sandbox Transition Clarity	Limited	Limited	Limited	Clearly defined
Innovation Facilitation Intensity	Moderate	Moderate	Low to moderate	High
Role in FinTech Ecosystem	Regulatory learning mechanism	Incremental innovation enabler	Inclusion-oriented innovation support	Strategic innovation and commercialization platform

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Primary Health Care in India's Welfare State : A Legal and Human Rights Perspective

Priyansha Singh Dixit*

***Research Scholar, Department of Legal Studies and Research, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract: Human Rights and good health are inextricably intertwined. The fact that health is being discussed in the context of human rights and is mentioned in so many human rights instruments suggests that health is a social benefit rather than just a medical, technological, or financial issue. The UDHR and the ICESCR both acknowledge that the state is responsible for the population's health as a fundamental human right because it is crucial to one's dignity. Primary health care (PHC) forms the foundation of an effective and equitable health system. In a welfare state's context, providing Primary health care transcends legal and policy mandates and becomes a moral obligation. This paper explores the legal and ethical responsibility of India as a welfare state in guaranteeing comprehensive primary health care services to all the residents and in upholding the principles of social justice, equity, and human dignity. By analysing the legislative and policy frameworks and global health standards, the paper argues that a welfare state failing to prioritise primary health care undermines its foundational promise of societal well-being. The paper also discusses the relationship between the principles of human rights and the implementation of primary health care within India's welfare framework and identifies the challenges that impede the realisation of universal primary health care.
Keywords: Human Rights, Primary Health Care, Right to Health, United Nations, Welfare State.

Introduction - Human rights are the basic rights and freedoms that belong to everyone, from birth until death. They can never be taken away, although they can sometimes be restricted. These basic rights are based on shared values like equality, fairness, dignity, respect and independence, which are defined and protected by law (1). The idea of natural rights first appeared in the seventeenth and eighteenth centuries. After World War II (1938–1945), the idea of human rights as we know it today began to take shape. The newly established United Nations (UN), outraged by the atrocities of war and the Holocaust, set forth new regulations for the protection and promotion of human rights universally. Members of the United Nations adopted the Universal Declaration of Human Rights (UDHR) in 1948. The International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR) and the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights (ICESCR) were two significant human rights treaties adopted in 1966. Both of these treaties entered into force in 1976. Karel Vasak, a distinguished human rights scholar, introduced the idea of **three generations of human rights**. The first generation of human rights is *civil and political rights*. The second generation of human rights includes *economic, social, and cultural rights*, and the third generation of human rights includes *solidarity rights*(2). The first generation's rights include the right to liberty, the right to life, freedom of speech and expression, etc. The second-generation rights include the right to education, right to social security, right to health care, etc. Part III of the Indian Constitution, 1950, i.e. Fundamental Rights, includes several of the civil and political rights outlined in the 1966 ICCPR, which has been ratified and signed by India. ICESCR, which primarily focuses on food, health, education, and housing rights, was also signed and ratified by India. Part IV, Directive Principles of State Policies (DPSPs) of the Indian Constitution contains most of this covenant's clauses. The State is required under the DPSPs to operate in a way that promotes economic democracy and the establishment of a welfare State. The framers of the Indian Constitution understood that it was the duty of the State to advance the health of everyone in general and of society's most vulnerable groups in particular. Article 21 of the Constitution provides that "No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law"; this right would be meaningless if a person is not healthy and is suffering from diseases. In a sense, being ill prevents you from fully exercising your right to life and liberty. Furthermore, it demonstrates the State's incompetence in providing for public health, which is an essential function of a welfare state, when malnutrition, poverty, squalor, an unclean environment, or a lack of medical care brings on such ill health, sickness, or aggravation of diseases. While the right

to health care focuses on receiving medical attention or having access to health services, the right to health, seen in a larger context, includes any socio-economic, environmental, and legal concerns that have any bearing on health. Further, according to Section 2(d) of the Protection of Human Rights Act, 1993 of India, "Human Rights" includes the rights embodied in the International Covenants and enforceable by courts in India. Promoting human rights and health is inherently and intimately linked to each other. Health is essential to one's dignity, and both UDHR and the ICESCR recognise that the State is responsible for the population's health as a fundamental human right. Access to quality health care for all is also one of the prerequisites for long-term, equitable economic growth. The WHO constitution states: "Health is a state of complete physical, mental and social well-being and not merely the absence of disease or infirmity" (3). The Alma-Ata Declaration, 1978, stated that 'Governments have a responsibility for the health of their people, which can be fulfilled only by the provision of adequate health and social measures. The people have the right and duty to participate individually and collectively in planning and implementing their health care' (4). Thus, the right to health has to be understood in the context of a right to health care and healthy conditions.

Review of literature: S. P. Ranga Rao (5) has discussed the health policy and planning in India, concept of rural development, participation and administrative organisation for rural health. The author has also dealt with the establishment and management of PHC and functions of primary health centers and has further indicated that the availability of health and medical services in rural and urban areas is drastically different, with urban residents having access to more affordable medical facilities. S. L. Goel, in his book (6), has discussed the meaning and significance of health, factors influencing health, nature and scope of health care administration, need, meaning and scope of PHC and general principles of primary health care development. Trisha Greenhalgh (7) has given an explicitly multi-professional perspective on PHC and the meaning and concept of primary health care. It is further discussed that if health systems acknowledge the value of excellent primary care, they can operate efficiently. Atula Gaur (8) has examined the application of human rights norms in India and the Constitutional provisions and judicial rulings that align international law with domestic law. In his article, Chandrakant Lahariya (9) has discussed the evolution of the Public Health care Facilities (PHCFs) system in India since the independence, the PHCFs in India are egregiously underutilised; in 2013–14, only 11.5% of rural and 3.9% of urban people in need of health services utilised this extensive network, excluding mother and child health services.Harshal Tukaram Pandve and Tukaram K. Pandve (10) have discussed how the delivery of health services still depends heavily on PHC, which is an essential strategy. PHC is the routine care required to safeguard, preserve, or restore our health.The Bhore Committee's report from 1946 established the notion of PHC in India. The Nation's infrastructure, PHC services, and associated health care indices have significantly improved over the past six decades of independence. However, there are still many obstacles to achieving universal health. While the existing literature extensively covers the evolution, structure, and significance of PHC in India, there is limited focus on evaluating the implementation of existing policies, especially in bridging the rural-urban health care divide. Most studies address theoretical frameworks and historical progress but lack the integration of human rights perspectives. Furthermore, the impact of recent health care reforms and community participation in strengthening PHC remains underexplored.

Research objective:

1) To evaluate the right to health as a basic human right by analysing international human rights instruments.
2) To understand the meaning, concept and significance of primary health care.
3) To examine the nature of obligation imposed on the state regarding right to health and to evaluate the role of state in the realisation of right to health.

Methodology: The study adopts a doctrinal method by analysing the legal framework, statutory material, government reports, policy documents, international treaties and decided case laws of the Supreme Court, High Courts and quasi-judicial bodies. Secondary sources related to the present topic, such as books, legal encyclopaedia, dictionaries, etc., were also utilised. Further, articles and research papers written in periodicals and scholarly Indian law journals as well as international journals, newspaper articles and the Internet were used, and a comparative analysis of national and international standards was employed.

Meaning and Concept of Primary Health Care: Health care involves diagnosing, preventing, treating, and managing illness and preserving mental and physical health through the services offered by the medical, nursing, and allied health professions. The three-tiered structure of the human health care system is typically broken down into three categories. First, *Primary Health Care* - When a person or family first contacts the health care system, PMC is what they receive. The medical officer and other health care professionals provide this care at the primary health center and subcenter through their expertise. Second, *Secondary Health Care* - The level of medical care is intermediate. Specialist facilities are offered under secondary health care to address complex medical issues referred from PHC. Early detection and precise medication are part of secondary care, along with District hospitals and community health centers. Health experts such as medical specialists, dental specialists, etc., who typically do not have first contact with patients, supply the health care services

under secondary health care. Third, *Tertiary Level Health Care* - The third and highest tier level is where curative procedures can be carried out in addition to super-specialities in several medical sectors. Specialised expert advice and recommendations are given in tertiary health care. Typically, it is for hospital patients receiving treatment and referred by a primary or secondary health care professional. Health care at the tertiary level provides institutions with people, resources, and equipment for performing cutting-edge medical research and treatment.PHC is a whole-of-society approach to health that aims to ensure the highest possible health and well-being and equitable distribution by focusing on people's needs. PHC includes health promotion, disease prevention, treatment, rehabilitation, and palliative care. (11). It gives people the knowledge and tools they need for the best possible health outcomes and offers comprehensive care for health requirements across the lifespan, not only for a collection of particular disorders. PHC ensures patients receive complete care that is as close to their daily environments as is practical. It is a pathway to achieving basic human rights, essentially social justice(12) and opens up access to universal health care to all people and families living in a community. PHC programmes enable complete community involvement in implementation and decision-making. Those in primary care often treat a wide variety of patients and have an in-depth understanding of the numerous physical, psychological, and social conditions that may affect their patients. PHC typically covers about 80 per cent of a person's health needs during their lifetime (13). The Declaration of Alma-Ata in 1978 was a landmark in the history of global health, which made a commitment to PHC in pursuit of health and well-being for all, leaving no one behind. PHC includes three interrelated components: integrated comprehensive health care, policies, and initiatives to address the more extensive and upstream determinants of health, engaging and empowering people for better self-care and self-reliance in health, and increased social involvement.The COVID-19 pandemic highlighted the shortcomings of many developed and developing Nations' primary health care systems and their readiness, including India.

India as a Welfare State - A welfare state is a concept of government in which the State or a well-established network of social institutions plays a key role in protecting and promoting citizens' economic and social well-being. It is based on the principles of equality of opportunity, equitable distribution of wealth, and public responsibility for those unable to avail themselves of the minimal provisions for a good life. The general term may cover a variety of forms of economic and social organisation. (14) The benefits to the person and the community are tied to the welfare state. It is shaped and raised by societal requirements. The welfare state often provides public housing, health care, and basic education (sometimes for free or at a reduced cost). Thus, a welfare state is a modern idea of government with unique duties to enhance citizens' socio-economic circumstances and offer safeguards for their growth. India sought to establish a welfare state by adopting DPSPs in Part IV of the Constitution. India's central and State governments should consider the DPSPs when drafting laws and policies. The principles outlined in Part IV of the Indian Constitution are not enforceable by any court but are regarded as fundamental to the Nation's governance. The right to health has arguably presented the court with the easiest case to justify, albeit not necessarily to enforce.

Providing Primary Health Care Services - A Welfare State Function - Social welfare policies in India are intended to address the issues of resource scarcity and contingency. The welfare state ideology of government prioritises preserving and enhancing its residents' social and economic well-being. PHC is the moral responsibility of a welfare state because the citizens must have a basic health infrastructure to exercise their right to livelihood, as stated in the UDHR. Article 47 of the DPSPs establishes the State's obligation to advance public health. However, the court has consistently affirmed that the right to health is integral to the right to life and personal liberty guaranteed under Article 21. The State is responsible for evaluating our health care needs and assuring access to services as a regulator, protector, and promoter of our health. Furthermore, Articles 39, 41, 42, and 43 of Part IV of the Indian Constitution guarantee the right to health care. Several other legislations revolve around the right to health, including the Drugs and Cosmetics Act, 1940; Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023; and Mental Healthcare Act, 2017. By judicially established and demonstrated analogy, rights under Part IV may be exercised in accordance with Article 21. At the same time, the directive principles may be enforced without restriction under Article 37 of the Constitution. The welfare state has a moral and legal obligation to ensure that its citizens have access to a healthy environment, medical facilities, preventive and curative methods of disease treatment, affordable access to necessary medications, the prevention of unused medications, and the establishment of primary health center's with the necessary supplies, medications, and doctors with specialised training. The Supreme Court of India has also instructed the government to create a PHC blueprint focusing on treating patients in an emergency in the case of Paschim Banga Khet Majoor Samity v. State of West Bengal (1996) 4 SCC 37.To direct upcoming health initiatives, the Indian government releases the National Health Policy (NHP) regularly.The Government of India has released three NHPs - NHP (1983), NHP (2002), and NHP (2017). The first NHP in 1983 had access to primary care for everyone in India as its goal by 2000.A national health policy with the goal of "health for all" by the year 2000 has also been adopted by the Indian government, but it failed to achieve the goals laid down. The National Rural Health

Mission and the National Urban Health Mission were merged into the National Health Mission (NHM) by the Indian government in 2005. Ayushman Bharat Programme (ABP) was also unveiled in February 2018 to realise the goal of universal health coverage. It is divided into two parts: Health and Wellness Centers (HWCs), which will offer comprehensive PHC services to the entire population, and Pradhan Mantri Jan Arogya Yojana (PMJAY), which will make hospitalisation services at secondary and tertiary level health facilities more accessible to the bottom 40% of the population. (15). The National Health Policy of 2017 called for dedicating two-thirds of the health budget to PHC and proposed the construction of "Health and Wellness Centers" as the platform to deliver comprehensive PHC. The Report of the Primary Health Care Task Force, Ministry of Health and Family Welfare, Government of India, while reiterating that PHC is the only affordable and effective path for India to Universal Health Coverage, also provided valuable insights into the structure and processes in health systems to enable Comprehensive PHC. Primary Health Centers (PHCs) and their subsidiary jurisdictional Sub-Centers (SCs) provide PHC in India. Unfortunately, the public's perception of PHCs is frequently unimpressive and reminiscent of intermittently available, less reliable health care provided primarily by a health workforce that is overworked, less process-oriented, and ineffectively monitored. These programs are primarily restricted to focused maternal and child health initiatives, among other vertical disease-control programs (16).Evidence points that among all health workers, 66.91% were serving in urban areas where 33.48% of the population is based, and 33.09% were serving in rural areas where 66.52% of the population resides.Most vacancies of doctors and health professionals exist in remote, tribal, and other similarly underserved areas of India, and existing mechanisms do not seem to address these gaps (16). Every PHC should contain at least four to six beds with designated wards for males and females to provide adequate medical care, according to the Indian Public Health Standards (IPHS). A defined minimum infrastructure must also be accessible at these centers; however, most PHCs do not strictly follow these standards. The Rural Health Statistics 2019–20 reported that as of March 2020, only 3.4% of the 1.55 lakh Sub Centers were functioning as per Indian Public Health Standards (IPHS). A lowly 13% (3278) of the 24,918 PHCs, and 8.4% of CHCs adhered to basic standards. More than 37% of the health assistant positions, 19% of pharmacist positions, 34% of laboratory staff and 21% of nurse positions are vacant (16). As of March 31, 2023, the country has a total of 1,69,615 Sub-Centers (SCs), 31,882 Primary Health Centers (PHCs), 6,359 Community Health Centers (CHCs), 1,340 Sub-Divisional/District Hospitals (SDHs), 714 District Hospitals (DHs), and 362 Medical Colleges (MCs) serving both rural and urban areas.(17).

Conclusion: There is an international consensus that a better PHC system is the only way to attain universal health coverage and address the inequities in public health. The sustainable development goal of "Ensuring Healthy Lives and Promoting Well-being for All" cannot be achieved without an efficient primary health care system, as the 2018 Astana Declaration acknowledges. India's health status has made significant progress post-independence, yet it lacks efficiency compared to global standards. Although there is broad agreement on the guiding concepts of PHC, implementing the welfare policies is fraught with political, planning and administrative challenges. Effective planning and allocating cash, insurance, and budget can aid in improving medical facilities, as the rising costs of health care, mounting bills, and unaffordable medical facilities have reduced benefits that reach the disadvantaged. The delivery of Universal Comprehensive Primary Health Care, through HWCs can help increase the health system's responsiveness to people by bringing services closer to the communities and addressing the needs of the most marginalised, through the Primary Health Care team. Medical experts should be encouraged to practice in rural areas, and the government should be more proactive in opening hospitals and pharmacies. The government should also promote the understanding of welfare policies and maintain ongoing oversight of their implementation. The health system can produce the highest standard of health through carefully planned, well-executed, and high-quality services.

References:-

1. What are human rights? | EHRC [Internet]. [cited 2025 Dec 10]. Available from: https://www.equalityhuman rights.com/human-rights/what-are-human-rights
2. Drishti IAS [Internet]. [cited 2025 Dec 10]. Evolution of Human Rights. Available from: https://www.drishti ias.com/blog/evolution%20of%20 human%20rights
3. Health and Well-Being [Internet]. [cited 2025 Dec 11]. Available from: https://www.who.int/data/gho/data/ major-themes/health-and-well-being
4. Rifkin SB. Alma Ata after 40 years: Primary Health Care and Health for All—from consensus to complexity. BMJ Glob Health [Internet]. 2018 Dec 20 [cited 2025 Dec 11];3(Suppl 3). Available from: https://gh.bmj.com/ content/3/Suppl_3/e001188
5. S. P. RR. Administration of Primary Health Centres in India: A Study from the Three Southern States. First Edition. Mittal Publications; 1993.
6. Goel SL. Health Care System and Management: Primary Health Care Management. Deep & Deep Publications; 2001.
7. Greenhalgh T. Primary Health Care: Theory and Practice. 1st edition. BMJ Books; 2007.
8. Gaur A. Protection and Implementation of International Human Rights in Domestic Law. Serials Publications; 2010.

9. Lahariya C. Health & Wellness Centers to Strengthen Primary Health Care in India: Concept, Progress and Ways Forward. Indian J Pediatr [Internet]. 2020 Nov [cited 2025 Dec 20];87(11):916–29. Available from: https://link.springer.com/10.1007/s12098-020-03359-z
10. Pandve H, Pandve T. Primary healthcare system in India: Evolution and challenges. Int J Health Syst Disaster Manage [Internet]. 2013 [cited 2025 Dec 21];1(3):125. Available from: http://www.ijhsdm.org/text.asp?2013/1/3/125/129126
11. Primary Health Care - PAHO/WHO | Pan American Health Organization [Internet]. [cited 2025 Dec 22]. Available from: https://www.paho.org/en/topics/primary-health-care
12. Themes UFO. Primary health care [Internet]. Nurse Key. 2017 [cited 2025 Dec 22]. Available from: https://nursekey.com/primary-health-care/
13. What is "PHC" and why is everyone talking about it? [Internet]. [cited 2025 Dec 23]. Available from: https://www.path.org/our-impact/articles/what-is-primary-health-care/
14. Welfare state | Benefits, History & Impact | Britannica Money [Internet]. [cited 2025 Dec 24]. Available from: https://www.britannica.com/money/welfare-state
15. Kaur H, Rathi SK. National Health Policies in Practice: An Explorative Analysis for India. Journal of Health Management [Internet]. 2019 Sept [cited 2025 Dec 24];21(3):372–82. Available from: https://journals.sagepub.com/doi/10.1177/09720634198 68554
16. Ugargol AP, Mukherji A, Tiwari R. In search of a fix to the primary health care chasm in India: can institutionalizing a public health cadre and inducting family physicians be the answer? The Lancet Regional Health - Southeast Asia [Internet]. 2023 June [cited 2025 Dec 23];13:100197. Available from: https://linkinghub.elsevier.com/retrieve/pii/S2772368223000574
17. Health Ministry Releases "Health Dynamics of India (Infrastructure and Human Resources) 2022-23" [Internet]. [cited 2025 Dec 28]. Available from: https://pib.gov.in/pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=2053070

****

Assessing the Impact of the Three-Tier Panchayati Raj System on Rural Development in Indore: A District-Level Analysis

Aadarsh Singh Dawar*   Dr. P. Gautam   Dr. Pritibala Bhargava*****

***Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA**
**** Ex- Professor (Commerce) Maharani Laxmibai Arts and Commerce College, Gwalior (M.P.) INDIA**
***** Govt. Mata Jija Bai Girls PG College, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract: The three-tier Panchayati Raj System's effects on rural development in Madhya Pradesh's Indore district are evaluated in this study. The study looks at how Panchayat Samitis, Zila Panchayat, and Gram Panchayats operate within the framework of the 73rd Constitutional Amendment, with a particular emphasis on how they plan, carry out, and oversee rural development projects. The study assesses financial management techniques, administrative effectiveness, and local stakeholder participation in governance procedures using district-level analysis. Limited financial autonomy, capacity gaps among elected representatives, and procedural delays impacting plan execution are among the major issues identified by the report. Despite these limitations, the results show that the three-tier Panchayati Raj System has improved community involvement, social welfare delivery, and infrastructure development in Indore's rural districts. The study comes to the conclusion that Panchayati Raj Institutions can be made even more effective in attaining sustainable rural development at the district level by bolstering institutional capacity, improving fiscal decentralization, and encouraging digital governance systems.
Keywords: Three-Tier Panchayati Raj System's, Rural Development Governance Systems.

Introduction - India has long been known as a country of villages, with rural areas serving as the backbone of the country's as well as worlds's social, cultural, and economic life. The nation's people still lives in rural areas, which have a major impact on employment creation, agricultural output, and national income. Consequently, the development of villages is intrinsically linked to the overall progress of the nation. Rural development encompasses a comprehensive process aimed at enhancing the quality of life and socio-economic well-being of rural populations through improvements in income levels, employment opportunities, infrastructure, education, healthcare, and social

security mechanisms. The Ministry of Rural Development plays a key role in creating and carrying out development initiatives in India, where rural development is pursued through a variety of institutional and regulatory frameworks. The Panchayati Raj System operationalizes democratic decentralization, one of the most important institutional instruments for advancing rural development. Gram Panchayats, Panchayat Samitis and Zila Panchayats, these organizations were intended to be self- governing entities that would guarantee local planning, grassroots involvement, and successful execution of rural development initiatives. By converting development initiatives into locally applicable results, Panchayati Raj Institutions are essential in bridging the gap between rural populations and government policies. They improve local leadership, encourage accountability, and make it easier for individuals to participate in decision-making. PRIs support social welfare delivery, infrastructure development, poverty alleviation, and inclusive growth in rural areas through decentralized planning and financial administration.

Literature Review

The direct empowerment of the people, who are also the employers of the latter, usually wage laborers, threatens to undermine the newly acquired standing of elected officials. This was not the result of a widespread public uprising. This necessitates careful consideration of the reasons behind the perpetuation of power dynamics and the persistent disruption of any efforts to advance the development and empowerment of the impoverished (Ananth, 2014). The function of Panchayati Raj Institutions in the execution of rural development programs has been shown to be minor because the entire scene is controlled by authorities that are typically regional rural development offices at the regional levels. Additionally, he finds that bureaucracy exercises significant power over the suspension of Panchayati Raj leaders at all levels (Khera,

2016). Panchayati Raj Institutions in encouraging people to participate in rural development initiatives. PRIs are currently a part of the Constitutional framework. The State Government will no longer be able to operate these institutions freely; instead, they should be managed according to approved guidelines. He discovers that more people participated in Panchayati Raj bodies, particularly those who belonged to the Scheduled Castes, Scheduled Tribes, and women (Jain, 2017).

The expansion of community development programs from a broad perspective and highlights their importance to the rural economy and fair Panchayati Raj institutions. The scientist emphasizes the importance of providing position-specific education (Sammiuddin, 2015). Increasing agriculture and rural institutionalization of uniformity are, in essence, the three main goals of rural development. Lack of concern for local bureaucracy and Panchayati Raj agents prevents rural development projects from achieving their goals. The author also concludes that additional adjustments to local level bureaucracy and PRIs are necessary to quicken the rate of development in rural areas (Mishra, 2016). The success of decentralized planning is mostly dependent on the execution of many initiatives that call for people's involvement at every level. There is certain discretion in local level planning, which allows people to participate in specifying and execution measures to a reasonable degree. Because local level participants have firsthand knowledge of local conditions, their engagement ensures better implementation at all levels (Avasthi, 2015).

Three-Tier Structure of Panchayati Raj: The three-tiered rural self-government structure is as follows:

Gram Panchayat: Local governments at the village and small town levels are called gram panchayats. In actuality, the Indian Panchayati system is based on the Gram Panchayat. A village with 300 or more residents is formed into a Gram Panchayat, or two or more villages are combined. A Gram Panchayat is led by a sarpanch.

Roles: One of the Gram Panchayat's responsibilities is to deliver enough water. Upkeep of village roadways.

Setting up the lights on the village roadways. Sanitation, hygiene, and public health.

The growth of agricultural endeavors, etc.

Samiti Panchayat: Each district is divided into several blocks, each of which consists of a few nearby communities. The Block Development Officer (BOD) will act as the ex-officio Executive Officer of one Panchayat Samiti for each block.

Zilla Parishad: A district's rural areas are administered by the Zilla Parishad. The district headquarters is home to the Zilla Parishad officer. This governing body's primary duties are to start creating programs in the village and to provide essential facilities to rural residents.

Impact Assessment of PRIs: Thirty years after the 73rd Amendment was passed, PRIs have shown a great deal of impact on changing rural governance while also highlighting regions that still need a lot of work. PRIs have made significant progress in creating a workable framework for local self-governance in terms of democratic decentralization. Regular panchayat elections have produced a new generation of grassroots leaders, with reserved constituencies especially helping underprivileged groups. A major democratization of rural administration institutions may be seen in the rise of more than a million elected representatives. Although the rate of change differs by location, this political inclusion has steadily changed the balance of power in rural communities. The infrastructure of schools, drinking water facilities, and rural road links have all significantly improved. PRIs' participation in MGNREGA implementation has produced substantial job opportunities and long-lasting communal assets. Many rural families now enjoy better living conditions because to their involvement in the implementation of housing programs. However, there are still issues with the sustainability of interventions and the caliber of assets produced. Different levels of PRI efficacy are reflected in social development indices. Societal constraints still affect the quality of involvement. Despite certain targeting inefficiencies, the implementation of social welfare programs has been successful in providing benefits to marginalized groups. PRIs have established systems for managing significant public monies, but their own revenue production is still inadequate. In many panchayats, the adoption of financial management systems has increased accountability and transparency. However, their autonomy and long-term viability are still impacted by their significant reliance on outside finance.

Although it needs ongoing attention, institutional capacity development shows steady improvement. In certain sectors, the use of technology in governance has enhanced transparency and record-keeping. However, there are notable regional differences in institutional capacity, which have an impact on the system's overall efficacy. A move toward more participatory methods is evident in the assessment of PRIs' involvement in local planning and development. Despite these drawbacks, Gram Sabhas have become venues for community involvement in development planning. Although the quality of involvement and planning varies greatly between regions, the inclusion of local requirements in development initiatives has improved. Although not yet fully implemented, the bottom-up planning approach has begun to provide favorable outcomes in numerous domains. Strengthening Panchayati Raj Institutions necessitates a thorough strategy that addresses many facets of their operation. Their efficacy as tools for rural development and local governance can be increased through the methodical application of complementary policies and reforms. PRIs' financial empowerment requires quick attention through a variety of actions. Expanding the tax base and increasing collection efficiency should be the top priorities for increasing their potential to generate revenue. State governments should

streamline resource use processes while guaranteeing prompt and sufficient fund transfers. Better financial management may be encouraged by the implementation of performance-based funding schemes. Additionally, PRIs must to be given more financial freedom to design and carry out development initiatives.

Research Gap: In light of this, the current study aims to evaluate how the three-tier Panchayati Raj System affects rural development in Madhya Pradesh's Indore district. The study attempts to assess PRIs' contribution to rural transformation at the district level by looking at their operation, administrative effectiveness, and developmental results at various levels. The research also identifies key challenges affecting the performance of PRIs in Indore and explores opportunities for strengthening sustainable rural development.

Significance of the Study: Madhya Pradesh has been a pioneer in the implementation of the Panchayati Raj System. Even though Indore's rural areas are economically advanced, they still struggle with issues like unequal access to infrastructure, unstable livelihoods, a lack of public services, and limitations relating to governance. Panchayati Raj Institutions play a crucial role in addressing concerns related to grassroots development. The study looks at how well these organizations carry out state-sponsored and core initiatives pertaining to social welfare, health, education, infrastructure development, and job creation. Additionally, it evaluates PRIs' administrative and financial ability to meet local development requirements. This study is especially significant since it offers district-level insights into how Panchayati Raj Institutions operate, exposing real-world issues like budgetary limitations, a lack of coordination, and low community involvement. Policymakers, administrators, elected officials, and researchers will find the research's conclusions helpful in comprehending the advantages and disadvantages of Indore's Panchayati Raj System. Additionally, by providing empirical data that might bolster policy changes intended to fortify PRIs and promote sustainable rural development, the study adds to the body of knowledge already available on decentralized governance.

Objectives of the Study: The objective of the study was to examine people's participation and gender involvement in Panchayati Raj Institutions.

Hypotheses of the Study:

H_1 • : There is no significant relationship between people's participation, gender involvement and the functioning of Panchayati Raj Institutions in Indore district.

H_2: There are no significant challenges affecting the effectiveness of Panchayati Raj Institutions, and proposed measures do not significantly improve their performance.

Data and Methodology: A descriptive and exploratory research design has been adopted to assess the impact of the three-tier Panchayati Raj System on rural development in Indore district with integration of both quantitative and qualitative approaches. The study uses both primary and secondary data. Primary data were collected directly from beneficiaries of rural development programmes, elected Panchayat representatives, and local residents to understand their perceptions regarding service delivery, participation and governance. Secondary data were obtained from official records of Gram Panchayats, Panchayat Samitis, Zila Panchayat Indore, District Rural Development Agency (DRDA), government reports, census data, and relevant published research. Purposive sampling technique was employed to select respondents who are directly associated with or beneficiaries of Panchayati Raj led development programmes. A total of 200 respondents from selected rural areas of Indore district were surveyed to assess the socio-economic impact of various development schemes. Primary data were collected using a structured interview schedule containing questions related to social, economic, political, educational, and governance aspects of rural development.

Quantitative data were analyzed using simple statistical tools such as percentages, averages, and tables to identify trends and patterns. Qualitative data obtained through interviews and observations were analyzed thematically to interpret stakeholder experiences, participation levels, and institutional challenges. The study adhered to ethical research practices by obtaining informed consent from respondents and ensuring confidentiality and anonymity of the data collected. Participation was voluntary, and respondents were free to withdraw at any stage. The study is limited by factors such as time constraints, reliance on self-reported data, and the focus on selected rural areas of Indore district, which may affect the generalizability of the findings.

Data Analysis and Interpretation

Table-1. Do elected representatives work for development of your locality?

Response Category	**No. of Respondents**	**Percentage (%)**
Yes	118	59
No	82	41
Total	**200**	**100%**

Source: Primary Survey)

Interpretation: With regard to the above query, 59 per cent of the total respondents stated that elected representatives work for the development of their locality, whereas 41 per cent of the respondents were of the opinion that elected representatives do not work effectively for the development of their locality. This indicates that a majority of respondents perceive a positive role of elected representatives in local development, though a significant proportion still expresses dissatisfaction.

Table-2. Has the Three-Tier Panchayati Raj System improved rural infrastructure in your village?

Response Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Yes	92	46
No	28	14
To some extent	80	40
Total	**200**	**100%**

Interpretation: With regard to the above query, 46 per cent of the total respondents reported that the Three-Tier Panchayati Raj System has improved rural infrastructure in their village, while 40 per cent felt that infrastructure improvement has occurred only to some extent. On the other hand, 14 per cent of the respondents expressed the view that theThree-Tier Panchayati Raj System has not led to any improvement in rural infrastructure. This suggests a moderate overall impact, with a majority acknowledging at least partial improvement in rural infrastructure.

Table-3. Which tier of the Panchayati Raj System is most active in rural development activities in your area?

Response Category	No. of Respo -ndents	Percentage (%)
Gram Panchayat	88	44
Janpad Panchayat	60	30
Zila Panchayat	34	17
All are equally active	18	9
Total	**200**	**100%**

(Source: Primary Survey)

Interpretation: With regard to the above query, 44 per cent of the respondents identified the Gram Panchayat as the most active tier in rural development activities in their area, followed by 30 per cent who perceived the Janpad Panchayat as most active. Further, 17 per cent of the respondents reported that the Zila Panchayat plays the most active role, while only 9 per cent were of the view that all three tiers are equally active in rural development. This indicates that rural development efforts are perceived to be primarily driven by the Gram Panchayat at the grassroots level.

Table-4. Has the Panchayati Raj System helped in generating employment or livelihood opportunities in your village?

Response Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Yes	158	79
No	32	16
Not sure	10	5
Total	**200**	**100%**

(Source: Primary Survey)

Interpretation: With regard to the above query, 79 per cent of the total respondents stated that the Panchayati Raj System has helped in generating employment or livelihood opportunities in their village, whereas 16 per cent of the respondents felt that it has not contributed to employment generation. A small proportion, 5 per cent, were not sure about its impact. This clearly indicates a strong positive perception among respondents regarding the role of the Panchayati Raj System in enhancing employment and livelihood opportunities at the village level.

Table-5. Do villagers actively participate in gram sabha meetings?

Response Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Regularly	90	45
Occasionally	75	37.5
Rarely	30	15
Never	5	2.5
Total	**200**	**100%**

(Source: Primary Survey)

Interpretation: With regard to the above query, 45 per cent of the respondents reported that villagers regularly participate in Gram Sabha meetings, while 37.5 per cent indicated that participation occurs occasionally. Further, 15 per cent of the respondents stated that villagers rarely participate, and a very small proportion, 2.5 per cent, reported that villagers never participate in Gram Sabha meetings. This suggests that although a majority of villagers participate at least occasionally, consistent and regular participation remains limited.

Table-6. How would you rate the overall contribution of Panchayati Raj institutions to rural development in your village?

Response Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Very good	86	43
Good	55	27.5
Average	50	25
Poor	9	4.5
Total	**200**	**100%**

(Source: Primary Survey)

Interpretation: With regard to the above query, 43 per cent of the respondents rated the overall contribution of Panchayati Raj Institutions to rural development as very good, while 27.5 per cent assessed it as good. Further, 25 per cent of the respondents perceived the contribution to be average, and only 4.5 per cent rated it as poor. This indicates that a substantial majority of respondents hold a favourable opinion regarding the role of Panchayati Raj Institutions in promoting rural development in their villages.

Research Findings: The study reveals that various rural development programmes and schemes implemented through the three-tier Panchayati Raj System have had a noticeable impact on rural development in Indore district. However, the extent of impact has not been uniform across all villages, reflecting variations in administrative efficiency, local leadership, and availability of resources. The majority of respondents reported moderate to high levels of satisfaction with the functioning of Panchayati Raj Institutions, particularly in relation to the delivery of development schemes and improvement in livelihood conditions. The findings indicate that employment- oriented

programmes, especially MGNREGA, have played a significant role in generating wage employment and providing income support to rural households in Indore district. Most respondents acknowledged that these programmes contributed to increased income stability and reduced seasonal unemployment. As a result, there has been a marginal but positive improvement in the overall economic condition of rural beneficiaries.

The study further shows that rural development programmes implemented through Panchayati Raj Institutions have contributed to improvements in basic infrastructure in the study area. Facilities such as drinking water supply, sanitation, rural roads, street lighting, school infrastructure, and access to primary health services have improved in several villages. Respondents also perceived better access to government welfare schemes and social services due to the active involvement of Gram Panchayats. The findings validate that Panchayati Raj Institutions in Indore district play a decisive role in facilitating rural development by linking government policies with local needs. Despite variations in outcomes, the three-tier Panchayati Raj System has emerged as an effective mechanism for promoting employment, infrastructure development, and socio-economic upliftment of rural communities at the district level.

Conclusion: The present study highlights the significant role of facilitating decentralized planning, improving service delivery, and encouraging community participation at the grassroots level. Through the involvement of Gram Panchayats, Panchayat Samitis, and the Zila Panchayat, development initiatives related to infrastructure, social welfare, and livelihood generation have reached rural households more effectively. The study also underscores the importance of democratic decentralization in strengthening local self-governance. Constitutional provisions under the 73rd Amendment Act have enhanced people's participation in planning, decision-making, and monitoring processes, thereby making rural governance more inclusive and representative. The reservation of seats for women, Scheduled Castes, and Scheduled Tribes has further promoted social justice and empowered marginalized sections within the Panchayati Raj framework in Indore district.

However, despite these positive contributions, the effectiveness of PRIs continues to be constrained by issues such as limited financial autonomy, administrative inefficiencies, and capacity gaps among elected representatives. Inadequate devolution of functions, functionaries, and funds remains a key challenge affecting the optimal performance of PRIs. Addressing these constraints through enhanced fiscal support, capacity-building initiatives, and the adoption of digital governance mechanisms is essential for strengthening local institutions. The study concludes that the three-tier Panchayati Raj System holds considerable potential for accelerating rural development in Indore district. With sustained policy support, effective decentralization, and active community participation, Panchayati Raj Institutions can play a transformative role in achieving inclusive and sustainable rural development at the district level.

References:-

1. Alkesh, W. (2018). The Role of Panchayati Raj Institutions in Rural Development: Measures to Improve Their Functioning. An international Journal of Humanities and Social Science, 5(47956), 21-24.
2. Alok, V. N. (2011). Role of panchayat bodies in rural development since 1959.
3. Das, B. (2019). Role Of Panchayati Raj System In Transforming Rural India. Webology (ISSN: 1735-188X), 18(6).
4. Jain (2017) Indian Social System, New Delhi, Rawat Publications. Alagh, Y.K. (2000). Panchayati Raj and Planning in India: Participatory Institutes and Rural Roads, New Delhi, Asian Institute of Transport Development.
5. Kaur, B. (2019). Panchayati Raj Institutions and Women Empowerment: A case study of gram Panchayats of Malwa region of Punjab. Think India, 22(3), 1600– 1610. https://doi.org/10.26643/think-india.v22i3.8543.
6. Keshava SR, Gupta Richa (2018),'A Study on Rural Development and Participation of Women in Panchayat Raj Institutions' in Empowering Rural India through Decentralization, Edit, 127-138.
7. Keshava, D. S., & Gupta, R. (2018). A study on Rural development and participation of women in Panchayat Raj Institutions.
8. Khan, J. A. (2016). Issues in devolution of functions, functionaries and funds to PRIs: A comparative assessment of Uttar Pradesh, Rajasthan and Kerala. In Democratic Decentralization in India (pp. 50-65). Routledge India.
9. Khera (2016) State and Governent in Ancient India, Delhi, Motilal Banarsi Dass.
10. Kumari, V. (2018) Role of Panchatayi Raj Institutions in Rural Development: A Critical Assessment. Contemporary Social Sciences, 30(2), 99.
11. Landge, K. D. (2018). Performance of Indira Awaas Yojana (IAY) and social exclusion of rural poors: evidence from Maharashtra Districts. Indian Journal of Economics and Development, 6(11), 1-9.
12. Mibang, T., & Modi, K. (2019). Role of Panchayati Raj Institutions in Rural Development: An Analytical Study of Arunachal Pradesh. Asian Review of Social Sciences, 8(2), 42-47.
13. Mishra (2016) Panchayats in Karnataka Two Steps Back', Economic and Political Weekly, Vol. 37, No. 35, Aug, p.3572.
14. Pal, B. (2018). Impact Assessment of Panchayati Raj

Institutions on Rural Development in India. Academic Discourse, 12(1), 26-37.
15. Sammiuddin (2015). Unique Quintessence of Sociology, 447. New Delhi, Unique Publishers.
16. Sharma, Chetan (2019). Panchayati Raj and Rural Development in India. Journal of Emerging Technologies and Innovative Research (JETIR), 6(5), May, ISSN-2349- 5162, www.jetir.org.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Impact of Work-Life Balance Policies on Engagement and Satisfaction in Telecom Companies

Vikas Kumar Tiwari* Dr. Smita Sukhwal**

***Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**
**** Asst. Professor, Government Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Abstract: This systematic review investigates the impact of work-life balance (WLB) policies on employee engagement and job satisfaction within the telecom sector, a high-pressure industry marked by demanding schedules and continuous connectivity. A comprehensive literature search following PRISMA guidelines was conducted across Scopus, Google Scholar, and Consensus databases, resulting in the selection of twelve peer-reviewed empirical studies relevant to WLB outcomes in telecom and similar service sectors. Thematic synthesis revealed five core categories of WLB practices with consistent positive effects, including flexible scheduling, supportive leadership, and formalized leave policies, all shown to reduce burnout and improve morale. The review also highlighted the mediating influence of organizational culture and gender, as well as the challenge of digital overconnectivity. Practical implications emphasize the need for telecom companies to integrate WLB as a strategic priority through flexible work arrangements, inclusive leadership, mental health support, and responsive feedback systems. The study contributes original value by providing a sector-specific synthesis of WLB outcomes, offering both theoretical insights and practical guidance to improve employee wellbeing, engagement, and retention in dynamic, high-demand environments.
Keywords: Work-life balance, employee engagement, job satisfaction, telecom, flexible work, retention, wellbeing.

Introduction - Work-life balance (WLB) refers to the equilibrium between professional responsibilities and personal life activities, ensuring that neither domain overwhelms the other. In modern corporate environments, especially with the rise of remote work and digital connectivity, achieving sustainable WLB has become crucial for employee health and organizational success. According to a study by Al-Khateeb and Al-Louzi, 68% of employees in Jordan's telecom sector reported that inadequate WLB policies directly affected their job engagement and satisfaction levels.(Al-Khateeb & Al-Louzi, 2020) Globally, a 2021 Gallup survey found that employees with good WLB are 21% more likely to be more engaged and 27% less likely to leave their employers.(Sahni, 2019)

Companies that implement flexible working hours, remote work options, and supportive leave policies are better positioned to foster a committed and resilient workforce. Conversely, poor WLB often leads to heightened stress, burnout, absenteeism, and ultimately higher turnover rates — with the telecom sector particularly vulnerable due to its high operational demands and customer-facing roles. In fact, a study on Airtel Nigeria revealed that 55% of dissatisfied employees cited lack of WLB as a primary reason for considering resignation.(Jacob et al., 2024)

As the modern workforce increasingly values holistic well-being alongside career progression, WLB has shifted from being a secondary concern to a strategic business priority. Organizations that ignore these needs risk not only higher attrition rates but also declines in productivity and brand reputation.(Munawar & Suriyanti, 2024)

In the highly competitive and technology-driven telecom sector, employee engagement and satisfaction are fundamental to organizational success. Telecom companies depend on a workforce that is not only technically proficient but also motivated to deliver high-quality customer service in a fast-paced environment. Research by Jaharuddin and Zainol highlights that effective work-life balance initiatives significantly boost engagement levels, reducing turnover intention by 30% among telecom employees.(Jaharuddin & Zainol, 2019) Similarly, Munawar and Suriyanti found that employee satisfaction correlated positively with organizational commitment, where highly satisfied employees were 40% more likely to engage in discretionary behaviours that benefit their firms.(Munawar & Suriyanti, 2024) In an industry where downtime, errors, and service disruptions can severely damage customer loyalty, maintaining a highly engaged and satisfied workforce is crucial for minimizing operational risks and sustaining competitive advantage. Furthermore, Latif and Choudhary underscore the need for personal-professional boundary support, noting that dissatisfaction stemming from poor work-life connectivity significantly hampers professional

women's performance in the telecom industry.(Latif et al., 2016) These findings collectively affirm that in telecom companies, engagement and satisfaction are not just human resource metrics — they are strategic imperatives for market leadership.

Despite the growing recognition of work-life balance (WLB) as a critical factor influencing employee outcomes, there remains a significant gap in understanding how WLB policies specifically impact employee engagement and satisfaction within the telecom sector. Telecom companies face unique challenges such as 24/7 service expectations, technological disruptions, and high customer interaction levels, making the need for effective WLB strategies even more pronounced. While previous research has explored the relationship between WLB and general organizational performance, limited studies have systematically reviewed how these policies translate into tangible improvements in engagement and satisfaction specifically in telecom settings.(Abubaker, 2015) Furthermore, rapid changes in workplace structures—accelerated by digitalization and post-pandemic hybrid models—underscore the urgency to re-evaluate traditional WLB frameworks.(Polnok et al., 2024) A systematic review focusing on this niche is therefore essential to bridge the knowledge gap, provide actionable insights for telecom management, and enhance strategic HR policies aimed at sustaining workforce resilience and organizational competitiveness.

Objectives:

1. To evaluate the effectiveness of work-life balance (WLB) policies in enhancing employee engagement and job satisfaction within the telecom sector.
2. To identify the most influential WLB practices—such as flexible scheduling, remote work, and family leave—that contribute to positive employee outcomes in telecom organizations.
3. To analyze the mediating role of organizational culture and leadership support in shaping the relationship between WLB policies and employee engagement/ satisfaction.

Methodology

Study Design: This systematic review was conducted to evaluate the impact of work-life balance (WLB) policies on employee engagement and job satisfaction in the telecom sector. The review adhered to the Preferred Reporting Items for Systematic Reviews and Meta-Analyses (PRISMA) guidelines to ensure methodological transparency and rigor.

Search Strategy: A comprehensive literature search was conducted using Scopus, Google Scholar, and the Consensus research database. The search strategy combined the following terms using Boolean operators: ("work-life balance" OR "WLB policies" OR "flexible work" OR "family leave") AND ("employee engagement" OR "job satisfaction") AND ("telecom sector" OR "telecommunication companies" OR "telecom employees"). No restrictions were placed on the year of publication, but only studies published in English were included in the review.

Inclusion Criteria:

1. Studies examining the impact of WLB policies on employee engagement and/or job satisfaction.
2. Peer-reviewed empirical studies including quantitative, qualitative, or mixed-method designs.
3. Studies conducted within the telecom industry or service sectors with telecom-relevant outcomes.
4. Articles reporting clear outcome measures related to satisfaction or engagement.

Exclusion Criteria:

1. Review articles, editorials, or opinion pieces without original data.
2. Studies not focused on WLB, engagement, or satisfaction.
3. Non-English language publications.
4. Research focused on non-telecom populations or unrelated sectors.

Study Selection: The selection process followed two sequential stages. In the first stage, titled Title and Abstract Screening, duplicate records and clearly irrelevant articles were removed based on the predefined inclusion criteria. In the second stage, referred to as the Full-Text Review, the remaining studies were thoroughly assessed to determine their eligibility for inclusion. The entire selection and screening process is summarized in the PRISMA flow diagram, which outlines the number of records identified, screened, excluded, and ultimately included in the final synthesis (n = 12).

The study selection process is presented in a PRISMA flow diagram.

PRISMA 2020 flow diagram for new systematic reviews which included searches of databases and registers only

Identification of studies via databases and registers

Records removed *before screening*:

Duplicate records removed (n = 30)

Records marked as ineligible by automation tools (n = 35)

Records removed for other reasons (n = 20)

Records identified from:

Databases (n = 320)

Registers (n = 35)

Identification

Records screened (n = 270)

Records excluded (n = 210)

Reports sought for retrieval (n = 60)

Reports not retrieved (n = 10)

Screening

Reports assessed for eligibility (n = 50)

Reports excluded:

Low Sample Size (n = 20)

Incomplete outcome measures (n = 18)

Studies included in review (n = 12)

Reports of included studies (n = 0)

Included

Data Extraction: Data from the 12 eligible studies were extracted into a standardized data collection sheet, capturing the following components:

1. **Study Characteristics:** Author(s), year of publication, country, study design, and sample size.
2. **WLB Policy Focus:** Specific work-life balance (WLB) interventions studied, such as flexible work hours, remote work, family leave policies, or wellness programs.
3. **Outcome Measures:** Levels of employee engagement and job satisfaction, as assessed through standardized surveys or qualitative interviews.
4. **Key Findings:** Summary of the reported impact of WLB practices on employee outcomes in the telecom sector.

Quality Assessment: The methodological quality of the included studies was assessed using the following tools based on study design:

1. Newcastle-Ottawa Scale (NOS): Applied to cross-sectional and observational studies.
2. ROBINS-I (Risk of Bias in Non-Randomized Studies of Interventions): Used for quasi-experimental and mixed-method studies.
3. Critical Appraisal Checklist for Qualitative Research: Applied to qualitative interviews and case studies.

Each study was independently rated as high, medium, or low quality based on criteria such as sample representativeness, validity of instruments, and transparency in reporting.

Data Synthesis: A narrative synthesis was conducted to summarize findings from the 12 included studies, grouped by the type of work-life balance (WLB) policies examined—such as flexible scheduling, remote work, paid leave, and family-supportive programs. The synthesis revealed consistent positive associations between WLB initiatives and both job satisfaction and employee engagement. Flexible work arrangements and supportive leave policies emerged as the most effective in enhancing employee morale, particularly in high-demand telecom environments. Some contextual variations were noted across regions, but overall, the findings underscore the strategic importance of integrating WLB into HR practices to improve employee outcomes.

Results

Table 1 (see in last page)

Table 2 (see in last page)

While the majority of included studies were rated as having low to moderate risk of bias, the presence of methodological limitations in a few studies may have influenced the overall findings. For example, narrative reviews such as that by Bello et al. (2024) carried a high risk of bias due to lack of empirical data and potential subjectivity in interpretation, reducing the reliability of its conclusions. Similarly, studies with moderate bias—particularly cross-sectional designs (Qadri, 2024; Pramana & Putra, 2022)—limited causal inference and were prone to self-reporting bias, which may have inflated the perceived effectiveness of work-life balance (WLB) interventions. Although these studies provided valuable descriptive insights, their methodological constraints necessitate cautious interpretation of results. Therefore, while the review offers strong thematic patterns, the influence of design heterogeneity and varying levels of rigor should be acknowledged when generalizing the outcomes. Future research using longitudinal or experimental designs is needed to validate these associations more robustly.

Table 3 (see in last page)

Originality/Value: This systematic review offers original value by synthesizing empirical evidence on the impact of work-life balance (WLB) policies specifically within the telecom sector—an area often overlooked in WLB literature dominated by education, healthcare, and IT industries. By integrating findings from diverse geographical and organizational contexts, this review highlights not only the direct effects of WLB practices on employee engagement and job satisfaction, but also the mediating roles of leadership culture, job autonomy, and emotional wellbeing. Unlike previous reviews that examine WLB in general terms, this study provides a focused, sector-specific evaluation that telecom organizations can use to design practical, evidence-based HR interventions. It also identifies theoretical and methodological gaps, encouraging future longitudinal and cross-cultural research in high-demand, target-driven industries.

Discussion: The systematic review of twelve peer-reviewed studies confirms that work-life balance (WLB) policies play a critical role in shaping employee engagement and job satisfaction, especially in high-demand sectors like telecom. Across the reviewed literature, there was strong consensus that WLB initiatives—such as flexible scheduling, family leave, telecommuting, and support services—positively affect employee morale, emotional wellbeing, and retention outcomes.

Studies such as those by Wadhwa & Shetty (2017) and Qadri (2024) demonstrated that flexible work arrangements significantly enhance engagement, especially when implemented consistently across job roles. Similarly, Kumari & Selvi (2016) and Subarto & Solihin (2025) confirmed that autonomy over scheduling and reduced workload pressure were linked to greater employee satisfaction and reduced burnout. These findings align with Jacob et al. (2024) and Jaharuddin et al. (2019), who noted that poorly implemented or symbolic WLB policies often lead to disengagement, turnover intention, and absenteeism.(Jacob et al., 2024; Jaharuddin & Zainol, 2019)

Beyond direct outcomes, several studies emphasized the importance of organizational culture, leadership support, and communication mechanisms as key enablers of successful WLB integration. For example, Alkhateeb & Al-Louzi (2020) and Sumarno et al. (2024) identified that WLB efforts are most effective when backed by leadership

commitment and inclusive HR practices. These conclusions are reinforced by Erwin et al. (2019), who showed that leadership style significantly moderates the success of WLB policy adoption, especially in hierarchical and fast-paced industries.(Erwin et al., 2019)

However, some contradictions and variations also emerged across contexts. For instance, while Mashavira et al. (2023) and Bello et al. (2024) emphasized workload balance and organizational support, Shyamadanthi & Kaluarachchige (2023) highlighted that engagement mediates the relationship between WLB and satisfaction, suggesting that satisfaction cannot be improved without actively involving employees in WLB planning. Additionally, studies such as Lo & Kartini (2012) noted public-sector success stories in WLB but warned about policy-practice gaps due to weak managerial enforcement.

Gender-specific challenges were also identified in several studies. Qadri (2024) and Shyamadanthi & Kaluarachchige (2023) emphasized the additional burdens faced by women in balancing professional and personal roles, a concern echoed by Latif et al. (2016) and Munyeka et al. (2024) in related reviews. These studies call for telecom companies to provide childcare support, equitable promotion policies, and gender-sensitive leadership training as part of inclusive WLB strategies.(Latif et al., 2016; Munyeka & Maharaj, 2024)

In summary, the reviewed studies converge on the importance of treating WLB not as a peripheral benefit but as a strategic imperative. Well-structured WLB policies, reinforced by proactive leadership and organizational culture, can drive higher job satisfaction, reduce burnout, and enhance employee loyalty. Conversely, the absence of effective WLB mechanisms contributes to low morale, disengagement, and attrition. This review strongly advocates for telecom firms to embed WLB into their operational DNA, ensuring continuous feedback, flexibility, and equity in work practices to remain competitive in talent management and service delivery.

Conclusion: This systematic review confirmed that effective work-life balance (WLB) policies positively impact employee engagement, satisfaction, and retention in the telecom sector. Leadership support, flexible structures, and organizational culture were key enablers, while poor communication and rigid practices acted as barriers. Although most studies agreed on the value of WLB, variations in barriers and gender-specific needs were observed. The findings emphasize the need for telecom companies to integrate WLB into core strategies rather than treat it as an optional benefit. Future research should focus on longitudinal and global studies to address evolving workplace dynamics post-COVID-19.

Limitations:

1. The review was limited to English-language studies, potentially excluding relevant research from non-English-speaking regions.
2. Many studies had small sample sizes and relied on self-reported data, increasing the risk of response bias.
3. A majority of the included studies were cross-sectional, limiting the ability to draw causal inferences.
4. There was a lack of gender-specific and intersectional analysis, which restricts understanding of diverse employee experiences.
5. Some findings may have reduced applicability post-COVID-19, as evolving work models (e.g., hybrid or remote work) shift the nature of WLB practices.

Implications:

1. This review contributes to theory by expanding WLB frameworks to include sector-specific demands, leadership support, and digital boundary management.
2. There is a need for more longitudinal studies in the telecom sector to establish stronger causal relationships between WLB practices and employee outcomes.
3. Practically, the review confirms that formalized and structured WLB strategies lead to improved engagement, job satisfaction, and employee retention.
4. Telecom organizations should treat WLB as a core organizational value, not just a benefit.
5. Effective WLB should be supported through flexible work arrangements, proactive leadership training, mental health initiatives, and inclusive, gender-sensitive policies.
6. Strengthening feedback mechanisms and upward communication is essential for adapting WLB strategies to evolving workforce needs and maintaining long-term engagement.

References:-

1. Abubaker, M. A. J. (2015). Work life balance policies and practices: Case studies of the Palestinian telecommunication sector \[Doctoral dissertation, University of Bradford]. Retrieved from https://bradscholars.brad.ac.uk/entities/publication/d032bfad-ec6d-438c-91a1-a0f51f032ec4
2. Al-Khateeb, A., & Al-Louzi, K. S. (2020). An exploratory study on the impact of work/life balance and employee engagement on talent management and organization performance: A case of Jordan telecom and IT sector. Journal of Social Sciences (COES&RJ-JSS), 9(3), 617–647. https://doi.org/10.25255/jss.2020.9.3.617.647
3. Bello, B. G., Tula, S. T., Omotoye, G. B., Kess-Momoh, A. J., & Daraojimba, A. I. (2024). Work-life balance and its impact in modern organizations: An HR review. World Journal of Advanced Research and Reviews, 21(1), 1162–1173 https://doi.org/10.30574/wjarr.2024.21.1.0106
4. Eddy Madiono Sutanto, Peter J. Sigiols, & Evelyn Natania Wijaya. (2024). WORK-LIFE BALANCE, EMPLOYEE ENGAGEMENT, JOB SATISFACTION, AND INDONESIAN EMPLOYEES' PERFORMANCE. Inter-

national Journal of Business and Society, 25(3), 832–851. https://doi.org/10.33736/ijbs.8355.2024
5. Jacob, A. P., Jezhi, G. I., & Charity, T. J. (2024). Effect of employee engagement strategies on job satisfaction of Airtel Telecommunications in Nigeria. FULafia International Journal of Business and Allied Studies, 2(4), 205–218. Retrieved from https://fijbas.org/index.php/FIJBAS/article/view/141
6. Jaharuddin, N., & Zainol, L. (2019). The impact of work-life balance on job engagement and turnover intention. South East Asian Journal of Management, 13(1). Retrieved from https://scholarhub.ui.ac.id/seam/vol13/iss1/7
7. Kumari, S. V., Selvi, &A. M. (2016). The Impact of Work-Life Balance on the Wellbeing of Employees in the Telecom Sector. International Journal of Science and Research (IJSR), 5(2), 597-601. https://www.doi.org/10.21275/NOV161147
8. Latif, Z., Choudhary, M. A., & Sarwar, S. Z. (2016). The impact of work-life connectivity on professional women: A case study of telecom industry. Knowledge Management & E-Learning: An International Journal, 8(2), 271–291. https://doi.org/10.34105/j.kmel.2016.08.019
9. Lo, F. L., & Kartini, A. I. D. (2012). The relationship between work-life balance policies and employees' job satisfaction in government sectors. In Proceedings of International Conference. Retrieved from https://ir.unimas.my/id/eprint/13140/1/Lo%20Fhung.pdf
10. Mashavira, N., Nyoni, N. D., Mathibe, M. S., & Chada, L. (2023). Work-life balance in the Zimbabwe retail sector: Testing a job-engagement and job-satisfaction model. Acta Commercii, 23(1), Article a1139. https://doi.org/10.4102/ac.v23i1.1139
11. Munawar, M., & Suriyanti. (2024). The effect of organizational culture, work-life balance, and job satisfaction on non-commercial employee work engagement. Golden Ratio of Human Resource Management, 4(1), Article 452. https://doi.org/10.52970/grhrm.v4i1.452
12. Munyeka, W., & Maharaj, A. (2024). Breaking barriers and balancing bytes: Exploring work-life balance among female ICT professionals in a South telecommunications company. Journal of Business and Management Review, March. Retrieved from https://profesionalmudacendekia.com/index.php/jbmr/article/view/905
13. Polnok, C., Doungphummes, N., & Boonrugsa, T. (2024). Impact of Use of LINE Application on Employees' Satisfaction and Work Life Balance in Broadcasting Organization Employees in Thailand. Journal of Language and Culture, 43(2), 109–133. retrieved from https://so03.tci-thaijo.org/index.php/JLC/article/view/279590
14. Pramana, I. G. N. A. A., & Putra, M. S. (2022). The effect of work-life balance on work engagement mediated by job satisfaction and life satisfaction: Study on Balai Pemasyarakatan kelas I Denpasar's employee. International Research Journal of Management, IT and Social Sciences, 9(5), 735–748. https://doi.org/10.21744/irjmis.v9n5.2179
15. Qadri, N. (2024). Exploring the impact of work-life balance on job satisfaction for Saudi private sector C-level employees. International Journal of Business Analytics, 11(1), 1–19. https://doi.org/10.4018/IJBAN.351217
16. Sahni, J. (2019). Role of quality of work life in determining employee engagement and organizational commitment in telecom industry. International Journal for Quality Research, 13(2), 285–300. https://doi.org/10.24874/IJQR13.02-03
17. Shyamadanthi, D., & Kaluarachchige, I. P. (2023). Impact of work life balance on job satisfaction with mediating relationships of employee engagement and organizational commitment. Journal of Human Resource Management Perspectives, 8(2). retrieved from https://jhrmp.sljol.info/articles/10.4038/jhrmp.v8i2.24
18. Subarto & Solihin, D. (2025). The Influence of Work-Life Balance and Employee Engagement on Performance Through Job Satisfaction. Jurnal Economia, 21 (1), 106-124. https://doi.org/10.21831/economia.v20i1.70925
19. Sumarno, S., Sumartono, E., Sampurno, S. D., Ginny, P. L., & Abdillah, M. N. (2024). Fostering employee well-being: The impact of work-life balance policies on organizational productivity. The Journal of Academic Science, 1(8), 1085–1093. https://doi.org/10.59613/xvpk5s57
20. Suryanto, E., Rahmat Syah, T. Y., Negoro, D., & Pusaka, S. (2019). Transformational leadership style and work life balance: The effect on employee satisfaction through employee engagement. Russian Journal of Agricultural and Socio-Economic Sciences, 91(7), 310–318. https://doi.org/10.18551/rjoas.2019-07.36
21. Wadhwa, S., & Shetty, K. (2017). Work life balance policy and its impact on employee engagement. Asian Journal of Management, 8(4), 1064–1074. https://doi.org/10.5958/2321-5763.2017.00163.9

Table 1. Study Characteristics

Study	Authors (Year)	Country	Intervention Type	Outcome Measures	Key Findings
Work Life Balance Policy and its Impact on Employee Engagement	(Wadhwa & Shetty, 2017)	India	Flexible hours, telework	Employee engagement, job satisfaction	Flexible scheduling increased engagement and morale.
Exploring the Impact of Work-Life Balance on Job Satisfaction	(Qadri, 2024)	Saudi Arabia	Leave policies, flexible work	Job satisfaction	WLB policies improved job satisfaction among senior staff.
The Impact of Work-Life Balance on Employee Wellbeing in Telecom	(Kumari & Selvi, 2016)	India	Workload reduction, scheduling control	Wellbeing, job satisfaction	Supportive WLB reduced stress and increased satisfaction.
Work-Life Balance and Employee Engagement in Telecom & IT	(Alkhateeb & Al-Louzi, 2020)	Jordan	Remote work, job control	Engagement, retention	WLB practices boosted talent retention and engagement.
Impact of Work-Life Balance on Job Satisfaction with Mediators	(Shyamadanthi & Kaluarachchige, 2023)	Sri Lanka	Family leave, remote options	Satisfaction, engagement	WLB improved satisfaction through engagement pathways.
Influence of WLB and Engagement on Performance via Satisfaction	(Subarto & Solihin, 2025)	Indonesia	Flexible shifts, leave options	Engagement, satisfaction	Indirect effect of WLB on performance via satisfaction.
The Effect of Work-Life Balance on Work Engagement	(Pramana & Putra, 2022)	Indonesia	Scheduling autonomy	Engagement	Greater flexibility led to increased employee engagement.
Work-Life Balance in the Zimbabwe Retail Sector	(Mashavira et al., 2023)	Zimbabwe	Workload caps, culture change	Satisfaction, engagement	Job satisfaction mediated effect of WLB on engagement.
Work-Life Balance, Job Satisfaction, and Employee Performance	(Eddy Madiono Sutanto et al., 2024)	Indonesia	Telecommuting, flexi-time	Satisfaction, performance	WLB strengthened job satisfaction and productivity.
WLB and its Impact in Modern Organizations	(Bello et al., 2024)	Nigeria	General WLB policies	Satisfaction, engagement	Employee satisfaction improved in WLB-inclusive workplaces.
Fostering Employee Wellbeing via WLB Policies	(Sumarno et al., 2024)	Indonesia	Support services, WFH	Wellbeing, morale	Comprehensive WLB reduced stress and improved wellbeing.
The Relationship Between WLB and Job Satisfaction	(Lo & Kartini, 2012)	Malaysia	Flexible scheduling, HR support	Job satisfaction	WLB policies linked to high satisfaction in public sector.

Table 2. Quality and Risk of Bias Table

Study	Authors (Year)	Study Design	Risk of Bias	Overall Quality
Work Life Balance Policy and its Impact on Employee Engagement	Wadhwa & Shetty (2017)	Quantitative survey	Low	High
Exploring the Impact of Work-Life Balance on Job Satisfaction	Qadri (2024)	Cross-sectional survey	Moderate	Medium
The Impact of Work-Life Balance on Employee Wellbeing in Telecom	Kumari & Selvi (2016)	Observational study	Moderate	Medium
Work-Life Balance and Employee Engagement in Telecom & IT	Alkhateeb & Al-Louzi (2020)	Mixed-method study	Moderate	Medium
Impact of Work-Life Balance on Job Satisfaction with Mediators	Shyamadanthi & Kaluarachchige (2023)	Quantitative survey	Low	High
Influence of WLB and Engagement on Performance via Satisfaction	Subarto & Solihin (2025)	Quantitative survey	Low	High
The Effect of Work-Life Balance on Work Engagement	Pramana & Putra (2022)	Cross-sectional survey	Moderate	Medium
Work-Life Balance in the Zimbabwe Retail Sector	Mashavira et al. (2023)	Quantitative survey	Moderate	Medium
Work-Life Balance, Job Satisfaction, and Employee Performance	Eddy Madiono Sutanto et al. (2024)	Quantitative survey	Low	High
WLB and its Impact in Modern Organizations	Bello et al. (2024)	Narrative review	High	Low
Fostering Employee Wellbeing via WLB Policies	Sumarno et al. (2024)	Quasi-experimental	Moderate	Medium
The Relationship Between WLB and Job Satisfaction	Lo & Kartini (2012)	Cross-sectional survey	Moderate	Medium

Table 3: Common Themes Across Studies

Theme	Supporting Studies	Summary of Findings
Flexible Work Arrangements	Wadhwa & Shetty (2017); Qadri (2024); Kumari & Selvi (2016); Pramana & Putra (2022)	Flexible scheduling and remote work options were consistently linked to improved job satisfaction and employee engagement.
Leave and Family Support Policies	Qadri (2024); Shyamadanthi & Kaluarachchige (2023); Subarto & Solihin (2025)	Paid leave, family support, and personal time-off were shown to boost employee morale, engagement, and organizational loyalty.
Workload and Schedule Control	Kumari & Selvi (2016); Mashavira et al. (2023); Lo & Kartini (2012)	Autonomy in managing workloads and shift flexibility improved job satisfaction and reduced burnout.
Organizational Culture and Leadership Support	Alkhateeb & Al-Louzi (2020); Bello et al. (2024); Sumarno et al. (2024)	A supportive work environment and leadership buy-in for WLB initiatives were essential to sustaining engagement and productivity.
Integrated Wellbeing Strategies	Sumarno et al. (2024); Eddy Madiono Sutanto et al. (2024); Mashavira et al. (2023)	Comprehensive WLB programs that address mental health, stress reduction, and work-life conflict improved employee wellbeing.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यप्रदेश राज्य में अनुसूचित जाति व जनजाति के कल्याण हेतू राज्य सरकार की योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अनुपमा यादव*   अनिल कुमार रजक**

* शोध निर्देशक, बाबुलाल गौर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोगो का मध्यप्रदेश की योजनाओं का लाभ के बारे में अध्ययन करना। अनूसूचित जाति व जनजाति के अधिकार व जीवन संस्कृति के बारे में पता लगाना हैं। शोध-प्रपत्र मध्यप्रदेश आदिवासी बाहुल्य राज्य पर केन्द्रित हैं, भारत के मध्यप्रदेश राज्य में जनजातीय जनसंख्या बहुतायत में पाई जाती हैं। ये जनजातीय समूह प्रदेश के अनेक अंचलों जैसे मालवा, बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड व महाकौशल में निवास करती हैं। राज्य की सीमा छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, राजस्थान आदि क्षेत्र से जुड़े होने के कारण इन प्रदेश की भी कुछ जनजातियाँ सीमान्त क्षेत्रों में निवासरत हैं। इसलिए मध्यप्रदेश को जनजातियों में जनसंख्या की अधिवत्ता का क्रम के अनुसार गौड़, भील, कौल कमार, उराँव, सहरिया अनूसूचित जाति चमार, मेहरा, कौरी, मीणा हैं मध्यप्रदेश शासन के जनजातिय कार्य विभाग द्वारा जनजातियों के विकासार्थ शैक्षणिक आर्थिक एवं अन्य विकास योजनाएँ संचालित हैं, जो उनके विकास में बहुत ही सहायक हैं।

शब्द कुंजी –मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति पिछड़ी जनजाति आदिवासी, उपयोजना सामाजिक आर्थिक, सास्कृतिक, कल्याण योजनाएँ।

प्रस्तावना – वर्तमान भारत में सर्वाधिक अनूसूचित जनजाति की जनसंख्या वाला देश हैं। मध्यप्रदेश भारत के हृदय स्थल के रूप में सुपरिचित किसी भी अन्तराष्ट्रीय सीमा से अछूता पूरी तरह से भू-आवेष्ठित राज्य हैं, जो कि राज्य पुर्नगठन आयोग की अनशंसा पर 1 नवम्बर 1956 को गठित किया गया था। 1 नवम्बर 2000 को मध्यप्रदेश का विभाजन कर नवीन छत्तीसगढ़ को मध्यप्रदेश से पृथक कर नये राज्य का गठन किया गया। मध्यप्रदेश की भौगोलिक स्थिति 21°6' उत्तरी अक्षांश से 26°54' उत्तरी अक्षांश तथा 74° पूर्वी देशान्तर से 82°47' पूर्वी देशान्तर तक हैं इसकी पूर्व से पश्चिम तक लम्बाई 870 किलोमीटर चौड़ाई उत्तर से दक्षिण 605 किलोमीटर हैं भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366(25) 'अनुसूचित जनजातियाँ पद सर्वप्रथम प्रकट हुआ जिसमें ऐसी आदिवासी जाति या आदिवासी समुदाय या इन आदिवासी समुदाय का भाग या उनके समूह के रूप में जिन्हे इस सविधान के उद्देश्य के लिए अनुच्छेद 342 में अनूसूचित जनजातियाँ माना गया हैं। वर्तमान में मध्यप्रदेश में कुल 43 अनुसूचित जनजाति समूह अधिसूचित हैं।

मध्यप्रदेश में भारत के महामहिम राष्ट्रपति के आदेश द्वारा अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया हैं। सविधान के अनुच्छेद 244 में अनुसूचित क्षेत्रो और जनजाति क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में 244(1) में पांचवी अनुसूची के संबंध के तहत रखा गया हैं। मध्यप्रदेश राज्य की अनूसूचित जनजातियों की सूची में अंकित क्रमश: कारे, मीणा, एवं पारधी जनजातियों को सूची में विलोपित किया गया हैं।

मध्यप्रदेश की अनूसुचित जाति एवं जनजाति– वर्तमान भारत में सर्वाधिक अनूसूचित जनजाति की जनसंख्या वाला राज्य मध्यप्रदेश ही है। मध्यप्रदेश राज्य में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 7,26,26,809 तथा अनूसूचित जनजाति जनसंख्या 1,53,16,784 हैं। यह प्रदेश की कुल जनसंख्या का 21.09 प्रतिशत हैं, जिसमें से अनूसूचित जनजाति की जनसंख्या 7,597,380 हैं। मध्यप्रदेश में जिलेवार जनजातिय जनसंख्या का वितरण असमान प्रतीत होता हैं।

तालिका क्रमांक 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

मध्यप्रदेश में तीन विशेष पिछड़ी जनजातियाँ क्रमश: बैगा, भारियाँ और सहरिया हैं जिसमें कुल जनसंख्या लगभाग 5.51 लाख हैं। यह कुल जनजातीय आबादी का 4.51 प्रतिशत के आसपास हैं। इन जनजातियों के लिए ग्यारह विशेष पिछड़ी जनजाति विकास प्रधिकरणों का गठन किया गया हैं।

अनूसूचित जाति– अंग्रेजी शासन काल के दौरान वर्ष 1931 में साईमन कमीशन ने भारत में अछूत जातियों के सर्वे का आदेश जारी किया। इसके तहत जेएच हट्टन को जनजातीय जीवन एवं प्रणाली के पूर्ण सर्वेक्षण की जिम्मेदारी सौपी गई।

हट्टन कमेटी ने देश की जातियों का सर्वे किया, और 68 जातियों को अछूत की श्रेणी में रखा।

अंग्रेजी सरकार ने इस रिपोर्ट के आधार पर वर्ष 1935 में **गर्वमेन्ट आफॅ इंडिया एक्ट** के तहत 68 जातियो को विशेष दर्जा दिया। ये जातियाँ स्पेशल कास्ट यानि एससी कहलायी।

अनूसूचित जाति में शामिल करने की प्रक्रिया– किसी भी समूदाय को अनूसूचित जाति की सूची में शामिल करने प्रक्रिया की शुरूवात राज्य सरकार द्वारा की जाती है। राज्य सरकार किसी समुदाय को अनूसूचित जाति में

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शामिल करने का प्रस्ताव केन्द्र सरकार के पास भेजती हैं। जिसके बाद इस प्रस्ताव पर भारत के महापंजीयक तथा राष्ट्रीय अनूसूचित जाति आयोग की मंजूरी ली जाती हैं।

अनूसूचित जाति व जनजाति से सम्बन्धित प्रावधान- अनुच्छेद 15(4) के पिछड़े वर्गो (एससी सहित) की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने का प्रावधान करता हैं।

अनु0-17 अस्प्रष्यता की प्रथा को समाप्त करता हैं- अनु0-46 अनूसूचित जाति एवं जनजाति तथा समाज के कमजोर वर्गो के शैक्षिणिक व आर्थिक हितो का प्रोत्साहन और सामाजिक अन्याय एवं शोषण में सूरक्षा प्रदान करता हैं।

मध्यप्रदेश राज्य सरकार द्वारा अनूसूचित जाति व जनजाति के लिए चलाई गई योजनाएँ - मध्यप्रदेश राज्य सरकार द्वारा अनूसूचित जाति व जनजाति के लिए कई योजनाएँ चलाती है, जिसमें शिक्षा एवं छात्रवृत्ति (जैसे महाविद्यालयीन पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति और सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना), कौशल विकास (जैसे रानी दूर्गावती प्रशिक्षण अकादमी और स्वरोजगार जैसे भगवान बिरसा मुण्डा स्वरोजगार योजना और टंट्या मामा आर्थिक कल्याण योजना) शामिल हैं। इसके अलावा ग्रामीण एवं बुनियादी ढाँचे के विकास के लिए भी योजनाएँ हैं, जैसे कि धरती आबा जनजातीय ग्राम उत्कर्ष अभियान, जिसमें आवास सड़के और पेयजल जैसी सुविधाएँ शामिल है।

शिक्षा और छात्रवृत्ति

1. **सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना-** अनूसूचित जनजाति व जाति के छात्रों के लिए जो राज्य और संघ लोक सेवा आयोग जैसी परिक्षाओं की तैयारी करते है।
2. **शोध छात्रवृत्ति-**अनूसूचित जनजाति व जाति के छात्रों को पी0 एच0डी0 के लिए।

कौशल विकास और स्वरोजगार:

1. **रानी दूर्गावती प्रशिक्षण अकादमी-** जनजातीय विद्यार्थियों को जेईई नीट, क्लेट और यूपीपीएससी जैसी बड़ी परिक्षाओं के लिए नि:शुल्क कोचिंग प्रदान करने हेतु।
2. **भगवान बिरसा मुण्डा स्वरोजगार योजना-** 8वी उत्तीर्ण युवक-युवतियो को उद्योग और सेवा इकाई स्थापित करने के लिए ऋण प्रदान करना।
3. **मुख्यमंत्री अनूसूचित जाति विशेष परियोजना वित्त पोषण योजना -**अनूसूचित जाति के लिए विशेष परियोजना वित्त पोषण।
4. **टंट्या मामा आर्थिक कल्याण योजना-**स्वयं का उद्योग या व्यवसाय स्थापित करने के लिए ऋण प्रदान करना।

प्रमुख योजनाएँ

1. **मुख्यमंत्री अनूसूचित जाति एवं जनजाति उद्यमिता विकास योजना:**

1) यह योजना शिक्षित बेरोजगार युवाओं को उद्यमिता के लिए बुनयादी कौशल प्रशिक्षण प्रदान करती है।

2) इसमें 5 लाख रूपये तक का ब्याज- मुक्त ऋण और 5 लाख रूपये की सब्सिडी सरकार द्वारा दी जाती है।

2. आदिवासी महिला सशक्तिकरण योजना-यह अनूसूचित जनजाति की महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए विशेष योजना है।

अन्य महत्वपूर्ण योजनाएँ:

1 **धरती आबा जनजातीय ग्राम उत्कर्ष अभियान-** जनजातीय गांवों के सर्वांगीण विकास के लिए बुनियादी ढाँचें, स्वास्थ्य सुविधाएँ, सड़क और कौशल विकास पर ध्यान केन्द्रित पर ध्यान केन्द्रित करना।

2. **प्रधानमंत्री जनजाति आदिवासी न्याय महा अभियान (पीएम जनमत)-**जनजातीय समुदायों के समग्र विकास के लिए केन्द्र सरकार की एक पहल।

3. **अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत आर्थिक सहायता-** अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत आर्थिक सहायता प्रदान करना।

तालिका क्र0 1.2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

अध्ययन के उद्देश्य:

1 मध्यप्रदेश में अनूसूचित जाति व जनजाति की योजनाओं के बारे में अध्ययन करना।

2 अनूसूचित जाति, जनजाति की सामाजिक आर्थिक का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

3 आदिवासी वर्गो के कल्याण हेतु योजनाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना:

1 अनूसूचित जाति वर्ग के एवं अनूसूचित जनजाति वर्ग के अषिक्षित सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण में अन्तर नही है।

2 अनूसूचित जाति वर्ग में सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण एवं शिक्षा में सार्थक सह सम्बन्ध हैं।

शोध अध्ययन की पद्धतियाँ - शोध पत्र में अध्ययन के लिए द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम अनुभाविक विश्लेषण में प्रयोग किया हैं। उद्देश्य को पद्धति से तालमेल सहित वर्णात्मक विधि से तैयार किया गया हैं। पद्धति के अन्तर्गत प्राप्त पूर्ववर्ती शोध साहित्य का संक्षिप्त सर्वेक्षण का वर्णन किया गया हैं। इस शोध पत्र में सिद्धान्त के सार्वभौतिक स्थापना की जगह मध्यवर्ती दृष्टि हैं तथा उपकल्पना और सांख्यकीय जटिलता का मुख्य आधार नही मिया गया हैं।

शोध अध्ययन की पद्धति द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से पुस्तक शोध पत्र, पत्रिकाओं के माध्यम से व गजेटियर के माध्यम से डाटा एकत्र कर शोध पत्र तैयार किया गया हैं।

अनूसूचित जाति व जनजाति की सामाजिक आर्थिक स्थिति- अनूसूचित जाति के सदस्य पिढ़ी-दर-पिढ़ी निर्धन-शोषित, पीढ़ित एवं वंचित रहे है। जिसके अनुरूप ही उनका सामाजिकरण

अनूसूचित जाति व जनजाति की विशेषताएँ:

1. **सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन -** पारम्परिक अस्प्रष्यता के कारण सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक पिछड़ापन।
2. **अधिकारों पर प्रतिबन्ध -** सार्वजनिक सेवाओं और शिक्षा तक पहुँच पर ऐतिहासिक प्रतिबन्ध।
3. **सामाजिक व्यवस्था -**अधिकतर पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था।
4. **आडम्बर -** अपने ऊपर कई सामाजिक आडम्बर थोपे हुए हैं।
5. **भौगोलिक अलगांव -** आमतौर पर पहाड़ी एवं जंगली क्षेत्रों में निवास करते हैं, और अन्य समाज से कम मेलजोल रखते हैं।
6. **सांस्कृतिक पहचान -** एक समान भाषा और संस्कृति और साक्षा स्मृतियों जो संस्कृति को सहारा देती है।
7. **सवैधानिक मान्यता -** भारतीय संविधान के तहत इन दोनों समूहों को मान्यता प्राप्त हैं और उनके संरक्षण के लिए कानूनी प्रावधान है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

8. **विशिष्ठ पहचान–** उनकी एक अलग पहचान होती हैं, जिसे भारतीय संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त है।

9. **अन्तर्विवाह समूह–** आमतौर पर उनके विवाह समूह के भीतर ही होते हैं।

निष्कर्ष– मध्यप्रदेश देश का एक ऐसा राज्य हैं, जहाँ पर पाँचवा व्यक्ति अनूसूचित जनजाति वर्ग का हैं। जो मूलत: किसान हैं और जल–जंगल–जमीन से उसका नाभि नाल का रिष्ता हैं। वह जंगल के उत्पाद पर गुजर–बसर करता हैं और प्रकृति के साथ सहयागी की भूमिका निभाते हुए उसकी रक्षा भी करता है।

इन आदिवासी वर्गो के कल्याण एवं विकास को सुनिचित करने के लिए मध्यप्रदेश की आयोजना मद का 21.09 प्रतिशत हिस्सा अनुसूचित जनजाति व जाति उपयोजना के अवधारणा के तहत पृथक से प्रावधानित किया जाता है और उनके उत्थान के लिए राज्य सरकार ने कई प्रकार की योजना चलाई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 तिवारी शिवकुमार एवं शर्मा, श्रीकमल (2009),'मध्यप्रदेश की जनजातियाँ, भोपाल' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

2 तिवारी कपिल (2010),'सम्पदा मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य', भोपाल आदिवासी लोक कला एवं तुलसी साहित्य अकादमी।

3 GoI (2011), Annual Report 2010-11, Ministry of Tribal Affairs. New Delhi, India.

4 अटल योगेश एवं सिसोदिया, पतीन्द्र सिहं (2011),'आदिवासी भारत', जयपुर:रावत पब्लिकेशन।

5 प्रसाद, गोमती,'रीवा संभाग की अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बालक–बालिकाओं की शैक्षिक स्थिति एवं समीक्षात्मक अध्ययन' पी–एच.डी. (शिक्षा) अ.प्र. सिहं वि. वि. रीवा (म0प्र0) 2004.

तालिका क्रमांक 1.1: मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजातिवार एवं लिंगवार जनसंख्या 2011

क्र.	अनू0 जनजाति	जनजातीय जनसंख्या			कुल जनजातीय जनसंख्या में प्रतिशत
		कुल	पुरूष	महिला	
1	अगरिया	41,243	20,706	20,537	0.27
2	आन्ध	137	70	67	0.0008
3	बैगा	414,526	207,588	206,938	0.71
4	भैना	6,357	3,192	3,165	0.04
5	भारिया, भूमिआ	1,29,230	97,574	95,656	0.26
6	कोरकू	265	156	109	0.001
7	कोल	1,167,694	595,338	572,356	7.62
8	कमार	666	333	333	0.004
9	मांझी	50,655	26,513	24,142	0.33
10	गोण्ड	5,093,124	2,549,973	2,543,151	33.25
11	भील मीणा	2,244	1,194	10,50	0.01
12	भील, भीलाला	5,993,921	3,016,445	2,977,476	39.13
	कुल अनुसूचित जनजातियाँ	12,900.062	6,519.082	6,444.980	8.175

कुल अनुसूचित जनजातियाँ:– 12

स्त्रोत:– आदिवासी शोध व विकास संस्थान भोपाल मध्यदेश के द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन (वर्ष 2011)

तालिका क्र0 1.2: मध्यप्रदेश की अनूसूचित क्षेत्र एवं आदिवासी उप योजना क्षेत्र (आकड़े लाख में जनगणना 2011)

क्र.	क्षेत्र	क्षेत्रफल का वर्ग कि0मी0	प्रदेश कुल क्षेत्रफल में प्रतिशत	कुल जनसंख्या	कुल अनुसूचित जनजाति जनसंख्या	कुल अनुसूचित जनजाति जनसंख्या का प्रतिशत
1	मध्यप्रदेश	3	–	603.48	122.33	20.27
2	अनूसूचित क्षेत्र	0.68	22.08	112.66	66.78	59.28
3	आदिवासी उप योजना क्षेत्र	0.93	30.19	130.35	82.9	63.6

स्त्रोत:–www.trobal.mp.gov.in/Tsp

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् ग्रामीण क्षेत्र की हाईस्कूल छात्राओं की गणित विषय में रूचि का तुलनात्मक अध्ययन (आगर विकासखण्ड)

जगदीश कुमार सोनी* डॉ. वर्षा तिवारी**

* शोधार्थी (शिक्षा) सम्राट विक्रमादित्य विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, प्रशांति शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – विद्यार्थियों के समक्ष जब कोई गणितीय समस्या आती है तो उनका मस्तिष्क सक्रिय होकर उस समस्या के समाधान ढूंढने के लिए क्रियाशील हो जाता है राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी गणित विषय के ठोस आधार उत्पन्न करने पर जोर दिया जाकर भारत को विश्व गुरु बनाने की बात कही गई है। गणित शिक्षण के बौद्धिक मूल्यों को प्राप्त करने के प्रयास किये जाने चाहिये।

गणित विषय किसी भी बालक-बालिका के मस्तिष्क को तीक्ष्ण एवं तीव्र बनाने में कार्य करता है गणित विषय के ज्ञान से स्पष्ट, क्रमबद्ध, तर्कसंगत रूप से भली भांति सोचने की शक्ति उत्पन्न होती है बौद्धिक विकास में गणित विषय के उपरोक्त विशेषताओं के कारण ही शोधकर्ता ने उपर्युक्त विषय को अपने शोधपत्र के लिए चयन किया है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व – संसार के सभी विकसित राष्ट्रों की प्रगति का प्रमुख कारण प्रौद्योगिकी है। इन सभी राष्ट्रों ने अपनी शिक्षा व्यवस्था में विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर अधिक जोर दिया है। इनके अध्ययन हेतु गणित विषय का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है गणित विषय के बढ़ते हुए महत्व को देखते हुए विभिन्न शिक्षाविदों ने पाठ्यक्रम में गणित विषय को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वर्तमान में हाईस्कूल स्तर तक गणित विषय का अध्ययन अनिवार्य कर दिया गया है। बालिकायें, हाईस्कूल स्तर ही गणित विषय का अध्ययन कर पाती है अधिकांश बालिकाओं की रूचि गणित विषय में न होने के कारण गणित विषय की अपेक्षा अन्य वैकल्पिक विषयों को महत्व प्रदान करती है।

नेपोलियन के अनुसार, 'गणित की उन्नति तथा वृद्धि देश की सम्पन्नता से सम्बन्धित है।' समाज की अर्थव्यवस्था, व्यापार, लेनदेन, क्रय विक्रय, यातायात व्यवस्था तथा सभी प्रकार की व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से चलाने के लिए गणित की आवश्यकता होती है।

आधुनिक समय में गणित विषय में रूचि रखने वाले विद्यार्थियों की संख्या बहुत कम है। इस मनोवृत्ति के घातक परिणामों से रूबरू होने तथा इस समस्या को दूर करने के लिये इस पर शोध करना आवश्यक हो गया है। बालक-बालिकाओं में लैंगिक अन्तर दूर कर समावेशी वातावरण प्रदान करने की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् बालिकाओं की गणित विषय के प्रति रूचि में अन्तर पाया जाता है। वर्तमान में इसी प्रकार के कारण की जिज्ञासा से ही इस शोध पत्र की आवश्यकता महसूस की है।

समस्या कथन – 'शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् ग्रामीण क्षेत्र की हाईस्कूल छात्राओं की गणित विषय में रूचि का तुलनात्मक अध्ययन'

तकनीकि शब्दों की व्याख्या – समस्या कथन में आने वाले पारिभाषित शब्दों की व्याख्या निम्नानुसार है-

हाईस्कूल स्तर – स्कूल शिक्षा के अन्तर्गत कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं के स्तर को हाईस्कूल स्तर कहते है।

छात्रायें – प्रस्तुति शोध पत्र में छात्राओं से आशय कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं में अध्ययन करने वाली बालिकाओं से है।

ग्रामीण क्षेत्र – ग्राम पंचायत के अधीन आने वाले क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र होते है।

रूचि – व्यक्ति को ऐसी प्रवृत्ति जिससे वह वशीभूत होकर उसके अनुकूल कार्य करने को प्रेरित करती है।

तुलनात्मक अध्ययन – दो समूहों की किसी विषय पर तुलना करके अध्ययन करना।

शोध में प्रयुक्त चर :-

छात्राओं की रूचि (Interest)

साहित्य की समीक्षा:

1. अय्यर (1977) गणितीय संबंधित कारकों का अध्ययन किया और पाया कि असामाजिक प्रवृत्ति गणित की उपलब्धि में भेद करने के प्रभाव वाला कारक था।
2. पाण्डे व बाजपेयी (2003) ने गणितीय समस्याओं पर एक अध्ययन किया और निष्कर्ष में पाया कि विद्यार्थी गणित विषय को कठिन समझते हैं अत: गणित शिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता है।
3. लक्ष्मी कर्थिका और सुरेश कुमार (2018) ने ग्रामीण और शहरी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की गणित विषय में रूचि की भिन्नता का अध्ययन किया और पाया कि ग्रामीण और शहरी विद्यालयों के छात्रों और छात्राओं की गणित विषय में रूचि में अन्तर पाया।
4. रेबेका लाजारिड्स और एंजेला इटेल (2012) ने कक्षा 8, 9 एवं 10 के विद्यार्थियों की रूचि और उपलब्धि का अध्ययन किया और पाया कि विद्यार्थियों की गणित विषय में रूचि पर शिक्षक समर्थन व्यवहार, डोमेन-विशिष्ट, लिंग, रूढ़िवादिता और क्षमता उम्मीदों का प्रभाव पड़ता है।

5. लियोनार्ड चिनाएडम (2016) ने माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की गणित विषय में रूचि को प्रभावित करने वाले कारकों शिक्षक, शासकीय कारक, ढाँचागत समस्या, अनुदेशात्मक रणनीति, कक्षा का आकार और गणित विषय में चिन्ता का अध्ययन किया और पाया कि उपर्युक्त कारक रूचि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते है। गणित विषय में रूचि पर कक्षा के आकार और शासकीय कारकों का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सुझाव दिए कि गणित विषय में रूचि बढ़ाने के लिए प्रभावी शिक्षण विधियों के प्रयोग सहित विभिन्न संरचनात्मक रणनीतियों से लैस होना चाहिए जिनका वे उपयोग कर सकते है।

उद्देश्य :

1. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि को जानना।
2. ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि को जानना।
3. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि में सार्थक अन्तर को जानना।

परिकल्पनाऐं – प्रस्तुत शोध पत्र में निम्न परिकल्पनाओं के परीक्षण का प्रयास है:

1. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक है।
2. ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक है।
3. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध पद्धति:

1. **शोध प्रविधि –** शोधकर्ता द्वारा आगर मालवा जिले के आगर विकासखण्ड के ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय में अध्ययनरत् कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं की छात्राओं को प्रश्नावली प्रदान कर उत्तर प्राप्त किए गए। सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

2. **प्रदत्तों का संकलन –** प्राप्त प्रदत्तों का संकलन एवं सारणीयन किया जाकर उत्तरों को तुलनात्मक रूप से देखा गया।

3. **सांख्यिकी तकनीकी –** प्राप्त प्रदत्तों के संकलन के पश्चात् उपयुक्त सांख्यिकी प्रविधियों का क्रियान्वयन कर प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया।

4. **सीमांकन –** प्रस्तुत शोध पत्र का सीमांकन निम्नानुसार रखा गया –

4.1 यह अध्ययन केवल आगर मालवा जिले तक सीमित रखा गया।

4.2 यह अध्ययन हाईस्कूल के अन्तर्गत कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं की छात्राओं तक ही सीमित रखा गया।

4.3 यह अध्ययन हाईस्कूल स्तर की कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं की छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि जानने तक सीमित रहा।

4.4 इस अध्ययन में कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं में अध्ययनरत् 50 छात्राओं को सम्मिलित किया गया।

5. **न्यादर्श :–** प्रस्तुत लघु शोध कार्य में शोधकर्ता ने यादृच्छिक प्रतिचयन विधि का उपयोग अध्ययन से सम्बन्धित जनसंख्या में से प्रतिदर्श का चुनाव करने हेतु आगर मालवा जिले के आगर विकासखण्ड के ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय कन्या हाईस्कूल तनोड़िया तथा अशासकीय स्कूल सत्यम पब्लिक हाईस्कूल तनोडिया के हाईस्कूल स्तर की कक्षा 9वीं एवं कक्षा 10वीं में अध्ययनरत् 25–25 छात्राओं को सम्मिलित किया गया।

सारणी (अगले पृष्ठ पर देखे)

उपकरण – गणित विषय के प्रति रूचि जानने सम्बन्धी स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। परीक्षण पुन: परीक्षण विधि द्वारा प्रश्नावली की विश्वसनीयता जाँची गई। उपकरण की वैधता का निर्धारण रूप वैधता विधि द्वारा निर्देशक महोदय एवं अन्य शिक्षाविदों द्वारा किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकीय तकनीकी – प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन ज्ञात करने के पश्चात् सार्थकता अन्तर ज्ञात करने हेतु टी–अनुपात का प्रयोग किया गया है–

(1) मध्यमान –

$$\bar{x}_1 = \frac{\Sigma x_1}{N_1}, \qquad \bar{x}_2 = \frac{\Sigma x_2}{N_2}$$

(2) मानक विचलन :–

$$SD_1 = \sqrt{\frac{\Sigma d_1^2}{N_1} - c_1^2}$$

$$SD_2 = \sqrt{\frac{\Sigma d_2^2}{N_2} - c_2^2}$$

(3) मानक त्रुटि :–

$$S_{ed} = \sqrt{\frac{SD_1^2}{N_1} + \frac{SD_2^2}{N_2}}$$

(4) $t = C.R. = \frac{M_1 \sim M_2}{S_{ed}}$

(5) $d.f. = N_1 + N_2 - 2$

प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण एवं सारणीयन

सारणी क्रमांक–01

क्र.	प्रश्न क्र.	शासकीय स्कूल की छात्राओं से प्राप्त अभिमत	अशासकीय स्कूल की छात्राओं से प्राप्त अभिमत
1.	1.	11	08
2.	2.	17	08
3.	3.	09	00
4.	4.	08	02
5.	5.	14	05
6.	6.	09	00
7.	7.	10	04
8.	8.	13	10
9.	9.	10	07
10.	10.	17	09
11.	11.	04	04
12.	12.	16	08
13.	13.	16	08
14.	14.	08	06
15.	15.	18	11

16.	16.	09	04
17.	17.	08	03
18.	18.	11	05
19.	19.	13	08
20.	20.	13	02
	योग	**234**	**112**

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं परिकल्पनाओं का सत्यापन :-

परिकल्पना क्रमांक-01 : ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक है।

उपरोक्त परिकल्पना के सत्यापन हेतु प्रश्नावली में से प्रश्न क्रमांक-02, 05, 08, 10, 12, 13, 15, 19, 20 कुल 09 प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। इन प्रश्नों से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर

सारणी क्रमांक-02

क्र.	**प्रश्न क्र.**	**शासकीय स्कूल की छात्राएँ प्रतिशत**
1.	2	68
2.	5	56
3.	8	52
4.	10	68
5.	12	64
6.	13	64
7.	15	72
8.	19	52
9.	20	52
योग	**09**	**548**

548 = 60.88

09

उपरोक्त आधार पर स्पष्ट है कि 60.88 प्रतिशत शासकीय स्कूल की छात्राओं की गणित विषय के अध्ययन के प्रति रूचि परिलक्षित होती है। अत: परिकल्पना सिद्ध होती है।

परिकल्पना क्रमांक-02 : ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक है।

उपरोक्त परिकल्पना के सत्यापन हेतु प्रश्नावली में से प्रश्न क्रमांक-02, 05, 08, 10, 12, 13, 15, 19, 20 कुल 09 प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। इन प्रश्नों से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर

सारणी क्रमांक-03

क्र.	**प्रश्न क्र.**	**शासकीय स्कूल की छात्राएँ प्रतिशत**
1.	2	32
2.	5	20
3.	8	40
4.	10	36
5.	12	32
6.	13	32
7.	15	44
8.	19	32
9.	20	08
योग	**09**	**276**

276 = 30.66

09

उपरोक्त आधार पर स्पष्ट है कि केवल 30.66% अशासकीय स्कूलों की छात्राओं की गणित विषय के अध्ययन के प्रति रूचि परिलक्षित होती है।

अत: परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

परिकल्पना क्रमांक-03 : ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी क्रमांक 01 के कॉलम-03 व कॉलम-04 से गणना करने पर

तालिका संख्या-04

समूह	**संख्या**	**मध्यमान**	**मानक विचलन**	**मानक त्रुटि**	**टी-अनुपात**
शासकीय स्कूल की छात्राएँ	25	11.70	3.79	0.64	9.52
अशासकीय स्कूल की छात्राएँ	25	5.60	3.20		

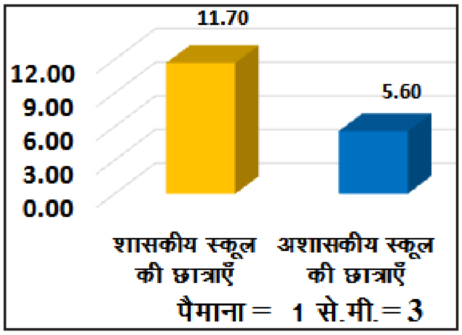

विश्लेषण :- तालिका संख्या 04 के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय स्कूल की छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि का प्राप्त मध्यमान 11.70 व मानक विचलन 3.79 तथा ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय स्कूल की छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि का प्राप्त मध्यमान 5.60 व मानक विचलन 3.20 है। दोनों मध्यमानों के अन्तर का प्राप्त टी-मान 9.52 है जो स्वतंत्रता के अंश 48 पर सार्थकता स्तर पर टी-मान 1.67 से अधिक है।

निष्कर्षत: ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि में सार्थक अन्तर पाया गया।

अत: परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

निष्कर्ष - शोध कार्य से प्राप्त निष्कर्ष निम्नानुसार है:

1. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय विद्यालय में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक है।
2. ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय विद्यालय में अध्ययनरत् छात्राओं की गणित विषय के अध्ययन के प्रति रूचि सकारात्मक नहीं है।
3. ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय एवं अशासकीय छात्राओं की गणित विषय के प्रति रूचि में सार्थक अन्तर परिलक्षित होता है।

अध्ययन के शैक्षिक निहितार्थ - प्रस्तुत शोध पत्र में आगर मालवा जिले के आगर विकासखण्ड में अध्ययनरत् हाईस्कूल स्तर की छात्राओं की गणित अध्ययन के प्रति रूचि का तुलनात्मक अध्ययन किया गया जिसके सम्बन्धित जानकारी मिल सके तथा उचित कदम उठाये जा सके।

प्रस्तुत लघु शोध के परिणाम गणित विषय की महत्ता को बताते है।

अध्ययन की सीमायें – प्रस्तुत लघु शोध अध्ययन में कुछ कमियाँ रह गई है जो निम्न है:

1. इस अध्ययन हेतु अधिक छात्राओं को न्यादर्श के रूप में लेना चाहिये था किन्तु धन एवं समयाभाव के कारण ऐसा नहीं हो सका।
2. पिछले शोध कार्य कम ही प्राप्त हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राय, पारसनाथ (2007), अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2
2. शर्मा, आर.ए. (2007), शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन एवं मूल्यांकन, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
3. वर्मा, डॉ. प्रीति (2010), मनोविज्ञान, शिक्षा और अन्य सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकी, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2
4. http://www.facebook.com/hootanpuratn/pasts

क्र.	जिला का नाम	विकासखण्ड का नाम	क्षेत्र का प्रकार	विद्यालय का नाम	कक्षा 9वीं कक्षा 10वीं में अध्ययनरत् छात्रायें	कक्षा 9वीं कक्षा 10वीं में न्यादर्शित छात्रायें	न्यादर्श प्रतिशत
1.	आगर मालवा	आगर	ग्रामीण	शा. कन्या हाईस्कूल तनोड़िया	144	25	17.36
2.	आगर मालवा	आगर	ग्रामीण	अशास. सत्यम पब्लिक हा.से. स्कूल तनोड़िया	43	25	58.13

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Corporate Realities in Business Ethics: Contemporary Trends and Corporate Practices

Dr. Jaya Sharma*

*Asst. Professor (Commerce) Govt. Geetanjali Girls' PG College, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: In nearly every academic discipline, monetary considerations appear either directly or indirectly, and the fields of commerce and management are particularly broad in their influence on social and economic development. As businesses expand rapidly and new technologies reshape industries, companies are increasingly expected to operate within clearly defined ethical boundaries—commonly referred to as business ethics. Over time, this concept has become a major concern of national and international governance related matters, organizational leadership, and corporate growth.Consumer awareness, technological progress, and globally liberalized markets have opened new opportunities for business expansion. However, these same forces have intensified the expectation that organizations uphold ethical standards in their operations.

This paper adopts a descriptive research approach to explore the growing importance of business ethics in the modern corporate world. Drawing on recent global data, cross-country ESG findings, and contemporary governance practices, the study investigates how ethical behaviour affects profitability, long-term sustainability, and stakeholder trust. It also highlights evidence that ethically governed firms tend to benefit from reduced fraud risk, higher-quality financial reporting, stronger investor confidence, and an improved market reputation.

Overall, the findings indicate that ethical conduct significantly shapes business growth and performance, though the extent of its impact varies across sectors and geographic regions. The paper concludes with recommendations emphasizing stronger governance mechanisms, policy reforms, and more focused ESG strategies to support sustainable and responsible corporate development.

Keywords: Business ethics, ESG(Environmental, Social and Governance), organisational leadership.

Introduction - In the high-speed world of global commerce, we often measure success through spreadsheets, stock prices, and quarterly growth. However, beneath the surface of every transaction lies an invisible architecture that determines whether a company will truly thrive or eventually crumble: **its ethics and values.** For decades, many believed that "business" and "morality" were two separate worlds—that a company's only duty was to its bottom line. But the landscape has shifted. Today's consumers are more informed, today's employees are more purpose-driven, and today's markets are more transparent than ever before. In this new era, a company's "Value System" is no longer just a plaque on a lobby wall; it is a competitive advantage.

Business ethics are not merely about following the law; they are about the choices made in the "grey areas" where the law is silent but conscience is not. From the clothes we wear to the apps we scroll; every product we touch is a reflection of a company's inner compass. This article explores how defining core values and maintaining high ethical standards serves as the ultimate insurance policy for a brand's reputation and its long-term survival.

Business Ethics as ESG (Environmental, Social and Governance) measures : Business ethics is the backbone of the ESG, framework that in present times is used for the assessment of businesses. ESG indicators measure the ethical way in which businesses handle their effect on the environment, as well as their social responsibilities and governance practices. A business that is ethical in its practices, such as honesty in reporting, being accountable to stakeholders, as well as making ethical decisions, has a direct impact on the business's ESG practices. For instance, ethical practices affect the environment in the best way possible, ethical practices in the business affect the well-being of employees as well as the community, and ethical governance practices affect the transparency of the business. Researchers as well as ESG services around the world have shown that businesses with good ethical foundations perform better in their ESG practices and are not as susceptible to risks. ESG, thus, is the measured concept of business ethics in the modern business world.

Business Ethics as CSR measures: Corporate Social Responsibility (CSR) is the operational area where the application of business ethics goes beyond the boundary of generating profits. Ethical responsibility emphasizes the

needs to consider the societal impacts along with environmental impacts on the operations undertaken by organizations. In India, the aspect of CSR has been included as an obligation to be complied with under the Companies Act, 2013, to introduce the acceptability of ethics on the operations undertaken by companies. Ethical companies consider CSR as an obligation to the companies, identifying societal concerns. Educational development programs under CSR emphasize the expression of societal concerns through the development of educational institutions. Ethical concerns on the protection of the environment create a distinct impression on the actions undertaken under CSR programs. Secondary information on CSR activities introduced within the framework of environmental protection and other activities emphasizes the societal profitability along with the increased corporate image.

Business Ethics as an integral part of Indian Knowledge Systems (IKS): Business Ethics is an element that's been practiced in Indian Knowledge Systems (IKS) for countless generations.Indian Knowledge Systems (IKS) offer a robust and indigenous ethics framework for carrying out business activities, which is in complete harmony with contemporary ethics. The ideals of Dharma (righteousness), Nishkama Karma (selfless action), and Trusteeship promote ethics such as moral accountability, equality, and serving society. Such ideals promote corporations to behave in a responsible manner, without giving much emphasis to personal and financial benefits. Indian corporations act in a good manner by adopting ethics in governance and acting as responsible citizens of society by undertaking social responsibilities. Comparing contemporary ethics with IKS values, sustainability, transparency, and inclusive growth become part and parcel of IKS values.

Review of literature

(Bora & Bora, 2020): This study explores how a formal code of conduct serves as an accelerator for modern businesses. It highlights that ethical standards are vital for present corporate world and it support them to fulfil their desired goals effectively. The authors suggest that while established firms can enhance existing practices, new businesses should use these findings to improve their initial performance.

(Kumar & Srivastava, 2018): Using co-word network analysis, this research tracks the evolution of business ethics from 1991 to 2018. It notes a shift in focus from basic ethical decision-making toward leadership ethics and a significant increase in studies regarding Corporate Social Responsibility (CSR). It identifies gaps in research, particularly regarding ethical issues in business-to-business (B2B) contexts

Cai, H., Hope, OK., Li, Y. *et al. (2025)* in their recent research highlights a critical transparency gap regarding corporate political ties. Their study on corruption investigations reveals that while most investors remain unaware of a firm's political connections due to a lack of mandatory disclosure, a select group of institutional investors leverage private information to exit positions early. This creates an "uneven playing field," where retail investors suffer from delayed reactions to material risks. The study suggests that without mandatory disclosure, the high cost of information acquisition prevents market transparency and unfairly disadvantages the general public.

Research objectives

1. To understand the evolution of business ethics.
2. To find out the importance of business ethics for society
3. To present some recent examplesfrom Indian as well as foreign companies

Research methodology : This study follows a descriptive research approach to explore the growing importance of business ethics in the modern corporate world. The purpose of descriptive research is to clearly explain and present existing practices, trends, and developments without testing any hypothesis or establishing cause-and-effect relationships. In the present study, business ethics is examined as an evolving concept that has gained importance due to increased corporate accountability, regulatory reforms, stakeholder awareness, and sustainability expectations. The research relies entirely on **secondary sources of data** such as academic journals, corporate governance reports, sustainability and ESG disclosures, policy documents, and published literature. By analysing these sources, the study describes how ethical principles such as transparency, fairness, responsibility, and integrity are being integrated into corporate decision-making and governance systems. The descriptive approach helps in understanding the role of business ethics as a strategic and governance-oriented requirement rather than a voluntary moral practice in today's corporate environment.

Discussion

Evolution of business ethics : Commerce, in its earliest days, was personal. Ethical behavior was not a formal code, but something societal and shaped by the norms of a community and local relationships. Quite understandably, a dishonest merchant would lose their reputation in town in no time and thus had no other way to survive but be honest. India has been quite rich in inculcation of values and ethics in business; we find many details in our ancient treaties like The Arthashastra, Manusmriti, etc., where it is elaborately discussed how every business activity was first considered about its social implications.

As the industrial revolution took businesses out of people's homes into large factories during the 18th and 19th centuries, the personal bond between owners and their workers broke down. New ethical difficulties emerged for which simple neighbourly trust could not resolve, such as poor working conditions, unquality products, and early environmental damage. It became obvious that formal ethical guidelines were needed to protect the vulnerable.

we step up into the 20th century the regulations for accountability took their shape. The term Corporate Social

Responsibility was well known and become a key term of interest for business regarding their brand value.Businesses accepted that they had responsibilities beyond just earning a profit, particularly towards the society that supported them. Major events like the Great Depression made society aware that corporate greed could lead to economic collapse. This awareness forced some changes like companies were made accountable and their code of conduct was to be publicise. With the rise of Multinational Corporations (MNCs) type of business operations it became mandatory for corporates to adapt to different cultures and legal systems.

Finally, in the 21st Century a digital revolution occurred and again it reshaped the ways businesses used to work. With Digital Era everything becomes easier and so as the activities of the businesses were also open and accessible to public.Today, business ethics is no longer a side project; it is a key part of a company's identity. The focus has shifted toward:

1. **Sustainability:** Making sure that today's profits do not harm the planet for future generations.
2. **Digital Integrity:** Tackling modern issues like Artificial Intelligence, data privacy, and the effects of social media.
3. **Total Transparency:** In a connected world, companies are expected to be open about everything from their supply chains to their political connections.

Importance of Business Ethics for society: Business ethics is the systematic study of moral principles that govern decision-making and behaviour in commercial organizations. It goes beyond mere legality by embedding normative values—such as integrity, fairness, accountability, and respect—into the strategic and operational fabric of a business. A number of interrelated theoretical dimensions underpin the importance of business ethics, including those now supported by academic research.

Theoretically, the ethical behavior of organizations will reinforce their legitimacy by making corporate conduct conform to the norms of society and the expectations of various stakeholder groups. When firms continuously apply ethical standards throughout their daily transactions, they build trust and gain credibility with customers, investors, employees, and regulators; these are basic elements of long-term business relationships. Research has pointed out that ethics represent a type of social contract between a firm and its stakeholders. Any violations of ethical norms entail reputation loss and loss of market legitimacy. Empirical investigations underline that ethical conduct improves trust, thus boosting customer loyalty and contributing to long-term stakeholder involvement.

The theoretical basis of business ethics consists of normative ethical theories, including utilitarianism, virtue ethics, and deontology. These constitute frameworks that guide choice when there are conflicting interests. Ethical systems support managers and employees in weighing against profitability the moral consequences of corporate decisions. In this way, they avoid misconduct and reduce risk. This proactive ethical reasoning also aids an organization in avoiding legal sanctions, corruption, and reputational damage emerging from unethical behavior. Both classical and contemporary literature suggest that strong ethical frameworks act as deterrents to malpractice. Business ethics has become increasingly perceived as a core driver of corporate sustainability. Other than finance, ethical frameworks prompt firms to consider environmental, social, and governance aspects that inherently align the business strategy with the greater societal objectives. According to various scholars, ethics and sustainability go hand in hand. Ethical leadership promotes environmental responsibility and social engagement, thus reinforcing long-term economic viability.Theoretical models in organizational behavior indicate that high ethical cultures lead to accountability, justice, and intrinsic motivation in employees. Such an environment improves morale among employees, reduces workplace conflicts, and results in increased productivity. All these ultimately helps to build a better social atmosphere.

Case studies to present the scenario- Thepresent study has tried to revel the scenario of business ethics in current business world presenting some case studies from two foreign and two Indian companies, as following-

1. **The first Case Study is from Adobe Inc.,** which is a leading American multinational software company. It has been famous for providing digital document experience solutions. the company was made accused of charging **"Hidden" Subscription Fees.**In June 2024, the U.S. Federal Trade Commission (FTC) sued Adobe, the creator of Photoshop. It involved an ethical issue that was related with transparency and deception as Adobe was accused of "trapping" customers into year-long subscriptions without clear disclosure. They allegedly hid expensive early-termination fees in fine print and made the cancellation process a "digital obstacle course." It was a very new perspective of business ethics and their implementation in practice. The case highlighted a unique perspective of the dark patterns that companies use digitally. It shows that even if a company provides a world-class product, being unethical in how you charge for it can lead to massive legal and reputational damage. Presently many businesses offer subscription charges and are a major part of subscription economy. Customers are engaged in the products and often fail to check the charges being auto deducted. Thus, without informed consent any charges are proven as an action against business ethics.
2. **The second case study is from an Indian "Quick Commerce" company "Zepto",** which is known for delivering groceries and daily essentialsin minutes. The company worked using Dark Stores network which are located near the location of the customers.The idea was welcomed by the industry and also in initial stage the on-time delivery attracted customers too. The company was in headlines regarding a case from modern gig economy.

As it evolved labour dilemma to complete 10-minute delivery service. Soon the Employee Wellness vs. Efficiency related terms become a matter of concern as many short calls and continuous pressure of quick delivery became a cause of many causalities. While the company saw massive growth, it faced scrutiny over the safety and pressure placed on delivery partners. The ethical debate centres on whether the "need for speed" encourages reckless driving and physical burnout for gig workers. It had to take action regarding safety and also had to pay a gratification Zepto responded by investing in "Dark Stores" optimized for safety and providing insurance, attempting to balance ultra-fast business goals with worker welfare. The case is an example how business ethics proved to be an important factor and also made us give a thought towards,*Is a 10-minute delivery worth the risk to the worker?*

3. The third case study is from Patagonia, which is very popular with Patagonia's "Earth as Only Shareholder" initiative. Patagonia is a famous American company that deals with outdoor clothing and gear for activities like hiking, climbing, surfing etc. It has proposed a new way of corporate ownership and responsibilities associated with the same. The new redefined move is actually not new but based on the core moral values inculcate within humanity that we are a part of this giant world thus can play only a tiny role. The other natural and social factors are more important than us thus we must acknowledge their contribution and pay them back what is expected from us. Patagonia's founder Yvon Chouinard transferred 100% of the company's voting stock to a trust dedicated to fighting environmental crises. This step changed the way we looked towards corporate social responsibility as it was such an innovative ethical action that supported purpose over profit. The company could make a lot of profit and used it for its growth but it ensured all future profits (roughly $100 million a year) go toward protecting the planet.It proves that a business can remain highly profitable while legally binding itself to an ethical mission.

4. The fourthCase Study is from "Patanjali", the Indian company,famous for its motiveto promote swadeshiand spread awareness about Yoga and ancient medicinal practices. It has been working very hard and has a great goodwill with its effective medicines and practices proposed. The customers rely heavily on what was claimed by the brand, and trusted the assumptions made. In early 2024, the Supreme Court of India issued a strong reprimand and contempt notice to Patanjali Ayurved for misleading advertisement made by the company regarding curing some diseases permanently. The company claimed its products could "cure" chronic diseases like blood pressure and diabetes, disparaging modern medicine (Allopathy) in the process. While the products may be effective but making such claims are somewhere compromising with **Honesty in Marketing.**This case highlights **Medical Ethics** and the responsibility of influential brands. The court ruled that "vulnerable" consumers must be protected from false hope created by misleading ads.This is a great example of the **Legal vs. Ethical** boundary. Even if a product is "natural," the way it is sold must meet the ethical test of truthfulness.

Conclusion: These case studies revealed that business in today's scenario can progress only if they pay equal attention towards business ethics and duties towards nature, employees, and all other stakeholders have to be taken care of very seriously. It is not a one-sided decision but a mutual one that impacts positively to both parties, companies as well as stakeholders. The studies also tells us that may it be ESG, CSR IKS business ethicsacts as the connecting link between ESG frameworks, CSR practices, and Indian Knowledge Systems. While ESG provides measurable indicators and CSR represents ethical action, IKS offers moral guidance and value-based leadership. Together, they promote responsible governance, sustainable development, and long-term value creation. Secondary literature indicates that companies integrating ethical values with ESG strategies and CSR initiatives perform better in terms of trust, reputation, and resilience. The integration of traditional ethical wisdom with modern governance tools creates a holistic corporate ethics model suited to the Indian business environment.

References:-

1. Vivek Kumar, Arpita Srivastava (2018) "Mapping the Evolution of Research Themes in Business Ethics", VINE Journal of Information and Knowledge Management Systems. DOI:10.1108/VJIKMS-10-2020-0199
2. B. Nagarjuna, V. Ambika, U.R. Rakshith, Gitanjali Singh, E. Devashree, A. Sulthan Mohideen (2022) "Business Ethics Practices in Pharmaceutical Companies in India, Journal of Pharmaceutical Negative Results.DOI:https://doi.org/10.47750/pnr. 2022.13.S06.183
3. Dr. Kasturi Borah, Ms. Upasana Borah (2020), "Business Ethics in Modern Indian Businesses", International Journal of Business and Management
4. Cai, H., Hope, OK., Li, Y. *et al.* The (In)Visibility of Undis -closed Political Connections. *J Bus Ethics* 200,927–956 (2025). https://doi.org/10.1007/s10551-024-05898-3
5. Federal Trade Commission. (2024, June 17). *FTC takes action against Adobe and executives for hiding termination fees and making it difficult to cancel subscriptions*. [Press Release]. https://www.ftc.gov/news-events/press-releases/2024/06/ftc-takes-action-against-adobe
6. The Hindu. (2024, April 16). *Supreme Court's warning to Patanjali on misleading ads: A timeline of events*. https://www.thehindu.com
7. Chouinard, Y. (2022). *Earth is now our only shareholder*. Patagonia. https://www.patagonia.com/ownership/
8. Freeman, R. E., Harrison, J. S., & Wicks, A. C. (2007). *Managing for stakeholders: Survival, reputation, and success*. Yale University Press.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

पर्यटन और भारतीय समाज

डॉ. पूजा तिवारी*

* सह प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महावि।लय, बिछुआ, जिला छिंदवाडा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – पर्यटन और भारतीय समाज का सदैव से गहरा सम्बन्ध रहा हैं पर्यटन न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देता हैं और रोजगार पैदा करता हैं बल्कि नगरीय और ग्रामीण समुदाय के आर्थिक और सामाजिक समावेश में भी योगदान देता हैं यह भारत की सांस्कृतिक विरासत को बढ़ाने का कार्य भी करता हैं किन्तु इसके प्रबन्धन में सावधानी बरतने की जरूरत होती है ताकि स्थानीय समुदाय और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव न पड़े।

शब्द कुंजी – पर्यटन, समाज, संस्कृति, आर्थिकता, रोजगार।

प्रस्तावना – पर्यटन वर्तमान में एक उभरता हुआ उद्योग हैं किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को पर्यटन बेहद गहराई तक प्रभावित करता हैं भारत देश में पर्यटन उद्योग से सबसे ज्यादा राजस्व और रोजगार प्राप्त होता हैं वर्तमान में सर्कार और गैर सरकारी संगठनों ने पर्यटन पर विशेष ध्यान दिया हैं जिससे सभी लोगो को बहुत लाभ पहुँच रहा हैं।

शोध उद्देश्य :

1. पर्यटन के विषय में विस्तार से जानना।
2. पर्यटन का विभिन्न पक्षों जैसे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक राजनैतिक आदि पर क्या प्रभाव पड़ता हैं यह जानने का प्रयास करना।
3. शासन प्रशासन सरकार द्वारा पर्यटन उद्योग को उच्च कोटि का बनाने हेतु किये गये प्रयासों को जानना।

परिकल्पना :

1. पर्यटन उद्योग से सरकार को ज्यादा आय प्राप्त होती हैं।
2. पर्यटन का समाज के विभिन्न पक्षों पर सकारात्मक प्रभाव के साथ साथ नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता हैं।
3. पर्यटन से स्थानीय लोगो को रोजगार मिलता हैं जिससे बेरोजगारी दूर होती हैं।

सबसे पहले हमे यह समझना होगा की पर्यटन क्या हैं– पर्यटन शब्द अंग्रेजी के टूरिज्म शब्द का हिंदी पर्याय हैं यह शब्द मूल रूप से लेटिन भाषा के टोरोस से लिया गया हैं जिसका अर्थ है एक प्रकार का औजार जो एक पहिये की भांति गोलाकार होता हैं यह गोलाकार पिन हैं इसी शब्द से यात्रा चक्र और पॅकेज टूर या एक मुश्त यात्रा का विचार सृजित हुआ जो की वर्तमान पर्यटन का मुख्य आधार हैं। टूरिजम शब्द के तहत वे समस्त व्यापारिक क्रियाये भी शामिल हैं जो पर्यटकों की जरूरतों की पूर्ती करती हैं पर्यटन– इसका तात्पर्य हैं आराम एवम ज्ञान प्राप्ति हेतु यात्रा प्रारंभ करना, देशाटन –विदेशों में मुख्यत य आर्थिक लाभ के लिए यात्रा करना, तीर्थाटन –धार्मिक लाभों के कारण यात्रा करना।

पर्यटक कौन हैं–विश्व पर्यटन संगठन के अनुसार–'जब कोई व्यक्ति अपने परिवेश के बाहर चौबीस घंटे से अधिक किन्तु एक वर्ष से कम समय के लिए किसी निश्चित मंदी या रोजगार रहित गतिविधि के लिए जाता है या निवास करता हैं और उसका एक मात्र उद्देश्य यात्रा करना, आनंदित होना, नई–नई ऐतहासिक तथा सांस्कृतिक जानकारियां लेना और खरीददारी एवम आराम से समय व्यतीत करना हो तो उसे पर्यटक माना जाता हैं।'

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार–'पर्यटक वह व्यक्ति हैं जो यात्रा करता हैं अथवा वह व्यक्ति जो अपनी रूचि के लिए अथवा प्राकृतिक सौन्दर्य देखने आदि के लिए अनेक स्थानों का भ्रमण करता हैं।'

पर्यटन के प्रकार:

1. स्थायी पर्यटन गतिविधि
2. अस्थाई पर्यटन गतिविधि

पर्यटन के आधार पर वर्गीकरण :

1. **सामाजिक एवम भौगोलिक आधार पर पर्यटन –** यह एक प्रकार का आवासीय पर्यटन हैं जिसमे मख्य उद्देश्य सैर–सपाटा एवम मनोविनोद होता हैं।उदहारण के लिए भारत में कई लोग मनाली और शिमला स्नो लाइन अथवा कश्मीर में बसंत के मौसम में पतों के गिरने और फूलों के खिलने का आनंद लेने जाते हैं।
2. **सांस्कृतिक पर्यटन –** इसमें लोग विभिन्न किले और प्राचीन धरोहर देखने जातें हैं जैसे जयपुर, जोधपुर, आगरा दिल्ली आदि में घूमने जाते हैं। इसके अलावा राजस्थान का मरू उत्सव या केरल की नावों की दौड़, कुल्लू का दशहरा, दिल्ली हाट आदि।
3. **धार्मिक पर्यटन –** भारत में अधिकांश लोग पर्यटन करने वभिन्न धार्मिक स्थल जाते हैं जहाँ पूजा पाठ के साथ साथ प्रकति के दर्शन भी हो जाते हैं और पर्यटन सफल हो जाता हैं जैसे दक्षिण भारत में बालाजी मंदिर, मीनाक्षी मंदिर कोणार्क का सूर्य मंदिर आदि महाराष्ट्र में शिर्डी मंदिर शेगांव रामटेक मंदिर आदि जम्मू कश्मीर में वैष्णव देवी, मध्यप्रदेश में उज्जैन, दतिया पीताम्बर पीठ राजस्थान में माउन्ट आबू,बिहार में गया, उत्तर प्रदेश में अयोध्या, प्रयागराज आदि।
4. **शैक्षणिक और स्वास्थ्य सेवा सबंधी पर्यटन –** इसमें विद्यार्थी आदान –प्रदान कार्यक्रम के अंतर्गत भारत के अन्दर और विदेशों का भ्रमण शमिल

हैं।

इसी प्रकार देश के कुछ हिस्सों में विगत एक दशक से पारम्परिक भारतीय चिकित्सा केंद्र पञ्च कर्म, योग कर्म,स्पा आदि के साथ साथ स्वास्थ्य के लिए लाभदायक मौसम वाले प्रदेशों, स्थानों में भी पर्यटन बढ़ गया हैं।

5. **सम्मलेन और व्यापार पर्यटन –** इसके अंतर्गत अप्रवासी भारतीय सम्मलेन, विश्व हिंदी सम्मलेन, विश्व पुस्तक मेला, वस्त्र मेला, सरकारी सम्मलेन आदि आते हैं जिसमे भारत के प्रतिनिधि भाग लेते हैं इसी प्रकार से व्यापर से सम्बन्धित जैसे शिक्षा प्रकाशन, सैन्य रक्षा, पर्यावरण संधारण आदि।

6. **पर्यावरण एवम वन्य जन्तु दर्शन –** भारत में कई उतम प्रकार के नेशनल पार्क, अभ्यारण्य, जैव विविधता, चिड़ियाघर, जू आदि हैं इसके शौकीन लोग इन स्थानों में जाना पसंद करते हैं।किलिमंजारों की पर्वत माला ग्रेट बेरियर रीफ ओड़िसा के कछुवा प्रजनन तट आदि क्षेत्रों में लोग जाना पसंद करते हैं पर्यटन के ऐसे क्षेत्र को 'डार्क पर्यटन या डूम पर्यटन' कहा जाता हैं।

7. **पैकेज पर्यटन –** यह एक नवीन क्षेत्र विकिसित किया गया हैं इसमें होटल्स, हवाई कम्पनी, पर्यटन एजेंसी और ट्रांसपोटर आदि मिल कर पैकेज टूर का विशाल पैमाने पर आयोजन कर रहें हैं।

इसके अलावा भी आउट सोर्सिंग और बी पी ओ उद्योग द्वारा बड़े नगरो जैसे दिल्ली, मुबई, बेंगलुरु, हैदराबाद, चंडीगढ़ आदि में पर्यटन हेतु सेवाए प्रारंभ हैं।

8. **साहसिक पर्यटन –** यह उन लोगो के लिए हैं जो रोमांचक गतिविधियों में रूचि रखतें हैं जैसे कि हाईकिंग, रॉक क्लैयमिंग, बंजी जम्पिंग और रिवर राफ्टिंग आदि।

9. **कृषि पर्यटन –**इसमें लोग फार्म जीवन और ग्रामीण जीवन का अनुभव करने जातें हैं।

10. **समुद्री पर्यटन –** इसमें समुद्री तटो, द्वीप और ताटीय क्षेत्रों की यात्रा शामिल हैं।

इसके अलावा भी कई प्रकार के पर्यटन होतें हैं जैसे भोजन पर्यटन, खेल पर्यटन और विशेष रूचि वाले पर्यटन आदि।

भारतीय समाज –भारतीय समाज एक अनोखा और जटिल ताना–बाना हैं जिसमे सदियों पुरानी परम्पराएँ आधुनिकता के साथ साथ गुँथी हुई हैं यह एक ऐसा समाज हैं जो अपनी विविधता, लचीलेपन और सांस्कृतिक विरासत के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध हैं।

विविधता में एकता – भारत की सबसे बड़ी खासियत इसकी विविधता में एकता हैं यह पर कोस –कोस में पानी और वाणी अर्थात बोली बदल जाती हैं यह विभिन्न धर्मो, भाषाओ, जातियों के लोग एक साथ मिल कर रहतें हैं यह विविधता सिर्फ सांस्कृतिक नही, बल्कि भौगोलिक और सामाजिक भी हैं उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्र तटो तक, हर क्षेत्र की अपनी खास पहचान वेशभूषा, खान –पान और रीति –रिवाज हैं।

संयुक्त परिवार और सामाजिक सरंचना – भारतीय समाज का मुख्य आधार संयुक्त परिवार प्रणाली हैं जिसमे दो –तीन पीढियां साथ मिलकर एक छत के नीचे रहतें हैं हालाकिं पश्चिमी करण, औद्योगिकिकरण, नगरीकरण और आधुनिकीकरण के कारण अब एकल परिवार का चलन बढ़ गया हैं, समाज को जाति और वर्ग में विभाजित किया गया हैं।

चुनौतियाँ और परिवर्तन– वर्तमान में भारतीय समाज कई चुनौतियों का सामना कर रहा हैं जैसे बढती असामनता, वर्ग भेद, आर्थिक असामनता, आधुनिकता आदि।

आध्यत्मिकता और धर्म – धर्म भारतीय समाज का एक अभिन्न अंग हैं यहाँ विभिन्न धर्मो के लोग एक साथ निवास करतें हैं ?

जाति व्यवस्था – भारत में वर्ण व्यवस्था के आधार पर जाति व्यवस्था बनायीं गयी हैं किन्तु यह पर सैकड़ों जाति के लोग रहतें हैं यह पर जाति की जड़ें बहुत गहरी हैं

महिलाओं की प्रस्थिति– भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति समय के साथ साथ परिवर्तित होती रहती हैं वर्तमान में महिला सशक्तिकरण के कई आयाम हैं।

भाषाई विविधता – भारत में 22 से अधिक भाषाएँ मान्यता प्राप्त हैं जिनमे हिंदी मराठी, गुजरती, बंगाली, तेलगु, तमिल, उर्दू आदि प्रमुख हैं इसके अलावा सैकड़ों बोलिया भी भारत में बोली जाती हैं।

इस प्रकार से भारत विविधताओं से भरा देश हैं जंहा पर निम्न, मध्यम और उच्च आर्थिक वर्ग के लोग रहतें हैं भारत में इनमे से मध्यम और उच्च आर्थिक स्थिति के लोग पर्यटन पर विशेष रूचि रखतें हैं किन्तु कई राज्य सरकारों ने निम्न आर्थिक स्थिति के आम लोगो के बुजुर्गों के लिए धार्मिक पर्यटन की व्यवस्था कर रखी हैं समस्त धर्मो के धार्मिक स्थलों हेतु यह व्यवस्था की गयी हैं।

पर्यटन से सम्बन्धित आधारभूत सुविधाएँ :

1. **होटल –** इसके अंतर्गत अन्तराष्ट्रीय होटल, वाणिज्य होटल, सराये, क्लब, यात्री आराम स्थल, होस्टल मध्यस्तरीय आवास, अनुपूरक आवास आदि शामिल हैं।

2. **खान –पान –** रेस्टोरेंट, भोजनालय, रेलवे खान पान व्यवस्था, समुद्री खानपान अन्य भोजन कक्ष आदि।

3. **मनोरंजन स्थल –** संगीत नृत्य, नाटक, ध्वनि, लाइट प्रदर्शन, मयूजियम, लोकसंगीत, मठ, आश्रम आदि।

4. **ऐतेहासिक इमारतें –** धार्मिक भवन, सैनिक नागरिक भवन, रण भूमि स्मारक, विभिन्न प्रकार के किले, महल, बावड़ियाँ, झरोखे, जल महल, संग्रहालय, पुस्तकालय, अवशेष आदि।

5. **क्रीडा सुविधा –**जल क्रीडा, स्वीमिंग पूल, बंदरगाह, आखेट, पर्वतारोहण, बर्फ पर स्केटिंग, इनडोर गेम्स, आउटडोर गेम्स, गोल्फ कोर्ट, हॉर्स रैयडिंग आदि।

6. **खरीददारी केंद्र –** भारतीय हस्तकला केंद्र, वाणिज्य केंद्र, खुले बाजार आदि।

7. **वितीय संस्थाएं –** बैंक, डाकघर, दूरभाष, बीमा कम्पनी आदि।

8. **प्रेस माध्यम –** प्रेस, आकाशवाणी, दूरदर्शन 'यात्रा मार्गदर्शक', प्रकाशन केंद्र आदि।

9. **यात्रा के साधन –** रेल, बस, हवाई जहाज, टूरिस्ट बस, टैक्सी, कैब, ऑटो रिक्शा, अन्य साधन।

पर्यटन का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक पक्षों पर पड़ने वाले प्रभाव :

1. **सामाजिक प्रभाव –** पर्यटन से विभिन्न समाजों के बीच आपसी समझ और भाईचारे की भावना बढती हैं लोग एक दुसरे के समाज को समझने लागतें हैं एक दुसरे की जीवन सहिली, भाषा, सामाजिक स्थिति आदि को समझने का अवसर मिलता हैं यह स्थानीय समुदायों को पर्यटकों से मिलने

और अपने विचार साझा करने में मदद करता हैं जिससे सामाजिक सम्बन्ध मजबूत होतें हैं।

2. **आर्थिक प्रभाव –** पर्यटन का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव किसी भी देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता हैं यह रोजगार के अवसर भी देता हैं साथ ही प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से उद्योगो को भी बढ़ावा देता हैं पर्यटन से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती हैं जिससे देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होती हैं यह स्तानीय व्यसायों जैसे हस्तशिल्प, कृषि उत्पाद की मांग को बढ़ता हैं यह आय का सबसे बड़ा साधन हैं भारत के कई पर्यटन स्टाल और स्मारक जैसे ताजमहल आदि से सबसे ज्यादा राजस्व प्राप्त होता हैं विदेशी पर्यटकों का मुख्य आकर्षण राजस्थान, उतरप्रदेश, मध्यप्रदेश, गुजरात आदि होतें हैं जो सरकार को आर्थिक रूप से मजबूत बनातें हैं।

3. **सांस्कृतिक प्रभाव –** पर्यटन सांस्कृतिक आदान –प्रदान को बढ़ावा देता हैं जब पर्यटक किसी स्थान पर जातें हैं तो वो अपनी संस्कृति, भाषा, व्यवहार को भी साथ लातें हैं जो मेजबान संस्कृति को प्रभावित करता हैं इससे लोक कला, संगीत, परम्परा का सरक्षण भी होता हैं।

4. **राजनैतिक प्रभाव –** पर्यटन नीतियों का देश की राजनीति पर सीधा असर पड़ता हैं पर्यटन से मिलने वाले राजस्व का उपयोग आधारभूत संरचना जैसे सड़कों, हवाईअडे, होटल के विकास में किया जाता हैं।

शासन और प्रशासन द्वारा पर्यटन उद्योग को उच्च कोटि का बनाने हेतु किये गये प्रयासों का विवरण ह भारत सर्कार और राज्य सरकारों ने पर्यटन उद्योग को उच्च कोटि का बनाने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रयास किये हैं और कर रहे हैं जिनमे बुनियादी ढांचे का विकास और विशेष योजनायें शामिल हैं ?

1. **स्वदेश दर्शन योजना –** यह योजना थीम पर आधारित हैं जैसे बौद्ध सर्किट, हिमालयन सर्किट, ताटीय सर्किट अदि।इसका मुख्य उद्देश्य बेहतर कनेक्टिविटी और सविधाओं के साथ साथ इन क्षेत्रों में रोजगार और आर्थिक विकास को बढ़ावा देना हैं स्वदेशी दर्शन 2.0 में सरकार ने गंतव्य केन्द्रित दृष्टिकोण को अपनाया हैं जिसमे सतत और जिम्मेदार पर्यटन को बढाया जा रहा हैं।

2. **प्रसाद योजना PRASHAD,** तीर्थयात्रा कायाकल्प और आध्यात्मिक, विरासत सवर्धन अभियान का उद्देश्य तीर्थस्थलो और विरासत स्थलों के विकास और सौन्दर्यीकरण पर ध्यान केन्द्रित करना हैं।

3. **देखो अपना देश योजना –** यह पहल भारतीय नागरिकों को देश के भीतर यात्रा करने और घरेलू पर्यटन को प्रोत्साहन देने हेतु हैं।इसके तहत वेबिनार और जागरूकता अभियान चलायें जातें हैं।

4. **अतुल्य भारत –** यह एक वैश्विक विपणन अभियान हैं जो भारत की सांस्कृतिक, ऐतहासिक और प्राकृतिक विरासत को अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों के समक्ष प्रस्तुत करता हैं।

5. **ई –वीजा सुविधा –** कई देश के नागरिको के लिए ई –वीजा की सुविधा शुरू की गयी हैं, जिससे भारत आने वाले पर्यटकों के लिए वीजा प्रक्रिया सरल और तेज हो गयी हैं।

6. **उडान योजना UDAN,** इसके अंतर्गत हवाई संपर्क बढ़ाना, सडक निर्माण, रेलवे स्टेशन का कायाकल्प, हवाईअडे की संख्या बढ़ाना और विकास करना आदि शामिल हैं।

7. **अतुल्य भारत पर्यटक सुविधाकर्ता प्रमाणन कार्यक्रम IITF –** यह एक ऑनलाइन शिक्षण कार्यक्रम हैं जिसका उद्देश्य पर्यटन स्थलों पर प्रशिक्षित और पेशेवर गाइड का एक पूल तैयार करना हैं।

8 **डिजिटल प्लेटफार्म –** पर्यटन मंत्रालय ने इसके अंतर्गत इनक्रेडिबल इंडिया कंटेंट हब जैसे प्लेटफार्म रखें हैं यह उच्च गुणवत्ता वाली छवियों, फिल्मों और ब्रोशरो का भंडार हैं जो पर्यटकों के लिए जानकारी आसानी से पहुचता हैं।

9 **निधि पोर्टल NIDHI, –** नेशनल इंटिग्रेटेड डेटाबेस ऑफ होस्पिटैलिटी इंडस्ट्री पोर्टल भी पर्यटन के डिजिटलकरण और व्यापार करने में आसानी को बढ़ावा देता हैं।

10 **पर्यटन पुलिस योजना –** पर्यटकों की सुरक्षा और विश्वास बढ़ने के लिए लोकप्रिय पर्यटन खेत्रों में समर्पित पुलिस कर्मियों को तैनात किया गया हैं।

11 **अपनाओ –विरासत योजना –** इस योजना का उद्देश्य निजी क्षेत्र की भागीदारी के माध्यम से स्मारकों और विरासत स्थलों का रख –रखाव करना हैं।

12 **आतिथ्य और पर्यटन क्षेत्र के लिए आपातकालीन ऋण सुविधा ECLGS, –** महामारी जैसी विपरीत परिस्थितियों में पर्यटन क्षेत्र को सहारा देने के लियें आपातकालीन क्रेडिट लाइन गारंटी योजना जैसी वित्तीय सहायता प्रदान की गयी हैं।

इनके अतिरिक्त भी राज्य सरकारों द्वारा समय समय पर अपने राज्यों के पर्यटक स्थलों के प्रचार –प्रसार हेतु प्रसिद्ध व्यक्तियों को राज्य का ब्रांड अम्बेसडर बनाया जाता हैं जैसे गुजरात के लियें अमिताभ बच्चन जी या मध्यप्रदेश के लिए पंकज त्रिपाठी जी और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तो दुबई सरकार ने दुबई का ब्रांड अंबेसडर भारतीय अभिनेता शाहरुख खान जी को बनाया हैं।

पर्यटन के क्षेत्र में भारत में नये कल्चर

1. **क्रूज हॉलिडे कल्चर –** यह पहले सिर्फ उच्च वर्ग का लक्जरी सपना माना जाता हैं अब यह मिडिल क्लास परिवारों के लिए भी आसान विकल्प बन गया हैं लोग अब बीस हजार रुपयें से शुरू होने वाले डोमेस्टिक क्रूज से लेकर पचास हजार रुपयें के इंटरनेशनल क्रुज का आनंद ले रहें हैं यही कारन हैं की क्रूज अब 'एलीट ट्रेवेल' से निकलकर कोम्फर्टेबिल हॉलिडे आप्शन बन गया हैं इसमें मुंबई –गोवा, कोच्ची –लक्षदीप, गंगा –ब्रम्हपुत्र नदी क्रूज सबसे ज्यादा बुक करवाएं जातें हैं इनमे थीम बेस्ट लक्जरी पॅकेज भी मिलतें हैं जिसमे फ्लाइट, होटल आदि का किराया भी शामिल होता हैं।

2. **टेम्पल टूरिजम कल्चर –** आजकल देश में धार्मिक पर्यटन में प्रिमियम याने महंगी सुविधाओं का विकल्प अपनाने में तेजी आ रही हैं ऐसी यात्राओं के दौरान सात से दस हजार रुपयें प्रति रात किराएँ वाले कमरों की बुकिंग चौबीस प्रतिशत तक बढ़ गयी हैं इससे अधिक कीमत वाले रूम की बुकिंग तेविस फीसदी बढ़ गयी हैं मेक माय ट्रिप की पिल्ग्रेमेज ट्रैवल ट्रेंड्स रिपोर्ट के अनुसार वित् वर्ष 2024 – 25 में 56 प्रमुख आध्यात्मिक स्थलों पर होटल और स्टे की बुकिंग में 19 प्रतिशत की बढ़ोतरी दर्ज की गयी हैं।इनमे से 34 गंतव्यों ने डबल – डिजिट ग्रोथ और 15 स्थानों ने 25 प्रतिशत से अधिक बढ़ोतरी दर्ज की हैं।

3. **विशेषीकृत पर्यटन –** इसमें एस्ट्रो टूरिज्म, हेरिटेज वाक, फेस्टिवल टूरिज्म और अर्द्वेंचार टूरिज्म आदि आतें हैं जिनका क्रेज बढ़ गया हैं।

4. **सतत और पर्यावरण –**अनुकूल पर्यटन ह इसमें इको –टूरिज्म, ग्रीन पहल, जल सरक्षण आदि को ध्यान में रखते हुए पर्यटन किया जाता हैं।

निम्न वर्ग की मुख्य विशेषता के रूप में आर्थिक कमजोरी, कम आय, असुरक्षित रोजगार और पर्यटन पर कम खर्च करने की क्षमता आदि आती हैं जबकि मध्यम वर्ग में स्थिर आय, शिक्षित लोग, जीवन स्तर में सुधार की आकांक्षा, घूमना फिरना, पर्यटन करना उनकी जीवन शैली का हिस्सा होना आदि शामिल हैं।

पर्यटन और विभिन्न वर्ग – पहले पर्यटन केवल उच्च वर्ग तक सीमित था किन्तु आज सस्ता परिवहन, ऑनलाइन बुकिंग, कम बजट के होटल्स पैकेज टूर आदि के कारण माध्यम वर्ग तो बड़ी संख्या में यात्रा कर रहा हैं किन्तु निम्न वर्ग आज भी सीमित दायरे में केवल स्थानीय या धार्मिक यात्रा कर पाता हैं।

आज पर्यटन उद्योग का सबसे बड़ा लाभ माध्यम वर्ग के दुकानदारो, गाइड ड्राईवर, कारीगर, लोक कलाकार आदि को होता हैं जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार, आय का बढ़ना आदि सकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं।

इसी प्रकार से मध्यम वर्ग पर्यटन को अपनी जीवन शैली का 'स्टेटस सिंबल' भी मानने लगा हैं।पर्यटन से आम लोगो में आत्मविश्वास बढ़ता हैं, आनन्द की प्राप्ति होती हैं सामाजिक दायरा भी बढ़ जाता हैं।

निष्कर्ष – पर्यटन मध्यम वर्ग के लिए तेजी से बढ़ता सांस्कृतिक और मनोरंजक अनुभव बन गया हैं जबकि निम्न वर्ग के लिए आय और रोजगार का बड़ा स्रोत हैं पर्यटन समस्त वर्गों में सामाजिक –आर्थिक विकास लाता हैं और हर वर्ग के लिए नये अनुभव और विकास के अवसर लाता हैं।

इस प्रकार से कहा जा सकता हैं की पर्यटन और समाज का गहरा रिश्ता हैं जहाँ पर्यटन समाज को आर्थिक लाभ और सांस्कृतिक लाभ देता हैं वहीं समाज की संस्कृति, विरासत और जीवन शैली पर्यटकों को आकर्षित करतीं हैं किन्तु पर्यटन से भीड़, प्रदुषण और स्थानीय संस्कृति की क्षति भी हो सकती हैं इसलिए संतुलन और सतत विकास बहुत जरूरी हैं ताकि पर्यटन समाज की बेहतरी में योगदान दे सकें।पर्यटन को दीर्घकालीन लाभदायक बनाना जरूरी हैं ताकि ये 'गंतव्य सरंक्षक' की भूमिका निभा सके और समस्त समाज और प्रकृति सुरक्षित रह सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 सिंघल डॉ.कुमार प्रभात, 2022, पर्यटन और संग्रहालय,VSRD Acadmic Publishing.

2 माहेश्वरी, डॉ. दीप्ति, संजय बंसल, NEP– 2020, पर्यटन एवम यात्रा प्रबन्धन।

3 अग्रवाल, डॉ. गोपाल कृष्ण, 2024, समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

छत्तीसगढ़ का नामकरण एवं साहित्य में प्रयुक्त

डॉ. माग्रेट कुजूर*

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कला विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, धरमजयगढ, जिला- रायगढ़ (छ.ग.) भारत

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ का नामकरण अर्वाचीन है तथा पूर्व में इस राज्य के लिए कोशल, महाकोशल, दक्षिणकोशल, चेदिशगढ़, दण्डकारण्य, महाकांतार आदि नामों से अधिष्ठित किया जाता रहा है। छत्तीसगढ़ में पाषाण युगीन मानव के द्वारा गुफा की दीवारों में अनेक शैलचित्र रेखांकित किये गये हैं। ये चित्र उनकी दैनिक जीवन की गतिविधियों व सामाजिक संस्कृति की गतिविधियों का प्रतिबिम्ब है, जिसके कारण पुरातत्ववेत्ताओं ने इस राज्य को मानवीय विकास व सभ्यता का केन्द्र बताया है।

छत्तीसगढ़ सुदृढ़, सुनिर्मित, अक्षेद्य एवं 36 अभेद्य गढ़ों का वृन्द रहा है। 'ऐसा माना जाता है कि यहाँ 36 राजवंश के लोग निवास करते थे। वाल्मीकी रामायण में दो कोशल प्रदेशों का विवरण मिलता है, सरयू तट पर अवस्थित एवं विस्तृत फैले महाजनपद को उत्तारकोशल कहा जाता था तथा विध्यांचल पर्वत श्रृंखला के दक्षिण भाग के विस्तृत क्षेत्र को दक्षिण कोशल कहा जाता था। दक्षिण कोशल राज्य व्यापक विस्तृत एवं समृद्ध होने के कारण महाकोशल नाम से लोगों के द्वारा प्रयुक्त होता था। वन्य क्षेत्र की अधिकता के कारण महाकांतार का भी उल्लेख मिलता है। 'दण्डकारण्य से तात्पर्य बस्तर के वृहद वन क्षेत्र से है, दण्डकारण्य के क्षेत्र में जयपुर स्टेट, उड़ीसा का पूर्वी रियासत एवं चाँदा जिला आते हैं।'[1] रामचरितमानस जो कि गोस्वामी तुलसीदास की एक महान् कृति है, जिसमें दंडक वन का वर्णन मिलता है, जहाँ अनेक ऋषिमुनी तप-तपस्या साधना करते थे और आश्रमों में रहते थे। इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि भगवान श्री राम लक्ष्मण एवं जानकी जी के साथ वनवास काल में यहाँ रहे। ऋषि अगत्स्य ने भगवान श्रीराम से कहा था-

'दंडक वन पुनीत प्रभु करहू।
उग्र शाप मुनिवर कर हरहू।।'[2]

हे! प्रभु आप इस दंडक वन को पवित्र कीजिए और मुनियों को घोर श्राप से मुक्त कीजिए।बस्तर क्षेत्र के प्रथम राजा का नाम राजा दंडक था, जो मुनियों के कुल का माना जाता है। कई स्थलों पर रामायण काल में छत्तीसगढ़ के इस भू-भाग के लिए दण्डकवन, दण्डकारण्य आदि नामों का उल्लेख मिलता है। बस्तर के अरण्यक क्षेत्र को दण्डकारण्य ही कहा जाता है। मदनलाल गुप्ता जी ने अपनी पुस्तक 'छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन' में लिखा है कि 'शुक्राचार्य, राजा इच्छुक के तृतीय पुत्र दण्ड के गुरू थे। शुक्राचार्य जी अपनी रूपवती कन्या 'अरजा' के साथ छत्तीसगढ़ के इस दण्डकारण्य क्षेत्र में रहते थे। एक बार राजा दण्ड शिकार खेलते शुक्राचार्य जी के इसी आश्रम में जा पहुँचे। उस समय शुक्राचार्य वहाँ पर नहीं थे, पर उनकी पुत्री अरजा उपस्थित थी। राजा दण्ड ने कामातुर होकर उस कन्या का बलात्कार किया। तत्पश्चात् इस घटना की जानकारी होने पर शुक्राचार्य ने राजा दण्ड को श्राप दिया, जिसके कारण उसका साम्राज्य अरण्य के रूप में परिवर्तित हो गया। दण्ड के नाम से यह क्षेत्र दण्डकारण्य के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह क्षेत्र वर्तमान बस्तर का अरण्य क्षेत्र है।'[3]

स्पष्ट है कि इस क्षेत्र को 'कोशल', 'दक्षिण कोसल', 'दण्डकारण्य' आदि नामों से अभिहित किया जाता रहा है, लेकिन जितने भी नामों का उल्लेख किया गया है उसमें सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय नाम 'दक्षिण कोसल' ही रहा है। डॉ. पालेश्वर प्रसाद शर्मा ने इस बात का उल्लेख किया है कि 'अभिलेखीय प्रमाणों में दक्षिण कोसल नाम समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति, जाजल्यदेव के पिता पृथ्वीदेव प्रथम के ताम्रपत्र (1069 ई.) में, रतनपुर के इस भाग को कोसल कहा गया। 17वीं शताब्दी के प्रसिद्ध आंचलिक कवि गंगाधर मिश्र ने अपने प्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ यकोसलानंद महाकाव्य' में इस क्षेत्र को दक्षिण कोसल कहा है। अत: यह विदित होता है कि 17वीं शताब्दी के अंत तक इस भू-खण्ड के लिए दक्षिण कोसल नाम अभिषित रहा है। तत्कालीन छत्तीसगढ़ राज्य दक्षिण कौसल का मुख्य, मध्य एवं केन्द्रीय भाग था।'[4]

वर्तमान 'छत्तीसगढ़' नाम शब्द का प्रयोग आधुनिक है तथा इसके नामकरण के संबंध में विद्वानों ने कई अलग-अलग विचार प्रस्तुत किये हैं 'पुरातत्व विद कनिंघम के सहयोगी जे. डी. वेगलर ने यहाँ आकर बसे 36 चमार लोगों के निवास के आधार पर 'छत्तीस घर' का प्रचलन से नामकरण हुआ।'[5] छत्तीसगढ़ के नामकरण को लेकर और मत भी सामने आए हैं। पहले इस प्रदेष को चेदि वंश के राजाओं का राज्य होने के कारण 'चेदिसगढ़' भी कहा जाता था, जो कालांतर में छत्तीसगढ़ नाम के रूप में प्रचलित हुआ। 'राजा जाज्वल्य देव द्वितीय ने अपने आप को चेदि परिवार के नेता के रूप में संबोधित किया है।'[6] छत्तीसगढ़ में कल्चुरी शासक त्रिपुरी (जबलपुर के पास) से आए थे, जिसका वर्णन 'जयचंद विद्यालंकार ने अपने एक प्रसिद्ध ग्रंथ यत्रिपुरी का इतिहास' में उल्लेख किया है कि इस भू-क्षेत्र में है हयवंशीय (चेदिसवंशीय) लम्बे समय तक राज्य किया है। लेकिन ऐतिहासिक तथ्यों व जन-परम्परा में चेदिसगढ़ नाम का उल्लेख कहीं पर भी नहीं मिलता।'[7] रतनपुर के प्रसिद्ध कवि बाबू रेवाराम व गोपाल मिश्र ने इस बात का उल्लेख किया है कि, रतनपुर राज्य में छत्तीस क्षत्रीय वंशों ने राज किया है, लेकिन यह तर्क उचित नहीं लगता। साहित्य मर्मज्ञ डॉ. राजीव तिवारी ने उल्लेख किया है कि 'छत्तीसगढ़ का नामकरण कल्चुरियों के शासनकाल में हुआ

होगा। इस संबंध में पुरातत्वविदों ने अपने राय में कहा है कि पहले कल्चुरी शासक जो कि त्रिपुरी के रहने वाले थे, शहडोल के समीप क्षेत्र से पेण्ड्रा पसान क्षेत्र से होते हुए तुमान दर्रे से आगे बिलासपुर जिले के पास कटघोरा नामक स्थान के आसपास बसे हैं, इस क्षेत्र में आने पर उनका अनेक गढ़ों से युद्ध या आपसी समझौता हुआ होगा। जिसमें से कल्चुरियों ने 18 गढ़ों पर राज आधिपत्य स्थापित कर लिया होगा, जो कालांतर में 36 गढ़ों तक पहुँच गया होगा। उल्लेखनीय है कि ये सभी गढ़ बिलासपुर जिले के ही क्षेत्र में आते थे। आगे चलकर भाषा नाम व परिस्थितियों के आधार पर क्षेत्रफल व्यापक होता गया। मैकल क्षेत्र और कल्प जनपद के खण्ड ही भाषायी आधार पर छत्तीसगढ़ के साथ जुड़ गये। इस प्रकार पेण्ड्रा, सरगुजा, रायगढ़ जो कि दक्षिण कोसल से अलग थे, छत्तीसगढ़ की सीमा में कालांतर में सम्मिलित हो गये।'[8] कई विद्वानों का अनुमान है कि छत्तीसगढ़ का नाम बहुत अधिक प्राचीन नहीं है इस नाम का प्रयोग विक्रम संवत 1550 में प्रचार-प्रसार में प्रयुक्त हुआ होगा।

हीरालाल शुक्ल व रायबहादुर जैसे विद्वानों के अनुसार- 'इस भू-क्षेत्र में कई वर्षों तक चेदिशवंशी राजाओं का राज्य रहा है, जिसके कारण इस क्षेत्र को चेदिशगढ़ कहा गया। जिसे कालांतर में छत्तीसगढ़ कहा गया। लेकिन कई विद्वान हीरालाल षुक्ल व रायबहादुर के इस मत से सहमत नहीं हैं। द्वितीय मत यह भी है कि रतनपुर के समृद्धशाली है हयवंशी राजाओं के अधीन छत्तीसगढ़ (किले) थे जिसके कारण इस क्षेत्र को छत्तीसगढ़ नाम से संबोधित किया गया।'[9]

छत्तीसगढ़-रतनपुर राज्य के छत्तीसगढ़ों में 18 गढ़ शिवनाथ नदी के उत्तार में और 18 गढ़ शिवनाथ नदी के दक्षिण में स्थित थी और यह पूरा भाग छत्तीसगढ़ संबोधित होने लगा ये किले (गढ़) निम्नलिखित हैं- 'रतनपुर, मारो, विजयपुर, पँड़रभठा, खरौद, कोटगढ़, नवागढ़, सौंठी, आखे, सेमरिया, लाफागढ़, छूरी, चाँपा, केंदा, मातिन, उपरोड़ा, पेंड्रा और कुटकुली हैं। इसी तरह शिवनाथ नदी के दक्षिण में निम्नलिखित किले विद्यमान थे- रायपुर, पाटन, सिमगा, सिंगापुर, लवन, अमोढा, दुर्ग, सरसा, सिरसा, मोहदी, खल्लारी, फिंगश्वर, सिरपुर, राजिम, सिंधनगढ़, सुअरमार, टेंगनागढ़ और सकलवार।'[10]

इन गढ़ों का अस्तित्व प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से आज भी विद्यमान है। भले ही इनके स्वरूप व नाम में बदलाव हो गया है। रायपुर व बिलासपुर जिले के गजेटियरों राजपत्रों में उल्लेख मिलता है। मि. चिश्म जो कि उस समय बिलासपुर जिले के बन्दोबस्त अधिकारी थे, उन्होंने भी अपने कई दस्तावेजों में इन गढ़ों का विवरण प्रस्तुत किया है। अनेक इतिहासकारों की जनसमुदाय एवं विद्वानों का राय है कि उक्त छत्तीस गढ़ों के आधार पर ही इस अंचल को छत्तीसगढ़ नाम दिया गया है तथा इस मान्यता व विचारधारा को किसी ने भी अस्वीकार नहीं किया एवं गढ़ों की गिनती व गणना के संबंध में विद्वानों के मत थोड़े भिन्न हैं। इससे स्पष्ट होता है कि भले ही विद्वानों के मतों में वैविध्य हो लेकिन छत्तीसगढ़ नाम का आधार ये 36 गढ़ ही है।

साहित्य में प्रयुक्त छत्तीसगढ़- हिन्दी के वे कवि जिन्होंने अपनी रचनाओं में 'छत्तीसगढ़' शब्द का प्रयोग किया है, उनकी अवधि लगभग तीन सौ वर्षों से अधिक की नहीं है। लोकसाहित्य में विवेचना के आधार पर छत्तीसगढ़ राज्य में राजा कल्याणसाय जो कि जहाँगीर और मुगल शासक अकबर के समकालीन थे कल्याणसाय के शासन में छत्तीसगढ़ी बोली विचार भाव एवं भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम थी। 'दंतेवाड़ा क्षेत्र से प्राप्त साक्ष्य अभिलेख को श्री दयाशंकर शुक्ल ने (सन् 1703) छत्तीसगढ़ी का प्रारंभिक लेख स्वीकार किया है। सन् 1724 में कल्चुरियों के अंतिम शासक राजा अमरसिंह का आरंग-अभिलेख को डॉ. विनय कुमार पाठक ने छत्तीसगढ़ी बोली, भाषा का प्रथम रूप निरूपित किया है।'[11] सिंहासन बत्तीसी के काव्यानुवाद बाबू रेवाराम कृत यविक्रम- विलास' ग्रंथ में छत्तीसगढ़ का प्रयोग इस प्रकार किया है -

'तिनके दक्षिण कोसल देसा, जहं हरि ओतु केसरी बेसा,
तासु मध्य 'छत्तीसगढ़' पावन, पुण्यभूमि सुर मुनिमनभावन।
रत्नपुरी तिनमें है नायक, कासी सम सब विधि सुखदायक।'[12]

अवधि भाषा एवं हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने अपनी रचना में रतनपुर स्पष्ट उल्लेख किया है, लेकिन 'छत्तीसगढ़' शब्द का उल्लेख हमें उनकी रचनाओं में कही पर भी नहीं मिलता-

'दाखिन दाहिने रहै तिलंगा,
उत्तर मांझ होय करह करंगा,
मांझ रतनपुर सौह दुआरा,
झारखण्ड ये बांय पहारा।'[13]

राजनैतिक संदर्भो में छत्तीसगढ़ शब्द का प्रथम प्रयोग राजा राजसिंह 1689-1712 ई. के राज्याश्रय में रहने वाले कवि गोपाल मिश्र ने अपनी कृति 'खूब तमाशा' में रतनपुर के संदर्भ में किया था-

'बरन सकल पुर देव देवता नर नारी रस रस के
बसय छत्तीसगढ़ कुरी सब दिन के रस वासी बस बस के।'[14]

छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग खैरागढ़ राज्य के सुप्रसिद्ध राजा लक्ष्मीनिधि राय के दरबार में रहने वाले चारण कवि दलराम राव ने सन् 1497 में इस प्रकार उल्लेख किया था-

'लक्ष्मीनिधि राय सुनौ चित दै, गढ़ छत्तीस में न गढ़ैया रही।
मरदुम रही नहिं मरदन के, फेर हिम्मत से न लड़ैया रही।।
भय भाव भरे सब काँप रहे, भय है नहीं जाय डरैया रही।
दलराम भनै सरकार सुनौ, नृप कोड न टाल अड़ैया रही।।'[15]

स्पष्ट है कि उक्त पंक्तियों को 1497 ई. में चारण कवि दलराम राव के द्वारा लिखी गई है, पर सच तो यह है कि वैदिक साहित्य एवं ग्रंथों में छत्तीसगढ़ नाम या शब्द का उल्लेख नहीं है। बल्कि रतनपुर, मणिपुर, चित्रांगदपुर, आदि का उल्लेख कई स्थलों पर मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ठाकुर, केदारनाथ (1982). *बस्तर भूषण.* पृ. 6.
2. कृष्णदत्त, श्री खेमराज (1904). जी गोस्वामी तुलसीदास, रामायण.पृ. 401.
3. राठौर डॉ. विद्यासिंह (2016). *शोधप्रबंध, विषय आधुनिक संदर्भ में छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का विवेचनात्मक अध्ययन*, इंदिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़. पृ. 27-28.
4. शर्मा, डॉ. पालेश्वर एवं शर्मा डॉ. अभिलाषा (2008). *छत्तीसगढ़ का सांस्कृतिक इतिहास*. पृ. 16.
5. *आर्के लॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, कनिंघम-भाग 7, पृ. 5.*
6. *रायपुर डिस्ट्रिक गजेटियर, 1909 ए.ई. नेनल पृ. 2 तथा ए.पी.*

ग्राफिक्स इंडिका भाग– 1 पृ. 45 जाज्यलदेव लेख.

7. राय बहादुर, हीरालाल (1917). *भौगोलिक नामर्स.* पृ. 2.
8. तिवारी, डॉ. राजू. *रतनपुर को सती काशाप.* पृ. 28.
9. नायडू डॉ.हनुमंत (2009). *छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का लोकतात्विक एवं मनोवैज्ञानिक अनुशीलन.* पृ. 2, 4.
10. *प्रतियोगिता सारांश, छत्तीसगढ़ समान्य ज्ञान, ईशिता प्रकाशन, सन् 2017 पृ. 10.*
11. टण्डन, डॉ. रमेश (संपादक) (2020). *लोकसाहित्य एवं छत्तीसगढ़ी साहित्य.* सर्वप्रिय प्रकाशन पृ. 157.
12. अलंग, डॉ. संजय (2018). *छत्तीसगढ़ इतिहास और संस्कृति* (तृ.सं.). एकेडेमी प्रेस इलाहाबाद, अनामिका प्रकाशन, पृ. 12.
13. शेष, डॉ. शंकर. *छत्तीसगढ़ का अध्ययन.* पृ. 6.
14. *प्रतियोगिता सारांश, छत्तीसगढ़ समान्य ज्ञान, ईशिता प्रकाशन, सन् 2017 पृ. 9.*
15. अलंग, डॉ. संजय (2018). *छत्तीसगढ़ इतिहास और संस्कृति* (तृ.सं.). एकेडेमी प्रेस इलाहाबाद, अनामिका प्रकाशन, पृ. 21

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अलवर जिले में वर्ष 2005-06 से 2018-19 के मध्य विद्यालयों के विकास का प्रतिरूप

नीतू चौधरी*   डॉ. विजय कुमार वर्मा **

* शोधार्थी (भूगोल) राजऋषि भृतहरि मत्स्य विश्वविद्यालय, अलवर (राज.) भारत
** आचार्य, बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) भारत

शोध सारांश – शिक्षा के बुनियादी ढांचे का विकास किसी क्षेत्र की सामाजिक व आर्थिक प्रगति का महत्वपूर्ण संकेतक होता है। प्रस्तुत शोध में राजस्थान के अलवर जिले में वर्ष 2005-06 से 2018-19 तक प्राथमिक, उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक/उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में हुए परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन जिला सांख्यिकी रूपरेखा 2007, 2012, 2017 व 2020 से प्राप्त द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है।परिणामों से स्पष्ट होता है, कि जिले में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में समग्र रूप से गिरावट दर्ज की गई है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, इसके विपरीत उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में वृद्धि देखी गई, विशेषकर 2010-11 के बाद। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में प्रारंभिक तीव्र वृद्धि के बाद एक गिरावट देखी गई।उपखण्डवार विश्लेषण से पता चलता है कि विद्यालयों की वृद्धि या गिरावट क्षेत्र विशेष की भौगोलिक, प्रशासनिक और नीति संबंधी परिस्थितियों पर निर्भर रही। नगरीय क्षेत्रों में शिक्षा ढांचे में कुछ समय तक वृद्धि दिखी, लेकिन बाद में वहाँ भी गिरावट देखी गई। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि अलवर जिले में शिक्षा विकास की गति असमान रही है और शैक्षिक योजनाओं के क्रियान्वयन में समयबद्धता, संतुलन एवं निगरानी की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – प्राथमिक विद्यालय, उच्च प्राथमिक विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, शैक्षिक विकास, ग्रामीण शिक्षा और शिक्षा नीति।

प्रस्तावना – शिक्षा किसी भी समाज और राष्ट्र की प्रगति का आधार स्तंभ होती है। यह न केवल मानव संसाधन का विकास करती है, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त करती है। भारत में शिक्षा के क्षेत्र में लगातार सुधार और विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है, जिसके तहत विभिन्न नीतियों और योजनाओं के माध्यम से शिक्षा तक पहुँच, गुणवत्ता और बुनियादी ढाँचे को मजबूत करने के प्रयास किए गए हैं।

राजस्थान के सिंहद्वार अलवर जिले में भी शिक्षा के स्तर को उन्नत करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं, जिसमें समय के साथ नए विद्यालयों की स्थापना और प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों को क्रमोन्नत करना सम्मिलित है, जिसके कारण समय-समय पर विद्यालयों की संख्या में परिवर्तन देखने को मिलता है। यह अध्ययन विशेष रूप से वर्ष 2005-06 से 2018-19 की अवधि पर केंद्रित है, जो कि शिक्षा के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों और सरकारी पहलों का काल रहा है। इस दौरान, शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) 2009 जैसे ऐतिहासिक कानून लागू हुए, जिससे प्राथमिक शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया। साथ ही, सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA) जैसी योजनाओं ने विद्यालयों के बुनियादी ढाँचे, नामांकन और शैक्षणिक गुणवत्ता में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

साहित्य पुनरावलोकन – शोधार्थी द्वारा यहाँ प्रस्तुत शोधकार्य से संबंधित पूर्व में किए गए शोधकार्यों की समीक्षा प्रस्तुत की गई है, यथा-

बिश्वास और अग्रवाल, (1986)[1] के अनुसार भारत में शिक्षा का विकास केवल साक्षरता बढ़ाने तक सीमित नहीं रहा है। यह स्वतंत्रता के पहले और बाद से ही सामाजिक परिवर्तन और राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा रहा है।

दास, (2011)[2] के अनुसारप्राथमिक स्तर पर बच्चों के स्कूल छोड़ने (Out-of-School) के पीछे सामाजिक-आर्थिक कारक और क्षेत्रीय असमानताएँ मुख्य कारण हैं। विशेष रूप से गरीब और ग्रामीण पृष्ठभूमि के बच्चों में 'ड्रॉप-आउट' दर अधिक देखी गई है।

ओहलान, (2013)[3] ने उल्लेख किया है कि शिक्षा और क्षेत्रीय प्रगति के बीच सीधा संबंध है। इसके शोध के अनुसार, जिन जिलों में शैक्षणिक स्तर बेहतर है, वहां सामाजिक-आर्थिक विकास भी अधिक हुआ है, जो शिक्षा को विकास का एक प्रमुख संकेतक सिद्ध करता है।

रानी, (2007)[4] ने अपने शोध में उल्लिखित किया है किमाध्यमिक शिक्षा के विस्तार के बावजूद आज भी क्षेत्रीय और सामाजिक स्तर पर काफी असमानताएँ मौजूद हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए शिक्षा नीति में समावेशी दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है।

तिलक और घोष, (2018)[5] के अनुसारशिक्षा केवल 'मानव पूंजी' बनाने का साधन नहीं है, बल्कि यह आर्थिक उत्पादकता, सामाजिक सशक्तिकरण और लोकतंत्र को मजबूत करने का आधार है।

अध्ययन क्षेत्र – भौतिक दृष्टि से अलवर जिला उत्तरी अरावली पर्वतीय प्रदेश में अवस्थित है, वहीं प्रशासनिक दृष्टि से यह जिला भारत के पश्चिम में अवस्थित राजस्थान राज्य के उत्तर-पूर्वी भाग में स्थित है। अलवर जिला 27°4' उत्तरी अक्षांश से 28°4' उत्तरी अक्षांश तथा 76°7' पूर्वी से 77° 13' पूर्वी देशान्तर के मध्य विस्तारित है। अलवर जिले का उत्तर से दक्षिणी विस्तार

RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

137 कि.मी. और पूर्व से पश्चिमी दिशा में 110 कि.मी. है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 8380 वर्ग कि.मी. है, जो राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3,42,239 वर्ग कि.मी. का 2.45 प्रतिशत भाग है।इसकी समुद्र तल से औसत ऊँचाई 271 मीटर (889 फीट) है। जिले के अधिकांश क्षेत्र पर अरावली की पहाड़ियों का विस्तार है। ये पहाड़ियाँ थानागाजी, राजगढ़ तहसीलों में अधिक विस्तारित है। जिले में साबी, रूपारेल, चुहडसिद्ध आदि प्रमुख मौसमी नदियाँ प्रवाहित होती हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार अलवर जिले की कुल जनसंख्या 36,74,179 है, जिसमें 1939026 पुरुष एवं 1735153 स्त्रियाँ है। इसी प्रकार यहाँ अनुसूचित जाति एवं जनजाति की जनसंख्या क्रमश: 653036 व 289249 अर्थात् 17.77 प्रतिशत व 7.87 प्रतिशत है।

मानचित्र-1

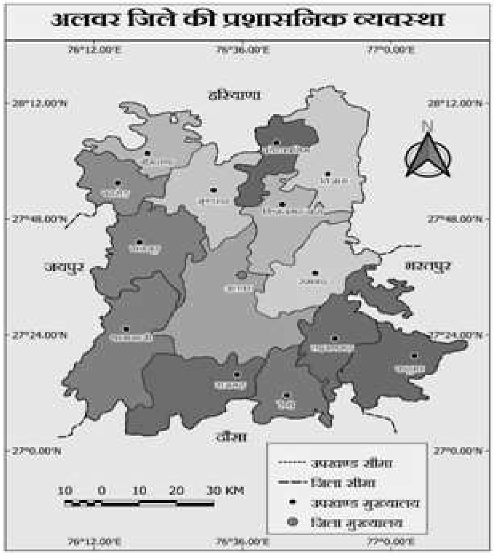

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध के उद्देश्य निम्नलिखित हैं, यथा–

1. अलवर जिले में शिक्षा के विकास के प्रतिरूप का विश्लेषण करना।
2. अलवर जिले में विद्यालयों की संख्या में समय के साथ हुए परिवर्तनों का सूक्ष्म अवलोकन प्रस्तुत करना।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध हेतु निम्न शोध परिकल्पनाओं का निर्धारण किया गया है, यथा–

1. अलवर जिले में शैक्षिक बुनियादी ढांचे का विकास ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में नगरीय क्षेत्रों में अधिक अस्थिर रहा है, जो शहरीकरण और निजी विद्यालयों की बढ़ती प्रतिस्पर्धा को दर्शाता है।
2. वर्ष 2010 के पश्चात उच्च प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में हुई वृद्धि, शिक्षा के अधिकार (RTE-2009) और श्सर्व शिक्षा अभियानश के नीतिगत हस्तक्षेपों का परिणाम है।

आँकड़ों का स्रोत एवं शोध विधि – यह शोधपत्र द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है, ये आँकड़ें जिला सांख्यिकी रूपरेखा, जिन्हें जिला सांख्यिकी विभाग, अलवर द्वारा जारी किया जाता है, से प्राप्त किये गए हैं। ये आँकड़ें 2005-06 से 2018-19 के मध्य प्रत्येक 5 वर्ष के अंतराल पर संकलित किये गए हैं। प्रस्तुत शोध एक गुणात्मक और मात्रात्मक दृष्टिकोण का मिश्रित अध्ययन है। इस शोध में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दोनों प्रकार की विधियों का उपयोग किया गया है।

शोध परिणाम एवं परिचर्चा – तालिका-1 में उल्लिखित आंकड़ों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है, कि वर्ष 2005-06 से 2018-19 के मध्य अलवर जिले के विभिन्न उपखण्डों में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में समग्र रूप से कमी दर्ज की गई है। वर्ष 2005-06 में जिले में कुल 2612 प्राथमिक विद्यालय संचालित हो रहे थे, जिनकी संख्या वर्ष 2010-11 में घटकर 2354 (9.88%) रह गई। इसके बाद वर्ष 2015-16 में यह संख्या 1410 (40.10%) पर पहुँच गई और 2018-19 तक यह और घटकर 1298 (7.94%) हो गई। यह गिरावट अधिकांशत: ग्रामीण क्षेत्रों में देखी गई है, जबकि नगरीय क्षेत्रों में एक समयावधि तक वृद्धि के संकेत भी प्राप्त हुए हैं।

ग्रामीण उपखण्डों की बात करें तो उमरैण में वर्ष 2005-06 में 201 विद्यालय थे, जो 2018-19 में घटकर 164 (18.41%) रह गए। कठूमर में यह संख्या 198 से घटकर 84 (57.58%) हो गई। किशनगढ़ बास में 156 विद्यालय थे जो 2018-19 में मात्र 68 (56.41%) बचे। इसी प्रकार कोटकासिम में विद्यालयों की संख्या 97 से घटकर 47 (51.55%) हो गई। तिजारा में वर्ष 2005-06 की तुलना में भारी गिरावट (42.60%) 2010-11 तक देखी गई, लेकिन इसके बाद थोड़ी वृद्धि हुई और अंतत: यह संख्या 154 पर आकर ठहरी, जो 2005-06 की तुलना में कुल मिलाकर 44.40% की कमी को दर्शाती है।

थानागाजी, नीमराणा और बहरोड़ में भी विद्यालयों की संख्या में उल्लेखनीय उतार-चढ़ाव हुआ। थानागाजी में 187 से घटकर 98 (47.59%) रह गए, जबकि नीमराणा में 83 से बढ़कर पहले 110 (32.53%) हुए परंतु 2018-19 तक मात्र 24 (71.08%) बचे। बहरोड़ में 124 विद्यालयों की संख्या घटकर 26 (79.03%) रह गई, परन्तु बाद में यह 56 (115.38%) तक बढ़ी, जो इस विकासखण्ड में आंशिक सुधार का संकेत देती है।

मण्डावर और राजगढ़ में भी इस अवधि में अस्थिरता देखी गई। मण्डावर में 135 विद्यालयों की संख्या पहले बढ़कर 150 (11.11%) हुई, लेकिन फिर घटकर 79 (47.41%) रह गई। वहीं राजगढ़ में पहले 194 विद्यालय थे, जो घटकर 104 (46.39%) हुए, परन्तु बाद में इनमें आंशिक वृद्धि होकर यह संख्या 121 (16.35%) पर पहुँची। रामगढ़ में भी लगातार गिरावट देखने को मिली और विद्यालयों की संख्या 202 से घटकर 104 (48.51%) रह गई। रैणी में भी स्थिति कुछ ऐसी ही रही जहाँ 156 विद्यालयों की संख्या घटकर 57 (63.46%) हो गई। लक्ष्मणगढ़ में 219 विद्यालयों की संख्या वर्ष 2018-19 में मात्र 78 (64.38%) रह गई।कुल मिलाकर ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 2454 से घटकर 1231 (49.83%) हो गई, जबकि नगरीय क्षेत्रों में 158 से पहले 254 (60.76%) तक वृद्धि हुई, लेकिन बाद में यह संख्या घटकर 67 (58.07%) हो गई। इस प्रकार पूरे अलवर जिले में प्राथमिक विद्यालयों की कुल संख्या वर्ष 2005-06 में 2612 से घटकर वर्ष 2018-19 में 1298 (50.31%) रह गई, जो यह संकेत देता है, कि जिले में प्राथमिक शिक्षा के बुनियादी ढांचे में गिरावट आई है।

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख-1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका-2 में उल्लिखित आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2005-06 से 2018-19 तक अलवर जिले में उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में समग्र रूप से वृद्धि देखी गई, जहाँ विद्यालयों की कुल संख्या 2087 से बढ़कर 2598

(24.48%) हो गई। हालांकि, यह वृद्धि एक समान नहीं रही। आरंभिक पाँच वर्षों में विद्यालयों की संख्या 1741 (-16.58%) पर घट गई थी, परंतु 2015-16 में यह 2532 (45.43%) तक पहुँची और फिर 2018-19 में आंशिक वृद्धि के साथ 2598 (2.61%) तक पहुँच गई।

ग्रामीण क्षेत्रों में कुल विद्यालयों की संख्या 1710 से घटकर 1644 (-3.86%) हो गई थी, लेकिन इसके बाद 2015-16 में यह 2054 (24.94%) तक पहुँची और 2018-19 में मामूली वृद्धि के साथ 2094 (1.95%) हो गई। नगरीय क्षेत्रों में 2005-06 में 377 विद्यालय थे, जो 2010-11 में घटकर 97 (-74.27%) रह गए, परन्तु 2015-16 में तेजी से बढ़कर 478 (392.78%) हो गए और 2018-19 में 504 (5.44%) पर पहुँच गए।

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

विकासखण्ड स्तर पर देखा जाए तो उमरैण में विद्यालयों की संख्या 101 से बढ़कर 247 (144.55%) हो गई, जबकि कोटकासिम में 111 से घटकर 84 (24.32%) रह गई। तिजारा, मण्डावर, थानागाजी, रैणी, लक्ष्मणगढ़ और बहरोड़ जैसे क्षेत्रों में कुल मिलाकर विद्यालयों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, विशेषकर मण्डावर में 146 से 174 (19.18%) और थानागाजी में 99 से 198 (100.00%) तक वृद्धि देखी गई। दूसरी ओर, बानसूर और राजगढ़ में विद्यालयों की संख्या में क्रमश: 169 से 96 (-43.20%) और 95 से 89 (-6.32%) तक गिरावट हुई।

तालिका संख्या-3 के अनुसार वर्ष 2005-06 से 2018-19 तक अलवर जिले में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में कुल मिलाकर उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई, हालांकि, यह वृद्धि एक समान नहीं रही। वर्ष 2005-06 में जिले में कुल 693 विद्यालय थे, जो 2010-11 में बढ़कर 1477 (113.13%) हो गए, फिर 2015-16 में 1670 (13.07%) तक पहुँचे, लेकिन 2018-19 में इनकी संख्या घटकर 1406 (-15.81%) रह गई।

तालिका 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की संख्या 569 से बढ़कर 2010-11 में 1229 (115.99%) हो गई थी, फिर 2015-16 में 1452 (18.14%) तक पहुँची, लेकिन इसके बाद 2018-19 में यह घटकर 1238 (-14.74%) रह गई। वहीं नगरीय क्षेत्रों में 2005-06 में 124 विद्यालय थे, जो 2010-11 में 248 (100.00%) हो गए, परंतु 2015-16 में घटकर 218 (-12.10%) और फिर 2018-19 में घटकर 168 (-22.94%) हो गए। विकासखण्ड स्तर पर देखा जाए तो अधिकांश क्षेत्रों में 2005-06 से 2010-11 के बीच विद्यालयों की संख्या में तीव्र वृद्धि हुई, जैसे बानसूर में 42 से 139 (230.95%), नीमराणा में 39 से 101 (158.97%), मण्डावर में 53 से 128 (141.51%) और थानागाजी में 40 से 97 (142.50%) हो गई। इसके बाद अधिकांश क्षेत्रों में विद्यालयों की संख्या में गिरावट देखने को मिली, विशेषत: मण्डावर में 2015-16 में 143 से घटकर 2018-19 में 87 (-39.16%) रह गई। किशनगढ़ बास, लक्ष्मणगढ़ और बानसूर में भी इसी प्रकार की गिरावट दर्ज की गई। केवल रैणी विकासखण्ड में 2005-06 से लगातार वृद्धि देखने को मिली, जहाँ विद्यालयों की संख्या 29 से बढ़कर 87 (200.00%) हो गई।

निष्कर्ष - वर्ष 2005-06 से 2018-19 तक अलवर जिले में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में समग्र रूप से गिरावट दर्ज की गई, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, जबकि नगरीय क्षेत्रों में अस्थायी वृद्धि के बाद गिरावट आई, जिसका मुख्य कारण विद्यालयों का उन्नयीकरण/ क्रमोन्नति रहा। उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में भी वृद्धि हुई, जिसमें प्रारंभिक गिरावट के पश्चात नगरीय क्षेत्रों में तीव्र वृद्धि और ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिर वृद्धि देखी गई। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में भी पर्याप्त वृद्धि दर्ज की गई, परन्तु वर्ष 2015-16 के बाद इनमें कमी आने लगी। विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न क्षेत्रों में विद्यालयों की संख्या में भिन्नता देखी गई, जहाँ कुछ क्षेत्रों में निरंतर वृद्धि हुई, वहीं कुछ क्षेत्रों में 2015 के बाद गिरावट दर्ज की गई। यह परिदृश्य दर्शाता है, कि जिले में शिक्षा के बुनियादी ढांचे में असंतुलन है, जो क्षेत्रीय, प्रशासनिक और नीतिगत कारणों से प्रभावित हुआ है। अत% क्षेत्र में शैक्षिक नीतियों के क्रियान्वयन में समयबद्धता व निगरानी के साथ-साथ क्षेत्रीय संतुलन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Biswas, A., & Agrawal, S. P. (1986). Development of education in India% A historical survey of educational documents before and after independence. Concept publishing company.
2. Das, A. (2011). Exploring the pattern and determinants out-of-schools atelementary level in India. International Journal of Child and AdolescentHealth, 4(2), 191.
3. Ohlan, R. (2013). Pattern of regional disparities in socio-economic development in India% District level analysis. Social indicators research, 114, 841-873.
4. Rani, P. G. (2007, January). Secondary education in India% Development and performance. In43rd Annual Conference of the Indian Econometric Society, IIT, Mumbai (pp. 5-7)
5. Tilak, J. B., Tilak, J. B., & Ghosh. (2018). Education and development in India. Palgrave Macmillan

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

तालिका 1: अलवर जिले में प्राथमिक विद्यालयों के विकास का प्रतिरूप, वर्ष 2005-06 से 2018-19

विकासखण्ड	प्राथमिक विद्यालय						
	2005-06	2010-11		2015-16		2018-19	
	विद्यालयों की संख्या	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2005-06 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2010-11 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों कीसंख्या	वर्ष 2015-16 की तुलना में वृद्धि
उमरैण	201	171	-14.93%	166	-2.92%	164	-1.20%
कठूमर	198	160	-19.19%	96	-40.00%	84	-12.50%
किशनगढ़ बास	156	151	-3.21%	97	-35.76%	68	-29.90%
कोटकासिम	97	84	-13.40%	47	-44.05%	47	0.00%
तिजारा	277	159	-42.60%	170	6.92%	154	-9.41%
थानागाजी	187	171	-8.56%	120	-29.82%	98	-18.33%
नीमराणा	83	110	32.53%	33	-70.00%	24	-27.27%
बहरोड़	124	116	-6.45%	26	-77.59%	56	115.38%
बानसूर	225	169	-24.89%	127	-24.85%	97	-23.62%
मण्डावर	135	150	11.11%	54	-64.00%	79	46.30%
राजगढ़	194	168	-13.40%	104	-38.10%	121	16.35%
रामगढ़	202	184	-8.91%	131	-28.80%	104	-20.61%
रैणी	156	142	-8.97%	44	-69.01%	57	29.55%
लक्ष्मणगढ़	219	165	-24.66%	112	-32.12%	78	-30.36%
कुल ग्रामीण	2454	2100	-14.43%	1327	-36.81%	1231	-7.23%
कुल नगरीय	158	254	60.76%	83	-67.32%	67	-19.28%
कुल अलवर	2612	2354	-9.88%	1410	-40.10%	1298	-7.94%

स्रोत: जिला सांख्यिकी रूपरेखा, वर्ष 2007, 2012, 2017 एवं 2020

आरेख-1

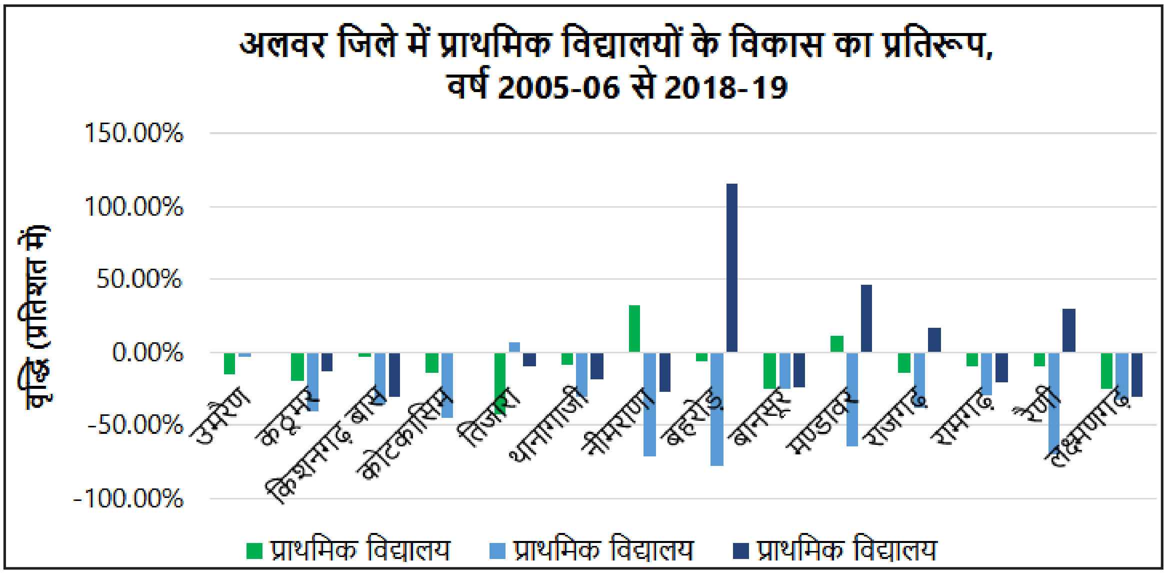

तालिका 2: अलवर जिले में उच्च प्राथमिक विद्यालयों के विकास का प्रतिरूप, वर्ष 2005-06 से 2018-19

विकासखण्ड	उच्च प्राथमिक विद्यालय						
	2005-06	2010-11		2015-16		2018-19	
	विद्यालयों की संख्या	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2005-06 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2010-11 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों कीसंख्या	वर्ष 2015-16 की तुलना में वृद्धि
उमरैण	101	144	42.57%	295	104.86%	247	-16.27%
कठूमर	150	130	-13.33%	144	10.77%	147	2.08%
किशनगढ़ बास	100	100	0.00%	154	54.00%	147	-4.55%
कोटकासिम	111	68	-38.74%	66	-2.94%	84	27.27%
तिजारा	127	193	51.97%	185	-4.15%	147	-20.54%
थानागाजी	99	134	35.35%	169	26.12%	198	17.16%
नीमराणा	108	55	-49.07%	83	50.91%	88	6.02%
बहरोड़	119	54	-54.62%	117	116.67%	147	25.64%
बानसूर	169	170	0.59%	124	-27.06%	96	-22.58%
मण्डावर	146	88	-39.73%	129	46.59%	174	34.88%
राजगढ़	95	105	10.53%	154	46.67%	89	-42.21%
रामगढ़	131	147	12.21%	172	17.01%	187	8.72%
रैणी	94	92	-2.13%	119	29.35%	159	33.61%
लक्ष्मणगढ़	160	164	2.50%	143	-12.80%	184	28.67%
कुल ग्रामीण	1710	1644	-3.86%	2054	24.94%	2094	1.95%
कुल नगरीय	377	97	-74.27%	478	392.78%	504	5.44%
कुल अलवर	2087	1741	-16.58%	2532	45.43%	2598	2.61%

स्रोत: जिला सांख्यिकी रूपरेखा, वर्ष 2007, 2012, 2017 एवं 2020

आरेख 2

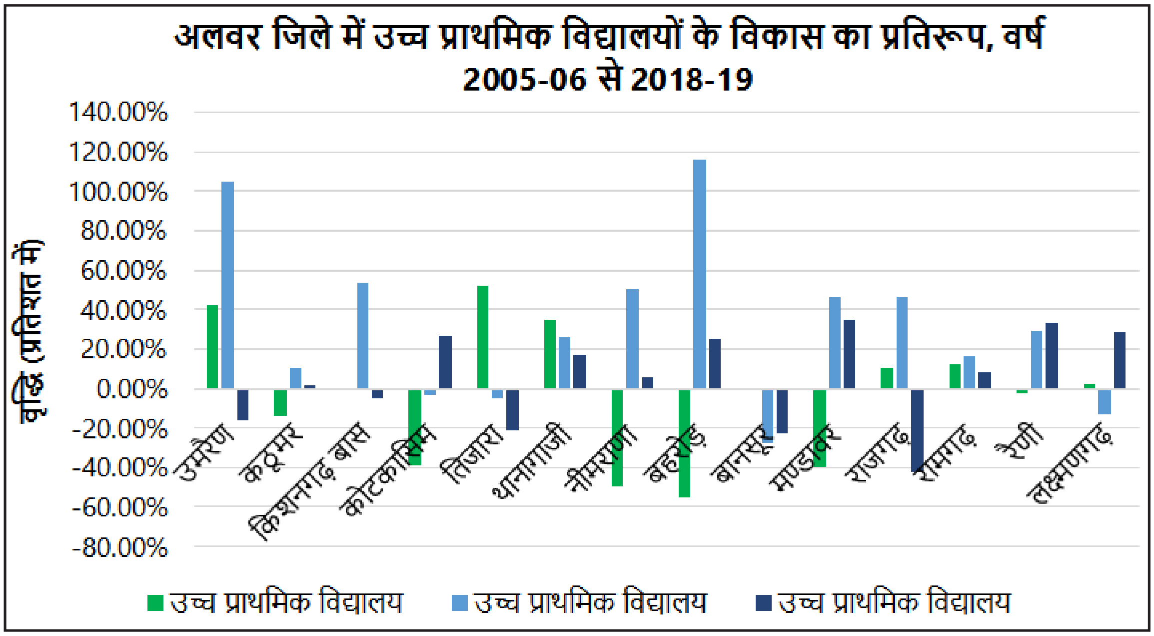

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

तालिका 3: अलवर जिले में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिकविद्यालयों के विकास का प्रतिरूप, वर्ष 2005-06 से 2018-19

विकासखण्ड	माध्यमिक एवं उच्चमाध्यमिक विद्यालय						
	2005-06	2010-11		2015-16		2018-19	
	विद्यालयों की संख्या	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2005-06 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों की संख्या	वर्ष 2010-11 की तुलना में वृद्धि	विद्यालयों कीसंख्या	वर्ष 2015-16 की तुलना में वृद्धि
उमरैण	38	81	113.16%	106	30.86%	87	-17.92%
कठूमर	50	99	98.00%	125	26.26%	114	-8.80%
किशनगढ़ बास	43	55	27.91%	77	40.00%	56	-27.27%
कोटकासिम	38	68	78.95%	74	8.82%	69	-6.76%
तिजारा	43	94	118.60%	108	14.89%	101	-6.48%
थानागाजी	40	97	142.50%	98	1.03%	85	-13.27%
नीमराणा	39	101	158.97%	110	8.91%	106	-3.64%
बहरोड़	41	90	119.51%	98	8.89%	87	-11.22%
बानसूर	42	139	230.95%	143	2.88%	121	-15.38%
मण्डावर	53	128	141.51%	143	11.72%	87	-39.16%
राजगढ़	32	52	62.50%	73	40.38%	64	-12.33%
रामगढ़	35	76	117.14%	105	38.16%	87	-17.14%
रैणी	29	53	82.76%	74	39.62%	87	17.57%
लक्ष्मणगढ़	46	96	108.70%	118	22.92%	87	-26.27%
कुल ग्रामीण	569	1229	115.99%	1452	18.14%	1238	-14.74%
कुल नगरीय	124	248	100.00%	218	-12.10%	168	-22.94%
कुल अलवर	693	1477	113.13%	1670	13.07%	1406	-15.81%

स्रोत: जिला सांख्यिकी रूपरेखा, वर्ष 2007, 2012, 2017 एवं 2020

आरेख 3

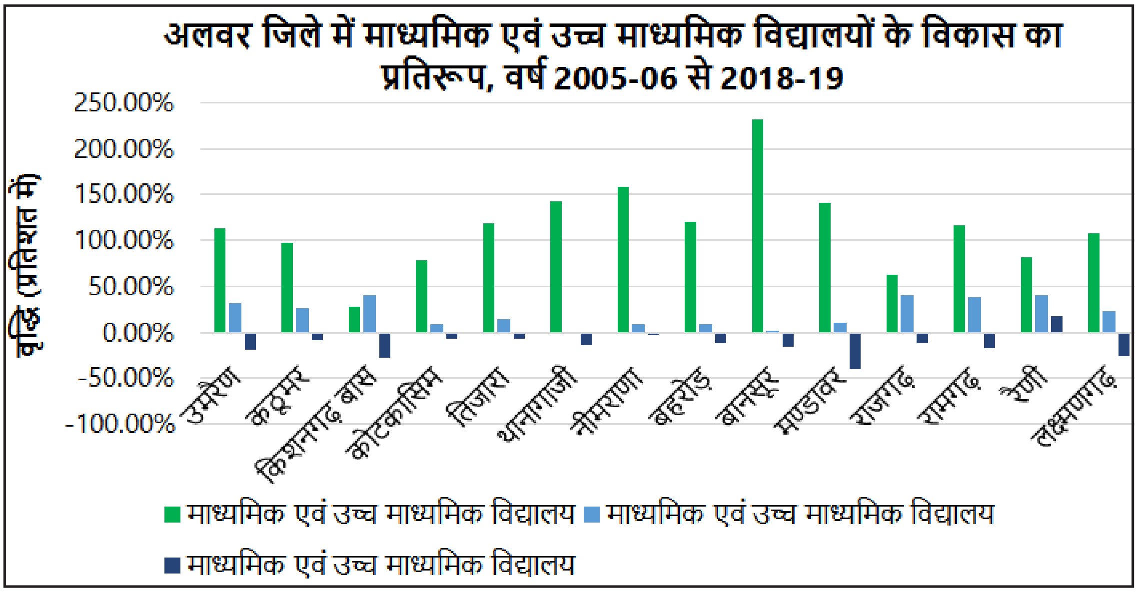

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सम्बन्ध में अध्ययन

डॉ. प्रीति ग्रोवर*   कृष्णा कुमारी**

* आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में 'उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सम्बन्ध में अध्ययन' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में हनुमानगढ़ जिले की भादरा, नोहर तहसील के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे याद्दच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता मापने के लिए श्री के. बायनी, समय नियोजन मापने के लिए श्री डी. एन. सनसनवाल तथा आत्म विश्वास मापने के लिए श्री मती रेखा गुप्ता द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया।

शब्द कुंजी – उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, तर्क योग्यता, समय नियोजन एवं आत्मविश्वास।

प्रस्तावना – वर्तमान शिक्षा प्रणाली में यह बात सर्वविदित है कि गणित, विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्र में, अंग्रेजी भाषा की शिक्षा के बिना विकास सम्भव नहीं है तथा अन्य देशों के साथ-साथ विकास करने अथवा विकास की दौड़ में स्वयं को स्थापित करने की संकल्पना सही प्रतीत होती है परन्तु हमारे देश के अधिकांश शिक्षाविदों का विचार है कि देश की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने तथा इसको जन-जन में संचरित होने के लिए शिक्षा अति आवश्यक है। वर्तमान समय में पाठ्य-पुस्तकें इत्यादि आसानी से उपलब्ध है जो छात्रों के बहुआयामी प्रगति में योगदान दे रही है तथा छात्र-छात्राओं की बौद्धिक क्षमता, तार्किक क्षमता, मानसिक सजगता को बढ़ावा दे रही है। छात्र-छात्राओं तथा अभिभावकों और शिक्षकों को भी इस बात का आभास हो गया है कि बालकों को शिक्षा प्रदान करके ही उनका बहुमुखी विकास किया जा सकता है।

वर्तमान समय में शिक्षाविदों की यह धारणा है कि वे बालक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अधिक प्रगति करते हैं, जिनमें मानसिक सजगता एवं तार्किक योग्यता अधिक पायी जाती है। अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम के छात्रों में तार्किक योग्यता के सन्दर्भ में एक समान अवधारणा नहीं है। सामान्य अवधारणा यह है कि अंग्रेजी माध्यम के छात्र-छात्राएँ, हिन्दी माध्यम के छात्र-छात्राओं से अधिक सजग एवं योग्य पाये जाते हैं जबकि तार्किक योग्यता का सम्बन्ध किसी भाषा विशेष से नहीं होता है। अध्ययन अध्यापन की भाषा का माध्यम एक नियोजित शिक्षा एवं विकास की दिशा का निर्धारक होता है। कहीं हिन्दी माध्यम से संचालित संस्थाओं का नियोजन एवं व्यवस्थापन अंग्रेजी माध्यम की अपेक्षा अनुचित तो नहीं है जिसके कारण तार्किक योग्यता प्रभावित होती है।

आधुनिक युग में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्यक्रम संबंधी तथा सहगामी क्रियाओं दोनों प्रकार की क्रियाओं एवं अनुभवों को सम्मिलित करके पाठ्यक्रम को लचीला तथा प्रगतिशील बनाने पर बल दिया जाता है। जिससे प्रत्येक बालक अपनी-अपनी रूचियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार विकसित हो सके और उसका आत्मविश्वास का विकास हो सके। आत्मविश्वासी बालक सबके साथ बोलना सही निर्णय लेना और प्रतिस्पर्धा करने के लिये तत्पर रहता है।

छात्रों का आत्मविश्वास उनके स्वयं का आकंलन, विश्लेषण पहचान उनके समय नियोजन का उनके व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करना है या नही तथा किस सीमा तक आत्मविश्वास तथा समय नियोजन आपस में संबंधित है। आत्म विश्वास ऐक ऐसा परिर्वत्य है जिसका महत्व हमारे जीवन के हर क्षेत्र में है वैसे ही समय नियोजन का भी महत्व है चाहे वह परिवार हो या समाजिक वातावरण जैसे विद्यालय, खेल का मैदन प्रतियोगिता आदि जगह पर बहुत महत्व है बिना समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सफलता प्राप्त करना आज के युग में अंसभव सा प्रतीत होना है जीवन में समय नियोजन का ना होना छात्रो में असतुष्ट, कुण्ठा, तनाव चिंता ही उत्पन्न नही करता बल्कि जीवन में आत्मघाती कदम उठाने पर की मजबुर कर देता है। सरकारी स्कूल में छात्रों की मुख्य समस्या कि उनमें निजी विद्यालय के छात्रों की तुलना में सरकारी विद्यालय में सुविधाओं की कमी, शिक्षकों का विद्यार्थीयों की तरफ उचित ध्यान ना देना आदी है ऐसी परिस्थिति में विद्यार्थियो के अंदर आत्मविश्वास की कमी हो जाती है। शोधार्थी द्वारा यह ज्ञान दिया गया कि शासकीय व्यवस्था के कारण विद्यार्थियो की मानसिक योग्यता, आत्मविश्वास आदि बातों के कारण समय नियोजन बना कर ना चल पाना। क्या तर्क योग्यता जिसमें अपनी कुशलताओं अकुशलताओं प्रबलता एवं प्रवीणता आदि का ज्ञान उनके आत्म विश्वास एवं समय नियोजन को प्रत्यक्ष

का अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना है या किसा तरह से संबंधित होता हैकि वे अपने जीवन में आत्मविश्वास एवं सयम नियोजन ही प्रवीणता को बढ़ा सके।

प्रस्तुत शोध का महत्व – विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना विद्यालय का प्रमुख कार्य होता है। यदि विद्यालय में विद्यार्थियों के संपूर्ण विकास की सामग्री उपलब्ध हो तो ही उसमें तार्किक क्षमता का विकास होता है और वह अपनी बुद्धि एवं योग्यता का उपयोग अपनी शैक्षिक उपलब्धि को विकसित करने में करता है। हर विद्यालय का वातावरण अलग-अलग होता है तथा विद्यार्थियों का मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य विद्यालय के वातावरण पर निर्भर करता है तथा उनकी मूल प्रवृत्तियों, प्रयोग एवं शोधन तथा रूचियों का स्वस्थ्य प्रकाशन एवं परिष्करण भी विद्यालय में ही होता है। विद्यालय का मुख्य कार्य विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं सामाजिक गुणों का विकास करते हुए उसे इस योग्य बनाना की वह भावी जीवन में अपने दायित्वों का निर्वाह सफलता एवं सच्चाई के साथ कर सकें। अतः स्पष्ट है कि विद्यालय का वातावरण बालक की विकासात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर होना चाहिये।

यदि बालक की इच्छाओं, रूचियों को ध्यान में रखा जाता है तो उस विद्यार्थी का मानसिक स्वास्थ्य उत्ताम रहता है किंतु यदि उसे अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर नहीं दिया जाता है और यदि उसकी विशिष्ट रूचियों का विकास करने के लिये पाठ्यक्रम सहयोगी क्रियाओं का आयोजन नहीं किया जाता है, तो उसके मानसिक उन्नति का स्पष्ट रूप से विरोधा किया जाता है। इसके अतिरिक्त विद्यालय में निरंतर भय और आतंक का वातावरण एवं जाति-भेद का बोलबाला रहता है, तो बालक का मस्तिष्क असंतुलित हो जाता है। यदि पाठ्यक्रम कब बालकों के लिये समान होता है यदि वह अत्याधिक बोझिल होता है, यदि वह बालकों की मांगों और आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं करता है, यदि वह उनकी रूचियों और क्षमताओं के प्रतिकूल होता है, तो वह उनके मानसिक योग्यता का विकास करने में पूर्णतया असफल होता है। कई अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि बालक का मानसिक स्वास्थ्य, समय नियोजन उत्ताम होने पर ही उसमें परिस्थिति के अनुसार सोचने समझने की क्षमता विकसित होती है तथा वो अपने समक्ष आने वाली समस्त समस्याओं का समाधान कर लेता है। इन समस्याओं का समाधान करने में वह अपनी तार्किक क्षमताओं का भी प्रयोग करता है। संबंधित साहित्य के गहन अध्ययन से शोधकर्ता को तर्क योग्यता, समय नियोजन एवं आत्मविश्वास से संबंधित अध्ययन को ढूंढने में सहायता मिली। तर्क योग्यता चर का शैक्षिक प्रभावशीलता, समस्या समाधान, लक्ष्य निर्धारण, आत्मविश्वास, शैक्षणिक उपलब्धि, संज्ञानात्मक जागरूकता, शिक्षण में रूचि निर्णय क्षमता समायोजन, आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया है। इसी तरह समय नियोजन का विद्यालयीन वातावरण शैक्षणिक आर्हता, विद्यालय प्रशासन, विद्यालय प्रभावशीलता, शिक्षक प्रबंधन, कार्य संपादन, शैक्षिक उपलब्धि, कार्य सन्तुष्टि आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया एवं ऐसे निष्कर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार आत्मविश्वास का तर्क योग्यता, समस्या समाधान योग्यता, शिक्षण दक्षता, कार्य सन्तुष्टि, तनाव, रूचि, क्रोध लिंग, मानसिक स्वास्थ्य, आयु, संवेगात्मक बुद्धि आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया है।

शोध कथन – उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सम्बन्ध में अध्ययन।

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या

तर्क योग्यता – तर्क चिंतन का उत्कृष्ट रूप और जटिल मानसिक प्रक्रिया है इसे साधारणतः औपचारिक नियमों से सबंद्ध किया जाता है। तर्कणा में गत अनुभवों का इस प्रकार संयोजन होता है कि समस्या समाधान हो सके यह संयोजन तभी होता है जब गत समाधानों के पुनरोत्पादन से समस्या समाधान नहीं होता है। डेवर 'तर्क चिन्तन की वह प्रक्रिया है जिसका निष्कर्ष होता है अथवा सामान्य नियमों के आधार पर समस्या समाधान होता है। कार्य करण द्वारा समस्या का निराकरण तभी होता है जब संयुक्त रूप से प्रयास करके विचारात्मक प्रारूप तैयार किया जाये एवं समस्या के होने या निराकरण के लिए प्रयास सतत किया जावे।'

समय नियोजन – समय नियोजन का हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण है समय को नियोजित करके यदि आप कोई कार्य को समय पर पूरा करते है तो आप में समय नियोजन की या समय पर कार्य करने की आदत हो जाती है एक समय की योजना बना के कार्य करने से जीवन में समय का सदुपयोग करते जाते है और जीवन में में आगे बढ़ते जाते है समय नियोजन के सत्य काम करके जीवन में सफलता की ऊंचाइयों को छु सकते है।

आत्म विश्वास – आत्मविश्वास दो शब्दों से मिलकर बना है- आत्म+विश्वास अर्थात स्वयं में विश्वास स्वयं की क्षमताओं, योग्यताओं को भलीभांति पहचाना और उसके अनुकूल अपने कार्यों को करना ही आत्मविश्वास कहलाता है।

बसन्ना के अनुसार- 'सामान्य रूप में आत्मविश्वास में अनुभव की जाने वाली कठिनाईयों को प्रभावशाली तरीके से निराकरण करने तथा सभी क्रियाओं को सही तरीकों से चलाने की एक योग्यता है।'

मर्फी- आत्मविश्वास व्यक्ति का वह रूप है जिसने वह स्वयं को जानता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नही है।
2. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श –प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में हनुमानगढ़ जिले की भादरा, नोहर तहसील के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थिया को यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :

1. तर्क योग्यता मापनी – (श्री के. बायनी)
2. समय नियोजन मापनी – (श्री डी. एन. सनसनवाल)
3. आत्म विश्वास मापनी (श्रीमती रेखा गुप्ता)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन :

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नही है।

सारणी संख्या - 1

व्याख्या :- परिकल्पना संख्या 1 के उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन सम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.025 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तार .01 तथा .05 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्री द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माधयमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं समय नियोजन में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

2. उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या - 2

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास सम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.047 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तार .01 तथा .05 पर सार्थक नहीं है अत: शोधकर्त्री द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता एवं आत्मविश्वास में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शैक्षिक सुझाव:

1. विद्यार्थियों को नियमित एवं योजनाबद्ध अध्ययन की आदत डालनी चाहिए।
2. आत्म-प्रेरणा को बढ़ाकर लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरंतर प्रयास करना चाहिए।
3. कठिनाइयों में सकारात्मक सोच बनाए रखनी चाहिए।
4. सहपाठियों के साथ समूह अध्ययन का अभ्यास करना चाहिए।
5. पढ़ाई और मनोरंजन के बीच संतुलन बनाना आवश्यक है।
6. शिक्षा में प्रौद्योगिकी का रचनात्मक उपयोग करना चाहिए।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. प्रस्तुत शोध में मात्र 600 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्त्री ने राजकीय व निजी राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों को ही शामिल किया है। आगामी शोध के लिए महाविद्यालय के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सम्बन्ध को लेकर भी लिया जा सकता है।
3. विद्यालयों के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास पर प्रभाव का अध्ययन राष्ट्रीय स्तर पर बड़ा न्यादर्श लेकर पुन: किया जा सकता है।
4. केन्द्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आर्य पी. के.'आत्मविश्वास सफलता की सीढी है' हिन्दी पुस्तिका कक्षा 6, राजस्थान पुस्तक मण्डल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. कौर नवजोत, कौर रशमीत 'किशोरों के आत्मविश्वास पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन' एजुकेशन रिसर्च
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. 'शिक्षा मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) 'शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. गर्ग, के.पी. (1990): डेवेलपमेन्ट ऑफ एबीलिटी टू रिजनिंग इन स्कूल, न्यू दिल्ली कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, पृष्ठ संख्या-30
7. पद्मा (2012). उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी तार्किक क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, एम. फिल. लघुशोध प्रबंध, सी.वी.रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर, ; छ.ग.
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता	600	47.04	11.743	0.025	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में समय नियोजन	600	139.46	12.778		

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता	600	47.04	11.743	0.047	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में आत्मविश्वास	600	27.21	9.120		

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

पद्मपुराण में लोककथाएँ और उनकी नैतिक शिक्षा : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. बालकृष्ण प्रजापति*   श्रीमती ओमवती अहिरवार**

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय एस.जी.एस. पी.जी महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला विदिशा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय संजय गांधी स्मृति स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला विदिशा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय पुराण–साहित्य केवल धार्मिक ग्रंथों का संकलन नहीं, बल्कि भारतीय समाज के नैतिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक मूल्यों का विस्तृत स्रोत है। अष्टादश महापुराणों में पद्मपुराण अपने विस्तृत आख्यान–संग्रह, लोक–कथात्मक शैली और नीति–प्रधान शिक्षाओं के लिए विशिष्ट स्थान रखता है। इस शोध–पत्र में पद्मपुराण में वर्णित लोककथाओं का विश्लेषण किया गया है सत्य, दया, करुणा, समता, पर्यावरण–संरक्षण, अहिंसा, भक्ति और परिवार–नीति जैसे नैतिक मूल्यों पर विशेष ध्यान देते हुए। संस्कृत उद्धरणों सहित यह अध्ययन इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि पद्मपुराण की लोककथाएँ भारतीय समाज के नैतिक चरित्र–निर्माण, सामाजिक सुधार और आचार–नीति को गढ़ने में महत्त्वपूर्ण रही हैं।

शब्द कुंजी – पद्मपुराण, लोककथा, नैतिक शिक्षा, धर्म, नीति, संस्कृत उद्धरण, पुराण–साहित्य।

प्रस्तावना – भारत में पुराणों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वेद पुरुषार्थों को जनसामान्य तक पहुँचाने हेतु पुराणों की रचना हुई। पद्मपुराण, जिसकी गणना अष्टादश महापुराणों में होती है, लोककथाओं, व्रतकथाओं और ऐतिहासिक आख्यानों का समृद्ध संग्रह है। पद्मपुराण के विभिन्न खण्ड सृष्टिखण्ड, भूमिखण्ड, स्वर्गखण्ड, पातालखण्ड, उत्तरखण्डकृमें अनेक कथाएँ ऐसी हैं जो लोक–विश्वासों और नैतिक आदर्शों को स्थापित करती हैं। इन कथाओं का स्वरूप अत्यन्त सरल, भावपूर्ण और शिक्षाप्रद है यही इन्हें 'लोककथा' के अंतर्गत प्रतिष्ठित करता है।

शोध की समस्या – यह शोध–पत्र निम्नलिखित समस्या को केंद्र में रखता हैकृ 'पद्मपुराण में वर्णित लोककथाएँ भारतीय समाज के नैतिक मूल्यों और आचार–व्यवस्था को किस प्रकार प्रभावित करती हैं?'

शोध के उद्देश्य :

1. पद्मपुराण की प्रमुख लोककथाओं का अध्ययन करना।
2. उन कथाओं में निहित नैतिक मूल्यों को स्पष्ट करना।
3. लोककथाओं की सामाजिक एवं सांस्कृतिक उपयोगिता का विश्लेषण।
4. संस्कृत उद्धरणों के माध्यम से कथाओं के धर्म–तत्व को स्थापित करना।

शोध–विधि :

1. पाठ विश्लेषण विधि – पद्मपुराण के विभिन्न प्रामाणिक संस्करणों में उपलब्ध कथाओं का अध्ययन।

2. द्वितीयक स्रोत–अनुसंधान–ग्रंथ, टीकाएँ, आलोचनात्मक ग्रंथ।

3. तुलनात्मक दृष्टिकोण से लोककथाओं की सामाजिक उपयोगिता का मूल्यांकन।

पद्मपुराण में लोककथाओं का स्वरूप पद्मपुराण की कथाएँ निम्न विशेषताओं से सम्पन्न हैं:

1. सरल और सुगम कथात्मक शैली
2. नैतिक संदेश का प्रकटीकरण
3. धर्म–अधर्म, सत्य–असत्य की स्पष्ट रेखा
4. लोक–जीवन, प्रकृति और व्यवहार–नीति से गहरा सम्बन्ध
5. आदर्श पात्रों के माध्यम से मार्गदर्शन

पद्मपुराण की प्रमुख लोककथाएँ एवं उनकी नैतिक शिक्षा पद्मपुराण में वर्णित प्रमुख लोककथाओं का विस्तृत विश्लेषण है—

1. सत्यभक्त ब्राह्मण की कथा – सत्य की सर्वोच्चता यह कथा उत्तारखण्ड में वर्णित है। एक निर्धन ब्राह्मण संकटों में भी सत्य का त्याग नहीं करता।

उद्धरण – 'सत्यं परं परो धर्मः, सत्ये धर्मः प्रतिष्ठितः।'

नैतिक शिक्षा –

- सत्य का पालन मनुष्य को ईश्वर के निकट ले जाता है।
- विपत्ति में भी धर्म का पालन जीवन को गौरव प्रदान करता है।
- असत्य और छल अंततः नष्ट हो जाते हैं।

2. शिवभक्त शिकारी की कथा — भक्ति का निष्कपट स्वरूप यह कथा लोक–प्रचलित भी है। शिकारी अनजाने में शिवपूजन कर लेता है और उसकी हृदय–शुद्धि होती है।

उद्धरण – 'भक्तिर्भवति सर्वेषां निष्कपटहृदये सदा।'

नैतिक शिक्षा –

- भक्ति का आधार हृदय की पवित्रता है, औपचारिकता नहीं।
- अनजाने में किया गया शुभ कर्म भी फलदायी होता है।
- अहिंसा और करूणा मनुष्य को संस्कारित करती हैं।

3. चण्डाल–धर्म कथा – समता और मानवता का संदेश इस कथा में एक चण्डाल स्त्री राजा को करुणा और समानता का पाठ पढ़ाती है।

उद्धरण – 'न जातिर्नैव वर्णोऽत्र गुणदोषौ तयोरिह।'

नैतिक शिक्षा –

- मनुष्य की श्रेष्ठता उसके कर्म में है, न कि जाति में।
- करुणा ही धर्म का मूल कारण है।

- सामाजिक अहंकार समाज को विखण्डित करता है।

4. वृक्ष-उपासना कथा — पर्यावरण संरक्षण का संदेश एक किसान पेड़ काटने जाता है, पर वनदेवी उसे रोकती है।

उद्धरण – 'वृक्षाणां संरक्षणं धर्मो महत्तमः।'

नैतिक शिक्षा –

- प्रकृति मानव जीवन का आधार है, उसकी रक्षा अनिवार्य है।
- पर्यावरण-नैतिकता पुराण युग से भारत की परम्परा है।
- वृक्षों का संरक्षण जीवन-संरक्षण का पर्याय है।

5. पतिव्रता स्त्री की कथा — निष्ठा और संयम का आदर्श इस कथा में स्त्री अपनी पवित्रता और निष्ठा की शक्ति से दुष्ट राजा को पराजित करती है।

उद्धरण – 'पातिव्रत्यमिदं स्त्रीणां परमं बलमुच्यते।'

नैतिक शिक्षा –

- निष्ठा और सत्य का बल अपराजेय है।
- स्त्री-धर्म परिवार और समाज को स्थिरता प्रदान करता है।
- दुष्टता का अंत सदैव विनाश में होता है।

नैतिक मूल्यों का समग्र विश्लेषण पद्मपुराण की कथाओं में प्रमुख नैतिक मूल्य निम्नलिखित हैं

1. सत्य 'सत्यं नास्ति परं बलम्।'
2. दया और करुणा कई कथाओं में करुणा को धर्म का मूल बताया गया है।
3. अहिंसा शिवभक्त शिकारी कथा में हिंसा का अंत भक्ति में रूपांतरित होता है।
4. समता और मानवता चण्डाल-धर्म कथा इस मूल्य का चरम रूप है।
5. पर्यावरण-संरक्षण वृक्ष-उपासना कथा में प्रकृति को धर्म का स्वरूप माना गया है।
6. एकनिष्ठ भक्ति भक्ति सरल हृदय से उत्पन्न होती है, अनुष्ठानों से नहीं।
7. स्त्री-धर्म और पारिवारिक मूल्य पातिव्रत्य कथा में स्त्री की शक्ति और नैतिकता को श्रेष्ठ बताया गया है।

सामाजिक उपयोगिता पद्मपुराण की कथाएँ :

- सामाजिक सौहार्द को बढ़ाती हैं।
- जातिगत भेदभाव को समाप्त करती हैं।
- नैतिक शिक्षा को सरल और कथात्मक में जनमानस तक पहुँचाती हैं।
- पर्यावरण-संरक्षण जैसे आधुनिक मुद्दों को धार्मिक आधार प्रदान करती हैं।
- परिवार और समाज में नैतिक अनुशासन स्थापित करती हैं।

निष्कर्ष – पद्मपुराण में वर्णित लोककथाएँ केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि भारतीय समाज की नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रीढ़ हैं। वे मनुष्य को सत्य, दया, भक्ति, अहिंसा, समता, संयम और पर्यावरण-प्रेम जैसे मूल्यों की ओर प्रेरित करती हैं। ये कथाएँ न केवल पुरातन भारत के लोकजीवन का चित्रण करती हैं, बल्कि आज के युग में भी समान रूप से प्रासंगिक हैं। अतः स्पष्ट है कि पद्मपुराण की लोककथाएँ भारतीय नैतिक दृष्टिकोण के निर्माण में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे व्यक्ति में सामाजिकता, धर्मबोध और मानवीय संवेदनाओं का विकास करती हैं। अतः यह अध्ययन भारतीय पुराण-साहित्य की अमर परम्परा का मूल्यवान साक्ष्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पद्मपुराण – गीता प्रेस, गोरखपुर संस्करण।
2. शर्मा, सत्यव्रत – महापुराणों का तुलनात्मक अध्ययन।
3. द्विवेदी, हजारीप्रसाद – भारतीय संस्कृति और पुराण कथा।
4. तिवारी, सुरेश चन्द्र – पुराणों का समाज-दर्शन।
5. शुक्ल, रामचन्द्र – लोककथा और भारतीय संस्कृति।
6. Winternitz, M.- History of Indian Literature] Vol. I–II.
7. Pargiter, F.E. - Ancient Indian Historical Tradition. वृक्षाणां संरक्षणं धर्मो महत्तमः।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

क्षेत्रीय ऐतिहासिक व्यक्तित्व : आदिवासी क्रांतिकारी, बिरजू नायक के सन्दर्भ में

डॉ. मोतीलाल अवाया*

* सहा. प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत के मध्य में अवस्थित मध्य प्रदेश सतपुड़ा और विंध्याचल पर्वतमालाओं के मध्य स्थित है। नर्मदा सबसे प्रमुख नदी हैं। मध्य प्रदेश भारत का प्रमुख राज्य की स्थापना 1 नवंबर 1956 में हुई थी यह प्रदेश 6 सांस्कृतिक क्षेत्र मालवा, निमाड, बुंदेलखंड, बघेलखंड, महाकौशल एवं चंबल में विभक्त है। 1961 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों की संख्या क्रमश: 6.45 करोड़ तथा 2.99 करोड़ है। डॉक्टर (गिरिसन) के शब्दों में कहूं तो आदिवासी लोग भारत की सभ्यता के निर्माता हैं। हिंदू धर्म बहुत महान हो सकता है, परंतु आदिवासी दर्शन प्रकृतिवाद और जातिवाद की देन है आदिवासी प्रकृति वाद कोई जादू टोना भर नहीं है, यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि केवल आदिवासी ही देश को राष्ट्रीय आत्महत्या से बचा सकते हैं।

देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावार करने वाले अनेक क्रांतिकारी को कुछ पश्चिमी इतिहासकारो ने डाकू और लूटेरे कह कर इतिहास के साथ न्याय नहीं किया है। डॉक्टर वॉरियर एल्विन ने लिखा है कि आदिवासियों की संस्कृति हमारी संस्कृति से उच्च है, उनका विचार संभावित सत्य प्रतीत होता है। जब हम भारत के इतिहास को पढ़ते हैं, कि मुगल काल में मुस्लिम आक्रमणकारियो के विरोध में आदिवासियों की सेना ने हिंदुओं का साथ दिया था। जिन्होंने देश के दूर-दराज और आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के बीच आजादी का अलख जगाने का काम किया। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने उन पर लूट-पाट, हत्या और लोगों को भड़काने का आरोप लगाकर इन्हें तरह-तरह की यातनाएं दी और बदनाम करने का प्रयाय किया। लेकिन आदिवासी क्षेत्रों की जनता ने उनकों लोकगीतों और लोक-कथाओं में इन्हें अमर बना दिया। इनमें चर्चित आदिवासी क्रांतिकारियों के नाम बिरसा मुंडा, खाज्या नायक, राजा पूजा भील, भीमा नायक, टंट्या मामा, झलकारी बाई, हल्दी बाई, शहीद वीर नारायणसिंह, रूमाल्या नायक, क्षितु किराड़, घूसिया नायक और बिरजू नायक आदि इन महापुरुषों से संबंधित भील समुदाय के लोगों द्वारा लोकगीतों के माध्यम से इतिहास में उनके योगदान के गीत गाए जाते हैं।

जिस प्रकार मछलियां पानी के बिना जीवित नहीं रह सकती उसी प्रकार आदिवासी जीवन भी गीत, संगीत, नृत्य, सभ्यता, संस्कृति व उसके इतिहास के बिना अधूरा है, भारत में आदिवासी ही इकलौता ऐसा समुदाय है जिसके पास प्रकृति वादी संस्कृति और मानवतावादी सभ्यता आज भी मौलिक रूप से संरक्षित है देश के सुप्रसिद्ध विद्वान साहित्यकार 'कमलेश्वर' ने इसलिए लिखा था कि भारत का मूल चेहरा और मूल संस्कृति सभ्यता उसके इतिहास को देखना, जानना व समझना हो तो आदिवासी क्षेत्र में कुछ दिन गुजार लो। मध्यप्रदेश के बड़वानी के राजपुर तहसील के नगर पलसुद के निकट ग्राम मटली तथा ग्राम सावरदा के बीच स्थित एक पहाड़ी पर बनी 'बाँडी हवेली' (पुराना महल) को वीर बिरजू नायक का कर्महार माना जाता है और जिन्होंने अपनी जवानी, अन्याय व तानाशाही के खिलाफ लड़ने के लिए समर्पित कर दी। सन् 1857 की क्रांति के शौर्य क्रांतिकारी एक महान योद्धा सतपुड़ा सिंधी घाटी (बड़वानी जिला) की पहाड़ियों में रहने वाले निमाड़ के आदिवासी शेर वीर योद्धा बिरजू नायक जिनका 1857 की क्रांति में योगदान से आप बहुत कम वाकिफ हैं। उन्होंने सिंधी घाटी क्षेत्र में अंग्रेजों के नाक में दम कर दिया था। निमाड़ क्षेत्र में अंग्रेजों के खिलाफ कई आदिवासी विद्रोह में अहम योगदान दिया था आज भी इन सुदूर सिंधी घाटी की पहाड़ियों में बिरजू नायक की गाथा सुनाई देती है।

कहा जाता है कि वीर वीर बिरजू नायक अपने साथियों को सूचना देने हेतु वाद्य यंत्र का उपयोग करते थे जिससे एक स्थान से दुसरे स्थान पर सूचनाओं का आदान-प्रदान करते थे उस स्थान को बेला बेड़ी के नाम से जाना जाता है। बिरजू नायक, बांडी हवेली,से अपने साथियों के साथ अंग्रेजों के विरुद्ध अपनी योजनाएं बनाकर उन्हें अंजाम देते थे। बिरजू नायक हमेशा गरीब व किसान के हितों के लिए लड़ते थे। वीर योद्धा भीमा नायक खाजा नायक और टंट्या मामा भील के साथ कई विद्रोह में सहभागी बने वे अक्सर अंग्रेजों को लूटकर सामग्री गरीबों में बांट देते थे। अपैल 1853 में जब अंग्रेज सरकार के फौजी अफसर मेजर हैसलवुड और मेजर इवान्स अपनी फौज के साथ खानदेश (धुलिया व खरगोन की सीमा पर बसे अम्बापानी गॉव) पहुँचे, जो वे अच्छी तरह से जानते थे कि खाज्या नायक व भीमा नायक के साथ होने वाली आज की मुठभैड़ खानदेश में अंग्रेजों के शासन के लिए निर्णायक साबित हो सकती है। 19वीं सदी में अंग्रेजों की साम्राज्यवादी आकांक्षाओं को पूरी करने में लगी फौज के सामने जब देश के अधिकतर स्थानीय राजा महाराजाओं ने घुटने टेक दिए थे तब देश के कुछ ही हिस्सों में कुछ स्वाभिमानी आदिवासी उनके अपनों की रक्षा के लिए लड़ रहे थे।

1857 की क्रांति में वीर खाज्या नायक, भीमा नायक व बिरजू नायक की अहम भूमिका रही। अंग्रेजों के समय में आदिवासी कई यौद्धाओं ने अपना बलिदान दिया पर आज तक उनका इतिहास किताब में एक लाइन से ज्यादा जिक्र नहीं किया है या जिक्र ही नहीं किया गया। अंग्रेजो के विरूद्ध वीर

बिरजू नायक ने अहम भूमिका निभाई वीर आदिवासी क्रांतिकारी बिरजू नायक द्वारा युवास्था में आदिवासी यौद्धाओं के साथ सिंधी घाटी क्षेत्र (जिला बड़वानी) में अंग्रेजों के विरूद्ध लाड़ाईयों में भीमा नायक व खाज्या नायक तथा उनके सहयोगीयों का सहयोग किया। बिरजू नायक व भीमा नायक की अच्छी दोस्ती रही थी बिरजू नायक हमेशा गरीब व किसानों के हितों के लिए लड़ते थे वीर योद्धा भीमानायक, खाज्या नायक और टंट्या मामा भील के साथ कई विद्रोह में भाग लिया। स्वतंत्रता सेनानी तात्या टोपै के पश्चिम निमाड़ के आगमन पर राजपुर क्षेत्र के गुप्त रास्तों से नर्मदा नदी पार कर मंजिल तक पहुँचनाने में भीमा नायक, खाज्या नायक एवं बिरजू नायक तथा साथियों का अहम योगदान था। स्वतंत्रता सेनानी तात्या टोपे के पश्चिम निमाड़ के आगमन पर राजपुर क्षेत्र के गुप्त रास्तों से नर्मदा नदी पार करवाकर मंजिल तक पहुंचने में भीमा नायक , खाज्या नायक और बिरजू नायक तथा साथियों का अहम योगदान था। इसी योगदान के बदले उन्हें वीर की उपाधि दी गई। निवाली से सिंधी-घाटी, से राजपूर तक उनका गढ़ रहा। ग्राम मटली स्थित झरने यकुंडी पर नहाने जाया करते थे। प्रतिदिन की तरह एक बार झरने 'कुंडी' पर नहाने पहुंचे थे। तभी अंग्रेजों द्वारा भेजे गए व्यक्ति द्वारा बिरजू नायक का सिर धड़ से अलग कर दिया।

बिरजू नायक 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में योगदान को देखते हुए स्थानीय स्तर पर प्रतिवर्ष 2 मई को शहीद दिवस के रूप में मनाया जाता है और प्रतिवर्ष दिपावली पर बॉडी हवेली में आदिवासी रिति-रिवाज, संस्कृति व सभ्यता परम्परा अनुसार पूजा-पाठ की जाती है और आदिवासीयों के मान, सम्मान स्वाभिमान का प्रतीक 200 पगड़ी भी गरीबों को बॉटी जाती है आज ऐसे ही क्षेत्रीय इतिहास को सहजने और सवारने की आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मालवा वीर की कहानी : मनोहर जायसवाल
2. विकास यात्रा (पत्रिका 2008)
3. म.प्र. ज्ञान सम्पदा : म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी
4. भारत 1965 प्रकाशन विभाग, सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
5. दैनिक भास्कर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

श्री गुरू गोविंद सिंह जी और श्री अर्जन देव जी के सामाजिक और शैक्षिक विचारों का अध्ययन

डॉ. प्रीती ग्रोवर*   गगनदीप कौर**

* प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय,श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – विश्व की बलिदानी परम्परा में अद्धितीय होने के साथ-साथ गुरु गोविंद सिंह एक महान लेखक, मौलिक चिन्तक तथा संस्कृत सहित कई भाषाओं के ज्ञाता भी थे। उन्होंने धर्म की रक्षा के लिए 'शब्द और शस्त्र' के महत्व पर जोर दिया। गुरुजी ने जाति-पाति मिटाकर सभी को एकजुट किया, 'पंज-प्यारे' बनाकर गुरु-शिष्य की समानता स्थापित की और 'पांच ककार' के माध्यम से एक अनुशासित, आत्मविश्वासी और धर्मनिष्ठ समाज का निर्माण किया, जो मानवता की रक्षा और धर्म की स्थापना के लिए समर्पित था।

'शहीदों के सरताज' श्री गुरु अर्जुन देव जी ने समाज को सच्चाई, धार्मिक स्वतंत्रता और निडरता का मार्ग दिखाया। सामाजिक समरसता के कार्य किए और 'दसवंध व्यवस्था' स्थापित की, जिससे गुरुद्धारों में लंगर प्रथा और सुव्यवस्थित तरीके से शुरु किया, जो उनके जन-कल्याण और संस्कृति के प्रतीक जीवन को दर्शाता है।

शब्द कुंजी – पंज प्यारे, पांच ककार, दसवंध व्यवस्था, लंगर प्रथा।

श्री गुर गोविंद सिंह जी के शैक्षिक विचार – श्री गुरु गोविंद सिंह जी ने शिक्षा को केवल किताबी ज्ञान तक सीमित नहीं रखा। बल्कि इसे जीवन जीने का एक तरीका बनाया, जहां व्यक्ति साहसी, निडर, समाज के प्रति जागरुक और आध्यात्मिक रूप से मजबूत बने। उनकी शिक्षाएँ आज भी हर व्यक्ति को एक सार्थक और उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रेरित करती है।

गुरु जी की शिक्षाएँ साहस, न्याय, समानता और निस्वार्थ सेवा पर केन्द्रित थी। उन्होंने सिखाया कि ज्ञान प्राप्त करने के लिए भौतिक माह से दूर रहना और समाज की सेवा करना आवश्यक है, जिसके लिए उन्होंने खालसा पंथ की स्थापना की और 'चिड़िया नाल मैं बाज लड़ाऊ' जैसी पंक्तियों के माध्यम से अन्याय के खिलाफ खड़े होने की प्रेरणा दी।

श्री गुरु अर्जनदेव जी के शैक्षिक विचार – श्री गुरु अर्जनदेव जी के शैक्षिक विचार आज भी अत्यन्त उपयोगी हैं, क्योंकि वे समानता, निस्वार्थ सेवा, सच्ची भक्ति और अंतर-धार्मिक सद्भाव पर जोर देते हैं, जो आधुनिक शिक्षा के लिए नैतिक और आध्यात्मिक आधार प्रदान करते हैं, उनके द्धारा गुरु ग्रंथ साहिब का संकलन, ज्ञान के सार्वभौमिकरण और समावेशी शिक्षा का एक मॉडल है, जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास को बढ़ावा देते हैं, जिससे आज के जटिल समाज में करूणा, न्याय और उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त होता है।

श्री गुरु गोविंद सिंह जी के सामाजिक विचार – श्री गुरु गोविंद सिंह जी के सामाजिक विचार मानवता, समानता, न्याय और नि:स्वार्थ सेवा पर आधारित थे, जिन्होंने सभी जातियों को एक समान माना, जरूरतमंदों की मदद पर जोर दिया और अन्याय के खिलाफ लड़ने के लिए एक संत-सैनिक की अवधारणा दी, जिससे समाज में भाई-चारा और मानवीय मूल्यों को बढ़ावा मिला।

श्री गुरु अर्जनदेव जी के सामाजिक विचार – श्री गुरु अर्जनदेव जी के सामाजिक विचारों में मानवीय समानता, जातिवाद और अंधविश्वास का खंडन, जन कल्याण, सेवाभाव और सभी धर्मों के प्रति आदर प्रमुख थे, जिन्होंने 'आदि ग्रंथ' का संकलन कर और स्वर्ण मन्दिर का निर्माण कर समाज को एक मजबूत आध्यात्मिक और सामाजिक आधार दिया, जहां हर कोई बिना भेद-भाव के आता-जाता था। उन्होंने धार्मिक आडंबरों पर प्रहार किया और मानवता के लिए यसुखमनी साहिब जैसी बाणी रची, जो जीवन को सच्ची राह दिखाती है।

शोध के उद्देश्य :

1. श्री गुरु गोविंद सिंह जी द्धारा जाति, वर्ण में भेदभाव को मिटाने के प्रयासों के बारे में अवगत करवाना।
2. शिक्षा के क्षेत्र में एक महान विभूति के रूप में श्री गुरु गोविंद सिंह जी के जीवन दर्शन को प्रदर्शित करना।
3. श्री गुरु गोविंद सिंह जी के सामाजिक, शैक्षिक विचारों की शिक्षा में उपयोगिता का अध्ययन करना।
4. श्री गुरु अर्जन देव जी के विचारों का वर्तमान स्त्री शिक्षा में महत्व का अध्ययन करना।
5. श्री गुरु अर्जन देव जी के विचारों की विद्यार्थी जीवन में उपयोगिता का अध्ययन करना।
6. श्री गुरु अर्जन देव जी द्धारा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए किये गये प्रयासों से अवगत करवाना।

शोध विधि – श्री गुरु गोविंद सिंह जी और श्री गुरु अर्जन देव जी ने मुख्य रूप से मौखिक शिक्षा, गुरबाणी (शब्द) के माध्यम से शिक्षण, आध्यात्मिक ज्ञान, धार्मिक ग्रंथों के संकलन और 'बाणी पर ध्यान' जैसी विधियों का

उपयोग किया। इसके साथ ही उन्होंने प्रवचन विधि, व्याख्यान विधि, प्रश्नोत्तर विधि, श्रवण एवं मनन विधि व परामर्श विधि का प्रत्यक्ष व व्यवहारिक प्रयोग किया। उपरोक्त विधियाँ वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी उपयोगी हैं।

निष्कर्ष – श्री गुरु गोविंद सिंह जी और श्री गुरु अर्जन देव जी के विचारों, जिनमें एकता, समानता, न्यास, नि:स्वार्थ सेवा, ईमानदारी और साहस, जो वर्तमान समय में प्रासंगिक है, क्योंकि ये शिक्षाएँ हमें स्वार्थ त्यागने, धर्म और मानवता के लिए लड़ने और 'राष्ट्र प्रथम' के सिद्धान्तों का पालन कर एक बेहतर समाज बनाने की प्रेरणा देती है, जैसा कि गुरु अर्जन देव जी की शहादत और गुरु गोविंद सिंह जी के खालसा के माध्यम से हमें दिखाई देती है।

भावी शोधकर्त्ताओं हेतु सुझाव – वर्तमान शोध इन गुरुओं के विचारों की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता तक सीमित है। भावी शोध इन गुरुओं के सम्पूर्ण जीवन दर्शन पर भी किया जा सकता है। इसके साथ–साथ हम इन गुरुओं के विचारों का आधुनिक समाज पर प्रभाव विषय पर भी शोध कार्य कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डी.एस. ढिल्लों (1988) सिखिज्म ओरिजन एण्ड डवलपमैंट, अटलांटिक पब्लिशर्स, पृष्ठ 213–215, 204–207
2. पशोरा सिंह (2005) गुरु अर्जन की शहादत को समझना, बेबैक मशीन पर संग्रहित, जर्नल ऑफ फिलॉसॉफिकल सोसायटी, 12 (1), पृष्ठ 32–33
3. प्रो. कृपाल सिंह बढूंगर, 'बादशाह दरवेश शाह सरबंसदानी साहिब श्री गुरु गोविंद सिंह जी' धर्म प्रचार कमेटी, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, श्री अमृतसर।
4. मुखतार सिंह गुराइया, 'संक्षेप जीवनी श्री गुरु अर्जन देव जी', प्रकाशक ऑल इण्डिया पिंगलवाड़ा चैरिटेबल सोसायटी, अमृतसर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति : एक अध्ययन

डॉ. सुमन रानी* पवनप्रीत कौर**

* सह आचार्य (शिक्षा) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – मानव मातृत्व अथवा विश्व बंधुत्व मानवता का मूल आदर्श है, जिसकी प्राप्ति के लिए मनुष्य में मानवता की भावना का होना अनिवार्य है। मानवता की भावना के तहत मानव को महत्त्व दिया जाता है।

मानवता मूलत: मानव केन्द्रित अवधारणा है। जिसमें मानव और उसकी समस्याओं को अधिक महत्त्व दिया जाता है। अत: मानवता से अभिप्राय मानव की स्वतंत्रता, समानता, मानवाधिकार, न्याय तथा विश्व-बंधुत्व की भावना के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करना है।

मानवतावाद– साम्प्रदायिकता व जातिवाद की भावना से ऊपर उठकर मानवतावादी धारणा का विकास शिक्षक व शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। इस हेतु शिक्षकों को उचित प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। देश के नागरिकों को जागरूक करने तथा मानवता की भावना का विकास करने के लिए उन्हें सचेत करना जरूरी है। यह जागरूकता शिक्षा के माध्यम से ही लाई जा सकती है। परन्तु इस हेतु सर्वप्रथम शिक्षकों को जगरूक करना अनिवार्य है। मानवता के विकास में बाधा उत्पन्न करने वाले कारकों में कहीं न कहीं साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद का ही योगदान रहा है।

अध्ययन की आवश्यकता एव महत्त्व – मानवता, सहिष्णुता और जातिवाद के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य है। देश के नागरिकों में जागरूकता और मानवीय मूल्यों का विकास आवश्यक है। जिससे शिक्षा के माध्यम से ही संभव बनाया जा सकता है। विशेष रूप से शिक्षक और शिक्षक-प्रशिक्षण प्राप्त कर रहक छात्र-छात्राओं में इन मूल्यों का विकास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

समाज में जातिवाद एक गम्भीर समस्या बन चुका है। जिससे सामाजिक एकता प्रभावित होती है। शिक्षा के माध्यम से समानता, सहानुभूति और मानवतावादी दृष्टिकोण को बढ़ावा देकर इस समस्या को कम किया जा सकता है। शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं की भूमिका इसमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि वहीं से भावी शिक्षकों की सोच और दृष्टि का निर्माण होता है।

शोध के उद्देश्य :

1. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति को जानना है।
2. शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति को जानना है।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ :

1. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति में लिंग के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के प्रशिक्षणार्थियों में लिंग के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति में क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के प्रशिक्षणार्थियों में क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि – शोध कार्य के लिए अध्ययन विधि एक संरचना और व्यूह रचना तैयार करती है। जिससे शोध किया जाता है। प्रस्तुत अध्ययन में मूल रूप से मानवतावाद के प्रति प्रशिक्षणार्थियों की अभिवृत्ति को जानने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध के लिए शोध कार्य की प्रकृति को दृष्टिगोचर करते हुए सर्वेक्षण विधि को प्रयुक्त करने का निश्चय किया है।

निष्कर्ष – मानवतावाद एक ऐसी धारणा है, जो मनुष्य में मानवता के प्रति प्रेम व लगाव का विकास करती है। शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में मानवतावादी धारणा का विकास किया जा सकता है। इसके लिए शिक्षकों का सहयोग आवश्यक है। भावी अध्यापकों को इस हेतु उचित शिक्षा व प्रशिक्षण देने से पहले उनकी मानवतावादी धारणा को जानना जरूरी है।

मानवतावाद धारणा देश के विकास में अहम भूमिका अदा करती है। इसलिए देश के भावी शिक्षकों की मानवतावादी दृष्टिकोण को जानना जरूरी है। इस शोध के माध्यम से निष्कर्ष निकाला गया है कि महिला व पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की मानवतावादी अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

भावी शोधकर्ताओं हेतु सुझाव– विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति को जानने की आवश्यकता है। इसमें आगामी अध्ययन किया जाना चाहिए। विभिन्न विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की मानवतावाद के प्रति अभिवृत्ति का भी आगामी शोध के अन्तर्गत अध्ययन

सम्भव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भारतीय शिक्षा का स्वरूप- दीनानाथ बत्रा
2. भारत में शिक्षा के बढ़ते कदम- मदन सिंह
3. भटागर, सुरेश, आधुनिक भारतीय शिक्षा और उनकी समस्याएँ, आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ संस्करण 2005
4. दवे शैली- उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रति अभिवृत्ति व अभिरूचि का अध्ययन, 2007
5. नया शिक्षक, द क्वालिटी जनरल ऑफ द डायरेक्ट्रेट ऑफ प्राइमरी एण्ड सैकण्डरी एज्युकेशन, बीकानेर, 2014

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LII (52), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

विकसित भारत विजन 2047 : राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की केंद्रीय भूमिका एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. प्रवीण कुमार सोनी*

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, माकडोन, जिला उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत ने 2047 तक अपनी स्वतंत्रता के 100 वर्ष पूरे होने पर, एक विकसित राष्ट्र बनने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति केवल बुनियादी ढांचे या औद्योगिक विकास से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए मानव पूंजी का इष्टतम उपयोग आवश्यक है। भारत की लगभग आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाएं इस यात्रा में केवल लाभार्थी नहीं, बल्कि नेतृत्वकर्ता हैं। यह शोध पत्र विकसित भारत 2047 के संदर्भ में महिलाओं की बहुआयामी भूमिका, आर्थिक योगदान, सामाजिक परिवर्तन, नेतृत्व और तकनीकी नवाचार का विश्लेषण करता है। साथ ही यह उन बाधाओं की पहचान करता है जिन्हें दूर करना अनिवार्य है ताकि भारत सही मायनों में समावेशी विकास हासिल कर सके। यह शोध विकसित भारत विजन 2047 के लक्ष्य को पाने में भारतीय महिलाओं की भूमिका एवं महिला शिक्षा और सशक्तिकरण का देश के आर्थिक विकास पर होने वाले महत्वपूर्ण प्रभावों का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन सिद्ध करता है कि महिला शिक्षा से न सिर्फ महिलाओं के व्यक्तिगत जीवन स्तर में सुधार होता है, बल्कि यह एक देश के आर्थिक विकास के विभिन्न तत्वों जैसे सकल घरेलू उत्पाद, उत्पादन क्षमता और गरीबी की दर पर भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सकारात्मक प्रभाव डालती है।

शब्द कुंजी – विकसित भारत, महिला शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, आर्थिक विकास, सकल घरेलू उत्पाद, मानव पूंजी, श्रम बल भागीदारी, उद्यमिता,गरीबी उन्मूलन, समावेशी विकास।

प्रस्तावना – प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा परिकल्पित विकसित भारत 2047 का विजन भारत को एक समृद्ध, आत्मनिर्भर और वैश्विक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने का रोडमैप है। इस विजन के केंद्र में नारी शक्ति की अवधारणा है। पिछले कुछ दशकों में, भारत ने महिलाओं के विकास से महिलाओं के नेतृत्व वाले विकास की ओर एक महत्वपूर्ण प्रतिमान बदलाव देखा है।

विश्व बैंक और आईएमएफ जैसे वैश्विक संस्थानों का मानना है कि यदि भारत अपनी महिला श्रम शक्ति भागीदारी को पुरुषों के बराबर ले आए, तो देश की जीडीपी में भारी उछाल आ सकता है। 2047 तक 30 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने का सपना तब तक अधूरा है जब तक महिलाएं अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में कृषि से लेकर एयरोस्पेस तक समान भागीदार नहीं बनतीं। यह शोध पत्र इस बात की पड़ताल करता है कि कैसे महिलाएं भारत की जनसांख्यिकीय लाभांश को आर्थिक महाशक्ति में बदल सकती हैं।

शोध का उद्देश्य – इस शोध पत्र का प्राथमिक उद्देश्य निम्नलिखित बिंदुओं का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करना है:

1. आर्थिक सशक्तिकरण और जीडीपी में महिलाओं के योगदान का अध्ययन करना।
2. विजन 2047 के लक्ष्य प्राप्ति में महिलाओं की भूमिका का अध्ययन करना।
3. महिला सशक्तिकरण के संबंध में चुनौतियों एवं बाधाओं का अध्ययन करना।
4. विकसित भारत विजन 2047 के लिए रोडमेप का अध्ययन करना।

आर्थिक सशक्तिकरण और जीडीपी में महिलाओं का योगदान– विकसित भारत का आधार एक मजबूत अर्थव्यवस्था है। महिलाओं की आर्थिक भूमिका को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

श्रम शक्ति भागीदारी – वर्तमान में भारत में महिला श्रम शक्ति भागीदारी में सुधार हो रहा है, लेकिन यह अभी भी वैश्विक औसत से कम है। विकसित भारत 2047 के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए महिला श्रम शक्ति भागीदारी को 50 प्रतिशत से ऊपर ले जाने का प्रयास होना चाहिए। मैकिन्से ग्लोबल इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में महिलाओं की कार्यबल में भागीदारी बढ़ाकर 2025 तक जीडीपी में 770 बिलियन डॉलर जोड़ा जा सकता है, और 2047 तक यह आंकड़ा कई गुना बढ़ सकता है।

उद्यमिता और स्टार्टअप्स – भारत आज दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप इकोसिस्टम है। इसमें महिला उद्यमियों की हिस्सेदारी बढ़ रही है। भारतीय महिला उद्यमी फाल्गुनी नायर द्वारा स्थापित नायका जैसी कंपनियों की सफलता ने साबित कर दिया है कि महिलाएं बड़े पैमाने पर रोजगार सृजन कर सकती हैं।

MSME – आज भारत में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों में महिलाओं का नेतृत्व ग्रामीण और अर्ध–शहरी अर्थव्यवस्था की रीढ़ है।

लखपति दीदी योजना– स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाने की यह पहल 2047 तक ग्रामीण

अर्थव्यवस्था का चेहरा बदल देगी। जब एक महिला कमाती है, तो वह अपनी आय का 90 प्रतिशत भाग अपने परिवार और समुदाय पर खर्च करती है, जिससे मानव विकास सूचकांक (HDI) में सुधार होता है।

गिग इकोनॉमी और केयर इकोनॉमी – वैश्विक अर्थव्यवस्था का भविष्य गिग इकोनॉमी और केयर इकोनॉमी पर निर्भर होगा। कॉरापोरेट जगत के नये प्रयोग जैसे वर्क–फ्रॉम–होम और फ्लेक्सी–आर्स महिलाओं के लिए नए अवसर खोल रहे हैं। इसके अलावा भारत की केयर इकोनॉमी को औपचारिक रूप देने की आवश्यकता है। महिलाएं, जो अक्सर अवैतनिक देखभाल कार्य करती हैं, यदि उसे जीडीपी में गिना जाए या उसे मुद्रीकृत किया जाए, तो आर्थिक आंकड़े बदल जाएंगे।

सामाजिक विकास और मानव पूंजी– वैश्विक स्तर पर मानव पूंजी किसी भी राष्ट्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास की आधारशिला है। इस पूंजी का एक अभिन्न और प्राय: उपेक्षित हिस्सा महिलाएँ हैं। जब किसी देश की आधी आबादी को शिक्षा और अवसरों से वंचित रखा जाता है, तो उस देश की विकास क्षमता स्वत: ही सीमित हो जाती है। महिला शिक्षा और उनके सशक्तिकरण को केवल सामाजिक न्याय का मुद्दा मानना एक अधूरी समझ है, यह वास्तव में एक शक्तिशाली आर्थिक अनिवार्यता है। एक विकसित राष्ट्र केवल धन से नहीं, बल्कि अपने नागरिकों के सामाजिक जीवन स्तर से परिभाषित होता है।

शिक्षा और कौशल विकास – नई शिक्षा नीति (2020) में लैंगिक समानता पर जोर दिया गया है। उच्च शिक्षा में महिलाओं का सकल नामांकन अनुपात अब पुरुषों से आगे निकल रहा है।

STEM में भूमिका– विज्ञान, तकनीक, इंजीनियरिंग और गणित (STEM) में भारतीय महिलाओं का प्रतिशत 43 है जो कई विकसित देशों जैसे अमेरिका, यूके से भी अधिक है। 2047 के भारत में, ये महिलाएं अनुसंधान और नवाचार (R&D) का नेतृत्व करेंगी।

स्वास्थ्य और पोषण – शिक्षित माताएँ स्वास्थ्य सेवाओं का बेहतर उपयोग करती हैं, पोषण संबंधी जानकारी रखती हैं, और स्वच्छता पर अधिक ध्यान देती हैं। इससे शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु दर में उल्लेखनीय कमी आती है। भारत में मातृ मृत्यु दर में गिरावट एक सकारात्मक संकेत है। 2047 तक भारत को कुपोषण मुक्त और एनीमिया मुक्त बनाने में माताओं और आशा कार्यकर्ताओं की भूमिका निर्णायक होगी। स्वस्थ कार्यबल ही उत्पादक कार्यबल बन सकता है।

राजनीतिक नेतृत्व और नीति निर्माण – जब महिलाएँ राजनीतिक और सामाजिक रूप से सशक्त होती हैं, तो यह सीधे आर्थिक परिणामों को प्रभावित करता है।

बेहतर शासन और कम भ्रष्टाचार – अध्ययनों से पता चला है कि स्थानीय शासन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ने से सार्वजनिक वस्तुओं (जैसे पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य) के आवंटन में अधिक पारदर्शिता आती है और भ्रष्टाचार में कमी आती है।

नारी शक्ति वंदन अधिनियम (महिला आरक्षण विधेयक) का पारित होना भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में एक अभूतपूर्व क्षण है।

संसद और विधानसभाओं में प्रतिनिधित्व – लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण यह सुनिश्चित करेगा कि नीति निर्माण में महिलाओं का दृष्टिकोण शामिल हो। 2047 तक हम उम्मीद कर सकते हैं कि देश की विदेश नीति, रक्षा नीति और आर्थिक बजट बनाने में महिलाओं की समान भागीदारी होगी।

जमीनी स्तर पर नेतृत्व – पंचायती राज संस्थाओं में पहले से ही महिलाओं को आरक्षण प्राप्त है। बिहार और अन्य राज्यों के उदाहरण दिखाते हैं कि महिला प्रधान और सरपंच अक्सर शिक्षा, स्वच्छता और शराबबंदी जैसे मुद्दों को प्राथमिकता देती हैं, जो सीधे तौर पर सामाजिक उत्थान से जुड़े हैं। 2047 का भारत बॉटम–अप (नीचे से ऊपर) शासन मॉडल पर आधारित होगा, जिसका नेतृत्व ग्रामीण महिलाएं करेंगी।

विज्ञान, तकनीक और रक्षा क्षेत्र

अंतरिक्ष और विज्ञान – चंद्रयान–3 और मंगलयान मिशनों में महिला वैज्ञानिकों की सफलता ने यह साबित कर दिया है कि रॉकेट वुमन भारत को अंतरिक्ष महाशक्ति बनाने के लिए तैयार हैं। 2047 तक, भारत के अपने स्पेस स्टेशन और अंतरग्रहीय मिशनों में महिलाओं की भूमिका प्रमुख होगी।

रक्षा और सुरक्षा – अब महिलाएं भारतीय सेना की लड़ाकू इकाइयों, फाइटर पायलट और नौसेना के युद्धपोतों पर तैनात हो रही हैं। ऑपरेशन सिंदूर के दौरान कर्नल सौफिया कुरेशी और विंग कमांडर व्योमिका सिंह जैसी साहसी महिलाओं का दम पूरे विश्व ने देखा है। निश्चित रूप से 2047 तक भारत की रक्षा रणनीति में लैंगिक बाधाएं पूरी तरह समाप्त हो चुकी होंगी, जिससे एक आधुनिक और समावेशी सेना का निर्माण होगा।

डिजिटल भारत और ड्रोन दीदी – कृषि में तकनीक का उपयोग बढ़ाने के लिए नमो ड्रोन दीदी जैसी पहल क्रांतिकारी है। ग्रामीण महिलाएं ड्रोन पायलट बन रही हैं, जो खेती को आधुनिक बना रहा है। यह तकनीक और परंपरा का अद्भुत संगम है जो विकसित भारत की कृषि उत्पादकता को बढ़ाएगा।

चुनौतियां और बाधाएं – यद्यपि विजन स्पष्ट है, लेकिन 2047 की राह में कई चुनौतियां भी हैं जिनका समाधान आवश्यक है–

सामाजिक मानदंड और पितृसत्ता – अभी भी समाज के एक बड़े हिस्से में पितृसत्तात्मक सोच हावी है जो महिलाओं को घर की चारदीवारी तक सीमित रखना चाहती है।

सुरक्षा और हिंसा– कार्यस्थलों और सार्वजनिक स्थानों पर सुरक्षा की कमी महिलाओं को श्रम बल में शामिल होने से हतोत्साहित करती है।

वेतन अंतराल – भारत में समान काम के लिए समान वेतन अभी भी पूरी तरह लागू नहीं हो पाया है। इसे लागू करना देश के आर्थिक विकास के लिये अत्यंत आवश्यक है।

डिजिटल असमानता– ग्रामीण और शहरी महिलाओं के बीच डिजिटल साक्षरता का अंतर एक बड़ी चुनौती है।

दोहरा बोझ– कामकाजी महिलाओं पर अक्सर घर और दफ्तर दोनों की जिम्मेदारियों का दोहरा बोझ होता है।

भविष्य का रोडमैप – 2047 के लिए रणनीतियां – विकसित भारत के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है–

3E Model : Education, Employment, Empowerment

Education शिक्षा– केवल साक्षरता नहीं, बल्कि वित्तीय और डिजिटल साक्षरता पर जोर।

Employment रोजगार– कार्यस्थलों पर सुरक्षा सुविधा, सुरक्षित परिवहन और मातृत्व अवकाश के बाद वापसी के आसान कार्यक्रम।

Empowerment सशक्तिकरण– निर्णय लेने की क्षमता और संपत्ति के अधिकार में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना।

जेंडर बजटिंग – सरकार को हर मंत्रालय के बजट में जेंडर ऑडिट अनिवार्य करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि संसाधनों का लाभ महिलाओं तक समान रूप से पहुंच रहा है।

केयर वर्क का पुनर्मूल्यांकन – घरेलू काम में पुरुषों की भागीदारी बढ़ाना और अवैतनिक कार्य को मान्यता देना। इसे एक सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि केवल महिला के कर्तव्य के रूप में।

सुरक्षा का बुनियादी ढांचा – स्मार्ट पुलिसिंग, फास्ट-ट्रैक कोर्ट्स और टेक्नोलॉजी का उपयोग करके महिलाओं के लिए भय-मुक्त वातावरण बनाना होगा।

निष्कर्ष – यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता- (जहां नारियों की पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं) - इस प्राचीन भारतीय आदर्श को आधुनिक संदर्भ में महिला नेतृत्व वाले विकास के रूप में देखने की आवश्यकता है।

विकसित भारत 2047 केवल ऊंची इमारतों, बुलेट ट्रेनों या ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था के बारे में नहीं है, यह एक ऐसे समाज के निर्माण के बारे में है जहां हर महिला को अपनी क्षमता का एहसास करने का अवसर मिले। जब एक महिला सशक्त होती है, तो वह केवल अपना नहीं, बल्कि पूरे परिवार, समाज और राष्ट्र का भाग्य बदल देती है।

अमृत काल (2022-2047) का यह कालखंड कर्तव्य काल है। भारत की महिलाएं अब अबला नहीं, सबला हैं, वे अब सहायता की नहीं, अवसर की मांग कर रही हैं। 2047 के सूर्योदय में, भारत एक विकसित राष्ट्र के रूप में तभी चमकेगा जब उसकी आधी आबादी उसकी मातृशक्ति विकास की मशाल लेकर सबसे आगे चलेगी। अतः, विकसित भारत का विजन महिलाओं के योगदान के बिना असंभव ही नहीं, बल्कि अकल्पनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. NITI Aayog Reports on Sustainable Development Goals.
2. Ministry of Women and Child Development, Annual Reports.
3. McKinsey Global Institute Report: The Power of Parity.
4. World Economic Forum: Global Gender Gap Report.
5. Economic Survey of India (Various Years).
6. Vision 2047 Documents by Government of India.

****